(21)

समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय अत्थवण्णनाभूता

भदन्तसारिपुत्तत्थेरेन कता

सारत्थदीपनी-टीका

ततियो भागो

कुलपतेः डॉ. मण्डनमिश्रस्य 'शिवसङ्कल्प'-पुरोवाचा पुरस्कृता

सम्पादको

डॉ॰ ब्रह्मदेवनारायण शर्मा

सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः, वाराणसी



पालि-ग्रन्थमाला

[८]

समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय अत्थवण्णनाभूता

भदन्तसारिपुत्तत्थेरेन कता

सारत्थदीपनी-टीका

[ततियो भागो]

कुलपतेः डॉ. मण्डनमिश्रस्य 'शिवसङ्कल्प'-पुरोवाचा
पुरस्कृता

सम्पादको
डॉ. ब्रह्मदेवनारायणशर्मा
एम्० ए०, पी-एच्० डी०

उपाचार्यः,
पालि एवं थेरवाद-विभागस्य
सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालये
वाराणसी



वाराणस्याम्

२०५३ तमे वैक्रमाब्दे   १९१८ तमे शकाब्दे   १९९६ तमे खैस्ताब्दे

अनुसन्धानप्रकाशनपर्यवेक्षकः –
निदेशकः, अनुसन्धान-संस्थानस्य
सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालये
वाराणसी ।



प्रकाशकः –
डॉ. हरिश्चन्द्रमणित्रिपाठी
प्रकाशनाधिकारी,
सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालयस्य
वाराणसी-२२१ ००२.



प्राप्तिस्थानम्–
विक्रय-विभागः,
सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालयस्य
वाराणसी-२२१ ००२.



प्रथमं संस्करणम्, १००० प्रतिरूपाणि
मूल्यम्–२५०=०० रूप्यकाणि



मुद्रकः –
रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स,
बी २१/४२ ए, कमच्छा,
वाराणसी-२२१ ०१०.

PĀLI-GRANTHAMĀLĀ
[Vol. 8]

Samantapāsādikāya Vinayaṭṭhakathāya Atthavaṇṇanābhūtā

Bhadantasāriputtattherena Katā

SĀRATTHADĪPANĪ-ṬĪKĀ

[PART III]

FOREWORD BY
DR. MANDAN MISHRA
VICE-CHANCELLOR

EDITED BY
DR. BRAHMADEVA NĀRĀYAṆA ŚARMĀ
M.A., Ph. D.

Reader,
Department of Pāli & Theravāda
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi



VARANASI
1996

Research Publication Supervisor—
Director, Research Institute,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi.



Published by—
Dr. Harish Chandra Mani Tripathi
Publication Officer,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi—221 002.



Available at—
Sales Department,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi—221 002.



First Edition, 1000 Copies
Price Rs. 250=00



Printed by—
Ratna Printing Works
B 21/42A, Kamachha,
Varanasi–221 010

शिवसङ्कल्पः

"सारत्थदीपनीटीका"या भागद्वयमनेन विश्वविद्यालयेन प्रकाशितम् । सम्प्रति चायं तृतीयो भागः प्रकाश्यते । अनेन ग्रन्थोऽयं पूर्णतामेतीति महतो हर्षप्रकर्षस्य विषयः । भारतीयं वाङ्मयं संस्कृतसाहित्येन सह पालि-प्राकृतापभ्रंशभाषाणां साहित्येन सुसम्पन्नम् । पालिवाङ्मयेन भारतीयतत्त्वज्ञानस्य श्रीवृद्धिः कृता । भगवता बुद्धेनास्य राष्ट्रस्य तत्त्वज्ञानविषये साधनाविषये च सर्वस्मिन्नपि जगति महिमा संवर्द्धितः । एतेषां संस्कृत-पालि-प्राकृतापभ्रंशवाङ्मयेन प्रतिपादितानां तत्त्वानां समन्वयो भारतीयसंस्कृतेर्मूलम्, अत एव **सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालय** एकत्र वेदानां विभिन्नानां वैदिकदर्शनानां शास्त्राणामध्यापनम्, अपरत्र च श्रमणविद्या-सङ्कायत्वेन पालिसाहित्यस्य बौद्धदर्शन-जैनदर्शनादीनां चाध्यापनं शोधयोजनाश्च प्रवर्तिताः । एतेषां सर्वेषां समवायो विश्वविद्यालयस्यास्य प्रतिष्ठायाः स्थानम् ।

विश्वविद्यालयस्य पालिविभाग उत्कृष्टतमैर्विद्वद्भिः संशोभितः, तैश्च समये समयेऽस्या भाषाया विकासाय समुन्नतये च महान्तः प्रयत्नाः कृताः । तेषु प्रयत्नेषु विनयपिटकस्याट्ठकथायाः प्राचीनतमायाः **"सारत्थदीपनीटीका"**याः सम्पादनं प्रकाशनं च विशेषतः समुल्लेखनीयम् । इयं टीका तत्रभवता **महास्थविरेण भदन्तसारिपुत्तत्थेरेण** रचिता ।

अस्यां च बौद्धाचाराणां गभीराणां निगूढानां च विषयाणां सरलया भाषया प्रतिपादनं कृतम्, बौद्धविनयानां सम्पूर्णविषयाणां चातिगभीरं विवेचनं कृतम्, परम्परागताः सम्प्रदायगताश्चार्थाः समुद्घाटिताः । अयं हि ग्रन्थ इदंप्रथमतया देवनागरीलिप्यामनेन विश्वविद्यालयेन प्रस्तूयत इति विश्वविद्यालयस्य कृते गौरवस्य विषयः ।

प्रकृतेऽस्मिन् तृतीये भागे विनयस्य सम्पूर्णानां नियमानां व्याख्या, थेरवादस्य सिद्धान्तानां स्थापनम्, भिक्षु-भिक्षुणीनाम् उपासकोपासिकानां तात्कालिक-सामाजिकजीवनपद्धतेश्च प्रामाणिका अभिलेखा उपलभ्यन्ते । अत्र हि न केवलं शब्दानामर्थमात्रम्; अपि तु जनजीवने भिक्षुजीवने च प्रचलितानां कथानामन्तःकथानां चाश्रयेण ऐतिहासिक-राजनैतिक-सामाजिक-आर्थिकस्थिती-नामाकलनं प्रस्तुतम् । अयं हि प्रतिष्ठापकः थेरवादपरम्परायाः, प्रकाशकश्च बौद्धविनयानाम् । अस्य प्रकाशनं तत्रभवद्भिर्वन्दनीयैः कुलपतिचरैराचार्यैः **प्रो. वि. वेङ्कटाचलम्** महोदयैः स्वीकृतम् । प्रथमे द्वितीये च भागे श्रद्धेयैः

पूर्वकुलपतिभिः **पण्डितश्रीविद्यानिवासमिश्र**महोदयैः स्वकीयया प्ररोचनया सहानयोः (प्रथमद्वितीयभागयोः) प्रकाशनं सुसम्पादितमिति ताभ्यां सादरभरं स्वकीयं प्रणामाञ्जलिं विनिवेदयामि ।

अयं ह्युपक्रमो विश्वविद्यालयस्यास्य पालि-थेरवादविभागाध्यक्षैः **डॉ. ब्रह्मदेवनारायण-शर्मभिः** समारब्धः, तैरेव भागत्रयस्य सम्पादनं कृतम्, स्वकीयया वैदुष्यपूर्णया भूमिकया च समलङ्कृतम् । तेषां भूमिका हि न केवलमस्य ग्रन्थस्य परिचयाय ; अपि तु बौद्धतत्त्वज्ञानायापि सहायिकेति प्रसन्नताया विषयः । श्रीशर्ममहोदयैः पालिभाषाया गभीरमध्ययनं कृतम्, तेषां च समृद्धा शिष्यपरम्परा, तैः सम्पादितैर्ग्रन्थैश्च पालिवाङ्मयस्य गौरवं सम्पोषितम् । पालिभाषां प्रति तेषां निष्ठाऽतिशयेन प्रशंसनीया । अस्य महतो ग्रन्थस्य प्रकाशने पूर्णतया च तेषामियं साधना सम्पन्नतां प्राप्नोतीत्यहं तेभ्यः स्वकीयान्यभिनन्दनानि, विश्वविद्यालयस्यास्य प्रकाशनाधिकारिणे **डॉ. हरिश्चन्द्रमणित्रिपाठिने**, ग्रन्थस्यास्य मुद्रकाय **'रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स'**-मुद्रणालयसञ्चालकाय **श्रीविपुलशङ्करपण्ड्या**महोदयाय च शुभकामनाः समर्पयन् ग्रन्थमिमं बौद्धतत्त्वमनीषिभ्यः समुपहरामि ।

वाराणसी
मेषसङ्क्रान्तिः,
वि. सं. २०५३
(१३.४.१९९६ खैस्ताब्दः)

मण्डनमिश्रः
कुलपतिः
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य

भूमिका

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

सारत्थदीपनी टीका के इस भाग में भिक्खुविभंग के बानवे पाचित्तिय, छ प्रातिदेशनीय, पचहत्तर सेखिय तथा सात अधिकरण समथ धर्मों का वर्णन किया गया है। साथ ही भिक्खुनीविभंग के आठ पाराजिक, सत्रह संघादिसेस, तीस नैसर्गिक पातयन्तिक, एक सौ छाछठ पाचित्तिय, आठ पाटिदेसनीय, पचहत्तर सेखिय तथा सात अधिकरण समथ धर्मों का व्याख्यान किया गया है। विनयपिटक का दूसरा भाग 'खन्धक' है, जिसमें 'महावग्ग' तथा चूळवग्ग सम्मिलित है का विशद वर्णन प्राप्त होता है तथा अन्त में 'परिवारपाठ' की व्याख्या है। इस तरह टीका का यह भाग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

पूर्व के दो भागों में विनय का प्रादुर्भाव का इतिहास, तीन संगीतियाँ, नियमों का विधान आदि पर विचार किया जा चुका है। प्रस्तुत प्रसंग में शेष प्रातिमोक्ष नियमों तथा भिक्खुनी विभंग के विषयवस्तुओं का परिचय इष्ट है। अतः संक्षेप में यहाँ उन नियमों का परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है।

जिन दोषों से आपन्न होने पर संघ उस दोष के लिए प्रायश्चित का विधान करता है, और प्रायश्चित करने के बाद अपराधमुक्त कर दिया जाता है, उसे 'पाचित्तिय' दोष कहा जाता है। ऐसे अपराधों में भाषण सम्बन्धी चार, सहवास सम्बन्धी दो, धर्मोपदेश, दिव्यशक्ति प्रदर्शन, अपराध प्रकाशन, भूमि खोदना, वृक्ष काटना, संघ के पूछने पर मौन रहना, निन्दा करना सम्मिलित है। सांघिक वस्तुओं में असावधानी सम्बन्धी ६, यथा-विना छना पानी पीना, भिक्षुणियों को उपदेश देने से सम्बन्धित दस, भोजन से सम्बन्धित दस, अचेलक सम्बन्धी दस, मद्यपान, उपहास-सम्बन्धी चार, आग तापना, स्नान, चीवर, पात्र सम्बन्धी तीन, प्राणातिपात सम्बन्धी दो, कलह करना, अपराध छिपाना, बीस वर्ष से कम व्यक्ति को उपसम्पन्न करना, चोर अथवा स्त्री के साथ यात्रा करना, मिथ्या दृष्टि से युक्त होना-३, धार्मिक बात को अस्वीकार करना, प्रातिमोक्ष सम्बन्धी दो, मारना, धमकाना, संघादिसेस का दोषारोपण करना, भिक्षु को सन्देह उत्पन्न करना। छन्दसम्बन्धी-३, सांघिक लाभ में हानि पहुँचाना, राजप्रासाद में प्रवेश करना, बहुमूल्य वस्तुओं को अन्यत्र ले जाना, अपराह्ण में ग्राम प्रवेश करना, सूचीघर, चौकी, शय्या, वस्त्र से सम्बन्धित दोष सम्मिलित है। इनमें अधिकतर नियम

ऐसे हैं जो उस समय के देश काल आदि से सम्बन्धित हैं, किन्तु ऐसे भी कम नहीं हैं, जो सर्वकालिक और सार्वदेशिक है।

चार पाटिदेसनीय के अन्तर्गत-भोजन ग्रहण और भिक्षुणी से सम्बन्धित चार अपराधों की व्याख्या की गई है। सेखिय (शैक्ष) के अन्तर्गत पचहत्तर नियमों का विधान किया गया है, जो आचरणीय तथा सीखने योग्य है। जैसे गृहस्थों के घरों में जाने, उठने, बैठने आदि से सम्बन्धित-२६, भिक्षान्न ग्रहण और भोजन सम्बन्धी-३०, उपदेश नहीं देने योग्य व्यक्तियों से सम्बन्धित-१६, और मल-मूत्र त्याग से सम्बन्धित-३ नियमों की व्याख्या की गई है। तथा 'अधिकरणसमथ' के अन्दर सात नियमों का वर्णन किया गया है। इस प्रकार टीका के इस भाग में भिक्खु विभंग के ९२ पाचित्तिय, ४ प्रातिदेशनीय, ७५ सेखिय तथा ७ अधिकरण समथ धर्मों की व्याख्या की गई है।

साथ ही भिक्खुनी विभंग में ८ पाराजिक दोष-मैथुन, चोरी, मानवहत्या, दिव्यशक्ति का प्रदर्शन, कामाशक्ति के विविध कार्य, संघ से निष्कासित भिक्षु का अनुगमन तथा कामासक्ति से पुरुष का स्पर्श, का वर्णन किया गया है। संघादिसेस-१७ हैं यथा-पुरुषों के साथ बिहार करना, चोर या बन्ध्या को भिक्षुणी बनाना, अकेले घूमना, संघ से निष्कासित भिक्षुणी का साथ करना, कामाशक्ति का कार्य, पाराजिक का दोषारोपण, धर्म का प्रत्याख्यान, भिक्षुणियों की निन्दा करना, दुराचारिणियों का सम्पर्क करना, संघ में मतभेद पैदा करना, सुनी वात को अनसुनी करना और कुलदूषित करना। निस्सग्गिय पाचित्तिय-३० हैं जिसमें पात्र संचय, चीवर, वस्तुग्रहण, कठिन चीवर, स्वर्ण, रजत पैसे आदिका व्यवहार, क्रय-विक्रय, पात्र बदलना, भैषज्य, चीवर, संघलाभ सम्बन्धी दोष सम्मिलित हैं। पाचित्तिय में १६६ दोषों का संग्रह है। लहसुन भक्षण, कामाशक्ति के कार्य, भिक्षुसेवा, कच्चा अनाज, मल-मूत्र विसर्जन, नृत्यगान, पुरुष के साथ एकान्त में रहना, गृहस्थ के आवासों में जाना-बैठना, भिक्षुणी को सन्देहग्रस्त बना देना, अभिशाप देना, देह पीटकर क्रन्दन करना, स्नान, चीवर, दो भिक्षुणियों के साथ सोना, भिक्षुणी को तंग करना, रोगीशिष्या की सेवा न करना, उपाश्रय देकर निष्कासित करना, विचरना, तमाशा देखना, कुर्सी-पलंग का उपयोग करना, सूत कातना, गृहस्थों जैसे कार्यकलाप करना, विवादशान्त न करना, स्वयं भोजन देना, आश्रय की वस्तुओं में असावधानी करना, तिरश्चीन विद्याओं का पढ़ना-पढ़ाना, भिक्षुवाले आराम में प्रवेश करना, निन्दा करना, तृप्ति के वाद भी खा लेना, गृहस्थों से डाह करना, भिक्षुओं से रहित स्थान में वर्षावास करना, प्रवारणा, उपदेशश्रवण और उपोसथ, गुह्यस्थान के गण्डक को भिक्षु से निकलवाना, भिक्षुणी

बनाना, छाता, जूता, वाहन, आभूषण आदि का शृङ्गार, भिक्षु के समक्ष आसन पर बैठना, प्रश्न पूछना, कंचुक बिना गाँव में जाना, भाषण की अनियमता, उपसंपदाहीन भिक्षुणी के साथ सोना, पुरुषों को धर्मोपदेश देना, दिव्यशक्ति का प्रदर्शन, अपराध प्रकाशन, जमीन खोदना, वृक्ष काटना, संघ के पूछने पर चुप रहना, निन्दा करना, विना छना पानी ग्रहण करना, भोजन दोष, सोना, मद्यपान, उपहास, आग तापना, स्नान, चीवर पात्र, प्राणिहिंसा, कलह वृद्धि, यात्रा के साथ चलना, मिथ्यादृष्टि धारण करना, धार्मिक बातों को अस्वीकृत करना आदि दोषों का उल्लेख है। पाटिदेसनीय अपराध चार हैं। इनमें भक्षणीय वस्तु को माँगकर रखना विशिष्ट है। सेखिय ७५ है तथा अधिकरण समथ ४ हैं। इस प्रकार भिक्षुणी विभंग के ३११ नियमों का विस्तार से वर्णन किया है। टीका में इन दोषों में आगत अव्याख्यात पदों की व्याख्या की गई है। उन सबका यहाँ विस्तार से वर्णन करना कठिन है।

खन्धक

विनयपिटक का दूसरा भाग खन्धक है। खन्धक भी दो भागों में विभक्त है, महावग्ग तथा चूळवग्ग। महावग्ग के सम्पूर्ण विषय-वस्तु को दस खन्धकों में विभक्त किया गया है। तथागत के सम्बोधि प्राप्ति के अनन्तर 'धम्मचक्कपवत्तन' तथा सर्वप्रथम संघ की स्थापना तक का इतिहास इसमें वर्णित है। महाक्खन्धक में भगवान् बुद्ध के बुद्धत्व प्राप्ति के उपरान्त सात सप्ताहों तक भिन्न-भिन्न वृक्षों के नीचे विमुक्ति सुख का आनन्द प्राप्ति तथा वाराणसी के निकट सारनाथ के मिगदाय वन में 'धम्मचक्कपवत्तन' किये जाने का वर्णन है। इसी में उरुवेला से लेकर वाराणसी तक की यात्रा के मध्य तपस्सु और भल्लिक नामक दो वणिकों के भगवान् के प्रथम उपासकत्व ग्रहण करना, पंचवर्गीय भिक्षुओं का बुद्धमत में प्रव्रज्या, यश का प्रवज्या-ग्रहण, काश्यप बन्धुओं (जटिल काश्यप, उरुवेल काश्यप, गया काश्यप) की प्रव्रज्या, महाराज बिंबिसार का उपासकत्व तथा सारिपुत्र मौदगल्यायन, महाकाश्यप, नन्द तथा राहुल के प्रव्रजित होने का वर्णन क्रमानुसार दिये गये हैं। महावग्ग का यह खन्धक बौद्ध-भिक्षुसंघ के विकास को जानने के लिए तथा तथागत के प्रथम शिष्यों की सूची एवं साधना को जानने के लिए अति-आवश्यक है। तदनन्तर उपोसथ कर्म, वर्षावास के नियम, प्रवारणा, चीवरों के रंगने की विधि, औषधि आदि सभी विषयों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। अन्तिम दसवें खन्धक में कौशाम्बी के भिक्षुओं का आपसी कलह का वर्णन तथा उपालि को तथागत के द्वारा संघ की एकता के लिए उपदेशों का विवरण प्राप्त होता है।

खन्धक के दूसरे भाग चूळवग्ग में भिक्षुओं के दैनिक जीवनोपयोगी सूक्ष्म निर्देश है। भिक्षुओं के लिए दैनिक जीवन में क्या विहित हैं, क्या अ-विहित, उसे विहार या उसके बाहर किस प्रकार चलना-फिरना, वार्तालाप आदि करना चाहिए, इसका सूक्ष्म निर्देश है। इसके अनन्तर अनाथ-पिंडिक की दीक्षा और श्रावस्ती के जेतवन विहार का दान का वर्णन है। पुनः महाप्रजापति गौतमी की प्रव्रज्या का विवरण प्राप्त होता है। चूळवग्ग के अन्त में प्रथम एवं द्वितीय बौद्ध संगीतियों का विवरण है।

वास्तव में सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालने वाली अनेक सामग्रियाँ, बिल्कुल सहज रूप में हमें चुल्लवग्ग तथा महावग्ग में प्राप्त होते हैं। बौद्ध संघ का इतिहास के साथ-साथ समाज की राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं भौगोलिक आदि विभिन्न अवस्थाओं को जानने के लिए महावग्ग, चुल्लवग्ग के साथ-साथ पाराजिक एवं पाचित्तिय में पर्याप्त सामग्री भरी पड़ी है। जीवक कौमारभृत्य के विवरण प्रसंग में भिक्षुओं के लिए भैषज्य विधान किया गया है। महावग्ग के इस प्रसंग से हमें सहजतया तत्कालीन आयुर्वेद संबन्धी ज्ञान एवं अभ्यास का अच्छा परिचय प्राप्त हो जाता है। बिम्बिसार आदि के विवरण प्रसंग से तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों का पता चलता है।[1] वैशाली आदि के विवरण-प्रसंग से उस समय की सभ्यता एवं मनुष्यों के रहन-सहन के ढंग की जानकारी सुगमता से लगायी जा सकती है। भिक्षु और भिक्षुणी संघों के आन्तरिक जीवन एवं कार्य संचालन, भिक्षु संघ में प्रवेश के नियम, उपोसथ, वर्षावास तथा पवारणा संबन्धी नियम, संघभेद होने पर उनमें एकता लाने का उपाय, उनके कपड़े, जूते आदि पहनने का ढंग, रहन-सहन का ढंग, विहार एवं विहार में सफाई व्यवस्था, निवासों की मरम्मत आदि सूक्ष्म से सूक्ष्म जानकारियाँ विनय पिटक के मूलतः महावग्ग और चूळवग्ग से सुगमतया उपलब्ध होती हैं।

'परिवार' या 'परिवार पाठ' विनय-पिटक की अनुक्रमणिका है। विन्टरनित्ज ने कहा है—"परिवार का विनय-पिटक से वही सम्बन्ध है जो वेद की अनुक्रमणी और परिशिष्टों का वेद के साथ।"[2] परिवार की विषय-सामग्री प्रश्नोत्तर रूप में है और सम्भवतः विनय-पिटक के सबसे बाद का संकलन है। भरत सिंह उपाध्याय ने 'परिवार-पाठ' को विनयपिटक के विषय वस्तु की 'मातिका' माना है।[3] 'परिवार' में कुल 19 परिच्छेद हैं जिनमें अभिधम्म पिटक की शैली पर परिपृच्छात्मक तरीके

1. महावग्ग पृ. 35-38.
2. हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर (जिल्द-2) पृ. 33
3. पा. सा. का इ. पृ. 359.

से विनय पिटक के पूर्व कथित विषयवस्तु की ही पुनरावृत्ति की गई है। विनय के कौन से शिक्षा-पद भगवान ने किसको प्रज्ञप्त किये, किस प्रसंग में दिये, संघ में कितने प्रकार के कलह सम्भव है, उपोसथ का आदि, मध्य व अन्त क्या है, किन दस बातों को ध्यान में रखकर शिक्षा पदों का विधान किया गया आदि विभिन्न समस्याओं पर प्रश्न किये गये हैं तथा उनका उत्तर भी क्रमवार ढंग से दिया गया है। इस प्रकार सुत्त विभङ्ग तथा खन्धक की सम्पूर्ण विषय-वस्तु को परिवार-पाठ में दुहरा ली गई है। इसीलिए 'परिवार-पाठ' को सम्पूर्ण विनय-पिटक की पुनरावृत्ति कहा गया है। अधिकतर विद्वान् 'परिवार' के अन्तिम गाथाओं के आधार पर इसके संकलनकर्त्ता महामति भिक्षु 'दीप' को मानते हैं। यथा–

पुब्बाचरियमग्गं च पुच्छित्वा व तम्हि तम्हि।
दीप नाम महापञ्ञो सुतधरो विचक्खणो॥
इमं वित्थारसंखेपं सज्झामग्गेन मज्झिमे।
चिन्तयित्वा लिखापेसि सिस्सकानं सुखावहं॥[1]

इन गाथाओं से यह निश्चित हो जाता है कि महामति भिक्षु दीप ने इसे शिष्यों की आसानी (सुख) के लिए 'सिस्सकानं सुखावहं' इसे सिंहल में लिपिबद्ध करवाया। हालाँकि भिक्षु जगदीश काश्यप द्वारा सम्पादित परिवार पालि में इन गाथाओं का उल्लेख नहीं प्राप्त होता है। परिवार पालि की 'अनुक्रमणिका' या भूमिका में भी 'दीप' भिक्षु का उल्लेख नहीं किया गया है। परन्तु इन गाथाओं से 'परिवार-पाठ' के वर्त्तमान रूप का ही पता चलता है, क्योंकि आचार्य बुद्धघोष ने अपने सुमंगलविलासिनी में प्रथम संगीति में विनय-पिटक के संगायन क्रम में 'सोलस परिवार' के संगायन की बात कही है। इस प्रकार यह सिद्ध है कि 'परिवार' विनय-पिटक के अन्य ग्रन्थों के समान ही प्राचीन है। लेकिन अभिधर्म के मातिकाओं की शैली को देखते हुए एक निश्चित रचना-काल का निर्णय करना कठिन है। आज 'परिवार' के रोमन संस्करण में कुल 19 परिच्छेद हैं। भिक्षु जगदीश काश्यप के देवनागरी संस्करण में 21 परिच्छेदों का विवेचन है, जबकि आचार्य बुद्धघोष ने 'सोळस परिवार' का निर्देश किया है। इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि रोमन और देवनागरी संस्करण के बढ़े हुए परिच्छेद परिवर्द्धित तथा बाद के हैं।[2]

त्रिपिटक में 'परिवार-पाठ' का स्थान निर्धारित करते हुए भिक्षु जगदीश काश्यप ने अपनी भूमिका में कहा है कि सम्पूर्ण त्रिपिटक में मात्र यही एक ग्रन्थ

---

1. विनय पिटक, भा. 5, पृ. 226 (रोमन संस्करण)
2. पा. सा. का इ. पृ. 360 (भरत सिंह उपाध्याय)

है जिसमें धर्म के लिपिबद्ध किये जाने का वर्णन प्राप्त होता है[1]—'सज्झाय-मग्गलिखितावारा[2]' । 'परिवार' की दूसरी विशेषता यह है कि लंका में विनय कीं परम्परा स्थापित हो जाने के बाद उन्तीस सिंहल आचार्यों के नाम गिनाये गये हैं ।[3]

इन दोनों बातों से इस बात की पुष्टि होती है कि इसकी रचना लंका में बहुत बाद में हुई । आगे चलकर विनय-ग्राहकों के लिए यह इतना आवश्यक हो गया कि 'कथावत्थु' की तरह, संगीतिकारक आचार्यों ने इसे बुद्धवचन का गौरव प्रदान कर इसे विनय-पिटक का पांचवा ग्रन्थ मान लिया ।[4]

कुछ विद्वानों ने इस ग्रन्थ को त्रिपिटक का एक महत्वहीन अंश मानकर इसकी उपेक्षा की है ।[5] हालाँकि यह भी सच है कि संघ के संगठन या शिक्षापदों की नैतिकता के विषय में इस ग्रन्थ से कोई महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं होती है फिर भी नाना दृष्टियों से प्रश्नोत्तर-क्रम में विनय की गुत्थियों को सुलझाया गया है । कई गूढ़ बातों को प्रकाश में लाया गया है, जिससे विनय के अध्ययन-क्रम में 'परिवार' की महत्ता बढ़ जाती है ।

बौद्ध-संघ का निर्माण एवं उसके प्रारम्भिक स्वरूप की प्रामाणिक जानकारी महावग्ग से प्राप्त होती है । भगवान बुद्ध नेरञ्जरा नदी के तट पर बोधगया में बोधि-वृक्ष के नीचे सम्यक् सम्बोधि प्राप्ति के अनन्तर सात सप्ताह तक विभन्न वृक्षों के नीचे विमुक्ति सुख का आनन्द लेते रहे । सहम्पति ब्रह्मा की याचना पर उन्होंने सम्पूर्ण लोक को अपनी करुणा चक्षु से देखा जहाँ प्राणी दुःख से सन्तप्त थे ।[6] तथागत ने लोक को धर्म-देशना देना स्वीकर किया । अपनी पहली देशना के योग्यतम पात्र के रूप में उन्हें अपने पूर्व-आचार्य उद्रक-रामपुत्र तथा आलार-कालाम का ध्यान आया पर दिव्य चक्षु से देखने पर उनके कालकवलित हो जाने का पता चला । पुनः उन पाँच भिक्षु साथियों का स्मरण किया जो उन्हें धर्म-विमुख तथा साधना-भ्रष्ट मानकर छोड़ दिये थे । वे पाँचों भिक्षु सारनाथ के

---

1. परि. पा.; भूमिका पृ. 4
2. परि. पा., पृ. 3 (शीर्षक)
3. परि. पा. पृ. 5-6
   'एते नागा महापञ्ञा, जम्बुदीपा इधागता ।
   विनयं ते वाचयिसुं, पिटकं तम्बपण्णिया ॥..........
   एते नागा महापञ्ञा, विनयञ्ञू मग्गकोविदा ।
   विनयं दीपे पकासेसुं पिटकं तम्बपण्णिया ॥
4. परि. पा., (भूमिका) देवनागरी संस्करण, पृ. 5
5. भारतीय साहित्य का इतिहास, भा. 2 पृ. 33 (विन्टरनित्ज)
6. बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास; पृ. 132 (गोविन्द चन्द्र पाण्डेय)

ऋषिपत्तन मिगदाव में उस समय थे। अतः तथागत ने धर्मचक्र-प्रवर्तन हेतु वाराणसी की ओर प्रयाण किया। रास्ते में 'उपक' नाम का आजीवक श्रमण उन्हें मिला जिसे बुद्ध ने यह बताया कि उन्हें तत्त्व-बोध हुआ है। उपक आजीवक ने उपेक्षा से 'होगा शायद' कह कर अपने रास्ते चलता बना।

आषाढ़ पूर्णिमा से पहले ही तथागत वाराणसी पहुँच गये। पंचवर्गीय भिक्षुओं ने दूर से उन्हें देखकर उनके अनादर की बात सोची पर नजदीक आने पर उनका निश्चय बदल गया और आसनादि दे कर बैठने को कहा।[1] आषाढ़ पूर्णिमा के दिन ऋषिपतन मृगदाव (इसीपतन मिगदाव) सारनाथ में इन्हीं पंचवर्गीय भिक्षुओं को अपना प्रथम उपदेश दिया जो बौद्ध परम्परा में 'धम्मचक्कपवत्तन' कहा जाता है।

तथागत की धर्मदेशना सुनकर सर्वप्रथम कौण्डिन्य नामक पंचवर्गीय भिक्षु ने विमल 'धर्म-चक्षु' प्राप्त किया और तथागत से प्रव्रज्या ग्रहण की। कौण्डिन्य का नाम अज्ञात कौण्डिन्य (अञ्ञासि कोण्डञ्ञ) पड़ा। तदनन्तर वप्प, भद्दिय, महानाम तथा अस्सजि (अश्वजीत) नामक शेष भिक्षुओं ने तथागत से धर्मदेशना और प्रव्रज्या लाभ लिया। यहीं से भिक्षु-संघ की नीव पड़ी। प्रारम्भ में इन्हीं छः अर्हत भिक्षुओं का संघ बना। उस समय तक लोक में तथागत तथा पंचवर्गीय भिक्षुओं को मिलाकर कुल छः अर्हत थे। 'तेन खो पन समयेन छ लोके अरहन्तो होन्ति'।[2]

इसके बाद यश की प्रव्रज्या का वर्णन मिलता है। यश वाराणसी के श्रेष्ठि का पुत्र था। श्रेष्ठि नगर का एक अवैतनिक पदाधिकारी होता था, जो धनिक व्यापारियों में से चयनित किया जाता था।[3] अचानक गृहस्थ जीवन से ऊबकर निर्मल ज्ञान की प्राप्ति के लिए किसी शांत स्थान की तलाश में सारनाथ के ऋषिपतन मृगदाव पहुँचा। वहाँ भगवान पंचवर्गीय भिक्षुओं के साथ निवास कर रहे थे। यश जिस समय वहाँ पहुँचा उस समय रात्रि का तृतीय याम था और तथागत खुले स्थान में भ्रमण कर रहे थे। भगवान उसे देखकर बिछे आसन पर बैठ गये। यश भी वहाँ पहुँचा और अभिनन्दन कर एक ओर बैठ गया। सम्यक्-सम्बुद्ध ने उसे आनुपूर्वी कथाओं जैसे—दान-कथा, शीलकथा, स्वर्ग-कथा, काम-वासनाओं का दुष्परिणाम, निष्कामता का महत्व आदि के माध्यम से संसार की वास्तविकता का उपदेश दिया। अंत में संसार की नश्वरता—'जो कुछ भी उत्पन्न

---

1. अद्दसंसु खो पञ्चवग्गिया भिक्खू भगवन्तं दूरतो व आगच्छन्तं; दिस्वान............एको पादकठलिकं उपनिक्खिपि। महावग्ग, पृ. 11-12.
2. महावग्ग, पृ. 18.
3. विनय पिटक; पृ. 84, पाद टिप्पणी (राहुल सांकृत्यान का अनुवाद)

होने वाला धर्म है, वे सभी नाश्वान है का[1] विमल ज्ञान यश को प्राप्त हुआ। इस प्रकार यश के तथागत से संघ में प्रव्रजित होने की इच्छा व्यक्त करने पर तथागत ने उसे प्रव्रज्या दी। तदनन्तर यश के मित्र विमल, सुबाहु, पूर्णजीत तथा गवाम्पति आदि अपने पचास मित्रों के साथ तथागत से धर्म और संघ में प्रवेश की याचना की। भगवान् ने यह कहते हुए कि—'भिक्षुओं ! आओ, धर्म सु-अख्यात है, अच्छी तरह, पूर्ण दुःख-क्षय के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करो। यथा—"एत्थ भिक्खवो ! स्वाक्खातो धम्मो, चरथ ब्रह्मचरियं सम्मादुक्खस्स अन्तकिरियाया"ति।[2]

इस प्रकार यश के पचास साथियों को प्रव्रज्या एवं संघ में प्रवेश मिला। यश समेत उसके सभी साथी भिक्षुओं का 'अर्हत' का सर्वोपरि स्थान प्राप्त हुआ। इस समय तक भगवान बुद्ध के संघ में कुल एकसठ अर्हत भिक्षु थे।[3] इसके बाद तो नाना दिशाओं और स्थानों से भगवान के संघ में प्रव्रज्या चाहने वाले लोगों की बाढ़ सी आ गई। तथागत के लिए इतने लोगों को प्रव्रज्या-उपसम्पदा देना कठिन हो गया। इससे सम्भवतः एकान्तप्रिय भगवान बुद्ध की साधना में विघ्न होने लगा होगा। अतः तथागत ने एक दिन सन्ध्या समय सभी भिक्षुओं को नाना दिशाओं एवं स्थानों पर जा कर इच्छुक जनों को प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा देने की अनुमति प्रदान की। यही आर्य बौद्ध-संघ की प्रारम्भिक अवस्था थी, जिसमें भिक्षुओं की संख्या सीमित थी। महावग्ग में यश के पिता, माता तथा पत्नी के उपासकत्व ग्रहण का वर्णन भी प्राप्त होता है। ये तीनों संसार के प्रथम गृहस्थ-उपासक थे।

महावग्ग के इन वर्णन प्रसंगों से बौद्ध धर्म एवं बौद्ध संघ का प्रारम्भिक स्वरूप के अलावे भी कई अन्य बातों का पता चलता है। हम कह सकते हैं कि बौद्ध संघ का प्रारम्भिक स्वरूप तत्कालीन सामाजिक प्रथाओं के समान ही था। पूर्व में कहा जा चुका है कि बुद्ध के काल में कई गणी, गणाचार्य, संघी आदि विद्यमान थे जिनका एक संघ होता था। उन संघों में ब्रह्मचर्य जीवन, संसार-त्यागकर बिताया जाता था। संघ में रहकर शिष्य अपनी आध्यात्मिक शक्तियों का विकास किया करते थे। संघ में आचार्य या गुरु जो उस संघ का नेतृत्व करता था, का बहुत सम्मान था। वैदिक जीवन में तो गुरु अथवा आचार्य को आध्यात्मविद्या को अधिगत करने के लिए आवश्यक अंग के रूप में स्वीकार किया जाता था। उपनिषदों में गुरु के वचन सुनने मात्र से ही ज्ञान का प्रधान द्वार का खुलना बताया गया है। अन्य परिव्राजकों विशेषतः तान्त्रिकों में गुरु की

---

1. एवमेव यसस्स कुलपुत्तस्स........विरजं वीतमलं धम्मचक्खुं उदपादि—'यं किञ्चि समुदयधम्मं, सब्बं तं निरोधधम्मं ति'। महावग्ग, पृ. 19.
2. महावग्ग पृ. 22
3. तेन खो पन समयेन एकसट्ठि लोके अरहन्तो होन्ति। महावग्ग, पृ. 23

कृपा अथवा शक्तिपात से ही शिष्यों की दीक्षा सम्पन्न होती थी। अतः यह स्पष्ट है कि तत्कालीन समाज में आध्यात्मिक मार्ग पर चलने वालों के लिए गुरु का सर्वाधिक महत्व था। हालांकि कार्य-महत्व के आधार पर विभिन्न सम्प्रदायों में गुरुओं में भी भेद दृष्टिगोचर होता है।

बुद्धशासन में भी बौद्धसंघ पर पूर्ववर्ती आचार्यों एवं परिब्राजकों द्वारा संगठित संघों का प्रभाव पड़ा। संघ निर्माण ही तत्कालीन समाज की प्रथाओं के समान था। ब्रह्चर्य जीवन को जिसे उन दिनों आध्यात्मिक उपलब्धियों के लिए अनिवार्य माना जाता था, तथागत के संघ में भी उतना ही आवश्यक समझा गया। भगवान ने पंचवर्गीय भिक्षुओं को प्रव्रजित करते हुए ब्रह्मचर्य जीवन में रहकर सभी दुःखों को समाप्त करने का उपदेश दिया। न केवल पंचवर्गीय भिक्षुओं को बल्कि बाद के सभी भिक्षुओं की प्रव्रज्या ही यही कह कर दी जाती थी कि भली प्रकार से दुःखों के अन्त के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करें–"स्वाक्खातो धम्मं, चरथ ब्रह्मचरियं सम्मादुक्खस्स अन्तकिरियाया" ति। इस उद्धरण से तथागत के शासन में ब्रह्मचर्य के महत्व का पता चलता है। बाद के समय में जब संघ का विस्तार हुआ तो आचार्य एवं उपाध्याय की व्यवस्था भी संघ में हुई। परन्तु इनका कार्य पूर्ववर्ती तत्कालिक आचार्यों से भिन्न था। बुद्ध शासन में गुरु को कल्याणमित्र का रूप दिया गया। इनका कार्य भिक्षुओं का मार्ग-प्रदर्शन मात्र था। तथागत ने अपने शिष्यों को अपने बल पर चलना और स्वयं के उपर निर्भर रहने की देशना दी। बुद्ध द्वारा उपदेशित 'धम्म' को ही सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। धर्म ही भिक्षुओं के आध्यात्मिक मार्ग का सहायक तथा नियामक था। संसार की सभी घटनाएँ कार्य-कारण भाव से नियत है। विद्या से विमुक्ति का मार्ग प्रस्फुटित होता है अतः धर्म को 'यान' (मार्ग) भी कहा गया है। धर्म ही बुद्ध का वास्तविक काय है तथा 'धम्म' को देखना ही बुद्ध को देखना समझा जाता था। तथागत के भिक्षु-शिष्यों को 'भगवतो पुत्तो ओरसो धम्मजो ' धम्मनिम्मित्तो धम्मदायादो' कहा गया है। इसीलिए तथागत ने संघ के सांगठनिक ढाँचे को पूर्ववर्ती आचार्यों की भाँति गुरु-शिष्य परम्परा का रूप न देकर "धर्म-विजय' का रूप दिया। यह स्पष्ट है कि बुद्ध अपने शिष्यों का ध्यान अपने पार्थिव व्यक्तित्व से परे अपनी देशना में प्रदत्त अमृतपद निर्वाण तथा उस मार्ग पर ले जाने वाले आध्यात्मिक नियमों की ओर उन्मुख करना चाहते थे। एक अच्छे शिक्षक की भाँति वे चाहते थे कि उनके शिष्य अपने पैरों पर खड़े हों, आत्मदीप बनें, आत्मशरण में जा कर अपने चिरन्तन लक्ष्य की प्राप्ति करें। बुद्ध-संघ में त्रिरत्न में शरण लेने को प्रथा तो थी पर यह अन्य सम्प्रदायों में विदित शरणागति से भिन्न था। तथागत ने अपने

२

उपदेशों में शब्द से ज्यादा उसके अर्थ का महत्व दिया। कुछ शिष्यों ने बुद्ध-वाणी को वेद-वत समझने एवं स्मरण करने की अभिलाषा तथागत के समक्ष रखी थी जिसे उन्होंने सर्वथा अमान्य करार दिया तथा अपने द्वारा उपदिष्ट विभिन्न उपदेशों को सबों को अपनी-अपनी भाषा में स्मरण करने की अनुमति प्रदान की। इस प्रकार बुद्ध-कालीन संघ-व्यवस्था में शब्द प्रमाण अथवा श्रुति, कृपा एवं भक्ति, तन्त्र-मन्त्र अथवा शक्तिपातात्मक दीक्षा आदि का वैदिक परम्पराओं के प्रतिकूल अभाव था। प्रचलित गुरुवाद अथवा आचार्यवाद का संघ में कोई स्थान नहीं था। शास्ता द्वारा उपदेशित 'धम्म-विनय' में संगृहीत सिद्धांत, और साधना, उनके नियम-उपनियम को ही आचार्य अथवा गुरु के रूप में मानकर , उसी के अनुसार चलकर भिक्षु अपनी आध्यात्मिक विजय करते थे।

बौद्ध संघ का विकास

ऊपर हमने देखा कि सारनाथ में भिक्षु संघ की स्थापना पंचवर्गीय भिक्षुओं की प्रव्रज्या से प्रारम्भ हुई और तदनन्तर वाराणसी के श्रेष्ठि-पुत्र यश के अपने पचास साथियों के साथ प्रव्रजित होने से संघ में कुल भिक्षुओं की संख्या तथागत समेत इकसठ हो चुकी थी। बुद्ध के धर्म एवं उपदेशों को सुनकर अपार जन-समूह उनसे प्रव्रज्या एवं संघ में आने की याचना करने लगा था। भगवान ने अन्य सभी भिक्षुओं को प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा प्रदान करने की अनुमति दी। धर्म प्रचार में जितनी प्रवणता बौद्ध-संघ में रही है उतनी किसी अन्य भारतीय परम्परा में कभी नहीं रही। जन-जन तक अपनी देशना को पहुँचाने के मनोभाव तथागत में प्रारम्भ से ही था। यही कारण है कि भगवान ने सभी भिक्षुओं को 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' के लिए धर्मोपदेश को नाना दिशाओं के ग्राम, निगम, जनपदों में फैलाने की आज्ञा दी। उन्होंने कई जीवन के अथक प्रयास से जिस दुर्बोध ज्ञान की प्राप्ति की थी उसे जन-जन तक पहुँचाना आवश्यक समझा, ताकि सबों के दुःखों का अन्त हो सके, सबों का कल्याण हो सके।

संघ के अन्य भिक्षु अन्यत्र स्थलों पर चले गये। स्वयं तथागत ने भी धर्मदेशना हेतु उरुवेला के सेनानिगाम की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में तीस भद्रवर्गीय कुमारों को उपदेश दिया जिससे प्रभावित हो उन तीस कुमारों ने प्रव्रजित हो कर संघ की शरण ली। तत्पश्चात् तथागत उरुवेला पहुँचे। उरुवेला में तीन कश्यप बन्धु, उरुवेल काश्यप, नदी काश्यप तथा गया काश्यप अपने क्रमशः 500, 300 तथा 200 शिष्यों के साथ रहता था। काश्यप बन्धु 'जटिल' सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखते थे इसलिए इन तीनों भाइयों को 'जटिल' के नाम से उद्घोषित किया जाता था। तथागत ने उरुवेल काश्यप की अग्निशाला में एक

रात बिताया। तथागत को पाँच प्रातिहार्यों से प्रभावित करने की चेष्टा उरुवेल काश्यप ने की पर भगवान ने उससे भी बड़े-बड़े प्रातिहार्यों के द्वारा उसके प्रातिहार्य को काट कर उसका मन 'धम्म' की ओर उन्मुख किया। अन्ततोगत्वा वह अपने शिष्यों सहित धर्म में प्रव्रजित हुआ। उसे देखकर उसके अन्य दो अनुजों ने भी अपने-अपने शिष्यों सहित बौद्ध धर्म और संघ की शरण ली[1]।

इस समय तक बौद्ध संघ में भिक्षुओं की संख्या एक हजार से ऊपर हो चुकी थी। भगवान ने गयाशीश (गया का ब्रह्मयोनि पर्वत) पर आदीप्त पर्याय का उपदेश किया। तदनन्तर अपने सहस्त्रों शिष्यों के साथ राजगृह की ओर प्रस्थान किया। वहाँ मगध-सम्राट बिम्बिसार उनसे अत्यन्त प्रभावित होकर भगवान को भिक्षुओं समेत भोजन के लिए निमन्त्रित किया जिसे तथागत ने स्वीकार किया। सम्राट बिम्बिसार ने भोजनोपरान्त भिक्षु-संघ को वेणु-वन उद्यान समर्पित किया। राजगृह में ही संजय परिब्राजक के दो शिष्यों (जो बाद में सारिपुत्र तथा मौद्गल्यायन के नाम से प्रसिद्ध हुए) की मुलाकात भिक्षु अश्वजीत से हुई। अश्वजीत ने अपना एवं अपने आचार्य का परिचय देकर सारिपुत्त के सभी प्रश्नों का आध्यात्मिक समाधान करते हुए कहा—"हेतुओं (कारणों) से उत्पन्न होने वाले धर्मों के हेतु तथा निरोध महाश्रमण (बुद्ध) बताते हैं"[2]। अश्वजीत से धर्म का आध्यात्मिक समाधान सुनकर सारिपुत्र सद्धर्म में श्रद्धावनत हुए। उनसे यही गाथा मौद्गल्यायन ने सुनी और दोनों बुद्ध के समक्ष जाकर प्रव्रज्या की याचना की। बुद्ध ने उन्हें देशना देकर संघ में स्थान दिया। तदनन्तर सारिपुत्र और मौद्गल्यायन अपने आचार्य संजय परिब्राजक के पास जा कर सद्धर्म से सम्बन्धित जानकारी दी जिसे सुनकर संजय परिब्राजक अपने 250 शिष्यों के साथ प्रव्रजित हो बौद्ध संघ में प्रवेश किया। महावग्ग में सम्यक् सम्बुद्धत्व प्राप्ति से लेकर यहाँ तक का क्रमवार विवरण प्राप्त होता है।

इस प्रकार भगवान बुद्ध एवं उनके शिष्य सद्धर्म को प्रचारित कर जनमानस को लाभान्वित करते रहे। लोग संघ में सम्मिलित होते रहे। भगवान बुद्ध स्वयं सम्बोधि लाभ के अनन्तर अस्सी वर्ष की आयु तक विभिन्न ग्राम निगम एवं जनपदों में चारिका करते रहे। चारिका-क्रम में सद्धर्म का प्रचार होता रहा। लोग प्रव्रजित होते रहे तथा संघ का विकास होता गया। भगवान् बुद्ध ने धर्म देशना मुख्यतः कोशल, मगध और उनके पड़ोसी गण-राज्यों में की, फलस्वरूप समाज के

---

1. महावग्ग; उरुवेलपटिहारियकथा, पृ. 25-34
2. "ये धम्मा हेतुप्पभवा तेसं हेतुं तथागतो आह।
   तेसं च यो निरोधो एवंवादी महासमणो ति" ॥"

   महावग्ग पृ. 39, स. पा. भा. 3 पृ. 1024

सभी वर्गों और जातियों से उनके अनुयायियों की संख्या बढ़ी। समाज के नाना वर्गों से उनके अनुयायी बने। उपासक, उपासिकाओं, भिक्षुओं और भिक्षुणियों में सद्धर्म का प्रभाव बढ़ता गया। महाप्रजापति गौतमी और आनन्द की याचना से स्त्रियों को भी संघ में स्थान मिलने लगा।

मगध एक विशाल साम्राज्य था। अतः राजा बिम्बिसार का बुद्ध, धर्म एवं संघ में श्रद्धालु होकर संघ को वेणुवन का उपहार देना[1] बौद्ध संघ की प्रगति का एक नया चरण था। अजातशत्रु की बौद्ध धर्म के प्रति अनुकूलता नहीं दिखती, परन्तु बाद में बुद्ध के द्वारा 'श्रामण्यफल' के उपदेश सुनकर उनका भी मन सद्धर्म की ओर अवनत हो गया[2]। मगध सम्राट विम्बिसार की अनुकूलता के कारण वहाँ के श्रेष्ठियों एवं गृहपतियों में से अनेकों के उपासक बनने का वर्णन प्राप्त होता है। मगध के ब्राह्मणवर्ग पर भी बुद्ध धर्म एवं संघ का प्रभाव दिखाई पड़ता है। कोसल के राजा प्रसेनजित तथा उनकी रानी मल्लिका पूरे राजकुल के साथ बुद्ध के अनुयायी बने। वहाँ के श्रेष्ठियों में कोटिपति अनाथपिण्डिक तथा विशाखा के उपासकत्व ग्रहण करना बौद्ध धर्म के लिए एक बड़ी बात थी। अनाथपिण्डिक ने संघ को जेतवनाराम तथा विशाखा ने पुब्बराम-मिगारमातुपासाद का दान किया। कोशल के अग्निक, भारद्वाज, पुष्करसाति (पोक्खरसाति), धानञ्जनि आदि अनेको प्रभावशाली समृद्ध ब्राह्मणों ने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। इसी प्रकार शाक्यों में राहुल, महाप्रजापति गौतमी आदि की प्रव्रज्या का उल्लेख विनय में प्राप्त होता है। वैशाली लिच्छवियों का केन्द्र था तथा वहाँ निग्रन्थ महावीर का प्रभाव था। बुद्ध स्वयं वैशली के गण-राज्य के बहुत बड़े प्रशंसक थे। कुछ विद्वानों का मत है कि तथागत ने बौद्ध भिक्षु-संघ का संगठन इस गण-राज्य के आदर्श पर ही प्रतिष्ठित किया। निर्ग्रन्थ उपासकों में सेनापति सिंह, अभयराजकुमार तथा नकुल, उनके माता-पिता, कोलियों में सुप्पवासा, मल्लों में चुन्द तथा दब्ब आदि के नाम प्रमुख हैं जिन्होंने सद्धर्म को स्वीकार किया।

इस प्रकार बौद्ध धर्म के साथ-साथ बौद्ध संघ का विकास होता गया। बुद्ध-महापरिनिर्वाण के बाद राजगृह के प्रथम संगीति में हम 500 अर्हत भिक्षुओं को देखते हैं, दूसरी संगीति तक यह संख्या 700 तक पहुँची। अर्हत भिक्षुओं की संख्या को देखते हुए इनके अतिरिक्त सामान्य भिक्षुओं का सहज ही अनुमान लगाना कठिन है। तत्पश्चात् तृतीय संगीति में सम्राट अशोक तथा मोग्गलि-

---

1. 'एताहं, भन्ते, वेळुवनं उय्यानं बुद्धप्पमुखस्स भिक्खुसङ्घस्स दम्मी'ति।
महावग्ग, बिम्बिसारसमागमकथा, पृ. 38.

2. दीघ नि., श्रामण्यफलसुत्त।

पुत्ततिस्स के प्रयत्न से बौद्ध धर्म दुनिया के अन्य देशों में भी पहुँचा। लंका, वर्मा, चीन, थाईलैण्ड आदि कई देश पूर्णरूपेन बुद्ध के अनुयायी हो गये। इस प्रकार भिक्षु संघ का विकास उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया।

संघ शब्द का विवेचन और अर्थावधारण

'समग्गं कम्मं समुपगच्छतीति सङ्घो'[1] इस व्युत्पत्ति के अनुसार समग्र कर्मों में साथ चलने वाली समूह को संघ कहते हैं। संघ शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए कच्चायन व्याकरण में कहा गया है–'सं+हन+र=सङ्घो ति संपुब्ब-हन-हिंसागतिसू-तिमस्स समग्गं कम्मं समुपगच्छतीति। अत्थे इमिना रप्पच्चयं कत्वा, हनस्स च घादेसं कत्वा, 'रम्हिरन्तो रादि नो' ति रकारानुबन्धस्स लोपं कत्वा, नेतब्बं, नेत्वा स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं'[2]। अर्थात् सं उपसर्ग पूर्वक 'हन' धातु से 'संहनञ्ञाय वा रो घो' सूत्र से 'र' प्रत्यय होता है और 'हन' का 'घ' आदेश हो जाता है। पुनः 'रकारानुबन्ध' का लोप करके संघ शब्द निष्पन्न होता है। कई अन्य स्थानों पर भी 'संघ' शब्द पर विशेष विचार क़िया गया है। विसुद्धिमग्ग तथा अट्ठकथाओं में 'संघ' शब्द पर विचार करते हुए आचार्य बुद्धघोष ने कहा है कि–भगवान बुद्ध के श्रावक-संघ को ही 'संघ' कहा जाता है। यथा–'सावकानं संघो सावकसंघो सीलदिट्ठिसामञ्ञताय संघातभावं आपन्नो सावकसमूहो ति अत्थो।'[3] अर्थात् शीलदृष्टि आदि में समानभाव रखने वाले समूह अथवा श्रावक समूह को संघ कहते हैं। 'परमत्थमञ्जूसा' नामक टीका में संघ शब्द की विवेचना करते हुए कहा गया है कि–"यथानुसिट्ठं पटिपज्जनेन किच्चसिद्धितो अरियभावावहं सवनं सक्कच्चसवनं नामा ति वुत्तं–'सक्कच्चं सुणन्तीति। सावका" ति, तेन अरिया एव निप्परियायतो सत्थुसावका नामा ति दस्सेति। सीलदिट्ठिसामञ्ञता ति अरियेन सीलेन अरियाय च दिट्ठिया समानभावेन। अरियानञ्हि सीलदिट्ठियो मज्झे भिन्नसुवण्णं विय निन्नानाकरणं मग्गेनागतत्ता। तेन ते यत्थ कत्थचि ठिता पि संहताव। तेनाह–"संघातभावमापन्नो"ति[4]। अर्थात् भगवान बुद्ध के उपदेश और अनुशासन को सत्कारपूर्वक सुनने वाले को श्रावक कहा जाता है, श्रावकों का संघ ही श्रावक संघ कहा जाता है जिसका अर्थ–आर्यशील और आर्य दृष्टि के समान होने से एकत्र हुए श्रावक-समूह होता है। 'संघानुस्मृति' के वर्णन-क्रम में संघ-गुणों की चर्चा की गई है, जिससे यह ज्ञात होता है कि–'जो सुन्दर मार्ग पर आरुढ़ है,

---

1. क. व्या. पृ. 300
2. क. व्या. पृ. 301
3. वि. म. भाग 1, पृ. 484-85.
4. वि. मग्ग. परमत्थमञ्जूषा टीका पृ. 485.

सीधे मार्ग पर आरूढ़ है, न्याय मार्ग पर, उचित मार्ग पर है, जो आह्वनीय है, अतिथि बनाने योग्य है, दान देने योग्य है, हाथ जोड़ने योग्य है और लोक के लिए पुण्य बोने का सर्वोत्तम क्षेत्र है, ऐसे श्रावकसमूह को संघ कहा जाता है। विनय की अट्ठकथा समन्तपासादिक में संघ को प्रणाम करते हुए आचार्य बुद्धघोष ने निम्नलिखित गाथा का उद्गीरण किया है–

"गुणेहि यो सीलसमाधिपञ्ञा-
विमुत्तिञाणप्पभुतीहि युत्तो।
खेत्तं जनानं कुसलत्थिकानं,
तमरियसङ्घं सिरसा नमामि ॥[1]

जिसका सामान्य अर्थ है कि जो शील, समाधि, प्रज्ञा तथा विमुक्तिज्ञान आदि गुणों से समन्वित हैं और कुशल चाहनेवालों के लिए पुण्य बोनें का क्षेत्र है, ऐसे आर्य संघ को शिर से बन्दन करता हूँ। उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि शील, समाधि प्रज्ञा तथा विमुक्ति ज्ञन दर्शन आदि गुणों से समन्वित श्रावक-समूह को संघ कहते हैं।

संघ शब्द का सामान्य अर्थ-समूह, झुन्ड, दल, मण्डली विशेष उद्देश्य से एक साथ रहने वाले व्यक्तियों का समूह, समाज, किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए बना हुआ संघटन, बौद्ध-भिक्षुओं आदि का समूह, प्राचीन भारत में प्रचलित एक प्रकार का प्रजातन्त्र, राज्यों राष्ट्रों का पारस्परिक समझौते से बना संगठन आदि होता है।[2] संस्कृत हिन्दी कोश में संघ शब्द की निष्पत्ति और अर्थ बताते हुए कहा गया है कि (सम्+हन्+अप, टि लोप घत्वम्) जिसका अर्थ होता है–समूह, संग्रह, समुच्चय, झुण्ड, एक साथ रहने वाले लोगों का समूह।[3] भदन्त आनन्द कौशल्यायन ने भी संघ का अर्थ-समूह, परिषद भिक्षुओं की मण्डली, किया है।[4] पालि-अंग्रेजी कोश में संघ का अर्थ 'ए मल्टीच्यूड' किया गया है जिसका अर्थ समूह, समुदाय, गण आदि होता है।[5]

पाणिनि व्याकरण में संघ शब्द के कई अर्थ प्रयुक्त हैं। संघ का सामान्य अर्थ समूह था, जैसे 'ग्राम्य पशु संघ'।[6] संघ शब्द का दूसरा पर्याय 'निकाय' के रूप में प्राप्त होता है। पाणिनि ने निकाय की व्याख्या करते हुए कहा है कि यह उस

---

1. समन्तपासादिक; पृ. 3.
2. वृ. हि. को. ज्ञानमण्डल लि. प्रकाशन, पृ. 1161
3. सं. हि. को. (वामन शिवराम आप्टे) पृ. 1058.
4. पालि हि. को. (भदन्त आनन्द कौशल्यायन, पृ, 315.
5. कान्सिज ऑफ पालि-इन्गलिश डिक्शनरी (ए. पी. बुद्धदत्त महाथेर), पृ. 255.
6. पा. अष्टाध्यायी सू. 1/2/73.

प्रकार का संघ था जिसमें ऊँच-नीच का भेद नहीं होता था (संघे चानौत्तराधर्ये)[1]। इस प्रकार इस सूत्र के अनुसार संघ एक धार्मिक संगठन था जिसके सभी सदस्य परस्पर समानता का व्यवहार करते थे। वस्तुतः धार्मिक संघों की प्रथा पाणिनि के पूर्व-युग में अति सुविदित और लोकव्यापी थी। अनेक धार्मिक आचार्य एवं प्रचारक अपने संघ और गण की दृष्टि से संघिनः गणिनः कहे जाते थे। बौद्ध-संघ का सामन्जस्य पाणिनि के 'संघे चानौत्तराधर्ये' सूत्र के अति-समीप दीखता है। "संघोद्घौ गण प्रशंसयो"[2] इस अर्थ में संघ और गण दोनों पर्यायवाची थे। यह राजनैतिक संघ था, जो अधिकतर गण नाम से प्रसिद्ध था। एक अन्य अर्थ में पाणिनि ने यौधेयों को संघ कहा है।[3] किन्तु उनके अपने सिक्कों पर उन्हें गण कहा गया है। ऐसा लगता है कि ये सिक्के उन यौधेयों के हैं, जो पाणिनि से लगभग 400 वर्ष बाद सक्रिय और संगठित थे।[4] इस प्रकार हम पाते हैं कि पाणिनि ने अपने सूत्रों में कई स्थानों पर संघ शब्द की विवेचना कई अर्थों में की है।

प्रस्तुत प्रसंग में संघ शब्द विशेष अर्थों में प्रयुक्त है। वह है भगवान् बुद्ध का श्रावक संघ जिसका निर्वचन ऊपर किया जा चुका है। पिटक, अनुपिटक, अट्ठकथाओं एवं टीका-ग्रन्थों में भी संघ गुणों का स्मरण करते हुए विस्तार से संघ शब्द का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। भगवान बुद्ध का श्रावक संघ कैसा है इसका वर्णन करते हुए कहा गया है कि-"सुपटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, उजुपटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, ञायपटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, सामीचिपटिपन्नो भगवतो सावकसंघो, यदिदं चत्तारि पुरिस-युगानि अट्ठपुरिसपुग्गला, एस भगवतो सावकसंघो, आहुनेय्यो, पाहुनेय्यो, दक्खिणेय्यो, अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'ति।"[5] अर्थात्-"भगवान् का श्रावक (शिष्य) संघ सुमार्ग पर चल रहा है, भगवान् का श्रावक संघ सीधे मार्ग पर चल रहा है, भगवान् का श्रावक संघ न्याय-मार्ग पर चल रहा है, भगवान् का श्रावक-संघ उचित मार्ग पर चल रहा है, जो कि यह चार युगल और आठ पुरुष-पुद्गल हैं, यही भगवान का श्रावक संघ है, वह आह्वान करने योग्य है, अतिथि बनाने योग्य है, दान देने के योग्य है हाथ-जोड़ने के योग्य है और लोक के लिए पुण्य बोने का सर्वोत्तम क्षेत्र हैं।'

1. पा. अ. सू. 3/3/42.
2. पा. अष्टाध्यायी सू. 3/3/86.
3. पा. अष्टाध्यायी सू. 5/3/117
4. पाणिनिकालीन भारतवर्ष (वशुदेव शरण अग्रवाल) पृ. 431.
5. विसुद्धिमग्गो, भा. 1, पृ. 484.
   अङ्गु. नि. भा. 1, पृ. 193.

उपर्युक्त विवेचनों से संघ शब्द के अर्थ पर विशेष प्रकाश पड़ता है। समग्र और समाहित सम्यक् मार्ग प्रतिपन्न, सुव्यवस्थित जीवन-चर्या से युक्त समुदाय को संघ कहा जा सकता है। इसीलिए–'समग्गं कम्मं समुपगच्छतीति सङ्घो' निर्वचन तथा "सीलदिट्ठिसामञ्ञताय सङ्घातभावं आपन्नो सावकसमूहो" कथन युक्त है। ऋग्वेद में भी–"सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।

देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते॥

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।

समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि॥

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।

समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥"[1]

आदि मन्त्रों के द्वारा समान विचार, समान वचन, समान कर्म, समान बुद्धि आदि बातों में समान भाव से युक्त रहने को कल्याणकर बताया गया है। सम्भवतः आर्य-संघ भी इन्हीं उद्देश्यों के लिए संगठित हुआ। इसीलिए भगवान् बुद्ध के श्रावक संघ के गुणों की चर्चा में ऋजुप्रतिपन्न, सुप्रतिपन्न आदि विशेषण का आख्यान किया गया है।

संघ और सम्प्रदाय

संघ और सम्प्रदाय में भेद परिलक्षित होता है। संघ समान विचार, समान दृष्टि, समान बुद्धि, समान आचरण और समान व्यवहार वाले समुदाय का द्योतक है। किसी मत के अनुयायियों का समूह अथवा किसी विशेष धार्मिक मत के मानने वाले समूह को कहते हैं। सम्प्रदाय का सामान्य अर्थ गुरु-शिष्य परम्परा से प्राप्त शिक्षा के अर्थ में वैदिक काल में प्रयुक्त देखा जाता है। बाद में किसी मत के अनुयायियों का समूह अर्थ व्यञ्जित होने लगा और आज किसी वर्ग विशेष के लिए भी सम्प्रदाय शब्द का प्रयोग होने लगा है। सम्प्रदाय शब्द का निष्पादन करते हुए आप्टे ने (सम्+प्र+दा+घञ्) के द्वारा इसकी सिद्धि की है जिसका अर्थ–परम्परा, परंपरा प्राप्त सिद्धान्त या ज्ञान, परम्परा प्राप्त शिक्षा, धर्म शिक्षा की विशेष पद्धति, धार्मिक सिद्धान्त जिसके द्वारा किसी देवता विशेष की पूजा बतलायी जाय, प्रचलित प्रथा या प्रचलन आदि किया है। वृहत् हिन्दी कोश में सम्प्रदाय का अर्थ गुरुपरम्परा से प्राप्त मन्त्र, सिद्धान्त आदि, परंपरागत विश्वास या प्रथा, विशेष धार्मिक मत या सिद्धान्त, किसी मत के अनुयायियों का समूह आदि किया है। इस प्रकार संघ और सम्प्रदाय में भेद स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

---

1. ऋगवेद संहिता, 1/191/2-4॥

बुद्ध पूर्व सभी धर्म विशेष के अनुयायियों को सम्प्रदाय विशेष ही कहा जाता था। जेसे परिब्राजक सम्प्रदाय, आजीवक सम्प्रदाय, निग्रन्थ सम्प्रदाय आदि। भगवान बुद्ध ने ही सर्वप्रथम संघ का गठन किया और तब से संघ शब्द का प्रयोग किया जाने लगा। अतः संघ कहने मात्र से ही बौद्ध-संघ द्योतित होने लगता है। कालान्तर में बौद्ध संघ भी अनेक सम्प्रदायों में विभक्त हो गया जिसका सत्यापन चूळवग्ग के 'सप्तसतिका' से होता है।

उपाध्याय एवं आचार्य

बौद्ध-भिक्षु संघ में गुरु-शिष्य-परम्परा के पूर्ण निर्वाह की चेष्टा की गई है। प्राचीन काल में आध्यात्मिक ज्ञान के लिए गुरु का बड़ महत्व था। भिक्षु संघ के नियमानुसार प्रव्रज्या प्राप्त करने के बाद व्यक्ति की संज्ञा श्रामणेर होती थी तथा उसे एक उपाध्याय तथा आचार्य का चयन कर उसके आश्रम में रहना होता था। उपाध्याय में शिष्य को पिताबुद्धि एवं शिष्य में उपाध्याय को पुत्र-बुद्धि रखनी होती थी।[1] श्रमणेर के लिए उपाध्याय अथवा आचार्य की विविध सेवाएँ विहित थी।

आचार्य शब्द 'आ+चर+ण्यत्' से निष्पन्न है जिसका सामान्य अर्थ अध्यापक या गुरु होता है। कोशों में आचार्य का अर्थ गुरु, अध्यापक तथा आध्यात्मिक गुरु (जो उपनयन कराता है अथवा वेद की शिक्षा देता है) किया गया है।[2] मनु-स्मृति में आचार्य का अर्थ करते हुए कहा गया है-'उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद्द्विजः, सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते।[3] बौद्ध-विनय में आचार्य और उपाध्याय के कर्त्तव्यों में बहुत कम भेद दृष्टिगोचर होता है। परन्तु वैदिक ग्रन्थों में आचार्य को उपाध्याय से उच्च स्थान प्राप्त है।

उपाध्याय शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए कहा गया है–उपेत्याधीयते अस्मात्-उप+अधि+इ+धञ्, उपाध्यायः। इसका अर्थ अध्यापक, गुरु, विशेषतः अध्यात्म गुरु, धर्म शिक्षक, उप-शिक्षक (जो वेद के किसी भाग को केवल पारिश्रमिक प्राप्त करने के लिए पढ़ाता है, किया गया है।[4] उपाध्याय के इसी अर्थ की पुष्टि करते हुए मनु स्मृति में कहा गया है–"एकदेशं तु वेदस्य वेदाङ्गन्यपि वा पुनः। योऽध्यापयति वृत्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते॥"[5] इस प्रकार वैदिक ग्रन्थों में उपाध्याय

1. "अनुजानामि, भिक्खवे, उपज्झायं। उपज्झायो, भिक्खवे, सद्धिविहारिकम्हि पुत्तचित्तं उपट्ठपेस्सति, सद्धिविहारिको उपज्झायम्हि पितुचित्तं उपट्ठपेस्सति।" म. व. पृ. ४३.
2. सं. हि. को. (आप्टे) पृ. १४१
3. मनु-स्मृति २/१४०.
4. सं हि. को. (आप्टे) पृ. २१५
5. मनु-स्मृति २/१४१.

से आचार्य को उच्च स्थान दिया गया है। मनुस्मृति के अनुसार पेशेवर शिक्षक का कर्म करने वाला उपाध्याय कहा जाता था परन्तु आचार्य आध्यात्मिक गुरु के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

पूर्व में कहा जा चुका है कि प्रव्रज्या-दीक्षोपरान्त श्रामणेर को पूर्ण भिक्षु पद प्राप्त करने के लिए एक आध्यात्मिक गुरु के निर्देशन में कार्य करना होता था। विनय में आध्यात्मिक गुरु के लिए 'उपज्झाय' शब्द मिलता है जो संस्कृत उपाध्याय का पालि रुपान्तर है। पालि उपज्झाय का अर्थ है–'जो निकट चला गया हो।' भिक्षु संघ में उपाध्याय को वही स्थान प्राप्त था जो वैदिक गुरुकुलों में आचार्य को प्राप्त था। बौद्ध संघ में आध्यात्मिक गुरु को उपज्झाय की संज्ञा थी। सामान्य शिक्षकों को आचार्य कहा जाता था। पालि वाङ्गमय में "आचरियधन तथा आचरिय भाग[1] के उल्लेख से यह प्रमाणित होता है कि शिक्षक-वृत्ति के द्वारा जीविकोपार्जन करने वाले व्यक्ति को 'आचरिय' (आचार्य) का पद प्राप्त था। आचार्य बुद्धघोष के अनुसार भिक्षु संघ में 'उपज्झाय' के पद पर प्रतिष्ठित होने के लिए कम से कम दस वर्षों के भिक्षु जीवन के अनुभव की आवश्यकता थी परन्तु 'आचरिय' पद पर मात्र छः वर्षों के लिए भिक्षु जीवन व्यतीत किया हुआ व्यक्ति प्रतिष्ठित किया जा सकता था। हालांकि विनय में उल्लिखित तत्त्वों के आधार पर आचार्य और उपाध्याय के कर्त्तव्यों में भेद करना कठिन है परन्तु उपर्युक्त विवरणों के आधार पर कहा जा सकता है कि बौद्ध संघ में उपाध्याय को आचार्य से उच्च पद प्राप्त था तथा तद्नुकूल सम्मान भी दिया जाता था। आचार्य का कार्य सम्भवतः अन्तेवासिक को ध्यान के लिए उपयुक्त कर्म स्थान का निर्देशन करना था तथा उपाध्याय की अनुपस्थिति में आचार्य उसका स्थान ग्रहण कर श्रामणेर को उचित मार्ग निर्देशन करता था।[2]

महावग्ग में उपाध्याय एवं आचार्यों की आवश्यक योग्यताओं के साथ विभिन्न कर्त्तव्यों का विवरण प्राप्त होता है। उपाध्याय के साथ रहने वाले शिष्य 'सद्धिविहारिक' तथा आचार्य के निश्रय में रहने वाले 'अन्तेवासी' कहे जाते थे। उपाध्याय एवं आचार्य को अपने शिष्यों के प्रति पितृ-भाव रखकर अध्यात्म मार्ग पर अग्रसर करना होता था।

उपसम्पदा देने वाले उपाध्याय की योग्यता का निर्धारण करते हुए कहा गया है कि दस या दस से अधिक वर्ष का भिक्षु जीवन व्यतीत करने तथा चतुर

---

1. संयुक्त निकाय भा. १-पृ. १७६-१७७;
2. अर्ली मोनैस्टिक बुद्धिज्म (दत्त) भा. १ पृ. २८४.

एवं समर्थ भिक्षु उपसम्पदा देने का अधिकारी हो सकता है ।[1] इसके अतिरिक्त उसे–सम्पूर्ण शील समाधि एवं प्रज्ञा पुंज, सम्पूर्ण विमुक्ति पुँज (राग-देषादि का परित्याग) तथा सम्पूर्ण विमुक्तियों के ज्ञान के साक्षात्कार-पुंज से संयुक्त होना चाहिए । उन्हें श्रद्धालु, लज्जाशील, संकोचशील, उद्यमी, स्मरणशील होना चाहिए । इसके साथ-साथ शिष्य को आचार विषयक शिक्षा, शुद्ध ब्रह्मचर्य की शिक्षा, धर्म और विनय की ओर अग्रसर करने की शिक्षा तथा उत्पन्न मिथ्या धारणाओं के विषय में धर्मानुसार विवेचन करने की शिक्षा आदि को सिखाने का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए । सभी छोटे-बड़े दोषों (अपराधों) की पूर्ण जानकारी, सभी निर्दोषों की पूर्ण जानकारी, शील सम्पन्नता, आचार सम्पन्नता, विद्या की परिपूर्णता, प्रज्ञा-संयुक्तता आदि गुण उपाध्याय एवं आचार्य के सर्वोत्तम गुणों में हैं, जिनका स्वयं में पालन करते हुए अपने शिष्यों को भी उसके पालन के लिए प्रेरित करना आवश्यक था ।[2]

उपाध्याय को शिष्य के प्रति कई कर्त्तव्यों का निर्देश किया गया है । उपाध्याय को शिष्य से अच्छा व्यवहार करना चाहिए । विनय पिटक में अच्छे व्यवहार का तात्पर्य बताते हुए कहा गया है कि–"उपाध्याय को शिष्य पर अनुग्रह करना चाहिए । पात्र चीवर शिष्य को दिलवाने के लिए उत्सुक होना चाहिए, उसके दैनिक आवश्यकता की सभी वस्तुओं को उपलब्ध करवाना चाहिए । शिष्य यदि रोगी हो तो समय से उसे दातुन, मुखोदक, जल, आसन आदि देना चाहिए । पात्र धोकर खिचड़ी आदि पथ्य प्रदान करना तथा भोजनोपरान्त पात्र हटाकर रख देना चाहिए । शिष्य के उठ जाने पर आसन उठा कर झाड़ू देना तथा अगर शिष्य ग्राम में जाना चाहता हो तो उसे वस्त्र थमाना चाहिए । मटके में जल भरना चाहिए । इस प्रकार असमर्थता की स्थिति में उपाध्याय को सभी प्रकार से शिष्य की सेवाएँ करनी होती थी ।[3]

उपाध्याय के कहीं अन्यत्र चले जाने पर, विचार परिवर्त्तन कर लेने पर अथवा उनकी मृत्यु के पश्चात् शिष्यों में अनुशासनहीनता पनपने लगती थी, जिसे देख कर उपाध्याय की अनुपस्थिति में आचार्य चयन कर उनके निश्रय में रहने की अनुमति तथागत ने की । आचार्य की योग्यता का निर्धारण भी लगभग उपाध्याय के समान ही माना गया । शिष्यों के प्रति आचार्य का व्यवहार भी

---

1. "अनुजानामि, भिक्खवे, ब्यत्तेन भिक्खुना पटिबलेन दसवस्सेन वा अतिरेकदसवस्सेन वा उपसम्पादेतुं" म. व. पृ, ५७.
2. म. व. (उपसम्पादेतब्बपञ्चकं, उपसम्पादेतब्बछक्कं), पृ. ६७-७३.
3. "उपज्झायेन, भिक्खवे, सद्धिविहारिको.............म. व. पृ. ४८-४९.

पुत्रवत् एवं शिष्यों का आचार्य के प्रति पितृवत् स्नेह बनाने की अनुज्ञा थी ।[1] आचार्य को अपने शिष्यों के साथ सम-भाव एवं अच्छे व्यवहार करना होता था । अच्छे व्यवहार से तात्पर्य उपाध्याय के उपर्युक्त कथित सभी कुशल व्यवहारों से है जो वे अपने शिष्यों के प्रति करते थे । आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने के लिए भिक्षु को निर्लोभी, संतुष्ट, लज्जाशील, संकोची तथा शिक्षा चाहने वाला होना आवश्यक था ।

जिन शिष्यों का अपने आचार्य अथवा उपाध्याय के साथ अच्छा व्यवहार नहीं था, अनुशासन हीन थे, अथवा अन्य गलत कार्यों में लिप्त थे उन्हें दण्ड देने का विधान भी किया गया था । पाँच बातों से युक्त शिष्य का परिष्कार किया जाता था, यथा - उपाध्याय में अधिक प्रेम नहीं रखता हो, उनके प्रति पूर्ण श्रद्धा न हो, लज्जाशील नहीं हो, अधिक गौरव नहीं करता हो तथा अध्यात्म पथ पर अग्रसर होने के लिए ध्यान आदि की भावना नहीं करता हो ।[2] परन्तु उसके क्षमा-याचना के पश्चात् आचार्य क्षमा कर दिया करते थे । हम पूर्व में देख चुके हैं कि बौद्ध भिक्षु-संघ का गठन तत्कालिक आश्रम-व्यवस्था के आदर्शों पर किया गया था अतः बौद्ध विहार गुरुकुलों के समान शिक्षा के केन्द्र बन गये थे । भिक्षु जीवन में ब्रह्मचर्याश्रम, वानप्रस्थाश्रम तथा सन्यासाश्रम का समन्वय होने से विहारों में शिक्षण कार्य को प्रमुखता मिली । शिष्यों के अच्छे आदर्श, अनुशासन तथा गुरु-शिष्य सम्बन्धों के लिए बौद्ध संघ सतत् प्रयत्नशील रहा । विभिन्न संघारामों में आध्यात्मिक चिन्तन की प्रमुखता थी । बुद्ध कालीन प्रसिद्ध आचार्यों में सारिपुत्त, महामोग्गलान, महाकच्चान, महाकोट्ठित, महाकप्पिन, महाचन्द्र, अनुरुद्ध, रेवत, उपालि, आनन्द, राहुल, उपालि, महाकाश्यप आदि प्रमुख थे । ये लोग प्रायः भ्रमणशील रहा करते थे और जिस विहार मे भी कुछ समय व्यतीत करने के लिए रुक जाते थे वहाँ के भिक्षुओं को इनसे जटिल प्रश्नों पर विचार-विमर्श कर शंका समाधान का सुअवसर प्राप्त होता था ।[3] विभिन्न बौद्ध आचार्य वेद, वैदिक साहित्य, ब्राह्मण संहिता, उपनिषद, धर्मसूत्र प्रयोग तथा लौकिक साहित्य (अर्थशास्त्र, शिल्प तथा वार्ता) आदि विषयों के पारंगत होते थे । पालि भाषा एवं बौद्ध दर्शन में निष्णात तो होते ही थे । इसका मुख्य कारण था कि आचार्यों को

---

1. अनुजानामि, भिक्खवे, आचरियं । आचरियो, भिक्खवे, अन्तेवासिकम्हि पुत्तचित्तं उपट्ठापेस्सति, अन्तेवासिको आचरियम्हि पितुचित्तं उपट्ठापेस्सति ।" म. व. पृ. ५८.
2. उपज्झायम्हि नाधिमत्तं पेमं होति, अधिमत्तो पासादो होति, अधिमत्ता हिरी होति, अधिमत्तो गारवो होति, अधिमत्ता भावना होति-इमेहि खो, भिक्खवे, पञ्चहङ्गेहि समन्नागतो सद्धिविहारिको पणामेतब्बो । म. व. पृ. ५२
3. ऐन्सियेन्ट इन्डियन एड्डुकेशन (राधा कुमुद मुकर्जी), पृ. ४५२,

शास्त्रार्थ में विरोधियों को परास्त करने के लिए दर्शन तथा साहित्य के साथ-साथ विरोधियों के मतों को भी जानना अनिवार्य होता था।

श्रामणेर

बौद्ध धर्म की प्रारम्भिक दीक्षा प्रव्रज्या के उपरान्त व्यक्ति की संज्ञा श्रामणेर 'पालि सामणेर' होती है। 'उसका अपत्य' इस अर्थ में समण आदि शब्दों से 'णेर' प्रत्यय विकल्प से होता है।[1] समणस्स अपच्चं उपज्झायस्स पुत्तो पुत्तट्ठानीयत्ता ति सामणेरो।[2] श्रामणेरों के लिए कायिक, वाचिक तथा मानसिक संयमन अपरिहार्य था क्योंकि इससे किसी दूसरे की हानि हो सकती है। अलोभ, अद्वेष तथा अमोह ही कुशल कर्मों का मूल है जिनसे विरत रहना श्रामणेरों को आवश्यक था। प्रव्रज्या दीक्षा के उपरान्त दस शिक्षा पदों की शिक्षा का विधान किया गया था। इन शिक्षापदों में वैदिक परम्परा के ब्रह्मचारियों के संयमित जीवन का स्वरुप दृष्टिगोचर होता है। दस शिक्षा पदों में दस विरतियाँ संग्रहित हैं। यथा–

(१) पाणातिपाता वेरमणी (प्राणि-हिंसा से विरति)

(२) अदिन्नादाना वेरमणी (अदत्त आदान (चोरी) से विरति)

(३) कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी (कामगत मिथ्याचार, अब्रह्मचर्य से विरति)

(४) मुसावादा वेरमणी (असत्य भाषण से विरति)

(५) सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना वेरमणी (सुरा तथा मद्योत्पादक वस्तुओं से विरति)

(६) विकालभोजना वेरमणी (असमय भोजन से विरति)

(७) नच्चगीतवादितविसूकदस्सना वेरमणी (नृत्य, गीत, वाद्य तथा चित्र-दर्शन से विरति)

(८) मालागन्धविलेपन-धारण-मण्डन-विभूषणट्ठाना वेरमणी (माला-गन्ध-विलेपन, धारण तथा अलंकार से विरति)।

(९) उच्चासयन-महासयना वेरमणी (ऊँची तथा बहुमूल्य शय्या से विरति)

(१०) जातरूपरजतपटिग्गहणा वेरमणी (स्वर्ण-रजत आदि बहुमूल्य पदार्थ-ग्रहण से विरति)

उपर्युक्त दस शिक्षापदों से प्रधानतया सदाचार का परिपालन तथा स्वार्थ भावना का त्याग, इन दो बातों की प्रतीति होती है। दस शिक्षापद दस शील हैं जिनके पालन से श्रमणेर में सदाचार का आसादन तथा स्वार्थ भावना का

---

1. क. व्या., सु. ३५१ (णेर विधवादितो)
2. रुपसिद्धि, सु. ३५७.

अतिक्रमण होता है। इन दोनों से श्रमणेर के अविद्या (अज्ञान) का प्रहाण तथा त्यागमय जीवन की उदात्तता अधिगत होती है। इसलिए एक श्रामणेर को उपर्युक्त दस शिक्षापदों के जीवन पर्यन्त अव्यतिक्रम की शिक्षा दी जाती थी।[1]

पुनः चार निश्रयों की शिक्षा दी जाती थी जिनका पूर्ण परिपालन श्रामणेर के लिए आवश्यक था। प्रथम निश्रय 'पिण्डियालोपभोजनं' अर्थात भिक्षा-पात्र में मिले अन्न से जीवन निर्वाह, द्वितीय निश्रय 'पंसुकूल चीवरं' अर्थात् यत्र-तत्र विखरे कपड़ो से चीवर बनाकर जीवन यापन करना, तृतीय निश्रय 'रुक्खमूलसेनासनं' अर्थात् वृक्ष मूल में निवास तथा चतुर्थ 'पूतिमुत्त भेसज्जं' अर्थात् भैषज के रूप में गोमूत्र का सेवन है।[2] चीवर, पिण्डपात, शयनासन तथा भैषज्य सम्बन्धी चार निश्रयों का आसेवन जीवन पर्यन्त करने से श्रामणेर में अल्पेक्षता एवं संयम आदि गुणों का विकास होता था। इन्हीं गुणों का स्वयं में विकास करता हुआ श्रामणेर पाँच वर्षों तक भिक्षु पद प्राप्त करने के लिए प्रयासरत रहता था।

संघ में आचार्य आदि वरिष्ठ भिक्षुओं के साथ श्रामणेरों के लिए उचित मान-सम्मान गौरव एवं प्रतिष्ठा देना विहित था। अमर्यादित श्रामणेरों के लिए 'आवरण दण्ड का विधान था। संघ के अन्य भिक्षुओं के अलाभ करने वाला उनके अनर्थ की कामना करने वाला, भिक्षुओं के बीच अनुशासनपूर्वक नहीं रहनेवाला, भिक्षुओं की निंदा या शिकायत करनेवाला तथा आपस में कलह करने वाला इन पाँच प्रकार के दुश्चरित-युक्त श्रामणेर को उपर्युक्त 'आवरण' दण्ड दिया जाता था।[3] यह दण्ड संघ के द्वारा उपाध्याय से पूछ कर दिया जाता था। इसी प्रकार दस बातों से युक्त श्रामणेर को संघ से निष्कासन रूपी दण्ड का विधान था। वे दस दुष्कर्म थे - प्राणि-हिंसा का दोषी, चोर, अब्रह्मचारी, मिथ्या-भाषण, शराब सेवन, बुद्ध-निंदा, धर्म की निंदा, संघ की निंदा, मिथ्या धारणा वाला तथा भिक्षुणी दूषक इन दस दुश्चरितों से युक्त श्रामणेर को वहिष्कृत करने की अनुज्ञा तथागत ने की थी।[4]

---

1. मं. व, (सिक्खापदकथा), पृ. ८७.
2. मं. व. पृ. १००.
3. "भिक्खूनं अलाभाय परिसक्कति, भिक्खूनं अनत्थाय परिसक्कति, भिक्खूनं अनावासाय परिसक्कति, भिक्खू अक्कोसति परिभासति, भिक्खू भिक्खूहि भेदेति-अनुजानामि, भिक्खवे, इमेहि पञ्चहङ्गेहि समन्नागतस्स सामणेरस्स दण्डकम्मं कातुं ति। ....आवरणं कातुं ति।" म. व. पृ. ८८।
4. "पाणातिपाती होति, अदिन्नादायी होती, अब्रह्मचारी होती, मुसावादी होती, मज्जपायी होती, बुद्धस्स अवण्णं भासति, धम्मस्स अवण्णं भासति, सङ्घस्स अवण्णं भासति,

श्रामणेर के लिए न्यूनतम उम्र सीमा पन्द्रह वर्ष की थी अन्य सभी योग्यताएँ वहीं हैं जिसका विस्तृत विवेचन प्रव्रज्या के योग्य अयोग्य व्यक्तियों के विवरण प्रसंग में किया जायगा। प्रारम्भ में श्रामणेर बिना उपाध्याय के रहते थे। उचित उपदेशों के अभाव में भिक्षाटन के लिए जाते समय पात्र, चीवर आदि ढंग से नहीं पनहते थे, भोजन मांग कर करते, भोजन पर बैठे हुए शोर करते थे उनमें दैनिक जीवन की अन्य कई अनियमितताओं का समावेश होने से अनुशासन का अभाव दीखाने लगा। जिस महत् उद्देश्य को लेकर वे भिक्षु संघ में प्रव्रजित हुए थे उससे विमुख होते देखकर तथागत ने दस वर्षों से अधिक भिक्षु जीवन व्यतीत किये हुए चतुर एवं समर्थ भिक्षु को उपाध्याय (गुरु) बनाकर श्रामणेरों को उनके निश्रय में रहने की अनुज्ञा की। उपाध्याय ग्रहण करने का विधान इस प्रकार था—उत्तरासंग को एक कन्धे पर कर, पाद-वंदन कर उकड़ूँ बैठकर हाथ जोड़कर तीन बार ऐसा कहना चाहिए—भन्ते मेरे उपाध्याय बनिये।[1] एक चतुर व समर्थ भिक्षु दो अथवा जितने को वह उपदेश और अनुशासन कर सकता हो उतने श्रामणेरों को अपने निश्रय में रख सकता था।[2]

इसी के साथ श्रामणेर का शैक्षिक जीवन प्रारम्भ होता था। उपाध्याय के शिष्य को सद्धिविहारिक तथा उनके कहीं चले जानेपर अथवा मृत्यु हो जाने पर आचार्य का चयन किया जाता था। आचार्य के शिष्य को अन्तेवासी संज्ञा होती थी। तथागत ने एक श्रामणेर को अपने उपाध्याय अथवा आचार्य के प्रति सद्व्यवहार की अनुज्ञा की थी। सद्व्यवहार का तात्पर्य विभिन्न तरीकों से गुरु की सेवा करने से है। एक श्रामणेर का अपने गुरु के प्रति विभिन्न कर्त्तव्यों का विस्तृत विवेचन सद्धिविहारिक तथा अन्तेवासिक के कर्तव्यों के अन्तर्गत किया जायगा।

सद्धिविहारिक

सद्धिविहारिक दो शब्दों 'सद्धि+विहारिक' से निष्पन्न है। पालि शब्द कोश में सद्धि का अर्थ है 'एक साथ'। विहारिक का अर्थ हे वास करना। इस प्रकार पालि कोशों में 'सद्धिविहारिक' का अर्थ किया गया है—सहवासी, बन्धु-भिक्षु या शिष्य, एक साथ विहार करने वाला अथवा साथ-साथ चलने वाला। सद्धिविहारिक को

मिच्छादिट्ठिको होती, भिक्खूनीदूसको होती-अनुजानामि..........इमेहि दसहङ्गेहि समन्नागतं सामणेरं नासेतुं ति।" म. व. पृ. ८९।

1. 'अनुजानामि, भिक्खवे, उपज्झायं। ....। एवं च पन भिक्खवे उपज्झायो गहेतब्बो-एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा, पादे वन्दित्वा, उक्कुटिकं निसीदित्वा अञ्जलिं पग्गहेत्वा एवमस्स वचनीयो-'उपज्झायो मे भन्ते होहि........होहीति।' म. व. पृ. 43.
2. अनुजानामि..........एकेन द्वे सामणेरे उपट्ठापेतुं, यावतके वा पन उस्सति ओवदितुं अनुसासितुं तावतके उपट्ठापेतुं ति। म. व. पृ. 87.

सद्धिविहारी भी कहा गया है । वैदिक वाङ्मय में 'सद्धिन' का अर्थ होता है एक लक्ष्य की ओर तथा विहारिक का अर्थ विहार या विचरण करने वाला । इस प्रकार पालि एवं वैदिक वाङ्मय में सद्धिविहारिक के अर्थो में पर्याप्त समानताएँ हैं । भदन्त आनन्द कौशल्यायन ने अपने पालि-हिन्दी कोश में सद्धिविहारिक का अर्थ 'सब्रह्मचारी' किया है ।[1]

पूर्व में कहा जा चुका है कि प्रारम्भ में प्रव्रज्या के उपरान्त श्रामणेर बिना उपध्याय के रहते थे । उचित उपदेशों के अभाव में श्रामणेरों के द्वारा विभिन्न प्रकार के अनुशासनहीन आचरण प्रकाश में आने के बाद तथागत ने श्रामणेरों को एक उपाध्याय का चयन कर उनके निश्रय में रहकर विभिन्न वैनयिक कर्मों की शिक्षा प्राप्त करने की अनुज्ञा की ।[2] पालि-त्रिपिटक में कई स्थानों पर श्रामणेर को सद्धिविहारिक कहा गया है । ऊपर उल्लिखित सद्धिविहारिक के अर्थों को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि श्रामणेर के अपने उपज्झाय-संग वास करते हुए पूर्ण-भिक्षुपद की प्राप्ति हेतु निरन्तर यत्नशील रहने के कारण ही वस्तुतः उसे 'सद्धिविहारिक' संज्ञा से अभिहित किया गया था । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि उपाध्याय के साथ रहकर शिक्षा ग्रहण करने वाला श्रामणेर अथवा कोई अन्य भिक्षु जो विभिन्न संघ-कर्मों का प्रशिक्षण प्राप्त करता था, सद्धिविहारिक कहा जाता था । उपाध्याय सद्धिविहारिक को धर्म और विनय की शिक्षा के साथ-साथ संघीय जीवन के लिए आवश्यक वैनयिक एवं अनुशासनिक नियमों का भी प्रशिक्षण देते थे ।[3] यही कारण था कि प्रव्रज्या के उपरान्त एक व्यक्ति को किसी समर्थ तथा चतुर भिक्षु को अपना उपाध्याय चयनित कर उनसे तीन बार याचना करनी होती थी कि–'भन्ते आप मेरे उपाध्याय बनें ।[4]

भगवान बुद्ध ने सद्धिविहारिक को उपाध्याय के निश्रय में रहने के साथ-साथ यह भी अनुज्ञा की, कि उपाध्याय एवं सद्धिविहारिक के सम्बन्ध पिता-पुत्र के तरह होना चाहिए । सद्धिविहारिक अपने उपाध्याय को पिता समान आदर दे तथा उपाध्याय अपने शिष्यों के प्रति पुत्रवत् स्नेह प्रदर्शित करे ।[5] इस प्रकार सद्धिविहारिक से उपाध्याय के सभी प्रकार की सेवाओं की उम्मीद की जाती थी । वस्तुतः उपाध्याय एवं सद्धिविहारिक का सम्बन्ध बहुत कुछ वैसा ही था जैसा कि

---

1. पा. हि. को. (भ. आनन्द कौशल्यायन) पृ. 321
2. म. व., पृ. 43
3. म. व. पृ. 48
4. 'उपज्झायो मे भन्ते होहि' –म. व. पृ. 43.
5. 'अनुजानामि भिक्खवे, उपज्झायो, भिक्खवे, सद्धिविहारिकम्हि पुत्तचित्तं उपट्ठपेस्सति, सद्धिविहारिको उपज्झायम्हि पितुचित्तं उपट्ठपेस्सति ।" म. व. पृ. 43.

वैदिक गुरुकुलों में गुरु और शिष्य का देखा जाता है। प्राचीन भारत में आध्यात्मिक गुरु का बड़ा महत्त्व था। भारतीय संस्कृति की परम्परा में ज्ञानार्जन के लिए गुरु सेवा की अनिवार्यता को स्वीकार किया गया है। इसी परम्परा को विद्यमान् रखते हुए तथागत ने सद्धिविहारिकों के लिए अपने उपाध्याय के प्रति विविध सेवाओं का विधान किया। उदाहरणार्थ–सद्धिविहारिक को समय से उठकर, जूता छोड़ कर, उत्तरासंग को एक कन्धे पर कर दतवन देना चाहिए, मुख प्रक्षालन के लिए जल तथा बैठने के लिए आसन बिछाना चाहिए। यदि कलेवा के लिए यागू (एक प्रकार का भोज्य पदार्थ) हो तो उसे देना चाहिए। उपाध्याय के उठ जाने पर आसन उठा कर उस स्थान पर झाड़ू देना चाहिए। यदि उपाध्याय चारिका, उपदेश आदि के लिए गाँव में या आवास से अन्यत्र कहीं भी जाना चाहते हों तो उन्हें वस्त्र थमाना चाहिए, कमर-बन्द देना चाहिए, चपोत कर (सुव्यवस्थित कर) संघाटी तथा पात्र को साफ कर पानी देना चाहिए। यदि उपाध्याय कोई अनुगामी भिक्षु (शिष्य) अपने साथ ले जाना चाहते हैं तो सद्धिविहारिक को तीन स्थानो को ढाँकते हुए भली प्रकार चीवर पहन, कमरबन्द बाँध, संघाटी धारण कर पात्र धोकर जल भर कर उपाध्याय का अनुचर भिक्षु बनकर उनके पीछे चलना चाहिए। साथ जाते समय अत्यन्त दूर वा समीप नहीं चलना चाहिए। भिक्षा-पात्र में मिले भिक्षान्न को स्वीकार करना चाहिए। उपासक या किसी अन्य से उपाध्याय के बात करते समय बीच-बीच में दखल नहीं देना चाहिए। हाँ यदि उपाध्याय कोई अनुचित या असमय वार्तालाप कर रहे हों तो उन्हें मना करना चहिए। चारिका से वापस लौटते समय उपाध्याय से पूर्व ही आकर उनके लिए आसन बिछा देना चाहिए, पादोदक (पैर धोने के लिए जल), पाद-पीठ; पादकठली (पैर घिसने के लिए पीढ़ा) आदि रख देना चाहिए। मुख धोने के बाद पोछने के लिए तौलिया देना चाहिए। पुनः आगे बढ़ कर उनके हाथ से पात्र-चीवर ले लेना चाहिए दूसरा वस्त्र देकर पहले वस्त्र को धूप में देना चाहिए ताकि पसीना आदि सूख जाय। यदि भिक्षान्न है तो उपाध्याय के इच्छानुसार भोजन देना चाहिए, जल पात्र में जल देना चाहिए। भोजनोपरान्त पात्र को भली प्रकार धो पोंछ कर धूप में थोड़ी देर सुखाकर यथास्थान रखना चाहिए। यदि उपाध्याय स्नान करना चाहते हों तो स्नानागार (जन्ताघर) में स्नान चूर्ण ले जाकर मिट्टी भिगोनी चाहिए, काष्ट पीढ़िका तथा समुचित जल आदि का प्रबन्ध कर उपाध्याय को सूचित करना चाहिए। उपाध्याय के स्नान के समय अगर आवश्यक हो तो उनका पीठ मलना चाहिए। स्नान के बाद उन्हें समुचित वस्त्र, चीवर आदि देना चाहिए।

इसी प्रकार जिस विहार में उपाध्याय वास करते हैं अथवा विहार करते हैं यदि वह विहार गन्दा है तो समर्थ होने पर उसकी सफाई करना सद्धिविहारिक का कर्त्तव्य हे। विहार साफ करने के पूर्व उसमे रखा हुआ पात्र, चीवर, शयनासन, गद्दा-चादर, तकिया, चारपायी इत्यादि को एक ओर रखना चाहिए। विहार के कमरों मे अगर जाला हो तो उसे साफ करना चाहिए। सफाई के बाद कूड़े-करकट को एक तरफ फेंकना चाहिए। सफाई के बाद फर्श आदि को धूप में सुखाकर सभी वस्तुओं को पूर्व की भाँति यथास्थान रखना चाहिए। यदि धूल भरी हवा चल रही हो तो हवा की ओर की खिड़की बन्द करनी चाहिए। गर्मी के दिनों में खिड़की रात में खोलना तथा दिन में बन्द कर देना चाहिए। यदि आँगन (परिवेण) कोठरी, स्नानागार गन्दा हो तो उसे साफ करना चाहिए। पीने का पानी तथा शौचालय का पानी मटकी मे भर कर रखना चाहिए।

यदि उपाध्याय का चीवर गंदा हो तो शिष्य को उसे धोना चाहिए। उनके चीवर को यदि रंगना हो तो नियमानुसार रंग पकाकर रंगना चाहिए। उलट-पुलटकर देख लेना चाहिए कि किसी स्थान पर चीवर बिना रंगा न रह गया हो।

सद्धिविहारिक के उपर्युक्त कर्त्तव्यों के अतिरिक्त गुरु की आज्ञा पालन उसके लिए सर्वोच्च आदर्श था। उपाध्याय की आज्ञा के बिना कोई कार्य नहीं किया जाता था। विनय में कहा गया है कि उपाध्याय के बिना पूछे पात्र, चीवर आदि न किसी को देना चाहिए और नहीं किसी से ग्रहण करना चाहिए, न किसी को परिष्कार देना चाहिए न किसी से लेना चाहिए। इसी प्रकार बाल काटना, देह घँसना, किसी की सेवा करना, पीछे चलने वाला अनुचर किसी अन्य का भिक्षान्न आदि कर्म उपाध्याय की अनुमति के बिना न किसी के लिए करना चाहिए और न किसी से करवाना चाहिए। उपाध्याय की अनुमति के बिना न तो ग्राम में भिक्षाटन के लिए या न तो श्मशान आदि में साधना के लिए जाना जाहिए। यदि उपाध्याय रोगी हों तो उनके निरोगी होने की प्रतीक्षा में जीवनपर्यन्त सेवा करनी चाहिए। भिक्षुओं के लिए केश बढ़ाने का निषेध होने के कारण उपाध्याय के बालों का मुण्डन करना शिष्य का कर्त्तव्य था। सद्धिविहारिक के लिए इस बात का भी निर्देश प्राप्त होता है कि वह सभी कार्यों के करते समय अत्यन्त सावधान रहे। उदाहरण के लिए यदि शयनासन को स्थान्तरित करना हो, तो उसे यह कार्य भूमि या दरवाजे से टकराये बिना करना चाहिए जिससे दीवार आदि की हानि तथा आवाज उत्पन्न न हो।

उपाध्याय के प्रति सद्धिविहारिक का दायित्व मात्र शारीरिक सेवा तक ही सीमित नहीं था। गुरु के प्रति अपने नैतिक दायित्व का सफल निर्वाह करना भी उसका परम कर्त्तव्य माना जाता था। यदि उपाध्याय को उदासी हो तो शिष्य को उदासी दूर करने के लिए धार्मिक कथा कहनी चाहिए। यदि उपाध्याय को कौकृत्य (शंका) उत्पन्न हुई हो तो धार्मिक कथा आदि के माध्यम से उसे दूर करना चाहिए। यदि उपाध्याय असत्य मार्गगामी हो जाता है तो उस अवस्था में सद्धिविहारिक का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि स्वयं तर्क करके अथवा किसी अन्य के माध्यम से उन्हें सद्मार्ग पर ले आये। इसी प्रकार यदि सद्धिविहारिक को इस बात का विश्वास हो जाता कि उसके उपाध्याय ने मूलाय-प्रतिकर्षण, तज्जनीय, प्रव्रजनीय, प्रतिसारणीय, उत्क्षेपणीय, मानत्त आदि संघीय अपराधा का दोषी हो तो वह इस तथ्य को संघ के समक्ष उपस्थित करे ताकि संघ उपाध्याय को अनुशासन-भंग के अपराध के लिए मूलाय-प्रतिकर्षण, आह्वान, मानत्त अथवा दूसरे उपयुक्त प्रायश्चित की व्यवस्था करे। लेकिन यदि संघ उस स्थिति में किसी उपाध्याय के विरुद्ध दंड का विचार करता, जब उनके सद्धिविहारी को अपने गुरु के सर्वथा निर्दोष होने का पूर्ण विश्वास रहता, तो उसका दायित्व बन जाता था कि वह संघ के दृष्टिकोण में यथासम्भव सच्चाई बताकर परिर्वतन लाने का प्रयास करता, और यदि निर्दोष होने के बावजूद उपाध्याय को संघ के द्वारा प्रायश्चित का विधान कर दिया जाता तो सद्धिविहारिक के लिए यह उचित हो जाता कि वह इस बात का प्रयास करे कि संघ अपने निर्णय पर पुर्नविचार करके उसमे संशोधन करे।[1]

वैदिक एवं बौद्ध शिष्य परम्पराओं के तुलना करने पर, सद्धिविहारिक के उपर्युक्त नैतिक कर्त्तव्यों के निर्वाह का वैदिक परम्परा में अभाव प्राप्त होता है। गुरुकुलों के ब्रह्मचारियों को यह अधिकार नहीं था कि वह अपने आचार्य के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही में भाग लेता। इसका कारण सम्भवतः यह था कि बौद्ध संघ में गुरु-शिष्य सम्बन्ध केवल पाँच वर्षो तक ही सीमित रहता था, और श्रामणेर को भविष्य में भी भिक्षु संघ का सदस्य बना रहना होता था, परन्तु, वैदिक गुरुकुल का ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य आश्रम की परिसमाप्ति पर गृहस्थ धर्म में प्रवेश करता था। यही कारण था कि श्रामणेर को अपने उपाध्याय के दोषों को प्रकाश में लाने का अधिकार प्रदान किया गया था।

---

1. उपज्झायवत्तकथा, म. व. पृ. 42-47; चु. व., पृ. 328-332 स. पा. भा. 3, पृ. 1025-1031.

सद्धिविहारिकों का पर्याप्त अनुशासन संघ के हित के लिए आवश्यक था। अपने उपाध्यायों की अवज्ञा अथवा अवहेलना करने वाले सद्धिविहारिकों को संघ से निष्कासित करने का प्रावधान था। उपाध्याय को यह अधिकार था कि उद्दंड आचरण करने वाले शिष्यों को समुचित दंड दें। परन्तु उपाध्याय अपने अधिकार का दुरुपयोग न करने पावें इसके लिए उन्हें कड़े निर्देश थे। यदि संघ से विधिवत् निष्कासित सद्धिविहारिक उपाध्याय से क्षमा-याचना करता तो उपाध्याय को उसे क्षमा करने की छूट थी।[1] मुख्यतः पाँच बातों के दोषी शिष्य को उपाध्याय दण्ड देते थे, यथा–उपाध्याय में अधिक प्रेम नहीं रखता हो, उनमें श्रद्धा नहीं रखता हो, उनसे संकोच (लज्जी) नहीं करता हो, उनके प्रति गौरव का अभाव हो तथा ध्यान की भावना में अरुचि रखता हो।[2]

इस प्रकार विनय के विभिन्न प्रसंगों से हमें ज्ञात होता है कि बौद्ध भिक्षुसंघ में गुरु-शिष्य परम्परा के निर्वाह की पूर्ण चेष्टा वैदिक गुरुकुलों के समान ही की गई थी। गुरुजनों के प्रति श्रद्धा और सम्मान के साथ-साथ शारीरिक सेवा करने में शिष्य सदैव तत्पर रहते थे। भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं को उपदेश दिया कि वे अपने गुरुओं, गुरुजनों एवं गुरुतुल्य व्यक्तियों के व्यवहार में समुचित आदर, अनुराग एवं सत्कार दिखावें। उपासकों को भी उपदेश दिये गये कि वे अपने माता-पिता, अग्रज तथा गुरु का सम्मान करें। धम्मपद में कहा गया है कि जो व्यक्ति वृद्धों का निरन्तर अभिवादन एवं आदर करता है उसके आयु, सौन्दर्य, सुख तथा बल में निरन्तर वृद्धि होती रहती है। यथा–

अभिवादनसीलस्स निच्चं वद्धापचायिनो।
चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति आयु वण्णो सुखं बलं॥[3]

मनुस्मृति में भी उक्त बातें हूबहु कही गई है।[4] बौद्ध विहारों में गुरुजनों के प्रति समुचित सत्कारादि आदर्शों का पालन पूर्णरूपेण किया जाता था। शिष्टाचार सम्बन्धी छोटी से छोटी बातों का भी सद्धिविहारिक ध्यान रखते थे। उपाध्याय के आदेशानुसार ही जीवन का संचालन करते हुए सद्धिविहारिक ध्यान मार्ग की ओर अग्रसर होते थे।

---

1. म. व., पृ. 51-53.
2. उपज्झायम्हि नाधिमत्तं पेमं होति नाधिमत्तो पसादो होति, नाधिमत्ता हिरी होति, नाधिमत्तो गारवो होति, नाधिमत्ता भावना होति-इमेहि खो, भिक्खवे, पञ्चहङ्गेहि समन्नागतो सद्धिविहारिको पणामेतब्बो। म. व., पृ. ५२
3. धम्मपद 109, पृ.- म. व., पृ.-52.
4. अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य परिवर्द्धन्ते आयुर्विद्यायशोबलम्॥ मनु-स्मृति, 2/121

अन्तेवासिक

आचार्य के साथ रहने वाले शिष्य को अन्तेवासिक या अन्तेवासी कहते हैं। अभिधानप्पदीपिका टीका में अन्तेवासिक शब्द की व्याख्या करते हुए कहा गया है–"आचरियस्स अन्ते वसनसीलो ति अन्तेवासी"[1] अर्थात् आचार्य के समीप अथवा आचार्य के निश्रय में रहने वाले शिष्य को अन्तेवासी कहा जाता है। उपाध्याय के भिक्षु-संघ से कहीं अन्यत्र चले जाने पर, उनके विचार-परिवर्तन कर लेने पर उनके काल-कवलित (मृत्यु) होने पर, दूसरे पक्ष में (अन्य धर्म में) चले जाने पर तथा स्वयं उपाध्याय के द्वारा शिष्य को अपने से अलग होने की स्वीकृति प्रदान करने पर सद्धिविहारिक का, उपाध्याय से निश्रय टूट जाता था।[2] तत्पश्चात् सद्धिविहारिक को किसी योग्य एवं समर्थ भिक्षु को 'आचार्य' के रूप में ग्रहण करना पड़ता था। स्पष्ट है कि आचार्य का चयन उपाध्याय के स्थान पर किया जाता था एवं भिक्षु की संज्ञा सद्धिविहारिक से बदलकर अन्तेवासी या अन्तेवासिक हो जाता था।

भगवान् बुद्ध ने एक पूर्ण भिक्षु के लिए भी अनुज्ञा की थी कि उपसम्पदा प्राप्ति के पश्चात् सद्धिविहारिक अथवा अन्तेवासिक को एक योग्य तथा समर्थ वरिष्ठ भिक्षु को 'आचार्य' चयन कर उनके निश्रय में पाँच वर्षों तक रहना होगा। उक्त भिक्षु के निश्रय की अवधि तब तक या जीवन-पर्यन्त बढ़ाई जा सकती थी। जब तक वह उपसम्पन्न भिक्षु स्वयं ही इस योग्य न हो जाय कि आचार्य के निश्रय की आवश्यकता नहीं रह जाय।[3] आचार्य वही उपसम्पन्न भिक्षु हो सकते थे जो चतुर एवं समर्थ होने के साथ-साथ कम से कम दस वर्षों का भिक्षु जीवन व्यतीत कर चुके हों।[4] आचार्य चयन की प्रक्रिया अत्यन्त सरल थी। आचार्यकांक्षी अन्तेवासी उत्तरासंग (चीवर) को एक कन्धे पर कर कोई दस वर्षों से अधिक उपसम्पदा प्राप्त तथा चतुर एवं योग्य भिक्षु के निकट जा कर, उकडूँ बैठ कर चरण वंदना कर, हाथ जोड़ कर तीन बार ऐसा कहता था–'भन्ते, मेरा आचार्य बनें। मैं आयुष्मान के आश्रय में रहूँगा।' सुन्दर रीति से करो' आदि वचन से अथवा शरीर के इशारे से अथवा दोनों से स्वीकार करे तो यह मान

---

1. अभिधानप्पदीपिका-टीका, गाथा 408.
2. पञ्चिमा, भिक्खवे, निस्सयपटिप्पस्सद्धियो उपज्झायम्हा–उपज्झायो पक्कन्तो होति, विब्भन्तो वा, कालङ्कतो, पक्खसङ्कन्तो वा, आणत्ति येव पञ्चमी।
3. अनुजानामि भिक्खवे, ब्यत्तेन भिक्खुना पटिबलेन पञ्च वस्सानि निस्साय वत्थुं, अब्यत्तेन यावजीवं। म. व. पृ. ८३.
4. अनुजानामि भिक्खवे, ब्यत्तेन भिक्खुना पटिबलेन दस वस्सेन वा अतिरेक दस वस्सेन वा उपसम्पादेतुं। म. व. पृ. ५७.

लिया जाता था कि आचार्यत्व स्वीकार है ।[1] यहीं से शिष्य-भिक्षु अन्तेवासिक कहा जाता था ।

अन्तेवासिक और आचार्य का सम्वन्ध पिता-पुत्र की भांति होता था । तथागत ने अन्तेवासिक के लिए आचार्य को पितृतुल्य मानकर आदर-सत्कार एवं विविध सेवा की अनुज्ञा की थी ।[2] अन्तेवासिक के लिए वे सभी सेवाएँ आचार्य के प्रति विदित थी जिनका विस्तृत विवरण इसी अध्याय में सद्धिविहारिक के कर्त्तव्यों के अन्तर्गत किया जा चुका है । जिस प्रकार सद्धिविहारिक के द्वारा अपने उपाध्याय के लिए विविध सेवाओं का विधान था, ठीक उसी प्रकार अन्तेवासिक को अपने आचार्य के लिए विविध प्रकार की शारीरिक एवं नैतिक दायित्वों का विधान था । आचार्य अन्तेवासिक से सभी प्रकार की सेवाओं की अपेक्षा रखते थे । उदाहरणस्वरुप अन्तेवासिक को प्रातः काल दातुन, जल, वस्त्र आदि की व्यवस्था करना, आसन, चौकी देना, उनके वस्त्रों को साफ करना तथा आचार्य की इच्छा हो तो उनके अनुचर भिक्षु के रूप में चारिकाक्रम में गांव आदि तक साथ-साथ जाना आदि अन्तेवासिक का प्रधान कर्त्तव्य था । यदि आचार्य बीमार हो जाते हो तो अन्तेवासिक का कर्त्तव्य हो जाता है कि उनके स्वस्थ्य होने तक भली-भाँति सेवा-सुश्रूषा करे । यदि आचार्य को धर्म के विरुद्ध किसी प्रकार की भावना आ गई हो तो अन्तेवासी का परम कर्त्तव्य हो जाता है कि हर सम्भव प्रयत्न से उनके भ्रम को दूर करें । इसके लिये विभिन्न प्रकार की धर्म-कथाओं (धम्मकथा) का प्रचलन देखा जाता है । यदि आचार्य के द्वारा संध प्रतिपादित किसी भी प्रकार के वैनयिक नियमों का उलंघन होता है तो अन्तेवासी का यह कर्त्तव्य है कि वह आचार्य को संघ के सम्मुख अपने अपराधों के स्वीकरण के लिए प्रेरित करे ताकि संघ से उन अपराधों के प्रायश्चित स्वरुप उचित दण्ड की व्यवस्था हो । इससे आचार्य के चित्त का शुद्धिकरण सम्भव हो पाता था । यदि आचार्य पर अन्जाने में संघ के द्वारा बिना किये गये अपराधों के प्रायश्चित स्वरुप किसी प्रकार का दंड दिया जाता तो अन्तेवासिक यथा सम्भव उन मिथ्या अपराधों की सच्चाई संघ के सम्मुख रखकर यह प्रयत्न करता कि उसके आचार्य पर लगाये गये दंड को कम या समाप्त किया जाय । इसी प्रकार अगर किसी संघीय अपराध के तहत आचार्य को उचित दण्ड मिला हुआ हो तो अन्तेवासिक का यह कर्त्तव्य था कि वह

---

1. एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा पादे वन्दित्वा उक्कुटिकं निसीदित्वा अञ्जलिं पग्गहेत्वा एवमस्स वचनीयो.........'आचरियो में भन्ते होहि आयस्मतो निस्साय वच्छामि.........। म. व. पृ. ५८.
2. अन्तेवासिको आचरियं पितुचित्तं उपट्ठापेस्सति । म. व. पृ ५८.

आचार्य को नियम पूर्वक, अनुशासित ढंग से संघ के द्वारा प्रदत्त प्रायश्चित स्वरुप दण्ड का पालन करे ताकि वे अपने अपराध-बोध से मुक्त हो सके।

उपर्युक्त नैतिक कर्त्तव्यों के अतिरिक्त अन्तेवासिक का यह भी परम नैतिक दायित्व था कि आचार्य की आज्ञा के बिना किसी भी प्रकार की विशिष्ठ कर्म स्वेक्षा से न करे। उदाहरण के लिए अन्तेवासिक को आचार्य की आज्ञा के विरुद्ध पात्र या चीवर न किसी से लेना अथवा देना चाहिए। किसी अन्य की सेवा करना अथवा किसी से करवाना, न तो किसी भिक्षु को अनुचर बनाना अथवा किसी का अनुचर बनना (पच्छासमण) न किसी को भिक्षान्न ला कर देना अथवा किसी से स्वयं के लिए मँगवाना चाहिए। बिना आचार्य की अनुमति के किसी ग्राम में भिक्षाचार, सामूहिक भोज, उत्सव में अथवा पर्यटन आदि के लिए अन्तेवासिक का जाना वर्जित था।[1]

अन्तेवासिक के लिए कठिन अनुशासन में रहना अनिवार्य था। यदि कोई अन्तेवासी (शिष्य) अपने आचार्य के प्रति उचित व्यवहार नहीं कर रहा हो अथवा उनकी आज्ञा का पूर्ण पालन करने में संकोच कर रहा हो तो आचार्य के द्वारा संघ से निष्कासन अथवा अन्य प्रकार के दंड का भागी होता था। सद्धिविहारिक के तरह ही आचार्य में प्रेम, श्रद्धा, गौरव का अभाव, लज्जा का अभाव तथा ध्यान भावना में अरुचि वाले पाँच बातों से युक्त अन्तेवासिक के दण्ड का विधान था। उचित वर्ताव नहीं करने वाले अन्तेवासिक को आचार्य से क्षमा मांगना होता था। जिसे सामान्यतया आचार्य स्वीकार कर लेते थे।[2]

जिस प्रकार सद्धिविहारिक का उपाध्याय से निश्रय टूट जाने पर आचार्य चयन करने का विधान था उसी प्रकार अन्तेवासिक के लिए भी आचार्य से निश्रय टूट जाने पर दूसरा आचार्य चयन करना विहित था। छः कारणों से आचार्य से निश्रय टूट सकता था, यथा—आचार्य विहार से कहीं अन्यत्र चले गये हों, उनके विचारों में परिवर्तन आ गया हो, उनकी मृत्यु हो चुकी हो, दूसरे धर्म में चले गये हों, आचार्य स्वयं ही अपने से अलग होने की स्वीकृति दी हो अथवा अन्तेवासिक के पुराने उपाध्याय से समाधान हो गया हो।[3]

---

1. म. व. (आचरियवत्तकथा) पृ. ५८-६२, चु. व. पृ. ३३६-३४०.
2. म. व. (पणामना-खमापना) पृ. ६५-६७.
3. छयिमा, भिक्खवे, निस्सयपटिप्पस्सद्धियो आचरियम्हा-आचरियो पक्कन्तो वा होति, विब्भन्तो वा, कालङ्कतो वा, पक्खसङ्कन्तो वा, आणत्तियेव पञ्चमी, उपज्झायेन वा समोधानगतो होति। म. व. पृ. ६७.

आचार्य के लिए भी अन्तेवासिक को पुत्र-वत् स्नेह प्राप्त होता था। रुग्णावस्था में अन्तेवासिक को वे सभी सेवाएँ प्राप्त होती थीं जिनका आचरण वह आचार्य के प्रति करता था।[1]

इस प्रकार बौद्ध संघ में गुरुजनों एवं लघुजनो के बीच पारस्परिक श्रद्धा, विश्वास तथा सौजन्य की अपेक्षा की जाती थी। संघ में सामञ्जस्य की स्थापना के लिए भिक्षुओं में पारस्परिक विश्वास एवं आदर का होना अत्यावश्यक था। शिष्यों की ओर से जो श्रद्धा एवं विश्वास गुरुजनों को प्राप्त होती थी उसके बदले में वे अपने शिष्यों का मार्गदर्शन करते तथा उनके दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सतत् प्रयत्नशील रहते। बौद्ध विहारों में आचार्य वर्ग के लिए हमेशा उच्च आदर्शों का पालन किया जाता था। यदि आचार्य खाली पैर चल रहें हो तो अन्तेवासिक का जूता पहनना अशिष्ट व्यवहार माना जाता था। नित्य गुरु का अभिवादन, आसनस्थ होने के उपरान्त स्वयं आसन ग्रहण करना, और उनके आसन-त्याग के पूर्व स्वंय ही उठ जाना, सदैव गुरु के पीछे-पीछे चलना तथा गुरु के शय्यासनों से निम्नतर शय्यासनों का उपयोग करना आचार्य से पूछे बिना कदापि कोई कर्म न करना आदि कार्य एक शिष्य का आदर्श माना जाता था। यद्यपि स्वाध्याय और दैनिकचर्या के कर्म नियमित रूप से सम्पादित करने के लिए गुरु की आज्ञा लेना आवश्यक नहीं था।

उपर्युक्त विवरणों के आधार पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि बौद्ध-भिक्षु संध में आचार्योपाध्याय एवं श्रामणेर-सद्धिविहारिक-अन्तेवासिक का पारस्परिक सम्बन्ध अत्यन्त ही उच्चकोटि का होता था। वैदिक गुरुकुलों के समान ही गुरु-शिष्य परम्परा का निर्वाह करते हुए गुरुजनों के प्रति श्रद्धा और गुरुकुल-शिक्षा व्यवस्थाओं का संघीय शिक्षा प्रणलियों पर पूर्ण प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

प्रव्रज्या और उसके नियम

बौद्ध धर्म के प्रारम्भ काल में तथागत ने अपने शिष्यों को स्वंय ही प्रव्रज्या प्रदान की थी। तथागत की धर्मदेशेना सुनकर कौन्डिन्य, वप्प, भद्दिय, महानाम तथा अश्वजीत नामक पंचवर्गीय भिक्षुओं ने सारनाथ के इसिपतन मिगदाव में, संघ में प्रवेश के निमित्त भगवान बुद्ध से यह कहा था कि–'हम लोग भगवान के निकट प्रव्रज्या पाएँ उपसम्पदा पाएँ'।[2] तथागत ने उन्हें इन बातों के द्वारा प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा दी–"आओ भिक्षुओं, धर्म स्वाख्यात (सु-व्याख्यात) है, अच्छी तरह

---

1. म. व. (अन्तेवासिकवत्तकथा) पृ. ६२-६५, चु. व. पृ. ३४१-३४५.
2. "लभेय्याम मयं भन्ते, भगवतो सन्तिके पब्बज्जं, लभेय्याम उपसम्पदं" ति। म. व. पृ. १६.
"एत्थ भिक्खवो" ति भगवा अवोच।

सारे दुःखों के विनाश के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करो ।"[1] महावग्ग में आर्य कौण्डिन्य के विषय में कहा गया है कि तथागत के मुख से "यं किञ्चि समुदयधम्मं, सब्बं तं निरोधधम्मं" अर्थात्[2] जो कुछ भी संसार में उत्पन्न होने वाले धर्म (पदार्थ) हैं वे सभी नाशवान् है, वचन सुनकर कौण्डिन्य को विमल धर्म चक्षु उत्पन्न हो गया । अचानक ही भगवान के मुख से उदान प्रस्फुटित हुआ– "अञ्ञासि, वत भो कोण्डञ्ञो, अञ्ञासि वत भो कोण्डञ्ञों"[3] अर्थात् कौण्डिन्य ने संसार की नश्वरता को जान लिया । अतः आयुष्मान कौण्डिन्य की प्रव्रज्या तथागत के द्वारा 'अञ्ञात' कहने मात्र से सम्पन्न हो गई थी । इसी के कारण आर्य, कौण्डिन्य को बौद्ध-जगत में अज्ञात कौण्डिन्य (अञ्ञाकोण्डञ्ञो)[4] के नाम से जाना जाता है । पंचवर्गीय भिक्षुओं के सदृश वाराणसी के नगर सेट्ठी-पुत्र 'यश'[5] उसके मित्र विमल, सुवाहु, ग्वाम्पति तथा पूर्णजीत आदि अपने पचास साथियों के साथ तथागत के निकट संघ में प्रवेश हेतु प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा की मांग की जिसे भगवान ने "स्वक्खातो धम्मो, चरथ ब्रह्मचरियं सम्मा दुक्खस्स अन्तकिरियाया" ति कहते हुए स्वीकार किया और संघ में प्रव्रजित किया ।[6] ठीक इसी प्रकार महावग्ग में तीस भद्रवर्गीय कुमारो[7], उरुवेला में तीन जटिल बन्धुओं तथा उसके एक सहस्त्र शिष्यों[8] तथा राजगृह में संजय परिव्राजक (अपने शिष्यों सहित) की प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा प्राप्ति का विवरण प्राप्त होता है । राजगृह के इन्हीं संजय परिब्राजक के दो शिष्य कोलित तथा उपतिष्य की प्रव्रज्या दीक्षा सम्पन्न हुई जो बाद में सारिपुत्र और मोग्लान (सारिपुत्र तथा मौद्गल्यायण) के नाम से प्रसिद्ध हुए ।[9] महवग्ग के उपर्युक्त विवरणों में हम यह पाते हैं कि बौद्धकाल के प्रारम्भ में प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा साथ-साथ तथा अत्यन्त सरल विधि से सम्पन्न हुआ करता था । प्रव्रज्या के प्रार्थी व्यक्ति को सिर और दाढ़ी के बाल मुड़वाकर, काषाय-वस्त्र धारणकर, उत्तरासंग एक कन्धे पर रख तथागत के समीप जा उकड़ूँ बैठ कर प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा की याचना करनी होती थी । इस प्रकार प्रारम्भ में प्रव्रज्या की दीक्षा तथागत की शरण लेने से ही सम्पन्न हो जाती थी ।

---

1. "स्वाक्खातो धम्मो, चरथ ब्रह्मचरियं सम्मा दुक्खस्स अन्तकिरियाया" ति । वहीं पृ. १६.
2. म. व. पृ. १६.
3. म. व. पृ. १५.
4. इति हिदं आयस्मतो कोण्डञ्ञस्स 'अञ्ञाकोण्डञ्ञो' त्वेव नामं अहोसि । म. व. पृ. १५.
5. वि. वि., म. व. (पब्बज्जाकथा), पृ. १८-२१.
6. वहीं पृ. २१-२३.
7. व. वि., म. व. पृ. २५ (भद्दवग्गियवत्थु)
8. वहीं (उरुवेलपटिहारियकथा) पृ. २५-३४.
9. म. व. (सारिपुत्तमोग्गलानपब्बजाकथा) पृ. 38-41.

क्रमशः भगवान बुद्ध तथा उनके द्वारा प्रज्ञप्त उपदेशों की ख्याति बढ़ती गई। उनके धर्मानुयायियों के साथ-साथ संघ में प्रवेशार्थियों की संख्या बढ़ने लगी। संघ में प्रवेश तथा बौद्ध-भिक्षु बनने के लिए प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा की दीक्षा लेना अनिवार्य था। हम देख चुके हैं कि प्रारम्भ में गौतम बुद्ध स्वयं ही प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा देकर प्रार्थियों को संघ में प्रवेश देते थे। अतः प्रव्रजित होने को कृतसंकल्प व्यक्तियों को भिक्षुगण भगवान् के निकट पहुँचा देते थे। इस व्यवस्था के कारण प्रव्रज्या के प्रत्याशियों को दूर-दूर के स्थानों से बुद्ध के पास पहुँचना पड़ता था जिससे उन्हें मार्ग तय करने में काफी समय नष्ट होने के साथ-साथ अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ता था। तथागत के पास भी हमेशा प्रवेशार्थियों की भीड़ लगी होती थी जिससे उनकी एकाग्रता में बाधा पहुँचती थी। इन्हीं कठिनाईयों के निदानस्वरूप तथागत ने भिक्षुओं को ही प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा देने की अनुज्ञा करते हुए कहा—"भिक्षुओ, अब आपलोग स्वयमेव विभिन्न देश-प्रदेशों जनपदों में जाकर संघ में प्रवेश के इच्छुक व्यक्तियों को, प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा दिया करें।"[1] तथागत के इस निर्णय से बौद्ध-धर्म के संदेशों के प्रचार-प्रसार का मार्ग प्रशस्त हुआ। विभिन्न प्रदेशों एवं जनपदों में तीव्र गति से बौद्ध-भिक्षुसंघों की स्थापना होने लगी जहाँ प्रव्रज्या के आकाँक्षियों को सुलभता से प्रब्रज्या प्राप्त होने लगा। संघ के माध्यम से तथागत प्रवेदित धर्म-संदेशों का वहुआयामी जनता में प्रचार प्रारम्भ हुआ। समस्त जनमानस उनके प्रवचनों को सुनकर विमल-मार्ग पर चलने का प्रयास करने लगा।

यहीं भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं को प्रव्रज्या एवं उपसमदा के विधान का भी निगमन किया है। प्रव्रज्या के आकांक्षी व्यक्ति को सर्व प्रथम सिर और दाढ़ी के बाल मुड़वाकर काषाय वस्त्र पहन, उत्तरासंग एक कन्धे पर कर, तथागत के किसी योग्य शिष्य को अपना उपाध्याय बनाकर, उनके सामने जा उकड़ूँ बैठकर और हाथ जोड़कर तीन बार यह याचना करनी पड़ती थी—बुद्ध की शरण जाता हूँ, धर्म की शरण जाता हूँ, संघ की शरण जाता हूँ।[2] इस प्रकार तथागत के किसी योग्य शिष्य को उपाध्याय मानकर उनके समक्ष 'त्रिशरण-गमन' के द्वारा प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा होने लगी।[3]

---

1. "अनुजानामि, भिक्खवे, तुम्हें व दानि तासु तासु दिसासु तेसु तेसु जनपदेसु पब्बाजेथ उपसम्पादेथा" ति। म. व. पृ. 24.
2. 'अनुजानामि, भिक्खवे इमेहि तीहि सरणगमनेहि पब्बज्जं उपसम्पदं' ति म. व., पृ. -24
3. "एवं च पन, भिक्खवे, पब्बाजेतब्बो उपसम्पादेतब्बो—पठमं केसमस्सुं ओहारापेत्वा, कासायानि वत्थानि अच्छादापेत्वा, एकंसं उत्तरासङ्गं कारापेत्वा, भिक्खूनं पादे वन्दापेत्वा, उक्कुटिकं निसिदापेत्वा अञ्जलिं पग्गण्हापेत्वा, एवं वदेहीति वत्तब्बो-बुद्धं सरणं गच्छामि,

भिक्षुओं के द्वारा प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा की दीक्षाएँ देने की छूट से कालान्तर में कई प्रमुख समस्याएँ प्रकट होने लगी जो बौद्ध-धर्म एवं संघ के लिए उचित नहीं थीं। प्रथम दोष यह हुआ कि तथागत ने उपाध्याय बनाने के लिए किसी विशेष योग्यता का निर्धारण नहीं किया था अतः अयोग्य भिक्षुओं के द्वारा उन लोगों को भी प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा मिलने लगी जो इसके पात्र नहीं थे, फलस्वरूप कुछ ऐसे लोग भी संघ में प्रवेश करने लगे जो संघ के प्रति निष्ठावान् नहीं थे तथा सर्वथा अयोग्य थे। दूसरी सबसे बड़ी समस्या, कई वरिष्ठ भिक्षुओं के द्वारा अपने शिष्यों तथा अनुयायियों की संख्या-वृद्धि करने की बढ़ती हुई प्रवृत्ति से थी। बौद्ध-संघ के तरह की किसी भी बड़ी संस्था में इस प्रवृत्ति की विद्यमानता अस्वाभााविक नहीं है। इस प्रवृत्ति के फलस्वरूप किसी भी संस्था में नेतृत्व के लिए प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ होता है जो उस संस्था अथवा संगठन के लिए दोषमय माना जाता है। भिक्षुओं की इस प्रकार बढ़ती हुई प्रवृत्ति बौद्ध-संघ के लिए अहितकर थी। अनेकों अल्पवय एवं अपरिपक्व भिक्षुओं का प्रवेश भी संघ के लिए सुखद नहीं था। परन्तु तथागत इन तथ्यों के प्रति पूर्ण सजग थे अतः उन्होंने संघ में यह व्यवस्था की कि उपसम्पदा वही भिक्षु दे सकते हैं जो कम से कम दस वर्षों का भिक्षु-जीवन व्यतीत कर चुके हैं। लेकिन यह व्यवस्था भी सर्वथा दोष-मुक्त सिद्ध नहीं हुई क्योंकि संघ मे अधिकांश भिक्षु ऐसे थे जो दस वर्षों का अपना भिक्षु-जीवन तो पूर्ण कर चुके थे, परन्तु उनमें योग्यता का अभाव था। वे प्रव्रज्या के पात्र एवं कुपात्र का चयन उचित रूप में नहीं कर सकते थे। कई बार ऐसा भी देखा जाता कि गुरु की अपेक्षा प्रवेशार्थी शिष्य ही अधिक योग्य है। इसे देखते हुए तथागत ने अनुज्ञा की कि उपसम्पदा देने के अधिकारी केवल वे भिक्षु ही हो सकते हैं जो दस वर्षों का भिक्षु-जीवन व्यतीत करने के साथ-साथ वास्तव में आध्यात्मिक ज्ञान भी प्राप्त किया हो।

सम्भवतः यहीं से प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा में भेद स्थापित हुआ साथ ही प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा के नियमों में भी परिवर्तन किया गया। प्रव्रज्या के लिए पूर्व में कोई निश्चित आयु निर्धारित नहीं थी। इसके लिए कम से कम पन्द्रह वर्ष की आयु का निर्धारण किया गया। महाराज़ शुद्धोदन के अनुरोध पर यह भी स्वीकार किया गया कि माता-पिता की अनुमति के बिना पुत्र को प्रव्रज्या न दिया जाय।[1] स्त्री-जाति को प्रव्रज्या के अयोग्य करार दिया गया था, परन्तु आनन्द एवं

धम्मं सरणं गच्छामि, संघं सरणं गच्छामि दुतियम्पि......ततियम्पि......संघं सरणं गच्छामि ति।" म. व., पृ. 24

1. "न भिक्खवे अननुञ्ञातो मातापितूहि पुत्तो पब्बाजेतब्बो"। म. व. पृ. 87.

महाप्रजापती गौतमी के अनुरोध पर स्त्रियों को भी संघ में प्रवेश की अनुमति प्रदान की गई ।[1] इसके अतिरिक्त प्रव्रज्याके योग्य तथा अयोग्य व्यक्तियों के चयन हेतु अनेक वैनयिक नियम प्रज्ञप्त हुए।

वास्तव में प्रव्रज्या के साथ भिक्षु-जीवन का श्री गणेश होता था। प्रव्रज्या के बाद व्यक्ति की संज्ञा श्रामणेर होती थी। एक श्रमणेर पूर्णरूप से भिक्षु तब बनता था जब उसे उपसम्पदा मिल जाती थी। उपसम्पदा प्राप्ति के लिए श्रामणेर को पाँच वर्षों तक भिक्षु-पद के लिए विहित कर्मों की तैयारी करनी होती थी। इस पाँच वर्षों की अवधि को उपसम्पदा के लिए परीक्षा-काल (प्रोवेशन पीरियड) माना जा सकता है। श्रामणेर को एक आचार्य का चयन कर उनके निश्रय में रहना होता था। आचार्य का विविध प्रकार से सेवाएँ करनी होती थी, चार निश्रयों चार अकरणीय आदि का संयम पूर्वक पालन करना होता था। इसके अतिरिक्त आचार्यों का अपने शिष्यों के प्रति तथा शिष्यों का आचार्यों के प्रति कई कर्त्तव्यों का विधान था। प्रव्रज्या देने वाले आचार्य प्रव्रज्या के समय ही श्रामणेर को बुद्ध-प्रवेदित दस शिक्षापदों को पालन करने का उपदेश देते थे। ये दस शिक्षापद श्रामणेर की शील-निष्ठा के लिए आवश्यक थे। यथा–प्राणि-हिंसा से विरति, चोरी से विरति, अब्रह्मचर्य से विरति, असत्य-भाषण से विरति, शराब तथा अन्य नशीली वस्तुओं से विरति, दोपहर के बाद भोजन करने से विरति, नाच-गान-वाद्य से विरति माला-गन्ध विलेपनादि अलंकरण से विरति, ऊँची तथा बहुमूल्य शयनासन से विरति तथा सोना-चाँदी आदि ग्रहण से विरति ।[2] इन दस शिक्षापदों में दस विरतियाँ संगृहीत हैं जिनसे श्रामणेरों का शील परिभाषित होता है।

इस प्रकार उपर्युक्त शील से समबन्धित दस शिक्षा-पदों के अतिरिक्त श्रामणेरों को चार निश्रयों का पालन करना अवश्यक था। भिक्षा में मिले हुए भोजन से जीवन निर्वाह, पड़े हुए चीथड़ों से बना हुआ चीवर, वृक्ष के नीचे निवास तथा रुग्णावस्था में गोमूत्र की भैषज्य इन्हीं चार निश्रयों की शिक्षा प्रदान की जाती थी। इन निश्रयों का विनय में एक परिवर्धित रूप दिखाई देता है जो कि प्रत्येक निश्रय के साथ कुछ अतिरिक्त लाभों के साथ निष्पन्न हुआ है। इन निश्रयों के

1. 'पाणातिपाता वेरमणी, अदिन्नादाना वेरमणी, अब्रह्मचरिया वेरमणी, सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना वेरमणी, विकालभोजना वेरमणी, नच्चगीतवादितविसूकदस्सना वेरमणी, मालागन्धविलेपनधारणमण्डनविभूसनट्ठाना वेरमणी, उच्चासयनमहासयना वेरमणी, जातरूपरजतपटिग्गहणा वेरमणी। अनुजानामि, भिक्खवे, सामणेरानं इमानि दस सिक्खापदानि, इमेसु च सामणेरेहि सिक्खितुं ति।" म. व., पृ.- 87 पृ. 100.

2. म. व. पृ. 100.

सम्पादन से भिक्षुओं में अल्पेक्षता आती थी। इसी प्रकार श्रामणेरों को अब्रह्मचर्य, चोरी, प्राणि-हिंसा तथा उत्तरमनुष्य धर्म (दिव्य शक्तियों) का प्रदर्शन, इन चार अकरणीय कर्मों से विरत रहने की शिक्षा दी जाती थी।

उपर्युक्त विवरणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि बुद्ध के प्रारम्भिक काल में प्रव्रज्या का विधान अत्यन्त सरल था। परन्तु जैसे-जैसे सद्धर्म की ख्याति फैलती गई और संघ में प्रवेशार्थियों की संख्या बढ़ती गई तब क्रमशः इसका विधान कठिन होता गया। संघ के विस्तार के साथ यह स्वाभाविक ही था कि उसमें कुछ दुर्गुणों का समावेश होने लगा था। परन्तु प्रव्रज्या सम्बन्धित अनेक वैनयिक नियमों के प्रज्ञापन से यह समझा जा सकता है कि तथागत अपने संघ के हितों के प्रति पूर्ण-सजग थे। उनकी हमेशा ऐसी कोशिश रही कि बौद्ध संघ में ऐसी व्यवस्था की जाय जिससे संघ को भेद, पारस्परिक वैमनस्य तथा दलगत संघर्ष से बचाया जा सके क्योंकि इन्हीं दोषों के कारण किसी संस्था या संगठन का पतन होता है। तथागत ने संघ को ऐसा सुविचारित विधान दिया जिसमें नवागन्तुक श्रामणेरों के मार्गदर्शन का भार उन भिक्षुओं को सौंपाा गया जो वास्तव में इसके लिए सर्वथा योग्य थे। अब प्रव्रज्या के योग्य-अयोग्य व्यक्तियों से सम्बन्धित विभिन्न वैनयिक नियमों का प्रज्ञापन हुआ।

प्रव्रज्या के योग्य-अयोग्य व्यक्ति

जैसा ऊपर कहा जा चुका है कि बौद्ध-धर्म के प्रारम्भ में प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा साथ-साथ ही तथागत के स्वयं मुख से और बाद में क्रमशः त्रिशरण गमन के द्वारा सम्पन्न होती थी। आरम्भ में भगवान् बुद्ध ने अन्य तापस सम्प्रदायों से मिलता-जुलता मार्ग अपनाया। अन्य तापसों के समान प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा देते समय चार निश्रयों को निष्ठापूर्वक पालन करने को कहा जाता। भगवान् बुद्ध ने मध्यम मार्ग का उपदेश दिया था और तद्नुसार विभिन्न वैनयिक नियम भी बनाये।

कालान्तर में, बौद्ध-धर्म का क्रमशः विकास होता गया। तत्कालिक समाज एवं सम्पूर्ण जनमानस में बुद्ध, धर्म तथा संघ की प्रतिष्ठा बढ़ने लगी। संघ को वहाँ के राजाओं ने भी वृहत् आश्रय प्रदान किये। संघ के भिक्षुओं को चारों ओर सम्मान और प्रतिष्ठा मिलने लगी। संघ में प्रवेशार्थियों की संख्या बढ़ने लगी। धीरे-धीरे कई अल्पवय तथा अपरिपक्व भिक्षुओं का संघ में प्रवेश होने लगा। कई व्यक्ति बौद्ध-संघ के भिक्षुओं का समाज में महती प्रतिष्ठा को देखकर मात्र प्रतिष्ठा पाने हेतु प्रव्रज्या लेने लगे। इस प्रकार संघ में अनेक समाज विरोधी तत्त्वों का प्रवेश होने लगा जिससे समाज में भिक्षु-संघ की निंदा स्वाभाविक था। ऋणी ऋण मुक्ति

के लिए, चोर, हत्यारे तथा अन्य अपराध कर्मी कारागार की सजा से बचने के लिए, विभिन्न प्रकार के रोगी सेवा-सुश्रुषा के लिए, लूले-लंगड़े आदि अंगहीन जन सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए बुद्ध-संघ में प्रब्रजित होने लगे। वास्तव में इन लोगों के मस्तिष्क में धर्म एवं संघ के प्रति कोई निष्ठा नहीं थी।

बौद्ध संघ के आदिकाल में उन सभी व्यक्तियों को भिक्षु-धर्म में प्रब्रजित होने की छूट थी जो इसके लिए कृतसंकल्प होते थे। देश-धर्म एवं जाति बन्धन से बौद्ध धर्म इतर था अतः सभी वर्ग एवं जाति के लोगों को प्रव्रज्या दी जाती थी। अनेकों भिक्षुओं का विवरण विनय पिटक में प्राप्त होता है जो बौद्ध धर्मेतर समप्रदायों से ताल्लुक रखते थे। परन्तु जैसे-जैसे बौद्ध धर्म की ख्याति बढ़ती गई, संघ में बौद्ध-भिक्षुओं की संख्या का भी उत्तरोत्तर विकास होता गया। समय बीतने के साथ-साथ भगवान् बुद्ध को नयी-नयी समस्याओं का सामना करना पड़ा। संघ में अनेक समाज विरोधी तत्त्वों के प्रवेश तथा संघ की समाज में निंदा की जानकारी होने पर तथागत ने कठिन नियमों का प्रज्ञापन किया।

भगवान् बुद्ध ने विचार किया कि उनके भिक्षु-संघ को यदि समाज में समुचित सम्मान, आदर तथा मार्ग-दर्शक का स्थान पाना है तो उन व्यक्तियों को संघ में प्रवेश देना उचित नहीं होगा जिनके कारण संघ के प्रति समस्त जनभावना क्षुब्ध हो रही है। तथागत का ऐसा चिंतन उचित ही था क्योंकि यदि उस प्रकार के लोगों को जिन्हें समाज शंका की दृष्टि से देखता था, प्रव्रज्या देकर भिक्षु संघ में स्थान दिया जाता तो संघ की बदनामी एवं अवहेलना के साथ-साथ बौद्ध-भिक्षुओं के धर्मोपदेशों का जनता पर प्रतिकूल असर की सम्भावना थी। इससे धर्म-प्रचार के कार्यक्रम का शिथिल पड़ना स्वाभविक ही था। इन्हीं सब बातों को सोचकर तथागत ने धर्म प्रचार के लिए नीति निर्धारित करने में समाज एवं सम्पूर्ण जनमानस की मनोवृत्ति का पूरा ध्यान रखा।

विनय पिटक के अध्ययन से ज्ञात होता है कि तथागत ने उन सभी व्यक्तियों की प्रव्रज्या निषिद्ध कर दी जिनके संघ में प्रवेश से समाज में संघ विरोधी भावना पनपने की सम्भावना हो सकती थी। उन लोगों का भी संघ में प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया जिससे किसी अन्य के अधिकार का उलंघन होता था। संक्रामक रोग-ग्रस्त व्यक्ति के प्रवेश से अन्य भिक्षुओं के भी रुग्ण बनने का अंदेशा था। अतः तथागत ने कुष्ठ, गण्ड, किलास, शोष, तथा अपस्मार (मिर्गी) इन पाँच प्रकार के रोगों से पीड़ित व्यक्तियों को प्रव्रज्या के ऊयोग्य मानते हुए संघ में प्रवेश

निषिद्ध कर दिया ।[1] इस तरह प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा के अयोग्य व्यक्तियों का वर्णन यहाँ विस्तार से किया गया है ।

उपसम्पदा और उसके नियम

बौद्ध संघ में प्रवेश के लिए प्रव्रज्या तथा बौद्ध-भिक्षु-पद प्राप्त करने के लिए उपसम्पदा प्राप्त करना अनिवार्य है । ऊपर कहा जा चुका है कि बौद्ध-धर्म के शैशव-काल में स्वयं भगवान् बुद्ध प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा साथ-साथ दिया करते थे । धर्म चक्र प्रवर्त्तनोपरान्त पंचवर्गीय भिक्षुओं एवं यश आदि की प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा साथ-साथ ही सम्पन्न होने के प्रमाण महावग्ग में वर्णित है ।[2] बाद में संघ में प्रवेशार्थियों की संख्या वृद्धि के साथ-साथ लोगों के कष्टों को ध्यान में रखते हुए तथागत ने बौद्ध-भिक्षुओं को प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा दीक्षा देने का अधिकार प्रदान किया ।[3] भिक्षुओं की प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा देने के अधिकार के फलस्वरूप कई प्रमुख समस्याएँ उपस्थित हुई । अयोग्य भिक्षुओं के द्वारा कई अल्पवय एवं अनधिकृत व्यक्तियों का भी संघ में प्रवेश होने लगा । इसके अलावा कई वरिष्ठ भिक्षुओं के द्वारा अपने शिष्यों तथा अनुयायियों की संख्या वृद्धि की कुप्रवृत्ति पनपने लगी । फलस्वरूप संघ में कई प्रकार कीअनियमितताएँ प्रारम्भ होने लगी इन्हीं अनियमितताओं एवं अनुशासन-विहीन अचरणों को सुव्यवस्थित करने हेतु तथागत ने विभिन्न वैनयिक नियमों का प्रज्ञापन किया । विनय के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि अनेक अल्पवय एवं अपरिपक्व भिक्षुओं के प्रवेश तथा उपर्युक्त अन्य कारणों के फलस्वरूप प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा में भेद स्थापित हुआ । तथागत ने विभिन्न नियमों का प्रज्ञापन करते समय प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा के प्राचीन नियमों में भी परिवर्तन कर दिया ।[4]

उपसम्पदा एक पारिभाषिक शब्द है जिसका अर्थ सन्यास की उपसम्पन्नता है । प्रव्रज्या (पब्बज्जा) से भिक्षु जीवन में प्रवेश का बोध होता है परन्तु उपसम्पदा एक श्रामणेर के पूर्ण रूप से भिक्षु पद प्राप्त करने के अर्थ का द्योतक है । प्रव्रज्या की दीक्षा के साथ भिक्षु जीवन का श्री गणेश होता था परन्तु वह व्यक्ति (श्रामणेर) पूर्ण भिक्षु तब माना जाता था जब उसे उपसम्पदा हो जाती थी ।

---

1. म. व. पृ. ९८
2. 'लभेय्याम मयं, भन्ते, भगवतो सन्तिके पब्बज्जं, लभेय्याम उपसम्पदं' ति । 'एथ भिक्खवो' ति भगवा अवोच-स्वाक्खातो धम्मो, चरथ ब्रह्मचरियं सम्मा दुक्खस्स अन्तकिरियाया' ति । सा व तेसं आयस्मन्तानं उपसम्पदा अहोसि । म. व., पृ. १६, २१, २५, ४१,
3. 'अनुजानामि, भिक्खवे, तुम्हे व दानि तासु तासु दिसासु तेसु तेसु जनपदेसु पब्बाजेथ उपसम्पादेथा' ति । म. व. पृ. २४, सम. पा. भा. ३, पृ. १०१४.
4. म. व. पृ. ५३-५४.

अनेक विद्वानों ने प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा को प्रायः समान अर्थों में लिया है, परन्तु शास्त्रीय दृष्टिकोण से दोनों में पर्याप्त विभेद हैं। भगवान बुद्ध ने दोनों को अलग करते हुए दोनों के लिए अलग-अलग नियमों की अनुज्ञा की थी।

संघ में प्रवेश के उपरान्त व्यक्ति की संज्ञा श्रामणेर होती थी। किसी श्रामणेर को भिक्षु-पद प्राप्त करने के लिए पाँच वर्षों तक किसी आध्यात्मिक गुरु जिसे उपाध्याय कहा जाता था, के निर्देशन में संघ के नियमों का पालन करते हुए साधनोन्मुख रहना होता था। इस प्रकार उपसम्पदा दीक्षा के पूर्व पाँच वर्षों का श्रामणेर-जीवन अनिवार्य था। यह अवधि उनके लिए परिवीक्षण-काल के सामान थी। इस अवधि में श्रामणेर को चार निश्रयों का पूर्ण पालन अनिवार्य होता था। वे चार निश्रय थे–भिक्षाटन में प्राप्त अन्न से जीवन निर्वाह, यत्र-तत्र पड़े चीथड़ों के वने चीवर से जीवन निर्वाह, वृक्ष-मूल में निवास तथा गोमूत्र को भैषज्य के रूप में सेवन करना।[1] इसके अलावे श्रामणेर को संघ के लिए तथागत के द्वारा प्रज्ञप्त सभी नियमों का समुचित पालन करना होता था। तथागत ने श्रामणेरों के लिए अपने आचार्य के प्रति कई नियम बनाये थे। उन सभी सेवा सम्बन्धी नियमों का पालन करना श्रामणेर का कर्त्तव्य था।[2]

उपसम्पदा के योग्य, अयोग्य व्यक्ति

उपसम्पदा दीक्षा के लिए व्यक्ति को गर्भ से बीस वर्ष का होना चाहिए। तथागत ने माता की कोख में प्रथम चित्त अथवा विज्ञान (विञ्ञाण) के प्रादुर्भाव को जन्म माना है।[3] पुनः उपसम्पदा प्राप्ति के लिए पाँच वर्षों का श्रामणेर जीवन कुशलता पूर्वक व्यतीत करना अनिवार्य था। प्रत्याशी श्रामणेर के आचार्य द्वारा उसके ब्रह्मचर्य, शील-पालन, संधीय नियमों का पूर्ण पालन आदि का परीक्षण कर उसकी सम्पुष्टि आवश्यक थी। पात्र-रहित, चीवर रहित व्यक्ति उपसम्पदा के अयोग्य माना जाता था। उधार के पात्र चीवर के साथ उपसम्पदा नहीं दी जा सकती थी।[4] अन्य धर्मावलम्बियों कैं पास जा कर रहने वाले श्रामणेर भी उपसम्पदा के अयोग्य माने गये।[5] इसके अतिरिक्त तिर्यक्योनि के प्राणी, हत्यारे, विभिन्न प्रकार के अपराधकर्मी, राजसैनिक, राजद्रोही, ऋणी, दास तथा विभिन्न प्रकार के संक्रामक रोगी, हिजड़े, अपंग व्यक्ति, संघ भेदक, बुद्ध-धर्म-दूषक तथा

1. म. व. पृ. १००.
2. आपस्तम्ब धर्म-सूत्र, २/९/२१/१, गौतम-धर्म-सूत्र, ३/२ वशिष्ठ-धर्म-सूत्र ७/१-२.
3. यं, भिक्खवे, मातुकुच्छिस्मिं पठमं चित्तं उप्पन्नं, पठमं विञ्ञाणं पातुभूतं, तदुपादाय सा वस्स जाति। अनुजानामि, भिक्खवे, गब्भंवीसं उपसम्पादेतुं ति। म. व. पृ. ९७.
4. म. व. पृ. ९३-९४ (अपत्तकादिवत्थु).
5. म. व. (थेय्यसंवासकवत्थु) पृ. ८९-९०.

चोर डाकू आदि उपसम्पदा के अयोग्य घोषित किये गये थे ।[1] अगर पूर्व में इनकी उपसम्पदा हो चुकी हो तो उन्हें भी संघ से निष्कासित कर देने की तथागत ने अनुज्ञा की ।[2] उपर्युक्त सभी प्रकार के अयोग्य व्यक्तियों का विशेष विवेचन इसी अध्याय में इसके पूर्व किया जा चुका है । उपसम्पदा के योग्य-अयोग्य व्यक्तियों से सम्बन्धित वैनयिक नियम लगभग वही हैं जो प्रव्रज्या के योग्य तथा अयोग्य व्यक्तियों के लिए प्रज्ञप्त किये गये हैं । तथागत-प्रज्ञप्त आठ गुरुधर्मों का पालन स्वीकार करने वाली नारियाँ ही उपसम्पदा के योग्य मानी गयी थी ।

उपसम्पदा विधि

प्रारम्भ में बौद्ध धर्म में प्रवेश के लिए प्रव्रज्या ग्रहण करना आवश्यक था । जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है । कालान्तर में एक श्रामणेर को भिक्षु पद पर प्रतिष्ठित होने के लिए यह अनिवार्य हो गया कि भिक्षु संघ के न्यूनतम दस वरिष्ठ भिक्षुओं के द्वारा उपसम्पदा की अनुमति प्रदान की जाय । सर्वप्रथम श्रामणेर भिक्षुसंघ के किसी वरिष्ठ भिक्षु को अपना उपाध्याय स्वीकार करता था । उपाध्याय बनाते समय यह ध्यान रखना होता था कि वे सम्पूर्ण शील से युक्त हों, समाधि से युक्त हो, प्रज्ञा संयुक्त हों, राग-द्वेषादि का परित्याग कर चुके हों तथा सम्पूर्ण विमुक्तियों के ज्ञान के साक्षात्कार से युक्त हो । उपसम्पदा देने अथवा न देने योग्य आचार्यों के विषय में तथागत ने पञ्चक एवं षष्ठक नयों का विधान किया है,[3] जिसका पूरा ध्यान रखना आवश्यक था । उपाध्याय निर्वाचित करने में यह भी ध्यान रखना होता था कि उनका भिक्षु पद प्राप्त किये दस वर्षों से अधिक हो चुका हो ।[4]

उपाध्याय के चयनोपरान्त भिक्षु पद के प्रत्याशी श्रामणेर भिक्षुसंघ की सभा में श्रद्धापूर्वक अवनत हो, उत्तरासंग को एक कंधे पर कर, अपने अञ्जलिबद्ध हाथों को उपर उठाकर तीन बार कहता है- "भन्ते, संघ से उपसम्पदा की याचना करता हूँ, भन्ते, संघ दया करके मेरा उद्धार करे ।"[5] इस कर्म को श्रामणेर का याचना-कर्म कहा जाता था । इसके उपरान्त किसी वरिष्ठ भिक्षु के द्वारा तथागतोपदिष्ट

---

1. म. व. (न-उपसम्पादेतब्ब-वारं १-१५) पृ. ८९-९३.
2. '..............., भिक्खवे, अनुपसम्पन्नो न उपसम्पादेतब्बो, उपसम्पन्नो नासेतब्बो ति ।' म. व. पृ. ८९, ९0, ९१, ९२.
3. म. व. पृ. ६७-७३.
4. 'अनुजानामि, भिक्खवे, ब्यत्तेन भिक्खुना पटिबलेन दस वस्सेन वा अतिरेकदसवस्सेन वा उपसम्पादेतुं' । म. व. पृ. ५७.
5. एकंसं उत्तरासङ्गं कारापेत्वा, भिक्खूनं पादे वन्दापेत्वा, उक्कुटिकं निसिदापेत्वा अञ्जलिं पग्गण्हापेत्वा उपसम्पदं याचापेतब्बो-'सङ्घं भन्ते उपसम्पदं याचमि । उल्लुम्पतु मं, भन्ते, सङ्घो अनुकम्पं उपादाय । दुतियं पि..........ततियंपि........ । म, व., पृ. ९८-९९.

तेरह प्रकार के उपसम्पदा के बाधक प्रश्न पूछे जाते थे ।[1] यथा–'क्या तुम्हें कोढ़, गंड (एक प्रकार का फोड़ा), किलास (एक प्रकार का चर्म रोग), मृगी (मूर्छा) तथा शोष की बीमारी है ? तुम पुरुष हो ? मनुष्य हो ? क्या तुम स्वाधीन हो ? क्या तुम ऋण-मुक्त हो ? तुम राज-सैनिक अथवा राज-सेवक तो नहीं हो ? क्या तुम्हारे माता-पिता ने भिक्षु बनने की अनुमति दे दी है ? तुम बीस वर्ष पूरे कर चुके हो ? तुम्हारे पास चीवर पात्र पर्याप्त है ? तुम्हारा तथा तुम्हारे उपाध्याय का क्या नाम है ।[2] सभी प्रश्नों के स्वीकारात्मक उत्तर प्राप्त होने पर ही श्रामणेर को उपसम्पदा की स्वीकृति मिलती थी । सभा में आने के पूर्व ही किसी आचार्य के द्वारा श्रामणेर को उपर्युक्त प्रश्नों से सम्बन्धित बातें बता दी जाती थी, जिसे 'अनुशासन' कहा जाता है ।

इसके पश्चात्-ज्ञप्ति, अनुश्रावण तथा धारणा के द्वारा उपसम्पदा प्रदान की जाती थी । सर्वप्रथम भिक्षु-संध का एक चतुर एवं समर्थ भिक्षु, संघ को सम्बोधित कर ज्ञापित करता–"भन्ते, संघ मेरी बात सुने-अमुक नामवाले भिक्षु को उपाध्याय बनाकर, अमुक नाम वाले आचार्य का शिष्य, अमुक नाम वाला यह पुरुष उपसम्पदा-पार्थी है । यदि संघ उचित समझे तो संघ अमुक नामवाले को अमुक उपाध्याय के उपाध्यायत्व में उपसम्पदा प्रदान करे ।" इस सूचना को ज्ञप्ति (ञत्ति) कहा जाता था ।[3]

ज्ञप्ति के पश्चात् भिक्षु संघ को सम्बोधित कर तीन बार कहता–"भन्ते संघ मेरी सुने, अमुक नाम वाला, अमुक नामवाले आयुष्मान् का उपसम्पदा चाहने वाला शिष्य अन्तरायिक बातों से परिशुद्ध है, इसके पात्र-चीवर आदि परिपूर्ण हैं । यह अमुक नामवाले उपाध्याय के उपाध्यायत्व में उपसंपदा चाहता है । संघ अमुक नामवाले (उपसम्पदा-प्रार्थी) को अमुक नाम वाले उपाध्याय के उपाध्यायत्व में उपसम्पदा देता है । जिसका आयुष्मान को इस नामवाले उम्मीदवार की अमुक नामवा. उपाध्याय के उपाध्यायत्व में उपसम्पदा पसंद है वह चुप रहे । जिन्हें

1. 'अनुजानामि, भिक्खवे, उपसम्पादेन्तेन तेरस अन्तरायके धम्मे पुच्छितुं ।" म. व. पृ. ९७.
2. 'सन्ति ते एवरूपा आबाधा-कुट्ठं, गण्डो, किलासो, सोसो, अपमारो ? मनुस्सोसि ? पुरिसोसि ? भुजिस्सोसि ? अनणोसि ? नसि राजभट्टो ? अनुञ्ञातोसि मातापितूहि ? परिपुण्ण-वीसतिवस्सोसि ? परिपुण्णं ते पत्तचीवरं ? किन्नामोसि ? कोनामो ते उपज्झायो" । म. व., पृ. ९७.
3. सुणातु मे, भन्ते, सङ्घो । अयं इत्थन्नामो इत्थन्नामस्स आयस्मतो उपसम्पदापेक्खो, परिसुद्धेहि अन्तरायिकेहि धम्मेहि, परिपुण्णस्स पत्तचीवरं । इत्थन्नामो सङ्घं उपसम्पदं याचति इत्थन्नामेन उपज्झायेन । यदि सङ्घस्स पत्तकल्लं, सङ्घो इत्थन्नामं उपसम्पादेय्य इत्थन्नामेन उपज्झायेन' । एसा ञत्ति । म. व., पृ. ९९.

पसन्द नहीं है वे बोलें।"[1] उपर्युक्त कथनों को अनुश्रावण कहा जाता था, जिसे तीन बार संघ के सम्मुख दुहराया जाता था। उसके बाद भी अगर संघ के सभी भिक्षुगण मौन रहते थे तो पूर्व भिक्षु कहता–अमुक नामवाले (उम्मीदवार) को अमुक नामवाले आयुष्मान के उपाध्यायत्व में उपसम्पदा संघ ने दी। संघ को पसन्द है, इस लिए चुप है–ऐसा मैं इसे धारण करता हूँ।"[2] इस प्रकार उपसम्पदा दीक्षा सम्पन्न होती तथा श्रामणेर उपसम्पन्न माना जाता था। उपसम्पदा के उपरान्त भिक्षु को वरिष्ठ भिक्षु के द्वारा अब्रह्मचर्य, चोरी, प्राण-हिंसा तथा दिव्य शक्ति के प्रदर्शन (उत्तरमनुष्य धर्म) इन चार अकरणीय कर्मों से जीवन पर्यन्त विरत रहने की शिक्षा दी जाती थी जिसे वह आदर पूर्वक ग्रहण करता था।[3] वह चार निश्रयों-भिक्षाटन में प्राप्त अन्न से जीवन निर्वाह (पिण्डियालोपभोजनं) चीथड़ों से बना हुआ चीवर का धारण (पसुंकूलचीवरं), वृक्षमूल में निवास (रुक्खमूल-सेनासनं) तथा भैषज्य के रूप में गोमूत्र का सेवन (पूत्तिमुत्तभेसज्जं), का निष्ठापूर्वक आजीवन पालन करने का संकल्प लेता था।[4] उन्हीं गुणों से युक्त भिक्षु आध्यात्मिक पक्ष पर चलते हुए अपने चिरन्तन लक्ष्य असंस्कृत धर्म निर्वाण के अधिगम के लिए प्रयासरत होता था।

चार अकरणीय

भगवान बुद्ध समय-समय पर अपने शिष्यों के लिए विभिन्न वैनयिक नियमों का प्रज्ञापन कर उनके आध्यात्मिक जीवन को साधना मार्ग पर पुरःसृत किया करते थे। इसी कारण उन्हें सच्चा पथ प्रदर्शक माना गया। उपसम्पदा प्राप्ति के पश्चात् किसी भिक्षु के द्वारा स्त्री समागम की बात सुनकर तथागत ने चार अकरणीय कर्मों का प्रज्ञापन किया।[5] ये चार अकरणीय कर्म अब्रह्मचर्य, चोरी, प्राणिहिंसा तथा दिव्यशक्ति प्रदर्शन से सम्बन्धित हैं। चे चार वस्तुएँ भिक्षु को आध्यात्मिक साधनामार्ग से विचलित कर देती हैं। इनके होने से श्रामण्य उद्देश्यों की पूर्ति असम्भव है। जिस प्रकार पेंड में पत्ते का पीला होने के बाद उसका पेड़

---

1. सुणातु मे, भन्ते, सङ्घो। अयं इत्थन्नामो इत्थन्नामस्स आयस्मतो उपसम्पदापेक्खो, परिसुद्धो अन्तरायिकेहि धम्मेहि, परिपुण्णस्स पत्तचीवरं। इत्थन्नामो सङ्घं उपसम्पदं याचति इत्थन्नामेन उपज्झायेन। सङ्घो इत्थन्नामं उपसम्पादेति इत्थन्नामेन उपज्झायेन"। इत्थन्नामेन उपज्झायेन। सङ्घो इत्थन्नामं उपसम्पादेति इत्थन्नामेन उपज्झायेन, सो तुण्हस्स; यस्स यस्सायस्मतो खमति इत्थन्नामस्स उपसम्पदा इत्थन्नामेन उपज्झायेन, सो तुण्हस्स; यस्स नक्खमति, सो भासेय्य।" म. व., पृ. ९९.
2. उपसम्पन्नो सङ्घेन इत्थन्नामो इत्थन्नामेन उपज्झायेन। खमति सङ्घस्स, तस्माा तुण्ही, एवमेतं धारयामी" ति म. व., पृ. ९९.
3. म. व., पृ. १००.
4. म. व., पृ. ५५, १००.
5. विनय पिटक म. व. पृ. 100.

से टूटना निश्चित होता है उसी प्रकार इन चार अकरणीय कर्मों में से एक के भी होने के पश्चात् भिक्षु श्रामण्य जीवन के अयोग्य हो जाता है तथा साधना-भ्रष्ट माना जाता है । यही कारण है कि तथागत ने इन चार अकरणीय कर्मों से जीवन भर विरत रहने का भिक्षुओं को उपदेश दिया ।[1] उपसम्पदा के बाद इन चार अकरणियों को बताना उपसम्पदा देने वाले आचार्यों को आवश्यक बताया है,[2] ताकि नवागन्तुक भिक्षु इन चार कर्मों से उम्र भर विरत रह सके । कालान्तर में इन्हीं चार अकरणीय कर्मों को प्रतिमोक्ष में 'पाराजिका धम्मा' के रूप में रखा गया । चार पाराजिक धर्म[3] प्रातिमोक्ष के सभी 227 अपराधों में सर्वाधिक निन्दनीय अपराध माना जाता है । 'पाराजिक धर्म' का अर्थ है वे दोष जो भिक्षु को पराजय दिलाती हैं । जिस उद्देश्य के लिए भिक्षु अपना घर-द्वार, कुटुम्ब-परिवार तथा सारे संसार धन सम्पत्ति का लोभ त्याग कर प्रब्रजित होता है, उसमें उसे सफल नहीं होने देता है, आध्यात्मिक उद्देश्यों से भिक्षु पराजित हो जाता है । इन चार में से किसी एक पाराजिक अपराध से युक्त भिक्षु के लिए भी प्रातिमोक्ष में बहुत कठिन दण्ड का प्रावधान किया गया है । इन दोषों से युक्त भिक्षु को संघ से निष्कासित कर दिया जाता है ।[4] वह बुद्ध का शिष्य होने के योग्य नहीं माना जाता।अतः संघ के अन्य भिक्षुओं द्वारा वहिष्कृत कर दिया जाता है । महावग्ग तथा पाराजिक पालि के भिक्खुपातिमोक्ख के तुलनात्मक अध्ययन से चार अकरणीय कर्म तथा चार पाराजिक धर्म के द्वारा प्रज्ञप्त वैनयिक नियमों में पूर्णरूपेण सहमति दिखती है परन्तु दोनों के प्रसंग तथा स्थान जहाँ उपदेश प्रज्ञप्त हुए इनमें असमानता दिखती है । अब चार अकरणीय धर्मों का संक्षिप्त विवरण अपेक्षित है । वे चार कर्म हैं–

प्रथम अकरणीय कर्म मैथुन कर्म है । उपसम्पदा प्राप्त भिक्षु को किसी भी तरह के मैथुन कर्म, स्त्री-सहवास आदि से अलग रहना चाहिए चाहे वह तिर्यक्-योनि का ही क्यों न हो ।[5] इस निन्दनीय कर्म को करने से भिक्षु अश्रमण तथा अशाक्यपुत्रीय होता है । जिस प्रकार शिर का शरीर से विच्छेद हो जाने के बाद

1. तं ते यावजीवं अकरणीयं । म. व. पृ. 100.
2. "अनुजानामि, भिक्खवे, उपसम्पादेत्वा दुतियं दातुं, चत्तारि च अकरणीयानि आचिक्खितुं" । म. व. पृ. 100.
3. "मेथुनादिन्नादानं च मनुस्सविग्गहुत्तरि । पाराजिकानि चत्तारि, छेज्जवत्थू असंसया ति ॥" पारा. पा., पृ., 149.
4. "चत्तारो पाराजिक धम्मा, येसं............यथा पुरे तथा पच्छा पाराजिको होती असंवासो ।" भिक्खू पातिमोक्ख, निगमनं, पारा. पृ. 149.
5. "उपसम्पन्नेन भिक्खुना मेथुनो धम्मो न पटिसेवितब्बो, अन्तमसो तिरच्छानगताय पि ।" म. व. पृ. 100

व्यक्ति जीने में असमर्थ होता है उसी प्रकार किसी भी प्रकार से मैथुन कर्म करने वाला भिक्षु अपने आध्यत्मिक लक्ष्य से विमुख हो जात है ।[1] तथागत ने इसे ग्रामधर्म, वसलधर्म कहकर निन्दा करते हुए कहा है–"मेथुनधम्मो नाम यो सो असद्धम्मो गामधम्मो वसलधम्मो दुट्ठल्लं ओदकन्तिकं रहस्सं द्वयंद्वयसमापत्ति, एसो मेथुनधम्मो नाम ।"[2]

तथागत ने दूसरा अकरणीय कर्म चौर्य-कर्म बताया । उपसम्पदा प्राप्त भिक्षु को चोरी समझे जाने वाली वस्तु को प्राप्त नहीं करना चाहिए । किसी परायी वस्तु को उसके (स्वामी के) अज्ञानता में प्राप्त करने की बलबती इच्छा तथा कर्म के द्वारा अपना लेना ही चोरी है । तथागत ने चौर्य कर्म को निन्दनीय अपराध घोषित किया है । भगवान् बुद्ध ने कहा है कि उपसम्पदा प्राप्त भिक्षु को छोटी से छोटी वस्तु भी चाहे वह तृण का एक सलाका मात्र ही क्यों न हो, अगर चोरी समझी जाने वाली है तो उसे कदापि ग्रहण नहीं करना चाहिए । महावग्ग में कहा गया है कि जो भिक्षु एक पाद (पाँच मासा) के बराबर भी अगर किसी परायी वस्तु का ग्रहण चोरी के रूप में करता है वह अश्रमण तथा अशाक्यपुत्रीय होता है । चौर्य कर्म भी जीवन भर के लिए अकरणीय है ।[3] प्रातिमोक्ष में चौर्य कर्म द्वितीय पाराजिक के रूप में प्रज्ञप्त है ।[4] तथागत ने अपने उपदेशों में अन्य कई स्थानों पर भी इसे दुष्कर्म की संज्ञा से अभिहित किया है । अपने शील सम्बन्धी दस शिक्षा में भी चौर्य कर्मों से विरत रहने को कहा है, ('अदिन्नादाना वेरमणी') ।

तीसरा अकरणीय कर्म प्राणी-हिंसा है । उपसम्पदा प्राप्त भिक्षु को जान बूझ कर किसी प्राणी को हिंसा नहीं करनी चाहिए चाहे वह छोटी सी चींटी आदि ही क्यों न हो । प्राणी हिंसा के अन्तर्गत गर्भपात तथा आत्महत्या के लिए किसी को प्रेरित करना भी बताया गया है । वास्तव में अहिंसा की नीव पर ही तथागत का सद्धर्म खड़ा है अतः एक भिक्षु के द्वारा किसी प्राणी की हिंसा निन्दनीय होने के

---

1. 'यो पन भिक्खु मेथुनं धम्मं पटिसेवेय्य अन्तमसो तिरच्छानगताय पि, पाराजिको होति असंवासो" ति ।
पारा. पा. (भिक्खुपातिमोक्ख) पृ. 28.

2. पारा. पा., पृ. 35.
3. "उपसम्पन्नेन भिक्खुना अदिन्नं थेय्यसङ्खातं न आदातब्बं, अन्तमसो तिणसलाकं उपादाय । ....तं ते यावजीवं अकरणीयं ।"
म. व. पृ.-100.

4. "यो पन भिक्खु गामा वा अरञ्ञं वा अदिन्नं..........असंवासो" ति ।
पारा. पा. पृ. 56.

साथ-साथ दण्डनीय अपराध भी है।[1] भिक्षु प्रातिमोक्ष में प्राणी-हिंसा अथवा किसी को जानबूझकर आत्महत्या के लिए प्रेरित करने के कृत्य को तृतीय पाराजिक धर्म के रूप में रखा गया है, जिसका दण्ड भिक्षु को संघ से निष्कासन कर दिया जाता था। हिंसा कर्म के कारण वह अन्य भिक्षुओं के साथ रहने की अपनी योग्यता खो बैठता है।[2] महावग्ग में कहा गया है कि जिस प्रकार कोई मोटी शिला के दो टुकड़े हो जाने पर पुनः जुड़ने लायक नहीं रहती उसी प्रकार किसी भिक्षु के द्वारा जान-बूझ कर प्राणी हिंसा करने से भिक्षु अश्रमण तथा अशाक्यपुत्रीय (बौद्धधर्म से विमुख) हो जाता है। तथागत प्राणी-हिंसा को जीवन भर के लिए अकरणीय कहा है।

लोगों में अपनी झूठी शान दिखाने तथा उन्हें अपनी ओर आकृष्ट करने के उद्देश्य से दिव्य शक्ति का प्रदर्शन करना चौथा अकरणीय कर्म है जिससे एक भिक्षु को पूरी जिन्दगी भर बचना चाहिए। महावग्ग में कहा गया है कि—उपसम्पदा प्राप्त भिक्षु को दिव्यशक्ति (उत्तरमनुष्य धर्म) तथा चमत्कारों का प्रदर्शन नहीं करना चाहिए। छोटी से छोटी शक्ति प्रदर्शन यथा "शून्यागार में मै रमण करता हूँ' भी नहीं कहना चाहिए। बुरी नीयत से लोभ में पड़ा भिक्षु अविद्यमान तथा असत्य दिव्यशक्ति, ध्यान, विमोक्ष, समाधि, समापत्ति तथा मार्ग या फल को स्वयं के द्वारा सिद्ध हुआ बताता है वह अश्रमण तथा अशाक्यपुत्रीय (बौद्ध धर्म एवं संघ का विरोधी) होता है। दिव्यशक्ति का झूठा दावा तथा चमत्कार प्रदर्शन एक भिक्षु के लिए जीवन भर अकरणीय है। विनय पिटक के भिक्षु-प्रातिमोक्ष में भी दिव्यशक्ति के प्रदर्शन को निन्दनीय अपराध घोषित करते हुए कहा गया है कि अगर कोई भिक्षु अपने को त्रिकालदर्शी (भूत, भविष्य एवं वर्त्तमान को देखने वाला) बताकर दुर्भावना ग्रस्त होकर अभिनय करता है तथा इनके बारे में न जानते हुए भी 'जानता हूँ' न देखते हुए भी 'देखता हूँ' आदि कहे, तो चाहे उस भिक्षु का कथन निःसार ही हो या डींग हाँकने भर के लिए ही क्यों न कहा गया हो, उसे पाराजिक का दोषी माना जायगा। इस अपराध के लिए भिक्षु को संघ से निष्काषित किया जाना अपेक्षित था क्योंकि दिव्यशक्तियों के प्रदर्शन सम्बन्धी दोष करने के पश्चात् भिक्षु संघ के अन्य भिक्षुओं के साथ रहने के अयोग्य माना जाता था।

---

1. "उपसम्पन्नेन भिक्खुना सञ्चिच्च पाणो जीविता न वोरोपेतब्बो, अन्तमसो कुन्थकिपिल्लिकं उपादाय। यो भिक्खु..........अन्तमसो गब्भपातनं उपादाय..........तं ते यावजीवं।" म. व. पृ. 101.
2. यो पन भिक्खु सञ्चिच्च मनुस्सविग्गहं.......असंवासो" ति।

यद्यपि महावग्ग में उरुवेला में कश्यप बन्धुओं की प्रव्रज्या सम्बन्धी विवरण में तथागत के द्वारा 15 प्रातिहार्य दिखाने का वर्णन पाप्त होता है। परन्तु तथागत ने जटिलों के सामने उनके प्रालिहार्य के प्रतिरोध स्वरूप अपने प्रातिहार्य से उनके प्रातिहार्यों का काट किया था। एक प्रकार से तथागत ने काश्यपबन्धुओं को दिव्य प्रदर्शन, तन्त्र-मन्त्र तथा चमत्कार आदि के झूठे प्रदर्शनों की नश्वरता सिद्ध की थी। इन्हीं बातों को समझ में आ जाने के बाद तीनो जटिल बन्धु अपने एक सहस्त्र शिष्यों के साथ भिक्षु-संघ में प्रवर्जित हुए।[1]

चार निश्रय

बौद्ध संघ में प्रव्रज्या की दीक्षा के साथ भिक्षु जीवन का श्रीगणेश होता था। भिक्षु-पद की प्राप्ति तब होती थी जब उसे उपसम्पदा की दीक्षा मिल जाती थी। इन दोनों दीक्षाओं के मध्य पाँच वर्षों की अवधि परीक्षण-काल के रूप में व्यतीत करनाा होता था। श्रामणेर पूर्ण भिक्षु-पद प्राप्त करने की तैयारियों में पाँच वर्ष व्यतीत करता (पब्बजित्वा उपसम्पदाय पञ्चवस्सिको हुत्वा)। प्रव्रज्या का अर्थ होता है अग्रसर होना अर्थात् गृहस्थ-जीवन का परित्याग कर अरण्यवासी बनना। पालि शब्द 'पब्बज्जा' से गृहस्थ जीवन को छोड़कर भिक्षु-जीवन में प्रवेश का बोध होता है। बौद्ध संघ के प्रारम्भ में प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा दीक्षाओं में विशेष अन्तर नहीं था। प्रब्रज्या और उपसम्पदा दोनों दिक्षाएँ साथ-साथ ही दी जाती थी। संघ में प्रवेश के पश्चात् भिक्षु को चार निश्रय व्रत धारण करने की अनुज्ञा तथागत ने की थी।[2] तथागत के सद्धर्म को ग्रहण करने और भिक्षुओं को साधना मार्ग पर निरन्तर आध्यात्मिक चिन्तन के लिए उनका शील-पालन, अल्पेक्षता, सद्विवेक, अनुशासन, एकान्तता आदि गुणों का होना अनिवार्य है। भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं में इन्ही गुणों के विकास को ध्यान में रखकर उपसम्पदा के पश्चात् इन चार प्रकार के निश्रय व्रतों को धारण करने की अनुज्ञा की। महावग्ग में कहा गया है–'उपसम्पदा प्राप्ति के पश्चात् समय निश्चित करने के लिए छाया नापनी चाहिए, ऋतु का प्रमाण बताना चाहिए, दिन का भाग बताना चाहिए संगीति बतानी चाहिए (छाया, ऋतु और दिन के भाग तीनो को संगीति कहा जाता है[3])। पुनः चारो निश्रय बतानी चाहिए।'[4] वे चार निश्रय हैं–(1) भिक्षा में मिले हुए भोजन से जीवन यापन करना (2) यत्र-तत्र विखरे चीथड़ों से निर्मित चीवर

1. महावग्ग, उरुवेलपाटिहारियकथा पृ. 25-34.
2. म. व्. पृ. 100.
3. विनय पिटक, (म. राहुल सांकृत्यायन अनु.) पाद टिप्पणी पृ. १३४.
4. तावदेव छाया मेतब्बा............चत्तारो निस्सया आचिक्खितब्बा। म. व. पृ. १००

धारण करना (3) वृक्ष के नीचे आवास करना तथा (4) रुग्णावस्थ में गोमूत्र के रूप में भैषज्य सेवन करना ।

प्रथम निश्रय भिक्षान्न से जीवन निर्वाह करना है । इसका पालन जीवन-पर्यन्त करने की दीक्षा दी जाती थी । इस निश्रय के साथ अतिरेक-लाभ के रूप में संघ-भोज, निमन्त्रण, उपोसथ के दिन का भोज एवं प्रतिपदा के दिन का भोज में सम्मिलित होने की छूट थी ।[1]

आचार्य बुद्धघोष ने 'विशुद्धिमार्ग' में योगियों के लिए 'धुताङ्गनिद्देस' में विहित १३ धुताङ्गो में उपर्युक्त बुद्धोपदिष्ट चार निश्रयों को भी समाहित किया है । वहां विनयोपदिष्ट १४ प्रकार के अतिरेक लाभों का वर्णन श्रामणेरों के लिए किया है यथा–संघभत्त, उद्देसभत्त, निमन्त्रणभत्त, सलाकमत्त, पाक्षिकभत्त, उपोसथभत्त, प्रतिपादिक भत्त, आगन्तुकभत्त, ग्रामिकभत्त, गिलानभत्त, गिलानुपस्थाकभत्त, विहार-भत्त, धूरभत्त तथा वारकभत्त ।[2] परमत्थ मञ्जूषाटीका में इन चौदह प्रकार के अतिरेक लाभों की व्याख्या सन्निहित है ।[3]

पिण्डियालोप भोजन के निश्रय से भिक्षु अपरायत्तजीवी तथा चातुर्दिकगामी होता है । अल्पेक्षता का विकास होता है तथा भिक्षु की आजीविका परिशुद्ध होती है ।

द्वितीय निश्रय के रूप में यत्र-तत्र धूल आदि पर पड़े कपड़ों से बने चीवर से शरीर ढंकने का व्रत लेना । पांशुकूलचीवर में पांशु का अर्थ धूल से है । सड़क, श्मशान, कूड़ा-करकट के ढेर अथवा जहां कहीं भी धूल के ऊपर पड़े हुए जीर्ण-शीर्ण एंव पुरातन वस्त्र को पांशुकूल कहते हैं ।[4] विसुद्धिमग्ग में आचार्य बुद्धघोष ने कहा है–रथिकसुसान-संकारकूटादीनं यत्थ कत्थचि पंसूनं उपरि ठितत्ता अब्भुग्गतट्ठेन तेसु तेसु पंसुकूलमिवा ति पंसुकूलं ।[5] 'चीवर' भिक्षुओं द्वारा धारण किये जाने वाले वस्त्रों की संज्ञा है । भिक्षुओं के लिए तीन चीवरों (त्रिचीवर) उत्तरासंग, अन्तर्वासक तथा संघाटी का विधान है । इनके व्यतिरिक्त अन्य

---

1. "पिण्डियालोपभोजनं निस्साय पब्बज्जा । तत्थ ते यावजीवं उस्साहो करणीयो । अतिरेकलाभो-सङ्घभत्तं, उद्देसभत्तं, निमन्तनं, सलाकभत्तं, पक्खिकं, उपोसथिकं, पाटिपदिकं ।" म. व. पृ. १००
2. तेन पन पिण्डपातिके "संघभत्तं, उद्देसभत्तं, निमन्तनभत्तं, सलाकभत्तं, पक्खिकं, उपोसथिकं, पाटिपदिकं, आगन्तुकभत्तं, गमिकभत्तं, गिलानभत्तं, गिलानुपट्ठाकभत्तं, विहारभत्तं, धुरभत्तं, वारकभत्तं ति एतानि चुद्दस भत्तानि............ । विसु. म. पृ. ११५.
3. अतिरेकलाभं ति "पिण्डियालोपभोजनं निस्साया" ति एवं वुत्तभिक्खाहारलाभतो अतिरेक-लाभं, संघभत्तादिं ति अत्थो । सकलस्स.......। विसु. म. (परत्थमञ्जूसाटीका) पृ. ११५-५६.
4. विसुद्धिमार्ग (भिक्षु धर्मरक्षित) पृ. २३.
5. विसु. म. पृ. १४४.

किसी प्रकार के चीवर धारण की भिक्षुओं को अनुज्ञा नहीं की गई है। आचार्य बुद्धघोष भिक्षुओं के लिए विदित पांशुकूलिक चीवरों की व्याख्या करते हुए लिखते हैं–'एतेनेव नयेन संघाटिउत्तरासङ्गअन्तरवासकसङ्खातं तिचीवरं सीलमस्सा ति तेचीवरिको'।[1] पांशुकूलिक वस्त्रों द्वारा बनाया गया संघाटी, उत्तरासंग और अन्तरवासक नामक त्रिचीवर को जीवनपर्यन्त धारण करने का व्रत ही 'पसुकूल-चीवरं निस्साय पब्बज्जा' है। पांशुकूलिक वस्त्र निम्नलिखित प्रकार का हो सकता है–श्मशानिक, पर्षनिक, रथिकचोल, संकार चोल, स्वस्तिवस्त्र, स्नानवस्त्र, तीर्थ-वस्त्र, गतप्रत्यागत, अग्निदग्ध, गोखादित, ध्वजाहृत तथा स्तूपवस्त्र आदि जिससे भिक्षु अपने लिए चीवर निर्माण कर सकता है।[2]

महावग्ग में पांशु-कूल चीवर के अतिरिक्त क्षौम (रेशमी वस्त्र), कर्पास, कौशेय, कम्बल, सन एवं भांग की छाल से निर्मित वस्त्र धारण करने की अनुज्ञा तथागत ने भिक्षुओं के लिए की थी।[3] पांशुकूल चीवर धारण करने वाले भिक्षु की अप्रतिम प्रशंसा की गई है। विसुद्धिमग्ग में कहा गया है कि मार सेना के विधात के लिए पांशुकूल चीवर युक्त भिक्षु कवच-सन्नद्ध क्षत्रिय के समान शोभित होता है।[4] अतः योगमार्ग पर आरूढ़ भिक्षु को पांशुकूल धारण करने की निश्रय सराहनीय है तथा इसमें उन्हे निपुण होना चाहिए। इस निश्रय के ग्रहण से भिक्षु की लोलुपता, अतिरिक्तवस्त्रों का संचयन, आदि दुर्गुणों का विनाश तथा अल्पेच्छता, आत्मसंयम आदि गुणों का समावेश होता है।

वृक्ष के नीचे निवास तीसरा निश्रय है। वृक्षमूल-वास के अतिरिक्त भिक्षुओं को विहार, अड्ढयोग, प्रासाद, हर्म्य तथा गुहा, बुद्धोपदिष्ट इन पाँच प्रकार के निवासों में रहने की अनुज्ञा है। वृक्षमूल शयनासन का जीवनपर्यन्त उलंघन नहीं होना चाहिए अतः प्रव्रज्या के बाद निश्रय का व्रत लिया जाता था।[5] विसुद्धिमग्ग में रुक्खमूल सेनासन के माहत्म्य का वर्णन करते हुए यह कहा गया है कि निश्रय के अनुरूप जीवन-यापन करना इसका पहला गुण है। अल्प एवं सुलभ तथा अनवद्य (दोष रहित) भगवान ने चार प्रत्ययों का विधान किया है। तदनुसार शयनासन करना बुद्ध वचन का समादर करना होता है। हमेशा वृक्षों के निकट

---

1. विसु. म. पृ. १४५.
2. विसु. म. पृ. १४९.
3. "पंसुकूलचीवरं निस्साय पब्बज्जा। तत्थ ते यावजीवं उस्साहो करणीयो। अतिरेक लाभो-खोमं, कप्पासिकं, कोसेय्यं, कम्बलं, साणं, भङ्गं।" म. व. पृ. १००.
4. "मारसेनाविधाताय पंसुकूलधरो यति।
   सन्नद्धकवचो युद्धे खत्तियो विय सोभति॥ विसु. म. पृ. १५२.
5. "रुक्खमूलसेनासनं निस्साय पब्बज्जा। तत्थ ते यावजीवं उस्साहो करणीयो। अतिरेकलाभो-विहारो, अड्ढयोगो, पासादो, हम्मियं, गुहा।" म. व. पृ. १००.

रहने से तरुपल्लव विकार का प्रतिक्षण दर्शन होता है जिससे क्षण-क्षण नाशवान् वस्तुओं का ज्ञान होता है साथ ही आवासमात्सर्य से युक्त होकर नये-नये भवनों को बनाने सम्बन्धी दोषों से अलग होता है तथा अन्य आवासजन्य आशक्तियों से दूर रहता है। वृक्ष देवता के साथ वास करता है तथा अल्पेक्ष-भाव से युक्त होकर वृक्षमूल में शयनासन से सन्तुष्ट रहता है अतः अल्पेक्षतादि गुणों का भिक्षु में समावेश होता है।[1]

औषधि के रूप में गोमूत्र सेवन चौथा निश्रय है इसका पालन जीवन पर्यन्त भिक्षुओं को करना चाहिए।औषधि में अतिरिक्त लाभ के रूप में घी, मक्खन, तेल, मधु और खांड़ का प्रयोग भी निषिद्ध नहीं है।[2]

आश्रम धर्म में अरण्यवास की दो अवस्थाएँ विदित हैं - वानप्रस्थ अथवा वैखानस तथा संन्यास या भिक्षु आश्रम।[3] वानप्रस्थ आश्रम को सन्यास की पूर्वावस्था माना जा सकता है। वानप्रस्थ के कुछ प्रमुख नियम इस प्रकार थे– अरण्यवास करना, निरन्तर आत्मसाधना में रत रहना, वृक्ष-मूल में वास करना तथा गृहस्थों से प्राप्त भिक्षा पर जीवन निर्वाह करना आदि।[4] इन्हीं नियमों में निरन्तर साधनारत वानप्रस्थ की अवस्था को पार कर व्यक्ति सन्यासी जीवन में प्रवेश करता है। सन्यासी जीवन में वह अपने सिर का मुण्डन करवाता है, काषाय वस्त्र धारण करता है तथा हाथ में एक भिक्षा-पात्र ले भिक्षाटन से आवश्यक भोजन प्राप्त कर निरन्तर आध्यात्मिक चिन्तन किया करता है।[5] सन्यासी पूर्णरूपेण अनासक्त-जीवन व्यतीत करते हुए एकमात्र लक्ष्य आत्मतत्त्व की खोज में अग्रसर होता हैं। बौद्ध-संघीय जीवन और ब्राह्मण तापस जीवन के तुलनात्मक अध्ययन से हम दोनों में काफी समानताएँ पाते हैं। ब्राह्मण तापस जीवन, बुद्ध-काल का पूर्ववर्ती तथा तत्कालिक होने के कारण यह कहा जा सकता है कि ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ तथा सन्यास–इन तीन आश्रमों को आधार मानकर ही तथागत ने भिक्षुओं के संघीय जीवन का स्वरूप निश्चित किया होगा। बौद्ध भक्षु के पाँच वर्षों का श्रामणेर जीवन वस्तुतः वानप्रस्थ या वैखानस जीवन का रूपान्तर या उसके समकक्ष है। वानप्रस्थियों के अरण्यवास, अध्यात्म साधना में रत रहना, वृक्षमूल में वास करना तथा गृहस्थों से प्राप्त भिक्षान्न पर जीवन निर्वाह करना

1. विसु. म. पृ. भा. १, पृ १६९.
2. पूतिमुत्तभेसज्जं निस्साय पब्बज्जा। तत्थ ते यावजींव उस्साहो करणीयो। अतिरेकलाभो- सप्पि, नवनीतं, तेलं मधु, फाणितं" ति। म. व. पृ. १००.
3. आपस्तम्ब-धर्म-सूत्र, २/९/२१/१; गौतम-धर्म-सूत्र, ३/२; वशिष्ठ-धर्म-सूत्र, ७/१-२/; वैखानस-धर्म-प्रश्न, १/१/१३.
4. वैखानस-धर्म-प्रश्न, ३/५/१३.
5. वैखानस-धर्म-प्रश्न, २/६/२.

आदि नियमों के समान ही श्रामणेर भिक्षुओं को संघ में प्रवेश के समय ही चार निश्रयों–भिक्षा में प्राप्त अन्न से जीवन निर्वाह (पिण्डियालोपभोजनं निस्साय पब्बज्जा), यत्र-तत्र बिखरे चीथड़ों से बने हुए चीवर पहनना (पंसुकूलचीवरं निस्साय पब्बज्जा), वृक्ष-मूल में निवास करना (रुक्खमूलसेनासनं निस्साय पब्बज्जा) तथा भैषज्य के रूप में गोमूत्र का सेवन (पूतिमूत्तभेसज्ज निस्साय पब्बज्जा) की दीक्षा का प्रावधान किया।

उपसम्पदा दीक्षा सन्यास दीक्षा के समकक्ष है। उपसम्पदा प्राप्त भिक्षुओं के जीवन का लक्ष्य असंस्कृत धातु निर्वाण की प्राप्ति थी। सन्यासी भी एकमात्र लक्ष्य आत्मज्ञान की खोज में अग्रसर रहते थे। दोनों के जीवन के रहन-सहन के ढंग में भी काफी समानताएँ दिखती है। धर्मशास्त्रों में ब्रह्मचर्य आश्रम की परिसमाप्ति पर अथवा गृहस्थ आश्रम से गृहत्याग के विकल्प को स्वीकार किया गया है।[1] ब्रह्मचारी[2] तथा श्रामणेर[3] के लिए निर्धारित कर्तव्यों में भी पर्याप्त समानता दृष्टिगोचर होती है। दोनों के लिए प्राणी हिंसा, असत्य-भाषण, कठोर-वचन, मद्यपान, असमय (विकाल) भोजन, पुष्प-माला-गंध तथा उच्च शयनासन का प्रयोग निषिद्ध किये गये हैं।

उपर्युक्त चार निश्रयों का सम्यक् विनियोग भिक्षु-जीवन की उदात्तता एवं अल्पेक्षता के लिए अपरिहार्य है। आत्म-नियन्त्रण के द्वारा सांसारिक जीवन से मुक्त होना बौद्ध-धर्म का लक्ष्य था। कठोर तपश्चरण को अनुपयोगी मानते हुए भी तथागत ने क्रियात्मक दृष्टि से कठोर तपस्या को अपरिहार्य माना है। यही कारण है कि उपर्युक्त चार निश्रयों की अनुज्ञा करके भी मध्यम-मार्ग का अनुशरण करते हुए प्रत्येक निश्रयों में अतिरिक्त लाभ की देशना की है। प्रव्रजित जीवन के लिए, जो सांसारिक कर्त्तव्यों एवं धार्मिक अनुष्ठानों से सर्वथा मुक्त है। आध्यात्मिक पवित्रता का अधिगम आवश्यक है। अनासक्ति तथा आध्यात्मिक शान्ति के लिए एकान्तवास अपेक्षित है परन्तु जीवन की सामान्य स्थिति बनाये रखने के लिए अल्प भोजन, सामान्य शयनासन, एकान्त निवास स्थान तथा रुग्णावस्था के लिए भैषज्य भी आवश्यक है। इसीलिए तथागत ने भिक्षुओं के विहारों तथा हर्म्य आदि में रहने की अनुमति के पूर्व जब वे जंगलों एवं कन्दराओं में रहा करते थे, निश्रय-चतुष्ट्य का विधान किया जो सम्भवतः सर्वप्रथम वैनयिक अनुशासन था। चतुः निश्रय भिक्षुओं के तत्कालीन एकान्तचर्या प्रधान भिक्षु जीवन के नैतिक आदर्शवाद का द्योतक है।

---

1. मनु-स्मृति, २/२४७-४८ ; ६/२.
2. वैखानस-धर्म-प्रश्न, १/२६.
3. म. व. पृ.-४८-५३.

उपोसथ

उपोसथ शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'उप+वसथ' से की जाती हैं, जिसका सामान्य अर्थ है साथ-साथ बैठना, समीप बैठना, विनय-पिटक में उपोसथ पारिभाषिक शब्द के रूप में प्रयुक्त हुआ है अतः इसका कुछ विशेष अर्थ है। उपोसथ का तात्पर्य है भिक्षुसंघ का एकत्रित हो कर धर्मोपदेश करना। धार्मिक कार्य के निमित्त संघ के भिक्षुओं का एकत्रित होना या एक साथ बैठना ही उपोसथ है। प्रातिमोक्ष और उपोसथ भिक्षुसंघ के अत्यन्त प्राचीन काल से लक्षण रहे हैं। विनय के अनुसार बुद्ध के समकालीन अन्य परिव्राजकगण प्रत्येक मास की अष्टमी, चतुर्दशी तथा पूर्णमासी को एकत्र होकर धर्मोपदेश करते थे और उनके पास लोग धर्म की बातें सुनने जाया करते थे। वैदिक धर्म में दर्श और पूर्णमास की पाक्षिक तिथियों का बहुत महत्त्व था। ऐसा प्रतीत होता है कि अन्य परिव्राजकों के प्रचलित व्यवहार को देखकर बौद्धसंघ में पक्ष की विशिष्ट तिथियों में एकत्र होकर धर्मोपदेश करने की प्रथा का प्रारम्भ हुआ। प्राचीन काल से ही दर्श और पूर्णमास की पाक्षिक तिथियों को यज्ञ के पूर्व यजमान को दीक्षित होकर उपवास, परिशुद्धि आदि विशेष नियमों मे रहना पड़ता था और इस व्रत काल को उपवसथ कहा जाता था।[1] ब्राह्मणों के परवर्ती ग्रन्थों में सन्यासियों के लिए आरण्यकों अथवा उपनिषदों के आवर्तन का विधान पाया जाता है। बौद्ध संघ का उपोसथ भी इन्हीं के समान अर्थ रखता है।

उपोसथ के दिन एक सीमा के अन्तर्गत आने वाले आवासों में रहने वाले भिक्षुगण एकत्रित होकर प्रातिमोक्ष (पातिमोक्ख) की आवृत्ति किया करते थे। इस संघकर्म में सभी भिक्षुओं को उपस्थित होना अनिवार्य था। प्रारम्भ में उपोसथं के अवसर पर तथागत की प्रमुख शिक्षाओं को संक्षेप में दुहराया जाता था। यही धर्मोपदेश का रूप था। इस अवसर पर प्रत्येक भिक्षु के लिए आवश्यक था कि वह परिशुद्ध-शील हो। अशुद्ध होने की स्थिति में अपने अपराध स्वीकरण अथवा उसकी प्रतिदेशना किये बिना भिक्षु उपोसथ में सम्मिलित नहीं हो सकता था। समग्र संघ की उपस्थिति में अपराधों की एक सूची पढ़ी जाती थी, इसे ही प्रातिमोक्ष की आवृत्ति कहा जाता था। यहीं दोषी भिक्षुओं को अपने अपराधों की प्रतिवेदना करनी पड़ती थी। छोटे-मोटे अपराध आदेशना और चेतावनी से क्षालित हो जाते थे। बड़े अपराधों के लिए बाद में भिक्षुओं की परिषद बुलाय़ी जाती थी। मज्झिम निकाय के एक विवरण से स्पष्ट होता है कि तथागत के परिनिर्वाण के अनन्तर वर्षकार को समझाते हुए आनन्द ने कहा कि एक ग्राम

1. शतपथ (अच्युत ग्रन्थमाला), जि. 1, पृ. 2.

क्षेत्र में जितने भिक्षु रहते हैं , सभी उपोसथ के दिन एकत्रित होकर उसमें सम्मिलित होते है और तथागत के द्वारा उद्दिष्ट प्रातिमोक्ष का पाठ करते हैं तथा जिस भिक्षु को आपत्ति अथवा व्यतिक्रम होता है उसे यथाधर्म अनुशासित करते है। इसी प्रकार धर्म के द्वारा संघ का संचालन होता है।[1] इसी प्रसंग में आनन्द ने बताया कि उपोसथ के दिन प्रातिमोक्ष का पाठ करने वाले भिक्षु को संघस्थविर, संघपिता अथवा संघपरिणायक मानना चाहिए। प्रातिमोक्ष पाठ करने वाले भिक्षु के लिए यह आवश्यक था कि वह स्वयं प्रातिमोक्ष संवर से संवृत, धर्मविद्, सन्तोषी, ध्यानकुशल एवं अभिज्ञा-प्राप्त हो।

बौद्ध परम्परा में उपोसथ एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कृत्य है। उक्त पर्व के अवसर पर एक निश्चित सीमा में रहने वाले भिक्षु किसी एक स्थान पर एकत्रित हो कर धार्मिक तृप्ति करते हैं। इससे संघ की अखण्डता बनी रहती है। पूर्व में कहा ज चुक है कि बुद्धकालीन अन्य मतावलम्बी (परिब्राजक) विशेषकर जैन परिब्राजक चतुर्दशी, पूर्णमासी और पक्ष की अष्टमी को एकत्र होकर धर्मोपदेश करते थे। उनके पास जाकर लोग धर्म-श्रवण करते थे जिससे उनके प्रति श्रद्धा, विश्वास और भक्ति उत्पन्न होती थी। शनैः शनैः उनके धर्मानुयायियों की संख्या में भी वृद्धि होती थी।[2] इन्हीं बातों को ध्यान में लाते हुए मगधराज सेनिय बिम्विसार ने राजगृह में तथागत से प्रार्थन की कि बौद्ध संघ में भी उक्त प्रकार के कृत्य का शुभारम्भ करने की आज्ञा प्रदान करें। तथागत ने चतुर्दशी, पूर्णमा तथा पक्ष की अष्टमी, कौ बौद्ध भिक्षुओं को एकत्रित होने की अनुमति दी।[3] तत्पश्चात् भिक्षुओं ने तथागत की आज्ञा शिरोधार्य करते हुए चतुर्दशी, पूर्णिमा तथा प्रत्येक पक्ष की अष्टमी को एकत्रित होकर बैठना प्रारम्भ किया। जो मनुष्य धर्मोपदेश सुनने आते थे वे भिक्षुओं को गूँगे भेड़ के समान चुप-चाप बैठे देखकर निराश होकर लौट जाते थे। तथागत ने इन बातों को ध्यान में रखकर पुनः अनुज्ञा की कि भिक्षुसंघ एकत्रित होकर धार्मिक प्रवचन करें[4]। पुनः भगवान बुद्ध ने उपोसथ के दिन धर्मोपदेश के रूप में अपने द्वारा प्रज्ञप्त विभिन्न शिक्षापदों अर्थात्

---

1. मज्झिम नि. भाग-3, पृ.-17.
2. तेन खो पन समयेन अञ्ञतित्थिया परिब्बजका चातुद्दसे पन्नरसे अट्ठमिया च पक्खस्स सन्निपतित्वा धम्मं भासन्ति। ते मनुस्सा उपसङ्कमन्ति धम्मस्सवनाय। ते लभन्ति अञ्ञतित्थियेसु परिब्बाजकेसु पेमं, लभन्ति पसादं, लभन्ति अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका पक्खं। म. व. पृ. 105.
   पक्खं। म. व. पृ. 105.

   "अनुजानामि भिक्खवे, चातुद्दसे पन्नरसे अट्ठमिया च पक्खस्स सन्निपतितुं। म. व. पृ. 105
3. "अनुजानामि भिक्खवे, चातुद्दसे पन्नरसे अट्ठमिया च पक्खस्स सन्निपतित्वा धम्मं भासितुं"।
4. "अनुजानामि, भिक्खवे, चातुद्दसे पन्नरसे अट्ठमिया च पक्खस्स सन्निपतित्वा धम्मं भासितुं"।
   म. व., पृ. 106

प्रातिमोक्ष की आवृत्ति करने की अनुज्ञा की ।[1] तथागत ने पुनः उपोसथ के दिनों की संख्या को घटाकर एक मास में चार बार के स्थान पर मात्र दो दिन चतुर्दशी तथा पूर्णिमा को करने की अनुज्ञा की ।[2] तथागत ने उपोसथ के दिनों का निर्धारण महीने के आधार पर न करके पाक्षिक किया था । इस प्रकार एक ऋतु के चार महीनों में कुल आठ पक्ष उपोसथ कर्म के लिए होते थे । इसमें तीसरा और सातवें पक्ष के उपोसथ को 'चातुद्दसी' तथा अन्य पहले, दूसरे चौथे, पाचवें, छठे तथा आठवें पक्ष में सम्पन्न होने वाले उपोसथ को 'पन्नरसी' उपोसथ कहा जाता है । 'चातुद्दसी तथा पन्नरसी' उपोसथ की व्याख्या करते हुए समन्तपासादिका में कहा गया है–"चातुद्दसे वा पन्नरसे वा ति एकस्स उतुनो ततिये च सत्तमे च पक्खे द्विक्खत्तुं चातुद्दसे अवसेसे छक्खत्तुं पन्नरसे ।"[3] पुनः उपोसथ कर्म के लिए तथागत ने विभिन्न नियम-उपनियमों का विधान किया । उपोसथ में संघ का समग्ररूप से सम्मिलित होना अनिवार्य था अतएव संघ की सीमा-निर्धारण के लिए नियम बनाये गये । उपोसथ के चार कर्म बताये गये है–संघ के कुछ भाग का धर्म विरुद्ध उपोसथ करना, समग्र संघ का धर्म विरुद्ध उपोसथ करना, धर्मानुकूल उपोसथ करना तथा समग्र संघ का धर्मानुकूल उपोसथ करना । इसमे अन्तिम कर्म विधेय है ।[4] प्रातिमोक्ष का पाठ गृहस्थ-युक्त परिषद में निषिद्ध किया गया है । उसकी आवृत्ति चतुर और समर्थ भिक्षु के आश्रय में होना चाहिए । उपोसथ के दिन आवास में यदि बहुश्रुत, आगमज्ञ, धर्मधर, विनयधर, मात्रिकाधर भिक्षु आयें तो उनकी सेवा करनी चाहिए । उपोसथ में सभी भिक्षुओं की उपस्थिति अनिवार्य थी । यदि भिक्षु रोगी हो अथवा किसी अन्य कारण से उपोसथ में सम्मिलित नहीं हो पाता हो तो उसे अपनी परिशुद्धि संघ के समक्ष भेजनी चाहिए । यदि ऐसा सम्भव नहीं हो तो भिक्षु संघ के एक भाग को उपोसथ नहीं करना चाहिए ।

उपोसथ कर्म के लिए भिक्षुओं की अपेक्षित संख्या चार बताई गयी है पर कदाचित् तीन अथवा दो भी हो तो उन्हें परस्पर "परिसुद्धो अहं आवुसो, परिसुद्धो ति मं धारेथ" यह वचन तीन बार कहना चाहिए । अकेले भिक्षु को भी उपोसथ करने का दृढ़ संकल्प करना चाहिए । यदि कुछ नियम विरुद्ध कार्य हुए हों तो उनका स्वीकृति पूर्वक प्रतिकार होना चाहिए । सन्देह, संकोच, कटूक्तिपूर्वक अथवा

1. अनुजानामि, भिक्खवे, पातिमोक्खं उद्दिसितुं" ।
2. "........संकिं पक्खस्स चातुद्दसे वा पन्नरसं वा पातिमोक्खं उद्दिसितुं" । म. व., पृ. 108.
3. समन्तपासादिका, पृ. 1091. (भा. ३)
4. चत्तारिमानि, भिक्खवे, उपोसथ कम्मानि –अधम्मेन वग्गं उपोसथकम्मं, अधम्मेन समग्गं उपोसथकम्मं, धम्मेन वग्गं उपोसथकम्मं, धम्मेन समग्गं उपोसथकम्मं यदिदं अधम्मेन वग्गं उपोसथकम्मं, न, भिक्खवे, एवरूपं उपोसथकम्मं कातब्बं धम्मेन समग्गं उपोसथकम्मं, एवंरूपं, भिक्खवे, उपोसथकम्मं कातब्बं । म. व. पृ. 113-114.

अनुपस्थिति को जाने बिना किया गया उपोसथ सदोष माना गया है। इन दोषों के निवारण के लिए प्रातिमोक्ष का पुनः पाठ दुहराना विदित था। महोत्सव के पश्चात् उपोसथ के दिन आवास त्यागने के भी नियम प्रज्ञप्त हुए। साधारणतः उस दिन आवास छोड़ा नहीं जाना चाहिए और यदि किन्हीं विशिष्ट परिस्थितियों में छोड़ना भी पड़े तो भिक्षु को ऐसे आवास में जाना चाहिए जहाँ सहधर्मी भिक्षु हों तथा जहाँ उसी दिन पहुँचा जा सके। भिक्षु यदि लम्बी यात्रा के लिए जाना चाहता हो तो उसे भिक्षु संघ के उपाध्याय से अनुमति लेनी चाहिए। इस धार्मिक महोत्सव के लिए उपर्युक्त नियमों के अतिरिक्त यह भी नियम बना कि उपोसथ की समूची प्रक्रिया उपोसथ के ही दिन पूरी होनी चाहिए। तथागत ने एक अन्य प्रकार के उपोसथ का भी विधान किया था जिसका आयोजन संघ किसी भी दिन कर सकता था। इस प्रकार के उपोसथ को 'सामग्गी उपोसथ' कहा जाता था। इस प्रकार की एकता महोत्सव का आयोजन संघ तब करता था जब कोई आपत्ति-ग्रस्त भिक्षु अपने दोषों को स्वीकार कर संघ में मिलना चाहता था।[1] चूँकि उसके दोषों का निराकरण तथा उसे संघ में पुनः वापस लेने की प्रक्रिया का अधिकार पूरे संघ को था तथा इस कार्य में संघ की एकता स्थापित होती थी अतः इस समारोह को एकता महोत्सव 'सामग्गी उपोसथ' की संज्ञा से अभिहित किया गया।[2]

जब संघ में चार या उससे अधिक संख्या में भिक्षु हों तो उनके द्वारा किया गया उपोसथ 'संघ उपोसथ' कहा जाता है। इसी प्रकार दो अथवा तीन भिक्षुओं के द्वारा किया गया उपोसथ 'गणउपोसथ' के नाम से जाना जाता है। इसी प्रकार जब अकेले भिक्षु के द्वारा उपोसथ कर्म सम्पन्न होता है तो उसे पुद्गल (पुग्गल) उपोसथ कहा जाता है। संघ उपोसथ को 'सुत्तुद्देस उपोसथ' भी कहा जाता है क्योंकि इस प्रकार के उपोसथ में भिक्षुओं की संख्या अधिक होने के कारण संघ के द्वारा प्रातिमोक्ष (सुत्त) की आवृत्ति की जाती है। 'गण उपोसथ' में प्रातिमोक्ष की आवृत्ति का निषेध है। इस प्रकार के उपोसथ में भिक्षुगण एक-दूसरे को अपनी पारिशुद्धि बतलाते हैं। बौद्धभिक्षुओं के स्वयं की परिशुद्धि बताने के कारण इसे 'पारिशुद्धिउपोसथ भी कहते हैं। पुद्गल उपोसथ में अकेले भिक्षु के द्वारा उपोसथ करने का दृढ़ संकल्प अथवा दृढ़ इच्छा शक्ति को अधिष्ठान कहा जाता है। इसी दृढ़ संकल्प के कारण पुद्गल उपोसथ को अधिष्ठान उपोसथ(अधिट्ठान उपोसथ)

---

1. "यस्मिं आवुसो, वत्थुस्मिं अहोसि संघस्स भण्डनं कलहो विग्गहो विवादो सङ्घभेदो सङ्घराजि सङ्घववत्थानं सङ्घनानाकरणं, सो एसो भिक्खु आपन्नो च उक्खित्तो च पस्सि च ओसारितो च। हन्द मयं, आवुसो, तस्स वत्थुस्स वूपसमाय सङ्घसामग्गिं करोमा।" म. व. पृ. 388
2. म. व. पृ. 388-389, सम. पा., 1236 (भाग-3)

भी कहते हैं ।[1] जिस निवास में चार भिक्षु रहते हों, वहाँ एक की शुद्धि लाकर तीन को प्रतिमोक्ष का पाठ करना निषिद्ध है । इसी प्रकार जहाँ पर तीन भिक्षु हैं, वहाँ एक की शुद्धि लाकर बाकी दो भिक्षुओं के द्वारा पारिशुद्धि उपोसथ का निषेध किया गया है । जहाँ पर दो भिक्षु निवास करते हों वहाँ पर एक की शुद्धि लाकर शेष एक को अधिष्ठान करना वर्जित है । ऐसा करने पर भिक्षु दुक्कट नामक आपत्ति से ग्रस्त होता है,[2]

उपोसथागार

वह स्थान जहाँ उपोसथ करने का निश्चय किया गया हो, उपोसथागार कहा जाता है । प्रारम्भ में भिक्षुगण बारी-बारी से परिवेणों में अथवा अन्य स्थानों में उपोसथ किया करते थे । तथागत ने इसका निषेध करते हुए उपोसथागार के लिए विहार, अड्ढयोग (अटारी), प्रासाद, हर्म्य अथवा गुहा में उपोसथ कृत्य करने की अनुज्ञा की ।[3] उपर्युक्त आवासों में से किसी एक आवास को संघ की सम्मति से उपोसथागार निर्धारित किया जाता था । उपोसथागार का निर्धारण संघ के द्वारा 'ञत्तिदुतियकम्म' के द्वारा किया जाना विधेय था । संघ की सम्मति लेने के लिए सर्वप्रथम एक चतुर एवं समर्थ भिक्षु संघ को सूचित करता था कि–'संघ यदि उचित समझे तो अमुक नाम वाले विहार को उपोसथागार करार दे ।' इसे ज्ञप्ति कहा जाता था । तत्पश्चात् अनुश्रावण करते हुए भिक्षु कहता था कि–संघ इस नाम वाले विहार को उपोसथागार करार देता है । जिस आयुष्मान् को इस नाम वाले विहार का उपोसथागार निश्चित होना पसन्द हो वह मौन रहें, जिन्हें नापसन्द हो वह बोलें । इसके बाद यदि संघ के भिक्षु मौन रहते थे तो ऐसी धारणा की जाती थी कि–संघ को इस नामवाले विहार को उपोसथागार के रूप में निर्धारण की स्वीकृति है, इसलिए चुप है ।[4] इस प्रकार उपोसथागार का निर्धारण किया जाता था । एक सीमा के अन्तर्गत रहने वाले भिक्षुओं के लिए एक उपोसथागार ही विहित था । एक से अतिरिक्त उपोसथागार निर्धारित करने पर भिक्षु दुक्कट की आपत्ति से ग्रस्त होता था । यदि एक ही सीमा के अन्तर्गत एक

---

1. म. व. पृ. 125-126, परि., पृ. 222.
2. तत्र, भिक्खवे, यत्थ चत्तारो भिक्खू विहरन्ति, न एकस्स पारिसुद्धिं आहरित्वा तीहि पातिमोक्खं उद्दिसितब्बं । ....यत्थ तयो भिक्खू विहरन्ति, न एकस्स पारिसुद्धिं आहरित्वा द्वीहि परिसुद्धिउपोसथो कातब्बो । ....यत्थ द्वे भिक्खू विहरन्ति, न एकस्स पारिसुद्धिं आहरित्वा एकेन अधिट्ठातब्बं । अधिट्ठहेय्य चे, आपत्ति दुक्कटस्सा ति । म. व., पृ. 126.
3. अनुजानामि, भिक्खवे, उपोसथागारं सम्मन्नित्वा उपोसथं कातुं, यं सङ्घो आकङ्खति विहारं वा अड्ढयोगं वा पासादं वा हम्मियं वा गुहं वा ।" म. व. पृ. 110
4. "म. व. पृ 110.

से अधिक आवासों को उपोसथागार के रूप में निर्धारित किया जाता था तो 'ञत्तिदुतियकम्म' (ज्ञप्ति द्वितीय कर्म) के माध्यम से उसमें से किसी एक आवास को उपोसथागार करार दिया जाता था। शेष को संघ की सम्मति से त्याग दिया जाता था।[1] एक सीमा के कई आवासों में उस विहार को प्राथमिकता दी जाती थी जहाँ स्थविर भिक्षु निवास करते हों। सामान्यतः यह भी देखा जाता था कि उपोसथागार इतना बड़ा अवश्य हो जिसमें सीमा के अन्तर्गत रहने वाले समस्त भिक्षु एकत्रित हो सकें। अग्नि, वायु, बाढ़ एवं वर्षा से सुरक्षित स्थान को उपोसथागार निर्धारित करते समय ध्यान में रखा जाता था।

यदि निर्धारित उपोसथागार उपोसथ में सम्मिलित होने वाले भिक्षुओं के लिए अपर्याप्त हो तो संघ उसी निर्धारित उपोसथागार के अतिरिक्त चारो ओर के भूमि (परिवेण) अथवा अन्य किसी उपोसथ कर्म के लिए उपयुक्त स्थान को उपोसथागार के रूप में घोषणा कर सकता है। इसके अतिरिक्त स्थान को 'उपोसथप्पमुख' कहा जाता था। उपोसथागार के अतिरिक्त स्थान को निर्धारित करते समय उपयुक्त चिन्हों का निर्धारण किया जाना चाहिए। पुनः संघ 'ञत्तिदुतियकम्म' के द्वारा उपोसथ कर्म के लिए निर्धारित अतिरिक्त स्थान की सबों की सहमति समझकर घोषणा करता था कि–'इन चिन्हों से घिरे स्थान का उपोसथ का बरामदा (उपोसथप्पमुख) निश्चय करना संघ को स्वीकार है, इसलिए सभी मौन हैं।[2] किसी वृहत् सीमा, जिसके अन्तर्गत कई आवास आते हों और उसमें रहने वाले भिक्षु अपने-अपने आवासों में उपोसथ कर्म करने के लिए विवाद करते हों तो ऐसी स्थिति में भी अलग-अलग वर्ग वनाकर संघ का उपोसथ निषिद्ध किया गया है। ऐसी स्थिति के लिए तथागत ने अनुज्ञा की कि जिस आवास में स्थविर भिक्षु रहते हों उसे ही उपोसथागार मान कर एक सीमा के सभी भिक्षुओं को एकत्रित होकर उपोसथ करना चाहिए।[3]

विनय के उपर्युक्त विवरणों को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि विहार, अड्ढयोग',प्रासाद, हर्म्य अथवा गुहा में से किसी एक को उपोसथ कर्म के लिए उपोसथगार निर्धारित किया जाता था। एक सीमा के अन्तर्गत मात्र एक उपोसथागार विदित था जहाँ सीमा के समस्त भिक्षु उपोसथ के दिन एकत्रित

---

1. म. व. पृ. 110.
2. म. व. पृ. 110-111.
3. तेन खो पन समयेन राजगहे सम्बहुला आवासा समानसीमा होन्ति। तत्थ भिक्खू विवदन्ति-अम्हाकं आवासे उपोसथो करीयतु, अम्हाकं आवासे उपोसथो करीयतू ति। तेहि, भिक्खवे भिक्खूहि सब्बेहेव एकज्झं सन्निपतित्वा उपोसथो कातब्बो। यत्थ वा पन थेरो भिक्खु विहरति, तत्थ सन्निपतित्वा उपोसथो कातब्बो, न त्वेव वग्गेन सङ्घेन उपोसथो कातब्बो। म. व. पृ. 111

होकर प्रातिमोक्ष की आवृत्ति करते थे। किसी भी हालत में एक सीमा के भिक्षुओं का अलग-अलग टुकड़ों में उपोसथागार निर्धारित कर उपोसथ कर्म करना विधेय नहीं था।

उपोसथ के पूर्वकरण एवं पूर्वकृत्य

उपोसथ के लिए उपोसथागार के निर्धारण के पश्चात् सीमा के अन्तर्गत सभी आवास के भिक्षुओं को इसकी सूचना पहुँचा दी जाती थी। ताकि समय से भिक्षुगण वहाँ पहुँच सकें। स्थविर भिक्षुओं को उपोसथ के दिन समय से पूर्व पहुँचने का तथागत ने निर्देश दिया था।[1] उपोसथ के लिए निर्धारित आवास में एक विशिष्ट आगार निश्चित होता था, जिसे समय से पूर्व झाड़-बुहार कर स्वच्छ कर दिया जाता था। वहाँ आगन्तुक भिक्षुओं के लिए यथायोग्य आसन बिछा दिये जाते थे। आगार में समुचित प्रकाश के लिए आवश्यक दीपक जला दिये जाते थे। पुनः आगन्तुकों के लिए जल से भरा घट निश्चित स्थान पर रख दिया जाता था। इन चार कर्मो को उपोसथ का पूर्व-करण कहा जाता है।[2] विनय पिटक की अट्ठकथा समन्तपासादिका में उपोसथ के पूर्वकरण की व्याख्या करते हुए कहा गया है–

"सम्मज्जनि पदीपो च, उदकं आसनेन च।
उपोसथस्स एतानि, पुब्बकरणं ति वुच्चति॥"[3]

उपर्युक्त पूर्वकरण के सभी कार्यो को यथासमय पूरा करने का सम्पूर्ण दायित्व स्थविर भिक्षु नये भिक्षुओं की मदद से लेते थे। उनके आदेश पर नये भिक्षु इन सभी कृत्यों की व्यवस्था करते थे। तथागत ने इसकी अनुज्ञा की थी।[4]

पूर्वकरण के पश्चात् भिक्षु उपोसथागार में अपना-अपना स्थान ग्रहण करते थे। इस प्रकार उपोसथ समारोह का प्रारम्भ होता था। सर्वप्रथम भिक्षुओं की गणना की जाती थी, पुनः ऋतु एवं काल का कथन कर किस पक्ष का कौन सा उपोसथ है, इसे बताया जाता था। यदि कोई भिक्षु अस्वस्थता अथवा अन्य किन्हीं विशेष कारणों से उपोसथ में सम्मिलित नहीं हो सका है तो उसकी पारिशुद्धि की जानकारी ली जाती थी। इसे 'छन्द' कहा जाता था।[5]

---

1. अनुजानामि, भिक्खवे, तदहुपोसथे थेरेहि भिक्खूहि पठमतरं सन्निपतितुं" ति।
2. म. व. पृ. 119-120
3. सम. पा. पृ. 1121 (भा.-3)
4. अनुजानामि, भिक्खवे, थेरेन भिक्खुना नवं भिक्खु आणापेतुं ति। म. व., पृ. 118, 120.
5. पारिसुद्धि दान कथा, म. व. पृ. 121-122.

उपर्युक्त सभी प्रारम्भिक कार्यो को उपोसथ का पूर्व-कृत्य कहा जाता है। समन्तपासादिका में आचार्य बुद्धघोष ने उपोसथ के पूर्व-कृत्यों का वर्णन करते हुए कहा है–

"छन्दपारिसुद्धिउतुक्खानं , भिक्खुगणना च ओवादो।
उपोसथस्स एतानि, पुब्बकिच्चं ति वुच्चति ॥"[1]

तथागत ने संघ के सभी भिक्षुओं को उपोसथ मे सम्मिलित होना अनिवार्य बताया है। रोगी होने पर किसी अन्य भिक्षु के द्वारा उपोसथ में अपनी पारिसुद्धि (छन्छ) भेजना अनिवार्य था।[2] यदि भिक्षु को उसके परिवारजन ले जाना चाहें, उसे राजा, चोर, बदमास आदि पकड़ ले जायँ तो भिक्षु को किसी अन्य के हाथ अपनी पारिशुद्धि अवश्य भिजवाना चाहिए। अपनी शुद्धि दान भेजने के लिए किसी भिक्षु के पास जाकर उत्तरासंग को एक कंधे पर कर, उकडूँ बैठकर, हाथ जोड़ कर ऐसा कहना चाहिए–'शुद्धि देता हूँ, मेंरी शुद्धि को ले जाओ, इसे ले जाकर संघ के सम्मुख कहना।[3] इस प्रकार अगर सम्भव नहीं हो तो रोगी भिक्षु की चारपायी को अथवा उसे चौकी पर बैठा कर उपोसथागार में ला कर उपोसथ करना चाहिए। यदि रोगी भिक्षु की अवस्था ज्यादा चिन्तमीय हो तो संघ को स्वयं उसके आवास पर एकत्रित होकर उपोसथ करना चाहिए। परन्तु संघ के एक भाग का उपोसथ करना किसी हालत में स्वीकार्य नहीं था।[4] यदि कोई भिक्षु विशेष परिस्थितियों में अपनी पारिशुद्धि तथा सम्मति (छन्द) दूसरे भिक्षु के द्वारा संघ को भिजवाता हो और प्रतिनिधि भिक्षु जानबूझकर,, प्रमादवश अथवा अन्य किन्हीं कारणों से उसकी पारिशुद्धि संघ के सम्मुख नहीं रखता हो तो पारिशुद्धि भिजवाने वाला भिक्षु निर्दोष माना जायेगा। ऐसा करने पर प्रतिनिधि भिक्षु दोषी होगा और दुष्कृत नामक आपत्ति का भागी होगा।[5]

उपोसथ में सम्मिलित होने के नियम

ऊपर कहा जा चुका है कि उपोसथ में एक सीमा के समस्त भिक्षुओं की उपस्थिति अनिवार्य थी। परन्तु किसी आपत्ति से ग्रस्त भिक्षु को उपोसथ में तब तक सम्मिलित होने की अनुमति नहीं थी जब तक सम्बन्धित दोषों के

---

1. सम. पा., भाग-3, पृ. 1122.
2. अनुजानामि, भिक्खवे, गिलानेन भिक्खुना पारिसुद्धिं दातुं।
3. तेन गिलानेन भिक्खुना एकं भिक्खुं उपसङ्कमित्वा एवमस्स वचनीयो–"पारिसुद्धिं दम्मि, पारिसुद्धिं मे हर, पारिसुद्धिं में आरोचेही ति।"
4. सङ्घेन तत्थ गन्त्वा उपसथो कातब्बो। न त्वेव वग्गेन सङ्घेन उपसथो कातब्बो। म. व. पृ. 121-122.
5. म. व. वृ. 122.

प्रायश्चितस्वरूप अपराधों का भिक्षु के द्वारा प्रतिकार न किया गया हो[1] उन्मत्त-व्यक्ति, रोगी तथा अन्य दैविक, एवं शारीरिक आपदाओं से ग्रस्त भिक्षुओं के लिए उपोसथ में सम्मिलित होने के विभिन्न नियमों का विधान किया गया । इसी अध्याय में कहा जा चुका है कि भिक्षु के रुग्णावस्था में अथवा उसके परिवारजन के बुलावे पर उसके चोर, बदमास या राजसैनिकों के द्वारा पकड़ लिये जाने पर भिक्षु को किसी के हाथों अपनी पारिशुद्धि अवश्य भिजवाना चाहिए । यदि ऐसा सम्भव नहीं हो तो संघ के एक भाग को उपोसथ नहीं करना चाहिए । यदि कोई भिक्षु उन्मत्त अथवा पागल हो गया हो तो उसके बिना संघ उपोसथ करे ऐसा प्रस्ताव आना चाहिए । उन्मत्त भिक्षुओं के लिए तथागत ने सम्मति करने की व्यवस्था करते हुए महावग्ग में कहा है कि" दो प्रकार के उन्मत्त होते हैं । एक तो वैसा उन्मत्त भिक्षु जो उपोसथ को याद भी रखता है या भूल भी जाता है । दूसरे तरह का उन्मत्त भिक्षु संघकर्म को याद भी रखता है या नहीं भी याद रखता है लेकिन उपोसथ याद नहीं रखता है, संघकर्म अथवा उपोसथ के अवसर पर उपस्थित होता भी है या नहीं भी होता है । इस दूसरे प्रकार के उन्मत्त के लिए ज्ञप्तिकर्म के द्वारा सम्मति देनी चाहिए ।[2]

उपोसथ कर्म के लिए अपेक्षित संख्या चार बतलायी गई है पर कदाचित् तीन अथवा दो भी हों तो उन्हें परस्पर "परिसुद्धो अहं आवुसो, परिसुद्धो ति मं धारेथ" ऐसी तीन बार कहकर उपोसथ करना चाहिए । यदि भिक्षु अकेला हो तो उसे उपोसथ करने का दृढ़ संकल्प लेना चाहिए । किसी आवास में चार या अधिक संख्या में भिक्षु होने पर उपोसथ के दिन एकत्रित हो प्रातिमोक्ष का पाठ करना चाहिए । अन्य आश्रमवासी भिक्षु के बीच में आ जाने पर प्रातिमोक्ष की पुनः आवृति की जानी चाहिए, अन्यथा शुद्धि बतलानी चाहिए । सन्देह, संकोच, कटूक्तिपूर्वक अथवा अनुपस्थति को जाने बिना किया गया उपोसथ सदोष माना गया है । इन दोषों को दूर करने पर प्रातिमोक्ष की पुनः आवृत्ति किया जाना चाहिए । उपोसथ की दो तिथियों में भिक्षुओं की पर्याप्त संख्या के आधार पर एक तिथि की स्वीकृति दी जाती थी । आवासिको तथा नवागन्तुक भिक्षुओं में उपोसथ पृथक रूप से स्वीकार्य नहीं है प्रत्युत उनकी संख्या के अनुसार उसका निर्धारण किया जाना चाहिए । इस बात का ध्यान रखा जाना आवश्यक था कि उपोसथ-कर्म की समूची प्रक्रिया उपोसथ के ही दिन पूरी होनी चाहिए ।

---

1. म. व. वृ. 121-127.
2. द्वेमे, भिक्खवे, उम्मत्तका–अत्थि, भिक्खवे, भिक्खु उम्मत्तको सरति पि उपोसथं न पि सरति, सरति पि सङ्घकम्मं न पि सरति, अत्थि नेव सरति अनुजानामि, भिक्खवे, एवरूपस्स उम्मत्तकस्स उम्मत्तकसमुतिं दातुं । म. व. पृ. 124.

बौद्ध निकायों में कम से कम इक्कीस प्रकार के व्यक्तियों का वर्णन प्राप्त होता है जिसकी उपस्थिति में उपोसथ कर्म सम्पन्न नहीं किया जा सकता। वे व्यक्ति हैं—भिक्षुणी, शिक्षमाणा, श्रामणेर, श्रामणेरी, सिक्खापच्चक्खातक (वैसा भिक्षु, जो नियमों का प्रत्याख्यान करता हो), पाराजिक नामक आपत्ति से ग्रस्त भिक्षु, तीन प्रकार के उत्क्षिप्त भिक्षु (उक्खित्तक)—दोषों को न देखने वाला उत्क्षिप्तक, दोषों को जानकर उसका प्रतिकार न करने वाला उत्क्षिप्तक तथा बुरी धारणाओं को नहीं त्यागने वाला उत्क्षिप्तक, पंडक, थेय्यसंवासक (चोरी से अपने आप चीवर पहनकर संघ में प्रवेश कर जाने वाला), किसी अन्य सम्प्रदाय में चला जाने वाला व्यक्ति, तिरच्छानगत प्राणी (मनुष्य योनि के अतिरिक्त नाग, पशु-पक्षी आदि योनियों का प्राणी), मातृ-घातक, पितृ-घातक, अर्हत-घातक, भिक्षुणीदूषक, संघ-भेदक (संघ में फूट डालने वाला भिक्षु), बुद्ध के शरीर से लहू निकालने वाला व्यक्ति, स्त्री-पुरुष दोनो लिंगों वाला व्यक्ति (उभयलिंगी) तथा उपासक।[1] उपर्युक्त सभी इक्कीस प्रकार के व्यक्तियों को 'वज्जनीयपुग्गला' अर्थात' उपोसथ कर्म के अयोग्य व्यक्ति' कहा जाता है। इनके उपस्थिति में प्रातिमोक्ष का सांगायन निषिद्ध है। उत्क्षिप्त को छोड़कर यदि इनमें से किसी व्यक्ति की उपस्थिति में उपोसथ कर्म का सम्पादन किया जाता है तो उपस्थित भिक्षु 'दुक्कट' की आपत्ति से ग्रस्त होता है। परन्तु यदि 'उक्खित्तक' (उत्क्षिप्तक) की उपस्थिति में उपोसथ किया तो भिक्षु पाचित्तिय दोष का भागी होता है।[2]

उपोसथ कर्म की परिसमाप्ति पर आवास त्यागने के भी नियम बनाये गये। साधारणतः उसी दिन आवास नहीं छोड़ना चाहिए परन्तु विशेष परिस्थितियों में अपना आवास छोड़ना भी पड़े तो भिक्षु को ऐसे आवास में जाना चाहिए जहाँ सहधर्मी भिक्षु हों तथा जहाँ उसी दिन पहुँचा जा सके। भिक्षु रहित आवास में नहीं जाना चाहिए।[3] उपोसथ में सम्मिलित होने के लिए यह आवश्यक था कि भिक्षु परिशुद्धशील हो। अशुद्धता की अवस्था में अपने अपराध की प्रतिदेशना अथवा स्वीकार किये बिना वह उपोसथ में सम्मिलित नहीं हो सकता था।

सीमा संधारण और उसके नियम

उपोसथ में संघ का समग्र रूप से सम्मिलित होना अनिवार्य था., अतएव संघ की सीमा निर्धारण के लिए आवश्यक नियम बनाये गये। बौद्ध निकायों में संघ शब्द कभी चातुर्दिश संघ के लिए प्रयुक्त होता है, कभी स्थानीय विहार, संघाराम

---

1. म. व. (वज्जनीयपुग्गलसन्दस्सना) पृ. 141-142.
2. पाचित्तिय पालि (नि. सं 69) पृ. 185,
3. म. व. पृ. 140-141.

अथवा आवास के लिए। यहाँ पर यह स्मरणीय है कि स्थानीय संघ की ही सीमा बाँधी जाती थी और उसी के अन्दर उपोसथ आदि संघकर्म में समग्रता अपेक्षित थी। उपोसथ एवं अन्य संघ-कर्म के लिए भिक्षुओं के द्वारा चिन्हों आदि से स्थानीय आवासों की एक प्रकार से घेराबन्दी संघ की सीमा कही जाती थी। एक सीमा के अन्तर्गत रहने वाले भिक्षुओं को तीन चीवरों के नियम (तिचीवरेन-विप्पवाससीमा) का पालन आवश्यकतानुसार अनिवार्य नहीं था।[1] एक क्षेत्र में पड़ने वाले सभी विहार, आराम आदि सीमा के अन्तर्गत आते थे, तथा उन सभी विहारों में निवास करने वाले समस्त भिक्षुगण के लिए उपोसंथ तथा अन्य संघ कर्म के लिए एक विहार को उपोसथागार निर्धारित किया जाता था। बुद्धकाल में राजगृह में अट्ठारह विहार थे जो उपोसथ तथा अन्य संघकर्म के लिए एक सीमा में बँधे थे।[2]

सीमा निर्धारण संघ के भिक्षुओं के द्वारा बुद्ध-प्रवेदित चिन्हों के आधार पर ज्ञप्तिद्वितीयकर्म (ञत्तिदुतियकम्म) से होता था। सीमा-समूहन में प्रयुक्त चिन्हों को 'निमित्त' कहा जाता है। तथागत ने निम्नलिखित आठ प्रकार के प्राकृतिक चिह्नों को सीमा के लिये निमित्त निर्धारित किया था–पर्वत (पब्बत-निमित्त), विशाल शिला खण्ड (पाषाण-निमित्त), जंगल (वन-निमत्त), वृक्ष (रुक्खनिमित्त), राजमार्ग अथवा सड़क (मग्ग-निमित्त), दीमक आदि कीड़ो के घर की मिट्टी (बल्मीक, वम्मिक-निमित्त)नदी (नदी-निमित्त)' झील, तालाव, झरना आदि उदकचिन्ह (उदक-निमित्त)।[3] इन्हीं आठ प्रकार के चिन्हों के आधार पर सीमा का निर्धारण किया जाता था तथा एक क्षेत्र के निर्धारित सीमा को बुद्ध-सीमा कहा जाता था। बुद्ध सीमा को खण्ड सीमा, समानसम्वास-सीमा तथा अविप्पवास-सीमा भी कहा जाता था।[4] यदि एक भिक्षु किसी ग्राम, निगम या जनपद में निवास करता है परन्तु उसकी सीमा निर्धारित नहीं है तो उस ग्राम, निगम या जनपद की जो सीमा है उसे ही उपोसथ तथा अन्य संघ-कर्मों के लिए सीमा मानकर उपोसथागार आदि का निर्धारण किया जाना चाहिए। इसे 'ग्राम-सीमा' कहा जाता था। जहाँ गाँव नहीं है तथा चारो ओर जंगल ही जगंल हैं तो जंगल में आवास के चारों ओर सात अवकाश (सत्तब्भन्तरा) 28×7=196 हाथ[5]) सीमा निर्धारित किया

1. या सा, भिक्खवे, सङ्घेन सीमा सम्मता समानसंवासा एकुपोसथा, सङ्घेन तं सीमं तिचीवरेन अविप्पवासं सम्मन्नतु। म. व. पृ.-111
2. राजगहं हि परिक्खिपित्वा अट्ठारस महाविहारा सब्बे एक सीमा। सम. पा. भा.-3 पृ. 1106.
3. म. व. पृ. 109; सम. पा. भा. 3, पृ. 1091-109
4. k १ पृ. 90.
5. डि. आफ अ. बु. मो. टर्मस (सी. एस उपासक) पृ. 237.

जाना चाहिए । इसे सत्तब्भन्तर-सीमा कहां जाता है । इसके अतिरिक्त सभी नदियाँ, समुद्र तथा प्राकृतिक सरोवर, झील आदि असीम हैं । ऐसे स्थान पर एक मझोले कद के व्यक्ति के चारो ओर जो पानी का घिराव होता है वही वहाँ एक उपोसथ वाले एक आवास की सीमा है । इस सीमा को 'उदकुक्खेप-सीमा' कहा जाता है । इस प्रकार की सीमा जो किसी चिन्हों के बिना ही निर्धारित किये गये हों तथा जो संघ के ज्ञप्तिद्वितीयकर्म से निश्चित नहीं किया गया हो, वैसे सीमा को अबद्ध-सीमा कहा जाता है ।[1] नदी के किनारों को तब तक सीमा के रूप निर्धारित नहीं किया जा सकता जब तक उस पर कोई पुल (धुव सेतु) अथवा कोई निश्चित वस्तु न हो (धुव नाव)[2]।

सीमा समूहन के समय यह ध्यान रखा जाता था कि उसका आकार सात योजन से अधिक न हो (एक योजन=सात मील)। इस बात को ध्यान मे नहीं रख कर सीमा निर्धारण करने वाले को दुक्कट दोष होता था । हालाँकि सीमा का आकार इतना छोटा भी नहीं होना चाहिए कि उसमें इक्कीस व्यक्ति भी समाहित न हो सकें ।[3] सीमा समूहन करते समय इस बात का भी पूरा पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए कि दो सीमा एक दूसरे को आपस में ढके नहीं ।[4] यदि किसी कारणवस सीमा को पुनः निर्धारित करना पड़े तो संघ को ज्ञप्तिद्वितीयकर्म के माध्यम से पुनः निर्धारण विधेय है । इस क्रिया को सीमा समूहन कहा जाता है ।[5]

विनय-ग्रन्थों में निम्नलिखित ग्यारह प्रकार की सीमा को किसी भी निश्चित संघकर्म के लिए अनुपयुक्त बताया गया है । वे है—बहुत ही छोटी सीमा (अतिखुद्द–सीमा)ः अति बृहत् सीमा (अतिमहती-सीमा); ऐसी सीमा जिसके चिन्ह टूट-फूट चुके हों (खण्डनिमित्त-सीमा); छाया के माध्यम से चिह्नित सीमा (छायानिमित्त-सीमा); बिना चिन्ह के निर्धारित सीमा (अनिमित्त-सीमा); ऐसी सीमा जो पूर्व निर्धारत सीमा के बाहर हो(बहिसीम ठितसम्मता-सम्मत-सीमा); अथवा समुद्र के भीतर बनायी गयी सीमा (समुद्द सम्मत-सीमा); प्राकृतिक तालाव अथवा झील में बनायी गयी सीमा (जातस्सर सम्मत-सीमा); ऐसी सीमा जो एक दूसरे के भीतर प्रविष्ट हो (सीमाय सीमं सम्भिन्दन्ता सीमा); ऐसी सीमा जो

---

1. म. व. पृ. 113; सम. पा., भा.-3पृ. 1107-1110; k १ (रू) पु. 90-91
2. म. व.पृ. 109.
3. k १. 87–88, सम पा. भा. 3 पृ. 520.
4. म. व. पृ. 113
5. म. व. पृ. 113-14, सम. पा. भा. 3, पृ. 1091-1106.

निर्दिष्ट सीमा के भीतर हो (सीमाय सीमं अज्झोत्थरन्ता सीमा) ।[1] उक्त सभी ग्यारह प्रकार के अनिर्दिष्ट सीमा का उपोसथ अथवा अन्य किसी प्रकार के संघकर्म के लिए निषेध किया गया है।

वर्षावास और उसका महत्त्व

वर्षावास बौद्ध-जीवन की एक महत्वपूर्ण धार्मिक व्यवस्था है। इसे बौद्ध भिक्षुओं का धार्मिक कृत्य भी कहा जा सकता है। तथागत ने भिक्षुओं को 'चरथ भिक्खवे चारिकं बहुजन हिताय 'बहुजन सुखाय लोकानुकम्पाय' का उपदेश किया है। परन्तु 'बहुजन हिताय 'बहुजन सुखाय' चारिका के लिए प्रवृत्त भिक्षुओं को वर्षा-ऋतु के तीन महीनों तक अपना चारिकाक्रम स्थगित करने का प्रावधान है।[2] इन तीन महीनों में भिक्षु तथा भिक्षुणियाँ किसी एक स्थान पर निश्चित आवास में रुककर अपनी आध्यात्मिक भावनाओं का विकास करने के लिए चिन्तनशील रहते थे। बौद्ध भिक्षुओं के द्वारा वर्षा-काल के तीन महीनों तक किसी एक निश्चित स्थान में रहकर अध्यात्मिक चिन्तन में लीन रहना ही बौद्ध परम्परा में 'वर्षावास' कहा जाता है।

वर्षावास दो प्रकार के कहे गये हैं। प्रथम 'पुरिमिका वर्षावास तथा दूसरा 'पच्छिमिका' वर्षावास।[3] पुरिमिका वर्षावास आषाढ़ मास की पूर्णिमा के अगले दिन से अर्थात् श्रावण कृष्ण-पक्ष की प्रतिपदा तिथि से प्रारम्भ होता है। इसका समापन आश्विन पूर्णिमा को किया जाना विधेय है। पच्छिमिका वर्षावास का प्रारम्भ पुरिमिका वर्षावास के एक माह के उपरान्त, श्रावण पूर्णिमा के अगले दिन अर्थात् भाद्रमास के कृष्णपक्ष की प्रतिपदा तिथि से होता था। पच्छिमिका वस्सूपनायिका का समापन कार्तिक पूर्णिमा को किया जाता था।[4] दोनों प्रकार के वर्षावास कृत्य का समापन समारोह-पूर्वक किया जाना विधेय था, जिसे 'प्रवारणा' कहा जाता है। प्रवारणा का विस्तृत विवेचन इसी अध्याय में आगे किया जायेगा। वर्षावास के उपर्युक्त दो प्रकारों में से भिक्षु किसी एक का चयन अपनी सुविधानुसार कर सकते थे, परन्तु तथागत ने पुरिमिका वर्षावास के चयन को प्राथमिकता दी है। इस वर्षावास का स्थगन भिक्षु को किन्हीं विशेष परिस्थितियों में ही करना

---

1. परि. पृ. 387; सम. पा. भा. पृ. 1520-1521; k १ 87–88.
2. न, भिक्खवे, वस्सं उपगन्त्वा पुरिमं वा तेमासं पच्छिमं वा तेमासं अवसित्वा चारिका पक्कमितब्बा। म. व. पृ. १४५.
3. द्वेमा, भिक्खवे, वस्सूपनायिका–पुरिमिका, पच्छिमिका ति। म. व. पृ. १४४.
4. अपरज्जुगताय आसाळिया पुरिमिका उपगन्तब्बा, मासगताय आसाळिया पच्छिमिका उपगन्तब्बा–इमा खो, भिक्खवे, द्वे वस्सूपनायिका ति। म. व. पृ. १४४. सम. पा. भा. ३, पृ. ११२६.

चाहिए । इसी प्रकार किन्हीं खास परिस्थितियों में ही दूसरे अर्थात् पच्छिमिका वर्षावास का ग्रहण करना विधेय है । प्रथम वर्षावास के स्थगन के कारण किसी प्रकार की 'आपत्ति' का विधान नहीं है, परन्तु इस अवस्था में भिक्षु को 'कठिन चीवर' का उचित प्राधिकारी नहीं माना जाता ।[1]

वर्षावास बौद्ध-संघ के महत्वपूर्ण व्यवस्थाओं में अन्यतम है । अतः इसका संघीय जीवन में अतिशय महत्व है । वर्ष के नौ महीनों तक चारिका-रत भिक्षुओं को वर्षावास के तीन महीनो में अपनी ध्यान-भावना का विकास करने के लिए समुचित समय प्राप्त होता है । इससे उनकी आध्यात्मिक प्रगति होती है । तथागत के अनुसार शील में संप्रतिष्ठित होकर समाधि एवं प्रज्ञा की भावना करता हुआ भिक्षु निष्प्रपञ्च होकर, अमोषधर्म निर्वाण का अधिगम करता है । तथागत की धर्मदेशना में ध्यान ही मार्ग का सर्वप्रधान अंग था । ध्यान की निरन्तरता के द्वारा ही बोधिसत्व ने सम्बोधि का अधिगम किया । चित्त की एकतानता तथा एकाग्रभूमिकता का नाम ध्यान है । ध्यान की अवस्था में चित्त निश्चल, समुज्वल एवं अवदात्त हो जाता है तथा चिन्तन एवं संवेदन का सर्वथा निरोध हो जाता है । चित्त का विशोधन एवं परिष्करण ही ध्यान का लक्ष्य है। ध्यान से समाधिलाभ होता है । उसके अभाव में समाधि की परिकल्पना असम्भव है । कुशलचित्त की एकाग्रता ही समाधि है–'कुसलचित्तस्स एकग्गता समाधि' । समाधि से सभी प्रकार के उपक्लेशों का प्रहाण होता है तथा भिक्षु में प्रज्ञा-भावना प्रस्फुटित होती है, और भिक्षु को निरोध नामक अमोषधर्म निर्वाण का साक्षात्कार सम्भव होता है । परन्तु उपर्युक्त कथित ध्यान भावना के लिए एकाग्रता की परम आवश्यकता है जो भिक्षु के एकान्तवास से ही सम्भव है । वर्षावास की उद्भावना के पीछे तथागत का सम्भवतः यही मन्तव्य रहा होगा कि तीन मास तक भिक्षु स्थिर रहकर एकान्त-चित्त होकर एकाग्रता के द्वारा समाधि-भावना का विकास करें ।

पुनः वर्षावास का एक अन्य दृष्टि से महत्व बढ़ जाता है । वर्षाकाल में हरित-तृणों का उदय होता है । अनेकों एक- कोशिकीय (छोटे-छोटे) जीव-जन्तुओं का प्रादुर्भाव देखा जाता है, जो हरित तृणों में अपने को छिपाये होते हैं । भिक्षुओं के चारिका-क्रम में ये अल्प-कोशिकीय प्राणी, उनके पैरों तले कुचल जानें से मृत्यु को प्राप्त होते थे । इससे अनेकों जीवों की हिंसा होती थी ।[2] वर्षाकाल के महीनों में भिक्षुओं की चारिका स्थगित होने के कारण वे अनेको प्राणियों एवं हरित तृणों

---

1. स. पा. भा. ३, पृ. ११७२.
2. ....वस्सं पि चारिकं चरिस्सन्ति, हरितानि तिणानि सम्मद्दन्ता, एकिन्द्रियं जीवं विहेठेन्ता, बहू खुद्दके पाणे सङ्घातं आपादेन्ता । म. व., पृ. १४४.

की हत्या जैसे घोर अपराध से मुक्त रहते थे। तथागत ने जीव-हिंसा से विरत रहने की धर्मदेशना की थी तथा भिक्षुओं ने प्रथम शिक्षापद के रूप में प्राणातिपात से विरति (पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामि) का संकल्प ले कर ही बौद्ध संघ में प्रवेश लिया था। अतः वर्षावास के द्वारा एक बहुत बड़े अकृत्य कर्म से उनका बचाव होता था। इसके द्वारा संघ की तत्कालिक समाज में मान-मर्यादा तथा प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई तथा भिक्षु गौरवान्वित एवं प्रसंशित हुए।

स्वंय सम्यक् सम्बुद्ध ने बुद्धत्व प्राप्ति से लेकर महापरिनिर्वाण के एक वर्ष पूर्व तक ४५ वर्षावास विभिन्न स्थानों पर किये। तथागत ने बीस वर्षों तक अस्थिर वास हो, जहाँ-जहाँ उपयुक्त हुआ वहाँ-वहाँ वार्षावास किया। उन्होनें अपना प्रथम वर्षावास ऋषिपत्तन (सारनाथ) में किया। दूसरा, तीसरा एवं चौथा वर्षावास राजगृह के वेणुवन में बिताया। पाचवाँ वर्षावास वैशाली के कूटगारशाला में किया। मंकुल पर्वत पर छठा एवं त्रायस्त्रिंश लोक (भवन) में सातवाँ किया। आठवाँ सुंसुमार (शिशुमार) गिरि के भेसकलावन, भर्ग-प्रदेश में तथा नौवाँ वर्षावास कौशाम्बी में सम्पन्न किया। दसवाँ वर्षावास परिलेय्यक वन-खण्ड में तथा ग्यारहवाँ नाला ब्राह्मण-ग्राम में, बारहवाँ वेरञ्जा में, तेरहवाँ वर्षावास चलिय पर्वत पर (चेलिय पब्बत) चौदहवाँ श्रावस्ती के जेतवन आराम में, पन्द्रहवाँ शाक्यों की राजधानी कपिलवस्तु में, सोलहवाँ आलवी में, सत्रहवाँ पुनः राजगृह में तथा अट्ठारहवाँ एवं उन्नीसवाँ चालिय पर्वत पर व्यतीत किया। बीसवाँ वर्षावास पुनः राजगृह के वेणुवन विहार में सम्पन्न किया। इसके अनन्तर इक्कीसवें से पैंतालीसवाँ श्रावस्ती के जेतवनाराम तथा पूर्वाराम में वर्षावास सम्पन्न किये। तथागत ने अपना अन्तिम वर्षावास वैशाली के निकट वेलुव ग्राम में व्यतीत किया।[1] इस प्रकार तथागत का सर्वाधिक वर्षावास श्रावस्ती में सम्पन्न हुआ। परन्तु प्रथम बीस वर्षों में जहाँ-जहाँ आवश्यक हुआ वहाँ-वहाँ वर्षावास किया। सातवें वर्षावास के तावतिंस लोक में सम्पन्न करने की बात आने के कारण उसे काल्पनिक मानते हुए विद्वानों में मतभेद रहा। डॉ. गोविन्द चन्द्र पाण्डेय ने उपर्युक्त के प्राचीन-ग्रन्थों में असमर्थित होने के कारण अनिश्चितता की स्थिति बताई है।[2] परन्तु अंगुत्तर निकाय की अट्ठकथा 'मनोरथपूरणी' तथा अन्य ग्रन्थ मधुरत्थविलासिनी में इनका विस्तृत विवरण प्राप्त होता है।

इस प्रकार सम्बोधि लाभ के अनन्तर तथागत ने ८० वर्षो तक उत्तर प्रदेश और विहार के नाना ग्राम-निगम-जनपदो के विभिन्न स्थानों पर वर्षा ऋतु के

---

1. बुद्धचर्या (म. राहुल सांकृत्यायन) पृ. ७५.
2. बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास (डॉ. गो. च. पाण्डेय) पृ. ५५.

तीन मास एक आवास में रुककर बिताये थे। जिन-जिन स्थानों पर तथागत का वर्षावास हुआ, उन उन स्थानों में समाज के नाना वर्गों को उनके सानिध्य का लाभ मिला। फलस्वरूप समाज के नाना वर्गों के लोग उनके अनुयायी बने, उपासकों-उपासिकाओं, भिक्षुओं-भिक्षुणियों में सद्धर्म का प्रभाव बढ़ता गया।

एक अन्य दृष्टि से भी वर्षावास की महत्ता प्रतीत होती है। तथागत ने बौद्ध-भिक्षुओं के लिए यह अनुदेशना की थी कि जिस स्थान पर वे वर्षावास करें उस क्षेत्र के निकटवर्ती ग्रामवासियों को धर्माचरण में अभिवृद्धि के लिए प्रेरित करें। भिक्षुओं के एक लम्बी अवधि तक एक स्थान पर ठहराव के कारण निकटवर्ती ग्राम-जनपदों के सामान्यजनो का संसर्ग अपेक्षित ही था। अतः भिक्षु उस स्थान पर धार्मिक परिवेश सुलभतया उत्पन्न करने में समर्थ होते थे। बुद्ध का धर्म लोक-कल्याण के निमित्त है। इसलिए वर्षाकाल में किसी एक स्थान पर निवास करते हुए भिक्षु को सर्वदा इस बात पर ध्यान देना होता था कि किन-किन उपायों से लोक-कल्याण में सुगमता हो सकती है। साथ ही उन-उन उपायों के समाधान हेतु प्रयत्नशील रहते थे। इस प्रकार सामाजिक एवं धार्मिक जीवन को सुसज्जित एवं परिमार्जित करने के रूप में वर्षावास का उच्चतम स्थान रहा है। इसलिए इसे बौद्ध-धार्मिक जीवन का आवश्यक अंग माना गया है।

वर्षावास का समारम्भ

बौद्ध संध के प्रारंभ-काल में वर्षावास की अविद्यमानता के प्रमाण मिलते हैं। कहा जा सकता है कि वर्षावास अनुष्ठान बौद्धों का स्वीकीय अन्वेषण नहीं है अपितु इसकी मूल चेतना वैदिक, जैन एवं अन्य बुद्ध-समकालीन धर्मो से अनुप्राणित है। ब्राह्मण धर्म के परवर्ती ग्रन्थों में सन्यासियों के लिए वर्षा-ऋतु के महीनों में किसी एक स्थान पर रुक कर योग बल की वृद्धि का निर्देश प्राप्त होता है। जैन साधुओं के द्वारा भी वर्षाकाल में स्थिर रूप से रहने का विधान है। बुद्धकालीन अन्य परिब्राजको में भी वर्षावास का विधान देखा जाता है। तत्कालीन परिब्राजकों एवं सन्यासियों के द्वारा वर्षा ऋतु के महीनों में किसी एक स्थान पर ठहरना आश्चर्य का विषय नहीं है। पूर्वकाल में जब पृथ्वी के अधिकतर भू-भागों पर जंगल, पेड़, पौधे, पर्वत तथा नदी आदि की अधिकता थी तब वर्षा-ऋतु में यातायात की समस्या की कल्पना की जा सकती है। आज लगभग २५०० वर्ष बाद भी, जबकि विज्ञान और प्राद्यौगिकी के विकास से यातायात में अकल्पनीय प्रगति हुई है, तथापि पूर्वी उत्तर प्रदेश उत्तरी बिहार एवं देश के कई अन्य भागों में सड़कों एवं नदियों की अवस्था ऐसी है कि वर्षाकाल में यातायात दुष्कर हो जाता है। नदियों में बाढ़ तथा भूमि के असाधारण रूप से

समतल होने के कारण अनेक स्थल द्वीप सदृष दृष्टिगोचर होते हैं। यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि बुद्धकाल में इस प्रकार की यातायात से सम्बन्धित कठिनाइयाँ आज से अधिक ही रही होगी।

उपर्युक्त परिस्थितियों में यदि उस समय के परिब्राजकों में वर्षाकाल के लिए चारिका को स्थगित रखने की प्रथा का विकास हुआ तो उसे आश्चर्य का विषय नहीं कहा जा सकता। इसलिए वर्षा-ऋतु में चारिका का निषेध के विषय में ब्राह्मणों, बौद्धों और जैनों का ऐकमत्य था। विनय में कहा गया है कि बौद्ध संघ के प्रारम्भिक काल में शाक्य-पुत्रीय भिक्षुओं को वर्षाकाल में भी विचरण करते देखकर लोग हैरान-परेशान होते थे कि–"जब अन्य तैर्थिक (परिब्राजक) वर्षाकाल में एक जगह निवास करते हैं, चिड़िया भी वृक्षों के ऊपर घोंसले बनाकर निवास करती है, परन्तु ये कैसे शाक्य-पुत्रीय श्रमण हैं जो वर्षा काल में भी हरे-हरे तृणों को पैरों तले रौंदते हुए एकेन्द्रिय (एक-कोशिकीय) जीवों को पीड़ित करते हुए तथा छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं की हिंसा करते हुए विचरण करते है।"[1] बौद्धों का यह आचरण संघ की प्रतिष्ठा के विपरीत था अतः तत्कालीन समाज के अन्य तीर्थंकरों की भाँति तथा बौद्ध धर्म की सामाजिक प्रतिष्ठा को देखते हुए तथागत ने अपने अनुयायियों के लिए भी वर्षावास का विधान प्रज्ञप्त किया,[2] जिसमें आषाढ़ पूर्णिमा अथवा श्रावण पूर्णिमा के दूसरे दिन से तीन महीने तक उनके लिए यात्रा का निषेध था, तथा उन्हे एक स्थान पर, एक निश्चित आवास में रहना आवश्यक था।[3] इस विधान की अवहेलना से भिक्षु 'दुक्कट' नामक आपत्ति से युक्त होता था तथागत ने दो प्रकार के वर्षोपनायिका का विधान किया। प्रथम को पुरिमिका वर्षोपनायिका कहा जाता है जिसका प्रारम्भ आषाढ़ पूर्णिमा के अगले दिन से होता है तथा अगले तीन मास, श्रावण, भाद्र तथा आश्विन तक भिक्षुओं का एक स्थान पर रहना विधेय है। दूसरे प्रकार को पच्छिमिका कहते हैं जो श्रावण पूर्णिमा के अगले दिन भाद्र कृष्ण प्रतिपदा से प्रारम्भ होकर तीन महीने (भाद्र, आश्विन कार्तिक) बाद सम्पन्न माना जाता है। "द्वेमा, भिक्खवे, वस्सूपनायिका-

---

1. तेन खो पन समयेन छब्बग्गिया भिक्खू वस्सं उपगन्त्वा अन्तरावस्सं चारिकं चरन्ति। मनुस्सा तथेव उज्झायन्ति खिय्यन्ति विपाचेन्ति–"कथं ही नाम समणा सक्यपुत्तिया हेमन्तं पि गिम्हं पि वस्सं पि चारिकं चरिस्सन्ति, हरितानि तिणानि सम्मद्दन्ता, एकिन्द्रियं जीवं विहेठेन्ता, बहु खुद्दके पाणे सङ्घातं आपादेन्ता। इमे हि नाम अञ्ञतित्थिया दुरक्खात धम्मा वस्सावासं अल्लीयिस्सन्ति सङ्कसायिस्सन्ति। इमे हि नाम सकुन्तका रुक्खग्गेसु कुलवकानि करित्वा वस्सावासं अल्लीयिस्सन्ति सङ्कसायिस्सन्ति।" म. व. पृ १४४.
2. अनुजानामि, भिक्खवे, वस्साने वस्सं उपगन्तुं ति। म. व.. पृ. १४४.
3. "न भिक्खवे, वस्सं उपगन्त्वा पुरिमं वा तेमासं पच्छिमं वा तेमासं अवसित्वा चारिका पक्कमितब्बा। यो पक्कमेय्य, आपत्ति दुक्कटस्सा" ति। म. प. पृ. १४५.

पुरिमिका, पच्छिमिका ति । अपरज्जुगताय आसाळिया पुरिमिका उपगन्तब्बा, मासगताय आसाळिया पच्छिमिका उपगन्तब्बा ।"[1]

वर्षावास के नियम

बौद्ध-संघ के लिए वर्षावास का विधान प्रज्ञप्त करने के पश्चात् तथागत ने इसके लिए कुछ विशिष्ट नियमों का प्रज्ञापन किया । सर्व प्रथम दो प्रकार के वर्षावास पुरिमिका तथा पच्छिमिका का विधान किया गया जिनमें से पुरिमिका वर्षावास को प्राथमिकता दी गई । ऐसे भिक्षु जो किसी विशेष परिस्थिति में अपना वर्षावास श्रावण कृष्ण प्रतिपदा तिथि से (पुरिमिका वस्सूपनायिका) प्रारम्भ नहीं कर पाते हों तो उनके लिए इसके एक मास बाद भाद्र कृष्ण प्रतिपदा तिथि से (पच्छिमिका वस्सूपनायिका) अपना वर्षावास प्रारम्भ करने की छूट है । इसके लिए भिक्षु किसी प्रकार की आपत्ति से युक्त नहीं होता, परन्तु सामान्य स्थिति में भी पुरिमिका के स्थान पर पच्छिमिका वर्षावास करने वाले भिक्षुओं को "कठिन चीवर' के लिए उपयुक्त व्यक्ति नहीं समझा जाता ।[2] इसी प्रकार यदि कोई भिक्षु वर्षावास न रखने की इच्छा से वर्षोपनायिका के दिन जान-बूझ कर आवास का त्याग करता है तो उसे 'दुक्कट' आपत्ति होती है ।[3] अधिकमास वाले वर्ष में वस्सूपनायिका के निर्धारण के लिए राजाओं का अनुशरण करने की सलाह दी गई है ।[4]

वर्षाकाल के तीन महीनों में वर्षावास करते हुए भिक्षुओं के लिए अपना आवास त्यागकर कहीं अन्यत्र जाने की अनुमति नहीं है । यदि कोई अपने आवास का अतिक्रमण करता है तो दुष्कृत आपत्ति का दोषी माना जाता था ।[5] परन्तु यदि भिक्षु को कोई बहुत ही आवश्यक कार्य आ जाय और उसका जाना नितान्त आवश्यक हो तो ऐसे समय में उसे आवास त्यागने की अनुमति तथागत के द्वारा दी गई है परन्तु भिक्षु को एक सप्ताह के भीतर ही अपने आवास में पुनः वापस आना आवश्यक है । यदि भिक्षु एक सप्ताह के अन्दर वापस आ जाते है तो उन्हे किसी प्रकार की धार्मिक आपत्ति नहीं लगती, तथा दोष का भागी नहीं होता । विनय में वैसे विभिन्न प्रकार के आवश्यक कार्यों का उल्लेख मिलता है जिनके आकस्मिक आगमन पर भिक्षुओं के लिए अपना आवास त्यागना विधेय है ।

---

1. म.व. पृ. १४४.
2. स. पा. भा. ३, पृ. ११७२.
3. न भिक्खवे, तदहुवस्सूपनायिकाय वस्सं अनुपगन्तुकामेन सञ्चिच्च आवासो अतिक्कमितब्बो । यो अतिक्कमेय्य, आपत्ति दुक्कटस्सा ति । म. व. पृ. १४५.
4. वहीं पृ. १४५.
5. यो पक्कमेय्य आपत्तिदुक्कटस्सा ति । म. व. पृ १४५.

ये सभी कार्य या तो भिक्षुओं के व्यक्तिगत आवश्यक कार्य है अथवा संघ के अन्य भिक्षुओं से सम्बन्धित हैं। महावग्ग में उल्लिखित सात निम्नलिखित व्यक्तियों के संदेश प्राप्त होने पर एक सप्ताह के लिए अनुमति प्रदान की गई है–भिक्षु का व्यक्तिगत कार्य हो, अथवा किसी भिक्षुणी का आवश्यक कार्य हो, शिक्षमाणा का कार्य हो, श्रामणेर अथवा श्रामणेरी का संदेश हो, किसी उपासक अथवा उपसिका का कार्य हो, इन सात व्यक्तियों के आवश्यक कार्य आ जाने पर एस सप्ताह तक आवास त्यागना विधेय हे। परन्तु बिना संदेश के अथवा बिना बुलाये जाना निषिद्ध कहा गया है। एक सप्ताह के भीतर भिक्षु को पुनः अपने आवास में आ जाना चाहिए।[1]

इसी प्रकार यदि किसी उपासक ने विहार का निर्माण करवाया हो और उसे बौद्ध-संघ को दान स्वरूप भेंट करना हो, भिक्षुओं का दर्शन करने की इच्छा रखता हो अथवा भिक्षुओं से धर्मोपदेश सुनने की इच्छा से उन्हें आमन्त्रित करता हो, तो उपासक के आमन्त्रण पर भिक्षुओं को अपने आवास का त्यागपूर्वक वहाँ जाना चाहिए, धर्मोपदेश करना चाहिए परन्तु एक सप्ताह के अन्दर पुनः स्व-आवास में लौट आना चाहिए।[2] इसी प्रकार यदि किसी उपासक ने संघ के लिए अड्ढयोग (अटारी) प्रासाद, हर्म्य, गुहा, परिवेण (आँगन युक्त आवास), कोठरी, उपस्थान-शाला, अग्नि-शाला, भंडार (कप्पियकुटि), शौचालय (बच्चकुटि), चंक्रमण-शाला, उदपान (पानी पीने का स्थान, प्याउ), स्नान-गृह, पुष्करिणी (तालाब) मंडप, आराम, बाग-बागीचा, फूलवारी, आराम-वस्तु (बाग के भीतर निवास करने के लिए गृह) आदि का निर्माण करवाया हो तथा उसे संघ को दान करना हो, भिक्षुओं के दर्शन एवं उनसें धर्मोपदेश का श्रवण करने की इच्छा से दूत के द्वारा संदेश भिजवाता हो तो ऐसी अवस्था में भिक्षुओं को उस श्रद्धालु उपासक के लिए वर्षाकाल में भी एक सप्ताह के लिए आवास-त्याग विधेय है। परन्तु बिना आमन्त्रण के भिक्षुओं को वहाँ नहीं जाने की सलाह दी गई है। जाने पर सात दिनों के भीतर पुनः वापस आना आवश्यक है।[3]

यदि किसी उपासक अथवा उपासिका ने उपर्युक्त कथित विहार, अड्ढयोग, गुहा, प्रासाद, हर्म्य, चंक्रमणशाला, अग्निशाला, सभागार आदि का निर्माण बहुत से

---

1. भिक्खुस्स, भिक्खुनिया, सिक्खमानाय, सामणेरस्स, सामणेरिया, उपासकस्स, उपासिकाय– अनुजानामि, भिक्खवे, इमेसं सत्तन्नं सत्ताहकरणीयेन पहिते गन्तुं, न त्वेव अप्पहिते। सत्ताहं सन्निवत्तो कातब्बो।' म. व.,पृ. 146.
2. इध पन, भिक्खवे, उपासकेन सङ्घं उद्दिस्स विहारो कारापितो होति। ....आगच्छन्तु भदन्ता, इच्छामि दानं च दातुं, धम्मं च सोतुं, भिक्खू च पस्सितुं ति, गन्तब्बं, भिक्खवे, सत्ताहकरणीयेन, पहिते, न त्वेव अप्पहिते। म. व., पृ. 146.
3. म. व., पृ. 146.

भिक्षुओं को सामूहिक दान के लिए अथवा किसी एक भिक्षु के लिए अथवा सम्पूर्ण भिक्षुणी संघ के लिए अथवा बहुत सी भिक्षुणियों के लिए अथवा किसी एक भिक्षुणी के लिए, बहुत सी शिक्षमाणाओं के लिए अथवा एक शिक्षमाणा के लिए, एक या अनेकों श्रामणेरों के लिए अथवा एक या अनेकों श्रामणेरियों के लिए, करवाया हो तथा सम्बन्धित भिक्षु-भिक्षुणी, श्रामणेर आदि को दान-ग्रहण हेतु आमन्त्रित किया हो तो उन्हें आवास त्याग कर जाना चाहिए परन्तु एक सप्ताह के भीतर वापस लौट आना चाहिए ।[1] यदि कोई उपासिका अथवा श्रद्धालु उपासक के घर में पुत्र या पुत्री का विवाह अथवा अन्य प्रकार का कोई विशेष समारोह हो, और भिक्षुओं को आमन्त्रित करे तो उन्हें उक्त समारोह में आशीर्वचनों के लिए जाना चाहिए । इसी प्रकार यदि कोई उपासिका अत्यन्त ही श्रद्धावती हो, नियमित रूप से सुत्तन्तों (धर्मोपदेश) का पाठ करती हो और रुग्ण हो जाय तथा रुग्णवस्था में भिक्षु के पास सन्देश भिजवाये कि आर्य लोग आकर इस सुत्तन्त को सीखें, कहीं ऐसा न हो कि रुग्णावस्था में कालगति को प्राप्त हो और सुत्तन्त स्मरण करने वाले के अभाव में नष्ट हो जाय । अथवा उसका कोई और कृत्य करणीय हो, दान देना चाहती हो, भिक्षुओं के दर्शन करना चाहती हो अथवा उनसे धर्मोपदेश श्रवण करना चाहती हो तो इन परिस्थितियों में भिक्षुओं को तथाकथित रुग्णा उपासिका के पास जाना चाहिए, स्मरणीय सुत्तन्तो का स्मरण करना चाहिए तथा उपयुक्त धर्मोपदेश करना चाहिए । परन्तु सात दिनों के पूर्व अपने आवास में लौट आना चाहिए ।[2]

तथागत ने कुछ ऐसे अत्यावश्यक कार्यों का उल्लेख किया है जिसमें भिक्षुओं को बिना आमन्त्रण अथवा बिना सन्देश प्राप्त हुए भी स्थान छोड़कर जाना उचित बताया है । निम्नलिखित पाँच व्यक्तियों से सम्बन्धित आवश्यक कार्य आ जाने पर एक सप्ताह के लिए बिना आमन्त्रण के भी भिक्षुओं को जाना चाहिए । वे व्यक्ति हैं–भिक्षु, भिक्षुणी, शिक्षमाणा, श्रमणेर तथा श्रामणेरी । महावग्ग में कहा गया है–"भिक्खुस्स, भिक्खुनीया, सिक्खमानाय, सामणेरस्स, सामणेरिया-अनुजानामि, भिक्खवे, इमेसं पञ्चन्नं सत्ताहकरणीयेन अप्पहिते पि गन्तुं, पगेव पहिते ।[3] यदि कोई भिक्षु रोगी हो, शैय्या पर पड़ा हो और भिक्षुओं का आगमन चाहता हो तो

---

1. म. व., पृ. 149
2. सो चे भिक्खूनं सन्तिके दूतं पहिणेय्य - आगच्छन्तु भदन्ता, इमं सुत्तन्तं परियापुणिस्सन्ति, पुरायं सुत्तन्तो न पलुज्जतीति । अञ्ञतरं वा पनस्स किच्चं होति-करणीयं वा ....गन्तब्बं, भिक्खवे, सत्ताहकरणीयेन, पहिते, न त्वेव अप्पहिते । सत्ताहं सन्निवत्तो कातब्बो । म. व. पृ 147.
3. म. व., 149

सन्देश प्राप्त हो अथवा नहीं भिक्षु को यह सोचकर वहाँ जाना चाहिए कि 'मै रोगी के पथ्य का प्रबन्ध करूँगा, औषध का प्रबन्ध करूँगा, उसकी सेवा सुश्रुषा की व्यवस्था करूँगा, उसकी देखभाल करूँगा ।[1] इसी प्रकार किसी भिक्षु, भिक्षुणी, शिक्षमाणा, श्रामणेर अथवा श्रामणेरी का मन सन्यास से उचट गया हो (अनभिरति) तथा भिक्षुओं के पास सन्देश भेजे कि वे आयें तो भिक्षुओं को बिना सन्देश भेजे भी जानकारी मात्र के आधार पर मन में यह विचार करते हुए जाना चाहिए कि–'धार्मिक कथा आदि कहकर सम्बधित भिक्षु की अनभिरति (सन्यास एवं धर्म के प्रति मानसिक उचाट) को दूर करने का प्रयास करूँगा ।'

इसी प्रकार उपर्युक्त पाँच व्यक्तियों में से किसी को यदि कौकृत्य (कुकुच्चं) उत्पन्न हो गया हो, मिथ्या दृष्टि (दिट्ठिगतं) उत्पन्न हुआ हो, परिवास देने योग्य किसी प्रकार का बड़ा अपराध किया हो (गुरुधम्मं अज्झापन्नो होति), मूलाय-प्रतिकर्षण दंड के योग्य कोई कार्य किया हो (मूलाय पटिकस्सनारहो होति) और मूलाय प्रतिकर्षण करना चाहता हो, भिक्षु ने मानत्त दंड के योग्य कोई अपराध किया हो, भिक्षु आह्वान (अब्भानारहो होति) के योग्य हो अथवा भिक्षु तर्जनीय कर्म, निश्रय कर्म, प्रब्रजनीय कर्म, प्रतिसारणीय कर्म तथा उत्क्षेपणीय कर्म जैसे किसी संघ कर्म का दोषी हो और अपने कर्मों का प्रायश्चित करना चाहे तो उपर्युक्त सभी परिस्थितियों में जानकारी मात्र के आधार पर आमन्त्रण हो अथवा न हो, अपने मन में सम्बन्धित व्यक्ति के दोषों को दूर करने का विचार बनाते हुए, बिना आमन्त्रण के भी, एक सप्ताह के लिए, अपना निश्चित आवास त्यागकर, सम्बन्धित व्यक्ति के पास अवश्य जाना चाहिए ।[2] विभिन्न संघ-कर्मों में भाग लेने के लिए बिना आमन्त्रण के भी जाना विधेय कहा गया है । परन्तु आवास-त्याग के सात दिनों के नियम का अतिक्रमण किन्हीं परिस्थितियों में विधेय नहीं है । अपना कार्य सात दिनों के भीतर पूर्ण करके भिक्षु को अपने आवास में पुनः लौट आना चाहिए ।[3]

---

1. 'गिलानभत्तं वा परियेसिस्सामि, गिलानुपट्ठाकभत्तं वा परियेसिस्सामि, गिलानभेसज्जं वा परियेसिस्सामि, पुच्छिस्सामि वा उपट्ठहिस्सामि वा ति ।" म. व. प. 149.
2. इध पन, भिक्खवे, भिक्खुस्स अनभिरति उप्पन्ना होति । ....गन्तब्बं, भिक्खवे, सत्ताह-करणीयेन, अप्पहिते पि पगेव पहिते-अनभिरतं वूपकासेस्सामि वा, वूपकासापेस्सामि वा, धम्मकथं वास्स करिस्सामीति । म. व. पृ 150.
3. इध पन, भिक्खवे, भिक्खुस्स कुकुच्चं उप्पन्नं होति..........दिट्ठिगतं उप्पन्नं होति.............गरुधम्मं अज्झापन्नो होति परिवासारहो...........मूलाय पटिकस्सनारहो होति.............मानत्तारहो होति............अब्भानारहो होति...........संघो कम्मं कत्तुकामो होति तज्जनीयं वा, नियस्सं वा, पब्बाजनीयं वा पटिसारणीयं वा, उक्खेपनीयं वा । ....गन्तब्बं, भिक्खवे, सत्ताहकरणीयेन, अप्पहिते पि, पगेव पहिते............सत्तांह सन्निवत्तो कातब्बो । म. व. पृ. 150-51.

यदि कोई शिक्षमाणा, भिक्षुणी, श्रामणेर, श्रामणेरी रोगी हो अथवा किसी की शिक्षा में व्यवधान उत्पन्न हुआ हो अथवा कोई शिक्षमाणा उपसंपदा ग्रहण कर भिक्षुणी बनने को उत्सुक हो तो भिक्षु को बिना आमन्त्रण के भी उनलोगों के पास एक सप्ताह के लिए जाना चाहिए। शिक्षा-व्यवधान को दूर करने का प्रयास करना चाहिए उपसम्पदा-ग्रहीता को उपसम्पदा-ग्रहण के प्रति उत्सुकता पैदा करना चाहिए। इसी प्रकार यदि भिक्षु के माता-पिता रुग्णावस्था में हो और पुत्र-दर्शन की इच्छा रखते हों तो उनके सन्देश भेजे बिना भी भिक्षु को उनके पास आवास त्यागकर जाना उचित है। परन्तु एक सप्ताह में वापस आना आवश्यक है। भिक्षु को अपने माता पिता के पास जाकर उनके लिए उचित सेवा-सुश्रुषा, उनकी देखभाल, पथ्य का प्रबन्ध तथा उचित औषधियों का प्रबन्ध करना चाहिए। भले ही भिक्षु के माता पिता बौद्ध उपासक-उपासिका हों अथवा न हों दोनों स्थितियों में उसका वहाँ जाना विधेय है।[1] परन्तु यदि भिक्षु का भाई, बहन, गोत्र का व्यक्ति तथा अन्य सगे-सम्बन्धी बीमार हों और वे भिक्षु के दर्शन की इच्छा से उनके पास सन्देश भिजवायें तभी भिक्षु को जाना चाहिए। बिना आमन्त्रण अथवा सन्देश के भिक्षु का आवास त्यागना निषिद्ध है।[2] यदि कोई उपासक संघ के किसी टूटे विहार के निमार्ण में उपयोगी कोई वस्तु संघ को देना चाहे तो सन्देश प्राप्त होने की अवस्था में ही भिक्षु को वहां जाकर वस्तु ग्रहण करना चाहिए। संघ कार्यो के निमित्त किसी भी भिक्षु को आवास त्यागने की अनुमति तथागत के द्वारा दी गई है परन्तु किन्हीं परिस्थितियों में एक सप्ताह से ज्यादा दिनों का आवास त्याग करना निषिद्ध है।[3]

पुनः प्राकृतिक तथा अप्राकृतिक विपदाओं के आकस्मिक आगमन के उपरान्त वर्षावास करते हुए भिक्षुओं के लिए कुछ विशेष नियमों का प्रज्ञापन किया गया है। यदि वर्षावास करते हुए भिक्षुओं के आवास के चारों ओर खतरनाक जंगली जानवर विचरण करते हों, सर्प-विच्छु आदि सरिसृप वर्ग के प्राणी हों, चोर, पिशाच, भूत-प्रेत आदि विचरण करते हों तथा भिक्षु को पीड़ित करते हों, भयभीत करते हों, प्राण-हत्या का भय हो तो उक्त प्रकार के विघ्न-बाधाओं को देखते हुए भिक्षु को वर्षावास टूटने के डर को छोड़कर उस आवास को त्यागकर कहीं अन्यत्र चले जाना चाहिए। इसी प्रकार वर्षावास करते भिक्षु के आवास पर किसी प्रकार की प्राकृतिक विपदा आ पड़े; जैसे जिस ग्राम में भिक्षु वर्षावास कर रहा हो वह

---

1. म. व., पृ. 154.
2. म. व., पृ. 154 - 55.
3. अनुजानामि भिक्खवे सङ्घकरणीयेन गन्तुं। स. पा. भा. 3, पृ. 1129-30, म. व. पृ. 155.

ग्राम आग से जल जाय, भिक्षु का आवास तथा उसमें स्थित आसनादि वस्तुँए आग से जल गये हों, भिक्षु का ग्राम बाढ़ के प्रकोप से जलमग्न हो गया हो, उसका आवास एवं उसकी आसनादि वस्तुएँ जलमग्न हो गया हो, उसका आवास एंव उसकी आसनादि वस्तुएँ जल में डूब गई हों जिससे भिक्षुओं को भिक्षा की परेशानी हो, भिक्षु आश्रम और निवास आदि के बिना तकलीफ में हो तो बिना वर्षावास टूटने के भय के तत्काल उस स्थान को त्याग कर उचित स्थान पर आ जाना चाहिए ।[1]

भिक्षुओं के द्वारा जहाँ वर्षावास किया जा रहा हो, यदि किसी विपदा के कारण वह ग्राम अलग स्थान पर स्थानान्तरित हो गया हो और उसके ग्रामवासी कहीं अन्यत्र निवास कर रहे हों तो भिक्षुओं को भी पूर्व-आवास को त्यागकर ग्रामवसियों के साथ जाना चाहिए । यदि आवास वाले ग्राम का दो भागों में विभाजन हो गया हो तो अधिक जनसंख्या वाले भाग की ओर अपना आवास निर्धारित करना चाहिए । परन्तु यदि अधिक जनसंख्या वाले भाग की ओर श्रद्धा-रहित एवं प्रसन्नता रहित लोग निवास करते हों तो भिक्षुओं को सहर्ष उस भाग की ओर निवास करना चाहिए । जिस भाग में श्रद्धालु तथा प्रसन्नता-युक्त लोग रह रहे हों ।[2] पुनः स्थान की प्रतिकूलता से स्थान त्याग उचित बताया गया है । उदाहरणस्वरूप यदि वर्षावास करने करने वाले भिक्षु को अच्छा-बुरा दैनिक जीविकोपयोगी भोजन नहीं प्राप्त हो, यदि भोजन पर्याप्त मात्रा में मिल भी रहा है, परन्तु भिक्षु के अनुकूल नहीं है, उचित मात्रा में भैषज्य का अभाव है अथवा सब कुछ मिलने पर भी अन्न भोजन देने वाला गृहस्थ (उपास्थापक) अनुकूल नहीं है तो इन्हे विघ्न-बाधा मानकर आवास त्याग कर कहीं अन्यत्र चला जाना चाहिए । ऐसी स्थिति में वर्षावास का व्रत-भंग नहीं माना जाता है ।[3] इसी प्रकार कुछ अनैतिक व्यक्तियों की प्रतिकूलता से स्थान त्याग करना विधेय है । वर्षावास के आवास में यदि कोई स्त्री, वेश्या, अधिक अवस्थावाली अविवाहिता स्त्री (स्थूल-कुमारी) अथवा पंडक (हिजड़ा) अपनी ओर आकर्षित करते हैं, आमन्त्रित करते हैं, विविध प्रकार के दान आदि का प्रलोभन देते हैं, कन्या एवं भार्या का प्रलोभन देते हैं, तो भिक्षु को अपने ब्रह्मचर्य टूटने का भय होना चाहिए । उसे ब्रह्मचर्य पालन हेतु वहाँ से स्थान त्याग पूर्वक अन्यत्र चला जाना उचित है । यदि भिक्षु को राजा, चोर-डाकू, बदमाश आदि सम्मान तथा खजाने का प्रलोभन देते

1. म. व., पृ. 155.
2. म. व., पृ. 156.स. पा. भा. 5 पृ. 1070
3. म. व., पृ. 156.

हों तो इन परिस्थितियों में भी आवास त्यागना विधेय है। ऐसे आवास त्याग से वर्षावास भंग नहीं होता।[1] संघ भेद रोकने के लिए किया गया स्थान त्याग उचित कहा गया है। यदि वर्षावास में रत भिक्षु को यह जानकारी हो जाय कि कहीं किसी आवास के भिक्षुओं के द्वारा संघ-भेद की कोशिश की जा रही है और भिक्षु यह स्वंय में जानता हो कि मेरे वहां जाने से, प्रयत्न करने पर भिक्षु या भिक्षुणी संघ का संघ-भेद रुक सकता है, तो उस भिक्षु को तत्काल आवास छोड़ कर संघ-भेदन स्थल पर जाना चाहिए तथा संघभेदकों से धार्मिक उपदेशादि का प्रवचन कर संघ भेद रोकने का पूर्ण प्रयास करना चाहिए। ऐसे में भिक्षु का वर्षावास टूटने का खतरा नहीं रहता।[2]

परम कारुणिक सम्यक् सम्बुद्ध ने वर्षावास करने के लिए उपयुक्त एवं अनुपयुक्त स्थान से सम्बधित अनुज्ञापना भी की। भिक्षुओं को वर्षावास के लिए अपने अनुकूल तथा भिक्षुओं के लिए उचित आवास जैसे विहार, अड्ढयोग प्रासाद, हर्म्य तथा गुहा आदि का चयन करना चाहिए।[3] इन निश्चित आवासों के अतिरिक्त गायों के खेड़ (वज) में भी वर्षावास करने की अनुमति है। इसमें गायों के कारवां के साथ-साथ अथवा सार्थ के साथ भी वर्षावास किया जा सकता है। गायों का कारवाँ जहाँ-जहाँ उठ कर जाय वहाँ-वहाँ भिक्षु भी जाकर वर्षावास करें। नाव को आवास मानकर भी वर्षावास करना विधेय है। इन सभी अस्थायी आवासों में भी भिक्षु चाहे तो वर्षाकाल के पूरे तीन महीने अपना वर्षावास सम्पन्न कर सकता है।[4] वर्षावास के लिए कुछ अनुपयुक्त स्थानों का भी प्रज्ञापन बुद्धमुख से हुआ है। वृक्ष का कोटर, वृक्ष-वाटिका, खुले आकाश के नीचे अर्थात खुला-स्थान, बिना घर-मकान के आवास, मुर्दाखाना अथवा श्मशान, छप्परों वाला मकान, किसी विशाल-छत्र के नीचे, कोई बहुत बड़ा घड़ा (चाटी) तथा ऐसा कोई स्थान जहाँ भिक्षु का रहना शोभनीय न हो तथा उसके सम्मान और प्रतिष्ठा के विपरीत हो, आदि स्थानों को वर्षावास के अनुपयुक्त स्थान बताते हुए, भिक्षुओं को उक्त स्थानों में वर्षावास करने का निषेध किया गया है। यदि भिक्षु उपर्युक्त

---

1. इध पन, भिक्खवे, वस्सूपगतं भिक्खुं इत्थि निमन्तेति............वेसी निमन्तेति.......... थुल्लकुमारी निमन्तेति............पण्डको..............ञातका निमन्तेति.........राजानो निमन्तेन्ति ....चोरा निमन्तेन्ति......धुत्ता निमन्तेन्ति–"एहि भिक्खवे, हिरञ्ञं वा ते देम.........सिया पि में ब्रह्मचारियस्स अन्तरायो ति, पक्कमितब्बं। अनापत्ति वस्सच्छेदस्स। म. व., पृ. 156-57.
2. म. व., पृ. 157-58.
3. चु.. व., पृ. 239.
4. म. व., पृ. 158-159; स. पा.,. भा-3 पृ. 1131.

स्थानों को अपने वर्षावास के लिए आवास के रूप में निर्धारित करते थे, तो उन्हें दुक्कट अपराध का दोषी माना जाता था ।[1]

वर्षाकाल के भीतर यदि कोई श्रद्धालु माता-पिता अपने पुत्र की प्रव्रज्या चाहें, प्रव्रज्याकांक्षी व्यक्ति भी अपनी प्रव्रज्या के लिए संघ से याचना करे तो भिक्षुओं को उसे प्रव्रज्या देनी चाहिए ।[2] यदि कोई भिक्षु या भिक्षुणी चीवर आदि के लोभ के वशीभूत होकर दो स्थानों पर वर्षावास करते हों, पहली वर्षोपनायिका से वर्षावास करने का वचन दे कर विना किसी कारण अथवा लोभ में पड़ कर दूसरी वर्षोपनायिका से अपना वर्षावास प्रारम्भ करते हों तो उन्हें दुक्कट आपत्ति का अपराधी माना जाता था । कोई भिक्षु अपने आवास की समुचित सफाई आदि किये बिना ही बाहर चला जाता हो, अथवा आवास के भिक्षुओं को दो-तीन दिन के लिए कह कर वह सप्ताह भर बाहर व्यतीत करता हो तो इस प्रकार के भिक्षु दुक्कट आपत्ति के अपराधी माने जाते थे ।[3]

इस प्रकार विनय में उल्लिखित प्रसङ्ग में इन नियमों के प्रज्ञापन से ऐसा प्रतीत होता है कि वर्षावास के समस्त विधान उसके समारम्भ के समय से नहीं हैं । जैसे-जैसे भिक्षुओं के द्वारा वर्षावास से युक्त आचारों का उल्लंघन हुआ वैसे-वैसे तथागत ने इसके लिए विभिन्न वैनयिक नियमों का प्रज्ञापन किया । वर्षावास के समस्त प्रज्ञप्त नियम बौद्धसंघ के प्रति प्रतिष्ठानुकूल तथा गौरवानुकूल प्रतीत होते हैं । वर्षावास के सभी नियमों में संघ की प्रतिष्ठा के साथ-साथ समाज के लाभ को भी ध्यान में रखा गया है । वर्षावास ऐसे स्थान में किया जाता है जो गाँव से न तो अधिक पास और न अधिक दूर हो, ताकि भिक्षुओं को भिक्षा के लिए अन्न सुगमतया उपलब्ध हो सके । इसी प्रकार ग्राम-वासियों से भिक्षुओं का सानिध्य तथा धर्मोपदेश श्रवण करने का भरपूर अवसर प्राप्त होता था । भिक्षु तीन महीनों तक एक स्थान पर रहकर अपनी साधना को परिपक्व करते ही थे साथ ही अपने उत्तम आचरण के द्वारा ग्रामवासियों को शिष्टाचार, उत्तम जीवन जीने के लिए विभिन्न उपाय, धार्मिक जीवन के महत्व आदि की शिक्षा भी देते थे । इससे वहाँ के लोगों में एक नैतिक वातावरण का विकास होता था तथा उनमें स्वतः सत्कर्म करने की इच्छा जागृत होती थी । कोई अन्य भिक्षु, श्रामणेर, श्रामणेरी, शिक्ष-माणा, उपासक, उपासिका, भिक्षु के माता-पिता, उसके भाई-बहन, कुटुम्ब परिवार के रुग्णावस्था में होने पर आवास त्यागकर उनकी सेवा-सुश्रुषा,

---

1. म. व., पृ. 159.
2. म. व., पृ. 159-60.
3. म. व., पृ. 160-64.

औषध-पथ्य प्रबन्ध आदि की अनुमति देकर तथागत ने वर्षावास के नियमों के द्वारा सामाजिक नैतिकता का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया है। कुछ परिस्थितियों में बौद्ध-संघ एंव भिक्षुओं की प्रतिष्ठा को ध्यान में रखते हुए सन्देश अथवा आमन्त्रण के पश्चात् वहाँ जाने की प्रक्रिया का विधान किया है। बाढ़, अग्नि-काण्ड, जंगली जानवरों के उपद्रव का भय, महामारी आदि अनेको दैवी विपदा-काल में भिक्षुओं को स्थान-त्याग की अनुमति स्वाभाविक सत्य है। इस प्रकार वर्षावास के नियमों में संघीय जीवन के साथ-साथ सामाजिक जीवन को भी सुसज्जित करने का पूर्ण प्रयास किया गया है।

पवारणा

पवारणा बौद्ध-धर्म का एक महत्वपूर्ण कृत्य है। वर्षावास की परिसमाप्ति के पश्चात् आश्विन पूर्णिमा (पुरिमिका वस्सूपनायिका) अथवा कार्तिक पूर्णिमा (पच्छिमिका वस्सूपनायिका) के दिन बौद्ध भिक्षु एक आवास में एकत्रित हो कर इस महान कृत्य को मनाते हैं। पवारणा का अर्थ एक जीवन विधा को समाप्त कर दूसरे जीवन विधा को अत्यन्त उत्साह पूर्वक प्रारम्भ करना होता है। इस अवसर पर भिक्षु-गण एकत्रित होकर पीछे किये गये अपने अपराधों का सन्दर्शन करते हैं। यहीं कारण है कि 'उपोसथ' यदि भिक्षुओं के पाक्षिक परिशुद्धि के लिए आवश्यक है तो 'पवारणा' को भिक्षुओं के वार्षिक परिशुद्धि के लिए अनिवार्य कहा गया है।[1]

पालि शब्द 'पवारणा' संस्कृत के 'प्रवारणा' शब्द से निष्पन्न है। संस्कृत में इसकी व्युत्पत्ति 'प्र' उपसर्ग पूर्वक 'वृ' धातु में 'णिच्' तथा 'ल्यूट्' प्रत्ययों के योग से हुई है। प्रवारणा (प्र+वृ+णिच्+ल्युट) का सामान्य अर्थ निषेध अथवा विरोध करना कहा गया है।[2] पालि 'पवारणा' (प+वारणा)[3] में 'प' का अर्थ विशेष प्रकार से तथा 'वारणा' का अर्थ रोकना, हटाना, पृथक करना आदि किया गया है। इस प्रकार 'पवारणा' का सामान्य अर्थ–अकुशल पापमय धर्मों को विशेष प्रकार से हटाना, स्वंय से पृथक करना, उच्छेद करना आदि किया जा सकता है। परन्तु बौद्ध निकायों में 'पवारणा' एक प्राविधिक शब्द के रूप में प्रयुक्त है जिसका कुछ विशेष अर्थ होता है। वर्षावास की परिसमाप्ति पर आश्विन पूर्णिमा (पुरिमिका वस्सूपनायिका) तथा कार्तिक पूर्णिमा (पच्छिमिका वस्सूपनायिका) के दिन बौद्ध भिक्षु-संघ का एक स्थान पर एकत्रित होकर वर्षावास का तीन महीनों के मध्य

---

1. बौद्ध-धर्म के विकास का इतिहास (डॉ. गोविन्दचन्द्र पाण्डेय) पृ. 152.
2. सं. हि. कोश (आप्टे). पृ. 674.
3. पालि-अंग्रेजी कोश (रिज् डेविस) पृ. 443.

भिक्षुओं के द्वारा किये गये अपराधों का संदर्शन करना, अपने दृष्ट, श्रुत तथा परिशंकित आपत्तियों का परिमार्जन कर भविष्य के जीवन के लिए सभी अकुशल कर्मों का त्यागपूर्वक स्वच्छ जीवन व्यतीत करने की कृतसंकल्पता ही बौद्ध संघ की पवारणा है। विनय में दृष्ट, श्रुंत एवं परिशंकित दोषों के परिमार्जन हेतु प्रवारणा का विधान प्रज्ञप्त करते हुए तथागत ने कहा–"अनुजानामि, भिक्खवे, वस्संवुट्ठानं भिक्खूनं तीहि ठानेहि पवारेतुं–दिट्ठेन वा सुतेन वा परिसङ्काय वा। सा वो भविस्सति अञ्ञमञ्ञानुलोमता आपत्तिवुट्ठानता विनयपुरेक्खारता।"[1] इस प्रकार पवारणा का तात्पर्य बौद्ध धर्म दर्शन में भिक्षुओं की वार्षिक परिशुद्धि से है। परिशुद्धि का अर्थ शील संवरण से है। तथागत उपदिष्ट पञ्चविध शील, अष्टविधशील एवं दस विध शील के पूर्ण परिपालन से है। प्रातिमोक्ष संवर शील, इन्द्रिय संवर शील, आजीव पारिशुद्धि शील तथा प्रत्यय सन्निश्रित शील में से किसी का यदि पूर्व में कभी व्यतिक्रम हुआ है तो उसका परिमार्जन एवं आगे भविष्य में काय, वचन एवं मन के द्वारा इसके अव्यतिक्रम की कृतसंकल्पता ही पवारणा का लक्ष्य है।

प्रवारणा के नियम

पवारणा दो प्रकार की बताई गई है–'चातुद्दसिका' एवं 'पन्नरसिका' पवारणा।[2] इस प्रकार तिथि भेद से चतुदर्शी को मनायी जाने वाली प्रवारणा चातुद्दसिका तथा पूर्णिमा को आयोजित होने वाली प्रवारणा पन्नरसिका कहीं जाती है। विनय में प्रवारणा के चार कर्मों का उल्लेख किया गया है–धर्म-विरुद्ध भिक्षुओं के एक वर्ग का प्रवारणा कर्म, धर्म-विरुद्ध सम्पूर्ण संघ का प्रवारणा कर्म, धर्मानुसार वर्ग का प्रवारणा कर्म तथा धर्मानुसार सम्पूर्ण संघ का प्रवारणा कर्म।[3] इनमें अंतिम कर्म अर्थात् धर्मानुसार सम्पूर्ण संघ का प्रवारणा कर्म विधेय है।[4]

प्रवारणा के दिन एक सीमा के अन्तर्गत आने वाले सभी आवास के भिक्षुओं को किसी पूर्व-निर्धारित आवास में एकत्रित होना चाहिए। प्रवारणा का शुभारम्भ करते हुए पूर्व-कृत्य के रूप में कोई चतुर एवं समर्थ (योग्य) भिक्षु, संघ के ज्ञप्तिकर्म (ञत्तिकम्म) के द्वारा भिक्षुओं को सम्बोधित कर प्रवारणा की सूचना देता है–"सुणातु मे, भन्ते सङ्घो अज्ज पवारणा। यदि सङ्घस्स पत्तकल्लं, सङ्घो

1. म. व. पृ. 167.
2. द्वेमा, भिक्खवे, पवारणा, –चातुद्दसिका च पन्नरसिका च। म. व. पृ. 168.
3. 'चत्तारिमानि, भिक्खवे, पवारणकम्मानि–अधम्मेन वग्गं पवारणकम्मं, अधम्मेन समग्गं पवारणकम्मं, धम्मेन वग्गं पवारणकम्मं, धम्मेन, समग्गं पवारणकम्मं।' म..व.. पृ. 168.
4. "यदिदं धम्मेन समग्गं पवारणकम्मं अनुञ्ञातं।" म.. व. पृ. 169.

पवारेय्या ति ।"[1] पवारणा कि उद्घोषणा के समय भिक्षु संघ को यह भी सूचित करता है कि वह चातुद्दसिका अथवा पन्नरसिका पवारणा है ।[2] इस सामान्य उद्घोषणा के उपरान्त सर्वप्रथम सभा में बैठे स्थविर भिक्षु एक कंधे पर उत्तरासंग कर, उकड़ूँ बैठकर, (उक्कुटिकं निसिदित्वा), हाथ जोड़ कर इस प्रकार का वचन बोले[3]–'आवुस, संघ के समक्ष मैं अपने द्वारा देखे गये, सुने गये तथा सन्देह किये गये तीनों प्रकार से होने वाले अपराधों की प्रवारणा करता हूँ । आयुष्यमान् कृपा करके मेरे द्वारा अज्ञानता में किये गये दृष्ट, श्रुत अथवा परिशङ्कित अपराधों को बतलावें । देखने पर मैं उसका प्रतिकार करूँगा ।' यथा–"संघं, आवुसो, पवारेमि दिट्ठेन वा सुतेन वा परिसङ्काय वा । वदन्तु मं आयस्मन्तो अनुकम्पं उपादाय । पस्सन्तो पटिकरिस्सामि ।"[4]

उपर्युक्त वचन को स्थविर भिक्षु तीन बार दुहराते हैं । यदि किसी प्रकार की देखी, सुनी या परिशंकित आपत्ति उन्होंने की हो तो सभा में बैठे देखने वाले, सुनने वाले अथवा शंका करने वाले भिक्षुओं का यह परम कर्तव्य हो जाता है कि वे सम्बन्धित भिक्षु को इसकी जानकारी दें ताकि उन दोषों की प्रवारणा हो सके । तदुपरान्त उपसम्पदा प्राप्ति के वरिष्ठता-क्रम से (वृद्ध से नवागन्तुक भिक्षु) सभी भिक्षु एक-एक कर उत्तरासंग एक कन्धे पर रखकर उकड़ूँ बैठकर, हाथ जोड़कर उपर्युक्त विधि से तीन बार अपनी दृष्ट, श्रुत एवं परिशंकित आपत्तियों की प्रवारणा कर अपने दोषों का परिमार्जन करते थे ।[5]

तथागत ने यह अनुदेशना की थी, कि पवारणा के अवसर पर उपस्थित सभी भिक्षुओं को उकड़ूँ अवस्था (उक्कुटिकं) में सभा के मध्य बैठना चाहिए । स्थविर भिक्षु आदि वरिष्ठ भिक्षुओं को प्रवारणा करते समय अन्य भिक्षुओं का आसन पर बैठना बौद्धाचार के विरुद्ध माना गया है । इसीलिए भगवान ने सभी भिक्षुओं को प्रवारणा करते समय उकड़ूँ बैठने का विधान प्रज्ञप्त किया ।[6] परन्तु अतिवृद्ध, अतिदुर्बल तथा अतिरुग्ण भिक्षुओं को प्रस्तुत नियम से मुक्ति दी गई है । इन्हें

---

1. म. व., पृ. 167.
2. चतुद्दसिकाय अज्ज पवारणा चातुद्दसीति एवं पुब्बकिच्चं कातब्बं, पन्नरसिककाय अज्ज पवारणा पण्णरसी ति । स. पा. पृ. 1074..
3. थरेन भिक्खुना एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा उक्कुटिकं निसीदित्वा अञ्जलिं पग्गहेत्वा एवमस्स वचनीयो......... । म.. व., पृ. 167.
4. वहीं, पृ. 167.
5. म. व. पृ. 167-168. /4- म. व. पृ. 180
6. "न, भिक्खवे, थेरेसु भिक्खूसु उक्कुटिकं निसिन्नेसु पवारयमानेसु आसनेसु अच्छितब्बं । यो अच्छेय्य, आपत्ति दुक्कटस्स । अनुजानामि, भिक्खवे, सब्बेहेव उक्कुटिकं निसिन्नेहि पवारेतुं" ति । म. व. पृ. 168.

केवल अपनी प्रवारणा करते समय 'उक्कुटिक' अवस्था में बैठकर प्रवारणा करनी होती थी। जो भिक्षु प्रवारणा के मध्य, सभा में उक्कुटिक अवस्था के स्थान पर आसन पर विराजमान रहते थे, उन्हे दुक्कट की आपत्ति होती थी।

तथागत ने यह नियम प्रज्ञप्त किया था कि एक आवास के सभी भिक्षुओं की एक स्थान पर उपस्थिति के बाद ही प्रवारणा प्रारम्भ की जाय। किन्हीं परिस्थितियों में भिक्षुओं के एक वर्ग के द्वारा पवारणा किया जाना विधेय नहीं है। यदि भिक्षुओं के एक वर्ग के द्वारा प्रवारणा की जाती है तो उपस्थित सभी भिक्षु दुक्कट आपत्ति के भागीदार होते हैं।[1] और यदि कुछ भिक्षुओं के द्वारा की गई पवारणा (वग्ग पवारणा) संघ-भेद की दृष्टि से गयी हो तो इससे भी बड़ी आपत्ति 'थुल्लच्चय' दोष का भागी होता है। हर दशा में धर्मानुसार समग्र संघ की प्रवारणा ही विधेय है।

चीवरक्खन्धक

परिधान सम्बन्धी वैनयिक नियम

बौद्ध काल के प्रारम्भ में परिधान सम्बन्धी एक ही नियम प्रज्ञप्त था, और वह था भिक्षुओं का पांशुकूलिक रहना। पांशु का अर्थ धूल है। सड़क श्मशान अथवा कूड़े-कंकट के ढेर पर या यत्र-तत्र धूल पर पड़े वस्त्र को 'पांशुकूल' कहा जाता है। इन धूल आदि पर पड़े वस्त्रों को धारण करने वाला 'पांशुकूलिक' कहा जाता है। बौद्ध संघ के प्रारम्भिक काल में भिक्षुओं के द्वारा पांशुकूलिकाङ्गव्रत धारण करना विदित था।[2] संघ में प्रवेश के समय ही श्रामणेरों को शील सम्बन्धित दस शिक्षापदों के साथ-साथ चार निश्रय बताये जाते थे जिनका आजीवन प्रसन्नता पूर्वक पालन का वह संकल्प लेता था। इन्हीं चार निश्रयों में यत्र-तत्र पड़े वस्त्रों को चीवर के रूप में धारण करना भी एक निश्रय है। यद्यपि महावग्ग में पांशु-कूल के अतिरिक्त क्षौम, कपास, कौशेय, कम्बल, सन् एवं भांग की छाल के वस्त्र भी भिक्षुओं के अतिरेक लाभ के रूप में उल्लिखित हैं[3], परन्तु महावग्ग के ही 'चीवरस्कन्धक' में 'जीवक चरित' के अध्ययन से ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है कि उपर्युक्त अतिरेक लाभों का समावेश परवर्ती संघारामों तथा विहारों के

1. न त्वेव वग्गेन सङ्घेन पवारेतब्बं। पवारेय्य चे, आपत्ति दुक्कटस्सा ति। म. व. पृ. 169.
2. "गहपतिदानचीवरं पटिक्खिपामि, पंसुकूलिकङ्गं समादियामी" ति। विसु. म. पृ. 50 (बौद्धभारती)
3. पंसुकूल चीवरं निस्साय पब्बज्जा। तत्थ ते यावजीवं उस्साहो करणीयो। अतिरेकलाभो- खोमं, कप्पासिकं, कोसेय्यं, कम्बलं, साणं, भङ्गं। म. व. पृ. 100.

संवासप्रधान भिक्षुजीवन के पश्चात् किया गया। तथापि यह परिवर्तन तथागत के जीवनकाल में ही प्रारम्भ हो गया था।

बौद्ध भिक्षुओं के लिए नग्नता का निषेध था। बौद्धकालीन अन्य परिब्राजकों, ब्राह्मण संन्यासियों, जैन मुनियों आदि के लिए भी वस्त्रों का विधान देखा जाता है। अपवादस्वरूप आजीवक सम्प्रदाय के साधु थे जो नग्नता को ही श्रेष्ठ मानते थे तथा प्रायः नग्न शरीर रहा करते थे। महावीर ने यद्यपि स्वयं इस आचार का अनुसरण किया तथापि उन्होनें निर्ग्रन्थों को एक वस्त्र धारण करने की अनुमति दी थी। इसी कारण इन्हें 'एकशाटक' भी कहा जाता था। हालाँकि व्यवहार में निर्ग्रन्थों को विभिन्न अवस्थाओं में एक से अधिक वस्त्र धारण करने की अनुमति भी थी। ब्राह्मण संन्यासियों के लिए कौपीन का विधान था। कौपीन धोई जा सकती थी तथा गेरुए रंग में रंगी जा सकती थी।[1] ब्राह्मण संन्यासियों को अपने साथ दण्ड, रज्जु के साथ जल छानने हेतु वस्त्र रखने की भी अनुमति थी। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि बौद्ध एवं बौद्धेत्तर सम्प्रदायों में परिधान के सम्बन्ध में ऐकमत्य था।

विनय की अट्ठकथा समन्तपासादिका के अनुसार बौद्ध भिक्षुओं को पंशुकूल रहने का विधान प्रज्ञप्त था। उनके लिए नग्नता का वर्जन करते हुए ब्राह्मण संन्यासियों के विहित कुश-चीर, वल्कल-चीर, मृग-छाल आदि का निषेध किया गया था। अन्य परिब्राजकों में विदित फलक-चीर, केस निर्मित कम्बल, उल्लू तथा अन्य पक्षियों के पंखो से बना वस्त्र तथा अर्कनाल निर्मित वस्त्र आदि भी बौद्ध भिक्षुओं के लिए वर्जित थे। अट्ठकथा एंव टीका के अध्ययन से ज्ञात होता है कि तथागत के बुद्धत्व-प्राप्ति से बीस वर्षों तक संघ के समस्त भिक्षु पूर्णतया पांशुकूलिक रहे तथा गृह-पति प्रदत्त वस्त्रों को धारण नहीं किया। पंशुकूल परिधान आदि निश्रय-चतुष्टय का विधान सम्भवतः तथागत का सर्वप्रथम वैनयिक अनुशासन था जो उस समय के एकान्त-चर्या प्रधान तथा आरण्यक-प्राप्त भिक्षु जीवन के उत्तम आदर्श का निरूपण करता है। कालान्तर में बौद्ध संघ के अन्दर कठोर तपस्वियों के वर्गों का विकास देखा जाता है जो विभिन्न 'धुतंगों' का आचरण करते थे। इन तपस्वियों के द्वारा भी पंशुकूलिकांग व्रत के दृढ़ता पूर्वक पालन का उल्लेख प्राप्त होता है। पंशुकूलिक भिक्षु, श्मशानिक वस्त्र, पार्षणिक वस्त्र, रश्मिचोल, संकारचोल, स्वस्ति वस्त्र, स्नान वस्त्र, तीर्थिकों के द्वारा छोड़ा हुआ वस्त्र, गतप्रत्यागत, अग्नि से जला हुआ वस्त्र, गौ के द्वारा खाया हुआ वस्त्र,

---

1. योगसूत्र, 2/30-31.

ध्वजा का पुराना वस्त्र, स्तूप-वस्त्र आदि से अपना चीवर निर्माण कर उसे धारण करते थे ।[1]

कालान्तर में जीवक कौमार-भृत्य के अनुरोध पर तथागत ने भिक्षुओं को पांशुकूल के साथ गृहपति प्रदत्त चीवरों के धारण की अनुमति प्रदान की । महावग्ग के चीवर स्कन्धक के अन्तर्गत जीवक चरित-प्रसंग में जीवक के द्वारा तथागत और सम्पूर्ण भिक्षुसंघ का पांशुकूलिक के रूप में वर्णन किया गया है । जीवक ने तथागत से राजा प्रद्योत के द्वारा भेजे गये शिवि के दुशाले के जोड़े स्वीकार करने के लिए तथा भिक्षु-संघ को गृहस्थों के दिये चीवरों को स्वीकार करने की अनुमति के लिए अनुरोध किया था । बुद्ध ने जीवक के इस अनुरोध को मानते हुए भिक्षुओं को अनुमति दी कि वे चाहें तो पांशुकूलिक रहें अथवा गृहपति-प्रदत्त चीवर धारण करें ।[2] यद्यपि बाद में देवदत्त ने इसका विरोध किया और तथागत से भिक्षुओं के लिए आजीवन पंशुकूलिक रहने की अनुमति प्रदान करने का अनुरोध किया, तथापि उन्होंने सभी भिक्षुओं को पांशुकूलिक रहने को मजबूर नहीं किया । तत्पश्चात् जब लोगों को यह ज्ञात हुआ कि भगवान् ने गृहपति-चीवर का परिधान के रूप में भिक्षुओं के लिए अनुमति प्रदान की है तब विभिन्न गृहपति उपासक भिन्न-भिन्न प्रकार के दैनिकोपयोगी कम्बल, चादर आदि वस्त्र का भी दान करने लगे । उपासकों की उत्सुकता को देखकर भगवान् ने भिक्षुओं के लिए छः प्रकार के वस्त्रों के उपयोग की अनुज्ञा की, यथा क्षौम, कपास-निर्मित, कौशेय (कीड़ो के द्वारा बुने गये रेशमी वस्त्र), कम्बल (बालों से बना ऊनी वस्त्र) इस प्रकार बौद्धभिक्षुओं के लिए पहनने के वस्त्रों के अतिरिक्त चादर कोजब, कम्बल आदि जीवनोपयोगी अन्य वस्त्रों के दान लेने की प्रथा का विकास हुआ ।

भिक्षुओं को पहिनने के लिए 'तीन चीवरों' का विधान था जिन्हें उत्तरासंग, अन्तर्वासक तथा संघाटी कहा जाता है । उपासकों से विविध प्रकार के वस्त्र, प्रावरण तथा कम्बल का दान लेने की अनुमति के पश्चात् कालान्तर में, चीवरों को उपासकों से दान लेने, उनके समुचित रख-रखाव एवं सुरक्षा तथा उन्हें भिक्षुओं में वितरित करने के लिए चीवर प्रतिग्राहक, चीवर-निधायक एवं चीवर-भाजक आदि पदों का सृजन कर योग्य भिक्षुओं को नियुक्त किया जाने लगा । चीवरों को रखने के लिए एक भाण्डागार की व्यवस्था हुई जिससे सम्बन्धित

1. विसु. म. (बौद्धभारती प्र.) पृ. 50.
2. अनुजानामि, भिक्खवे, गहपतिचीवरं सादियन्तेन पंसुकूल पि सदियितुं; तदुभयेनपाहं, भिक्खवे, सन्तुट्ठिं वण्णेमी ति । म. व., पृ. 297, 299.

भाण्डागारिक की नियुक्ति होती थी। भाण्डागारिक का कार्य उपासकों से प्राप्त वस्त्रों को भिक्षु-चीवर के रूप में काटने, सीने तथा रंगने आदि से सम्बन्धित होता था। बाद के कालों में भिक्षुओं के आसनों का प्रत्यस्तरण, रोगी भिक्षु के लिए कौपीन, वर्णिक-शाटिका, मुंह पोंछने के लिए अंगोछा, थैला, जल छानने के लिए वस्त्र आदि आवश्यक परिष्कार-वस्त्रों का भी विधान प्रज्ञप्त हुआ। इन कपड़ों में जोड़, पैबन्द, रफू आदि भी विदित था। इन सब का विस्तृत विवरण चीवर - खन्धक में किया गया है। अन्य समकालीन परिब्राजकों के परिप्रेक्ष्य में यह निश्चित ही कहा जा सकता है कि बाद में परिधान सम्बन्धी नियमों में ब्राह्मणादि अन्य तीर्थिको की अपेक्षा शाक्यपुत्रों के नियम अधिक उदार थे।

चीवर और उसके विधान

बौद्ध भिक्षुओं के परिधान के लिए उपयुक्त वस्त्र को बौद्ध-परम्परा में 'चीवर' कहा जाता है। पूर्व में कहा जा चुका है कि बौद्ध भिक्षुओं के लिए नग्नता का निषेध था तथा ब्राह्मण आदि अन्य परम्पराओं में विदित कुश-चीर, वल्कल-चीर मृग-चर्म, फलक चीर, केश-कम्बल, तथा पक्षियों के पंखों आदि से अपने शरीर को ढंकने की भी मनाही थी। तथागत ने पांशुकूल के अतिरिक्त छः प्रकार के वस्त्रों से चीवर बनाने की अनुज्ञा की थी यथा–कपास, क्षौम(खोम) कौशेय, सन कम्बल (ऊनी वस्त्र) तथा भंग के रेशे से बना वस्त्र।[1] संघ के प्रारम्भ में इन वस्त्रों से चीवर बनाने का विधान प्रज्ञप्त नहीं था। प्रारम्भिक काल में पांशुकूल चीवर अर्थात् धूल आदि पर यत्र-तत्र पड़े कपड़ों को धोकर रंगकर, उनकी सिलाई कर उन्हीं से चीवर बनाना विदित था।[2]

त्रिचीवर

तथागत ने भिक्षुओं के लिए तीन चीवर धारण करने की अनुज्ञा की है। वे हैं–उत्तरासंग, अन्तर्वासक तथा संघाटी।[3] इन तीन चीवरों को धारण करने वाला भिक्षु त्रैचीवरिक कहा जाता था। धुतांग व्रत-ग्राही भिक्षुओं के लिए भी त्रैचीवराङ्ग व्रत धारण करना अनिवार्य कहा गया है।[4] उत्तरासंग, अन्तर्वासक तथा संघाटी के व्यतिरिक्त अन्य कोई चीवर धारण न करने वाला भिक्षु ही त्रैचीवरिकाङ्ग कहलाता

---

1. अनुजानामि, भिक्खवे, छ चीवरानि-खोमं कप्पासिकं कोसेय्यं कम्बलं साणं भङ्गं ति। म. व. पृ. 298.
2. म. व. पृ. 298. म. व. पृ. 55,100.
3. "अनुजानामि, भिक्खवे, तिचीवरं- दिगुणं सङ्घाटिं, एकच्चियं उत्तरासङ्गं, एकच्चियं अन्तरवासकं ति। म. व. पृ. 305.
4. चतुत्थकचीवरं पटिक्खिपामि, तेचीवरिकङ्गं समादियामि'

   विसु. म. (बौद्धभारती प्र.) पृ. 52.

है। तीन चीवर धारण करने का विधान तथागत ने भिक्षुओं में आत्मसंयम एवं अल्पेच्छता आदि गुणों की अनुस्यूति हेतु किया है। त्रैचीवरिक भिक्षु को विशेष वस्त्रादि के संचयन के त्याग से आत्म संतोष की उपलब्धि होती है।[1]

उत्तरासङ्ग

उत्तरासंग, तीन प्रमुख चीवरों में से एक है। एक आवरण से बना (एकच्चियं) भिक्षु के शरीर के उपरले भाग का परिधान है। यदि नबीन वस्त्रों से उत्तरासंग का निर्माण किया जा रहा हो तो एक आवरण तथा पुराने वस्त्रों से बनाने पर इसमें दो आवरण देना विधेय है। परन्तु यदि फटे- पुराने, यत्र-तत्र पड़े वस्त्रों (पांशुकूल) से इसे बनाया जा रहा हो तो किसी भी आवरण का उत्तरासंग विधि सम्मत माना गया है।[2] संघ के वरिष्ठ अथवा आदरणीय भिक्षुओं को सम्मान प्रदर्शित करने के लिए उत्तरासंग को बायें कन्धे पर किया जाना भिक्षुओं के आचार नियम में संगृहीत है।[3] इसीलिए उत्तरासंग को कहीं-कहीं 'एकंसिक-चीवर' भी कहा गया है। इसी प्रकार किसी भी प्रकार की सूचना संघकर्म (ञत्तिकम्म) के माध्यम से भिक्षुओं तक पहुंचाने के लिए सूचना-प्रेषक भिक्षु को संघ के सम्मान में उत्तरासंग एक कन्धे पर करना आवश्यक था। उत्तरासंग का नाप 'बुद्ध चीवर' से न तो बड़ा और न ही समान होना चाहिए (सुगतचीवर-पमाणं)। सुगत चीवर का आकार नौ बुद्ध-अगुंल[4] लम्बा तथा छः बुद्ध-अंगुल चौड़े नाप का प्रामाणिक माना गया है। यदि कोई भिक्षु सुगत चीवर के बराबर अथवा उससे बड़े आकार का उत्तरासंग निर्माण कर पहनता है तो वह 'पाचित्तिय' अपराध का दोषी माना जाता है।[5]

'खुद्दकसिक्खा' में कहा गया है कि भिक्षु का उत्तरासंग तथा संघाटी का आकार समान नाप का होना चाहिए। उत्तरासंग के छोटे से छोटे नाप का भी विधान प्रज्ञप्त किया गया है। साढ़े चार हाथ लम्बा तथा ढ़ाई हाथ चौड़े से कम आकार वाले उत्तरासंग का निषेध है। यथा–'सङ्घाटिपच्छिमन्तेन दीघसो

1. वहीं पृ. 53.
2. खुद्दकसिक्खा, (गा. सं. 52,53)
3. एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा.......म. व. पृ. 24, 43, 54,167 आदि चू. व., पृ. 186, 189 आदि.
4. बुद्ध अंगूल=एक बीत्ता (विदत्थिया)
5. यो पन भिक्खु सुगतचीवरप्पमाणं चीवरं कारापेय्य अतिरेकं वा, छेदनकं पाचित्तयं। तत्रिदं सुगतस्स सुगतचीवरे पमाणं-दीघसो नव विदत्थियो, सुगतविदत्थियाः तिरियं छ विदत्थियो। पाचि. (भिक्षु वि. सं. -92, भिक्षुणी वि. सं. 166) पृ. 231

मुट्ठिपञ्चका । उत्तमन्तेन सुगतचीवरेनापि वट्टति । मुट्ठिकं च तिरियं तथा एकंसिकस्सापि'।[1]

संङ्घाटी

तथागत प्रज्ञप्त तीन प्रधान चीवरों में दूसरा परिधान संघाटी है। यह बौद्ध भिक्षुओं के शरीर के उपरी भाग को ढंकने का परिधान है। यदि नये वस्त्रों से संघाटी बनायी जानी हो तो दो आवरण देना विधेय है, परन्तु पुराने वस्त्रों से निर्मित संघाटी चार आवरण की होनी चाहिए। इसी प्रकार यदि इसका निर्माण पांशुकूल से करना हो तो आवश्यकतानुसार जितना भी आवरण दिया जाय, विधि सम्मत माना गया है।[2] संघाटी को आकार में सुगत आकार के बराबर अथवा उससे बड़ा बनाना निषिद्ध किया गया है। सुगत आकार का प्रामाणिक नाप ऊपर लिखा जा चुका है। खुद्दकसिक्खापद के अनुसार संघाटी का आकार-प्रकार उत्तरासंग के समान होना प्रामाणिक एवं विधि सम्मत कहा गया है।

अन्तरवासक

बौद्ध भिक्षुओं के तीन चीवरों में अन्तरवासक तीसरा मुख्य चीवर है। अन्तरवासक का उपयोग भिक्षु अपने शरीर के कमर से नीचे के भाग को ढँकने के लिए करते हैं। यह बहुत कुछ लुंगी के समान होता है जो भिक्षुओं के कमर के चारों ओर लपेट कर (घुमाकर) एक कमर-पेटिका से बँधा होता है। इसे बाँधने वाले पेटिका को 'कायबन्धन' कहा जाता है। अन्तरवासक भी उत्तरासंग चीवर के समान नये वस्त्रों से निर्मित होने पर एक आवरण का तथा पुराने वस्त्रों से बनाने पर दो आवरण का होना विदित है। पांशुकूल से बनाते हुए आवश्यकतानुसार आवरण देना प्रज्ञप्त है।

अन्तरवासक के आकर-प्रकार का विवरण देते हुए 'खुद्दकसिक्खा' में कहा गया है कि इसका आकार साढ़े चार हाथ लम्बा तथा ढाई हाथ चौड़ा होना चाहिए।[3] यदि ऐसा न बन सके तो बुद्ध चीवर से बड़ा अथवा उसके बराबर का होना अविधेय है। इस प्रमाण का अतिक्रमण कर अन्तरवासक बनाकर पहनने वाले भिक्षु को 'पाचित्तिय' दोष का भागी माना जाता था।[4]

---

1. खुद्दकसिक्खा (गाथा सं 45); सम. पा. भा.-2, पृ. 648.
2. वहीं (गाथा सं. 53, 54).
3. अन्तरवासको वाति दीघसो मुट्ठिपञ्चको । अड्ढतियो द्विहत्थो वा तिरियन्तेन वट्टति । खुद्दकसिक्खा (गा. सं. 46) सम. पा. भा. २ पृ. 648.
4. पाचि. पा. (नि. सं. 93 तथा 166) पृ. 230-31; पातिमोक्ख (वर्मीज सं.) पृ. 19, 52

कालान्तर में उपर्युक्त तीन चीवरों के अतिरिक्त विशाखा के अनुरोध पर भिक्षुसंघ को वर्षा के दिनों में उपयोग के लिए वार्षिकसाटिका तथा भिक्षुणियों के लिए उदकसाटिका (भिक्षुणियों के स्नान के लिए वस्त्र) के उपयोग की अनुज्ञा की गई ।[1] इसके अतिरिक्त भिक्षुओं को कौपीन (कण्डुपटिच्छादन), बिछाने की चादर (निसीदन), प्रत्यस्तरण हेतु परिष्कारचोल (परिक्खारचोळक) तथा भिक्षुणियों को इनके अतिरिक्त कञ्चुकीवस्त्र (संकच्छिकं) आदि का आवश्यकतानुसार उपयोग करने की अनुमति प्रदान की गई ।[2] विनय में उपयुक्त चीवरो के उपयोग सम्बन्धी नियमों का उल्लेख किया गया है । सदैव तीन चीवरों का उपयोग विधेय है, अर्थात् इन्हें वर्ष के बारह महीने धारण करना चाहिए । कुछ विशेष परिस्थितियों के आ जाने पर त्रिचीवर-उत्तरासंग, संघाटी एवं अन्तरवासक में से किसी एक का कुछ समय के लिए त्याग किया जा सकता है । वे परिस्थितियाँ हैं–यदि भिक्षु रोगी हो, वर्षा होने की सम्भावना हो, नदी के उस पार जाना आवश्यक हो, चारों ओर से घेरेबन्दी वाला सुरक्षित विहार हो तथा कठिन सूखने आदि के लिए फैलाया हुआ हो ।[3] इसी प्रकार रोगी होने पर, अपनी आवास सीमा से बाहर जाने पर, नदी के पार जाने पर सुरक्षित घिरे हुए विहार के भीतर तथा उपयुक्त वार्षिक शटिका के तैयार न होने पर भिक्षु के लिए वार्षिक शटिका का भी कुछ समय के लिए त्याग विधेय माना गया है ।[4] वार्षिक शाटिका (वस्सिकसाटिका) का उपयोग वर्षाकाल के चार महीने ही करना विधि सम्मत है । आसन एवं प्रत्यस्तरण का बारह महीनें उपयोग किया जा सकता है । कण्डूक प्रतिच्छादन अथवा कोपीन (कण्डुप्पटिच्छादन) का उपयोग भिक्षु को खुजली, फोड़ा, स्थूलकक्ष आदि रोग होने पर ही किया जाना चाहिए । परिष्कार वस्त्र अर्थात् थैला, जल की छलनी आदि का उपयोग हमेशा किया जा सकता है । भिक्षुणियों के लिए प्रज्ञप्त दोनों विशेष वस्त्रों (उदकसाटिका तथा सङ्कच्छिकं) का उपयोग बारहों महीने करना विधि सम्मत है ।

---

1. "अनुजानामि, भिक्खवे, वस्सिकसाटिकं............उदकसाटिकं" ति । म. व. पृ. 310.
2. म. व. पृ. 310-12; चु. व. पृ. 391-392; पाचि. 380-81, 480.
3. गिलानो वा होति, वस्सिकसङ्केतं वा होति, नदीपारं गन्तुं वा होति, अग्गळगुत्तिविहारो वा होति, अत्थतकठिनं वा होति । इमे खो, भिक्खवे, पञ्च पच्चया उत्तरासङ्गस्स अन्तरवासकस्स निक्खेपाय । म.. व. पृ. 314.
4. पञ्चिमे, भिक्खवे, पच्चया वस्सिकसाटिकाय निक्खेपाय–गिलानो वा होति, निस्सीमं गन्तुं वा होति, नदीपारं गन्तुं वा होति, अग्गळगुत्तिविहारो वा होति, वस्सिकसाटिका अकता वा होति विप्पकता वा । वहीं. पृ. 314.

भेसज्जक्खन्धक

आरोग्यपरमालाभा, सन्तुट्ठि परमं धनं।
विस्सास परमा ञाति निब्बानं परमं सुखं ॥[1]

आरोग्य परमलाभ है। स्वस्थ एंव निरोग मनुष्य ही किसी कार्य को पूर्ण कर सकता है। रुग्ण एवं अस्वस्थ व्यक्ति सांसारिक कर्तव्यों का पालन नहीं कर सकता। अतः भगवान बुद्ध ने आरोग्य को परम लाभ बताया है। व्यवहार में यह देखा जाता है कि स्वस्थ एवं बलवान मनुष्य कठिन से कठिन कार्यों को करने में उत्साहित रहता है पर रुग्ण एवं शक्तिहीन पुरुष किसी भी कार्य के प्रति अनुत्साहित एवं अकर्मण्य हो जाता है। इसीलिए वेद में "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः" की मांगलिक-भावना देखी जाती है। यस्मात् धर्म, अर्थ, कामऔर मोक्ष इन चार पुरुषार्थों का उत्तम साधन आरोग्य है। इसी से आरोग्य और स्वास्थ की महत्ता का मूल्यांकन किया जा सकता है। और यही कारण है कि तथागत ने आरोग्य को परम लाभ कहा है।

बौद्धसंघ साधना मार्ग पर प्रतिपन्न है। संघ में रहने वाले भिक्षु यदि निरोग और स्वस्थ नहीं रहेंगें तो सामाधि भावना का अभ्यास कैसे कर सकेगें। ध्यान कैसे करेगें और आध्यात्म्य में उनका मन किस प्रकार केन्द्रित हो सकेगा। इन्हीं सब कारणों से भगवान् बुद्ध नें भिक्षुओं के स्वस्थ जीवन के लिए अनेक औषधों के सेवन की अनुमति दी जो महावग्ग के 'भेषज्जक्खन्धक' में वर्णित है। सर्वप्रथम ऐसे पाँच भैषज्यों का विधान देखा जाता है जो आहार के रूप में भी ग्राह्य था। भैषज्य के वे पाँच प्रकार थे–घी, मक्खन, तेल, मधु और खाँड़। ये ऐसे आहार थे जिन्हें स्थूल आहार नहीं समझा जाता था। इनके अतिरिक्त और भी अन्य कई प्रकार के औषधों की स्वीकृति देखी जाती है।

आरोग्य एवं भैषज्य सम्बन्धी नियम

यह सुविदित है कि बुद्धकाल में ही बौद्ध भिक्षुओं का एक सशक्त संगठन था, जिनके निवास के लिए अनेक विहार थे। यह स्वाभाविक था कि संघ में अनेक भिक्षु रुंग्ण हो जाते थे और उनके लिए औषध की आवश्यकता होती थी ताकि संघ के प्रत्येक भिक्षु स्वस्थ तथा निरोग रह सकें। इसी सम्बन्ध में समय-समय पर भगवान बुद्ध ने औषध सेवन के लिए विधान प्रज्ञप्त किया। अनेक प्रकार के औषधों के निर्माण और सेवन विधि का भी प्रज्ञापन हुआ। प्रस्तुत प्रसङ्ग में

---

1. ध: पाठ गा. 204, पृ. 120.

औषध और उसके बनाने के साधन सम्बन्धी जो प्रज्ञापन हुआ उन पर विहङ्गम दृष्टि डालना इष्ट है।

महावग्ग के 'भेसज्जक्खन्धक' में अनेक प्रकार के ऋतुजन्य रोगों का उल्लेख प्राप्त होता है। साथ ही उन रोगों की चिकित्सा किस प्रकार करनी चाहिए तथा उनका क्या-क्या उपचार किस-किस प्रकार से किया जाना चाहिए। कौन से औषध किस रोग के लिए आवश्यक हैं आदि बातों पर प्रकाश डाला गया है। कितने प्रकार के औषध का निर्माण किस विधि से होता है तथा उनकी सेवन विधि क्या है आदि का परिचय इस स्कन्धक में मिलता है। पूर्व में भैषज्यों के सेवन की पूर्वाह्ण काल में अनुमति थी परन्तु बाद में पूर्वाह्ण तथा अपराह्ण काल में भी इनके सेवन की अनुमति प्रदान की गई।[1]

रोगों के प्रकार

महावग्ग एंव चुल्लवग्ग के अध्ययन से तत्कालीन कई प्रकार के रोगों का पता चलता है। प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा के योग्य-अयोग्य व्यक्तियों के बारे में बताते हुए अनेक रोगों से ग्रस्त मनुष्य को प्रव्रज्या के अयोग्य बताया गया है। इसी क्रम में उन अनेक रोगों की जानकारी होती है जिनके कारण मनुष्य साधु जीनव में प्रवेश से वंचित रह जाता है। उदाहरण के लिए–कुष्ट रोग, फोड़ा, विभिन्न प्रकार के चर्मरोग, शोध तथा अपस्मार (मिर्गी, मूर्छाआना) आदि।[2] इनके अतिरिक्त महावग्ग के 'भेसज्जक्खन्धक' में अन्य अनेक ऋतुजन्य रोगों का उल्लेख प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए स्थूलवक्ष रोग (काछ का मोटा हो जाना) खुजली, फोड़ा, आस्राव, इस प्रकार का रोग जिसके हो जाने पर शरीर से दुर्गन्ध निकलती है, अ-मनुष्य रोग (भूत-प्रेत रोग), आँख का रोग, सिर दर्द, नस-गलन (नाक का रोग वातरोग, पर्ववात (गठिया), घरादिन्नक रोग (स्वाभाविक तथा अस्वाभाविक दोनों प्रकार क रोग), पांडु रोग, जुलपित्ती (छविदोष), ज्वर (बुखार) दाद, मधुमेह, हृदयरोग, वायगोला(उदररोग) आदि।[3]

चिकित्सा व्यवस्था

बुद्धकालीन चिकित्सा व्यवस्था आधुनिक चिकित्सा व्यवस्था से थोड़ी भिन्न थी। उस समय आज के समान बड़े-बड़ अस्पताल, औषधालय, व्यायामशालाएं नहीं थी। न ही आज के समान विभिन्न रोगों के विशेषज्ञ चिकित्सकों की व्यवस्था

1. महावग्ग पृ. 218-264.
2. तेन खो पन समयेन मगधेसु पञ्च आबाधा उस्सन्ना होन्ति–कुट्ठं, गण्डो, किलासो, सोसो, अपमारो। महा. (पञ्चाबाधवत्थु) पृ.-76.
3. महा. (भेसज्जक्खन्धक) पृ. 218-260.

थी । विविध वैज्ञानिक पद्धतियों एवं नवीन वैज्ञानिक उपकरणों का भी अभाव दृष्टिगोचर होता है । तथापि जीवक कौमार भृत्य आदि कई कुशल चिकित्सकों का प्रमाण मिलता है ।

रुग्ण भिक्षुओं की चिकित्सा आराम अथवा विहार में ही चिकित्सक जाकर किया करते थे । उपासकों की चिकित्सा उनके घरों में की जाती थी । विभिन्न प्रकार के लवण, मिट्टि, अन्न, पौधों के छाल, मूल, फल-फूल तथा पत्तियों से औषधियों का निर्माण किया जाता था । कई रोगों की चिकित्सा घरेलु पदार्थो जैसे गुड़, छाछ, मूँग आदि को खिला कर किया जाता था । रोगियों के खान-पान में सामान्य नियमों में थोड़ा छूट का लाभ था । उदाहरण के लिए घी, मक्खन, तेल मधु, और शक्कर इन पाँच प्रकार के भैषज्यों का सेवन पूर्वाह्ण तथा अपराह्ण में किया जा सकता था तथा इनका सप्ताहपर्यन्त संग्रह भी किया जा सकता था ।[1]

महावग्ग के 'चीवरक्खन्धक' में प्रसिद्ध चिकित्सक जीवक कौमार भृत्य का विवरण मिलता है । कौमार भृत्य ने पिलिंदवच्छ, राजा विंविसार आदि को चिकित्सा के द्वारा निरोग किया । राजगृह के नगर श्रेष्ठि की भार्या को भयंकर सिरदर्द था । जिसे घी में कई प्रकार की औषधियाँ डाल कर रोगी के नथुनो में डाल दिया । पुनः उस घी को मुख से पीकदान में थूकने को कहा जिससे सेठानी का सात वर्ष पुराना सर का दर्द तुरन्त ठीक हो गया ।[2] इसी प्रकार मगध राज श्रेणिक विम्बिसार के भगन्दर रोग को लेप के द्वारा ठीक किया । तथागत के दोष-ग्रस्त शरीर की चिकित्सा भी जीवक कौमार भृत्य ने जुलाव एंव विरेचन के द्वारा की ।[3] इनके अलावे राजगृह के गृहपति श्रेष्ठि की चिकित्सा आधुनिक शल्य क्रिया के द्वारा की । श्रेष्ठी गृहपति के सिर को शल्य चिकित्सा के माध्यम से खोलकर दो जन्तुओं को बाहर निकाल दिया । पुनः खोपड़ी जोड़कर, सिर के चमड़े को सी कर लेप लगा दिया । कुछ दिनों में श्रेष्ठि गृहपति स्वस्थ हो गये ।[4]

बौद्धकालीन चिकित्सा व्यवस्था में योग्य परिचारकों की व्यवस्था देखी जाती है । उपाध्याय एंव आचार्य की सेवा उनके शिष्यों द्वारा तथा शिष्यों के रोगी होने पर उपाध्याय एवं आचार्य के द्वारा तब तक की जाती थी, जब तक वह रोग-मुक्त न हो जाँय ।[5] पाँच बातों से युक्त रोगियों की सेवा को दुष्कर बताया गया है–जो साथियों के अनुकूल नहीं होता है, औषध की अनुकूल मात्रा नहीं जानता है,

---

1. महा, व,. पृ. 218-219.
2. महा. (चीवरक्खन्ध) पृ, 288-89-सेट्ठिभरियावत्थु ।
3. महा, पृ. 296.
4. महा. (राजगहसेट्ठिवत्थु)–पृ. 291
5. महा. पृ. 317.

औषध सेवन नहीं करता, हित चाहनेवाले रोगी-परिचायक से सत्य रोग की बात नही प्रकट करता, दुःखमय, तीव्र, कटु, प्रतिकूल, अप्रिय, प्राणहर, शारीरिक पीड़ाओं को सहन करने वाला नहीं होता ।[1] पाँच गुणों से युक्त परिचारक को योग्य रोगी परिचारक माना गया है–औषधि के उचित प्रयोग को जानता हो, अनुकूल प्रतिकूल को जानता है, किसी लाभ के ख्याल से नहीं वल्कि मैत्री-पूर्ण चित्त से रोगी की सेवा करता हो, मल-मूत्र, थूक और वमन को हटाने में घृणा नहीं करता, तथा रोगी को समय-समय पर धार्मिक कथाओं के द्वारा समुत्तेजित एवं सम्प्रहर्षित करने में समर्थ होता है ।[2] इस प्रकार योग्य परिचारकों की तत्कालीन व्यवस्था आधुनिक परिचारकों-परिचारिकाओं से थोड़ी भिन्न प्रतीत होती है ।

चिकित्सा के प्रकार तथा विविध चिकित्सा पद्धतियाँ

महावग्ग में चिकित्सा के कई प्रकारों का उल्लेख मिलता है । जड़ी-बूटी, पत्तियों, मूलों आदि से निर्मित्त औषधियों के सेवन के अतिरिक्त शस्त्रकर्म, शल्यकर्म तथा स्वेदकर्म आदि चिकित्सा पद्धतियाँ प्रचलित थी । देश, काल और परिस्थितियों के अनुरूप तथागत ने इनकी अनुज्ञा की थी । बात रोगियों का स्वेदकर्म चिकित्सा के द्वारा रोगियों के शरीर से पसीना निकाला जाता था । इसकी अन्य कई विधियाँ थी, प्रथम 'सम्वार स्वेद' जिसमें रोगी को अनेक प्रकार के पसीना लाने वाले गर्म पत्तों के बीच सुलाया जाता था । द्वितीय विधि महाश्वेद कही जाती थी । इस क्रिया में करीब दो फीट गड्ढा खोदकर उसे अंगार (राख) से भर कर, मिट्टी-बालू से मूँदकर, वहाँ नाना प्रकार के वात रोग वाले पत्तों को विछा कर रोगी के शरीर पर तेल लगाकर, उसे लिटा कर पसीना निकाला जाता था । इसके अतिरिक्त 'भंगोदक' प्रक्रिया का उल्लेख मिलता है जिसमें पत्तों के काढ़े से रोगी के शरीर को सींच-सींच कर पसीना निकाला जाता था । पुनः श्वेद कर्म की एक और विधि 'उदककोष्टक' की भी जिसमें एक कोठरी में गर्म जल के कई वर्तन रख कर रोगी को कमरे में बन्द कर दिया जाता था ताकि पसीना निकल सके ।[3]

गठिया (पर्ववात) के रोगियों की चिकित्सा सींग के द्वारा बाधित स्थान से खून निकाल कर की जाती थी ।[4] फोड़े-फुन्सी आदि की चिकित्सा शस्त्र कर्म (चीर-फाड़) के द्वारा की जाती थी । पैर में वेवाई अथवा मोच आदि आ जाने

1. विनय पिटक पृ. 291
2. विनय पिटक (भ. राहुल सांकृत्यान) पृ. 292
3. महा,. 223-224
4. महा, 224.

पर तेल-मालिस की चिकित्सा पद्धति अपनाई जाती थी। शस्त्रकर्म के बाद घाव में मल्हम लगा कर रुई के फाहे से ढककर उसे भली प्रकार से मल्हम-पट्टी के द्वारा बाँध दिया जाता था। सर्प-चिकित्सा में चार महाविकटों मल, मूत्र राख और मिट्टी को सर्प-दंषित व्यक्ति को खिलाया जाता था।[1] विष चिकित्सा में रोगी को मल खिलाकर चिकित्सा की जाती थी। पाण्डूरोग में रोगी को गो-मूत्र में हर्रे मिलाकर उसकी चिकित्सा का विधान था।

पूर्व में कहा जा चुका है कि बौद्ध भिक्षु संघ के लिए घी, मक्खन, तेल, मधु और शक्कर इन पाँच भैषज्यों का सेवन पूर्वाह्ण तथा अपराह्ण काल में भी विहित था। चर्बी वाले भैषज्यों मे रीक्ष की चर्बी, मछली की चर्वी, सोंस की चर्बी, गदहे की चर्बी आदि से बनी दवाइयों की रोगियों के लिए अनुमति थी। जड़ से बने भैषज्यों में हल्दीं, सिङ्गवेर, अदरक, बच, असीत, बचस्थ, खस, भद्रमुक्ता (नागरमोथा) आदि प्रचलित थी जिनका आयुर्वेद शास्त्र में आज भी व्यवस्था है। इन जड़ों से बनी दवाइयों का सेवन पूरी उम्र किया जा सकता था तथा इन्हें उम्र भर रखा जा सकता था। खरल-बट्टे के द्वारा जड़ को कूट कर महीन चूर्ण बनाया जाता था। इसी प्रकार कषाय से बनी औषधियों में नीम का कषाय, कुटज का कषाय, पटोल (परवल) का कषाय, पग्गव (कड़वे फल वाली एक प्रकार की बूटी) का कषाय, नक्तमाल का कषाय आदि प्रचलित थी। विभिन्न प्रकार की पत्तियों से बनने वाली औषधियों में नीम की पत्ती, कुटज, परवल, तुलसी, कपासी आदि की पत्तियाँ प्रमुख थी। इनके अतिरिक्त फलों से बनाये जाने वाली औषधियों में विडंग, पिप्पली, मिर्च, हर्रे, बहेरा, आँवला, गोष्ठफल, आदि का विशेष प्रचलन देखा जाता है। पुनः हींग, हींग की गोंद, हींग की सिपाटिका, तक, तकपत्ती, तकपर्णी, सुज्जुलसं आदि गोंद की दवायें काम में लायी जाती थी। इनके अलावे विभिन्न प्रकार के लवण जैसे-सामुद्रिक लवण, काला नमक, सेंधा नमक, वनस्पतिक लवण, विडाल (एक प्रकार का नमक) आदि से औषधियाँ निर्मित की जाती थी। इनके अतिरिक्त चूर्ण की दवाइयाँ भिक्षु ग्रहण कर सकता था।[2] भैषज्य के रूप में कच्चा मांस तथा कच्चा खून भी ग्राह्य था।[3] आँख के रोग में विभिन्न प्रकार के अंजन की अनुमति थी। उस काल में काला अंजन, रस अंजन, स्त्रोत (नदी की धार में मिला अंजन) गेरू, काजल आदि अंजन के विविध प्रकारों के उपयोग का उल्लेख

1. अनुजानामि, भिक्खवे, चत्तारि महाविकटानि दातुं, गूथं, मुत्तं, छारिकं, मत्तिकं ति। पृ. 224.
2. महावग्ग पृ. 219-221.
3. महा. पृ. 221

मिलता है ।[1] चंदन, तगर, कालानुसारी, तालिस, भद्रमुक्ता आदि पदार्थो को पीस कर अंजन के साथ मिलाकर विभिन्न प्रकार के अंजनदानियों में रखा जाता था । अंजनदानियों में हड्डी की,हाथीदाँत की, सीगं की, नकरट की, बाँस की, काष्ठ की, लाख की, फल की, ताँवे की तथा शंख की निर्मित्त अंजनदानियाँ प्रचलित थी ।

रोग और निदान

ऊपर कई प्रकार के रोगों का वर्णन किया जा चुका है। आज के समान ही अलग प्रकार के रोगों के लिए अलग-अलग प्रकार की औषधियों का प्रयोग उस समय भी किया जाता था । सिर दर्द करने पर सिर में तेल की मालिश की जाती थी । इससे स्वस्थ नहीं होने पर नसकरनी तथा धूमबत्ती का उपयोग किया जाता था । नेत्र रोग में काला अञ्जन, रस अञ्जन, श्रोत अंजन, गेरू तथा काजल विहित था । बात रोग के निदान के लिए तेल में मद्य डालकर पकाकर पीना तथा मालिश करना होता था । वात रोगियों की चिकित्सा एक अन्य प्रकार से श्वेद निकालकर की जाती थी । इसकी चार प्रक्रियाएं थी–सम्भार, महास्वेद, भंगोदक, तथा उदक-कोष्ठक जिनका वर्णन पूर्व में किया जा चुका है । कभी-कभी वाधित स्थान से रक्त निकाल कर वात रोग ठीक किया जाता था । पैर में वेवाई होने पर तेल की मालिश की जाती थी, फोड़े आदि हो जाने पर शस्त्रकर्म के द्वारा उसे दूर किया जाता था । पुनः घाव में पट्टी बाँध दी जाती थी । घाव में खजुलाहट होने पर सरसो के लोथे से उसे रगड़ा (सहलाना) जाता था । मांस बढ़ जाने पर नमक के ढेले से उसे काट दिया जाता था ।

सर्प के काटने पर रोगी को पुरीष, मूत्र, राख और मिट्टी का सेवन करने की सलाह दी जाती थी । विष चिकित्सा में भी पुरीष (मल) का प्रयोग किया जाता था । आधुनिक काल में भी विष चिकित्सा वैद्यों के द्वारा उसी विधि से की जाती है ताकि रोगी को उल्टी आये । उल्टी होने से पेट से विष बाहर निकल आता है और रोगी स्वस्थ हो जाता है । अमनुष्य (भूत-प्रेत) के रोगियों को आमिषोदक (अनाज को जलाकर बनाया गया सीरा) पिलाया जाने का उल्लेख प्राप्त होता है। पाण्डुरोग गोमूत्र के द्वारा ठीक किया जाता था । छविदोष के रोगियों के आँखों में गंधक का लेप लगाया जाता था । काम के अभिसन्न होने पर जुलाव दिया जाता था । वायगोले की बीमारी में छाँछ पीने की सलाह देखी जाती है । अमनुष्य के रोग में कच्चे खून एवं कच्चे मांस ग्रहण करने की अनुमति थी । यवागु बुद्धकाल में सम्भवतः सर्वाधिक लोकप्रिय भोज्य था । साथ ही औषध के

1. महा. पृ. 222

रूप में भी प्रयुक्त था। इसके ग्रहण करने वालों के दस गुणों का उल्लेख प्राप्त होता है। यथा–वर्ण, सुख, बल, और प्रतिभा का विकास होता है। क्षुधा और पिपासा दूर होती है, वायु को अनुकूल करता है, पेट को साफ करता है, तथा अपच को दूर करता है।[1] इसके अतिरिक्त भी यवागु अन्य कई रोगों के लिए अच्छी औषधि मानी गयी है। रोगियों के लिए गुड़ का विधान भी देखा जाता है।[2]

बुद्धकालीन चिकित्सा व्यवस्थायों के अध्ययन के पश्चात् ऐसा ज्ञात होता है कि आधुनिक काल में भी उन्हीं चिकित्सा विधियों का प्रयोग विशेषकर ग्रामीण जनों के द्वारा किया जाता है। आयुर्वेदं शास्त्र में लगभग उन सभी औषधियों का विधान आज भी है जो बौद्ध संघ के द्वारा उस समय प्रयुक्त थी। विष-चिकित्सा, दन्त-चिकित्सा, पांडुरोग-चिकित्सा, धरदिन्नक रोग की चिकित्सा पद्धतियाँ आज भी, आयुर्वेद के द्वारा उसी प्रकार की जाती है। स्वेदकर्म, वास्तिकर्म, शल्यकर्म, शस्त्रकर्म आदि विभिन्न चिकित्सा पद्धतियाँ आज भी समान रूप में प्रयुक्त हैं। विविध प्रकार की चर्बी से निर्मित, लवणादि से निर्मित औषधियों का प्रयोग आधुनिक काल में भी आयुर्वेद करता है।

संघीय एकता सम्बन्धी नियम

संघीय जीवन की सफलता सदस्यों के पारस्परिक सहयोग तथा सौहार्द पर निर्भर करती है। भगवान बुद्ध ने इस तथ्य को हृदयंगम किया, अतः उन्होंने भिक्षुओं को प्रगाढ़ भ्रातृत्व-भावना के विकास का उपदेश दिया। बौद्ध संघ का लक्ष्य था लोक-कल्याण हेतु धर्म प्रचार। अतः जिन आदर्शो का प्रचार जन समूह में करना था, उनका संघ में भी आचरण अनिवार्य था। इसके अभाव में लक्ष्यसिद्धि संदिग्ध हो जाती। जब तक भिक्षु स्वयं किसी आदर्श के अनुरूप आचरण करने में सफल नहीं होते, उनके उपदेशों का जनता में अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ता। पूर्व में यह उल्लेख किया जा चुका है कि वर्षावास समाप्त कर जब सभी भिक्षु एक स्थान पर एकत्र हुआ करते थे (पवारणा), तो भगवान बुद्ध सभी का कुशल क्षेम पूछने के साथ उनसे यह प्रश्न भी करते थे कि भिक्षुओं ने वर्षावास की अवधि में एकता, अविरोध एवं अकलह का निष्ठापूर्वक आचरण किया अथवा नहीं।

---

1. दसयिमे, ब्राह्मण, आनिसंसा यागु। कतमे दस ? यागुं देन्तो आयुं देति, वण्णं देति, सुखं देति, बलं देति, पटिभानं देति, यागु पीता खुदं पटिहनति, पिपासं विनेति, वातं अनुलेमेति, वत्थिं सोधेति, आसावसेसं पाचेति। महा. पृ. 237-38
2. महा. पृ. 242.

भिक्षुओं के समस्त वैनयिक कर्म यथा-उपाध्याय आचार्य का ग्रहण, प्रव्रज्या, उपसम्पदा आदि की दीक्षा, तज्जनीय, पब्बाज्जनीय, निस्सय, पटिसारणीय आदि संघ कर्म, विवाद-शमथ, अपराधी को दण्ड, विहारों में पदाधिकारियों की नियुक्ति आदि कार्य संघ के समस्त भिक्षुओं के द्वारा किये जाने का उल्लेख मिलता है। प्रत्येक कार्य ज्ञाप्तिकर्म, ज्ञप्ति द्वितीय तथा ज्ञप्ति तृतीय के माध्यम से किया जाना विधेय है। ज्ञप्तिकर्म के द्वारा कम समय में ही संघ के समस्त भिक्षुओं की राय जान ली जाती थी। इसके मुख्यतः तीन भाग होते हैं–ज्ञप्ति, अनुश्रावण तथा धारणा। सर्वप्रथम ज्ञप्ति के माध्यम से संघ में उपस्थित चतुर एवं प्रवीण वृद्ध भिक्षु के द्वारा ञत्तिकम्म के माध्यम से होने वाले कार्य की सूचना दी जाती थी। पुनः अनुश्रावण के द्वारा यह कहा जाता था कि जिन भिक्षुओं को प्रस्तुत कार्य में आपत्ति हो वह बोलें तथा जिन्हें आपत्ति नहीं हो वह चुप रहें। सभी भिक्षुओं के चुप रहने (तुण्हीभाव) पर ऐसी धारणा बनायी जाती थी कि कार्य सबको पसन्द है। इस प्रकार इस ज्ञप्तिकर्म के माध्यम से किया जाने वाला कार्य संघ के समस्त भिक्षुओं की सहमति से किया जाता था। संघ की सम्पत्ति पर किसी भिक्षु विशेष का आधिपत्य न होकर समस्त संघ का उस पर अधिकार होता था। किसी प्रकार का दण्ड आदि किसी भिक्षु को वैर, वैमनस्य, क्रोध या ईर्ष्यावश कोई एक भिक्षु नहीं दे सकता था।

संघ की एकता के लिए किये जाने वाले प्रयासों को संघ-सामग्री (संघसामग्गी) कहा जाता है। महवग्ग में संघ-सामग्गी के चार उपायों का उल्लेख प्राप्त होता है। जब उत्क्षिप्त भिक्षु को धर्म और विनय की प्रत्यवेक्षण करने पर ऐसा आभास हो जाय कि आपत्ति से आपन्न है और अन्य भिक्षुओं के पास जाकर अपनी आपत्ति का उद्‌बोधन करे तो सभी भिक्षुओं को मिलकर संघ-सामग्री करनी चाहिए। सर्वप्रथम एक योग्य तथा समर्थ भिक्षु के द्वारा संघ को सूचित (ज्ञापित) किया जाना चाहिए कि जिस वस्तु में संघ में भंडन, कलह, विग्रह, विवाद आदि हुआ था उस विषय में यह भिक्षु आपन्न है। यदि संघ उचित समझे तो उस वस्तु के उपशमन के लिए संघ सामग्री करे। पुनः अनुश्रावण के माध्यम से यह कहा जाय कि–संघ उस वस्तु के उपशमन के लिए संघ सामग्री (मेल) कर रहा है। जिन्हें यह पसन्द है वे चुप रहें तथा जिन्हें पसन्द नहीं है वे बोलें। पुनः सबों के चुप रहने पर यह धारणा दुहरायी जाय कि–'संघ को पसन्द है, इसलिए चुप है, यह मैं समझता हूँ।[1] इस प्रकार संघ-सामग्री के माध्यम से भिक्षुओं के बीच एकता की भावना का विकास किया जाता था। परन्तु नियमानुसार संघ

1. महावग्ग पृ. 388.

सामग्री किये जाने का आदेश तथागत ने किया है। जिस वस्तु के कारण संघ में कलह, विवाद, संघ-भेद आदि हुआ हो उस वस्तु पर बिना फैसला किये अमूल तथ्यों से मूल को पाकर किया जाने वाला संघ सामग्री को धर्म विरुद्ध बताया गया है।[1] पुनः संघ सामग्री के दो प्रकारों का उल्लेख किया गया है–अर्थरहित किन्तु ब्यञ्जनयुक्त संघ सामग्री तथा अर्थयुक्त और ब्यञ्जन-युक्त संघ सामग्री।[2]

संघ भेद और संघ भेदक

बौद्ध संघ का आकार जब बृहत् हो गया तो उसके सदस्यों के सम्बन्ध सदा आदर्श नहीं रहने लगे। समाज में बौद्ध संघ की अप्रतिम प्रतिष्ठा को देखकर कई ईर्ष्यालु लोगों ने संघ में फूट डालने का प्रयास किया। चुल्लवग्ग के संघ-भेद स्कन्ध में संघभेद का इतिहास मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान बुद्ध के जीवन काल में ही संघ भेद प्रारम्भ हो गया था। प्रमुख संघभेदकों में देवदत्त, पंडुक, लोहितक आदि भिक्षुओं के नाम लिए जा सकते हैं।

बौद्धसंघ के इतिहास के गहंन अध्ययन के पश्चात् ऐसा प्रतीत होता है कि शाक्यवंशीय राजकुमारों से ही संघ-भेद का प्रारम्भ हुआ। भद्दिय शाक्य राजा, अनुरुद्ध, आनन्द, भृगु, किम्बिल और देवदत्त शाक्य कुमारों ने एक साथ बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। उनका सेवक एक नाई उपालि भी उनके साथ ही प्रव्रजित हुआ था। देवदत्त गौतम सिद्धार्थ का चचेरा भाई था और प्रारम्भ से ही ईर्ष्यावश उसका भगवान बुद्ध से विरोध रहा। लाभ-सत्कार की इच्छा से देवदत्त ने राजा अजात शत्रु को अपने दिव्य चमत्कारों से प्रभावित किया, फलस्वरूप उसके मन में भिक्षु संघ का नेता होने की कामना तीव्र हो उठी। चुल्लवग्ग के अनुसार देवदत्त ने बुद्ध से अपना मन्तव्य प्रकट करते हुए कहा कि आप अब जीर्ण-वृद्ध, महल्लक और अध्वगत हैं अतः भिक्षु संघ मुझे सौंप दें।[3] परन्तु तथागत ने यह कहते हुए उसकी बात अस्वीकार कर दी कि सारिपुत्र मौद्गल्यायन को भी मैं बौद्ध संघ का नेतृत्वपद नहीं दे सकता तुम्हारे जैसे अकर्मण्य, मुर्दे सदृश व्यक्ति की तो बात ही क्या।[4] अधिक बात बढ़ने पर बुद्ध को यह भी संघ को सूचित करना पड़ा कि देवदत्त के द्वारा मन, वचन एवं शरीर के द्वारा किये जाने वाले किसी कार्य का

---

1. महावग्ग पृ. 389-390
2. द्वेमा, उपालि, सङ्घसामग्गियो–अत्थुपालि, सङ्घसामग्गी अत्थापेता ब्यञ्जनुपेता, अत्थुपालि सङ्घसामग्गी अत्थुपेता च ब्यञ्जनुपेता च। महावग्ग पृ.-390.
3. जिण्णो दानि, भन्ते, भगवा वुड्ढो महल्लको अद्धगतो वयोअनुप्पत्तो। अप्पोस्सुक्को दानि, भन्ते भगवा दिट्ठधम्मसुखविहारं अनुयुत्तो विहरतु ममं भिक्खुसङ्घं निस्सज्जतु।" चुल्ल व. पृ. 288.
4. चुल्लवग्ग पृ. 289.

उत्तरदायित्व बुद्ध, धर्म एंव संघ पर नहीं है। पुनः देवदत्त ने अजातशत्रु को बहकाकर अपने पिता से विद्रोह करवाया और भगवान बुद्ध की हत्या के कई प्रयास किये। उन पर पत्थर फेंके और नीलगिरि हाथी के द्वारा उन्हें रौदने का प्रयास किया परन्तु तथागत के सम्पन्न व्यक्तित्व के कारण असफल रहा।

देवदत्त के इन दुष्कृत्यों के फलस्वरूप उसका प्रभाव संघ तथा संघ के बाहर निस्तेज हो गया। पुनः देवदत्त संघ से पृथक होकर पाँच सौ अपने अनुयायी वज्जिपुत्तक भिक्षुओं को साथ लेकर चला गया। सारिपुत्र एवं मौदगल्यायन उसे समझाने गये, जिनके उपदेश से प्रभावित होकर सभी भिक्षु संघ में वापिस लौट आये। भिक्षुओं को वापस लौटता पाकर कहा जाता है कि देवदत्त के मुँह से गर्म रक्त प्रवाहित हो पड़ा।[1] देवदत्त के इस अपायिक असद्धर्मक पतन के आठ कारणों का उल्लेख चुल्लवग्ग में मिलता है–लाभ, अलाभ, यश, अयश, सत्कार, असत्कार, पापेच्छता और पापमित्रता।[2] संघ की समग्रता पर चोट करना, संघ में फूट डालना ऐसे निम्नस्तरीय कार्यों को योगक्षेम नाशक बताया गया है।

संघभेद और उसके दण्डविधान

चुल्लवग्ग में संघभेद की व्याख्या करते हुए कुल अट्ठारह बातों का उल्लेख किया गया है जिसके करने से संघ भेद होता है। अधर्म को धर्म तथा धर्म को अधर्म कहा जाता है, अ-विनय को विनय तथा विनय को अ-विनय मानना, तथागत भाषित तथा प्रवेदित को अभाषित और अप्रवेदित कहना और अभाषित, अप्रवेदित को भाषित तथा प्रवेदित कहना, अन्-आचीर्ण तथा आचीर्ण (आचरण करने योग्य) को अनाचीर्ण कहना, अप्रज्ञप्त को प्रज्ञप्त तथा प्रज्ञप्त को अप्रज्ञप्त कहना, अन्-आपत्ति को आपत्ति तथा आपत्ति को अनापत्ति कहना, लघु आपत्ति को गुरू तथा गुरू आपत्ति को लघु कहना, सावशेष आपत्तियों को निरवशेष और निरवशेष को सावशेष कहना तथा दुट्ठुल्ल को अदुट्ठुल्ल और अदुट्ठुल्ल को दुट्ठुल्ल कहना। इन अट्ठारह बातों से युक्त मनुष्य का न अपकासन और नहीं विपकासन करना चाहिए और न ही आवेणि-उपोसथ, आवेणि-प्रवारणा तथा आवेणि संघ कर्म करना चाहिए।[3]

तथागत ने संघभेद को नारकीय कर्म की संज्ञा देते हुए कहा है कि संघभेदक कल्पभर नरक में रहने वाला पाप का भागीदार होता है। वह अधर्म में स्थित

1. चुल्लवग्ग (भूमिका) पृ. 21
2. चुल्लवग्ग पृ. 303
3. चुल्ल व. पृ. 306

गुटवाजी मे रत अपने योगक्षेम का नाश करता है ।[1] संघ भेदक को दण्डस्वरूप संघादिशेष धर्मों का दोषी माना जाता था ।[2] संघ के समस्त भिक्षुओं के द्वारा समझाया जाने पर यदि संघभेदक अपनी भूलों को समझकर प्रायश्चितस्वरूप परिवास दण्ड स्वीकार करता था, तो उसे पुनः संघ में वापस लेने का संघ अनुरोध करता था । और यदि सम्बन्धित भिक्षु अपने हठ पर दृढ़ रहता था तो उसे संघ से निष्कासित किया जाना विधेय था । तथागत ने इस कलह से भरे कर्म को दुर्भरता, दुस्वरुपता, महेच्छुकता, असन्तोष, संगणिका और आलस्य की प्रवृत्ति कहकर निन्दनीय बताया है ।

भगवान बुद्ध ने संघभेद को ध्यान में रखते हुए दशम संघादिशेष धर्म के रूप में निम्नलिखित शिक्षाप्रद का प्रज्ञापन किया । –"जो भिक्षु समग्र संघ में भेद डालने का प्रयत्न करे अथवा भेदक अधिकरण को लेकर दुराग्रह पूर्वक अपने मत पर स्थिर रहे । अन्य भिक्षुओं के समझाने-बुझाने पर कि आयुष्मान् आप संगठित भिक्षुसंघ में भेद डालने का उपक्रम न करें और इस प्रकार दुराग्रह न करें । संघ से मेल करें क्योंकि प्रसन्न रहने वाला, विवाद से दूर रहने वाला एक निश्चित उद्देश्य रखने वाला संगठित संघ सुखपूर्वक विहार करता है । इस प्रकार तीन बार समझाने पर यदि वे अपना दुराग्रह छोड़ दें तो ठीक है अन्यथा यदि वे अपनी संघभेद की जिद न छोड़े ते संघादिसेस आपत्ति होती है ।[3] इसी प्रकार संघभेदक का साथ देने वाले भिक्षुओं पर भी यही आपत्ति होती है । पाराजिक पालि के अनुसार एक बार राजगृह में विहार करते समय कई भिक्षुओं ने देवदत्त के आचरण को देखकर उनके विषय में कहा कि देवदत्त अधर्मवादी एवं अविनयवादी है और वह संघ में फूट डालने का प्रयत्न करता है जिसे नहीं करना चाहिए । कोकालिक, कटमोदक तिस्स और समुद्रदत्त ने भिक्षुओं के इस प्रकार के विचारों का खण्डन करते हुए कहा कि यह उचित नहीं है । देवदत्त धर्मवादी ऐवं विनयवादी है, वह हमलोगों की रुचि और अभिप्राय को ही व्यक्त करता है । इस पर भिक्षुओं ने उनकी अनेक प्रकार से निन्दा की तथा भगवान के समक्ष बात पहुँचने पर शिक्षापद का प्रज्ञापन किया कि संघभेदक भिक्षु के अनुयायियों के द्वारा संघभेदक की बात का समर्थन किये जानेपर समर्थ भिक्षु के द्वारा उन्हें समझाया जाना चाहिए कि संघभेद में रुचि न लें क्योंकि एक जुट, एकमत, समानलक्ष्य वाला, विवादरहित और परस्पर मिलकर रहनेवाला संगठित संघ सबके लिए

---

1. 'आपयिको नेरयिको कप्पट्ठो सङ्घभेदको ।
2. पारा. पा. (दसम सङ्घनदिसेसो) पृ. 260
3. पारा. पा. पृ.260, स. पा. भा.-2 पृ. 600, सा. दी. टी. भा.-2 पृ. 267-268

हितकर है। यदि तीन बार समझाने पर भी वे अपना दुराग्रह नहीं छोड़ते तो संघादिसेस दोष का अपराधी होता है।[1]

अन्य अपराध और दण्ड

विनय में संघ के अनुशासन के लिए अनेकानेक विशिष्ट कर्मो के माध्यम से यथापराध दण्ड की व्यवस्था देखी जाती है। चुल्लवग्ग में संघभेद, विभिन्न प्रकार के अपराध्र कर्म और उनकी दण्डव्यवस्था के प्रसंग अधिक हैं। चाम्पेयक स्कन्धक में विभिन्न प्रकार के सुकर्मों एवं अधर्म कर्मों के साथ-साथ नियमानुसार दण्ड की व्यवस्था देखी जाती है। पुनः कौशाम्बक स्कन्धक में कलह और उसके परिणामों का विस्तृत विवेचन किया गया है। कर्म-स्कन्धक के माध्यम से विभिन्न प्रकार के कर्मों तथा तदनुरूप दण्ड-प्रक्रिया की बात की गई है। प्रमुख कर्मों में तर्जनीय कर्म, निश्रयकर्म, प्रबाजनीयकर्म तथा प्रतिसारणीय कर्म लिए जा सकते हैं।

तज्जनीयकम्म

कलहकारी, दुःशील, अनाचारी, निन्दक और मिथ्या दृष्टि-सम्पन्न व्यक्ति को तर्जनीय अपराध का दोषी माना गया है। यदि कोई भिक्षु विवादशील एवं कलह-प्रिय हो अथवा अपनी मूढ़ता से अपराध कर अथवा गृहस्थों के अधिक सम्पर्क बनाए तो वैसे व्यक्ति के लिए तर्जनीय कर्म विहित है। ऐसे ही यदि कोई भिक्षु शील के विषय में उदासीन हो तथा बुद्ध, धर्म एंव संघ की निन्दा करता हो तो वह भी तर्जनीय कर्म से दण्डनीय माना गया है। तर्जनीयकर्म की विधि यह है कि पहले अपराधी भिक्षु को प्रातिमोक्ष के उपयुक्त नियम का स्मरण दिलाते हुए चेतावनी देनी चाहिए। तदनन्तर चतुर एवं संमर्थ भिक्षु संघ को सूचित करे और ज्ञप्ति, अनुश्रावण और धारणा पूर्दक तर्जनीय कर्म करे। दोषी भिक्षु को भी इस सभा में उपस्थित होना चाहिए तथा उसे इस बात का अवसर प्राप्त होना चाहिए कि वह अपना अपराध स्वीकार करे अथवा अपनी निर्दोषता प्रमाणित करे। सम्मुख न किया गया हो, बिना पूछे किया गया हो और विना स्वीकृति के किया गया हो, इन तीन बातों से युक्त कर्म को तर्जनीय कर्म, अधर्म कर्म, अविनय कर्म तथा असम्पादित कर्म कहे गये हैं। चुल्लवग्ग के प्रस्तुत स्कन्धक में 12 अधर्मकर्मों का वर्णन किया गया है।[2]

तर्जनीय कर्म से दण्डित व्यक्ति के लिए उपसम्पदा देना, निश्रय, उपस्थान, उपदेश, कर्मनिन्दा, प्रवारणा आदि अट्ठारह बातों को स्थगन कर दिया जाता है।[3]

1. पारा. पा. पृ. 262, 263, सं. पा. भा.-2 पृ. 614 सा. दी. टी. भा. 2 पृ. 272.
2. चु. व. पृ. 5-7
3. चुल्ल. व. पृ. 10.

कुछ बातों से युक्त व्यक्ति का तर्जनीय कर्म कभी क्षमा नहीं किया जाता जो उपसम्पदा देता हो, निश्रय देता हो, श्रामणेर से सेवा कराता हो, भिक्षुणियों को उपदेश देता हो, कर्म (निर्णय) की निन्दा करता हो तथा उपोसथ अथवा प्रवारणा स्थगित कराता हो ।[1] इसके विपरीत अपने पर नियन्त्रण रख कर विहित दण्ड का समुचित पालन करनेवाले भिक्षु से कुछ दिनों पश्चात् संघ कर्म के माध्यम से दण्ड हटा लिया जाता है ।[2]

निश्रयकर्म (नियस्सयकम्म)

यदि कोई भिक्षु गृहस्थों के अधिक सम्पर्क में आता हो झगड़ा, कलह, विवाद, बकवास करने वाला, संघ में अधिकरण करनेवाला, बुद्ध धर्म तथा संघ की निन्दा करने वाला हो तथा प्रातिमोक्ष का उल्लघंन करनेवाला हो तो वह निश्रय का अपराधी माना जाता है । उस अपराधी भिक्षु के लिए एक भिक्षु आचार्य के रूप में र्निदिष्ट किया जाता है जिसके आदेश का पालन दोषी भिक्षु के लिए आवश्यक होता है । शेष सभी दण्ड-विधान, कर्म प्रक्रिया, क्षमा करने के उपयुक्त शर्तें आदि तर्जनीय कर्म के सपान होते हैं ।[3]

प्रवाजनीय कर्म (पब्बज्जनीय कम्म)

यदि कोई भिक्षु कुलदूषक या पापसमाचारी हो तो वह प्रवर्जनीय कर्म का दोषी होता है । बुद्धकाल में अश्वजीत और पुनर्वसु नामक दो भिक्षुओं के द्वारा कीटागिरि विहार में विभिन्न पापाचारों का वर्णन चुल्लवग्ग में किया गया है । वे कुल की स्त्रियाँ दुहिताओं, कुमारियों, बहुओं, दासियों के लिए वंटिक माला, उरच्छद आदि बनाकर ले जाते थे । उनके साथ एक बर्तन में खाते थे, एक प्याले में पीते थे, एक आसन पर बैठते थे, एक चारपायी पर लेटते थे, विकाल भोजन करते थे, मद्य पीते, माला-गन्ध, उबटन भी लगाकर नाचने गाने वाले के साथ नाचते-गाते तथा वाद्य बजाते थे । कथन का तात्पर्य यह है कि विभिन्न प्रकार के भोग-विलास में लिप्त नाना अनाचारों से युक्त थे । तथागत ने जानकारी मिलने पर उन्हें प्रवर्जनीयकर्म का दोषी बताया । प्रवर्जनीय कर्म की दण्ड विधि भी तर्जनीय कर्म की भाँति ज्ञप्ति, अनुश्रावण एंव धारण के माध्यम से की जाती है । शेष दण्डित व्यक्ति के कर्तव्य, किस व्यक्ति को क्षमा नहीं किया जा सकता तथा कौन क्षमा करने योग्य है तथा दण्ड माफ करने की विधि आदि भी तर्जनीय कर्म

---

1. वहीं पृ. 10
2. चु. व. पृ. 11
3. चु. व. (नयस्सकम्मं) पृ. 12-19.

की ही भाँति समान हैं। यदि कोई भिक्षु शील अथवा धर्म के विषय में विवादप्रिय हो अथवा आचरणहीन हो तो उसके लिए भी यहीं दण्ड विहित है।[1]

प्रतिसारणीय कर्म (पटिसारणीय कम्म)

यदि कोई भिक्षु किसी गृहस्थ से दुर्व्यवहार करता हो अथवा उसे हानि पहुँचाता हो, उसकी निन्दा करता हो या भिक्षु के अमार्यादित व्यवहार से गृहस्थ को कष्ट पहुँचता हो, तो वैसा करने वाला भिक्षु प्रतिसारणीय कर्म का भागी होता है। ऐसी अवस्था में भिक्षु को सद्गृहस्थ से क्षमा माँगनी होती है तथा जबरदस्ती या वेमन से ली गई वस्तु उसे वापस लौटा देना होता है। इस प्रकार के प्रतिसारणीय कर्म के दोषी भिक्षु को तर्जनीय कर्म से दण्डित भिक्षु के समान नियमों में रहना पड़ता है। शेष दण्डित व्यक्ति के कतर्व्य, क्षमा किये जाने योग्य व्यक्ति तथा दण्ड माफ करने की विधि आदि तर्जनीय कर्म के समान होता है।[2]

उत्क्षेपणीय कर्म (उक्खेपनीय कम्म)

उत्क्षेपणीय कर्म का समारम्भ भिक्षु छन्न के प्रकरण से हुआ। उस समय भगवान बुद्ध कौशाम्बी के घोषितारम में विहार करते थे जब कुछ भिक्षुओं ने उन्हें छन्न भिक्षु की बात बतायी कि आयुष्मान छन्न आपत्ति करने के बाद उसे जानबूझ कर स्वीकार नहीं करते। भगवान बुद्ध ने इसे जानकर कहा कि यदि छन्न जैसा कोई भिक्षु अपने अपराधों को स्वीकार नहीं करता अथवा बताए जाने पर भी धर्म-विरुद्ध सिद्धान्त को नहीं छोड़ता तो वह उत्क्षेपणीय कर्म का भागी बनता है। वह न तो अन्य भिक्षुओं के साथ ठहर सकता है और न ही उनके साथ आहार आदि कर सकता है। शेष कर्म विधान, दंडित व्यक्ति के कर्तव्य, क्षमा करने के अयोग्य व्यक्ति, क्षमा के योग्य व्यक्ति, तथा दण्ड माफ करने की विधि आदि तर्जनीय कर्म के समान है।[3]

इस प्रकार देखा जाता है कि सभी प्रकार के कर्मों (अपराध एवं दण्ड विधान) की आरम्भ कथा भिन्न-भिन्न हैं परन्तु उनकी दण्ड-प्रक्रिया, कर्तव्य आदि समान हैं। कुछ अन्य गौण अपराधों के लिए प्रतिकोशना का विधान देखा जाता है। कई अपराधों के लिए परिवास दण्ड विदित है। परिवास के चार प्रकार निर्दिष्ट हैं। बौद्ध धर्म के अतिरिक्त सम्प्रदायों के सदस्य यदि बौद्ध संघ में प्रवेश के इच्छुक हों तो उनके लिए चार महीनें का परिवास निर्दिष्ट है। संघदिशेष अपराध के दोषी भिक्षुओ के लिए अन्य तीन प्रकार के परिवासों का उल्लेख किया

1. चुल्लवग्ग (पब्बाजनीयकम्मं) पृ. 19-32.
2. चु. व. पृ. 32-40
3. वहीं 40-62

गया है। परिवासँ के दण्डित व्यक्ति अन्य भिक्षुओं से कई बातों में अलग प्रकार का रहन सहन वाला होता है। उसके लिए सहावास, विप्रवास एवं अनारोचना के नियन्त्रणों से शुद्ध रहना आवश्यक है। संघादिशेष अपराधों के लिए परिवास के अतिरिक्त मानत्त का विधान है जिसमें छः दिन के लिए भिक्षु को संघ की सदस्यता के सामान्य अधिकारों से वंचित रखा जाता है।

ब्रह्मदण्ड–बौद्ध संघ का एक अन्य कठिन दण्ड ब्रह्मदण्ड है। इसके दोषी भिक्षु को संघ से निष्कासित कर दिया जाता था। संघ से भिक्षु को निकालने के लिए निस्सारणा शब्द का प्रयोग मिलता है। ब्रह्मदण्ड के अपराधी भिक्षु से अन्य कोई भिक्षु किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं रख सकता अन्यथा वह भी दोषी होता है। कुल मिला कर इससे दोषग्रस्त भिक्षु का सामाजिक वहिष्कार कर दिया जाता था, जो सभी दण्डों से ऊपर है। राजगृह में होने वाली प्रथम संगीति में छन्न नामक भिक्षु को ब्रह्मदण्ड देने का निर्णय लिया जाने का उल्लेख प्राप्त होता है। आयुष्मान् आनन्द ने स्थविरों से छन्न नामक भिक्षु को ब्रह्मदण्ड देने का तथागत की आज्ञा का उल्लेख किया गया है। ब्रह्मदण्ड की विधि पूछे जाने पर आनन्द ने बताया कि छन्न से कोई भिक्षु न बोले, न उपदेश करे, न अनुशासन करे। आनन्द से कहा गया कि वे स्वंय छन्न को ब्रह्मदण्ड दें। छन्न के क्रोधी स्वभाव एवं कटुभाषी होने के कारण आनन्द ने कुछ आशंकाएँ प्रकट की, अतएव बहुत सारे भिक्षुओं के साथ उन्हे कौशाम्बी जाने की अनुमति दी गई, जहाँ उस समय छन्न रहते थे। इसके अनन्तर आनन्द कौशाम्बी के घोषिताराम में जा कर छन्न को ब्रह्मदण्ड दिया। यह सुनकर कि भिक्षु उनसे नहीं बोलेंगे छन्न मूर्च्छित हो गये किन्तु शीघ्र ही उन्होंने अप्रमाद और उद्योग से एकान्तवास कर अर्हत्व प्राप्त किया। अर्हत्व प्राप्त करने पर उनका ब्रह्मदण्ड समाप्त हो गया।

इसके अतिरिक्त भी विनय में अन्य कई प्रकार के अपराधो एवं तदनुरूप दण्ड की व्यवस्था देखी जा सकती है जिनका उल्लेख पूर्व में विषयगत प्रातिमोक्ष के अन्तर्गत किया जा चुका है।

●



प्रस्तुत संस्करण

प्रस्तुत ग्रन्थ विनयट्ठकथा समन्तपासादिका की प्राचीनतम टीका है । यह भदन्त सारिपुत्र की रचना है । इन्होंने इस टीका में तथ्यों का अति गम्भीर विश्लेषण किया है । विनय के गम्भीर और गूढ़ विषयों का सरल एवं सुबोध व्याख्या की है । साथ ही परम्परागत अर्थों को भी उद्घाटित किया है । इससे बौद्ध आचार 'विनय' के गम्भीर और निगूढ़ विषयों को समझने में अत्यन्त सहायता मिलती है । ऐसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ का आजतक किसी भी भारतीय लिपि में प्रकाशित न होना पालि एवं बौद्धविद्या के अध्येताओं के लिए कष्ट का विषय था । यह प्रसन्नता की बात है कि सम्पूर्णानन्द संस्कृतविश्वविद्यालय द्वारा उदारतापूर्ण दिये गये अनुदान से इस ग्रन्थ के तृतीय भाग का सर्वप्रथम देवनागरी लिपि में सम्पादित संस्करण विद्वज्जनों के सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है ।

इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि तैयार करने में बर्मी संस्करण, जो बुद्धाब्द २५०४ तदनुसार १९६० ई. बुद्धशासन समिति, बर्मा से प्रकाशित है, के पाठ को आधार मानकर सहायता ली गई है, तथा सिंहली संस्करण जो विद्याभूषण प्रेस कोलम्बो से १९१४ ई. में प्रकाशित है, से तुलनात्मक अभिवाचन करने पर जो पाठभेद दृष्टिगोचर हुए हैं, वे पादटिप्पण में उद्धृत कर दिये गये हैं । ग्रन्थ में जो अनेक ग्रन्थों के उद्धरण हैं, उनका भी यथासम्भव स्थल निर्देश पादटिप्पण में उल्लिखित हैं । इस तरह शुद्ध संस्करण प्रकाशित हो इसका प्रयास किया गया है । कुछ त्रुटियों की सम्भावना रह गई है, इसके लिए विद्वज्जन से क्षमाप्रार्थी हूँ ।

इसके सम्पादन में समालोचनात्मक सम्पादन विधि का अनुगमन किया गया है । ग्रन्थ को सहजतः सुबोध्य बनाने के लिए विषयानुसार शीर्षक, अनुशीर्षक आदि दिये गये हैं । 'समन्तपासादिका' के व्याख्येय पदों को कृष्णाक्षरों में तथा पिटकों के उदाहृत अंशों को युग्म चिह्नों के अन्तर्गत रखा गया है । सारत्थदीपनी-टीका का अध्ययन करते हुए पाठक का मूलग्रन्थ से सम्बन्ध बना रहे, इसके लिए मूलग्रन्थ का पृष्ठ प्रसङ्ग अनुच्छेद क्रमाङ्क अव्यवच्छिन्न रूप से निर्दिष्ट है साथ ही पृष्ठपार्श्व में बर्मी के छट्ठसंगायन संस्करण की पृष्ठसंख्याओं का भी संकेत किया गया है । पृष्ठ के अधोभाग में आवश्यक टिप्पणियाँ तथा ग्रन्थ संकेतों का समावेश है । ग्रन्थ में सहजतः प्रवेश के लिए इसकी कुछ सामग्रियों के आधार पर प्रारम्भ

में आलोचनात्मक भूमिका प्रस्तुत की गई है। अन्त में प्रकृत ग्रन्थ में प्रयुक्त शब्दों की अनुक्रमणिका दी गई है।

'सारत्थदीपनी टीका' तृतीय भाग के देवनागरी लिपि में सर्वप्रथम प्रकाशन के इस पुनीत अवसर पर अपने गुरुजनों एवं कल्याणमित्रों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना मेरा पावन कर्त्तव्य है। इस दिशा में सर्वप्रथम सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिसने संस्कृत-संस्कृति संरक्षण की प्राचीन परम्परा को अव्यवच्छिन्न रूप से अक्षुण्ण बनाये रखते हुए इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए यथेष्ट अनुदान देकर मूलभूत उपक्रम प्रदान किया है। माननीय कुलपति, प्रो. बी. वेङ्कटाचलम् जी के प्रति मैं श्रद्धा एवं भक्ति से विनत हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थ के प्रकाशन की स्वीकृति एवं सद्प्रेरणा देकर मुझे उत्साहित किया है। परम श्रद्धेय पं. विद्यानिवास मिश्र पू. कुलपति सं. सं. वि. वि., वाराणसी के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने ग्रन्थ के प्रारम्भ में दो शब्द लिखकर मुझे अनुगृहीत किया है। पू. पिता स्वर्गीय पं. रामजी पाण्डेय के प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित करता हूँ जिनकी कृपा एवं प्रसाद से इस दिशा में काम करने की मुझे प्रेरणा मिली है।

परमपूज्य गुरुवर डॉ. महेश तिवारी पू. आचार्य एवं अध्यक्ष बौद्ध– अध्ययन विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने प्रारम्भ से ही पालि एवं बौद्धविद्या के क्षेत्र में प्रवेश कराकर तद्विषयक निगूढ़ तत्त्वों को सिखाने की कृपा की है, तथा ग्रन्थ सम्पादन में मार्ग-निर्देश कर मुझे प्रोत्साहित किया है। डॉ. अनुकूल चन्द्र बनर्जी (पू. अध्यक्ष, पालि विभाग, कलकत्ता विश्वविद्यालय), स्वामी द्वारिकादास शास्त्री (अध्यक्ष, बौद्धभारती वाराणसी), प्रो. लक्ष्मी नारायण तिवारी (पू. अध्यक्ष, श्रमणविद्या संकाय, सं. सं. वि. वि. वाराणसी), प्रो. रामशंकर त्रिपाठी, प्रो. गोकुल चन्द्र जैन, डॉ. फूलचन्द्र जैन प्रेमी आदि विशेषज्ञ विद्वज्जनों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जिनके सत्परामर्श से यह कार्य सम्पन्न करने में सहायता मिली है। डॉ. ब्रजमोहन पाण्डेय 'नलिन' (आचार्य एवं अध्यक्ष, पालि एवं प्राकृत विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया), डॉ. कोमलचन्द जैन, डा. हरिशंकर शुक्ल, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, ने अपने अमूल्य सुझाव देकर इस कार्य में सहायता की है, मैं इन सबके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ। डॉ. हरप्रसाद दीक्षित, प्राध्यापक, पालि विभाग कल्याणमित्र पं. श्रीकान्त पाण्डेय 'उपाचार्य', व्याकरण विभाग, आचार्य सर्वेश्वर राजहंस 'न्याय- विभाग' ने इस ग्रन्थ के सम्पादन में अनेक सुझावों से मुझे उपकृत किया है, मैं इन सब विद्वज्जनों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन में प्रकाशनाधिकारी पं. हरिश्चन्द्र मणि त्रिपाठी जी का महत्वपूर्ण सहयोग रहा है, मैं उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

आत्मज श्री अरुण कुमार पाण्डेय तथा श्री बीरेन्द्र पाण्डेय ने इस ग्रन्थ के लिप्यरुन्तरकरण तथा अनुक्रमणिका निर्माण में मेरी सहायता की है अतः मैं इनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के तथा श्रमणविद्या संकाय के उन समस्त विद्वज्जनों का आभारी हूँ जिन्होंने इस कार्य में किसी भी प्रकार की सहायता प्रदान की है।

अन्त में रत्ना प्रिन्टिंग वर्क्स वाराणसी को साधुवाद देता हूँ, जिनके पूर्ण सहयोग, सद्व्यवहार तथा जागरूकता के फलस्वरूप ही ग्रन्थ का यथा समय प्रकाशन हो सका है।

ब्रह्मदेव नारायण शर्मा

१४।१०।१९९४



सारत्थदीपनी टीका

ततिय भाग

मातिका पिट्ठङ्क

मातिका पिट्ठङ्क

मातिका	पिट्ठङ्का

महावग्ग

मातिका	पिट्ठङ्का

मातिका **पिट्ठङ्क**

मातिका **पिट्ठङ्क**

सारत्थदीपनी टीकाय ततियभागे मातिका निट्ठिता ।



समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय
अत्थवण्णनाभूता
भदन्तसारिपुत्तत्थेरेन कता

सारत्थदीपनीटीका

(ततियो भागो)

विनयपिटक

सारत्थदीपनीटीका

(ततियो भागो)

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

५–पाचित्तियकण्ड

१–मुसावादवग्ग

१. मुसावादसिक्खापदवण्णना

१॥ मुसावादवग्गस्स पठमसिक्खापदे **खुद्दकानं ति** एत्थ "**खुद्दक**-सद्दो बहुसद्दपरियायो। बहुभावतो इमानि खुद्दकानि नाम जातानी" ति वदन्ति । **तत्थाति** तेसु नवसु वग्गेसु, तेसु वा खुद्दकेसु । **कारणेन** कारणन्तरपटिच्छादनमेव विभावेतुं "**रूपं अनिच्चं**" ति आदिमाह । रूपं अनिच्चं ति पटिजानित्वा तत्थ कारणं वदन्तो "**जानितब्बतो**" ति आह । "यदि एवं निब्बानस्सपि अनिच्चता आपज्जती" ति परेन वुत्तो तं कारणं पटिच्छादेतुं पुन "**जातिधम्मतो**' ति अञ्ञं कारणं वदति । "सम्पजानं मुसा भासती'ति वत्तब्बे **सम्पजान मुसा भासतीति** अनुनासिकलोपेन निद्देसो ति आह **जानन्तो मुसा भासती" ति** ।

२॥ **जानित्वा जानन्तस्स च मुसा भणने** ति पुब्बभागेपि जानित्वा वचनक्खणेपि जानन्तस्स मुसा भणने । भणनञ्च नाम इध अभूतस्स वा भूततं भूतस्स वा अभूततं कत्वा कायेन वा वाचाय वा विञ्ञापनपयोगो । **सम्पजान मुसावादेति च निमित्तत्थे भुम्मवचनं** । तस्मा यो **सम्पजान मुसा वदति**, तस्स तंनिमित्तं तंहेतु तप्पच्चया पाचित्तियं होतीति एवमेत्थ अञ्ञेसु च ईदिसेसु अत्थो वेदितब्बो । B. 2

३॥ विसंवादेन्ति एतेनाति **विसंवादनं**, वञ्चनाधिप्पायवसप्पवत्तं चित्तं । तेनाह "**विसंवादनचित्तं पुरतो कत्वा वदन्तस्सा**" ति । वदति एताया ति **वाचा** । वचनसमुट्ठापिका चेतना । तेनाह "मिच्छावाचा.........पे०........**चेतना** 'ति । **पभेदगता वाचा** ति अनेक भेदभिन्ना । **एवं पठमपदेन सुद्धचेतना**........पे०.......**कथितताति वेदितब्बा** ति इमिना इमं दीपेति–सुद्धचेतना वा सुद्धसद्दो वा सुद्धविञ्ञत्ति वा मुसावादो नाम न होति, विञ्ञतिया सद्देन च सहिता तंसमुट्ठापिका चेतना मुसावादो ति । चक्खुवसेन अग्गहितारम्मणं ति चक्खुसन्निस्सितेन विञ्ञाणेन अग्गहितमारम्मणं । घानादीनं तिण्णं इन्द्रियानं सम्पत्तविसयग्गाहकत्ता वुत्तं **तीहि इन्द्रियेहि एकाबद्धं विय कत्वाति** ।

'धनुना विज्झती" ति आदीसु विय 'चक्खुना दिट्ठं' ति अयं वोहारो लोके पाकटो ति आह **"ओळारिकेनेव नयेना"** ति ॥

११॥ **अवीमंसित्वा ति** अनुपपरिक्खित्वा । **अनुपधारेत्वा** ति अविनिच्छिनित्वा । **जळत्ता** ति' अञ्ञाणताय । **दारुसकटं योजेत्वा गतो ति** दारुसकटं योजेत्वा तत्थ निसीदित्वा गतो ति अधिप्पायो । **गतो भविस्सती**ति तथेव सन्निट्ठानं कत्वा वुत्तत्ता मुसावादो जातो । केचि पन "केळिं कुरुमानोति वुत्तत्ता एवं वदन्तो दुब्भासितं आपज्जती" ति वदन्ति, तं न गहेतब्बं । जाति आदीहियेव हि दसहि अक्कोसवत्थूहि दवकम्यताय वदन्तस्स दुब्भासितं वुत्तं । वुत्तञ्हेतं

"हीनुक्कट्ठेहि उक्कट्ठं, हीनं वा जाति आदिहि ।
उजुं वाञ्ञापदेसेन, वदे दुब्भासितं दवा" ति ॥

चित्तेन थोकतरभावंयेव अग्गहेत्वा बहुभावंयेव गहेत्वा वुत्तत्ता "गामो एकतेलो" तिआदिनापि मुसावादो जातो । **चारेसुं ति**[1] उपनेसुं । विसंवादनपुरेक्खारता, विसंवादचित्तेन यमत्थं वत्तुकामो, तस्स पुग्गलस्स विञ्ञापनपयोगो चाति इमानेत्थ द्वे B. 3 अङ्गानि । उत्तरिमनुस्सधम्मारोचनत्थं मुसा भणन्तस्स पाराजिकं, अमूलकेन पाराजिकेन अनुद्धंसनत्थं संघादिसेसो, संघादिसेसेन अनुद्धंसनत्थं पाचित्तियं, आचारविपत्तिया दुक्कटं । "यो ते विहारे वसती"ति आदिपरियायेन उत्तरिमनुस्सधम्मारोचनत्थं पटिविजानन्तस्स मुसा भणिते थुल्लच्चयं, अप्पटिविजानन्तस्स दुक्कटं, केवलं मुसा भणन्तस्स इध पाचित्तियं वुत्तं ॥

मुसावादसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

२. ओमसवादसिक्खापदवण्णना

१२॥ दुतिये कण्णकटुकताय अमनापं वदन्ता कण्णेसु विज्झन्ता विय होन्तीति आह **"ओमसन्तीति ओविज्झन्ती"** ति । पधंसेन्तीति अभिभवन्ति ।

१३॥ **बोधिसत्तो तेन समयेन होतीति** तेन समयेन बोधिसत्तो नन्दिविसालो नाम अहोसीति अत्थो । अतीतत्थे वत्तमानवचनं, किरियाकालवचनिच्छाय वा वत्तमानप्पयोगो सद्दन्तरसन्निधानेन भूततावगमो[2] सिया ति । **पच्चेसीति** "अमनापं इदं" ति अञ्ञासि ॥ **हेट्ठारुक्खे दत्वा** ति उपत्थम्भके दत्वा । **पुब्बे पतिट्ठितारप्पदेसं पुन अरे**

1. हरेसुन्ति (स्या.)
2. भूततापगमो (स्या.)

पत्ते ति पुब्बे उजुकं हेट्ठामुखं पतिट्ठितअरस्स भूमिप्पदेसं[1] पुन तस्मिंयेव अरे परिवत्तेत्वा हेट्ठामुखभावेन सम्पत्ते, पठमं भूमियं पतिट्ठितनेमिप्पदेसे परिवत्तेत्वा पुन भूमियं पतिट्ठिते ति वुत्तं होति । **सिथिलकरणं** ति सिथिलकिरिया ।

१५॥ **पुब्बे ति अट्ठुप्पत्तियं । तच्छककम्मं ति वड्ढकीकम्मं ॥ कोट्टककम्मंति** वा पासाण-कोट्टककम्मं । **हत्थमुद्दागणना** ति अङ्गुलिसङ्कोचेनेव गणना । पादसिकमिलक्खकादयो[2] विय नवन्तवसेन गणना **अच्छिद्दकगणना** । आदि-सद्देन सङ्कलनपटुप्पादनवोक्लन-भागहारादिवसेन पवत्ता पिण्डगणना गहिता । यस्स सा पगुणा होति, सो रुक्खम्पि दिस्वा "एतकानि एत्थ पण्णानी" ति जानाति । यभ मेथुने ति वचनतो भ-कारे एकतो योजिते असद्धम्मवचनं होति ॥

१६-२६॥ **आपत्तिया कारेतब्बो** ति पाचित्तियेन कारेतब्बो उपसग्गादिमत्त-विसिट्ठानं अतिचण्डालादिपदानं पाळियं आगतेसुयेव सङ्गहितत्ता । **चोरोसी** तिआदीनं पन केनचि परियायेन पाळियं अनागतत्ता दुक्कटं वुत्तं । **हसाधिप्पायता** ति पुरिमपदस्स अत्थविवरणं । पाळियं अवुत्तेपि "जातिआदीहि अक्कोसवत्थूहि परम्मुखा अक्कोसन्तस्स वत्थूनं अनञ्ञभावतो यथा दुक्कटं, तथा दवकम्यताय परम्मुखा वदन्तस्सपि दुब्भासितमेवा" ति आचरिया वदन्ति । **सब्बसत्ता** ति एत्थ वचनत्थविजानन-पकतिका तिरच्छानगतापि गहेतब्बा

B. 4

३५॥ अनुसासनिपुरेक्खारताय ठत्वा वदन्तस्स चित्तस्स लहुपरिवत्तिभावतो अन्तरा कोपे उप्पन्नेपि अनापत्ति । यं अक्कोसति, तस्स उपसम्पन्नता, अनञ्ञापदेसेन जाति आदीहि अक्कोसनं, "मं अक्कोसती" ति जानना, अत्थपुरेक्खारतादीनं अभावता-ति इमानेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

ओमसवादसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

३. पेसुञ्ञसिक्खापदवण्णना

३६॥ ततिये भण्डनं जातं एतेसं ति **भण्डनजाता** । सम्मन्तनं ति रहो संसन्दनं । हत्थपरामासादिवसेन मत्थकं पत्तो कलहो जातो एतेसं ति **कलहजाता** । अनापत्तिगामिकं विरुद्धवादभूतं विवादं आपन्ना ति **विवादापन्ना** । विग्गहसंवत्तनिका कथा **विग्गाहिककथा** । पिसतीति पिसुणा, वाचा, समग्गे सत्ते अवयवभूते वग्गे भिन्ने करोतीति अत्थो । पिसुणा एव **पेसुञ्ञं** । ताय वाचाय वा समन्नागतो पिसुणो, तस्स

1. हेट्ठामुखट्ठितअरस्स नेमिप्पदेसं (स्या.)
2. पारसिकमिलक्खकादयो (स्या.)

कम्मं पेसुञ्ञं । पियभावस्स सुञ्ञकरणवाचं ति इमिना पन "पियसुञ्ञकरणतो पिसुणा" ति निरुत्तिनयेन **अत्थं** वदति ।

इधापि "दसहाकारेहि पेसुञ्ञं उपसंहरती"ति वचनतो दसविधअक्कोसवत्थुवसेनेव पेसुञ्ञं उपसंहरन्तस्स पाचित्तियं । पाळिमुत्तकानं चोरोतिआदीनं वसेन B.5 पन दुक्कटमेवाति वेदितब्बं । "अनक्कोसवत्थुभूतं पन पेसुञ्ञकरं तस्स किरियं वचनं वा पियकम्यताय उपसंहरन्तस्स किञ्चापि इमिना सिक्खापदेन आपत्ति न दिस्सति, तथापि दुक्कटेनेत्थ भवितब्बं" ति वदन्ति । जाति आदीहि अनञ्ञापदेसेन अक्कोसन्तस्स भिक्खुनो सुत्वा भिक्खुस्स उपसंहरणं, पियकम्यताभेदाधिप्पायेसु अञ्ञतरता, तस्स विजानना ति इमानेत्थ तीणि अङ्गानि ।

पेसुञ्ञसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ॥

---

४. पदसोधम्मसिक्खापदवण्णना

४५॥ चतुत्थे **एकतो** ति अनुपसम्पन्नेन सद्धिं । **पुरिमञ्जनेन सदिसं पच्छब्याब्यञ्जनं** ति "रूपं अनिच्चं"ति एत्थ अनिच्च-सद्देन सदिसं "वेदना अनिच्चा" ति एत्थ अनिच्च-सद्दं वदति । **अक्खरसमूहो** ति अविभत्तिको अक्खरसमूहो । **अक्खरानुब्यञ्जनसमूहो पदं** ति विभत्तिअन्त पदमाह । विभत्तिअन्ततंमेव पदं गहेत्वा "**पठमपदं पदमेव, दुतियं अनुपदं** ति वुत्तं ।

एकं पदं ति गाथापदं सन्धाय वदति । **पदगणनाया** ति गाथापदगणनाय । **अपापुणित्वा** ति सद्धिं अकथेत्वा । **रुं ति ओपातेती** ति एत्थ अनुनासिको आगमवसेन वुत्तो, संयोगपुब्बस्स रस्सत्तं कतं ति वेदितब्बं । **तेनाह "रू-कारमत्तमेवा"** ति । एत्थ च "रूपं अनिच्चं ति भण सामणेरा" ति वुच्चमानो सचे रू-कारं अवत्वा रु-इति रस्सं कत्वा वदति, अञ्ञं भणितं नाम होति, तस्मा अनापत्ति । एवञ्च कत्वा "वेदना अनिच्चा" ति एत्थापि अनिच्च-सद्दमत्तेनेव आपत्ति होतीति वेदितब्बं । **एस नयो** ति एकमेवक्खरं वत्वा ठानं । "मनोपुब्बङ्गमा धम्मा" ति वुच्चमानो हि म-कारमत्तमेव वत्वा तिट्ठति । "एवं मे सुतं" ति आदिसुत्तं भणापियमानो ए-कारं वत्वा तिट्ठति चे, अन्वक्खरेन पाचित्तियं, अपरिपुण्णपदं वत्वा ठिते अनुब्यञ्जनेन । पदेसु[1] एकं पठमपदं विरज्झति, दुतियेन अनुपदेन पाचित्तियं ।

---

1. पदेन. (स्या.)

अनङ्गणसुत्तं[1] **सम्मादिट्ठिसुत्तं**[2] **महावेदल्लञ्च**[3] धम्मसेनापतिना भासितं, **अनुमान-सुत्तं**[4] महामोग्गल्लानत्थेरेन, चूळवेदल्लसुत्तं[5] धमदिन्नाय थेरिया भासितं । पच्चेक- B.6 बुद्धभासितम्पि बुद्धभासितेयेव सङ्गहं गच्छति । **अट्ठकथानिस्सितो** ति पुब्बे मगध-भासाय वुत्तं धम्मसङ्गहारुळ्हं अट्ठकथं सन्धाय वदति । इदानिपि "यथापि दीपिको नाम, निलीयित्वा गण्हते मिगे" ति[6] एवमादिकं सङ्गहारुळ्हं अट्ठकथावचनं **गहेतब्बं ति** वदन्ति । **पाळिनिस्सितो** ति" मक्कटी वज्जिपुत्ता चा" ति[7] एवमादिना पाळियंयेव आगतो । **विवट्टूपनिस्सितं** निब्बानुपनिस्सितं । विवट्टनिस्सितं पन सामञ्ञतो गहेतब्बं ति आह **"किञ्चापी"** ति आदि । **थेरस्सा** ति नागसेनत्थेरस्स । **मग्गकथादीनि** पकरणानि । "अक्खरेन वाचेति, अक्खरक्खरे आपत्ति पाचित्तियस्सा" ति वत्तब्बे **"अक्खराय वाचेति, अक्खरक्खराय आपत्ति पाचत्तियस्सा"** ति पाळियं वुत्तं

४८ ॥ **अनुपसम्पन्नेन सद्धिं गण्हन्तस्स अनापत्ती** ति अनुपसम्पन्नेन सह निसीदित्वा उद्देसं गण्हन्तस्स अनापत्ति वुत्ता । **दहरभिक्खु निसिन्नो........पे०.......भणतो अनापत्तीति** एत्थ द्वीसुपि ठितेसु निसिन्नेसु वा उपसम्पन्नस्स भणामीति भणन्तस्स अनापत्तियेव । **उपचारं मुञ्चित्वा** ति परिसपरियन्ततो द्वादसहत्थं मुञ्चित्वा । "निसिन्ने वाचेमी" ति भणन्तस्सपि उपचारं मुञ्चित्वा निसिन्नत्ता अनापत्ति । सचे पन दूरे निसिन्नम्पि वाचेमीति विसुं सल्लक्खेत्वा भणति, आपत्तियेव । **एको पादो न आगच्छती** ति पुब्बे पगुणोयेव पच्छा असरन्तस्स न आगच्छति । तं "एवं भणाही" ति एकतो भणन्तस्स अनापत्ति । **ओपातेतीति** सद्धिं कथेति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अनुपसम्पन्नता, वुत्तलक्खणधम्मं पदसो वाचनता, एकतो भणनञ्चाति इमानेत्थ तीणि अङ्गानि ।

पदसोधम्म सिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

५. सहसेय्यसिक्खापदवण्णना

४९-५०॥ पञ्चमे **विकूजमाना** ति नित्थुनन्ता । **काकच्छमाना** ति रोदन्ता । तन्निदं वत्थुनिदस्सनं वा । **तेन नु खो पातितं** ति पुच्छावसेन कथितत्ता नत्थि मुसावादो । केचि पन "सन्देहवसेन वचनं मुसा नाम न होति । तस्मा एवं वुत्तं" ति वदन्ति । B.7

1. म. १-२९ पिट्ठे ।
2. म. १-५७ पिट्ठे ।
3. म. १-३६५ पिट्ठे ।
4. म. १-१३२ पिट्ठे ।
5. म. १-३७३ पिट्ठे ।
6. खु. ११-३५२ पिट्ठे ।
7. वि. १-४१ पिट्ठे ।

सन्तिकं अगन्त्वा ति "यं एतेसं न कप्पति । तं तेसम्पि न कप्पती" ति अधिप्पायेन अगन्त्वा ।

५१॥ **दिरत्ततिरत्तं ति** एत्थ वचनसिलिट्ठतामत्तेन **दिरत्त**–ग्गहणं कतं ति वेदितब्बं। तिरत्तञ्हि सहवासे लब्भमाने दिरत्ते वत्तब्बमेव नत्थीति दिरत्तग्गहणं विसुं न योजेति। तेनेवाह **"उत्तरिदिरत्ततिरत्तं ति भगवा सामणेरानं सङ्गहकरणत्थाय तिरत्तपरिहारं अदासी"**–ति । निरन्तरं दिरत्तदस्सनत्थं वा तिरत्तग्गहणं कतं । केवलञ्हि तिरत्तं ति वुत्ते अञ्ञत्थ वासेन अन्तरिकम्पि तिरत्तं गण्हेय्य, दिरत्तविसिट्ठं पन तिरत्तं वुच्चमानं तेन अनन्तरिकमेव तिरत्तं दीपेति । सयनं **सेय्या**, सयन्ति एत्थतिपि **सेय्या ति** आह **"कायप्पसारणसङ्खातं"** ति आदि । **तस्मा** ति यस्मा उभयम्पि परिग्गहितं, तस्मा । **पञ्चहि छदनेहीति** इट्ठकसिलासुधातिणपण्णसङ्खातेहि पञ्चहि छदनेहि । **वाचुग्गतवसेनाति पगुणवसेन । दियड्ढहत्थुब्बेधो वड्ढकीहत्थेन गहेतब्बो । एकूपचारो ति** वळञ्जनद्वारस्स एकत्तं सन्धाय वुत्तं । सतगब्भं वा चतुस्सालं एकूपचारं होतीति सम्बन्धो ॥

उपरिमतलेन सद्धिं असम्बद्धभित्तिकस्सा ति इदं तुलाय **अब्भन्तरे** सयित्वा पुन तेनेव सुसिरेन निक्खमित्वा भित्तिं अन्तरेन हेट्ठिमतलं पविसितुं योग्गेपि उपरिमतलेन असम्बद्धभित्तिके सेनासने अनापत्तिया वुत्ताय तथा पविसितुं असक्कुणेय्ये सम्बद्धभित्तिके[1] वत्तब्बमेव नत्थीति दस्सनत्थं वुत्तं, न पन सम्बद्धभित्तिके आपत्तीति दस्सनत्थं वुत्तं । **हेट्ठापासादे सयितभिक्खुस्स अनापत्तीति इदम्पि** तादिसे सेनासने हेट्ठिमतले सयितस्सेव आपत्तिप्पसङ्का[2] सियाति तंनिवारणत्थं वुत्तं, न पन उपरिमतले सयितस्स आपत्तीति दस्सनत्थं । **नानूपचारे ति** यत्थ बहि निस्सेणिं कत्वा उपरिमतलं आरोहन्ति, तादिसं संधाय वुत्तं । उपरिमतलेपि आकासङ्गणे निपज्जन्तस्स आपत्तिया अभावतो "छदनब्भन्तरे" ति वुत्तं ।

सभासङ्खेपेना ति सभाकारेन ॥ **अड्ढकुट्टके सेनासने ति** एत्थ "अड्ढकुट्टकं नाम B.8 यत्थ एकं पस्सं मुञ्चित्वा तीसु पस्सेसु भित्तियो बद्धा होन्ति । यत्थ वा एकस्मिं पस्से भित्तिं उट्ठापेत्वा उभोसु पस्सेसु उपड्ढं उपड्ढं कत्वा भित्तियो उट्ठापेन्ति । तादिसं सेनासनं" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **गण्ठिपदे** पन "अड्ढकुट्टकेति छदनं अड्ढेन असम्पत्तकुट्टके" ति वुत्तं, तम्पि नो न युत्तं । **"वाळसङ्घाटो** नाम थम्भानं उपरि वाळरूपेहि कतसङ्घाटो वुच्चती" ति वदन्ति । **परिक्खेपस्स बहिगते** ति एत्थ यस्मिं पस्से परिक्खेपो नत्थि, तत्थापि परिक्खेपारहप्पदेसतो बहिगते अनापत्तियेवाति दट्ठब्बं। **अपरिच्छिन्नगब्भूपचारे** ति एत्थ मज्झे विवटङ्गणवन्तासु पमुखमहाचतुस्सालासु

---

1. अनापत्ति वुत्ता, यथा पविसितुं असक्कोणेय्य, तथा सम्बद्धभित्तिके (क)।
2. आपत्तिप्पसङ्गासङ्का (स्या.)।

यथा आकासङ्गणं अनोतरित्वा पमुखेनेव गन्त्वा सब्बगब्भे पविसितुं न सक्का होति, एवं एकेकगब्भस्स द्वीसु पस्सेसु कुट्टं नीहरित्वा कतं **परिच्छिन्नगब्भूपचारं** नाम। इदं पन तादिसं न होतीति "अपरिच्छिन्नगब्भूपचारे"ति वुत्तं। **सब्बगब्भे पविसन्तीति** गब्भूपचारस्स अपरिच्छिन्नत्ता आकासङ्गणं अनोतरित्वा पमुखेनेव गन्त्वा तं तं गब्भं पविसन्ति। अथ कुतो तस्स परिक्खेपोयेव[1] सब्बपरिच्छन्नत्ताति वुत्तं ति आह **"गब्भपरिक्खेपोयेव हिस्स परिक्खेपो"** ति। इदञ्च समन्ता गब्भभित्तियो सन्धाय वुत्तं। चतुस्सालवसेन सन्निविट्ठेपि सेनासने गब्भपमुखं विसुं अपरिक्खित्तम्पि समन्ता ठितगब्भभित्तीनं वसेन परिक्खित्तं नाम होति।

"ननु च 'अपरिक्खित्ते पमुखे अनापत्ती" ति अन्धकट्ठकथायं अविसेसेन वुत्तं। तस्मा चतुस्सालवसेन सन्निविट्ठेपि सेनासने विसुं अपरिक्खित्ते पमुखे अनापत्तियेवा" ति यो वदेय्य, तस्स वादपरिमोचनत्थं इदं वुत्तं **"यं पन......पे॰......पाटेक्कसन्निवेसा एकच्छदना गब्भपाळियो सन्धाय वुत्तं"** ति। इदं वुत्तं होति–"अपरिक्खित्ते पमुखे अनापत्तीति यं वुत्तं, तं न चतुस्सालवसेन सन्निविट्ठा गब्भपाळियो सन्धाय वुत्तं, किञ्चरहि विसुं सन्निविट्ठं एकमेव गब्भपाळिं सन्धाय। तादिसाय हि गब्भपाळिया अपरिक्खित्ते पमुखे अनापत्ति, न चतुस्सालवसेन सन्निविट्ठाया" ति। एकाय च गब्भपाळिया तस्स तस्स गब्भस्स उपचारं परिच्छिन्दित्वा अन्तमसो उभोसु पस्सेसु खुद्दकभित्तीनं उट्ठापनमत्तेनपि पमुखं परिक्खित्तं नाम होति, चतुस्सालवसेन सन्निविट्ठासु पन गब्भपाळीसु उभोसु पस्सेसु गब्भभित्तीनं वसेनपि पमुखं परिक्खित्तं B.9 नाम होति। तस्मा यं इमिना लक्खणेन परिक्खित्तं पमुखं, तत्थ आपत्ति, इतरत्थ अनापत्तीति इदमेत्थ सन्निट्ठानं।

इदानि "अपरिक्खित्ते पमुखे अनापत्ती" ति वत्वा तस्सेव वचनस्स अधिप्पायं पकासेन्तेन यं वुत्तं "भूमियं विना जगतिया पमुखं सन्धाय कथितं" ति, तस्स अयुत्तताविभावनत्थं **"यञ्च तत्था"** तिआदि आरद्धं। **भूमियं बिना जगतिया पमुखं सन्धाय कथितं** ति हि इमस्स वचनस्स अयमधिप्पायो–"अपरिक्खित्ते पमुखे अनापत्ती"ति यं वुत्तं, तं विना वत्थुं भूमियं कतगेहस्स पमुखं सन्धाय कथितं। सचे पन उच्चवत्थुकं पमुखं होति, परिक्खित्तसङ्ख्यं न गच्छतीति। तेनेवाह **"दसहत्थुब्बेधापि हि जगति परिक्खेपसङ्ख्यं न गच्छती"** ति। हेट्ठापि इदमेव मनसि सन्निधाय वुत्तं "उच्चवत्थुकं चेपि होति, पमुखे सयितो गब्भे सयितानं आपत्तिं न करोती" ति। **तत्था** ति अन्धकट्ठकथायं। **जगतिया पमाणं वत्वा ति"** सचे जगतिया ओतरित्वा भूमियं सयितो, जगतिया उपरि सयितं न पस्सती" ति एवं जगतिया उब्बेधेन पमाणं वत्वा। एकसालादीसु उजुकमेव दीघं कत्वा सन्निवेसितो पासादो

1. परिक्खेपो, येन (?)

एकसालसन्निवेसो। द्विसालसन्निवेसादयोपि वुत्तानुसारतो वेदितब्बा । सालप्पभेददीपनमेव चेत्थ हेट्ठा वुत्ततो विसेसो ॥

मज्झे पाकारं करोन्तीति एत्थापि परिक्खेपस्स हेट्ठिमपरिच्छेदेन दियड्ढहत्थुब्बेधत्ता दियड्ढहत्थं चेपि मज्झे पाकारं करोन्ति, नानूपचारमेव होतीति वेदितब्बं । **न हि छिद्देन गेहं एकूपचारं नाम होतीति** एत्थ सचे उब्बेधेन दियड्ढहत्थब्भन्तरे मनुस्सानं सञ्चारप्पहोनकं छिद्दं होति, तम्पि द्वारमेवाति एकूपचारं होति । **किं परिक्खेपो विद्धस्तोति** पमुखस्स परिक्खेपं सन्धाय वदति । सब्बत्थ पञ्चन्नंयेव छदनानं आगतत्ता वदति **"पञ्चन्नं अञ्ञतरेन छदनेन छन्ना"** ति ।

५३॥ पाळियं "सेय्या नाम सब्बच्छन्ना सब्बपरिच्छन्ना येभुय्येनच्छन्ना येभुय्येनपरिच्छन्ना" ति वदन्तेन येभुय्येनच्छन्नयेभुय्येनपरिच्छन्नसेनासनं पाचित्तियस्स अवसानं विय कत्वा दस्सितं, उपड्ढच्छन्ने उपड्ढपरिच्छन्ने आपत्ति दुक्कटस्सा" ति वदन्तेन च उपड्ढच्छन्नउपड्ढपरिच्छन्नसेनासनं दुक्कटस्स आदिं कत्वा दस्सितं, उभिन्नमन्तरा केन B. 10 भवितब्बं पाचित्तियेन, उदाहु दुक्कटेनाति? लोकवज्जसिक्खापदस्सेव अनवसेसं कत्वा पञ्ञापनतो इमस्स च पण्णत्तिवज्जत्ता येभुय्येनच्छन्नयेभुय्येनपरिच्छन्नस्स उपड्ढच्छन्न उपड्ढपरिच्छन्नस्स च अन्तरा पाचित्तियं अनिवारितमेव, तस्मा विनयविनिच्छये च गरुकेयेव ठातब्बत्ता अट्ठकथायम्पि पाचित्तियमेव दस्सितं । सत्त पाचित्तियानीति पाळियं वुत्तपाचित्तियं सामञ्ञतो एकत्तेन गहेत्वा वुत्तं । विसुं पन गय्हमाने "सब्बच्छन्ने सब्बपरिच्छन्ने पाचित्तियं, येभुय्येनच्छन्ने येभुय्येनपरिच्छन्ने पाचित्तियं" ति अट्ठेव पाचित्तियानि होन्ति ।

सेनम्बमण्डपवण्णं[1] **होतीति** सीहळदीपे किर उच्चवत्थुको सब्बच्छन्नो सब्बअपरिच्छन्नो एवंनामको सन्निपातमण्डपो अत्थि, तं सन्धायेतं वुत्तं । यदि जगतिपरिक्खेपसङ्ख्यं गच्छति, उच्चवत्थुकत्ता मण्डपस्स सब्बअपरिच्छन्नता न युज्जतीति आह **"इमिनापेतं वेदितब्बं"** ति आदि । चूळकच्छन्नादीनि चेत्थ एवं वेदितब्बानि-यस्स चतूसु भागेसु एको छन्नो, सेसा अच्छन्ना, इदं **चूळकच्छन्नं** । यस्स तीसु भागेसु द्वे छन्ना, एको अच्छन्नो, इदं **येभुय्येनच्छन्नं** । यस्स द्वीसु भागेसु एको छन्नो, एको अच्छन्नो, इदं उपड्ढच्छन्नं नाम सेनासनं । चूळकपरिच्छन्नादीनिपि इमिनाव नयेन वेदितब्बानि । सेसं उत्तानमेव । पाचित्तियवत्थुकसेनासनं, तत्थ तत्थ अनुपसम्पन्नेन सह निपज्जनं, चतुत्थदिवसे सूरियत्थङ्गमनं ति **इमानेत्थ तीणि अङ्गानि** ।

सहसेय्यसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

1. पेनम्बमण्डपवण्णं (स्या.) ।

६. दुतियसहसेय्यसिक्खापदवण्णना

५५॥ छट्ठे "पठमसिक्खापदे 'भिक्खुं' ठपेत्वा अवसेसो अनुपसम्पन्नो नामा" ति वुत्तत्ता 'मातुगामोपि अनुपसम्पन्नग्गहणेन गहितोयेवा'ति चतुत्थदिवसे मातुगामेन सद्धिं सयन्तस्स द्वीहि सिक्खापदेहि द्वे पाचित्तियानि होन्ती'ति वदन्ति। **गण्ठिपदेसु** पन तीसुपि 'इमस्मिं सिक्खापदे मातुगामस्स विसुं **वुच्चमानत्ता** पठमसिक्खापदे 'भिक्खुं ठपेत्वा अवसेसो अनुपसम्पन्नो नामा' ति पुरिसस्सेवं गहणं अनुच्छविकं'ति वुत्तं, तदेव च युत्ततरं।

यञ्च इध "**पठमदिवसेपी** ति **पि-सद्देन** चतुत्थदिवसेपीति वुत्तं होती"ति कारणं B. 11 वदन्ति, तम्पि अकारणं पि-सद्दो सम्पिण्डनत्थोयेवाति नियमाभावतो अवधारण-त्थस्स च सम्भवतो। सम्भावने वा पि-सद्दो दट्ठब्बो। तेन इध पठमदिवसे ताव आपत्ति, दुतियादि दिवसे किमेव वत्तब्बं ति इममत्थं दीपेति। सम्पिण्डनत्थेपि पि-सद्दे गय्हमाने इमिनाव सिक्खापदेन आपज्जितब्बापत्तिया अञ्ञस्मिम्पि दिवसे आपज्जनं दीपेति, न पठमसिक्खापदेन आपज्जितब्बापत्तिया ति अकारणमेव तं ति दट्ठब्बं। मतित्थी पाराजिकवत्थुभूतापि अनुपादिन्नपक्खे ठितत्ता सहसेय्यापत्तिं न जनेती'ति वदन्ति।" "अत्थङ्गते सूरिये मातुगामे निपन्ने भिक्खु निपज्जती" ति वचनतो दिवा सयन्तस्स सहसेय्यापत्ति न होतियेवाति दट्ठब्बं। पाचित्तिय-वत्थुकसेनासनं, तत्थ मातुगामेन सह निपज्जनं, सूरियत्थङ्गमनं ति इमानेत्थ तीणि अङ्गानि।

दुतियसहसेय्यसिक्खापदण्णना निट्ठिता।

---

७. धम्मदेसनासिक्खापदवण्णना

६०-६४॥ सत्तमे घरं नयतीति **घरणी**। घरनायिका। तेनाह "**घरसामिनी**" ति। **सुण्हा** ति सुणिसा। **न यक्खेना** ति आदीनं "अञ्ञत्रा" ति इमिना सम्बन्धो। पुरिसविग्गहं गहेत्वा ठितेन यक्खेन वा पेतेन वा तिरच्छानेन वा सद्धिं ठितायपि देसेतुं न वट्टति। **अक्खराय देसेतीति** एत्थ "छप्पञ्चवाचतो उत्तरि 'इमं पदं भासिस्सामी' ति एकम्पि अक्खरं वत्वा तिट्ठति, आपत्तियेवा' ति वदन्ति।

६६॥ "**एको गाथापादो** ति इदं गाथाबन्धमेव सन्धाय वुत्तं। अञ्ञत्थ पन विभत्तिअन्तपदमेव गहेतब्बं ति वदन्ति। **अट्ठकथं धम्मपदं जातकादिवत्थुं वा** ति इमिनापि पोराणं सङ्गीतिआरुळ्हमेव ःअट्ठकथादि वुत्तं ति वदन्ति। अट्ठकथादिपाळिं ठपेत्वा दमिळादिभासन्तरेन यथारुचि कथेतुं वट्टति। **पदसोधम्मे वुत्तप्पभेदो** ति इमिना

अञ्ञत्थ अनापत्तीति दीपेति । **उट्ठहित्वा पुन निसीदित्वा** ति इरियापथपरिवत्तननयेन[1] B. 12 नानाइरियापथेनपि अनापत्तीति दीपेति । **सब्बं चेपि दीघनिकायं कथेती** ति याव न निट्ठाति, ताव पुनदिवसेपि कथेति ।

दुतियस्स विञ्ञूपुरिसस्स अग्गहणं अकिरिया । मातुगामेन सद्धिं ठितस्स च विञ्ञूपुरिसस्स च उपचारो अनियतेसु वुत्तनयेनेव गहेतब्बो । सेसं उत्तानमेव । वुत्तलक्खणस्स धम्मस्स छन्नं वाचानं उपरि देसना, वुत्तलक्खणो मातुगामो, इरियापथपरिवत्तनाभावो, विञ्ञूपुरिसाभावो, अपञ्हविस्सज्जनाति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि ।

धम्मदेसनासिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

८. भूतारोचनसिक्खापद वण्णना

७७॥ **अट्ठमे अन्तरा** ति परिनिब्बानसमयतो अञ्ञस्मिं काले । अतिकड्ढियमानेनाति "वदथ भन्ते, किं तुम्हेहि अधिगतं "ति एवं निप्पीळियमानेन । अनतिकड्ढियमानेनपि पुच्छिते वा अपुच्छिते वा तथारूपे कारणे सति आरोचेतुं वट्टतियेव । तेनेव अञ्ञतरेन दहरभिक्खुना उपवदितो अञ्ञतरो थेरो "आवुसो उपरिमग्गत्थाय वायामं मा अकासि, खीणासवो तया उपवदितो "ति आह । थेरेन च "अत्थि ते आवुसो इमस्मिं सासने पतिट्ठा" ति वुत्तो दहरभिक्खु" आम भन्ते सोतापन्नो अहं"ति अवोच । "कारको अयं" ति ञत्वापि पटिपत्तिया अमोघभावदस्सनेन समुत्तेजनाय सम्पहंसनाय च अरिया अत्तानं पकासेन्तियेव । **सुतपरियत्तिसीलगुणं** ति सुतगुणं परियत्तिगुणं सीलगुणञ्च । उम्मत्तकस्स इध अवचने कारणं वदन्तेन खित्तचित्तवेदनट्ठानम्पि अवचने कारणं वुत्तमेवाति दट्ठब्बं । इति-सद्देन वा आदिअत्थेन खित्तचित्तवेदनट्टे सङ्गण्हाति । तेनेव वदति **"चित्तक्खेपस्स वा अभावा"** ति । **दिट्ठिसम्पन्नानं** ति मग्गफलदिट्ठिया समन्नागतानं । अरियानमेव हि उम्मत्तकादिभावो नत्थि । झानलाभिनो पन तस्मिं सति झाना परिहायन्ति, तस्मा तेसं अभूतारोचनपच्चया अनापत्ति वत्तब्बा, न भूतारोचनपच्चया । तेनेवाह **"भूतारोचनपच्चया अनापत्ति न वत्तब्बा"** ति ।

पुब्बे अवुत्तेहीति चतुत्थपाराजिके अवुत्तेहि । इदञ्च सिक्खापदं पण्णत्तिB. 13 अजाननवसेन अचित्तकसमुट्ठानं होति । अरिया चेत्थ पण्णतिं जानन्ता वीतिक्कमं न करोन्ति, पुथुज्जना पन पण्णतिं जानित्वापि वीतिक्कमं करोन्ति, ते च सत्थुनो

---

1. इरियापथपरिवत्तनदस्सनेन (स्या.) ।

आणावीतिक्कमचेतनाय बलवअकुसलभावतो झाना परिहयन्तीति दट्ठब्बं, उक्कट्ठपरिच्छेदेन अरियपुग्गले एव सन्धाय **"कुसलाब्याकतचित्तेहि द्विचित्तं"** ति वुत्तं। पण्णतिं अजानन्ता पन झानलाभी पुथुज्जना वत्थुम्हि लोभवसेन अकुसलचित्तेनपि न आरोचेन्तीति नत्थि। इध दुक्खवेदनाय अभावतो "द्विवेदनं" ति इमस्स अनुरूपं कत्वा **द्विचित्तं** ति इदं वुत्तं ति एवं वा एत्थ अधिप्पायो गहेतब्बो। सेसं उत्तानमेव। उत्तरिमनुस्सधम्मस्स भूतता, अनुपसम्पन्नस्स आरोचनं, तङ्खणविजानना, अनञ्ञप्पदेसो ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि।

भूतारोचनसिक्खापद वण्णना निट्ठिता।

---

९. दुट्ठुल्लारोचनसिक्खापदवण्णना

७८॥ नवमे **दुट्ठुल्लसद्दत्थदस्सनत्थं** ति दुट्ठुल्लसद्दस्स अत्थदस्सनत्थं। अत्थे हि दस्सिते सद्दोपि "अयं एतेसु अत्थेसु वत्तती" ति दस्सितोयेव होति। "यं यं दुट्ठुल्लसद्देन अभिधीयति, तं सब्बं दस्सेतुं पाराजिकानि वुत्तानी" ति अयञ्हेत्थ अधिप्पायो। **तत्रायं विचारणा** ति तत्र पाळियं अयं विचारणा, तत्र पाळिअट्ठकथासु वा अयं विचारणा। **तत्थ भवेय्या** ति तत्थ कस्सचि विमति एवं भवेय्य। अनुपसम्पन्नस्स दुट्ठुल्लारोचने विय दुक्कटेन भवितब्बं ति आह **"दुक्कटं आपज्जती"**-ति। **अक्कोसन्तो पि दुक्कटं आपज्जेय्या** ति ओमसवादेन दुक्कटं आपज्जेय्य। अधिप्पायं अजानन्तेनपि अट्ठकथाचरियानं वचनेयेव ठातब्बं ति दीपनत्थं **"अट्ठकथाचरियाव एत्थ पमाणं"** ति वुत्तं। पुनपि अट्ठकथावचनमेव उपपत्तितो दळ्हं कत्वा पतिट्ठपेन्तो **"इमिनापि चेतं"** ति आदिमाह।

८०॥ "अञ्ञत्र भिक्खुसम्मुतिया" ति वुत्तत्ता सम्मुति अत्थीति गहेतब्बाति आह **"इध वुत्तत्तायेवा"** ति आदि।

८२॥ **आदितो पञ्च सिक्खापदानीति** पाणातिपातादीनि पञ्च सिक्खापदानि।" "सेसानीति विकालभोजनादीनि पञ्चा"ति वदन्ति। केचि पन "आदितो पट्ठाय पञ्च सिक्खापदानीति सुक्कविस्सट्ठिआदीनि पञ्चा"ति वदन्ति, तं न गहेतब्बं। पाणातिपातादीनि हि दसेव सिक्खापदानि सामणेरानं पञ्ञत्तानि। वुत्तञ्हेतं– B. 14

> "अथ खो सामणेरानं एतदहोसि 'कति नु खो अम्हाकं सिक्खापदानि, तत्थ च अम्हेहि सिक्खितब्बं' ति। भगवतो एतमत्थं आरोचेसुं। अनुजानामि भिक्खवे सामणेरानं दस सिक्खापदानि, तेसु च सामणेरेहि सिक्खितुं, पाणातिपाता वेरमणी अदिन्नादाना वेरमणी' ति आदि[1]।

---

1. वि ४-११७-पिट्ठे।

तेसं पञ्ञत्तेसुयेव सिक्खापदेसु दुट्ठुल्लादुट्ठुल्लविचारणा कातब्बा, न च सुक्कविस्सट्ठिआदीनि विसुं तेसं पञ्ञत्तानि अत्थीति । अथ भिक्खुनो दुट्ठुल्ल-सङ्खातानि सुक्कविस्सट्ठिआदीनि अनुपसम्पन्नस्स किं नाम होन्तीति आह **"सुक्कविस्सट्ठि......पे०.....अज्झाचारो नामाति वुत्तं"** ति । इमिनापि चेतं सिद्धं "अनुपसम्पन्नस्स सुक्कविस्सट्ठिआदि दुट्ठुल्लं नाम न होती"ति । अज्झाचारो नामा ति हि वदन्तो अनुपसम्पन्नस्स सुक्कविस्सट्ठिआदिकेवलं अज्झाचारो नाम होति, न पन दुट्ठुल्लो नाम अज्झाचारो ति दीपेति ।" अज्झाचारो नामाति च अट्ठकथायं वुत्तत्ता अकत्तब्बरूपत्ता च अनुपसम्पन्नस्स सुक्कविस्सट्ठिआदीनि दण्डकम्मवत्थुपक्खं भजन्ति, तानि च अञ्ञस्स अनुपसम्पन्नस्स अवण्णकामताय आरोचेन्तो भिक्खु दुक्कटं आपज्जती"ति वदन्ति । इध पन **अनुपसम्पन्न**-ग्गहणेन सामणेरसामणेरीसिक्खमानानं गहणं वेदितब्बं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अन्तिमवत्थुं अनज्झापन्नस्स भिक्खुनो सवत्थुको संघादिसेसो, अनुपसम्पन्नस्स आरोचनं, भिक्खुसम्मुतिया अभावोति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

दुट्ठुल्लारोचनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

१०. पथवीखणनसिक्खापद वण्णना

८४-८६॥ **दसमे एकिन्द्रियं ति** "कायिन्द्रियं अत्थी"ति मञ्ञमाना वदन्ति । B. 15 **मुट्ठिप्पमाणा** ति मुट्ठिना सङ्गहेतब्बप्पमाणा । एत्थ किञ्चापि येभूय्यपंसुं अप्पपंसुञ्च पथविं वत्वा उपड्ढपंसुका पथवी न वुत्ता, तथापि पण्णत्तिवज्जसिक्खापदेसु सावसेसपञ्ञत्तियापि सम्भवतो उपड्ढपंसुकायपि पथविया पाचित्तियमेवाति गहेतब्बं । केचि पन "सब्बच्छन्नादीसु उपड्ढे दुक्कटस्स वुत्तत्ता इधापि दुक्कटं युत्तं" ति वदन्ति, तं न युत्तं पाचित्तियवत्थुकञ्च अनापत्तिवत्थुकञ्च दुविधं पथविं ठपेत्वा अञ्ञिस्सा दुक्कटवत्थुकाय ततियाय पथविया अभावतो । द्वेयेव हि पथवियो वुत्ता "जाता च पथवी अजाता च पथवी" ति । तस्मा द्वीसु अञ्ञतराय पथविया भवितब्बं, विनयविनिच्छये च सम्पत्ते गरुकेयेव ठातब्बत्ता न सक्का एत्थ अनापत्तिया भवितुं । सब्बच्छन्नादीसु पन उपड्ढे दुक्कटं युत्तं तत्थ तादिसस्स दुक्कटवत्थुनो सब्भावा ।

"पोक्खरणिं खणा" ति वदति, वट्टतीति "इमस्मिं ओकासे" ति अनियमेत्वा वुत्तत्ता वट्टति ।" **"इमं वल्लिं खणा"** ति वुत्तेपि पथवीखणनं सन्धाय पवत्तवोहारत्ता इमिनाव सिक्खापदेन आपत्ति, न भूतगामपातब्यताय । **कुटेही** ति घटेहि । **तनुककद्दमो** ति

उदकमिस्सककद्दमो। सो च उदकगतिकत्ता वट्टति। **ओमकचातुमासं** ति ऊनचातुमासं। **ओवट्ठं** ति देवेन ओवट्ठं। **अकतपब्भारे** ति अवळञ्जनट्ठानदस्सनत्थं वुत्तं। तादिसे हि वम्मिकस्स सब्भावोति। **मूसिकुक्कुरं** नाम मूसिकाहि खणित्वा बहि कतपंसुरासि। एसेव नयो ति ओमकचातुमासओवट्ठोयेव वट्टतीति अत्थो।

एकदिवसम्पि न वट्टतीति ओवट्ठएकदिवसातिक्कन्तोपि विकोपेतुं न वट्टति। "हेट्ठा भूमिसम्बन्धेपि च गोकण्टके भूमितो छिन्दित्वा उद्धं ठितत्ता[1] अच्चुग्गतमत्थकतो छिन्दित्वा गहेतुं वट्टती" ति वदन्ति। सकट्ठाने अतिट्ठमानं कत्वा पादेहि मद्दित्वा छिन्दित्वा आलोळितकद्दमम्पि गहेतुं वट्टति। **ततो** ति ततो पुराणसेनासनतो। **इट्ठकं गण्हामीति** आदि सुद्धचित्तं सन्धाय वुत्तं। **उदकेनाति** उजुकं आकासतोयेव पतनकउदकेन। "सचे पन अञ्ञत्थ पहरित्वा पतितेन उदकेन तेमितं होति, वट्टती"-ति वदन्ति। **उच्चालेत्वा** ति उक्खिपित्वा। **तेन अपदेसेना** ति तेन लेसेन।

८७-८८॥ **अविसयत्ता अनापत्तीति** एत्थ सचेपि निब्बापेतुं सक्का होति, पठमं सुद्धचित्तेन दिन्नत्ता "दहतू" ति सल्लक्खेत्वापि तिट्ठति, अनापत्ति। **ओवट्ठं छन्नंति** पठमं ओवट्ठं पच्छा छन्नं। सेसं उत्तानमेव। जातपथवी, पथवीसञ्ञिता, खणनखणापनानं अञ्ञतरं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि। B. 16

पथवीखणनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

निट्ठितो मुसावादवग्गो पठमो।

---

1. उग्गतत्ता (स्या.)।

२. भूतगामवग्ग

१. भूतगामसिक्खापदवण्णना

८९॥ सेनासनवग्गस्स पठमे **निग्गहेतुं असक्कोन्तो** ति सन्धारेतुं असक्कोन्तो। इमिना पन वचनेन दारकस्स तत्थ उपनीतभावो तेन च दिट्ठभावो वुत्तोयेवाति दट्ठब्बं। तेन हि भिक्खुना तं रुक्खं छिन्दितुं आरद्धे तत्थ निब्बत्ता एका तरुणपुत्ता देवधीता पुत्तं अङ्केनादाय ठिता तं याचि "मा मे सामि विमानं छिन्दि, न सक्खिस्सामि पुत्तकं आदाय अनावासा विचरितुं" ति। सो "अहं अञ्ञत्थ ईदिसं रुक्खं न लभिस्सामी" ति तस्सा वचनं नादियि। सा "इमम्पि ताव दारकं ओलोकेत्वा ओरमिस्सती" ति पुत्तं रुक्खसाखाय ठपेसि। सो भिक्खु उक्खित्तं फरसुं सन्धारेतुं असक्कोन्तो दारकस्स बाहं छिन्दि। एवञ्च सयितो विमाने सयितो नाम होतीति कत्वा वुत्तं "**रुक्खट्ठकदिब्बविमाने निपन्नस्सा**" ति।

रुक्खट्ठकादिब्बविमाने ति च साखट्ठकविमानं सन्धाय वुत्तं। रुक्खस्स उपरि निब्बत्तञ्हि विमानं रुक्खपटिबद्धत्ता "रुक्खट्ठकविमानं" ति वुच्चति। साखट्ठकविमानं पन सब्बसाखासन्निस्सितं हुत्वा तिट्ठति। तत्थ यं रुक्खट्ठकविमानं होति, तं याव रुक्खस्स मूलमत्तम्पि तिट्ठति, ताव न नस्सति। साखट्ठकविमानं पन साखासु भिज्जमानासु तत्थ तत्थेव भिज्जित्वा सब्बसाखासु भिन्नासु सब्बं भिज्जति, इदम्पि च विमानं साखट्ठकं, तस्मा रुक्खे छिन्ने तं विमानं सब्बसो विनट्ठं, तेनेव सा देवता भगवतो सन्तिका लद्धे अञ्ञस्मिं विमाने वसि। बाहुं **थनमूलेयेव छिन्दी**ति अंसेन B. 17 सद्धिं बाहं छिन्दि। इमिना च रुक्खदेवतानं गत्तानि छिज्जन्ति, न चातुमहाराजिकानं विय अच्छेज्जानीति दट्ठब्बं। **रुक्खधम्मे** ति रुक्खपकतियं, रुक्खसभावे ति अत्थो। रुक्खानं विय छेदनादीसु अकुप्पनञ्हि रुक्खधम्मो नाम।

उप्पतितं ति उप्पन्नं। **भन्तं** ति धावन्तं। **वारये** ति निग्गण्हेय्य। इदं वुत्तं होति-यथा नाम छेको सारथि अतिवेगेन धावन्तं रथं निग्गहेत्वा यथिच्छकं पेसेति, एवं यो पुग्गलो उप्पन्नं कोधं वारये निग्गण्हितुं सक्कोति, तमहं सारथिं ब्रूमि। इतरो पन राजउपराजादीनं रथसारथिजनो रस्मिग्गाहो नाम होति, न उत्तमसारथीति।

दुतियगाथाय पन अयमत्थो-**यो ति**[1] यो यादिसो खत्तियकुला वा पब्बजितो ब्राह्मणकुला वा पब्बजितो नवो वा मज्झिमो वा थेरो वा। उप्पतितं ति उद्धमुद्धं पतितं, गतं पवत्तंति अत्थो, उप्पन्नं ति वुत्तं होति। कोधं ति "अनत्थं मे चरतीति

---

1. सुत्तनिपात-ट्ठ-१-४-११-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

आघातो जायती" ति आदिना[1] नयेन सुत्ते वुत्तानं नवन्नं," अत्थं मे न चरती" ति आदीनञ्च तप्पटिपक्खतो सिद्धानं नवन्नमेवाति अट्ठारसन्नं खाणुकण्टकादिना अट्ठानेन सद्धिं एकूनवीसतिया आघातवत्थूनं अञ्ञतराघातवत्थुसम्भवं आघातं। **विसटं ति** ति वित्थतं। **सप्पविसं ति** सप्पस्स विसं। **इवा ति** ओपम्मवचनं। इ-कारलोपं कत्वा व-इच्चेव वुत्तं। **ओसधेही** ति अगदेहि। इदं वुत्तं होति-यथा विसतिकिच्छको वेज्जो सप्पेन-दट्ठो सब्बं कायं फरित्वा ठितं विसटं सप्पविसं मूलखन्धतचपत्तपुप्फादीनं अञ्ञतरेहि नानाभेसज्जेहि पयोजेत्वा कतेहि वा ओसधेहि खिप्पमेव विनेय्य, एवमेव यो यथावुत्तेन आघातवत्थुना उप्पतितं चित्तसन्तानं ब्यापेत्वा ठितं कोधं विनयनुपायेसु तदङ्गविनयादीसु येन केनचि उपायेन विनेति नाधिवासेति पजहति विनोदेति ब्यन्तिं करोति, सो भिक्खु जहाति ओरपारं। सो एवं कोधं विनेन्तो भिक्खु यस्मा कोधो ततियमग्गेन सब्बसो पहीयति, तस्मा ओरपार-सञ्ञितानि पञ्चोरम्भागियसंयोजनानि जहातीति। अविसेसेन हि **पारं ति** तीरस्स नामं, तस्मा ओरानि च तानि संसारसागरस्स पारभूतानि चाति कत्वा "ओरपारं" ति वुच्चति।

अथ वा यो उप्पतितं विनेति कोधं विसटं सप्पविसंव ओसधेहि, सो ततिय- B. 18 मग्गेन सब्बसो कोधं विनेत्वा अनागामिफले ठितो भिक्खु जहाति ओरपारं। तत्थ **ओरं** ति सकत्तभावो। **पारं** ति परत्तभावो। ओरं वा छ अज्झत्तिकानि आयतनानि, पारं छ बहिरायतनानि। तथा ओरं मनुस्सलोको, पारं देवलोको। ओरं कामधातु, पारं रूपारूपधातु। ओरं कामरूपभवो, पारं अरूपभवो। ओरं अत्तभावो, पारं अत्तभावसुखुपकरणानि[2]। एवमेतस्मिं ओरपारे चतुत्थमग्गेन छन्दरागं पजहन्तो" जहाति ओरपारं" ति वुच्चति। एत्थ च किञ्चापि अनागामिनो कामरागस्स पहीनत्ता इधत्तभावादीसु छन्दरागो एव नत्थि, अपि च खो पनस्स वण्णप्पकासनत्थं सब्बमेतं ओरपारभेदं सङ्गहेत्वा तत्थ छन्दरागप्पहानेन "जहाति ओरपारं" ति वुत्तं।

इदानि तस्सत्थस्स विभावनत्थाय उपमं आह **"उरगो जिण्णमिवत्तचं पुराणं"** ति। तत्थ उरेन गच्छती ति **उरगो**, सप्पस्सेतं अधिवचनं। सो दुविधो कामरूपी च अकामरूपी च। कामरूपी पि दुविधो जलजो थलजो च। जलजो जले एव कामरूपं लभति, न थले **सङ्खपालजातके**[3] सङ्खपालनागराजा विय। थलजो थले एव, न जले। सो जज्जरभावेन जिण्णं, चिरकालताय पुराणञ्चाति सङ्खं गतं तचं जहन्तो चतुब्बिधेन जहति सजातियं ठितो जिगुच्छन्तो निस्साय थामेना ति। सजाति नाम सप्पजाति दीघत्तभावो। उरगा हि पञ्चसु ठानेसु सजातिं नातिवत्तन्ति उपपत्तियं

1. दी-३-२१८, अं ३-२०८-पिट्ठेसु।
2. अत्तभावसुखुमकरणानि (स्या.)
3. खु ६-१६-पिट्ठे जातके।

चुतियं विस्सट्ठनिद्दोक्कमने सजातिया मेथुनपटिसेवने जिण्णतचापनयने चाति । तस्मा यदा तचं जहति, तदा सजातियंयेव ठत्वा जहति । सजातियं ठितोपि च जिगुच्छन्तो जहति । जिगुच्छन्तो नाम यदा उपड्ढट्ठाने मुत्तो होति, उपड्ढट्ठाने अमुत्तो ओलम्बति, तदा नं अट्टीयन्तो जहति, एवं जिगुच्छन्तोपि च दण्डन्तरं वा मूलन्तरं वा पासाणन्तरं वा निस्साय जहति । निस्साय जहन्तोपि च थामं जनेत्वा उस्साहं करित्वा वीरियेन वङ्कं निङ्गुट्ठं कत्वा पस्ससन्तोव फणं करित्वा जहति । एवं जहित्वा येनकामं पक्कमति ।

एवमेव अयम्पि भिक्खु ओरपारं जहितुकामो चतुब्बिधेन जहति सजातियं ठितो जिगुच्छन्तो निस्साय थामेनाति । सजाति नाम भिक्खुनो "अरियाय जातिया जातो B. 19 "ति[1] वचनतो सीलं । तेनेवाह" सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो" ति[2] । एवमेतिस्सं सजातियं ठितो भिक्खु तं सकत्तभावादिभेदं ओरपारं जिण्णपुराणत्तचमिव तं दुक्खं जनेन्तं तत्थ तत्थ अदीनवदस्सनेन जिगुच्छन्तो कल्याणमित्ते निस्साय अधिमत्त-सम्मावायामसङ्खातं थामं जनेत्वा" दिवसं चङ्कमेन निसज्जाय आवरणीयेहि धम्मेहि चित्तं परिसोधेती" ति[3] वुत्तनयेन रत्तिन्दिवं छधा विभजित्वा घटेन्तो वायमन्तो उरगो विय वङ्कं निङ्गुट्ठं पल्लङ्कं आभुजित्वा उरगो विय पस्ससन्तो अयम्पि असिथिलपरक्कमताय वायमन्तो उरगोव फणं करित्वा अयम्पि ञाणविप्फारं जनेत्वा उरगोव तचं ओरपारं जहति, जहित्वा च उरगो विय ओहिततचो येनकामं पक्कमति, अयम्पि ओहितभारो अनुपादिसेसनिब्बानधातुदिसं पक्कमतीति ।

९०॥ **भवन्तीति** इमिना विरुल्हमूले नीलभावं आपज्जित्वा वड्ढमानके तरुणगच्छे दस्सेति । **अहुवुं** ति[4] इमिना पन वड्ढित्वा ठिते महन्ते रुक्खगच्छादिके दस्सेति । **भवन्ती** ति इमस्स विवरणं **"जायन्ति वड्ढन्ती"** ति, **अहुवुं** ति इमस्स **जाता वड्ढिता"** ति । **रासी** ति सुद्धट्ठकधम्मसमूहो । **भूतानं** ति तथालद्धसमञ्ञानं अट्ठधम्मानं । "भूतानं गामो" ति वुत्तेपि अवयवविनिमुत्तस्स समुदायस्स अभावतो भूतसञ्ञिता तेयेव तिणरुक्खलतादयो गय्हन्ति । "भूमियं पतिट्ठहित्वा हरित-भावमापन्ना रुक्खगच्छादयो देवताहि परिग्गय्हन्ति, तस्मा भूतानं निवासट्ठानताय भूतानं गामो" तिपि वदन्ति । **रुक्खादीनं** ति **आदि-सद्देन** ओसधिगच्छलतादयो वेदितब्बो ।

---

1. म. २-३०६-पिट्ठे ।
2. सं. १-११-१६७-पिट्ठेसु ।
3. अं १-११, २-३४९, अभि २-१८५-पिट्ठेसु ।
4. अहुवन्ती ति (स्या.) ।

ननु च रुक्खादयो चित्तरहितताय न जीवा, चित्तरहितता च परिप्फन्दाभावतो छिन्नेपि रुहनतो विसदिसजातिकभावतो[1] चतुयोनिअपरियापन्नतो च वेदितब्बा, वुड्ढि पन पवाळसिलालवणानम्पि[2] विज्जतीति न तेसं जीवभावे[3] कारणं, विसयग्गहणञ्च नेसं परिकप्पनामत्तं सुपनं[4] विय, चिञ्चादीनं,[5] तथा दोहळादयो, तत्थ कस्मा B.20. भूतगामस्स छेदनादिपच्चया पाचित्तियं वुत्तं ति समणसारुप्पतो । तंनिवाससत्तानु-रक्खणतो च । तेनेवाह **"जीवसञ्ञिनो हि मोघपुरिसा मनुस्सा रुक्खस्मिं"** ति आदि ।

९१॥ "मूले जायन्ती"ति आदीसु अत्थो उपरि अत्तना वुच्चमानप्पकारेन सीहळट्ठकथायं वुत्तोति आह **"एवं सन्तेपि.....पे०.....न समेन्ती"** ति । विजात-सद्दो इध वि-सद्दलोपं कत्वा निद्दिट्ठो ति आह **"विजातानी"** ति । विजात-सद्दो च "विजाता इत्थी" ति आदीसु विय पसूतवचनोति आह **"पसूतानी"** ति । पसूति च नामेत्थ निब्बत्तपण्णमूलता ति आह **"निब्बत्तपण्णमूलानी"** ति । इमिना इमं दीपेति "निब्बत्त-पण्णमूलानि बीजानि भूतगामसङ्ख्यमेव गच्छन्ति, तेसु च वत्तमानो बीजजातसद्दो रुळ्हीवसेन रुक्खादीसुपि वत्तती" ति । पुरिमस्मिं अत्थविकप्पे पन बीजेहि जातानं रुक्खलतादीनंयेव भूतगामता वुत्ता ।

तानि दस्सेन्तो ति तानि बीजानि दस्सेन्तो । **मूलबीजं ति** आदीसु मूलमेव बीजं मूलबीजं । सेसेसुपि एसेव नयो । फळुबीजं ति पब्बबीजं । पच्चयन्तरसमवाये सदिसफलुप्पत्तिया विसेसकारणभावतो विरुहनसमत्थे सारफले निरुळ्हो **बीज-सद्दो** । तदत्थसंसिद्धिया मूलादीसुपि केसुचि पवत्ततीति मूलादितो निवत्तनत्थं एकेन बीजसद्देन विसेसेत्वा वुत्तं **"बीजबीजं"** ति "रूपरूपं, दुक्खदुक्खं" ति च यथा । बीजतो **निब्बत्तेन बीजं दस्सितं** ति कारियोपचारेन कारणं दस्सितं ति दीपेति ।

९२॥ **बीजे बीजसञ्ञीति** एत्थ कारणूपचारेन कारियं वुत्तं ति दस्सेन्तो **"तत्थ यथा"** ति आदिमाह । **भूतगामपरिमोचनं कत्वा** ति भूतगामतो मोचेत्वा, वियोजेत्वा ति अत्थो । **यं बीजं भूतगामो नाम होतीति** बीजानि च तानि जातानि चाति वुत्तमत्थं सन्धाय वदति । तत्थ **यं बीजं** ति यं निब्बत्तपण्णमूलं बीजं । **तस्मिं बीजे** ति तस्मिं भूतगामसञ्ञिते बीजे । एत्थ च बीजजात-सद्दस्स विय रुळ्हीवसेन रुक्खादीसु बीज-सद्दस्सपि पवत्ति वेदितब्बा । **यथारुतं ति** यथापाळि ।

यत्थ कत्थचीति मूले अग्गे मज्झे वा । **सञ्चिच्च उक्खिपितुं न वट्टतीति** एत्थ सचे पि सरीरे लग्गभावं जानन्तोव उदकतो उट्ठहति, "तं उद्धरिस्सामी" ति सञ्ञाय

1. विसदिसजातिकाभावतो (क) ।
2. पवाळसिलासुवण्णानम्पि (स्या.) ।
3. जीवाभावे (क) ।
4. सुपिनं (स्या.) ।
5. विञ्ञाणादीनं (स्या.) ।

अभावतो वट्टति । **उप्पाटितानीति** उद्धटानि । **बीजगामे सङ्गहं गच्छन्तीति** भूतगामतो परिमोचितत्ता वुत्तं । **अनन्तक-**ग्गहणेन सासपमत्तिका गहिता । नामञ्हेतं तस्सा B. 21 सेवालजातिया । मूलपण्णानं "असम्पुण्णत्ता" **असम्पुण्णभूतगामो नाम**" ति वुत्तं । **अभूतगाममूलत्ता** ति एत्थ भूतगामो मूलं कारणं एतस्साति भूतगाममूलो, भूतगामस्स वा मूलं कारणं ति भूतगाममूलं । बीजगामो हि नाम भूतगामतो सम्भवति, भूतगामस्स च कारणं होति, अयं पन तादिसो न होतीति "अभूतगाममूलत्ता" ति वुत्तं । तत्रट्ठकत्ता वुत्तं "**सो बीजगामेन सङ्गहितो**" ति । इदञ्च "अभूतगाममूलत्ता" ति एत्थ पठमं वुत्तअत्थसम्भवतो वुत्तं । किञ्चापि हि तालनाळिकेरादीनं खाणु उद्धं अवड्ढनतो भूतगामस्स कारणं न होति, तथापि भूतगामसङ्ख्युपगतनिब्बत्त-पण्णमूलबीजतो[1] सम्भूतत्ता भूतगामतो उप्पन्नो नाम होतीति बीजगामेन सङ्गहं गच्छति ।

"**अङ्कुरे हरिते**" ति वत्वा तमेव विभावेति **नीलपण्णवण्णे जाते**" ति, नीलपण्णस्स वण्णसदिसे वण्णे जातेति अत्थो । "नीलवण्णे जाते" ति वा पाठो गहेतब्बो । **अमूलकभूतगामे सङ्गहं गच्छतीति** नाळिकेरस्स आवेणिकं कत्वा वदति । "पानीयघटादीनं बहि सेवालो उदके अट्ठितत्ता बीजगामानुलोमत्ता च दुक्कटवत्थू" ति वदन्ति । **कण्णकम्पि अब्बोहारिकमेवा** ति नीलवण्णम्पि अब्बोहारिकमेव । **सेलेय्यकं** नाम सिलाय सम्भूता एका सुगन्धजाति । "रुक्खत्तचं विकोपेती ति वुत्तत्ता रुक्खे जातं यं किञ्चि छत्तकं रुक्खत्तचं अविकोपेत्वा मत्थकतो छिन्दित्वा गहेतुं वट्टती"ति वदन्ति । रुक्खतो **मुच्चित्वा तिट्ठतीति** एत्थ "यदिपि किञ्चिमत्तं रुक्खे अल्लीना हुत्वा तिट्ठति, रुक्खतो गय्हमानो पन रुक्खच्छविं न विकोपेति, वट्टती" ति वदन्ति । **अल्लरुक्खतो न वट्टतीति** एत्थापि रुक्खत्तचं अविकोपेत्वा मत्थकतो तच्छेत्वा गहेतुं वट्टतीति वेदितब्बं । **हत्थकुक्कुच्चेना** ति हत्थानं असंयतभावेन, हत्थचापल्लेनाति वुत्तं होति । **पानीयं न वासेतब्बं** ति इदं अत्तनो अत्थाय नामितं सन्धाय वुत्तं । केवलं अनुपसम्पन्नस्स अत्थाय नामिते पन पच्छा ततो लभित्वा न वासेतब्बं ति नत्थि । "**येसं रुक्खानं साखा रुहतीति** वुत्तत्ता येसं साखा न रुहति । तत्थ कप्पियकरणकिच्चं नत्थी" ति वदन्ति ।

B. 22 ९३॥ **पञ्चहि समणकप्पेहीति** पञ्चहि समणवोहारेहि । किञ्चापि हि बीजानं अग्गिना फुट्ठमत्तेन नखादीहि विलिखनमत्तेन च अविरुळ्हीधम्मता न होति, तथापि एवं कतेयेव समणानं कप्पतीति अग्गिपरिजितादयो समणवोहारा नाम जाता, तस्मा तेहि समणवोहारेहि करणभूतेहि फलं परिभुञ्जितुं अनुजानामी ति अधिप्पायो । अबीजनिब्बट्टबीजानि पि समणानं कप्पन्तीति पञ्ञत्तपण्णत्तिभावतो समणवोहारा-

---

1. भूतगामसमूपगतनिब्बत्तपण्णमूलबीजतो (स्या.) ।

इच्चेव सङ्खं गतानि। अथ वा अग्गिपरिजितादीनं पञ्चन्नं कप्पियभावतोयेव पञ्चहि समणकप्पियभावसङ्खातेहि कारणेहि फलं परिभुञ्जितुं अनुजानामीति एवमेत्थ अधिप्पायो वेदितब्बो। **अग्गिपरिजितं ति** आदीसु "परिचितं" ति पि पठन्ति। अबीजं नाम तरुणम्बफलादि। निब्बट्टबीजं नाम अम्बपनसादि, यं बीजं निब्बट्टेत्वा विसुं कत्वा परिभुञ्जितुं सक्का होति। **"कप्पियं" ति वत्वाव कातब्बं ति** यो कप्पियं करोति, तेन कत्तब्बाकारस्सेव वुत्तत्ता भिक्खुना अवुत्तेपि कातुं वट्टतीति न गहेतब्बं। पुन "कप्पियं कारेतब्बं" ति कारापनस्स पठममेव कथितत्ता[1] भिक्खुना "कप्पियं करोही"ति वुत्तेयेव अनुपसम्पन्नेन "कप्पियं" ति वत्वा अग्गिपरिजितादि कातब्बं ति गहेतब्बं। "कप्पियं ति वचनं पन याय कायचि भासाय वत्तुं वट्टती"ति वदन्ति। "कप्पियं ति वत्वाव कातब्बं" ति वचनतो पठमं "कप्पियं" ति वत्वा पच्छा अग्गिआदिना फुसनादि कातब्बं ति वेदितब्बं। "पठमं अग्गिं निक्खिपित्वा नखादिना वा विज्झित्वा तं अनुद्धरित्वाव "कप्पियं ति वत्तुम्पि वट्टती" ति वदन्ति।

एकस्मिं बीजे वा ति आदीसु "एकंयेव कारेमीति अधिप्पाये सतिपि एकाबद्धत्ता सब्बं कतमेव होती" ति वदन्ति। दारुं विज्झतीति एत्थ "जानित्वापि विज्झति वा विज्झापेति वा, वट्टतियेवा" ति वदन्ति। **भत्तसित्थे विज्झतीति** एत्थापि" एसेव नयो। **तं विज्झति, वट्टतीति** रज्जुआदीनं भाजनगतिकत्ता" ति वदन्ति। **मरिचपक्कादीहि मिस्सेत्वा** ति एत्थ भत्तसित्थसम्बन्धवसेन एकाबद्धता वेदितब्बा, न फलानंयेव अञ्ञमञ्ञं सम्बन्धवसेन। **भिन्दापेत्वा कप्पियं कारापेतब्बं** ति बीजतो मुत्तस्स कटाहस्स भाजनगतिकत्ता वुत्तं।

निक्खामेतुं ति तं भिक्खुं निक्खामेतुं। "सचे एतस्स अनुलोमं" ति सेनासनरक्खणत्थाय अनुञ्ञातम्पि पटग्गिदानादिं अत्तनापि कातुं वट्टतीति एत्तकेनेव B. 23 इदम्पि एतस्स अनुलोमं ति एवमधिप्पायो सिया। पट्टग्गिदानं परित्तकरणञ्च अत्तनो परस्स वा सेनासनरक्खणत्थाय वट्टतियेव। तस्मा सचे तस्स सुत्तस्स एतं अनुलोमं सिया, अत्तनो न वट्टति, अञ्ञस्स वट्टतीति अयं विसेसो कुतो लब्भतीति आह "**अत्तनो** न वट्टति.......पे०......न सक्का लद्धुं" ति। सेसमेत्थ उत्तानमेव। भूतगामो, भूतगामसञ्ञिता, विकोपनं वा विकोपापनं वा ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि।

भूतगामसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

1. अधिकतत्ता (स्या)।

२. अञ्ञवादकसिक्खापद वण्णना

९४-९८॥ दुतिये **अञ्ञं वचनं** ति यं चोदकेन चुदितकस्स दोसविभावनवचनं वुत्तं, तं ततो अञ्ञेनेव वचनेन पटिचरति। अथ वा **अञ्ञेनञ्ञं पटिचरतीति** अञ्ञेन कारणेन अञ्ञं कारणं पटिचरतीति एवमेत्थ अत्थो वेदितब्बो, यं चोदकेन चुदितकस्स दोसविभावनकारणं वुत्तं, ततो अञ्ञेन चोदनाय अमूलकभावदीपकेन कारणेन पटिचरतीति वुत्तं होति। **पटिचरतीति** च पटिच्छादनवसेन चरति, पवत्ततीति अत्थो। पटिच्छादनत्थो एव वा चरति-सद्दो अनेकत्थत्ता धातूनं। तेनाह **"पटिच्छादेती" ति। को आपन्नो** ति आदिना पाळियं चोदनं अविस्सज्जेत्वा विक्खेपापज्जनवसेन अञ्ञेन अञ्ञं पटिचरणं दस्सितं। अपरम्पि पन चोदनं विस्सज्जेत्वा बहिद्धा कथाअपनामवसेन पवत्तं पाळिमुत्तकं अञ्ञेनञ्ञं पटिचरणं वेदितब्बं। **"इत्थन्नामं आपत्तिं आपन्नोसी"** ति पुट्ठो "पाटलिपुत्तं गतोम्ही" ति वत्वा पुन "न तव पाटलिपुत्तगमनं पुच्छाम, आपत्तिं पुच्छामा "ति वुत्ते" ततो राजगहं गतोम्ही" ति वत्वा "राजगहं वा याहि ब्राह्मणगहं वा, आपत्तिं आपन्नोसी" ति वुत्ते "तत्थ मे सूकरमंसं लद्धं" ति आदीनि वत्वाव कथं बहिद्धा विक्खिपन्तोपि हि "अञ्ञेनञ्ञं पटिचरति" च्चेव सङ्खं गच्छति।

यदेतं अञ्ञेन अञ्ञं पटिचरणवसेन पवत्तवचनं, तदेव पुच्छितमत्थं ठपेत्वा अञ्ञं वदतीति **अञ्ञवादकं** ति आह **"अञ्ञेनञ्ञं पटिचरणस्सेतं नामं"** ति। **तुण्हीभूतस्सेतं नामं** ति तुण्हीभावस्सेतं नामं, अयमेव वा पाठो। **अञ्ञवादकं आरोपेतूति** अञ्ञ-B. 24 वादककम्मं आरोपेतु, अञ्ञवादकत्तं वा इदानि करियमानेन कम्मेन आरोपेतूति अत्थो। **विहेसकं आरोपेतू** ति एत्थापि विहेसककम्मं विहेसकभावं वा आरोपेतूति एवमत्थो दट्ठब्बो।

अनारोपिते अञ्ञवादके वुत्तदुक्कटं पाळियं आगतअञ्ञेनञ्ञंपटिचरणवसेन युज्जति। अट्ठकथायं आगतेन पन पाळिमुत्तकअञ्ञेनञ्ञंपटिचरणवसेन अनारोपिते अञ्ञवादके मुसावादेन पाचित्तियं, आरोपिते इमिनाव पाचित्तियं ति वेदितब्बं। केचि पन "आरोपिते अञ्ञवादके मुसावादेन इमिना च पाचित्तियद्वयं होती" ति वदन्ति, तं वीमंसित्वा गहेतब्बं। या सा आदिकम्मिकस्स अनापत्ति वुत्ता, सापि पाळियं आगतअञ्ञेनञ्ञंपटिचरणवसेन वुत्ताति दट्ठब्बा, इमिना सिक्खापदेन अनापत्ति-दस्सनत्थं वा। सेसं उत्तानमेव। धम्मकम्मेन आरोपितता, आपत्तिया वा वत्थुना वा अनुयुञ्जियमानता, छादेतुकामताय अञ्ञेनञ्ञं पटिचरणं वा तुण्हीभावो वा ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि।

अञ्ञवादकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता

---

३. उज्झापनकसिक्खापदवण्णना

१०३॥ ततिये धातुपाठे झे-सद्दो चिन्तायं पठितो ति आह "लामकतो वा चिन्तापेन्ती" ति आदि । अयमेव च अनेकत्थत्ता धातूनं ओलोकनत्थोपि होतीति दट्ठब्बं । "अक्खराय वाचेती" ति आदीसु[1] विय "छन्दाया" ति लिङ्गविपल्लासवसेन वुत्तं ति आह **"छन्देना"** ति ।

१०५॥ **येन वचनेनाति** येन "छन्दाय इत्थन्नामो इदं नाम करोती"ति आदिवचनेन । **येन च खिय्यन्तीति** येन "छन्दाय इत्थन्नामो" ति आदिवचनेन तत्थ तत्थ भिक्खूनं सवनूपचारे ठत्वा अवण्णं पकासेन्ति ।

१०६॥ अञ्ञं **अनुपसम्पन्नं उज्झापेतीति** अञ्ञेन अनुपसम्पन्नेन उज्झापेति । **तस्स वा तं सन्तिके खिय्यतीति** तस्स अनुपसम्पन्नस्स सन्तिके तं संघेन सम्मतं उपसम्पन्नं खिय्यति, अवण्णं वदन्तो वा पकासेति । **अनुपसम्पन्नं संघेन सम्मतं** ति एत्थ सम्मतपुब्बो सम्मतोति वुत्तो । तेनाह "किञ्चापी" ति आदि । यस्मा उज्झापनं खिय्यनञ्च मुसावादवसेनेव पवत्तं, तस्मा आदिकम्मिकस्स अनापत्तीति पाचित्तियट्ठाने दुक्कटट्ठाने च इमिनाव अनापत्तिदस्सनत्थं वुत्तं ति गहेतब्बं । एवञ्च कत्वा उज्झापेन्तस्स खिय्यन्तस्स च एकक्खणे द्वे द्वे आपत्तियो होन्तीति आपन्नं । अथ वा ईदिसं सिक्खापदं मुसावादतो पठमं पञ्ञत्तं ति गहेतब्बं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । धम्मकम्मेन सम्मतता, उपसम्पन्नता, अगतिगमनाभावो, तस्स अवण्णकामता, यस्स सन्तिके वदति, तस्स उपसम्पन्नता, उज्झापनं वा खिय्यनं वा ति इमानि पनेत्थ छ अङ्गानि । B. 25

उज्झापनकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

४. पठमसेनासनसिक्खापदवण्णना

१०८-११०॥ चतुत्थे **हिमवस्सेना** ति हिममेव वुत्तं । **अपञ्ञाते** ति अप्पतीते, अप्पसिद्धेति अत्थो । "मण्डपे वा रुक्खमूले वा ति वचनतो विवटङ्गणेपि निक्खिपितुं वट्टती" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **गोचरप्पसुता** ति गोचरट्ठानं पटिपन्ना । "अट्ठ मासे" ति इमिना वस्सानं चातुमासं चेपि देवो न वस्सति, पटिक्खित्तमेवाति आह **"अट्ठमासेति वचनतो......पे०........निक्खिपितुं न वट्टतियेवा "**ति । तत्थ **चत्तारो मासेति** वस्सानस्स चत्तारो मासे । **अवस्सिकसङ्केते** ति इमिना अनुञ्ञातेपि अट्ठ मासे यत्थ

---

1. वि. २-२६ पिट्ठे ।

हेमन्ते देवो वस्सति, तत्थ अपरेपि चत्तारो मासा पटिक्खित्ताति आह **"अवस्सिकसङ्केतेति वचनतो"** ति आदि । इमिना इमं दीपेति "यस्मिं देसे हेमन्ते देवो वस्सति, तत्थ अट्ठ मासे पटिक्खिपित्वा चत्तारो मासा अनुञ्ञाता । यत्थ पन वस्सानेयेव वस्सति, तत्थ चत्तारो मासे पटिक्खिपित्वा अट्ठ मासा अनुञ्ञाता" ति ।

इमिनाव नयेन मज्झिमपदेसे यत्थ हेमन्ते हिमवस्सं वस्सति, तत्थापि अट्ठेव मासा पटिक्खित्ताति वेदितब्बा । तस्मा वस्सानकाले पकतिअज्झोकासे ओवस्सकमण्डपे रुक्खमूले च सन्थरितुं न वट्टति, हेमन्तकाले पकतिअज्झोकासे ओवस्सक-B.26 मण्डपादीसुपि वट्टति । तञ्च खो यत्थ हिमवस्सेन सेनासनं न तेमति, गिम्हकालेपि पकतिअज्झोकासादीसु वट्टतियेव, तञ्च खो अकालमेघादस्सने, काकादीनं निबद्धवासरुक्खमूले पन कदाचिपि न वट्टतीति एवमेत्थ विनिच्छयो वेदितब्बो ।

इमञ्च पन अत्थविसेसं गहेत्वा भगवता पठममेव सिक्खापदं पञ्ञत्तं ति विसुं अनुपञ्ञत्ति न वुत्ता । तेनेव हि **मातिकाट्ठकथायं**[1] वुत्तं "इति यत्थ च यदा च सन्थरितुं न वट्टति, तं सब्बमिध अज्झोकाससङ्खमेव गतं" ति । अथ वा अविसेसेन अज्झोकासे सन्थरणसन्थरापनानि पटिक्खिपित्वा "ईदिसे काले ईदिसे च पदेसे ठपेथा" ति अनुजाननमत्तेनेव अलं ति न सिक्खापदे विसुं अनुपञ्ञत्ति उद्धटाति वेदितब्बा । **परिवारे**[2] पन इमस्सेव सिक्खापदस्स अनुरूपवसेन पञ्ञत्तत्ता "एका अनुपञ्ञत्ती"ति वुत्तं ।

नववायिमो सीघं न नस्सतीति आह **"नववायिमो वा"** ति । **ओनद्धको** ति चम्मेन ओनद्धो । **उक्कट्ठअब्भोकासिको** ति इदं तस्स परिवितक्कदस्सनमत्तं, उक्कट्ठअब्भो-कासिकस्स पन चीवरकुटि न वट्टतीति नत्थि । **कायानुगतिकत्ता** ति भिक्खुनो तत्थेव सन्निहितभावं सन्धाय वुत्तं । इमिना च तस्मिं येव काले अनापत्ति वुत्ता, चीवरकुटितो निक्खमित्वा पन अञ्ञत्थ गच्छन्तस्स पिण्डाय पविसन्तस्सापि आपत्तियेव । "यस्मा पन दायकेहि दानकालेयेव सहस्सग्घनकम्पि कम्बलं 'पादपुञ्छनिं कत्वा परिभुञ्जथा" ति दिन्नं तथेव परिभुञ्जितुं वट्टति, तस्मा "इमं मञ्चपीठादि-सेनासनं अब्भोकासेपि यथासुखं परिभुञ्जथा" ति दायकेहि दिन्नं चे, सब्बस्मिम्पि काले अब्भोकासे निक्खिपितुं वट्टती" ति वदन्ति । **पेसेत्वा गन्तब्बं** ति एत्थ "यो भिक्खु इमं ठानं आगन्त्वा वसति, तस्स देथा" ति वत्वा पेसेतब्बं ।

वलाहकानं अनुट्ठितभावं सल्लक्खेत्वा ति इमिना च गिम्हानेपि मेघे उट्ठिते मञ्चपीठादिं यंकिञ्चि सेनासनं अज्झोकासे निक्खिपितुं न वट्टतीति दीपितं ति वेदितब्बं । "**पादट्ठानाभिमुखा** ति निसीदन्तानं पादपतनट्ठानाभिमुखं" ति केचि ।

---

1. कङ्खा-ट्ठ २०१-पिट्ठे ।
2. वि. ५-२४-पिट्ठे ।

"सम्मज्जन्तस्स पादट्ठानाभिमुखं" ति अपरे । "बहि बालुकाय अगमननिमित्तं पादट्ठानाभिमुखा वालिका हरितब्बाति वुत्तं" ति एके । **कचवरं हत्थेहि गहेत्वा बहि** B. 27 **छड्डेतब्बं** ति इमिना कचवरं छड्डेस्सामीति वालिका न छड्डेतब्बाति दीपेति ।

१११॥ **अन्तो संवेठेत्वा बद्धं** ति एरकपत्तादीहि वेणिं कत्वा ताय वेणिया उभोसु पस्सेसु वित्थतट्ठानेसु बहुं वेठेत्वा ततो पट्ठाय याव मज्झट्ठानं, ताव अन्तो आकड्ढनवसेन वेठेत्वा मज्झे सङ्खिपित्वा तिरियं तत्थ तत्थ बन्धित्वा कतं । **कप्पं लभित्वा** ति गच्छा ति वुत्तवचनेन कप्पं लभित्वा । थेरस्स हि आणत्तिया गच्छन्तस्स अनापत्ति । **पुरिमनयेनेवा ति** "निसीदित्वा सयं गच्छन्तो" ति आदिना पुब्बे वुत्तनयेनेव । **अञ्ञत्थ गच्छतीति** तं मग्गं अतिक्कमित्वा अञ्ञत्थ गच्छति । लेड्डुपातुपचारतो बहि ठितत्ता **"पादुद्धारेन कारेतब्बो"** ति वुत्तं, अञ्ञत्थ गच्छन्तस्स पठमपादुद्धारे दुक्कटं, दुतियपादुद्धारे पाचित्तियं ति अत्थो । **पाकतिकं अकत्वा** ति अप्पटिसामेत्वा । **अन्तरसन्निपाते** ति अन्तरन्तरा सन्निपाते ।

आवासिकानंयेव पलिबोधो ति एत्थ आगन्तुकेहि आगन्त्वा किञ्चि अवत्वा तत्थ निसिन्नेपि आवासिकानंयेव पलिबोधो ति अधिप्पायो । **महापच्चरिवादे** पन "अञ्ञेसु आगन्त्वा निसिन्नेसू" ति इदं अम्हाकं ति वत्वा वा अवत्वा वा निसिन्नेसूति अधिप्पायो । **महाअट्ठकथावादे** "आपत्ती" ति पाचित्तियमेव वुत्तं । **महापच्चरियं** पन सन्थरणसन्थरापने सति पाचित्तियेन भवितब्बं ति अनाणत्तिया पञ्ञत्तत्ता दुक्कटं वुत्तं । "इदं उस्सारकस्स, इदं धम्मकथिकस्सा" ति विसुं पञ्ञत्तत्ता अनाणत्तिया पञ्ञत्तेपि पाचित्तियेनेव भवितब्बं ति अधिप्पायेन "तस्मिं आगन्त्वा निसिन्ने तस्स पलिबोधो" ति वुत्तं । केचि पन वदन्ति अनाणत्तिया पञ्ञत्ते पि धम्मकथिकस्स अनुट्ठापनीयत्ता पाचित्तियेन भवितब्बं, आगन्तुकस्स पन पच्छा आगतेहि वुड्ढतरेहि उट्ठापेतब्बत्ता दुक्कटं वुतं" ति ।

११२॥ **भूमियं अत्थरितब्बा** ति चिमिलिकाय[1] सति तस्सा उपरि, असति सुद्धभूमियं अत्थरितब्बा । **सीहधम्मादीनं परिहरणेयेव पटिक्खेपो वेदितब्बो** ति इमिना–

"न भिक्खवे महाचम्मानि धारेतब्बानि सीहचम्मं ब्यग्घचम्मं दीपिचम्मं, यो B. 28 धारेय्य, आपत्ति दुक्कटस्सा" ति–

एवं वुत्ताय **खन्धकपाळिया**[2] अधिप्पायं विभावेति । इदं वुत्तं होति–"अन्तोपि मञ्चे पञ्ञत्तानि होन्ति, बहिपि मञ्चे पञ्ञत्तानि होन्ती" ति इमस्मिं वत्थुस्मिं[3] सिक्खापदस्स पञ्ञत्तत्ता मञ्चपीठेसु अत्थरित्वा परिभोगोयेव पटिक्खित्तो,

---

1. विलिमिकाय (स्या.) ।
2. वि. ३-२८१-पिट्ठे ।
3. वि. ३-२८१ ।

भूमत्थरणवसेन परिभोगो पन अप्पटिक्खित्तोति । यदि एवं "परिहरणेयेव पटिक्खेपो" ति इदं कस्मा वुत्तं ति ? यथा "अनुजानामि भिक्खवे सब्बं पासादपरिभोगं" ति[1] वचनतो पुग्गलिकेपि सेनासने सेनासनपरिभोगवसेन नियमितं सुवण्णघटादिकं परिभुञ्जितुं वट्टमानम्पि केवलं अत्तनो सन्तकं कत्वा परिभुञ्जितुं न वट्टति, एवमिदं भूमत्थरणवसेन परिभुञ्जियमानम्पि अत्तनो सन्तकं कत्वा तं तं विहारं हरित्वा परिभुञ्जितुं न वट्टतीति दस्सनत्थं "परिहरणेयेव पटिक्खेपो वेदितब्बो" ति वुत्तं । **दारुमयपीठं** ति फलकमयमेव पीठं वुत्तं । पादकथलिकं ति अधोतपादट्ठपनकं । **अज्झोकासे रजनं पचित्वा......पे०......पटिसामेतब्बं** ति एत्थ थेवे[2] असति रजनकम्मे निट्ठिते पटिसामेतब्बं ।

११३॥ "**भिक्खु वा सामणेरो वा आरामिको वा लज्जी होतीति** वुत्तत्ता अलज्जिं आपुच्छित्वा गन्तुं न वट्टती"ति वदन्ति । **ओतापेन्तो गच्छतीति** एत्थ "किञ्चापि 'एत्तकं दूरं गन्तब्बं' ति परिच्छेदो नत्थि, तथापि लेड्डुपातं अतिक्कम्म नातिदूरं गन्तब्बं" ति वदन्ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । मञ्चादीनं संघिकता, वुत्तलक्खणे देसे सन्थरणं वा सन्थरापनं वा, अपलिबुद्धता, आपदाय अभावो, लेड्डुपातातिक्कमोति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि ।

मातिकाट्ठकथायं[3] पन अनापुच्छं वा गच्छेय्या ति एत्थ "यो भिक्खु वा सामणेरो वा आरामिको वा लज्जी होति, अत्तनो पलिबोधं विय मञ्ञति, तथारूपं अनापुच्छित्वा तं सेनासनं तस्स अनिय्यातेत्वा निरपेक्खो गच्छति, थाममज्झिमस्स पुरिसस्स लेड्डुपातं अतिक्कमेय्य, एकेन पादेन लेड्डुपातातिक्कमे दुक्कटं दुतियपादातिक्कमे B. 29 पाचित्तियं" ति वत्वा अङ्गेसुपि निरपेक्खताय सद्धिं छ अङ्गानि वुत्तानि । पाळियं पन अट्ठकथायञ्च "निरपेक्खो गच्छती" ति अयंविसेसो न दिस्सति । "ओतापेन्तो गच्छती" ति च ओतापनविसये एव सापेक्खगमने अनापत्ति वुत्ता । यदि अञ्ञत्थापि सापेक्खगमने अनापत्ति सिया, "अनापत्ति सापेक्खो गच्छती" ति अविसेसेन वत्तब्बं भवेय्य, तस्मा वीमंसित्वा युत्ततरं गहेतब्बं ति ।

पठमसेनासनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

1. वि. ४-३२०-पिट्ठे ।
2. देवे-(स्या, क) ।
3. कङ्खा-ट्ठ. २०१-पिट्ठे ।

५. दुतियसेनासनसिक्खापदवण्णना

११६॥ दुतियसेनासनसिक्खापदे **एत्तकमेव वुत्तं** ति अट्ठकथासु वुत्तं। "इदञ्च अट्ठकथासु तथावुत्तभावदस्सनत्थं वुत्तं, अञ्ञम्पि तादिसं मञ्चपीठेसु अत्थरितं पच्चत्थरणमेवा" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। **मातिकाट्ठकथायं**[1] पन पच्चत्थरणं नाम पावारो कोजवो ति एत्तकमेवा" ति नियमेत्वा वुत्तं, तस्मा गण्ठिपदेसु वुत्तं इमिना न समेति, वीमंसित्वा गहेतब्बं। **सेनासनतो** ति सब्बपच्छिमसेनासनतो। **यो कोचीति** तस्स ञातको वा अञ्ञातको वा यो कोचि।

११७॥ **परिवेणं** ति एकेकस्स विहारस्स परिक्खेपब्भन्तरं। कुरुन्दट्ठकथायं वुत्तमेवत्थं सविसेसं कत्वा दस्सेतुं **"किञ्चापि वुत्तो"** ति आदि आरद्धं। "अपरिच्छन्ने मण्डपे" ति विसुं योजेतब्बं। तेनेव **मातिकाट्ठकथायं** "अपरिच्छन्नमण्डपे वा परिच्छन्ने वापि बहूनं सन्निपातभूते" ति वुत्तं। भोजनसालायम्पि अयं विसेसो लब्भतियेव। **वत्तब्बं नत्थीति** विसेसेत्वा किञ्चि वत्तब्बं नत्थि। **पलुज्जतीति** विनस्सति। **नस्सेय्या–** ति चोरादीहि विनस्सेय्य।

११८॥ येन मञ्चं वा पीठं वा विनन्ति, तं **मञ्चपीठकवानं**। **सिलुच्चयलेणं** ति सिलुच्चये लेणं, पब्बतगुहा ति अत्थो। "सेनासनं उपचिकाहि खायितं" ति इमस्मिं वत्थुस्मिं पञ्ञत्तत्ता वत्थुअनुरूपवसेन अट्ठकथायं उपचिकासङ्काय अभावे अनापत्ति वुत्ता। **वत्तक्खन्धके** गमिकवत्तं पञ्ञपेन्तेन "सेनासनं आपुच्छितब्बं" ति वुत्तत्ता B. 30 केवलं इतिकत्तब्बाकारमत्तदस्सनत्थं **"आपुच्छनं पन वत्तं"** ति वुत्तं, न पन वत्तभेदेन दुक्कटंति दस्सनत्थं। तेनेव **अन्धकट्ठकथायं** "सेनासनं आपुच्छितब्बं" ति एत्थ "यं पासाणपिट्ठियं वा पासाणत्थम्भेसु वा कतसेनासनं यत्थ उपचिका नारोहन्ति, तं अनापुच्छन्तस्सपि अनापत्ती" ति वक्खति, तस्मा यं वुत्तं गण्ठिपदे "तादिसे सेनासने अनापुच्छा गन्छन्तस्स पाचित्तियं नत्थि, गमिकवत्तवसेन पन अनापुच्छा गच्छतो वत्तभेदो होति, तस्मा दुक्कटं आपज्जती" ति, तं न गहेतब्बं।

पच्छिमस्स आभोगेन मुत्ति नत्थीति तस्स पच्छतो गच्छन्तस्स अञ्ञस्स अभावतो वुत्तं। **एकं वा पेसेत्वा आपुच्छितब्बं ति** एत्थ गमनचित्तस्स उप्पन्नट्ठानतो अनापुच्छित्वा गच्छतो दुतियपादुद्धारे पाचित्तियं। किञ्चापि मञ्चं वा पीठं वा अज्झोकासे निक्खिपित्वा गच्छन्तस्स इध विसुं आपत्ति न वुत्ता, तथापि अकाले अज्झोकासे मञ्चपीठानि पञ्ञपेत्वा गच्छन्तस्स लेड्डुपातातिक्कमे पुरिमसिक्खापदेन पाचित्तियं, परिक्खेपातिक्कमे इमिना दुक्कटं ति वेदितब्बं। "मण्डपे वा रुक्खमूले वा" ति इमिना अज्झोकासोपि सङ्गहितोयेवाति तत्थापि दुक्कटं इध वुत्तमेवाति दट्ठब्बं। सेय्यं पन

---

1. कङ्खा-ट्ठ. २०३ पिट्ठे।

अज्झोकासे सन्थरित्वा गच्छन्तस्स उभयेनपि दुक्कटमेव । "संघिके विहारे संघिकंयेव सेय्यं सन्थरित्वा पक्कमन्तस्स पाचित्तियं वुत्तं ति उभोसु एकेकस्मिं संघिके दुक्कटं" ति वदन्ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । वुत्तलक्खणसेय्या, तस्सा संघिकता, वुत्तलक्खणे विहारे सन्थरणं वा सन्थरापनं वा, अपलिबुद्धता, आपदाय अभावो, अनपेक्खस्स दिसापक्कमनं, उपचारसीमातिक्कमो ति इमानि पनेत्थ सत्त अङ्गानि ।

दुतियसेनासनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

६. अनुपखज्जसिक्खापदवण्णना

११९-१२१॥ छट्ठे **अनुपविसित्वा** ति समीपं पविसित्वा । **बहूपकारतं गुणविसिट्ठ-तञ्च सल्लक्खेन्तो** ति भण्डागारिकस्स बहूपकारतं धम्मकथिकादीनं गुणविसिट्ठतञ्च सल्लक्खेन्तो । **समन्ता दियड्ढो हत्थो** ति मज्झे पञ्ञत्तमञ्चपीठं सन्धाय वुत्तं ।

B. 31 १२२॥ **उपचारं ठपेत्वा** ति वुत्तलक्खणं उपचारं ठपेत्वा । **एकविहारे** ति एकस्मिं सेनासने । **एकपरिवेणे ति** तस्स विहारस्स परिक्खेपब्भन्तरे । "गिलानो पविसतीति आदीसु अनापत्तिकारणसब्भावतो गिलानादिताय पविसिस्सामीति उपचारं पविसन्तस्स सतिपि सम्बाधेतुकामताय अनापत्ति वुत्तायेवा" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । एवञ्च सति अगिलानादिभावोपि विसुं अङ्गेसु वत्तब्बो सिया, **मातिकाट्ठकथाय**[1] पन "संघि-कविहारता, अनुट्ठापनीयभावजाननं, सम्बाधेतुकामता, उपचारे निसीदनं वा निपज्जनं वाति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानी" ति एत्तकमेव वुत्तं, तस्मा वीमंसितब्बं।

अनुपखज्जसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

७. निक्कड्ढनसिक्खापद वण्णना

१२६॥ सत्तमे **कोट्ठकानीति** द्वारकोट्ठकानि । "निक्खमा ति वचनं सुत्वापि अत्तनो रुचिया निक्खमति, अनापत्ती" ति वदन्ति ।

१२८॥ **अलज्जिं** निक्कड्ढतीति आदीसु पठमं अलज्जीआदिभावेन निक्कड्ढिस्सा-मीति चिन्तेत्वा निक्कड्ढन्तस्स चित्तस्स लहुपरिवत्तिताय कोपे उप्पन्नेपि अनापत्ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । संघिकविहारो, उपसम्पन्नस्स भण्डनकारकभावादिविनिमुत्तता, कोपेन निक्कड्ढनं वा निक्कड्ढापनं वाति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

निक्कड्ढनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

1. कङ्खा-ट्ठ-२०४-पिट्ठे ।

८. वेहासकुटिसिक्खापदवण्णना

१२९-१३१॥ अट्ठमे उपरिमतले पदरानं असन्थरितत्ता **"उपरिअच्छन्नतलाया"** ति वुत्तं। **पुब्बे वुत्तनयेनेवा** ति अनुपखज्जसिक्खापदे वुत्तनयेनेव। सेसं सुविञ्ञेय्यमेव। संघिको विहारो, असीसघट्टा वेहासकुटि, हेट्ठा सपरिभोगता, अपटाणिदिन्ने आहच्च- B. 32 पादके निसीदनं वा निपज्जनं वाति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि।

वेहासकुटिसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

९. महल्लकविहारसिक्खापदवण्णना

१३५॥ नवमे "महल्लको नाम विहारो ससामिको" ति वुत्तत्ता सञ्ञाचिकाय कुटिया अनापत्ति। "अड्ढतेय्यहत्थम्पी" ति उक्कट्ठपरिच्छेदेन वुत्तवचनं पाळिया समेतीति आह **"तं सुवुत्तं"** ति। "पाळियं अट्ठकथायञ्च उक्कट्ठपरिच्छेदेन अड्ढतेय्य- हत्थप्पमाणस्स ओकासस्स दस्सितत्ता कवाटं अड्ढतेय्यहत्थवित्थारतो ऊनकं वा होतु अधिकं वा, अड्ढतेय्यहत्थप्पमाणंयेव ओकासो" ति वदन्ति।

यस्स वेमज्झे ति यस्स विहारस्स वेमज्झे। सा **अपरिपूरउपचारापि होतीति** विवरियमानं कवाटं यं भित्तिं आहनति, सा समन्ता कवाटवित्थारप्पमाण- उपचाररहितापि होतीति अत्थो। आलोकं सन्धेति पिधेतीति **आलोकसन्धि**। "पुनप्पुनं छादापेसि, पुनप्पुनं लिम्पापेसीति इमस्मिं वत्थुस्मिं उप्पन्नदोसेन सिक्खापदस्स पञ्ञत्तत्ता लेपं अनुजानन्तेन च द्वारबन्धस्स समन्ता अड्ढतेय्यहत्थप्पमाणेयेव पदेसे पुनप्पुनं लेपस्स अनुञ्ञातत्ता ततो अञ्ञत्थ पुनप्पुनं लिम्पेन्तस्स वा लिम्पापेन्तस्स वा भित्तियं मत्तिकाय कत्तब्बकिच्चं निट्ठापेत्वा पुन चतुत्थलेपे दिन्ने पाचित्तियेन भवितब्बं" ति वदन्ति। **गण्ठिपदेसु** पन तीसुपि "पुनप्पुनं लेपदानस्स वुत्तप्पमाणतो अञ्ञत्थ पटिक्खित्तमत्तं ठपेत्वा पाचित्तियस्स अवुत्तत्ता दुक्कटं अनुरूपं" ति वुत्तं।

अधिट्ठातब्बं ति संविधातब्बं। **अप्पहरिते** ति एत्थ अप्प-सद्दो "अप्पिच्छो" ति आदीसु विय अभावत्थोति आह **"अहरिते"** ति। **पतनोकासो** ति पतनोकासत्ता तत्र ठितस्स भिक्खुनो उपरि पतेय्याति अधिप्पायो। **सचे हरिते ठितो अधिट्ठेती, आपत्ति दुक्कटस्सा** ति वचनेन इममत्थं दीपेति-सचे विहारस्स समन्ता वुत्तप्पमाणे परिच्छेदे पुब्बण्णादीनि न सन्ति, तत्थ विहारो कारेतब्बो। यत्थ पन सन्ति, तत्थ कारापेन्तस्स दुक्कटं ति।

B. 33 १३६॥ एकेकं मग्गं उजुकमेव उट्ठपेत्वा[1] छादनं मग्गेन छादनं नाम होतीति दस्सेतुं **"मग्गेन छादेन्तस्सा"** ति वुत्तं । इमिना पन नयेन सब्बस्मिं विहारे एकवारं छादिते तं छदनं एकमग्गं ति गहेत्वा **"द्वे मग्गे** ति आदि वुत्तं । "परियायेन छादनेपि इमिनाव नयेन योजेतब्बं" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं, तं पुनप्पुनं छादापेसी "ति इमाय पाळिया "सब्बम्पि चेतं छदनं छादनूपरि वेदितब्बं" ति इमिना अट्ठकथावचनेन च समेति, तस्मा **द्वे मग्गे अधिट्ठहित्वा ततियाय मग्गं आणापेत्वा पक्कमितब्बं** ति एत्थ द्वे छदनानि अधिट्ठहित्वा ततियं छदनं "एवं छादेही" ति आणापेत्वा पक्कमितब्बं ति एवमत्थो गहेतब्बो ।

केचि पन "पठमं ताव एकवारं अपरिसेसं छादेत्वा पुन छदनदण्डके बन्धित्वा दुतियवारं तथेव छादेतब्बं, ततिवारचतुत्थवारे सम्पत्ते द्वे मग्गे अधिट्ठहित्वा आणापेत्वा पक्कमितब्बं" ति वदन्ति । अपरे पन "पठमवारेयेव तयोपि मग्गे अधिट्ठातुं वट्टति, चतुत्थतो पट्ठाय आपत्ति पाचित्तियं" ति वदन्ति । चदुभयम्पि पाळिया अट्ठकथाय च न समेति । **ततियाय मग्गं ति** एत्थ ततियाया ति उपयोगत्थे सम्पदानवचनं । ततियं मग्गं ति अत्थो । **तिण्णं मग्गानं** ति मग्गवसेन छादितानं तिण्णं छदनानं । **तिण्णं परियायानं** ति एत्थापि एसेव नयो । **चतुत्थे मग्गे वा परियाये वा ति** च तथा छादेन्तानं चतुत्थं छादनमेव वुत्तं । सेसं उत्तानमेव । महल्लकविहारता, अत्तनो वासागारता, उत्तरि अधिट्ठानं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

महल्लकविहारसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

१०. सप्पाणकसिक्खापदवण्णना

१४०॥ दसमे इमस्स सिक्खापदस्स "सिञ्चेय्य वा सिञ्चापेय्य वा" ति बाहिरपरिभोगवसेन पठमं पञ्ञत्तत्ता "सप्पाणकं उदकं परिभुञ्जेय्या" ति सिक्खापदं अत्तनो नहानपानादिपरिभोगवसेन पञ्ञत्तं ति वेदितब्बं । तस्मिं वा पठमं पञ्ञत्तेपि 34 अत्तनो परिभोगवसेनेव पञ्ञत्तत्ता पुन इमं सिक्खापदं बाहिरपरिभोगवसेनेव पञ्ञत्तं ति गहेतब्बं । सप्पाणकसञ्ञिस्स "परिभोगेन पाणका मरिस्सन्ती" ति पुब्बभागे

1. उपट्ठपेत्वा (स्या.) ।

जानन्तस्सपि सिञ्चनसिञ्चापनं "पदीपे निपतित्वा पटङ्गादिपाणका मरिस्सन्ती" ति जानन्तस्स पदीपुज्जलनं विय विनापि वधकचेतनाय होतीति आह "पण्णत्तिवज्जं" ति । सेसं उत्तानत्थमेव । उदकस्स सप्पाणकत्ता, "सिञ्चनेन पाणका मरिस्सन्ती" ति जाननं, तादिसमेद च उदकं, विना वधकचेतनाय केनचिदेव करणीयेन तिणादीनं सिञ्चनं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

सप्पाणकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

निट्ठितो सेनासनवग्गो दुतियो ।

भूतगामवग्गोतिपि इमस्सेव नामं ।

----

३. ओवादवग्ग

१. ओवादसिक्खापदवण्णना

१४४॥ भिक्खुनिवग्गस पठमसिक्खापदे **कथानुसारेना** ति "सो थेरो किं सीलो किं समाचारो कतरकुला पब्बजितो" ति आदिना पुच्छन्तानं पुच्छाकथानुसारेन । **कथेतुं वट्टन्तीति** निरामिसेनेव चित्तेन कथेतुं वट्टन्ति । अनिय्यानिकत्ता सग्गमोक्खमग्गानं तिरच्छानभूता कथा **तिरच्छानकथा** ति आह **"सग्गमग्गगमनेपी"** ति आदि । अपि-सद्देन पगेव मोक्खमग्गगमनेति दीपेति । **तिरच्छानभूतं** ति तिरोकरणभूतं, बाधिकं ति वुत्तं होति । लद्धासेवना हि तिरच्छानकथा सग्गमोक्खानं वाधिकाव होति । **समिद्धो** ति परिपुण्णो । **सहितत्थो** ति युत्तत्थो । अत्थगम्भीरतादियोगतो **गम्भीरो** । बहुरसो ति अत्थरसादिबहुरसो । **लक्खणपटिवेधसंयुत्तो** ति अनिच्चादिलक्खणपटिवेधरस-आवहनतो लक्खणपटिवेधसंयुत्तो ।

१४५-१४७॥ **परतो** ति परत्थ, उत्तरिं ति अत्थो । **करोन्तो वा** ति परिबाहिरे B. 35 करोन्तोयेव । **पातिमोक्खो** ति चारित्तवारित्तप्पभेदं सिक्खापदसीलं । तञ्हि यो नं पाति रक्खति, तं मोक्खेति मोचेति आपायिकादीहि दुक्खेहि, तस्मा "पातिमोक्खं" ति वुच्चति । संवरणं **संवरो**, कायवचीद्वारानं पिदहनं । येन हि ते संवुता पिहिता होन्ति, सो संवरो, कायिकवाचसिकस्स अवीतिक्कमस्सेतं नामं । **पातिमोक्खसंवरेन संवुतो** ति पातिमोक्खसंवरेन पिहितकायवचीद्वारो । तथाभूतो च यस्मा तेन समङ्गी नाम होति, तस्मा वुत्तं **"समन्नागतो"** ति । **वत्ततीति** अत्तभावं पवत्तेति । **विहरतीति** इमिना पातिमोक्खसंवरसीले ठितस्स भिक्खुनो इरियापथविहारो दस्सितो ।

सङ्खेपतो वुत्तमत्थं वित्थारतो पाळिया विभावेतुं "वुत्तञ्हेतं" ति आदि आरद्धं । तत्थ **विभङ्गे** ति झानविभङ्गे । **सीलं पतिट्ठा** ति आदीनि पातिमोक्खस्सेव वेवचनानि । तत्थ[1] सीलं ति कामञ्चेतं सह कम्मवाचापरियोसानेन इज्झनकस्स पातिमोक्खस्सेव वेवचनं, एवं सन्तेपि धम्मतो एतं सीलं नाम पाणातिपातादीहि वा विरमन्तस्स वत्तपटिपत्तिं वा पूरेन्तस्स चेतनादयो धम्मा वेदितब्बा । यस्मा पन पातिमोक्खसीलेन भिक्खु सासने पतिट्ठाति नाम, तस्मा तं "पतिट्ठा" ति वुत्तं । पतिट्ठहति वा एत्थ भिक्खु, कुसलधम्मा एव वा एत्थ पतिट्ठहन्तीति **पतिट्ठा** । अयमत्थो "सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो" ति[2] च "पतिट्ठा महाराज सीलं सब्बेसं कुसलानं धम्मानं" ति[3] च

---

1. अभि-ट्ठ. २-३१६-पिट्ठादीसूपि पस्सितब्बं ।
2. सं-१-१३-१६७-पिट्ठेसु ।
3. खु. ११-३२ पिट्ठे ।

"सीले पतिट्ठितस्स खो महाराज सब्बे कुसला धम्मा न परिहायन्ती" ति च आदिसुत्तवसेन वेदितब्बो ।

तदेतं पुब्बुप्पत्तिअत्थेन **आदि** । वुत्तम्पि चेतं–

"तस्मातिह त्वं उत्तिय आदिमेव विसोधेहि कुसलेसु धम्मेसु । को चादि कुसलानं धम्मानं ? सीलञ्च सुविसुद्धं दिट्ठि च उजुका" ति[1] ।

यथा हि नगरवड्ढकी नगरं मापेतुकामो पठमं नगरट्ठानं सोधेति, ततो अपरभागे वीथिचतुक्कसिङ्घाटकादिपरिच्छेदेन विभजित्वा नगरं मापेति, एवमेव योगावचरो आदिम्हि सीलं सोधेति, ततो अपरभागे समाधिविपस्सनामग्गफलनिब्बानानि सच्छि- B. 36 करोति । यथा वा पन रजको पठमं तीहि खारेहि वत्थं धोवित्वा परिसुद्धे वत्थे यदिच्छकं रङ्गजातं उपनेति, यथा वा पन छेको चित्तकारो रूपं लिखितुकामो आदितो भित्तिपरिकम्मं करोति, ततो अपरभागे रूपं समुट्ठापेति, एवमेव योगावचरो आदितोव सीलं विसोधेत्वा अपरभागे समथविपस्सनादयो धम्मे सच्छिकरोति । तस्मा सीलं "आदी" ति वुत्तं ।

तदेतं चरणसरिक्खताय **चरणं** । "**चरणा**" ति पादा वुच्चन्ति । यथा हि छिन्नचरणस्स पुरिसस्स दिसंगमनाभिसङ्खारो न जायति, परिपुण्णपादस्सेव जायति, एवमेव यस्स सीलं भिन्नं होति खण्डं अपरिपुण्णं, तस्स निब्बानगमनाय ञाणगमनं न सम्पज्जति । यस्स पन तं अभिन्नं होति अखण्डं परिपुण्णं, तस्स निब्बानगमनाय ञाणगमनं सम्पज्जति । तस्मा सीलं "चरणं" ति वुत्तं ।

तदेतं संयमनवसेन **संयमो**, संवरणवसेन **संवरो ति** उभयेनपि सीलसंयमो चेव सीलसंवरो च कथितो । वचनत्थो पनेत्थ संयमेति वीतिक्कमविप्फन्दनं, पुग्गलं वा संयमेति वीतिक्कमवसेन तस्स विप्फन्दितुं न देतीति संयमो, वीतिक्कमस्स पवेसनद्वारं संवरति पिदहतीति **संवरो** । **मोक्खं** ति उत्तमं मुखभूतं वा । यथा हि सत्तानं चतुब्बिधो आहारो मुखेन पविसित्वा अङ्गमङ्गानि फरति, एवं योगिनोपि चतुभूमककुसलं सीलमुखेन पविसित्वा अत्थसिद्धिं सम्पादेति । तेन वुत्तं "मोक्खं" ति । पमुखे साधूति पमोक्खं, पुब्बङ्गमं सेट्ठं पधानं ति अत्थो । **कुसलानं धम्मानं समापत्तिया** ति चतुभूमककुसलानं पटिलाभत्थाय पमोक्खं पुब्बङ्गमं सेट्ठं पधानं ति वेदितब्बं ।

कायिको अवीतिक्कमो ति तिविधं कायसुचरितं । **वाचसिको** ति चतुब्बिधं वचीसुचरितं । **कायिकवाचसिको** ति तदुभयं । इमिना आजीवट्ठमकसीलं परियादाय दस्सेति । **संवुतो** ति पिहितो, संवुतिन्द्रियो पिहितिन्द्रियोति अत्थो । यथा हि संवुतद्वारं गेहं "संवुतगेह पिहितगेहं" ति वुच्चति, एवमिध संवुतिन्द्रियो "संवुतो" ति वुत्तो ।

1. सं. ३-१४४-पिट्ठे ।

पातिमोक्खसंवरेना ति पातिमोक्खसङ्खातेन संवरेन । **उपेतो** ति आदीनि सब्बानि अञ्ञमञ्ञवेवचनानि ।

B. 37 **इरियतीति** आदीहि सत्तहिपि पदेहि पातिमोक्खसंवरसीले ठितस्स भिक्खुनो इरियापथविहारो कथितो । तत्थ **इरियतीति** चतुन्नं इरियापथानं अञ्ञतरसमङ्गीभावतो इरियति । तेहि इरियापथचतुक्केहि कायसकटवत्तनेन वत्तति । एकं इरियापथदुक्खं अपरेन इरियापथेन विच्छिन्दित्वा[1] चिरट्ठितिभावेन सरीररक्खणतो **पालेति** । एकस्मिं इरियापथे असण्ठहित्वासब्बइरियापथे वत्तनतो **यापेति** । तेन तेन इरियापथेन तथा तथा कायस्स यापनतो **यापेति** । चिरकालवत्तापनतो **चरति** । इरियापथेन इरियापथं विच्छिन्दित्वा जीवितहरणतो **विहरति** ।

भिच्छाजीवपटिसेधकेनाति–

"इधेकच्चो वेळुदानेन वा पत्तदानेन वा पुप्फफलसिनानदन्तकट्ठदानेन वा चाटुकम्यताय वा मुग्गसूप्यताय वा पारिभटुताय वा जङ्घपेसनिकेन वा अञ्ञतरञ्ञतरेन वा, बुद्धपटिकुट्ठेन मिच्छाआजीवेन जीविकं कप्पेति, अयं वुच्चति अनाचारो" ति[2]–

एवं वुत्तअनाचारसङ्खातमिच्छाजीव पटिपक्खेन ।

न वेळुदानादिना आचारेना ति–

"इधेकच्चो न वेळुदानेन न पत्त न पुप्फ न फल न सिनान न दन्तकट्ठ न चाटुकम्यताय न मुग्गसूप्यताय न पारिभटुताय न जङ्घपेसनिकेन न अञ्ञतरञ्ञतरेन बुद्धपटिकुट्ठेन मिच्छाआजीवेन जीविकं कप्पेति, अयं वुच्चति आचारो" ति–

एवं वुत्तेन न वेळुदानादिना आचारेन ।

वेसियादिअगोचरंपहायाति–

"इधेकच्चो वेसियगोचरो वा होति विधव थुल्लकुमारि पण्डक भिक्खुनि पानागारगोचरो वा संसट्ठो विहरति राजूहि राजमहामत्तेहि तित्थियेहि तित्थियसावकेहि

B. 38 अननुलोमिकेन संसग्गेन, यानि पन तानि कुलानि अस्सद्धानि अप्पसन्नानि अनोपानभूतानि अक्कोसकपरिभासकानि अनत्थकामानि अहितकामानि अफासुककामानि अयोगक्खेमकामानि भिक्खूनं भिक्खुनीनं उपासकानं उपासिकानं, तथारूपानि कुलानि सेवति भजति पयिरुपासति, अयं वुच्चति अगोचरो" ति[3]–

एवमागतं वेसियादिअगोचरं पहाय ।

सद्धासम्पन्नकुलादिना ति एत्थ **आदि**-सद्देन उपनिस्सयगोचरादिं सङ्गण्हाति । तिविधो हि गोचरो उपनिस्सयगोचरो आरक्खगोचरो उपनिबन्धगोचरो ति । कतमो

1. छिन्दित्वा (स्या), बाहित्वा (क) ।
2. अभि. २-२५५-पिट्ठे ।
3. अभि २-२५५-पिट्ठे ।

उपनिस्सयगोचरो? दसकथावत्थुगुणसमन्नागतो कल्याणमित्तो, यं निस्साय असुतं सुणाति, सुत्तं परियोदपेति, कङ्खं वितरति, दिट्ठिं उजुं करोति, चित्तं पसादेति । यस्स वा पन अनुसिक्खमानो सद्धाय वड्ढति, सीलेन सुतेन चागेन पञ्ञाय वड्ढति, अयं **उपनिस्सयगोचरो** । कतमो आरक्खगोचरो? इध भिक्खु अन्तरघरं पविट्ठो वीथिं पटिपन्नो ओक्खित्तचक्खु युगमत्तदस्सावी संवुतो गच्छति, न हत्थिं ओलोकेन्तो, न अस्सं, न रथं, न पत्तिं, न इत्थिं, न पुरिसं ओलोकेन्तो, न उद्धं ओलोकेन्तो, न अधो ओलोकेन्तो, न दिसाविदिसं विपेक्खमानो गच्छति, अयं **आरक्खगोचरो** । कतमो उपनिबन्धगोचरो? चत्तारो सतिपट्ठाना, यत्थ चित्तं उपनिबन्धति । वुत्तञ्हेतं भगवता" को च भिक्खवे भिक्खुनो गोचरो सको पेत्तिको विसयो ? यदिदं चत्तारो सतिपट्ठाना ति[1], अयं **उपनिबन्धगोचरो** । इति अयं तिविधो गोचरो इध **आदि-सद्देन** सङ्गहितो ति दट्ठब्बो ।

अप्पमत्तकेसु वज्जेसूति असञ्चिच्च आपन्नसेखियअकुसलचित्तुप्पादादिभेदेसु वज्जेसु । **भयतो दस्सनसीलो** ति परमाणुमत्तं वज्जं अट्ठसट्ठियोजनसतसहस्सुब्बेध-सिनेरुपब्बतसदिसं कत्वा दस्सनसभावो, सब्बलहुकं वा दुब्भासितमत्तं पाराजिकसदिसं कत्वा दस्सनसभावो । **सम्मा आदाया**ति सम्मदेव सक्कच्चं सब्बसो वा आदियित्वा ।

वट्टदुक्खनिस्सरणत्थिकेहि सोतब्बतो **सुतं**, परियत्तिधम्मो । तं धारेतीति **सुतधरो**, B. 39 सुतस्स आधारभूतो । यस्स हि इतो गहितं एत्तो पलायति, छिद्दघटे उदकं विय न तिट्ठति, परिसमज्झे एकं सुत्तं वा जातकं वा कथेतुं वा वाचेतुं वा न सक्कोति, अयं न सुतधरो नाम । यस्स पन उग्गहितं बुद्धवचनं उग्गहित-कालसदिसमेव होति, दसपि वीसतिपि वस्सानि सज्झायं अकरोन्तस्स न नस्सति, अयं सुतधरो नाम । तेनेवाह **"यदस्स तं"** ति आदि । एकपदम्पि एकक्खरम्पि अविनट्ठं हुत्वा सन्निचियतीति सन्निचयो, सुतं सन्निचयो एतस्मिं ति **सुतसन्निचयो** ति आह **"सुतं सन्निचितं अस्मिं ति सुतसन्निचयो"** ति । यस्स हि सुतं हदयमञ्जुसायं सन्निचितं सिलाय लेखा विय सुवण्णघटे पक्खित्ता सीहवसा विय च साधु तिट्ठति, अयं सुतसन्निचयो नाम । तेनाह **"एतेन ....पे०.... अविनासं दस्सेती"** ति ।

धाता ति[2] पगुणा वाचुग्गता । एकस्स हि उग्गहितबुद्धवचनं निच्चकालिकं न होति, "असुकसुत्तं वा जातकं वा कथेही" ति वुत्ते "सज्झायित्वा अञ्ञेहि संसन्दित्वा परिपुच्छावसेन अत्थं ओगाहित्वा जानिस्सामी" ति वदति । एकस्स पगुणं पबन्ध-विच्छेदाभावतो गङ्गासोतसदिसं भवङ्गसोतसदिसञ्च अकित्तिमं सुखप्पवत्ति होति, "असुकसुत्तं वा जातकं वा कथेही" ति वुत्ते उद्धरित्वा तमेव कथेति । तं सन्धाय वुत्तं

---

1. सं. ३-१२८ पिट्ठे ।
2. धताति (स्या.) ।

"धाता" ति । **वाचाय पगुणा कता** ति सुत्तदसकवग्गदसकपण्णासदसकवसेन वाचाय सज्झायिता, दस सुत्तानि गतानि, दस वग्गानि गतानीति आदिना सल्लक्खेत्वा वाचाय सज्झायितााति अत्थो । सुत्तेकदेसस्स हि सुत्तमत्तस्स च वचसा परिचयो इध नाधिप्पेतो, अथ खो वग्गादिवसेनेव । **मनसा अनुपेक्खिता** ति मनसा अनु-अनु पेक्खिता, भागसो निज्झायिता चिन्तिता ति अत्थो । **आवज्जन्तस्सा** ति वाचाय सज्झायितुं बुद्धवचनं मनसा चिन्तेन्तस्स । **सुट्ठु पटिविद्धा** ति निज्जटं निग्गुम्बं कत्वा सुट्ठु याथावतो पटिविद्धा ।

द्वे मातिका ति भिक्खुमातिका भिक्खुनीमातिका च । **वाचुग्गता** ति पुरिमस्सेव वेवचनं । **तिस्सो अनुमोदना** ति संघभत्ते दानानिसंसपटिसंयुत्तअनुमोदना, विहारादि-मङ्गले मङ्गलसुत्तादिअनुमोदना, मतकभत्तादिअवमङ्गले तिरोकुट्टादिअनुमोदना ति B. 40 इमा तिस्सो अनुमोदना । **कम्माकम्मविनिच्छयो** ति परिवारावसाने कम्मवग्गे वुत्त-विनिच्छयो । "विपस्सनावसेन उग्गण्हन्तेन चतुधातुववत्थानमुखेन उग्गहेतब्बं" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । चतूसु दिसासु अप्पटिहतत्ता चतस्सो दिसा एतस्साति चतुद्दिसो, चतुद्दिसोयेव **चातुद्दिसो,** चत्तस्सो वा दिसा अरहति, चतूसु वा दिसासु साधूति **चातुद्दिसो** ।

अभिविनये ति सकले विनयपिटके । **विनेतुं** ति सिक्खापेतुं । **"द्वे विभङ्गा पगुणा वाचुग्गता कातब्बा** ति इदं परिपुच्छावसेन उग्गहणम्पि सन्धाय वुत्तं" ति वदन्ति । एकस्स पमुट्ठं, इतरस्स पगुणं होतीति आह **"तीहि जनेहि सद्धिं परिवत्तनक्खमा कातब्बा"** ति । **अभिधम्मे** ति नामरूपपरिच्छेदे । **हेट्ठिमा वा तयो वग्गा** ति महावग्गतो हेट्ठा सगाथकवग्गो निदानवग्गो खन्धकवग्गो ति इमे तयो वग्गा । "धम्मपदम्पि सह वत्थुना उग्गहेतुं वट्टती" ति **महापच्चरियं** वुत्तत्ता जातकभाणकेन साट्ठकथं जातकं उग्गहेत्वा पि धम्मपदम्पि सह वत्थुना उग्गहेतब्बमेव ।

कल्याणा सुन्दरा परिमण्डलपदब्यञ्जना वाचा अस्साति **कल्याणवाचो** । तेनाह **"सिथिलधनितादीनं......पे०......वाचाय समन्नागतो"** ति । तत्थ **परिमण्डलपदब्यञ्जनाया** ति ठानकरणसम्पत्तिया सिक्खासम्पत्तिया च कत्थचिपि अनूनताय परिमण्डलपदानि ब्यञ्जनानि अक्खरानि एतिस्साति परिमण्डलपदब्यञ्जना, पदमेव वा अत्थस्स ब्यञ्जनतो **पदब्यञ्जनं,** तं अक्खरपारिपूरिं कत्वा सिथिलधनितादिदसविधं ब्यञ्जनबुद्धिं अपरिहापेत्वा वुत्तं **परिमण्डलं** नाम होति । अक्खरपारिपूरिया हि पदब्यञ्जनस्स परिमण्डलता । तेन वुत्तं **"सिथिलधनितादीनं यथाविधानवचनेना"** ति, परिमण्डलं पदब्यञ्जनं एतिस्साति परिमण्डलपदब्यञ्जना । अथ वा पज्जति ञायति अत्थो एतेनाति पदं, नामादि । यथाधिप्पेतमत्थं ब्यञ्जेतीति ब्यञ्जनं, वाक्यं । तेसं परिपुण्णताय **परिमण्डलपदब्यञ्जना** ।

अपि च यो भिक्खु परिसति धम्मं देसेन्तो सुत्तं वा जातकं वा निक्खिपित्वा अञ्ञं उपारम्भकरं सुत्तं आहरति, तस्स उपमं कथेति, तदत्थं ओतारेति, एवं इदं गहेत्वा एत्थ खिपन्तो एकपस्सेनेव परिहरन्तो कालं ञत्वा वुट्ठहति, निक्खित्तसुत्तं पन निक्खित्तमत्तमेव होति, तस्स कथा अपरिमण्डला नाम होति अत्थस्स अपरिपुण्ण-भावतो। यो पन सुत्तं वा जातकं वा निक्खिपित्वा बहि एकपदम्पि अगन्त्वा यथा-निक्खित्तस्स सुत्तस्स अत्थसंवण्णनावसेनेव सुत्तन्तरम्पि आनेन्तो पाळिया अनुसन्धिञ्च पुब्बापरञ्च अपेक्खन्तो आचरियेहि दिन्ननये ठत्वा तुलिकाय परिच्छिन्दन्तो विय तं B. 41 तं अत्थं सुववत्थितं[1] कत्वा दस्सेन्तो गम्भीरमातिकाय उदकं पेसेन्तो विय गम्भीर-मत्थं गमेन्तो वग्गिहारिगतिया[2] पदे पदं कोट्टेन्तो सिन्धवाजानीयो विय एकंयेव पदं अनेकेहि परियायेहि पुनप्पुनं संवण्णन्तो गच्छति, तस्स कथा परिमण्डला नाम होति धम्मतो अत्थतो अनुसन्धितो पुब्बापरतो आचरियुग्गहतो ति सब्बसो परिपुण्ण-भावतो। एवरूपम्पि कथं सन्धाय **"परिमण्डलपदब्यञ्जनाया"** ति वुत्तं।

गुणपरिपुण्णभावेन पुरे भवा ति **पोरी**, तस्स भिक्खुनो तेनेतं भासितब्बं अत्थस्स गुणपरिपुण्णभावेन पुरे पुण्णभावे भवा ति अत्थो। पुरे वा भवत्ता पोरिया नागरिकित्थिया सुखुमालत्तनेन[3] सदिसा ति पोरी, पुरे संवड्ढनारी विय सुकुमारा ति अत्थो। पुरस्स एसा ति पि **पोरी, पुरस्स एसा** ति नगरवासीनं कथा ति अत्थो। नगरवासिनो हि युत्तकथा होन्ति पितिमत्तं "पिता" ति भातिमत्तं "भाता" ति वदन्ति। एवरूपी हि कथा बहुनो जनस्स कन्ता होति मनापा, ताय पोरिया।

विस्सट्ठाया ति पित्तसेम्हादीहि अपलिबुद्धाय सन्दिट्ठविलम्बितादिदोसरहिताय[4]। अथ वा नातिसीघं नातिसणिकं निरन्तरं एकरसञ्च कत्वा परिसाय अज्झासयानुरूपं धम्मं कथेन्तस्स वाचा विस्सट्ठा नाम। यो हि भिक्खु धम्मं कथेन्तो सुत्तं वा जातकं वा आरभित्वा आरद्धकालतो पट्ठाय तुरिततुरितो अरणिं मन्थेन्तो[5] विय उण्हखादनीयं खादन्तो विय पाळिया अनुसन्धिपुब्बापरेसु गहितं गहितमेव, अग्गहितं अग्गहितमेव कत्वा पुराणपण्णन्तरेसु चरमानं गोधं उट्ठापेन्तो विय तत्थ तत्थ पहरन्तो ओसापेत्वा उट्ठाय गच्छति। पुराणपण्णन्तरेसु हि परिपातियमाना गोधा कदाचि दिस्सति कदाचि न दिस्सति, एवमेकच्चस्स अत्थवण्णना कत्थचि दिस्सति कत्थचि न दिस्सति। योपि धम्मं कथेन्तो कालेन सीघं, कालेन सणिकं, कालेन मन्दं, कालेन महासद्दं, कालेन खुद्दकसद्दं करोति, यथा निज्झामतण्हिकपेतस्स मुखतो B. 42

---

1. पुथुववत्थितं (स्या.)।
2. वत्तितादिगतिया (स्या.)।
3. सुखुमालक्खणेन (स्या.)।
4. सन्दिद्धविलम्बितादिदोसरहिताय (क.)।
5. मद्देन्तो (स्या.)।

निच्छरणकअग्गि कालेन जलति कालेन निब्बायति, एवं पेतधम्मकथिको नाम होति, परिसाय उट्ठातुकामाय पुन आरभति । योपि कथेन्तो तत्थ तत्थ वित्थायति, अप्पटिभानताय अपज्जति, केनचि रोगेन नित्थुनन्तो विय कन्दन्तो विय कथेति, इमेसं सब्बेसम्पि कथा विस्सट्ठा नाम न होति सुखेन अप्पवत्तभावतो । यो पन सुत्तं आहरित्वा आचरियेहि दिन्ननये ठितो आचरियुग्गहं अमुञ्चन्तो यथा च आचरिया तं तं सुत्तं संवण्णेसुं, तेनेव नयेन संवण्णेन्तो नातिसीघं नातिसणिकं ति आदिना वुत्तनयेन कथापबन्धं अविच्छिन्नं कत्वा नदीसोतो विय पवत्तेति, आकासगङ्गातो भस्समान उदकं विय निरन्तरकथं पवत्तेति, तस्स कथा विस्सट्ठा नाम होति । तं सन्धाय वुत्तं "विस्सट्ठाया" ति ।

अनेलगळाया ति एलगळविरहिताय । कस्सचि हि कथेन्तस्स एलं गळति, लाला पग्घरति, खेळफुसितानि वा निक्खमन्ति, तस्स वाचा एलगळा नाम होति, तब्बिपरीतायाति अत्थो । **अत्थस्स विञ्ञापनिया** ति आदिमज्झपरियोसानं पाकटं कत्वा भासितत्थस्स विञ्ञापनसमत्थताय अत्थञापने साधनाय ।

वाचाव करणं ति वाक्करणं उदाहारघोसो । कल्याणं मधुरं वाक्करणं अस्सा ति **कल्याणवाक्करणो** । तेनेवाह **"मधुरस्सरो"** ति । हीळेतीति अवजानाति । मातुगामो ति सम्बन्धो । मनं अपायति वड्ढेती ति **मनापो** । तेनाह **"मनवड्ढनको"** ति । **वट्टभयेन तज्जेत्वा** ति योब्बनमदादिमत्ता भिक्खुनियो संसारभयेन तासेत्वा । **गिहिकाले** ति अत्तनो गिहिकाले । भिक्खुनिया मेथुनेन भिक्खुनीदूसको होतीति भिक्खुनिया कायसंसग्गमेव वदति । सिक्खमानासामणेरीसु पन मेथुनेनपि भिक्खुनीदूसको न होतीति आह **"सिक्खमानासामणेरीसु मेथुनधम्मं"** ति । कासायवत्थवसनाया" ति वचनतो दुस्सीलासु भिक्खुनीसिक्खमानासामणेरीसु गरुधम्मं अज्झापन्नपुब्बो पटिक्खित्तोयेवाति दट्ठब्बं । तस्सा भिक्खुनिया अभावेपि या या तस्सा वचनं अस्सोसुं, ता ता तथेव मञ्ञन्तीति आह **"मातुगामो ही"** ति आदि ।

B. 43 इदानि अट्ठ अङ्गानि समोधानेत्वा दस्सेतुं "एत्थ चा" ति आदि आरद्धं । इमेहि पन अट्ठहङ्गेहि असमन्नागतं ञत्तिचतुत्थेन कम्मेन सम्मन्नेन्तो दुक्कटं अपज्जति, भिक्खु पन सम्मतोयेव होति ।

१४८॥ **गरुकेहीति** गरुकातब्बेहि । **एकतोउपसम्पन्नाया** ति उपयोगत्थे भुम्मवचनं। "ओवदती" ति वा इमस्स "वदती" ति अत्थे सति सम्पदानवचनम्पि युज्जति । भिक्खूनं सन्तिके उपसम्पन्ना नाम परिवत्तलिङ्गा वा पञ्चसतसाकियानियो वा ।

१४९॥ **आसनं पञ्ञपेत्वा** ति एत्थ "सचे भूमि मनापा होति, आसनं अपञ्ञापेतुम्पि वट्टती" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **मातुगामग्गहणेन** भिक्खुनीपि सङ्गहिता ति आह **"धम्मदेसनापत्तिमोचनत्थं"** ति । सम्मतस्स भिक्खुनो सन्तिकं

पाटिपदे ओवादत्थाय सब्बाहि भिक्खुनीहि आगन्तब्बतो "समग्गात्थ भगिनियो" ति इमिना सब्बासं आगमनं पुच्छतीति आह **"सब्बा आगतात्था"** ति। गिलानासु अनागतासुपि गिलानानं अनागमनस्स अनुञ्ञातत्ता आगन्तुं समत्थाहि च सब्बाहि आगतत्ता "समग्गाम्हय्या" ति वत्तुं वट्टति। **अन्तोगामे** वा ति आदीसु यत्थ पञ्च अङ्गानि भूमियं पतिट्ठापेत्वा वन्दितुं न सक्का होति, तत्थ ठिताय एव कायं पुरतो नामेत्वा "वन्दामि अय्या" ति अञ्जलिं पग्गय्ह गन्तुम्पि वट्टति। **अन्तरघरं** ति कत्थचि नगरद्वारस्स बहिइन्दखीलतो पट्ठाय अन्तोगामो वुच्चति, कत्थचि घरुम्मारतो पट्ठाय अन्तोगेहं। इध पन "अन्तोगामे वा" ति विसुं वुत्तत्ता "अन्तरघरे वा" ति अन्तोगेहं सन्धाय वुत्तं ति दट्ठब्बं। यत्थ कत्थचीति अन्तोगामादीसु यत्थ कत्थचि।

वट्टतीति "वसथ अय्ये, मयं भिक्खू आनेस्सामा" ति वुत्तवचनं सद्दहन्तीहि वसितुं वट्टति। **न निमन्तिता हुत्वा गन्तुकामा** ति मनुस्सेहि निमन्तिता हुत्वा गन्तुकामा न होन्तीति अत्थो, तत्थेव वस्सं उपगन्तुकामा होन्तीति अधिप्पायो। यतो ति भिक्खुनुपस्सयतो। **याचित्वा** ति "तुम्हेहि आनीतओवादेनेव मयम्पि वसिस्सामा" ति याचित्वा। **तत्था** ति तस्मिं भिक्खुनुपस्सये। **आगतानं सन्तिके ओवादेन वसितब्बं** ति पच्छिमिकाय वस्सं वसितब्बं। **अभिक्खुकावासे वसन्तिया आपत्ती**ति चोदनामुखेन सामञ्ञतो आपत्तिप्पसङ्गं वदति, न पन तस्सा आपत्ति। **वस्सच्छेदं कत्वा गच्छन्तियापि** B.44 **आपत्ती**ति वस्सानुपगममूलं आपत्तिं वदति। इतराय आपत्तिया अनापत्तिकारण-सब्भावतो **"सा रक्खितब्बा"** ति वुत्तं, सा वस्सानुपगममूला आपत्ति रक्खितब्बा ति अत्थो, अभिक्खुकेपि आवासे ईदिसासु आपदासु वस्सं उपगन्तब्बं ति अधिप्पायो। तेनाह **"आपदासु हि** ......पे०...... **अनापत्ति वुत्ता"** ति। इतराय पन आपत्तिया अनापत्ति, कारणे असति पच्छिमिकायपि वस्सं न उपगन्तब्बं। सन्तेसु हि भिक्खूसु वस्सं अनुपगच्छन्तिया आपत्ति। **तत्थ गन्त्वा पवारेतब्बं** ति एत्थ अपवारेन्तीनं आपत्तिसम्भवतो। सचे दूरेपि भिक्खूनं वसनट्ठानं होति, सक्का च होति नवमियं गन्त्वा पवारेतुं, तत्थ गन्त्वा पवारेतब्बं। सचे पन नवमियं निक्खमित्वा सम्पापुणितुं न सक्का होति, आगच्छन्तीनं अनापत्ति।

उपोसथस्स पुच्छनं उपोसथपुच्छा, सायेव क-पच्चयं रस्सत्तञ्च कत्वा **उपोसथपुच्छकं** ति वुत्ताति आह **"उपोसथपुच्छनं** ति। **उपोसथो पुच्छितब्बो** ति" कदा अय्य उपोसथा" ति पुच्छितब्बो। भिक्खुनापि "स्वे भगिनि उपोसथो" ति वत्तब्बं। भिक्खू कदाचि केनचि कारणेन पन्नरसिकं वा चातुद्दसीउपोसथं, चातुद्दसिकं वा पन्नरसीउपोसथं करोन्ति, यस्मिञ्च दिवसे भिक्खूहि उपोसथो कतो, तस्मिं येव भिक्खुनीहिपि उपोसथो कातब्बो ति अधिप्पायेन **"पक्खस्स तेरसियंयेव गन्त्वा"** ति आदि वुत्तं। एवं पुच्छितेन भिक्खुना सचे चातुद्दसियं उपोसथं करोन्ति, "चातुद्दसिको भगिनी" ति वत्तब्बं। सचे पन पन्नरसियं करोन्ति, "पन्नरसिको भगिनी" ति

आचिक्खितब्बं । **ओवादत्थाया** ति ओवादयाचनत्थाय । **पाटिपददिवसतो पन पट्ठाय धम्मसवनत्थाय गन्तब्बं** ति पाटिपददिवसे ओवादग्गहणत्थाय दुतियदिवसतो पट्ठाय अन्तरन्तरा धम्मसवनत्थाय गन्तब्बं । ओवादग्गहणम्पि हि "धम्मसवनमेवा" ति अभेदेन वुत्तं । **निरन्तरं विहारं उपसङ्कमिंसूति** येभुय्येन उपसङ्कमनं सन्धाय वुत्तं । **वुत्तञ्हेतं** ति आदिना यथानुसिट्ठं पटिपज्जिस्सामाति सब्बासंयेव भिक्खुनीनं उपसङ्कमनदीपनत्थं पाळि निदस्सिता । **ओवादं गच्छतीति** ओवादं याचितुं गच्छति । **द्वे तिस्सो** ति द्वीहि तीहि । करणत्थे चेतं पच्चत्तवचनं ।

पासादिकेना ति पसादजनकेन निद्दोसेन कायकम्मादिना । **सम्पादेतू** ति तिविधं B. 45 सिक्खं सम्पादेतु । सचे पातिमोक्खुद्देसकंयेव दिस्वा ताहि भिक्खुनीहि ओवादो याचितो भवेय्य, तेन किं कातब्बं ति ? उपोसथग्गे सन्निपतिते भिक्खुसंघे पुब्बकिच्चवसेन "अत्थि काचि भिक्खुनियो ओवादं याचमाना" ति पुच्छियमाने "एवं वदेही" ति ओवादपटिग्गाहकेन वत्तब्बवचनं अञ्ञेन भिक्खुना कथापेत्वा पातिमोक्खुद्देसकेन वत्तब्बवचनं अत्तना वत्वा पुन सयमेव गन्त्वा भिक्खुनीनं आरोचेतब्बं, अञ्ञेन वा भिक्खुना तस्मिं दिवसे पातिमोक्खं उद्दिसापेतब्बं । **एतं वुत्तं** ति "ताही" ति एतं बहुवचनं वुत्तं ।

एका भिक्खुनी वा ति इदं बहूहि भिक्खुनुपस्सयेहि एकाय एव भिक्खुनिया सासनपटिग्गहणं सन्धाय वुत्तं, न पन दुतियिकाय अभावं सन्धाय । **बहूहि भिक्खुनुपस्सयेहीति** अन्तरामग्गे वा तस्मिंयेव वा गामे बहूहि भिक्खुनुपस्सयेहि । "भिक्खुनिसंघो च अय्य भिक्खुनियो च भिक्खुनी चा" ति इमिना नानाउपस्सयेहि सासनं गहेत्वा आगतभिक्खुनिया वत्तब्बवचनं दस्सेति । इदञ्च एकेन पकारेन मुखमत्तनिदस्सनत्थं वुत्तं, तस्मिं तस्मिं पन भिक्खुनुपस्सये भिक्खुनीनं पमाणं सल्लक्खेत्वा तदनुरूपेन नयेन वत्तब्बं । **भिक्खुसंघस्स अय्यानं अय्यस्सा** ति इदं सङ्खिपित्वा वुत्तं ।

पातिमोक्खुद्देसकेनपी ति इदं संघुपोसथवसेनेव दस्सितं । यत्थ पन तिण्णं द्विन्नं वा वसनट्ठाने पातिमोक्खुद्देसो नत्थि, तत्थापि ञत्तिठपनकेन इतरेन वा भिक्खुना इमिनाव नयेन वत्तब्बं । एकपुग्गलेनपि उपोसथदिवसे ओवादयाचनं सम्पटिच्छित्वा पाटिपदे आगतानं भिक्खुनीनं "नत्थि कोची" ति आदि वत्तब्बमेव । सचे सयमेव, सम्मतो आहं" ति वत्तब्बं । इमं विधिं अजानन्तो इध बालोति अधिप्पेतो ।

१५०॥ **अधम्मकम्मे अधम्मकम्मसञ्ञी वग्गं भिक्खुनिसंघं वग्गसञ्ञी ओवदति, आपत्ति पाचित्तियस्सा** ति आदीसु विज्जमानेसुपि वग्गादिभावनिमित्तेसु दुक्कटेसु अधम्मकम्ममूलकं पाचित्तियमेव पाळियं सब्बत्थ वुत्तं ति आह **"अधम्मकम्मे द्विन्नं नवकानं वसेन अट्ठारस पाचित्तियानी"** ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । असम्मतता,

भिक्खुनिया परिपुण्णूपसम्पन्नता ओवादवसेन अट्ठगरुधम्मभणनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

ओवादसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

२. अत्थङ्गतसिक्खापदवण्णना

B. 46

१५३॥ दुतिये **कुसलानं धम्मानं सातच्चकिरिया** ति पुब्बभागप्पटिपत्तिवसेन वुत्तं । **मुनातीति** जानाति । **तेन ञाणेनाति** तेन अरहत्तफलपञ्ञासङ्खातेन ञाणेन । **पथेसूति** उपायमग्गेसु । अरहतो परिनिट्ठितसिक्खत्ता आह **"इदञ्च.....पे०....वुत्तं"** ति । अथ वा "अप्पमज्जतो सिक्खतो" ति इमेसं पदानं हेतुअत्थता दट्ठब्बा, तस्मा अप्पमज्जनहेतु सिक्खनहेतु च अधिचेतसो ति अत्थो । **सोका** ति चित्तसन्तापा । एत्थ च **अधिचेतसो** ति इमिना अधिचित्तसिक्खा, **अप्पमज्जतो** ति इमिना अधिसीलसिक्खा, मुनिनो **मोनपथेसु सिक्खतो** ति एतेहि अधिपञ्ञासिक्खा, **मुनिनो** ति वा एतेन अधिपञ्ञा-सिक्खा, **मोनपथेसु सिक्खतो** ति एतेन तासं लोकुत्तरसिक्खानं पुब्बभागप्पटिपदा, **सोका न भवन्तीति** आदीहि सिक्खापारिपूरिया आनिसंसा पकासिता ति वेदितब्बं ।

कोकनुदं ति पदुमविसेसनं यथा "कोकासयं" ति, तं किर बहुपत्तं वण्णसम्पन्नं अतिविय सुगन्धञ्च होति । "कोकनुदं नाम सेतपदुमं" ति पि वदन्ति । **पातो** ति पगेव । अयञ्हेत्थ अत्थो-यथा कोकनुदसङ्खातं पदुमं पातो सूरियुग्गमनवेलायं फुल्लं विकसितं अवीतगन्धं सिया विरोचमानं, एवं सरीरगन्धेन गुणगन्धेन च सुगन्धं सरदकाले अन्तलिक्खे आदिच्चमिव अत्तनो तेजसा तपन्तं अङ्गेहि निच्छरण-जुतिताय अङ्गीरसं सम्मासम्बुद्धं पस्साति ।

अभब्बो ति पटिपत्तिसारमिदं सासनं, पटिपत्ति च परियत्तिमूलिका, त्वञ्च परियत्तिं उग्गहेतुं असमत्थो, तस्मा अभब्बो ति अधिप्पायो । **सुद्धं पिलोतिकखण्डं** ति इद्धिया अभिसङ्खतं परिसुद्धं चोळखण्डं । तदा किर भगवा "न सज्झायं कातुं असक्कोन्तो मम सासने अभब्बो नाम होति, मा सोचि भिक्खू" ति तं बाहायं गहेत्वा बिहारं पविसित्वा इद्धिया पिलोतिकखण्डं अभिनिम्मिनित्वा "हन्द भिक्खु इमं परिमज्जन्तो "रजोहरणं रजोहरणं" ति पुनप्पुनं सज्झायं करोही" ति वत्वा अदासि तत्थ पुब्बेकताधिकारत्ता ।

सो किर पुब्बे राजा हुत्वा नगरं पदक्खिणं करोन्तो नलाटतो सेदे मुच्चन्ते परिसुद्धेन साटकेन नलाटं पुञ्छि, साटको किलिट्ठो अहोसि । सो "इमं सरीरं निस्साय एवरूपो परिसुद्धसाटको पकतिं जहित्वा किलिट्ठो जातो, अनिच्चा वत सङ्खारा" ति अनिच्चसञ्ञं पटिलभति, तेन कारणेनस्स रजोहरणमेव पच्चयो जातो । रजं हरती B. 47

ति **रजोहरणं । संवेगं पटिलभित्वा** ति असुभसञ्ञं अनिच्चसञ्ञञ्च उपट्ठपेन्तो संवेगं पटिलभित्वा । सो हि योनिसो उम्मज्जन्तो" परिसुद्धं वत्थं, नत्थेत्थ दोसो, अत्तभावस्स पनायं दोसो" ति असुभसञ्ञं अनिच्चसञ्ञञ्च पटिलभित्वा नामरूप-परिग्गहादिना पञ्चसु खन्धेसु ञाणं ओतारेत्वा कलापसम्मसनादिक्कमेन विपस्सनं वड्ढेत्वा उदयब्बयञाणादिपटिपाटिया विपस्सनं अनुलोमगोत्रभुसमीपं पापेसि । तं सन्धाय वुत्तं **"विपस्सनं आरभी"** ति । **ओभासगाथं अभासीति** ओभासविस्सज्जन-पुब्बकभासितगाथा ओभासगाथा, तं अभासीति अत्थो ।

एत्थ च "अधिचेतसो ति इमं ओभासगाथं अभासी" ति इधेव वुत्तं । **विसुद्धिमग्गे**[1] पन **धम्मपदट्ठकथायं**[2] **थेरगाथासंवण्णनायञ्च**[3]—

रागो रजो न च पन रेणु वुच्चति,
रागस्सेतं अधिवचनं रजोति ।
एतं रजं विप्पजहित्वा पण्डिता
विहरन्ति ते विगतरजस्स सासने ।
दोसो.......पे०.......सासने ।
मोहो रजो न च पन रेणु वुच्चति,
मोहस्सेतं अधिवचनं रजोति ।
एतं रजं विप्पजहित्वा पण्डिता,
विहरन्ति ते विगतरजस्स सासने ति–

इमा तिस्सो ओभासगाथा अभासी"ति वुत्तं । **अधिचेतसो** ति च अयं चूळपन्थ-कत्थेरस्स उदानगाथा ति इमिस्सायेव पाळिया आगतं । थेरगाथायं पन चूळपन्थ-कत्थेरस्स उदानगाथासु अयं अनारुळ्हा, "एकुदानियत्थेरस्स पन अयं उदानगाथा" ति तत्थ[4] वुत्तं । एवं सन्तेपि इमिस्सा पाळिया अट्ठकथाय च एवमागतत्ता B. 48 चूळपन्थकत्थेरस्सपि अयं उदानगाथा ओभासगाथावसेन च भगवता भासिता ति गहेतब्बं । **अरहत्तं पापुणीति** अभिञ्ञापटिसम्भिदापरिवारं अरहत्तं पापुणि । **अभब्बो त्वं** ति आदिवचनतो अनुकम्पावसेन सद्धिविहारिकादिं संघिकविहारा निक्कड्ढापेन्तस्स अनापत्ति विय दिस्सति । अभब्बो हि थेरो सञ्चिच्च तं कातुं, निक्कड्ढनसिक्खापदे वा अपञ्ञत्ते थेरेन एवं कतं ति गहेतब्बं ।

---

1. विसुद्धि. २-१६ पिट्ठे ।
2. धम्मपद. ट्ठ-१५७-पिट्ठे ।
3. थेरगाथा-अट्ठ-२-१९६ पिट्ठे ।
4. थेरगाथा-ट्ठ-१-१९२ पिट्ठे ।

१५६॥ **ओवदन्तस्स पाचित्तियं** ति अत्थङ्गते सूरिये गरुधम्मेहि वा अञ्ञेन वा धम्मनेव ओवदन्तस्स सम्मतस्सपि पाचित्तियं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अथङ्गत-सूरियता, परिपुण्णूपसम्पन्नता, ओवदनंति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

अत्थङ्गतसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

३. भिक्खुनुपस्सयसिक्खापदवण्णना

१६२॥ ततियं उत्तानत्थमेव । उपस्सयूपगमनं, परिपुण्णूपसम्पन्नता, समया-भावो, गरुधम्मेहि ओवदनं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

भिक्खुनुपस्सयसिक्खापदवण्णना निट्ठिता

---

४. आमिससिक्खापदवण्णना

१६४॥ चतुत्थे "उपसम्पन्नं.......पे०......भिक्खुनोवादकं" ति इमेसं "मङ्कुकत्तुकामो" ति इमिना सम्बन्धो । "अवण्णं कत्तुकामो अयसं कत्तुकामो" ति इमेसं पन वसेन "उपसम्पन्नं" ति आदीसु "उपसम्पन्नस्सा" ति विभत्तिविपरिणामो कातब्बो ति इममत्थं सन्धाय **"उज्झापनके वुत्तनयेनेवत्थो वेदितब्बो"** ति वुत्तं" चीवरहेतु ओवदती" ति आदिना भणन्तस्स एकेकस्मिं वचने निट्ठिते पाचित्तियं वेदितब्बं । "उपसम्पन्नं संघेन असम्मतं" ति पाळिवचनतो" सम्मतेन वा संघेन वा भारं कत्वा ठपितो" ति अट्ठकथावचनतो च अट्ठहि अङ्गेहि समन्नागतो सम्मतेन वा विप्पवसितुकामेन "यावाहं आगमिस्सामि, ताव ते भारो होतू" "ति याचित्वा ठपितो तस्साभावतो B. 49 संघेन वा तथेव भारं कत्वा ठपितो अट्ठहि गरुधम्मेहि अञ्ञेन वा धम्मेन ओवदितुं लभतीति वेदितब्बं । तस्मा "यो पन भिक्खु असम्मतो भिक्खुनियो ओवदेय्य, पाचित्तयं" ति इदं पगेव भारं कत्वा अट्ठपितं सन्धाय वुत्तं ति गहेतब्बं ।

१६८॥ **अनापत्ति पकतिया चीवरहेतु......पे०......ओवदन्तं भणतीति** एत्थ आमिसहेतु ओवदन्तं "आमिसहेतु ओवदती"ति सञ्ञाय एवं भणन्तस्स अनापत्ति, "न "आमिसहेतु ओवदती" ति सञ्ञिनो पन दुक्कटं, न आमिसहेतु ओवदन्तं पन "आमिसहेतु ओवदती" ति सञ्ञाय भणन्तस्सपि अनापत्ति सचित्तकत्ता सिक्खा-

पदस्स । सेसमेत्थ उत्तानमेव । उपसम्पन्नता, धम्मेन लद्धसम्मुतिता, अनामिसन्तरता, अवण्णकामताय एवं भणनं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

आमिससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

१६९॥ पञ्चमं उत्तानत्थमेव ।

---

६. चीवरसिब्बापनसिक्खापदवण्णना

१७५॥ छट्ठे सचे सा भिक्खुनी तं चीवरं आदितोव पारुपेय्य, अञ्ञा भिक्खुनियो दिस्वा उज्झापेय्युं, ततो महाजनो पस्सितुं न लभतीति मञ्ञमानो **"यथासंहटं हरित्वा निक्खिपित्वा"** ति आदिमाह ।

१७६॥ **नीहरतीति** सकिं नीहरति । येपि तेसं निस्सितका ति सम्बन्धो । **कथिनवत्तं** ति "सब्रह्मचारीनं कातुं वट्टती" ति इतिकत्तब्बतावसेन सूचिकम्मकरणं । **आचरियुपज्झायानं दुक्कटं** ति अकप्पियसमादानवसेन दुक्कटं । **वञ्चेत्वा** ति "तव ञातिकाया" ति अवत्वा "एकिस्सा भिक्खुनिया" ति एत्तकमेव वत्वा । "एकिस्सा भिक्खुनिया" ति सुत्वा ते अञ्ञातिकसञ्ञिनो भवेय्युं ति[1] आह **"अकप्पिये** B. 50 **नियोजितत्ता"** ति । "इदं ते मातु चीवरं" ति आदीनि अवत्वापि" इदं चीवरं सिब्बेही"-ति सुद्धचित्तेन सिब्बापेन्तस्सपि अनापत्ति ।

१७९॥ **उपाहनत्थविकादिं** ति **आदि**-सद्देन यं चीवरं निवासेतुं वा पारुपितुं वा न सक्का होति, तम्पि सङ्गण्हाति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अञ्ञातिकाय भिक्खुनिया सन्तकता, निवासनपारुपनूपगता, वुत्तनयेन सिब्बनं वा सिब्बापनं वा ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

चीवरसिब्बापनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

७. संविदहनसिक्खापदवण्णना

१८१॥ सत्तमे पच्छा गच्छन्तीनं चोरा अच्छिन्दिंसू "ति एत्थ "पत्तचीवरं" ति पाठसेसोति आह" **पच्छा गच्छन्तीनं पत्तचीवरं"** ति । **ता भिक्खुनियो** ति पच्छा गच्छन्तियो भिक्खुनियो । "पच्छा गच्छन्तीनं" ति च विभत्तिविपरिणामेनेत्थ सम्बन्धो वेदितब्बो । पाळियं "गच्छाम भगिनी, गच्छाम अय्या" ति भिक्खुपुब्बकं संविधानं वुत्तं, "गच्छाम अय्य, गच्छाम भगिनी" ति भिक्खुनीपुब्बकं । **एकद्धानमग्गं** ति एकं अद्धानसङ्खातं मग्गं, एकतो वा अद्धानमग्गं । **हिय्यो** ति सुवे । परे ति ततियदिवसे ।

1. अहेसुन्ति (स्या.) ।

१८२-१८३॥ **द्विधा वुत्तप्पकारो** ति पादगमनवसेन पक्खगमनवसेन वाति द्विधा वुत्तप्पभेदो । चतुन्नं मग्गानं सम्बन्धट्ठानं **चतुक्कं,** तिण्णं मग्गानं सम्बन्धट्ठानं **सिङ्घाटकं** । "गामन्तरे गामन्तरे" ति एत्थ अञ्ञो गामो गामन्तरं ति आह **"निक्खमने अनापत्ति......पे०......भिक्खुनो पाचित्तियं"** ति । "संविधाया" ति पाळियं अविसेसेन वुत्तत्ता **"नेव पाळिया समेती"** ति वुत्तं, एत्थन्तरे संविदहितेपि भिक्खुनो दुक्कटं ति वुत्तत्ता **"न सेसअट्ठकथाय समेती"** ति वुत्तं । **अद्धयोजनं अतिक्कमन्तस्सा** ति असति गामे अद्धयोजनं अतिक्कमन्तस्स । यत्थ हि अद्धयोजनब्भन्तरे अञ्ञो गामो न होति, तं इध अगामकं अरञ्ञं ति अधिप्पेतं, अद्धयोजनब्भन्तरे पन गामे सति गामन्तर-गणनाय एव आपत्ति ।

१८५॥ **रट्ठभेदे** ति रट्ठविलोपे । **चक्कसमारुळ्हा** ति इरियापथचक्कं सकटचक्कं वा समारुळ्हा । सेसं उत्तानमेव । द्विन्नम्पि संविदहित्वा मग्गप्पटिपत्ति, अविसङ्केतं, समयाभावो, अनापदा, गामन्तरोक्कमनं वा अद्धयोजनातिक्कमो वाति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि । एकतोउपसम्पन्नादीहि सद्धिं गच्छन्तस्स पन मातुगाम-सिक्खापदेन आपत्ति । B. 5

संविदहनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

८. नावाभिरुहनसिक्खापदवण्णना

१८८॥ अट्ठमे **लोकस्सादमित्तसन्थववसेन कीळापुरेक्खारा संविदहित्वा** ति अयं विसेसो "एवमिमे.....पे०.....भिक्खुनीहि सद्धिं नावाय कीळन्ती" ति इमिना "उद्धंगामिनिं वा अधोगामिनिं वा" ति इमिना च सिद्धो ।

१८९॥ नदिया कुतो गामन्तरं ति आह **"यस्सा नदिया"** ति आदि । **"तस्सा सगामकतीरपस्सेन......पे०..... अद्धयोजनगणनाया** ति एकेकपस्सेनेव गमनं सन्धाय वुत्तत्ता तादिसिकाय नदिया मज्झेन गच्छन्तस्स गामन्तरगणनाय अद्धयोजनगणनाय च आपत्ती" ति वदन्ति । **सब्बअट्ठकथासू** ति आदिना अत्तना वुत्तमेवत्थं समत्थेति । कीळापुरेक्खारताय भिक्खुनिया सद्धिं संविधाय नावं अभिरुहन्तस्स नदियंयेव पाचित्तियस्स वुत्तत्ता वापिसमुद्दादीसु कीळापुरेक्खारताय दुक्कटमेव, न पाचित्तियं "ति वदन्ति । "लोकस्सादमित्तसन्थववसेन कीळापुरेक्खारा संविदहित्वा" ति वचनतो केचि "इमं सिक्खापदं अकुसलचित्तं लोकवज्जं" ति वदन्ति, तं न गहेतब्बं । कीळा-पुरेक्खारताय हि अभिरुहित्वापि गामन्तरोक्कमने अद्धयोजनातिक्कमे वा कुसलाब्याकतचित्तसमङ्गीपि हुत्वा आपत्तिं आपज्जति । यदि हि सो संवेगं पटिलभित्वा अरहत्तं वा सच्छिकरेय्य । निद्दं वा ओक्कमेय्य, कम्मट्ठानं वा मनसि

करोन्तो गच्छेय्य, कुतो तस्स अकुसलचित्तसमङ्गिता, येनिदं सिक्खापदं अकुसलचित्तं लोकवज्जं ति वुच्चति, तस्मा पण्णत्तिवज्जं तिचित्तं ति सिद्धं। सेसमेत्थ उत्तानमेव।

नावाभिरुहनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

B. 52

९. परिपाचितसिक्खापदवण्णना

१९४॥ नवमे **पटियादितं** ति भिक्खूनं अत्थाय सम्पादितं। **ञातका वा होन्ति पवारिता वा** ति एत्थ सचे पि भिक्खुनो अञ्ञातका अप्पवारिता च सियुं, भिक्खुनिया ञातका पवारित चे, वट्टति।

१९७॥ पापभिक्खूनं पक्खुपच्छेदाय इदं पञ्ञत्तं, तस्मा पञ्चभोजनेयेव आपत्ति वुत्ता। **पञ्च भोजनानि ठपेत्वा सब्बत्थ अनापत्ती**ति इदं पन इमिना सिक्खापदेन अनापत्तिदस्सनत्थं वुत्तं। विञ्ञत्तिया उप्पन्नं परिभुञ्जन्तस्स हि अञ्ञत्थ वुत्तनयेन दुक्कटं। सेसं उत्तानमेव। भिक्खुनिपरिपाचितभावो, जाननं, गिहिसमारम्भाभावो, ओदनादीनं अञ्ञतरता, तस्स अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि।

परिपाचितसिक्खापदवण्णना निट्ठिता

---

१०. रहोनिसज्जसिक्खापदवण्णना

१९८॥ दसमे **उपनन्दस्स चतुत्थ सिक्खापदेना** ति अप्पटिच्छन्ने मातुगामेन सद्धिं रहोनिसज्जसिक्खापदं सन्धाय वुत्तं। किञ्चापि तं अचेलकवग्गे पञ्चमसिक्खापदं होति, उपनन्दत्थेरं आरब्भ पञ्ञत्तेसु पन चतुत्थभावतो "उपनन्दस्स चतुत्थ सिक्खापदेना" ति वुत्तं। चतुत्थसिक्खापदस्स वत्थुतो इमस्स सिक्खापदस्स वत्थुनो पठमं उप्पन्नत्ता इदं सिक्खापदं पठमं पञ्ञत्तं। इमिना च सिक्खापदेन केवलं भिक्खुनिया एव रहोनिसज्जाय आपत्ति पञ्ञत्ता,[1] उपरि मातुगामेन सद्धिं रहोनिसज्जाय आपत्ति विसुं पञ्ञत्ता ति दट्ठब्बं।

रहोनिसज्जसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

निट्ठितो भिक्खुनिवग्गो ततियो।

---

1. आपत्तिया पञ्ञत्तत्ता (स्या.)।

४. भोजनवग्ग

B. 53

१. आवसथपिण्डसिक्खापदवण्णना

२०६॥ भोजनवग्गस्स पठमसिक्खापदे **अद्धयोजनं वा योजनं वा गन्तुं सक्कोतीति** एत्थ तत्तकं गन्तुं सक्कोन्तस्सपि तावतकं गन्त्वा अलद्धभिक्खस्स इतो भुञ्जितुं वट्टति । **इमेसंयेवा** ति इमेसं पासण्डानंयेव । **एत्तकानं** ति इमस्मिं पासण्डे एत्तकानं । **एकदिवसं भुञ्जितब्बं** ति एकदिवसं सकिं येव भुञ्जितब्बं । "एकदिवसं भुञ्जितब्बं" ति वचनतो पन एकस्मिं दिवसे पुनप्पुनं भुञ्जितुं वट्टतीति न गहेतब्बं । **पुन आदितो पट्ठाय भुञ्जितुं** न वट्टतीति इमिना पठमं भुत्तट्ठानेसु पुन एकस्मिम्पि ठाने भुञ्जितुं न वट्टतीति दस्सेति ।

२०८॥ **गच्छन्तो वा आगच्छन्तो वा** ति इदं अद्धयोजनवसेन गहेतब्बं" ति वदन्ति । **अन्तरामग्गे गतट्ठाने** ति एकस्सेव सन्तकं सन्धाय वुत्तं । **"आगच्छन्तेपि एसेव नयो"** ति सङ्खेपेन वुत्तमेवत्थं विभावेन्तो **"गन्त्वा पच्चागच्छन्तो"** ति आदिमाह । आपत्तिट्ठानेयेव पुन भुञ्जन्तस्स अनापत्ति वत्तब्बा ति गमने आगमने च पठमं भोजनं अवत्वा अन्तरामग्गे एकदिवसं गतट्ठाने च एकदिवसं ति पुनप्पुनं भोजनमेव दस्सितं, गमनदिवसे पन आगमनदिवसे च "गमिस्सामि आगमिस्सामी" ति भुञ्जितुं वट्टतियेव । सुद्धचित्तेन पुनप्पुनं भुञ्जन्तस्सपि पुनप्पुनं भोजने अनापत्ति । अञ्ञस्सत्थाय उद्दिसित्वा पञ्ञत्तं भिक्खुनो गहेतुमेव न वट्टतीति आह **"भिक्खूनंयेव अत्थाया"** ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । आवसथपिण्डता, अगिलानता, अनुवसित्वा भोजनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

आवसथपिण्डसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

२. गणभोजनसिक्खापदवण्णना

२०९॥ दुतिये **अभिमारे** ति अभिगन्त्वा भगवतो मारणत्थाय नियोजिते धनुद्धरे । **गुळ्हपटिच्छन्नो** ति अपाकटो । **पविज्झीति** विस्सज्जेसि । ननु **राजानम्पि मारापेसीति** वचनतो इदं सिक्खापदं अजातसत्तुनो काले पञ्ञत्तं ति सिद्धं, एवञ्च सति परतो अनुपञ्ञत्तियं–

'तेन खो पन समयेन रञ्ञो मागधस्स सेनियस्स बिम्बिसारस्स ञातिसालोहितो आजीवकेसु पब्बजितो होति । अथ खो–

B. 54

सो आजीवको येन राजा मागधो सेनियो बिम्बिसारो तेनुपसङ्कमि, उपसङ्कमित्वा राजानं मागधं सेनियं बिम्बिसारं एतदवोच......पे०...... कुक्कुच्चायन्ता नाधिवासेन्ती" ति–

इदं कस्मा वुत्तं ति ? सो किर आजीवको तं दानं देन्तो बिम्बिसारकालतो पट्ठाय अदासि, पच्छा अजातसत्थुकाले सिक्खापदपञ्ञत्तितो पट्ठाय भिक्खू कुक्कुच्चायन्ता तं दानं न पटिग्गण्हिंसु, तस्मा आदितो पट्ठाय तं वत्थु दस्सितं ति वेदितब्बं[1] । "अथ खो सो आजीवको भिक्खूनं सन्तिके दूतं पाहेसी" ति इदञ्च ततो पभुति सो आजीवको अन्तरन्तरा भिक्खू निमन्तेत्वा दानं देन्तो अजातसत्थुकाले सिक्खापदे पञ्ञत्ते यं भिक्खूनं सन्तिके दूतं पाहेसि, तं सन्धाय वुत्तं ।

२१५॥ अञ्ञमञ्ञविसिट्ठत्ता विसदिसं रज्जं विरज्जं, ततो आगता, तत्थ वा जाता, भवाति वा वेरज्जा, ते एव **वेरज्जका** । ते पन यस्मा गोत्तचरणादिविभागेन नानप्पकारा, तस्मा वुत्तं **"नानावेरज्जके"** ति । **अट्ठकथायं पन नानाविधेहि अञ्ञरज्जेहि आगते** ति रज्जानंयवे वसेन नानप्पकारता वुत्ता ।

२१७-२१८॥ इमस्स सिक्खापदस्स विञ्ञत्तिं कत्वा भुञ्जनवत्थुस्मिं पञ्ञत्तत्ता विञ्ञत्तितो गणभोजनं वत्थुवसेनेव पाकटं ति तं अवत्वा "गणभोजनं नाम यत्थ ......पे०......निमन्तिता भुञ्जन्ती" ति निमन्तनवसेनेव पदभाजने गणभोजनं वुत्तं । "किञ्चि पन सिक्खापदं वत्थुअननुरूपम्पि सिया ति पदभाजने वुत्तनयेन निमन्तनवसेनेव गणभोजनं होतीति केसञ्चि आसङ्का भवेय्या"-ति तं निवत्तनत्थं **"तं पनेतं गणभोजनं द्वीहाकारेहि पसवती"** ति वुत्तं । **पञ्चन्नं भोजनानं नामं गहेत्वा** ति एत्थ "भोजनं गण्हथा ति वुत्तेपि गणभोजनं होतियेवा" ति वदन्ति । "हेट्ठा अद्धान- गमनवत्थुस्मिं नावाभिरुहनवत्थुस्मिञ्च" इधेव भन्ते भुञ्जथा" ति वुत्ते यस्मा

.55 कुक्कुच्चायन्ता न पटिग्गण्हिंसु, तस्मा 'भुञ्जथा' ति वुत्तेपि गणभोजनं न होतियेवा" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं ।" पञ्चन्नं भोजनानं नामं गहेत्वा निमन्तेती "ति वुत्तत्ता पन" ओदनं भुञ्जथा "ति वा" भत्तं भुञ्जथा" ति वा भोजननामं गहेत्वाव वुत्ते गणभोजनं होति, न अञ्ञथा । "इधेव भन्ते भुञ्जथा" ति एत्थापि "ओदनं" ति वा "भत्तं" ति वा वत्वाव ते एवं निमन्तेसुं ति गहेतब्बं । गणवसेन वा निमन्तितत्ता ते भिक्खू अपकतञ्ञुताय कुक्कुच्चायन्ता न पटिग्गण्हिंसूति अयं अम्हाकं खन्ति, वीमंसित्वा युत्ततरं गहेतब्बं ।

एकतो गण्हन्तीति एत्थ अञ्ञमञ्ञस्स द्वादसहत्थं अमुञ्चित्वा ठिता एकतो गण्हन्ति नामाति गहेतब्बं । "अम्हाकं चतुन्नम्पि भत्तं देहीति वा विञ्ञापेय्युं "ति वचनतो हेट्ठा" त्वं एकस्स भिक्खुनो भत्तं देहि, त्वं द्विन्नं ति एवं विञ्ञापेत्वा" ति

1. दीपेतब्बं (स्या.) ।

वचनतो च अत्तनो अत्थाय अञ्ञेहि विञ्ञत्तम्पि[1] सादियन्तस्स गणभोजनं होतियेवा ति दट्ठब्बं । **एवं विञ्ञत्तितो पसवतीति** एत्थ विञ्ञत्तिया सति गण्हन्तस्स एकतो हुत्वा गहणे इमिना सिक्खापदेन आपत्ति, विसुं गहणे पणीतभोजनसूपोदनविञ्ञत्तीहि आपत्ति वेदितब्बा ।

विचारेतीति पञ्चखण्डादिवसेन संविदहति । **घट्टेतीति** अनुवातं छिन्दित्वा हत्थेन दण्डकेन वा घट्टेति । सुत्तं करोतीति सुत्तं वट्टेति । **वलेतीति** दण्डके वा हत्थे वा आवट्टेति । "अभिनवस्सेव चीवरस्स करणं इध चीवरकम्मं नाम, पुराणचीवरे सूचिकम्मं नाम न होती" ति वदन्ति । "चतुत्थे आगते न यापेन्तीति वचनतो सचे अञ्ञो कोचि आगच्छन्तो नत्थि, चत्तारोयेव च तत्थ निसिन्ना यापेतुं न सक्कोन्ति, न वट्टती" ति वदन्ति ।

२२०॥ गणभोजनापत्तिजनकनिमन्तनभावतो **"अकप्पियनिमन्तनं"** ति वुत्तं । **सम्पवेसेत्वा** ति निसीदापेत्वा । **गणो भिज्जतीति** गणो आपत्तिं न आपज्जतीति अधिप्पायो । "यत्थ चत्तारो भिक्खू......पे॰......भुञ्जन्ती"ति इमाय पाळिया संसन्दनतो **"इतरेसं पन गणपूरको होती"** ति वुत्तं । **अविसेसेनाति** "गिलानो वा चीवरकारको वा" ति अविसेसेत्वा सब्बसाधारणवचनेन । **तस्मा** ति अविसेसितत्ता । **भुत्वा गतेसूति** एत्थ अगतेसु पि भोजनकिच्चे निट्ठिते गण्हितुं वट्टति । **तानि च तेहि एकतो न गहितानीति** B. 56 येहि भोजनेहि विसङ्केतो नत्थि, तानि भोजनानि तेहि भिक्खूहि एकतो न गहितानि एकेन पच्छा गहितत्ता । **महाथेरे** ति भिक्खू सन्धाय वुत्तं । दूतस्स पुन पटिपथं आगन्त्वा "भत्तं गण्हथा" ति वचनभयेन **"गामद्वारे अट्ठत्वा वा** ति वुत्तं । **तत्थ तत्थ गन्त्वा** ति अन्तरवीथिआदीसु तत्थ तत्थ ठितानं सन्तिकं गन्त्वा । भिक्खूनं अत्थाय घरद्वारे ठपेत्वा दिय्यमानेपि एसेव नयो । **निवत्तथाति वुत्तपदे निवत्तितुं वट्टतीति,** "निवत्तथा" ति विच्छिन्दित्वा पच्छा "भत्तं गण्हथा" ति वुत्तत्ता वट्टति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । गणभोजनता, समयाभावो, अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

गणभोजनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

३. परम्परभोजनसिक्खापदवण्णना

२२१॥ ततिये कुलपटिपाटिया अब्बोच्छिन्नं कत्वा निरन्तरं दिय्यमानत्ता "भत्तपटिपाटि अट्ठिता[2] होती" ति पाळियं वुत्तं, अन्तरा अट्ठत्वा निरन्तरं पवत्ताति

---

1. अञ्ञेसम्पि विञ्ञतिं (स्या.) ।
2. अधिट्ठिता (पाळियं) ।

वुत्तं होति । **उपचारवसेनाति** वोहारवसेन । न हि सो बदरमत्तमेव देति, उपचारवसेन पन एवं वदति । **बदरचुण्णसक्खरादीहि** पयोजितं "बदरसाळवं" ति वुच्चति ।

२२६॥ विकप्पनावसेनेव तं भत्तं असन्तं नाम होतीति अनुपञ्ञत्तिवसेन विकप्पनं अट्ठपेत्वा यथापञ्ञत्तं सिक्खापदमेव ठपितं । परिवारे पन विकप्पनाय अनुजाननम्पि अनुपञ्ञत्तिसमानं ति कत्वा "चत्तस्सो अनुपञ्ञत्तियो" ति वुत्तं । **महापच्चरिआदीसु** वुत्तनयं पच्छा वदन्तो पाळिया संसन्दनतो परम्मुखाविकप्पनमेव पतिट्ठापेसि । केचि पन "तदा अत्तनो सन्तिके ठपेत्वा भगवन्तं अञ्ञस्स अभावतो थेरो सम्मुखाविकप्पनं नाकासि । भगवता च विसुं सम्मुखाविकप्पना न वुत्ता, तथापि सम्मुखाविकप्पनापि वट्टती" ति वदन्ति । तेनेव **मातिका**-अट्ठकथायम्पि "यो भिक्खु पञ्चसु सहधम्मिकेसु अञ्ञतरस्स "मय्हं भत्तपच्चासं तुय्हं दम्मी" ति वा "विकप्पेमी"- B. 57 ति वा एवं सम्मुखा वा "इत्थन्नामस्स दम्मी" ति वा "विकप्पेमी" ति वा एवं परम्मुखा वा पठमनिमन्तनं अविकप्पेत्वा पच्छा निमन्तितकुले लद्धभिक्खतो एकसित्थम्पि अज्झोहरति, पाचित्तियं" ति वुत्तं ।

२२९॥ पञ्चहि भोजनेहि निमन्तितस्स येन येन पठमं निमन्तितो, तस्स तस्स भोजनतो उप्पटिपाटिया अविकप्पेत्वा वा परस्स परस्स भोजनं **परम्परभोजनं** ति आह **"सचे पन मूलनिमन्तनं हेट्ठा होति, पच्छिमं पच्छिमं उपरि, तं उपरितो पट्ठाय भुञ्जन्तस्स आपत्ती"** ति । हत्थं अन्तो पवेसेत्वा सब्बहेट्ठिमं गण्हन्तस्स मज्झे ठितम्पि अन्तोहत्थगतं होतीति आह "हत्थं पन......पे०.....यथा तथा वा भुञ्जन्तस्स अनापत्ती"ति । खीरस्स रसस्स च भत्तेन अमिस्सं हुत्वा उपरि ठितत्ता **"खीरं वा रसं वा पिवतो अनापत्ती"** ति वुत्तं ।

महाउपासको ति गेहसामिको । **"महाअट्ठकथायं"** आपत्तीति वचनेन कुरुन्दियं "वट्टती"ति वचनं विरुद्धं विय दिस्सति, द्विन्नम्पि अधिप्पायो **महापच्चरियं** विभावितो"ति **महागण्ठिपदेसु** वुत्तं। **सब्बे निमन्तेन्तीति** अकप्पियनिमन्तनेन निमन्तेन्ति। "परम्परभोजनं नाम पञ्चन्नं भोजनानं अञ्ञतरेन भोजनेन निमन्तितो, तं ठपेत्वा अञ्ञं पञ्चन्नं भोजनानं अञ्ञतरं भोजनं भुञ्जति, एतं परम्परभोजनं नामा" ति वुत्तत्ता सतिपि भिक्खाचरियाय पठमं लद्धभावे "पिण्डाय चरित्वा लद्धभत्तं भुञ्जति, आपत्ती" ति वुत्तं । अविकप्पवसेन **"वचीकम्मं"** ति वुत्तं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । परम्परभोजनता, समयाभावो, अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

परम्परभोजनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

४. काणमातासिक्खापदवण्णना

२३०-२३१॥ चतुत्थे **काणाय माता** ति काणा ति लद्धनामाय दारिकाय माता। कस्मा पनेसा काणा नाम जाताति आह **"सा किरस्सा"** ति आदि। इमिस्सा दहरकाले मातापितरो सिनेहवसेन "अम्म काणे अम्म काणे" ति वोहरिंसु, सा तदुपादाय काणा नाम जाता, तस्सा च माता "काणमाता" ति पाकटा अहोसीति एवमेत्थ कारणं B. 58 वदन्ति। **पटियालोकं** ति पच्छिमं दिसं, पच्चादिच्चं ति वुत्तं होति।

२३३॥ **पूवगणनाय पाचित्तियं** ति मुखवट्टिया हेट्ठिमलेखतो उपरिट्ठितपूवगणनाय पाचित्तियं। "द्वत्तिपत्तपूरा पटिग्गहेतब्बा" ति हि वचनतो मुखवट्टिया हेट्ठिमलेखं अनतिक्कन्ते द्वे वा तयो वा पत्तपूरे गहेतुं वट्टति।

२३५॥ **अट्ठकथासु पन.....पे०.....वुत्तं** ति इदं अट्ठकथासु तथा आगतभावमत्तदीपनत्थं वुत्तं, न पन तस्स वादस्स पतिट्ठापनत्थं। अट्ठकथासु वुत्तञ्हि पाळिया न समेति। ततुत्तरिगहणे अनापत्तिदस्सनत्थञ्हि "ञातकानं पवारितानं" ति वुत्तं। अञ्ञथा "अनापत्ति द्वत्तिपत्तपूरे पटिग्गण्हाती" ति इमिनाव पमाणयुत्तग्गहणे अनापत्तिसिद्धितो "ञातकानं पवारितानं" ति विसुं न वत्तब्बं। यदि एवं "तं पाळिया न समेती" ति कस्मा न वुत्तं ति ? हेट्ठा ततुत्तरिसिक्खापदे वुत्तनयेनेव सक्का विञ्ञातुं ति न वुत्तं। वुत्तञ्हि तत्थ[1] "अट्ठकथासु पन ञातकपवारितट्ठाने पकतियाव बहुम्पि वट्टति, अच्छिन्नकारणा पमाणमेव वट्टतीति वुत्तं, तं पाळिया न समेती" ति। "अपाथेय्यादिअत्थाय पटियादितं" ति सञ्ञाय गण्हन्तस्सपि आपत्तियेव अचित्तकत्ता सिक्खापदस्स। अत्तनोयेव गहणत्थं "इमस्स हत्थे देही"ति वचनेनपि आपज्जनतो **"वचीकम्मं** ति वुत्तं। सेसं उत्तानमेव। वुत्तलक्खणपूवमन्थता, असेसकता, अपटिप्पस्सद्धगमनता, न ञातकादिता, अतिरेकपटिग्गहणं ति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि।

काणमातासिक्खापदवण्णना निट्ठिता

---

५. पठमपवारणासिक्खापदवण्णना

२३६॥ पञ्चमे **भुत्तावीति** भुत्ताविनो भुत्तवन्तो, कतभत्तकिच्चाति वुत्तं होति। **पवारिता** ति एत्थ चतूसु पवारणासु यावदत्थपवारणा पटिक्खेपपवारणा च लब्भतीति आह **"ब्राह्मणेन....पे०....पटिक्खेपपवारणाय पवारिता** "ति। चतुब्बिधा हि पवारणा वस्संवुत्थपवारणा, पच्चयपवारणा, पटिक्खेपपवारणा, यावदत्थपवारणा- B. 59

---

1. वि. ट्ठ. २-२४९ पिट्ठे।

ति । तत्थ "अनुजानामि भिक्खवे वस्संवुत्थानं भिक्खूनं तीहि ठानेहि पवारेतुं" ति[1] अयं **वस्संवुत्थपवारणा** । पकारेहि दिट्ठादीहि वारेति संघादिके भजापेति भत्ते करोति एतायाति पवारणा, आपत्तिविसोधनाय अत्तवोस्सग्गोकासदानं । सा पन यस्मा येभुय्येन वस्संवुत्थेहि कातब्बा वुत्ता, तस्मा "वस्संवुत्थपवारणा" ति वुच्चति । "इच्छामहं भन्ते संघं चातुमासं भेसज्जेन पवारेतुं" ति[2] च, "अञ्ञत्र पुन पवारणाय अञ्ञत्र निच्चपवारणाया" ति[3] च अयं **पच्चयपवारणा** पवारेति पच्चये इच्छापेति एतायाति कत्वा, चीवरादीहि उपनिमन्तनायेतं अधिवचनं । "पवारितो नाम असनं पञ्ञायति, भोजनं पञ्ञायति, हत्थपासे ठितो अभिहरति, पटिक्खेपो पञ्ञायति, एसो पवारितो नामा" ति[4] अयं **पटिक्खेपपवारणा** । विप्पकतभोजनतादिपञ्चङ्गसहितो भोजनपटिक्खेपोयेव हेत्थ पकारयुत्ता वारणा ति पवारणा । "पणीतेन खादनीयेन भोजनीयेन सहत्था सन्तप्पेसि सम्पवारेसी" ति[5] अयं **यावदत्थपवारणा** । यावदत्थं भोजनस्स पवारणा यावदत्थपवारणा ।

२३७॥ **ति-कारं अवत्वा.....पे०.....वत्तुं वट्टतीति** इदं वत्तब्बाकारदस्सनत्थं वुत्तं । "ति-कारे पन वुत्तेपि अकतं नाम न होती"ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं ।

२३८-२३९॥ **पवारितो** ति पटिक्खेपितो । यो हि भुञ्जन्तो परिवेसकेन उपनीतं भोजनं अनिच्छन्तो पटिक्खिपति, सो तेन पवारितो पटिक्खेपितो नाम होति । ब्यञ्जनं पन अनादियित्वा अत्थमत्तमेव दस्सेतुं "**कतपवारणो कतपटिक्खेपे**" ति वुत्तं । यस्मा "असनं" ति इमिनाव पदेन "भुत्तावी" ति इमस्स अत्थो वुत्तो, तस्मा न तस्स किञ्चि पयोजनं विसुं उपलब्भति । यदि हि उपलब्भेय्य, पवारणा छळङ्गसमन्नागता आपज्जेय्याति मनसि कत्वा पञ्चसमन्नागतत्तंयेव दस्सेतुं "**वुत्तम्पि चेतं**" ति आदिना पाळिं आहरति । केचि पन "हत्थपासे ठितो अभिहरती" ति एकमेव अङ्गं कत्वा "चतुरङ्गसमन्नागता पवारणा" ति पि वदन्ति ।

B. 60 **अम्बिलपायासादीसूति आदि-सद्देन** खीरपायासादिं सङ्गण्हाति । तत्थ अम्बिल-पायासग्गहणेन तक्कादिअम्बिलसंयुत्ता घनयागु वुत्ता । खीरपायासग्गहणेन खीर-संयुत्ता यागु सङ्गय्हति । **पवारणं न जनेतीति** अनतिरित्तभोजनापत्तिनिबन्धनं" पटिक्खेपं न साधेति । कतोपि पटिक्खेपो अनतिरित्तभोजनापत्तिनिबन्धनो न होतीति अकतट्ठानेयेव तिट्ठतीति आह "**पवारणं न जनेती**" ति । **यागु-सद्दस्स** पवारणजनकयागुयापि साधारणत्ता "यागुं गण्हथा" ति वुत्तेपि पवारणा होतीति

1. वि. ३-२२३ पिट्ठे ।
2. वि. २-१३५ पिट्ठे ।
3. वि. २-१३७-पिट्ठे ।
4. वि. २-१११-पिट्ठे ।
5. म. १-२९९-पिट्ठे ।

पवारणं जनेतियेवाति वुत्तं" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं, तं परतो तत्थेव "भत्तमिस्सकं यागुं आहरित्वा" ति एत्थ वुत्तकारणेन न समेति। वुत्तञ्हि तत्थ "हेट्ठा अयागुके निमन्तने उदककञ्जिकखीरादीहि सद्धिं मद्दितं भत्तमेव सन्धाय "यागुं गण्हथा" ति वुत्तत्ता पवारणा होति, "भत्तमिस्सकं यागुं आहरित्वा" ति एत्थ पन विसुं यागुया विज्जमानत्ता पवारणा न होती" ति। तस्मा तत्थ वुत्तनयेनेव खीरादीहि संमद्दितं भत्तमेव सन्धाय "यागुं गण्हथा" ति वुत्तत्ता यागुया च तत्थ अभावतो पवारणा होतीति एवमेत्थ कारणं वत्तब्बं। एवञ्हि सति परतो "येनापुच्छितो, तस्स अत्थिताया" ति अट्ठकथायं वुत्तकारणेनपि संसन्दति, अञ्ञथा गण्ठिपदेसुयेव पुब्बापरविरोधो आपज्जति। अट्ठकथावचनेन च न समेति। सचे.....पे०.....**पञ्ञायतीति** इमिना वुत्तप्पमाणस्स मच्छमंसखण्डस्स नहारुनो वा सब्भावमत्तं दस्सेति। **ताहीति** पुथुकाहि।

सालिवीहियवेहि कतसत्तूति येभुय्यनयेन वुत्तं, सत्त धञ्ञानि पन भज्जित्वा कतोपि सत्तुयेव। तेनेवाह "कङ्गुवरक.......पे०......**सत्तुसङ्गहमेव गच्छती**" ति। सत्तुमोदको ति सत्तुयो पिण्डेत्वा कतो अपक्को सत्तुगुळो। पञ्चन्नं भोजनानं अञ्ञतरवसेन विप्पकतभोजनभावस्स उपच्छिन्नत्ता "**मुखे सासपमत्तम्पि......पे०......न पवारेती** "ति वुत्तं"। **अकप्पियमंसं पटिक्खिपति, न पवारेती**" ति वचनतो सचे संघिकं लाभं अत्तनो अपापुणन्तं जानित्वा वा अजानित्वा वा पटिक्खिपति, न पवारेति पाटिक्खि-पितब्बस्सेव पटिक्खित्तत्ता। अलज्जिसन्तकं पटिक्खिपन्तोपि न पवारेति। **अवत्थुताया** ति अनतिरित्तापत्तिसाधिकाय पवारणाय अवत्थुभावतो। एतेन पटिक्खिपितब्बस्सेव पटिक्खित्तभावं दीपेति। यञ्हि पटिक्खिपितब्बं होति, तस्स पटिक्खेपो आपत्तिअङ्गं न B. 61 होतीति तं "पवारणाय अवत्थू" ति वुच्चति।

उपनामेतीति इमिना कायाभिहारं दस्सेति। हत्थपासतो बहि ठितस्स सतिपि दातुकामाभिहारे पटिक्खिपन्तस्स दूरभावेनेव पवारणाय अभावतो थेरस्सपि दूरभाव-मत्तं गहेत्वा पवारणाय अभावं दस्सेन्तो "**थेरस्स दूरभावतो**" ति आह, न पन थेरस्स अभिहारसब्भावतो। सचे पि गहेत्वा गतो हत्थपासे ठितो होति, किञ्चि पन अवत्वा आधारकट्ठाने ठितत्ता अभिहारो नाम न होतीति "**दूतस्स च अनभिहरणतो**" ति वुत्तं। गहेत्वा गतेन "भत्तं गण्हथा, ति वुत्ते अभिहारो नाम होतीति "**सचे पन गहेत्वा आगतो भिक्खु.....पे०....पवारणा होती**" ति वुत्तं" ति तीसुपि गण्ठिपदेसु वुत्तं। केचि पन "पत्तं किञ्चि उपनामेत्वा "इमं भत्तं गण्हथा" ति वुत्तं ति गहेतब्बं" ति वदन्ति, तं युत्तं विय दस्सति वाचाभिहारस्स इध अनाधिप्पेतत्ता।

परिवेसनाया ति भत्तग्गे। **अभिहटाव होतीति** परिवेसकेनेव अभिहटा होति। **ततो दातुकामताय गण्हन्तं पटिक्खिपन्तस्स पवारणा होतीति** एत्थ अगण्हन्तम्पि पटिक्खिपतो

पवारणा होतियेव। कस्मा? दातुकामताय अभिहटत्ता। "तस्मा सा अभिहटाव होती"ति हि वुत्तं। तेनेव तीसुपि **गण्ठिपदेसु** "दातुकामाभिहारे सति केवलं "दस्सामी" ति गहणमेव अभिहारो नाम न होति, "दस्सामी" ति गण्हन्तेपि अगण्हन्तेपि दातुकामाभिहारोव अभिहारो नाम होति, तस्मा गहणसमये वा अग्गहणसमये वा तं पटिक्खिपतो पवारणा होती" ति वुत्तं। इदानि असति तस्स दातुकामाभिहारे गहणसमयेपि पटिक्खिपतो पवारणा न होतीति दस्सेतुं **"सचे पना"** ति आदि वुत्तं।

"रसं गण्हथा" ति अपवारणजनकस्स नामं गहेत्वा वुत्तत्ता" तं **सुत्वा पटिक्खिपतो पवारणा नत्थी**"ति वुत्तं। मच्छरसं मंसरसं ति एत्थ पन न केवलं मच्छस्स रसं मच्छरसमिच्चेव विञ्ञायति, अथ खो मच्छो च मच्छरसञ्च मच्छरसं ति एवं B. 62 पवारणजनकसाधारणनामवसेन पि विञ्ञायमानत्ता तं पटिक्खिपतो पवारणाव होति। परतो **मच्छसूपं** ति एत्थापि एसेव नयो। **"इदं गण्हथा" ति वुत्तेपी** ति एत्थ एवं अवत्वापि पवारणप्पहोनकं यंकिञ्चि अभिहटं पटिक्खिपतो पवारणा होतियेवाति दट्ठब्बं। **करम्बको** ति मिस्सकाधिवचनमेतं। यञ्हि अञ्ञेनञ्ञेन मिस्सेत्वा करोन्ति, सो "करम्बको" ति वुच्चति। सो सचेपि मंसेन मिस्सेत्वा कतोव होति, "करम्बकं गण्हथा" ति अपवारणारहस्स नामेन वुत्तत्ता पटिक्खिपतो पवारणा न होति। "मंसकरम्बकं गण्हथा" ति वुत्ते पन मंसमिस्सकं गण्हथा ति वुत्तं होति, तस्मा पवारणाव होति।

"उद्दिस्सकतं" ति मञ्ञमानो ति एत्थ "वत्थुनो कप्पियत्ता अकप्पियसञ्ञाय पटिक्खिपतोपि अचित्तकत्ता इमस्स सिक्खापदस्स पवारणा होती" ति वदन्ति। "हेट्ठा अयागुके निमन्तने उदककञ्जिकखीरादीहि सद्धिं मद्दितं भत्तमेव सन्धाय "यागुं गण्हथा" ति वुत्तत्ता पवारणा होति, "भत्तमिस्सकं यागुं आहरित्वा" ति एत्थ पन विसुं यागुया विज्जमानत्ता पवारणा न होती" ति वदति। अयमेत्थ अधिप्पायो ति "येनापुच्छितो" ति आदिना वुत्तमेवत्थं सन्धाय वदति। **कारणं पनेत्थ दुद्दसं** ति एत्थ एके ताव वदन्ति" यस्मा यागुमिस्सकं नाम भत्तमेव न होति, खीरादिकम्पि होतियेव, तस्मा करम्बके विय पवारणाय न भवितब्बं। एवञ्च सति यागु बहुतरा वा होतिं समसमा वा, न पवारेति। "यागु मन्दा, भत्तं बहुतरं। पवारेती, ति एत्थ कारणं दुद्दसं" ति। केचि पन वदन्ति" यागुमिस्सकं नाम भत्तं, तस्मा तं पटिक्खिपतो पवारणाय एव भवितब्बं। एवञ्च सति "इध पवारणा होति न होती"ति एत्थ कारणं दुद्दसं" ति।

यथा चेत्थ कारणं दुद्दसं, एवं परतो "मिस्सकं गण्हथा" ति एत्थापि कारणं दुद्दसमेवाति वेदितब्बं। न हि पवारणप्पहोनकस्स अप्पबहुभावो पवारणाय भावाभावनिमित्तं, किञ्चरहि पवारणजनकस्स नामग्गहणमेवेत्थ पमाणं, तस्मा इदञ्च करम्बकेन न समानेतब्बं" ति आदिना यम्पि कारणं वुत्तं, तम्पि पुब्बे वुत्तेन

संसन्दियमानं न समेति। यदि हि "मिस्सकं" ति भत्तमिस्सतेयेव रुळ्हं सिया, एवं सति यथा "भत्तमिस्सकं गण्हथा" ति वुत्ते भत्तं बहुतरं वा समं वा अप्पतरं वा होति, पवारेतियेव, एवं "मिस्सकं गण्हथा" ति वुत्तेपि अप्पतरेपि भत्ते पवारणाय भवितब्बं B. 63 **मिस्सकं** ति भत्तमिस्सकेयेव रुळ्हत्ता। तथा हि "मिस्सकं ति भत्तमिस्सकेयेव रुळ्हवोहारत्ता इदं पन "भत्तमिस्सकमेवा" ति वुत्तं" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। अथ "मिस्सकं" ति भत्तमिस्सके रुळ्हं न होति, मिस्सकभत्तं पन सन्धाय "मिस्सकं गण्हथा" ति वुत्तन्ति। एवम्पि यथा आयागुके निमन्तने खीरादीहि सद्धिं मद्दितं भत्तमेव सन्धाय "यागुं गण्हथा" ति वुत्ते पवारणा होति, एवमिधापि मिस्सकभत्तमेव सन्धाय "मिस्सकं गण्हथा" ति वुत्ते भत्तं अप्पं वा होतु बहु वा, पवारणा एव सिया। तस्मा "मिस्सकं" ति भत्तमिस्सके रुळ्हं वा होतु सन्धायभासितं वा, उभयत्थापि पुब्बेनापरं न समेतीति किमेत्थ कारणचिन्ताय, ईदिसेसु पन ठानेसु अट्ठकथापमाणेनेव गन्तब्बं ति अयं अम्हाकं खन्ति।

"**विसु कत्वा देतीति** भत्तस्स उपरि ठितं रसादिं विसुं गहेत्वा देती"ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु वुत्तं। केनचि पन**" यथा भत्तसित्थं न पतति, तथा गाळ्हं हत्थेन पीळेत्वा परिस्सावेत्वा देती"ति वुत्तं। तथापि[1] कारणं न दिस्सति। यथा हि भत्तमिस्सकं यागुं आहरित्वा "यागुं गण्हथा" ति वत्वा यागुमिस्सकं भत्तम्पि देन्तं पटिक्खिपतो पवारणा न होति, एवमिधापि बहुखीररसादीसु भत्तेसु "खीरं गण्हथा" ति आदीनि वत्वा खीरादीनि वा देतु खीरादिमिस्सकभत्तं वा, उभयथापि पवारणाय न भवितब्बं, तस्मा "विसुं कत्वा देती" ति तेनाकारेन देन्तं सन्धाय वुत्तं, न पन भत्तमिस्सकं कत्वा दिय्यमानं पटिक्खिपतो पवारणा होतीति दस्सनत्थं ति गहेतब्बं। यदि पन भत्तमिस्सकं कत्वा दिय्यमाने पवारणा होतीति अधिप्पायेन अट्ठकथायं "विसुं कत्वा देती" ति वुत्तं, एवं सति अट्ठकथायेवेत्थ पमाणं ति गहेतब्बं, न पन कारणन्तरं गवेसितब्बं।

सचे उक्कुटिकं निसिन्नो पादे अमुञ्चित्वा पि भूमियं निसीदति, इरियापथं विकोपेन्तो नाम होती ति उक्कुटिकासनं अविकोपेत्वाव सुखेन निसीदितुं "**तस्स पन हेट्ठा......पे०.....निसीदनकं दातब्बं**" ति वुत्तं। "**आसनं अचालेत्वा** ति पीठे फुट्ठोकासतो आनिसदमंसं अमोचेत्वा, अनुट्ठहित्वाति वुत्तं होति, आदिन्नादाने विय ठानाचावनं न गहेतब्बं" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं।

अकप्पियकतं ति एत्थ अकप्पियकतस्सेव अनतिरित्तभावतो कप्पियं अकारापेत्वा B. 64 तस्मिं पत्ते पक्खित्तमूलफलादियेव अतिरित्तं न होति, सेसं पन पत्तपरियापन्नं अतिरित्तमेव होति, परिभुञ्जितुं वट्टति। तं पन मूलफलादिं परिभुञ्जितुकामेन ततो

---

1. तत्थापि (स्या.)।

नीहरित्वा कप्पियं कारापेत्वा अञ्ञस्मिं भाजने ठपेत्वा अतिरित्तं कारापेत्वा भुञ्जितब्बं।

सो पुन कातुं न लभतीति तस्मिं येव भाजने करियमानं पठमं कतेन सद्धिं कतं होतीति पुन सोयेव कातुं न लभति, अञ्ञो लभति। अञ्ञस्मिं पन भाजने तेन वा अञ्ञेन वा कातुं वट्टति। तेनाह "**येन अकतं, तेन कातब्बं। यञ्च अकतं, तं कातब्बं**" ति। **तेनपीति** एत्थ पि-सद्दो न केवलं अञ्ञेन वाति इममत्थं दीपेति। **एवं कतं** ति अञ्ञस्मिं भाजने कत। पेसेत्वा ति अनुपसम्पन्नस्स हत्थे **पेसेत्वा**। इमस्स विनयकम्मभावतो "**अनुपसम्पन्नस्स हत्थे ठितं न कारेतब्बं**" ति वुत्तं।

सचे पन आमिससंसट्ठानीति एत्थ सचे मुखगतेनपि अनतिरित्तेन आमिसेन संसट्ठानि होन्ति, पाचित्तियमेवाति वेदितब्बं। तस्मा पवारितेन भोजनं अतिरित्तं कारापेत्वा भुञ्जन्तेनपि यथा अकतेन मिस्सं न होति, एवं मुखञ्च हत्थञ्च सुद्धं कत्वा भुञ्जितब्बं। किञ्चापि अप्पवारितस्स पुरेभत्तं यामकालिकादीनि आहारत्थाय परिभुञ्जतोपि अनापत्ति, पवारितस्स पन पवारणमूलकं दुक्कटं होतियेवाति यामकालिकं......पे०.....अज्झाहारे आपत्ति दुक्कटस्सा" ति पाळियं वुत्तं।

२४१॥ कायेन भुञ्जनतो वाचाय आणापेत्वा अतिरित्तं अकारापनतो च आपज्जतीति "**कायवाचतो**" ति वुत्तं। सेसमेत्थ उत्तानमेव। पवारितभावो, आमिसस्स अनतिरित्तता, काले अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि।

पठमपवारणासिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

B. 65

६. दुतियपवारणासिक्खापदवण्णना

२४३॥ छट्ठे **साधारणमेवा** ति "हन्द भिक्खु खाद वा" ति आदिना वुत्तपवारणाय साधारणं। "भुत्तस्मिं पाचित्तियं" ति मातिकायं वुत्तत्ता भोजनपरियोसाने आपत्ति, न अज्झोहारे अज्झोहारे। **अभिहट्ठुं पवारेति, आपत्ति पाचित्तियस्सा** ति इदञ्च भोजन-परियोसानंयेव सन्धाय वुत्तं ति वेदितब्बं। सेसमेत्थ उत्तानमेव। पवारितता, पवारितसञ्ञिता, आसादनापेक्खता, अनतिरित्तेन अभिहट्ठुं पवारणा, भोजन-परियोसानं ति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि।

दुतियपवारणासिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

७. विकालभोजनसिक्खापदवण्णना

२४७॥ सत्तमे **अग्गसमज्जो** ति उत्तमं नच्चं। तं किर पब्बतमत्थके ठत्वा एकं देवतं उद्दिस्स करोन्ति। नटानं नाटकानि **नटनाटकानि,** सीताहरणादीनि। **अपञ्ञत्ते सिक्खापदे** ति ऊनवीसतिवस्ससिक्खापदे अपञ्ञत्ते। **अदंसूति** "विहारं नेत्वा खादिस्सथा" ति अदंसु।

२४८-२४९॥ मूलकमूलादीनि उपदेसतोयेव वेदितब्बानि। न हि तानि परियायन्तरेन वुच्चमानानिपि सक्का विञ्ञातुं। परियायन्तरेपि हि वुच्चमाने तं तं नामं अजानन्तानं सम्मोहोयेव सिया, तस्मा तत्थ न किञ्चि वक्खाम। **खादनीयत्थं-** ति खादनीयेन कत्तब्बकिच्चं। **नेव फरन्तीति** न निप्फादेन्ति। **तेसु तेसु जनपदेसूति** एत्थ "एकस्मिं जनपदे आहारकिच्चं साधेन्तं सेसजनपदेसुपि न कप्पती" ति वदन्ति। **रुक्खवल्लिआदीनं** ति हेट्ठा वुत्तमेव सम्पिण्डेत्वा वुत्तं। **अन्तोपथवीगतो** ति साल-कल्याणीखन्धं सन्धाय वुत्तं। **सब्बकप्पियानीति** मूलखन्धतचपत्तादिवसेन सब्बसो कप्पियानि। तेसम्पि नामवसेन न सक्का परियन्तं दस्सेतुं ति सम्बन्धो। अच्छिवादीनं अपरिपक्कानेव फलानि यावजीविकानीति दस्सेतुं **"अपरिपक्कानी"-** ति वुत्तं।

हरीतकादीनं अट्ठीनीति एत्थ मिञ्जं पटिच्छादेत्वा ठितकपालानि यावजीविकानी-ति आचरिया। मिञ्जम्पि यावजीविकं ति एके। **हिङ्गू** ति हिङ्गुरुक्खतो पग्घरित-निय्यासो। हिङ्गुजतुआदयोपि हिङ्गुविकतियो एव। तत्थ **हिङ्गुजतु** नाम हिङ्गुरुक्खस्स B. 66 दण्डपत्तानि पचित्वा कतनिय्यासो, **हिङ्गुसिपाटिकं** नाम हिङ्गुपत्तानि पचित्वा कतनिय्यासो। "अञ्ञेन मिस्सेत्वा कतो" ति पि वदन्ति। कतं ति अग्गकोटिया निक्खन्तसिलेसो। तकपत्तिं ति पत्ततो निक्खन्तसिलेसो। **तकपण्णिं** ति पलासे भज्जित्वा कतसिलेसो। "दण्डतो निक्खन्तसिलेसो ति पि वदन्ति। सेसमेत्थ उत्तानमेव। विकालता, यावकालिकता, अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि।

विकालभोजनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

८. सन्निधिकारकसिक्खापदवण्णना

२५२-३॥ अट्ठमे **तादिसं** ति असूपब्यञ्जनं। **यंकिञ्चि यावकालिकं वा यामकालिकं वा** ति एत्थ "यामकालिकं" ति इमिना न केवलं यावकालिके एव सन्निधिपच्चया पाचित्तियं, अथ खो यामकालिकेपीति दस्सेति। ननु च यामकालिकं नेव खादनीयेसु

अन्तोगधं, न भोजनीयेसु । तेनेव पदभाजनीये "खादनीयं नाम पञ्च भोजनानि यामकालिकं सत्ताहकालिकं यावजीविकं ठपेत्वा अवसेसं खादनीयं नाम । भोजनीयं नाम पञ्च भोजनानी" ति वुत्तं, "यो पन भिक्खु सन्निधिकारकं खादनीयं वा भोजनीयं वा खादेय्य वा भुञ्जेय्य वा, पाचित्तियं" ति च वुत्तं, तस्मा यामकालिके पाचित्तियेन भवितब्बं ति कथं विञ्ञायतीति ? वुच्चते–पदभाजने **खादनीय–सद्दस्स** अत्थदस्सनत्थं "यामकालिकं ठपेत्वा" ति वुत्तं, न पन सन्निधिपच्चया अनापत्ति दस्सनत्थं । खादितब्बञ्हि यंकिञ्चि खादनीयं ति अधिप्पेतं, न च यामकालिकेसु किञ्चि खादितब्बं अत्थि पातब्यभावतो। तस्मा किञ्चापि यामकालिकं खादनीय- भोजनीयेहि न सङ्गहितं, तथापि अनापत्तिं दस्सेन्तेन "अनापत्ति यामकालिकं यामे निदहित्वा भुञ्जती"ति वचनतो यामातिक्कमे सन्निधिपच्चया पाचित्तियेन भवितब्बं ति विञ्ञायति । "यामकालिकेन भिक्खवे सत्ताहकालिकं यावजीविकं तदहुपटिग्गहितं B. 67 यामे कप्पति, यामातिक्कन्ते न कप्पती" ति[1] इमिनापि चायमत्थो सिद्धो । तेनेव भगवतो अधिप्पायञ्ञूहि अट्ठकथाचरियेहि यामकालिके पाचित्तियमेव वुत्तं ।

पटिग्गहणेति गहणमेव सन्धाय वुत्तं । पटिग्गहितमेव हि तं, पुन पटिग्गहण- किच्चं नत्थि । तेनेव **"अज्झोहरितुकामताय गण्हन्तस्स पटिग्गहणे"** ति वुत्तं । **मातिकाट्ठकथायं**[2] पन "अज्झोहरिस्सामीति गण्हन्तस्स पटिग्गहणे" इच्चेव वुत्तं । यं ति यं पत्तं । **सन्दिस्सतीति** यागुया उपरि सन्दिस्सति । केवलवण्णे पत्ते सतिपि निस्नेहभावे अङ्गुलिया घंसन्तस्स वण्णवसेनेव लेखा पञ्ञायति, तस्मा तत्थ अनापत्तीति दस्सनत्थं **"सा अब्बोहारिका"** ति वुत्तं । **सयं पटिग्गहेत्वा अपरिच्चत्तमेव** हि **दुतियदिवसे न वट्टतीति** एत्थ पटिग्गहणे अनपेक्खविस्सज्जनेन अनुपसम्पन्नस्स निरपेक्खदानेन वा विजहितपटिग्गहणं परिच्चत्तमेव होती ति "अपरिच्चत्तं" ति इमिना उभयथापि अविजहितपटिग्गहणमेव वुत्तं । तस्मा यं परस्स परिच्चजित्वा अदिन्नम्पि सचे पटिग्गहणे निरपेक्खविस्सज्जनेन विजहितपटिग्गहणं होति, तम्पि दुतियदिवसे वट्टतीति वेदितब्बं ।

यदि एवं "पत्तो दुद्धोतो होती" ति आदीसु कस्मा आपत्ति वुत्ताति? "पटिग्गहणं अविस्सज्जेत्वाव सयं वा अञ्ञेन वा तुच्छं कत्वा न सम्मा धोवित्वा निट्ठापिते पत्ते लग्गम्पि अविजहितपटिग्गहणमेव होतीति तत्थ आपत्ती" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । केचि पन "सामणेरानं परिच्चजन्तीति इमस्मिं अधिकारे ठत्वा "अपरिच्चत्तमेवा"ति वुत्तत्ता अनुपसम्पन्नस्स परिच्चत्तमेव वट्टति, अपरिच्चत्तं न वट्टतीति आपन्नं, तस्मा निरालयभावेन पटिग्गहणे विजहितेपि अनुपसम्पन्नस्स अपरिच्चत्तं न वट्टती" ति

---

1. वि-३-३४९-पिट्ठे ।
2. कङ्खा-ट्ठ-२२५-पिट्ठे ।

वदन्ति, तं युत्तं विय न दिस्सति। यदग्गेन हि पटिग्गहणं विजहति, तदग्गेन सन्निधिम्पि न करोति विजहितपटिग्गहणस्स अप्पटिग्गहितसदिसत्ता। पटिग्गहेत्वा निदहितेयेव च सन्निधिपच्चया आपत्ति वुत्ता। "पटिग्गहेत्वा एकरत्तं वीतिनामितस्सेतं अधिवचनं" ति हि वुत्तं।

पाळियं "सत्ताहकालिकं यावजीविकं आहारत्थाय पटिग्गण्हाति, आपत्ति दुक्कटस्सा" ति आदिना सन्निहितेसु सत्ताहकालिकयावजीविकेसु पुरेभत्तम्पि आहारत्थाय अज्झोहरणेपि दुक्कटस्स वुत्तता यामकालिकेपि आहारत्थाय अज्झोहरणे विसुं B. 68 दुक्कटेनपि भवितब्बं ति आह **"आहारत्थाय अज्झोहरतो दुक्कटेन सद्धिं पाचित्तियं** ति। **पकतिआमिसे** ति ओदनादिकप्पियामिसे। **यामकालिकं सति पच्चये सामिसेन मुखेन अज्झोहरतो द्वे** ति हिय्यो पटिग्गहितयामकालिकं अज्ज पुरेभत्तं सामिसेन मुखेन भुञ्जतो सन्निहितयामकालिकपच्चया एकं पाचित्तियं, सन्निहितेन संसट्ठआमिसपच्चया एकं ति द्वे पाचित्तियानि। **विकप्पद्वयेपी**ति सामिसेन निरामिसेनाति वुत्तविधानद्वये। दुक्कटं वड्ढती ति आहारत्थाय अज्झोहरणपच्चया **दुक्कटं वड्ढति। थुल्लच्चयञ्च दुक्कटञ्च वड्ढती**ति मनुस्समंसे थुल्लच्चयं, सेसअकप्पियमंसेसु दुक्कटं वड्ढति।

२५५॥ **पटिग्गहणपच्चया ताव दुक्कटं** ति एत्थ सन्निहितत्ता पुरेभत्तम्पि दुक्कटमेव। सति पच्चये पन सन्निहितम्पि सत्ताहकालिकं यावजीविकं भेसज्जत्थाय गण्हन्तस्स परिभुञ्जन्तस्स च अनापत्तियेव। सेसमेत्थ उत्तानमेव। यावकालिकयामकालिकता, सन्निधिभावो, तस्स अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि।

सन्निधिकारकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

९. पणीतभोजनसिक्खापदवण्णना

२५७-२५९॥ नवमे पणीतसंसट्ठानि भोजनानि **पणीतभोजनानि**। यथा हि आजञ्ञयुत्तो रथो "आजञ्ञरथो" ति वुच्चति, एवमिधापि पणीतसंसट्ठानि सत्तधञ्ञनिब्बत्तानि भोजनानि "पणीतभोजनानी"ति वुत्तानि। येहि पन पणीतेहि संसट्ठानि, तानि "पणीतभोजनानी"ति वुच्चन्ति, तेसं पभेददस्सनत्थं "सेय्यथिदं, सप्पि नवनीतं"ति आदि पाळियं वुत्तं। "येसं मंसं कप्पती"ति इदञ्च पाचित्तियवत्थुपरिच्छेददस्सनत्थं वुत्तं, न पन कप्पियवत्थुपरिच्छेददस्सनत्थं। न हि अकप्पियमंससत्तानं सप्पिआदीनि न कप्पन्ति। एकञ्हि मनुस्सवसातेलं ठपेत्वा सब्बेसं खीरसप्पिनवनीतवसातेलेसु अकप्पियं नाम नत्थि। **सप्पिभत्तं** ति एत्थ किञ्चापि सप्पिसंसट्ठं भत्तं सप्पिभत्तं, सप्पि च भतञ्च सप्पिभत्तं ति पि विञ्ञायति, अट्ठकथासु पन "सालिभत्तं विय सप्पिभत्तं नाम नत्थी" ति कारणं वत्वा दुक्कटस्सेव दळ्हतरं B. 69 कत्वा वुत्तत्ता न सक्का अञ्ञं वत्तुं। अट्ठकथाचरिया एव हि ईदिसेसु ठानेसु पमाणं।

मूलं ति कप्पियभण्डं सन्धाय वुत्तं । **अनापत्तीति** विसङ्केतत्ता सब्बाहियेव आपत्तीति अनापत्ति । केची पन "पाचित्तियेनेव अनापत्ति वुत्ता, सूपोदनविञ्ञत्तिदुक्कटं पन होतियेवा" ति वदन्ति, तं न गहेतब्बं । **कप्पियसप्पिना अकप्पियसप्पिना** ति च इदं कप्पियाकप्पियमंसानं वसेन वुत्तं, तस्मा कप्पियमंससप्पिना अकप्पियमंससप्पिनाति एवमेत्थ अत्थो गहतब्बो । **नानावत्थुकानीति** सप्पिनवनीतादीनं वसेन वुत्तं ।

२६१॥ **महानामसिक्खापदेन कारेतब्बो** ति एत्थ–

"अगिलानेन भिक्खुना चतुमासपच्चयपवारणा सादितब्बा अञ्ञत्र पुनपवारणाय अञ्ञत्र निच्चपवारणाय, ततो चे उत्तरि सादियेय्य,पाचित्तियं" ति[1]–

इदं महानामसिक्खापदं नाम । इमिना च सिक्खापदेन संघवसेन गिलानपच्चयपवारणाय पवारितट्ठाने सचे तत्थ रत्तीहि वा भेसज्जेहि वा परिच्छेदो कतो होति, एत्तकायेव रत्तियो एत्तकानि वा भेसज्जानि विञ्ञापेतब्बानीति । अथ ततो रत्तिपरियन्ततो वा भेसज्जपरियन्ततो वा उत्तरि न भेसज्जकरणीयेन वा भेसज्जं अञ्ञभेसज्जकरणीयेन वा अञ्ञं भेसज्जं विञ्ञापेन्तस्स पाचित्तियं वुत्तं । तस्मा अगिलानो गिलानसञ्ञी हुत्वा पञ्च भेसज्जानि विञ्ञापेन्तो न भेसज्जकरणीयेन भेसज्जं विञ्ञापेन्तो नाम होतीति" महानामसिक्खापदेन कारेतब्बो" ति वुत्तं । **एतानि पाटिदेसनीयवत्थूनीति** पाळियं आगतसप्पिआदीनि सन्धाय वुत्तं । पाळियं अनागतानि पन अकप्पियसप्पिआदीनि भिक्खुनीनम्पि दुक्कटवत्थूनीति वेदितब्बं । **सूपोदनविञ्ञत्तियं** ति भिक्खूनं पाचित्तियवत्थूनि भिक्खुनीनं पाटिदेसनीयवत्थूनि च ठपेत्वा अवसेसविञ्ञत्तिं सन्धाय वुत्तं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । पणीतभोजनता, अगिलानता, अकतविञ्ञत्तिया पटिलाभो, अज्झोहणं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

पणीतभोजनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

B. 70

१०. दन्तपोनसिक्खापदवण्णना

२६३॥ दसमे **अय्यवोसाटितकानीति** पितुपिण्डस्सेतं अधिवचनं । **उम्मारे** ति सुसाने कतगेहस्स अत्तनो गेहस्स वा उम्मारे । **घनबद्धो** ति घनमंसेन सम्बद्धो, कथिनसंहतसरीरो ति वुत्तं होति ।

२६४॥ **मुखद्वारं** ति गलनाळिकं । **आहारं** ति अज्झोहरितब्बं यंकिञ्चि यावकालिकादिं । **आहरेय्या** ति मुखद्वारं पवेसेय्य । मुखेन वा पविट्ठं होतु नासिकाय वा, गलेन अज्झोहरणीयत्ता सब्बम्पि तं मुखद्वारं पवेसितमेव होति । यस्मा पन ते

1. वि. २-१३७-पिट्ठे ।

भिक्खू अनाहारेपि उदके आहारसञ्ञाय दन्तपोने च मुखद्वारं आहटं इदं ति अञ्ञाय कुक्कुच्चायिंसु, तस्मा वुत्तं "ते भिक्खू अदिन्नं......पे०..... **सम्मा अत्थं असल्लक्खेत्वा कुक्कुच्चायिंसू"** ति । उदकञ्हि यथासुखं पातुं दन्तकट्ठञ्च दन्तपोनपरिभोगेन परिभुञ्जितुं वट्टति, तस्स पन रसं गिलितुं नं वट्टति । सचे पि दन्तकट्ठरसो अजानन्तस्स अन्तो पविसति, पाचित्तियमेव । अनज्झोहरन्तेन पन दन्तकट्ठं वा होतु अञ्ञं वा, किञ्चि मुखे पक्खिपितुं वट्टति ।

२६५॥ **अकल्लको** ति गिलानो सहत्था परिभुञ्जितुं असक्कोन्तो मुखेन पटिग्गण्हाति । **उच्चारणमत्तं** ति उक्खिपनमत्तं। **एकदेसेनपी**ति अङ्गुलियापि फुट्ठमत्तेन । तं **चे पटिग्गण्हाति, सब्बं पटिग्गहितमेवा** ति वेणुकोटिया बन्धित्वा ठपितत्ता । सचेपि भूमियं ठितमेव घटं दायकेन हत्थपासे ठत्वा घटं दस्सामीति दिन्नवेणुकोटिग्गहणवसेन पटिग्गण्हाति, उभयकोटिबद्धं सब्बम्पि पटिग्गहितमेव होति, भिक्खुस्स अत्थाय अपीळेत्वा पकतिया पीळियमानउच्छुरसं सन्धाय "गण्हथा" ति वुत्तत्ता "**अभिहारो न पञ्ञायती**"ति वुत्तं । हत्थपासे ठितस्स पन भिक्खुस्स अत्थाय पीळियमाना उच्छुतो पग्घरन्तं रसं गण्हितुं वट्टति, दोणिकाय सयं पग्घरन्तं उच्छुरसं मज्झे आवरित्वा आवरित्वा विस्सज्जितम्पि गण्हितुं वट्टति । **कत्थचि** अट्ठकथासु ।

असंहारिमे ति थाममज्झिमेन पुरिसेन असंहारिये । "**तिन्तिणिकादिपण्णेसू**"ति वचनतो साखासु पटिग्गहणं रुहतीति दट्ठब्बं । **पुच्छित्वा पटिग्गहेत्वा**ति एत्थ "पुच्छिते पटिग्गहणकिच्चं नत्थि, तस्मा पुच्छित्वा गहेत्वा ति एवमत्थो गहेतब्बो"ति वदन्ति । B. 71 पुच्छित्वा पटिग्गहेत्वा वाति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो । पत्ते पतितरजनचुण्णञ्हि अब्भन्तरपरिभोगत्थाय अपरिहटभावतो पटिग्गहेत्वा परिभुञ्जितुं वट्टति । पुब्बाभोगस्स अनुरूपेन "**अनुपसम्पन्नस्स दत्वा......पे०......वट्टती**"ति वुत्तं । यस्मा पन तं "अञ्ञस्स दस्सामी" ति चित्तुप्पादमत्तेन परसन्तकं नाम न होति, तस्मा तस्स अदत्वापि पटिग्गहेत्वा परिभुञ्जितुं वट्टति ।

भिक्खुस्स देतीति अञ्ञस्स भिक्खुस्स देति । **कञ्जिकं** ति खीररसादिं यंकिञ्चि द्रवं सन्धाय वुत्तं । हत्थतो मोचेत्वा पुन गण्हाति, उग्गहितकं होतीति आह "**हत्थतो अमोचेन्तेनेवा**" ति । **आलुलेन्तानं** ति आलोलेन्तानं, अयमेव वा पाठो । आहरित्वा भूमियं ठपितत्ता अभिहारो नत्थीति आह "**पत्तो पटिग्गहेतब्बो**" ति । **पठमतरं उळुङ्कतो थेवा पत्ते पतन्ती**ति एत्थ "यथा पठमतरं पतितथेवे दोसो नत्थि, तथा आकिरित्वा अपनेन्तानं पच्छा पतितथेवेपि अभिहटत्ता नेवत्थि दोसो" ति वदन्ति । **चरुकेना** ति खुद्दकभाजनेन । **मुखवट्टिया पि** गहेतुं वट्टतीति मुखवट्टिं उक्खिपित्वा हत्थे फुसापिते गण्हितुं वट्टति । केचीति अभयगिरिवासिनो । **एसनयो** ति कायपटिबद्धपटिबद्धम्पि

कायपटिबद्धमेवा ति अयं नयो । तथा च तत्थ कायपटिबद्धे तंपटिबद्धे च थुल्लच्चयमेव वुत्तं ।

तेना ति यस्स भिक्खुनो सन्तिकं गतं, तेन । तस्मा ति यस्मा मूलट्ठस्सेव परिभोगो अनुञ्ञातो, तस्मा । तं दिवसं हत्थेन गहेत्वा दुतियदिवसे पटिग्गहेत्वा परिभुञ्जन्तस्स उग्गहितकपटिग्गहितं होतीति आह **"अनामसित्वा"** ति । अप्पटिग्गहितत्ता "सन्निधिपच्चया अनापत्ती" ति वुत्तं । अप्पटिग्गहेत्वा परिभुञ्जन्तस्स अदिन्नमुखद्वारापत्ति होतीति आह **"पटिग्गहेत्वा पन परिभुञ्जितब्बं"** ति । **"तं दिवसं......पे०......न ततो परं"** ति वचनतो तं दिवसं हत्थेन गहेत्वा वा अग्गहेत्वा वा ठपितं दुतियदिवसे अप्पटिग्गहेत्वा परिभुञ्जन्तस्स अदिन्नमुखद्वारापत्ति होति, हत्थेन गहेत्वा ठपितं दुतियदिवसे पटिग्गहेत्वा परिभुञ्जन्तस्स पन उग्गहितकपटिग्गहितं होति । अप्पटिग्गहितमेव हि हत्थेन गहेत्वा ठपितं । "सामं **गहेत्वा परिभुञ्जितुं**" ति हि वचनतो अप्पटिग्गहितस्सेव तस्मिं दिवसे परिभोगो अनुञ्ञातो । तस्मा यं वुत्तं B. 72 **गण्ठिपदे तं दिय्यमानं पतती**ति एत्थ यथा गणभोजनादीसु गिलानादीनं कक्कुच्चायन्तानं गणभोजनं अनुञ्ञातं, एवमिधापि भगवता पटिग्गहितमेव कुक्कुच्चविनोदनत्थं अनुञ्ञातं" ति, तं न गहेतब्बं । "तं दिय्यमानं पतती"ति अविसेसेन वुत्तत्ता चतूसुपि कालिकेसु अयं नयो वेदितब्बो ।

सत्थकेनाति पटिग्गहितसत्थकेन । कस्मा पनेत्थ उग्गहितपच्चया सन्निधिपच्चया वा दोसो न सिया ति आह **"न हि तं परिभोगत्थाय परिहरन्ती"** ति । इमिनाव बाहिरपरिभोगत्थं सामं गहेत्वा अनुपसम्पन्नेन दिन्नं वा गहेत्वा परिहरितुं वट्टतीति दीपेति । तस्मा पत्तसम्मक्खनादिअत्थं सामं गहेत्वा परिहटतेलादिं सचे परिभुञ्जितुकामो होति, पटिग्गहेत्वा परिभुञ्जन्तस्स अनापत्ति । अब्भन्तरपरिभोगत्थं पन सामं गहितं पटिग्गहेत्वा परिभुञ्जन्तस्स उग्गहितकपटिग्गहितं होति, अप्पटिग्गहेत्वा परिभुञ्जन्तस्स अदिन्नमुखद्वारापत्ति होति, अब्भन्तरपरिभोगत्थमेव अनुपसम्पन्नेन दिन्नं गहेत्वा परिहरन्तस्स सिङ्गीलोणकप्पो विय सन्निधिपच्चया आपत्ति होति । केचि पन "थाममज्झिमस्स पुरिसस्स उच्चारणमत्तं होतीति आदिना वुत्तपञ्चङ्गसम्पत्तिया पटिग्गहणस्स रुहनतो बाहिरपरिभोगत्थम्पि सचे अनुपसम्पन्नेन दिन्नं गण्हाति, पटिग्गहितमेवा" ति वदन्ति । एवं सति इध बाहिरपरिभोगत्थं अनुपसम्पन्नेन दिन्नं गहेत्वा परिहरन्तस्स सन्निधिपच्चया आपत्ति वत्तब्बा सिया, "न हि तं परिभोगत्थाय परिहरन्ती" ति च न वत्तब्बं, तस्मा बाहिरपरिभोगत्थं गहितं पटिग्गहितं नाम न होतीति वेदितब्बं । यदि एवं पञ्चसु पटिग्गहणङ्गेसु "परिभोगत्थाया" ति विसेसनं वत्तब्बं ति? न वत्तब्बं । पटिग्गहणञ्हि परिभोगत्थमेव होतीति "परिभोगत्थाया" ति विसुं अवत्वा "तञ्चे भिक्खु कायेन वा कायपटिबद्धेन वा पटिग्गण्हाती" ति एत्तकमेव

वुत्तं। अपरे पन "सतिपि पटिग्गहणे 'न हि तं परिभोगत्थाय परिहरन्ती' ति इध अपरिभोगत्थाय परिहरणे अनापत्ति वुत्ता" ति वदन्ति। **उदुक्खलमुसलानि खिय्यन्तीति** एत्थ उदुक्खलमुसलानं खयेन पिसितकोट्टितभेसज्जेसु सचे आगन्तुकवण्णो पञ्ञायति, न वट्टति।

सुद्धं उदकं होतीति रुक्खसाखादीहि गळित्वा पतनउदकं सन्धाय वुत्तं। **पत्तो वास्स पटिग्गहेतब्बोति** एत्थापि पत्तगतं छुपित्वा देन्तस्स हत्थलग्गेन आमिसेन दोसाभावत्थं B. 73 पत्तपटिग्गहणं ति अब्भन्तरपरिभोगत्थमेव पटिग्गहणं वेदितब्बं। **यं सामणेरस्स पत्ते पतति....पे०....पटिग्गहणं न विजहतीति** एत्थ पुनप्पुनं गण्हन्तस्स अत्तनो पत्ते पक्खित्तमेव "अतनो सन्तकं" ति सन्निट्ठानकरणतो हत्थगतं पटिग्गहणं न विजहति, परिच्छिन्दित्वा दिन्नं पन गण्हन्तस्स गहणसमयेयेव "अत्तनो सन्तकं" ति सन्निट्ठानस्स कतत्ता हत्थगतं पटिग्गहणं विजहति। **केसञ्चि अत्थाय ओदनं** पक्खिपतीति एत्थ अनुपसम्पन्नस्स अत्थाय पक्खिपन्तेपि "आगन्त्वा गण्हिस्सती"ति सयमेव पक्खिपित्वा ठपनतो पटिग्गहणं न विजहति, अनुपसम्पन्नस्स हत्थे पक्खित्तं पन अनुपसम्पन्नेनेव ठपितं नाम होतीति पटिग्गहणं विजहति परिच्चत्तभावतो। तेन वुत्तं **"सामणेर......पे०......परिच्चत्तत्ता"** ति।

पटिग्गहणूपगं भारं नाम थाममज्झिमस्स पुरिसस्स उक्खेपारहं। किञ्चापि अविस्सज्जेत्वाव अञ्ञेन हत्थेन पिदहन्तस्स दोसो नत्थि, तथापि न पिदहितब्बं ति अट्ठकथापमाणेनेव गहेतब्बं। **मच्छिकवारणत्थं** ति एत्थ "सचे पि साखाय लग्गरजं पत्ते पतति, सुखेन परिभुञ्जितुं सक्का ति साखाय पटिग्गहितत्ता अब्भन्तर-परिभोगत्थमेविध पटिग्गहणं ति मूलपटिग्गहणमेव वट्टती"ति वुत्तं। अपरे पन "मच्छिकवारणत्थं ति एत्थ वचनमत्तं गहेत्वा बाहिरपरिभोगत्थं गहितं" ति वदन्ति। **तस्मिम्पि असतीति** चाटिया वा कुण्डके वा असति। **अनुपसम्पन्नं गाहापेत्वा** ति तंयेव अज्झोहरणीयभण्डं अनुपसम्पन्नेन गाहापेत्वा। **थेरस्स पत्तं अनुथेरस्सा** ति थेरस्स पत्तं अत्तना गहेत्वा अनुथेरस्स देति। तुय्हं यागुं मय्हं देहीति एत्थ एवं वत्वा सामणेरस्स पत्तं गहेत्वा अत्तनोपि पत्तं तस्स देति। **एत्थ पना ति** पण्डितो सामणेरो ति आदिपत्तपरिवत्तनकथाय। **कारणं उपपरिक्खितब्बं** ति यथा मातुआदीनं तेलादीनि हरन्तो तथारूपे किच्चे अनुपसम्पन्नेन अपरिवत्तेत्वाव परिभुञ्जितुं लभति, एवमिध पत्तपरिवत्तनं अकत्वा परिभुञ्जितुं न लभतीति एत्थ कारणं वीमंसितब्बं ति अत्थो।

एत्थ पन[1] "सामणेरेहि गहिततण्डुलेसु परिक्खीणेसु अवस्सं अम्हाकं सामणेरा सङ्गहं करोन्तीति वितक्कुप्पत्ति सम्भवति, तस्मा तं परिवत्तेत्वाव परिभुञ्जितब्बं।

1. केचि पनेत्थ (स्या.)।

B. 74 मातापितूनं अत्थाय पन छायत्थाय वा गहणे परिभोगासा नत्थि, तस्मा तं वट्टती"ति कारणं वदन्ति। तेनेव **आचरियबुद्धदत्तत्थेरेन** पि वुत्तं–

"मातापितूनमत्थाय, तेलादिहरतो पि च।
साखं छायादिअत्थाय, इमेसं न विसेसति[1]।
तस्मा हिस्स विसेसस्स, चिन्तेतब्बं तु कारणं।
तस्स सालयभावं तु, विसेसं तक्कयाम तं" ति[2]।

इदमेवेत्थ युत्ततरं अवस्सं तथाविधवितक्कुप्पतिया सम्भवतो। न सक्का हि एत्थ वितक्कं सोधेतुं ति। मातादीनं अत्थाय हरणे पन नावस्सं तथाविधवितक्कुप्पत्तीति सक्का वितक्कं सोधेतुं। यत्थ हि वितक्कं सोधेतुं सक्का, तत्थ नेवत्थि दोसो। तेनेव वक्खति "सचे पन सक्कोति वितक्कं सोधेतुं ततो लद्धं खादितुम्पि वट्टती" ति।

निच्चालेतुं न सक्कोतीति निच्चालेत्वा सक्खरा अपनेतुं न सक्कोति। **आधारके पत्तो ठपितो होतीति** पटिग्गहेतब्बपत्तं सन्धाय वुत्तं। **चालेतीति** विना कारणं **चालेति**। सतिपि कारणे भिक्खूनं परिभोगारहं चालेतुं न वट्टती। किञ्चापि "अनुजानामि भिक्खवे अमनुस्सिकाबाधे आमकमंसं आमकलोहितं" ति[3] तादिसे आबाधे अत्तनो अत्थाय आमकमंसपटिग्गहणं अनुञ्ञातं, "आमकमंसपटिग्गहणापटिविरतो होती" ति च सामञ्ञतो पटिक्खित्तं, तथापि अत्तनो अञ्ञस्स वा भिक्खुनो अत्थाय अग्गहितत्ता "सीहविघासादिं......पे०.....**वट्टती**" ति वुत्तं। **सक्कोति वितक्कं सोधेतुं** ति मय्हम्पि देतीति वितक्कस्स अनुप्पन्नभावं सल्लक्खेतुं सक्कोति, सामणेरस्स दस्सामीति सुद्धचित्तेन मया गहितं ति वा सल्लक्खेतुं सक्कोति।

सचे पन मूले पि पटिग्गहितं होतीति एत्थ "गहेत्वा गते मय्हम्पि ददेय्युं ति सञ्ञाय सचे पटिग्गहितं होती" ति वदन्ति। **कोट्ठासे करोतीति** भिक्खुसामणेरा च अत्तनो B. 75 अत्तनो अभिरुचितं कोट्ठासं गण्हन्तूति सब्बेसं समके कोट्ठासे करोति। **गहितावसेसं** ति सामणेरेहि गहितकोट्ठासतो अवसेसं। **गण्हित्वा** ति "मय्हं इदं गण्हिस्सामी"ति गहेत्वा। इध गहितावसेसं नाम तेन गण्हित्वा पुन ठपितं। **पटिग्गहेत्वा** ति तदहु पटिग्गहेत्वा। तेनेव **"यावकालिकेन यावजीविकसंसग्गे दोसो** नत्थी"ति वुत्तं। सचे पन पुरिमदिवसे पटिग्गहेत्वा ठपिता होति, सामिसेन मुखेन तस्सा वट्टिया धूमं पिवितुं न वट्टति। **समुद्दोदकेना** ति अप्पटिग्गहितसमुद्दोदकेन। यस्मा कतकट्ठि उदकं पसादेत्वा विसुं तिट्ठति, तस्मा **"अब्बोहारिकं"** ति वुत्तं। **लग्गतीति** मुखे हत्थे च उदके सुक्खे सेतवण्णं दस्सेन्तं लग्गति। **पानीयं गहेत्वा** ति अत्तनोयेव अत्थाय गहेत्वा। सचे पन पीतावसेसं

1. इमस्स न विसेसता (स्या.)।
2. तक्कयामहं ति (स्या.)।
3. वि. ३-२९४ पिट्ठे।

तत्थेव आकिरिस्सामीति गण्हाति, पुन पटिग्गहणकिच्चं नत्थि । विक्खम्भेत्वा ति वियूहित्वा, अपनेत्वा ति अत्थो ।

महाभूतेसूति सरीरनिस्सितेसु महाभूतेसु । **पततीति** विच्छिन्दित्वा पतति । विच्छिन्दित्वा पतितमेव हि पटिग्गहेतब्बं, न इतरं । **अल्लदारुं रुक्खतो छिन्दित्वा पि कातुं वट्टतीति** एत्थ मत्तिकत्थाय पथविं खणितुम्पि वट्टतीति वेदितब्बं । **सप्पदट्ठक्खणेयेव वट्टतीति** असति कप्पियकारके सामं गहेत्वा परिभुञ्जितुं वट्टति, अञ्ञदा पटिग्गहापेत्वा परिभुञ्जितब्बं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अप्पटिग्गहितता-अननुञ्ञातता, धूमादिअब्बोहारिकाभावो, अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

दन्तपोनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

निट्ठितो भोजनवग्गो चतुत्थो ।

----

५. अचेलकवग्ग

१. अचेलकसिक्खापदवण्णना

२७३॥ अचेलकवग्गस्स पठमसिक्खापदे **तेसं** ति तित्थियानं। **तत्था** ति भाजने। **इतो** ति पत्ततो। **सचे तित्थियो वदतीति** "पठममेव मं सन्धाय अभिहरित्वा ठपितं मय्हं सन्तकं होति, इमस्मिं भाजने आकिरथा" ति वदति, वट्टति। सेसमेत्थ B.76 उत्तानमेव। अञ्ञतित्थियता, अज्झोहरणीयता[1], अज्झोहरणत्थाय सहत्था अनिक्खित्त-भाजने दानं ति इमानि तीणि अङ्गानि।

अचेलकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

२. उय्योजनसिक्खापदवण्णना

२७४॥ दुतियं उत्तानत्थमेव। अनाचारं आचरितुकामता, तदत्थमेव उप-सम्पन्नस्स उय्योजना, एवं उय्योजेन्तस्स उपचारातिक्कमो ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि।

उय्योजनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

३. सभोजनसिक्खापदवण्णना

२८०॥ ततिये **पिट्ठसङ्घाटोति** द्वारबाहायेतं अधिवचनं। खुद्दकं नाम सयनिघरं वित्थारतो पञ्चहत्थप्पमाणं होति, तस्स च मज्झिमट्ठानं पिट्ठसङ्घाटतो अड्ढतेय्य-हत्थप्पमाणमेव होति, तस्मा तादिसे सयनिघरे पिट्ठसङ्घाटतो हत्थपासं विजहित्वा निसिन्नो पिट्ठिवंसं अतिक्कमित्वा निसिन्नो नाम होति। एवं निसन्नो च मज्झं अतिक्कमित्वा निसिन्नो नाम होतीति आह **"इमिना मज्झातिक्कमं दस्सेती"** ति। **यथा वा तथा वा कतस्सा** ति पिट्ठिवंसं आरोपेत्वा वा अनारोपेत्वा वा कतस्स। **सचित्तकं** ति अनुपविसित्वा निसीदनचित्तेन सचित्तकं। सेसमेत्थ उत्तानमेव। परियुट्ठित-रागजायम्पतिकानं सन्निहितता, सयनिघरता, दुतियस्स भिक्खुनो अभावो, अनुपखज्ज निसीदनं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि।

सभोजनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

२८४-२८९॥ चतुत्थपञ्चमेसु नत्थि किञ्चि वत्तब्बं।

---

1. अननुञ्ञातअज्झोहरणीयता (स्या.)।

६. चारित्तसिक्खापदवण्णना

B. 77

२९८॥ छट्ठे **पकतिवचनेनाति** एत्थ यं द्वादसहत्थब्भन्तरे ठितेन सोतुं सक्का भवेय्य, तं पकतिवचनं नाम । **आपुच्छितब्बोति** "अहं इत्थन्नामस्स घरं गच्छामी" ति वा "चारित्तं आपज्जामी"ति वा ईदिसेन वचनेन आपुच्छितब्बो । सेसमेत्थ उत्तानमेव । पञ्चन्नं भोजनानं अञ्ञतरेन निमन्तनसादियनं, सन्तं भिक्खुं अनापुच्छना, भत्तियघरतो अञ्ञघरप्पवेसनं, मज्झन्हिकानतिक्कमो, समयस्स वा आपदानं वा अभावो ति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि ।

चारित्तसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

७. महानामसिक्खापदवण्णना

३०३॥ सत्तमे **महानामो नामाति** अनुरुद्धत्थेरस्स भाता भगवतो चूळपितु पुत्तो । सुद्धोदनो सक्कोदनो सुक्कोदनो धोतोदनो अमितोदनो ति इमे हि पञ्च जना भातरो । अमिता नाम देवी तेसं भगिनी, तिस्सत्थेरो तस्सा पुत्तो । तथागतो च नन्दत्थेरो च सुद्धोदनस्स पुत्ता, महानामो च अनुरुद्धत्थेरो च सुक्कोदनस्स, आनन्दत्थेरो अमितोदनस्स । सो भगवतो कनिट्ठो, महानामो महल्लकतरो साकदागामी अरियसावको । तेन वुत्तं "महानामो नाम......पे०.....अरियसावको" ति ।

३०५-३०६॥ पाळियं **अज्जण्हो** ति अज्ज एकदिवसं ति अत्थो, "अज्ज नो" ति वा अत्थो गहेतब्बो, नो अम्हाकं । **कालं आहरिस्सथा** ति स्वे हरिस्सथ । **ततो चे उत्तरि सादियेय्याति** सचे तत्थ रत्तीहि वा भेसज्जेहि वा परिच्छेदो कतो होति "एत्तकायेव वा रत्तियो एत्तकानि वा भेसज्जानि विञ्ञापेतब्बानी"ति, ततो रत्तिपरियन्ततो वा भेसज्जपरियन्ततो वा उत्तरि विञ्ञापेन्तो सादियेय्य । "इमेहि तया भेसज्जेहि पवारितम्ह, अम्हाकञ्च इमिनाव भेसज्जेन अत्थो" ति आचिक्खित्वा विञ्ञापेतुम्पि गिलानोव लभति ।

३१०॥ यस्मा संघपवारणायमेवायं विधि, तस्मा **"ये अत्तनो पुग्गलिकाय पवारणाय पवारिता"** ति वुत्तं । सेसं उत्तानमेव ।

संघपवारणता, भेसज्जविञ्ञत्ति, अगिलानता, परियन्तातिक्कमोति इमानि पनेत्थ चतारि अङ्गानि ।

B. 78

महानामसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

८. उय्युत्तसेनासिक्खापदवण्णना

३११॥ अट्ठमं उत्तानत्थमेव । उय्युत्तसेना, दस्सनत्थाय गमनं, अनुञ्ञातोकासतो अञ्ञत्र दस्सनं, तथारूपपच्चयस्स आपदाय वा अभावो ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

उय्युत्तसेनासिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

९. सेनावाससिक्खापदवण्णना

३१७॥ नवमसिक्खापदम्पि उत्तानमेव । तिरत्तातिक्कमो, सेनाय सूरियस्स अत्थङ्गमो, गिलानतादीनं अभावो ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

सेनावाससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

१०. उय्योधिकसिक्खापदवण्णना

३२२॥ **दसमे कति ते लक्खानि लद्धानीति** तव सरप्पहारस्स लक्खणभूता कित्तका जना तया लद्धाति अत्थो, कित्तका तया विद्धाति वुत्तं होति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । उय्योधिकादिदस्सनत्थाय गमनं, अनुञ्ञातोकासतो अञ्ञत्र दस्सनं, तथारूप-पच्चयस्स आपदाय वा अभावो ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

उय्योधिकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

निट्ठितो अचेलकवग्गो पञ्चमो ।

---

६. सुरापानवग्ग

१. सुरापानसिक्खापदवण्णना

३२६–३२८॥ सुरापानवग्गस्स पठमसिक्खापदे **वतिया** ति गामपरिक्खेपवतिया। पाळियं पिट्ठसुरादीसु पिट्ठं भाजने पक्खिपित्वा तज्जं उदकं दत्वा मद्दित्वा कता **पिट्ठसुरा**। एवं पूवे ओदने च भाजने पक्खिपित्वा तज्जं उदकं दत्वा मद्दित्वा कता **पूवसुरा ओदनसुरा** ति च वुच्चति। "किण्णा" ति पन तस्सा सुराय बीजं वुच्चति। ये सुरामोदकातिपि वुच्चन्ति, ते पक्खिपित्वा कता **किण्णपक्खित्ता**। हरीतकीसासपादिनानासम्भारेहि संयोजिता **सम्भारसंयुत्ता**।

मधुकतालनाळिकेरादिपुप्फरसो चिरपरिवासितो **पुप्फासवो**। पनसादिफलरसो **फलासवो**। मुद्दिकारसो **मध्वासवो**। उच्छुरसो **गुळासवो**। हरीतकामलककटुकभण्डादिनानासम्भारानं रसो चिरपरिवासितो **सम्भारसंयुत्तो**। **बीजतो पट्ठाया** ति सम्भारे पटियादेत्वा चाटियं पक्खित्तकालतो, तालनाळिकेरादीनं पुप्फरसस्स[1] गहितअभिनवकालतोयेव च पट्ठाय।

३२९॥ **लोणसोवीरकं सुत्तञ्च** अनेकेहि भेसज्जेहि अभिसङ्खतो अमज्जभूतो आसवविसेसो। वासग्गाहापनत्थं ति सुगन्धिभावग्गाहापनत्थं। **अचित्तकं लोकवज्जं** ति एत्थ यं वत्तब्बं, तं पठमपाराजिकवण्णनायं वुत्तनयेन वेदितब्बं। सेसमेत्थ उत्तानमेव। मज्जभावो, तस्स पानञ्चाति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि।

सुरापानसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

२. अङ्गुलिपतोदकसिक्खापदवण्णना

३३०॥ दुतिये **भिक्खुनीपि अनुपसम्पन्नट्ठाने ठिता** ति एत्थ भिक्खुपि भिक्खुनिया अनुपसम्पन्नट्ठाने ठितोति वेदितब्बो। सेसमेत्थ उत्तानमेव। हसाधिप्पायता, उपसम्पन्नस्स कायेन कायामसनं ति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि।

अङ्गुलिपतोदकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

1. रसं (क)।

B. 80

३. हसधम्मसिक्खापदवण्णना

३३५॥ ततियं उत्तानत्थमेव । उपरिगोप्फकता, हसाधिप्पायेन कीळनं ति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

हसधम्मसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

४. अनादरियसिक्खापदवण्णना

३४४॥ चतुत्थे **गारय्हो आचरियुग्गहो न गहेतब्बो** ति यस्मा उच्छुरसो सत्ताहकालिको, तस्स कसटो यावजीविको, द्विन्नंयेव समवायो उच्छुयट्ठि, तस्मा विकाले उच्छुयट्ठिं खादितुं वट्टति गुळहरीतकं वियाति एवमादिको गारय्हाचरियवादो न गहेतब्बो । **लोकवज्जे आचरियुग्गहो वनट्ठतीति** लोकवज्जसिक्खापदे आपत्तिट्ठाने यो आचरियवादो, सो न गहेतब्बो, लोकवज्जं अतिक्कमित्वा "इदं अम्हाकं आचरियुग्गहो" ति वदन्तस्स उग्गहो न वट्टतीति अधिप्पायो । **सुत्तानुलोमं** नाम अट्ठकथा । **पवेणिया आगतसमोधानं गच्छतीति** "पवेणिया आगतो आचरियुग्गहोव गहेतब्बो" ति एवं वुत्ते महाअट्ठकथावादेयेव सङ्गहं गच्छतीति अधिप्पायो । सेसमेत्थ उत्तानमेव । उपसम्पन्नस्स पञ्ञत्तेन वचनं, अनादरियकरणं ति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

अनादरियसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

५. भिंसापनसिक्खापदवण्णना

३४५॥ पञ्चमं उत्तानत्थमेव । उपसम्पन्नता, तस्स दस्सनसवनविसये भिंसापेतुकामताय वायमनं ति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

भिंसापनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

B. 81

६. जोतिसिक्खापदवण्णना

३५०॥ छट्ठे भग्गा नाम जनपदिनो राजकुमारा, तेसं निवासो एकोपि जनपदो रुळ्हीसद्देन "भग्गा" ति वुच्चति । तेन वुत्तं **भग्गाति जनपदस्स नामं**" ति । **सुसुमारगिरे-**

ति[1] एवंनामके नगरे। तस्स किर नगरस्स मापनत्थं वत्थुविज्जाचरियेन नगरट्ठानस्स परिग्गण्हनदिवसे अविदूरे सुसुमारो सद्दमकासि गिरं निच्छारेसि। अथ अनन्तरायेन नगरे मापिते तमेव सुसुमारगिरणं सुभनिमित्तं कत्वा सुसमारगिरंत्वेवस्स नामं अकंसु। केचि पन "सुसुमारसण्ठानत्ता सुसुमारो नाम एको गिरि। सो तस्स नगरस्स समीपे, तस्मा तं सुसुमारगिरि एकस्स अत्थीति, 'सुसुमागिरी'ति वुच्चती"ति वदन्ति। तथा वा होतु अञ्ञथा वा, नाममेतं तस्स नगरस्सा ति आह **"सुसुमारगिरं ति नगरस्स नामं"** ति। **भेसकळा** ति घम्पण्डनामको[2] गच्छविसेसो। केचि "सेतरुक्खो" ति पि वदन्ति। तेसं बहुलताय पन तं वनं भेसकळावनन्त्वेव पञ्ञायित्थ। "भेसगळावने" ति पि पाठो। "भेसो नाम एको यक्खो अयुत्तकारी, तस्स ततो गळितट्ठानताय तं वनं भेसगळावनं नाम जातं" ति हि केचि।

३५२॥ जोतिकरणे ति अग्गिकरणे। सेसमेत्थ उत्तानमेव। अगिलानता, अनुञ्ञातकरणाभावो, विसिब्बेतुकामता, समादहनं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि।

जोतिसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

७. नहानसिक्खापदवण्णना

३५७॥ सत्तमसिक्खापदस्स पाळियं **असिम्भिन्नेनाति** अमक्खितेन, अनट्ठेनाति अत्थो। **ओरेनद्धमासं नहायेय्या** ति नहातदिवसतो पट्ठाय अद्धमासे अपरिपुण्णे नहायेय्य। सेसमेत्थ उत्तानमेव। मज्झिमदेसो, ऊनकद्धमासे नहानं, समयानं वा नदीपारगमनस्स वा आपदानं वा अभावो ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि।

नहानसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

८. दुब्बण्णकरणसिक्खापदवण्णना

B. 82

३६८॥ अट्ठमे "**चम्मकारनीलं** नाम पकतिनीलं" ति तीसुपि गण्ठिपदेसु वुत्तं। **गण्ठिपदे** पन "चम्मकारा उदके तिपुमलं अयगूथञ्च पक्खिपित्वा चम्मं काळं करोन्ति,

---

1. सुंसुमारगिरेति (स्या.)।
2. सम्मच्चुनामको (सी.), घम्मण्डनामको (स्या.)।

तं चम्मकारनीलं" ति वुत्तं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । वुत्तप्पकारस्स चीवरस्स अकतकप्पता, अनट्ठचीवरादिता, निवासनं वा पारुपनं वा ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

दुब्बण्णकरणसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

९. विकप्पनसिक्खापदवण्णना

३७४ ॥ नवमे अपच्चुद्धारणं[1] ति "मय्हं सन्तकं परिभुञ्ज वा विस्सज्जेहि वा" ति आदिना अकतपच्चुद्धारं । **येन विनयकम्मं कतं** ति येन सद्धिं विनयकम्मं कतं । **तिंसकवण्णनायं** ति निस्सग्गियवण्णनायं । परिभोगेन **कायकम्मं,** अपच्चुद्धारापनेन **वचीकम्मं** । सेसमेत्थ उत्तानमेव । सामं विकप्पितस्स अपच्चुद्धारो, विकप्पनुपग-चीवरता, परिभोगोति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

विकप्पनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता

---

१०. चीवरअपनिधानसिक्खापदवण्णना

३७७॥ दसमं उत्तानत्थमेव । उपसम्पन्नस्स सन्तकानं पत्तादीनं अपनिधानं, विहेसेतुकामता वा हसाधिप्पायता वाति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

चीवरअपनिधानसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

निट्ठितो सुरापानवग्गो छट्ठो ।

---

1. अपच्चुद्धारकंति (स्या क) ।

७. सप्पाणकवग्ग

B. 83

१. सञ्चिच्चसिक्खापदवण्णना

३८२॥ सप्पाणकवग्गस्स पठमसिक्खापदे उसुं सरं अस्सति खिपतीति **इस्सासो,** धनुसिप्पकुसलो ति आह **"धनुग्गहाचरियो"** ति । पटिसत्तुविधमनत्थं धनुं गण्हन्तीति धनुग्गहा, तेसं आचरियो **धनुग्गहाचरियो । अप्पमत्तेन वत्तं कातब्बं** ति यथा ते पाणा न मरन्ति, एवं सूपट्ठितस्सतिना सेनासने वत्तं कातब्बं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अङ्गानिपि मनुस्सविग्गहे वुत्तनयेन वेदितब्बानीति ।

सञ्चिच्चसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

२. सप्पाणकसिक्खापदवण्णना

३८७॥ दुतिये **उदकसण्ठानकप्पदेसे**ति यत्थ भूमिभागे उदकं निक्खित्तं[1] सन्तिट्ठति, न सहसा परिक्खयं गच्छति, तादिसे पदेसे । सेसमेत्थ उत्तानमेव अङ्गानि सिञ्चनसिक्खापदे वुत्तनयानेव ।

सप्पाणकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

३. उक्कोटनसिक्खापदवण्णना

३९२॥ ततिये **यथापतिट्ठितभावेन पतिट्ठातुं न देन्ती**ति तेसं पवत्तिआकारदस्सनत्थं वुत्तं । यं पन धम्मेन अधिकरणं निहतं, तं सुनिहतमेव । सचे विप्पकते कम्मे पटिक्कोसति, तं १सञ्ञापेत्वाव कातब्बं । इतरथा कम्मञ्च कुप्पति, कारकानञ्च आपत्ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । यथाधम्मं निहतभावो, जानना, उक्कोटनाति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

उक्कोटनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

1. उदकनिमित्तं (क) ।

४. दुट्ठुल्लसिक्खापदवण्णना

B. 84

३९९॥ चतुत्थे **तस्सेवा** ति यो आपन्नो, तस्सेव । **आरोचेतीति** पटिच्छादनत्थमेव मा कस्सचि आरोचेसी ति वदति । **वत्थुपुग्गलो** ति आपन्नपुग्गलो । **येनस्स आरोचितं** ति येन दुतियेन अस्स ततियस्स आरोचितं । **कोटि छिन्ना होतीति** यस्मा पटिच्छादनपच्चया आपत्तिं आपज्जित्वाव दुतियेन ततियस्स आरोचितं, तस्मा तप्पच्चया पुन तेन आपज्जितब्बापत्तिया अभावतो आपत्तिया कोटि छिन्ना नाम होति ।

४००॥ "**अनुपसम्पन्नस्स सुक्कविस्सट्ठि च कायसंसग्गो चाति अयं** दुट्ठुल्लअज्झाचारो नामा" ति इदं दुट्ठुल्लारोचनसिक्खापदट्ठकथाय न समेति । वुत्तञ्हि तत्थ[1] "अनुपसम्पन्नस्स दुट्ठुल्लं वा अदुट्ठुल्लं वा अज्झाचारं ति एत्थ आदितो पञ्च सिक्खापदानि दुट्ठुल्लो नाम अज्झाचारो, सेसानि दुट्ठुल्लो, सुक्कविस्सट्ठिकायसंसग्गदुट्ठुल्लअत्तकामा पनस्स अज्झाचारो नामा" ति । आरोचने अनुपसम्पन्नस्स दुट्ठुल्लं अञ्ञथा अधिप्पेतं, पटिच्छादने अञ्ञथा" ति एत्थापि विसेसकारणं न दिस्सति, तस्मा अट्ठकथाय पुब्बेनापरं न समेति । अविरोधं इच्छन्तेन पन वीमंसितब्बमेत्थ कारणं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । उपसम्पन्नस्स दुट्ठुल्लापत्तिजाननं, पटिच्छादेतुकामताय नारोचेस्सामीति धुरनिक्खेपोति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

दुट्ठुल्लसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

५. ऊनवीसतिवस्ससिक्खापदवण्णना

४०२॥ पञ्चमे **रूपसुत्तं** ति हेरञ्ञिकानं सुत्तं । **दुरुत्तानं** ति अक्कोसवसेन दुरुत्तानं, दुरुत्तत्तायेव **दुरागतानं** । **वचनपथानं** ति एत्थ वचनमेव तदत्थं ञातुकामानं ञापेतुकामानञ्च पथोति वचनपथो । **दुक्खमानं** ति दुक्खेन खमितब्बानं ।

B. 85

४०४॥ गब्भे सयितकालेन सद्धिं वीसतिमं वस्सं अस्साति **गब्भवीसो** । **हायनवड्ढनं** ति गब्भमासेसु अधिकेसु उत्तरिहायनं, ऊनेसु वड्ढनं ति वेदितब्बं । **एकूनवीसतिवस्सं** ति द्वादसमासे मातुकुच्छिस्मिं वसित्वा महापवारणाय जातकालतो पट्ठाय एकूनवीसतिवस्सं । **पाटिपददिवसे** ति पच्छिमिकाय वस्सूपगमनदिवसे ।" तिंसरत्तिदिवो मासो" ति[2] वचनतो "**चत्तारो मासा परिहायन्ती**" ति वुत्तं । वस्सं **उक्कड्ढन्तीति** वस्सं उद्धं कड्ढन्ति, ततिये संवच्छरे एकमासं अधिकमासवसेन परिच्चजन्ता वस्सं उद्धं कड्ढन्तीति अत्थो, तस्मा ततियो संवच्छरो तेरसमासिको होति, संवच्छरस्स पन

1. वि. ट्ठ. ३-२० पिट्ठे ।
2. अं. १-२१३, अं. ३-८५, अभि. २-४३७ पिट्ठेसु ।

द्वादसमासिकत्ता अट्ठारससु वस्सेसु अधिकमासे विसुं गहेत्वा **"छ मासा वड्ढन्ती"** ति वुत्तं । **ततो** ति छमासतो । **निक्कङ्खा** हुत्वा ति अधिकमासेहि सद्धिं परिपुण्णवीसतिवस्सत्ता निब्बेमतिका हुत्वा । यं पन वुत्तं तीसु **गण्ठिपदेसु** "अट्ठारसन्नंयेव वस्सानं अधिकमासे गहेत्वा गणितत्ता सेसवस्सद्वयस्सपि अधिकानि दिवसानि होन्तेव, तानि अधिकदिवसानि सन्धाय "निक्कङ्खा हुत्वा" ति वुत्तं" ति, तं न गहेतब्बं । न हि द्वीसु वस्सेसु अधिकदिवसानि नाम विसुं उपलब्भन्ति ततिये वस्से वस्सुक्कड्ढनवसेन अधिकमासे परिच्चत्तेयेव अतिरेकमाससम्भवतो । तस्मा द्वीसु वस्सेसु अतिरेकदिवसानि नाम विसुं न सम्भवन्ति ।

ननु च "ते द्वे मासे गहेत्वा वीसतिवस्सानि परिपुण्णानि होन्ती"ति कस्मा वुत्तं, एकूनवीसतिवस्सम्हि[1] पुन अपरस्मिं वस्से पक्खित्ते वीसतिवस्सानि परिपुण्णानि होन्तीति आह **"एत्थ पन......पे०......वुत्तं"** ति । अनेकत्थात्ता निपातानं **पन**-सद्दो हिसद्दत्थे, एत्थ हीति वुत्तं होति । इदञ्हि वुत्तस्सेवत्थस्स समत्थनवसेन वुत्तं । इमिना च इमं दीपेति "यं वुत्तं 'एकूनवीसतिवस्सं सामणेरं निक्खमनीयपुण्णमासिं अतिक्कम्म पाटिपददिवसे उपसम्पादेन्ती'ति, तत्थ गब्भमासेपि अग्गहेत्वा द्वीहि मासेहि अपरिपुण्णवीसतिवस्सं सन्धाय 'एकूनवीसतिवस्सं' ति वुत्तं, तस्मा अधिकमासेसु द्वीसु गहितेसु वीसतिवस्सानि परिपुण्णानि नाम होन्ती"ति । **तस्मा** ति यस्मा गब्भमासापि गणनूपगा होन्ति, तस्मा । **एकवीसतिवस्सो होतीति** जातदिवसतो पट्ठाय वीसतिवस्सो समानो गब्भमासेहि सद्धिं एकवीसतिवस्सो होति ।

४०६॥ **अञ्ञं उपसम्पादेतीति** उपज्झायो कम्मवाचाचरियो वा हुत्वा उपसम्पादेति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । ऊनवीसतिवस्सता, ऊनकसञ्ञिता, उपसम्पादनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि । B. 86

ऊनवीसतिवस्ससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

६. थेय्यसत्थसिक्खापदवण्णना

४०७॥ छट्ठसिक्खापदं उत्तानत्थमेव । थेय्यसत्थकभावो, जाननं, संविधानं, अविसङ्केतेन गमनं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

थेय्यसत्थसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

४१२॥ सत्तमे नत्थि किञ्चि वत्तब्बं ।

---

1. एकूनवीसतिवस्सञ्हि (क) ।

८. अरिट्ठसिक्खापदवण्णना

४१७॥ अट्ठमे **बाधयिंसूति** हनिंसु। तं तं सम्पत्तिया विबन्धनवसेन सत्तसन्तानस्स अन्तरे वेमज्झे एति आगच्छतीति अन्तरायो, दिट्ठधम्मिकादिअनत्थो। अनतिक्कमनट्ठेन तस्मिं अन्तराये नियुत्ता, अन्तरायं वा फलं अरहन्ति, अन्तरायस्स वा करणसीला ति **अन्तरायिका**। तेनाह "**अन्तरायं करोन्तीति अन्तरायिका** ति।

आनन्तरियधम्मा ति आनन्तरिकसभावा चेतनाधम्मा। तत्रायं वचनत्थो–चुतिअनन्तरफलं अनन्तरं नाम, तस्मिं अनन्तरे नियुत्ता, तंनिब्बत्तनेन अनन्तरकरणसीला, अनन्तरप्पयोजना ति वा आनन्तरिका, ते एव **आनन्तरिया** ति वुत्ता। कम्मानि एव अन्तरायिका ति **कम्मन्तरायिका**। **मोक्खस्सेव अन्तरायं करोति, न सग्गस्साति** मिच्छाचारलक्खणाभावतो वुत्तं। न हि भिक्खुनिया धम्मरक्खितभावो अत्थि। पाकतिकभिक्खुनीवसेन चेतं वुत्तं। अरियाय पन पवत्तं अपायसंवत्तनिकमेव, 3.87 नन्दमाणवको चेत्थ निदस्सनं। उभिन्नं समानच्छन्दतावसेन वा न सग्गन्तरायिकता, मोक्खन्तरायिकता पन मोक्खत्थाय पटिपत्तिया विदूसनतो[1]। अभिभवित्वा पन पवत्तियं सग्गन्तरायिकतापि न सक्का निवारेतुं ति।

अहेतुकदिट्ठिअकिरियदिट्ठिनत्थिकदिट्ठियोव नियतभावं पत्ता **नियतमिच्छादिट्ठिधम्मा**। **पटिसन्धिधम्मा** ति पटिसन्धिचित्तुप्पादमाह। पण्डकादिग्गहणञ्चेत्थ निदस्सनमत्तं सब्बाय पि अहेतुकपटिसन्धिया विपाकन्तरायिकभावतो। याहि अरिये उपवदति, ता चेतना **अरियूपवादा** जाता। **ततो परं** ति खमापनतो उपरि। यं पनेत्थ वत्तब्बं, तं दिब्बचक्खुकथायं वुत्तमेव। **सञ्चिच्च आपन्ना आपत्तियो** ति सञ्चिच्च वीतिक्कन्ता सत्त आपत्तिखन्धा। सञ्चिच्च वीतिक्कन्तञ्हि अन्तमसो दुक्कट दुब्भासितम्पि सग्गमग्गफलानं अन्तरायं करोति। **याव भिक्खुभावं पटिजानाति** पाराजिकं आपन्नो, **न वुट्ठाति** सेसगरुकापत्तिं आपन्नो, न देसेति लहुकापत्तिं आपन्नो।

अयं भिक्खूति अरिट्ठो भिक्खु। **रसेन रसं संसन्दित्वा** ति अनवज्जेन पच्चयपरिभुञ्जनरसेन सावज्जकामगुणपरिभोगरसं समानेत्वा। योनिसो पच्चवेक्खणेन नत्थि एत्थ छन्दरागो ति **निच्छन्दरागो**, पच्चयपरिभोगो। **उपनेन्तो विया** ति बन्धनं उपनेन्तो विय। "घटेन्तो विया" ति पि पाठो। **उपसंहरन्तो विया ति**" सदिसतं उपसंहरन्तो विय। एकन्तसावज्जे अनवज्जभावपक्खेपनतो। **पापकं** ति लामकट्ठेन दुग्गतिसम्पापनट्ठेन च पापकं। **महासमुद्दं बन्धन्तेन विया** ति सेतुकरणवसेन महासागरं बन्धन्तेन विय। **सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन सद्धिं पटिविरुज्झन्तो** ति सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन "सावज्जं"ति दिट्ठं "अनवज्जं" ति गहणेन तेन सह पटिविरुज्झन्तो। **आणाचक्के** ति

---

1. विद्धंसनतो (स्या.)।

पठमपाराजिकसिक्खापदसङ्खाते, "अब्रह्मचरियं पहाया" ति आदिदेसनासङ्खाते च आणाचक्के ।

अट्ठिकङ्कलं नाम उरट्ठि वा पिट्ठिकण्डकं वा सीसट्ठि वा । तञ्हि निम्मंसत्ता "कङ्कलं" ति वुच्चति । विगतमंसाय हि अट्ठिसङ्खलिकाय एकट्ठिम्हि वा कङ्कल-सद्दो निरुळ्हो । **अनुदहनट्ठेनाति** अनुपायपटिपत्तिया सम्पति आयतिञ्च अनुदहनट्ठेन । **महाभितापनट्ठेन** अनवट्ठितसभावताय, **इत्तरपच्चुपट्ठानट्ठेन मुहुत्तकरणीयताय**, तावकालि- B. 88 कट्ठेन परेहि अभिभवनताय, **सब्बङ्गपच्चङ्गपलिभञ्जनट्ठेन** भेदनादिअधिकरणभावेन[1], उग्घाटसदिसताय **अधिकुट्टनट्ठेन**, अवणे वणं उप्पादेत्वा अन्तो अनुपविसनभावताय **विनिविज्झनट्ठेन**, दिट्ठधम्मिकसम्परायिकअनत्थनिमित्तताय **सासङ्कसप्पटिभयट्ठेन** ।

पाळियं "थामसा परामासा" ति आदीसु एवमत्थो वेदितब्बो । **थामसा** ति दिट्ठिथामेन, तस्सा दिट्ठिया थामगतभावेनाति अत्थो । **परामासा** ति दिट्ठिपरामासेन, दिट्ठिसङ्खातपरामासेनाति अत्थो । दिट्ठियेव हि धम्मसभावं अतिक्कमित्वा परतो आमसनेन परामासो । **अभिनिविस्साति** तण्हाभिनिवेसपुब्बङ्गमेन दिट्ठाभिनिवेसेन "इदमेत्थ सच्चं" ति अभिनिविसित्वा । वोहरतीति कथेति । **यतो च खो ते भिक्खू-ति यदा ते भिक्खू । एवंब्याखो अहं भन्ते भगवताति** इदं एस अत्तनो लद्धिं निगूहितुकामताय नत्थीति वत्तुकामोपि भगवतो आनुभावेन सम्पटिच्छति । बुद्धानं किर सम्मुखा द्वे कथा कथेतुं समत्थो नाम नत्थि । **कस्स नु खो नाम त्वं मोघपुरिसाति** त्वं मोघपुरिस कस्स खत्तियस्स वा ब्राह्मणस्स वा वेस्सस्स वा सुद्दस्स वा गहट्ठस्स वा पब्बजितस्स वा देवस्स वा मनुस्सस्स वा मया एवं धम्मं देसितं आजानासि । सेसमेत्थ उत्तानमेव । धम्मकम्मता, समनुभासना, अप्पटिनिस्सज्जनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

अरिट्ठसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

९. उक्खित्तसम्भोगसिक्खापदवण्णना

४२४॥ नवमे **पयोगगणनायाति** दानग्गहणप्पयोगगणनाय । संवासे कम्म-परियोसानवसेन, सहसेय्याय एकस्मिं निपन्ने इतरस्स निपज्जनपयोगवसेन आपत्तिपरिच्छेदो वेदितब्बो । एत्थ च पदभाजने "एकच्छन्ने" ति अविसेसेन वुत्तत्ता

1. भेदनादिकरणभावेन (स्या.) ।

B. 89 नानूपचारेपि एकच्छन्ने निपज्जन्तस्स आपत्ति । तेनेव **मातिकाट्ठकथायं**[1] वुत्तं "सह वा सेय्यं कप्पेय्याति नानूपचारेपि एकच्छन्ने निपज्जेय्या" ति । पण्णत्तिं अजानन्तेन अरहतापि किरियाब्याकतचित्तेन आपज्जितब्बत्ता **"तिचित्तं"** ति वुत्तं । यं पन **केनचि** वुत्तं "तिचित्तं ति एत्थ विपाकाब्याकतचित्तेन सह वा सेय्यं कप्पेय्या ति एवमत्थो दट्ठब्बो, अञ्ञथा सचित्तकत्ता सिक्खापदस्स किरियाब्याकतं सन्धाय न युज्जती" ति, तं न गहेतब्बं । न हि सचित्तकसिक्खापदवीतिक्कमो अरहतो न सम्भवति । तेनेव पथवीखणनादीसु सचित्तकसिक्खापदेसु तिचित्तमेव वुत्तं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अकतानुधम्मता, जानना, सम्भोगादिकरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

उक्खित्तसम्भोगसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

----

१०. कण्टकसिक्खापदवण्णना

४२८॥ दसमे **पिरे** ति निपातपदं । सम्बोधने वत्तमानं पर-सद्देन समानत्थं वदन्तीति आह **"पर अमामका"** ति, अम्हाकं अनज्झत्तिकभूताति अत्थो । **पिरे** ति वा "परतो" ति इमिना समानत्थं निपात पदं, तस्मा **चर पिरे** ति परतो गच्छ, मा इध तिट्ठाति एवम्पेत्थ अत्थो वेदितब्बो । सेसमेत्थ पुरिमसिक्खापदद्वये वुत्तनयमेव ।

कण्टकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

निट्ठितो सप्पाणकवग्गो सत्तमो ।

----

1. कङ्खा.-ट्ठ-२५. पिट्ठे ।

८. सहधम्मिवग्ग

१. सहधम्मिकसिक्खापदवण्णना

४३४॥ सहधम्मिकवग्गस्स पठमसिक्खापदे **वाचाय वाचाय आपत्ती**ति अनादरियभया लेसेन एवं वदन्तस्स आपत्ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । उपसम्पन्नस्स पञ्ञत्तेन वचनं, असिक्खितुकामताय एवं वचनं ति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

सहधम्मिकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

२. विलेखनसिक्खापदवण्णना

B. 90

४३८॥ दुतिये विनयस्स परियापुणनं **विनयपरियत्ती**ति आह "**विनयं परियापुणन्तानं**" ति आदि । **सुगुत्तो** ति यथा करण्डके पक्खित्तमणिक्खधा विय न नस्सति विपत्तिं न पापुणाति, एवं सुट्ठु गोपितो । **सुरक्खितो** ति तस्सेव परियाय-वचनं । यथा हि किलेसचोरेहि अविलुम्पनीयो होति, एवं सब्बदा सूपट्ठितस्सतिताय सुट्ठु रक्खितो । **कुक्कुच्चपकतानं** ति कप्पियाकप्पियं निस्साय उप्पन्नकुक्कुच्चेन अभिभूतानं । सारज्जनं सारदो, ब्यामोहभयं । विगतो सारदो एतस्साति **विसारदो** । **सहधम्मेना**ति सकारणेन वचनेन । **सुनिग्गहितं निग्गण्हाती**ति यथा न पुन सीसं उक्खिपन्ति, अथ खो अप्पटिभाना मङ्कुभूतायेव होन्ति, एवं सुट्ठु निग्गण्हाति ।

अलज्जिता ति य-कारलोपेन निद्देसो, अलज्जितायाति वुत्तं होति । **अञ्ञाणता** ति आदीसुपि एसेव नयो । **मन्दो मोमूहो** ति अञ्ञाणभावेन **मन्दो**, अविसयतो[1] **मोमूहो**, महामूळ्हो ति अत्थो ।

अत्तपच्चत्थिकाति अत्तनो पच्चत्थिका । **वज्जिपुत्तका** दसवत्थुदीपका । **परूपहार-अञ्ञाणकङ्खापरवितारणादिवादा**ति एत्थ ये अरहत्तं पटिजानन्तानं अप्पत्ते पत्तसञ्ञीनं अधिमानिकानं कुहकानं वा अरहत्तं पटिजानन्तानं सुक्कविस्सट्ठिं दिस्वा मारकायिका देवता "अरहतो असुचिं उपसंहरन्ती"ति मञ्ञन्ति सेय्यथापि पुब्बसेलिया अपरसेलिया च, ते **परूपहारवादा** । येसं पन अरहतो इत्थिपुरिसादीनं नमगोत्तादीसु ञाणप्पवत्तिया अभावेन अत्थि अरहतो **अञ्ञाणं**, तत्थेव सन्निट्ठानाभावेन अत्थि अरहतो कङ्खा, यस्मा चस्स तानि वत्थूनि परे वितारेन्ति पकासेन्ति आचिक्खन्ति, तस्मा अत्थि

---

1. अविसारदाय (स्या.) ।

अरहतो परवितारणा ति इमा तिस्सो लद्धियो सेय्यथापि एतरहि पुब्बसेलियानं, ते अञ्ञाणकङ्खापरवितारणवादा । निग्गहो पन नेसं कथावत्थुप्पकरणे वुत्तनयेनेव वेदितब्बो ।

चत्तारो मग्गा च फलानि चा ति उक्कट्ठनिद्देसवसेन वुत्तं, चतस्सो पटिसम्भिदा B. 91 तिस्सो विज्जा छ अभिञ्ञा ति अयम्पि अधिगमसद्धम्मोयेव । च-कारो वा अवुत्तसम्पिण्डनत्थो दट्ठब्बो । **केचि थेरा** ति धम्मकथिका । **आहंसू**ति पंसुकूलिकत्थेरा एवं आहंसु ।

कदा पनायं कथा उदपादीति? अयञ्हेत्थ अनुपुब्बिकथा[1]-इमस्मिं किर दीपे चण्डालतिस्समहाभये सक्को देवराजा महाउळुम्पं मापेत्वा भिक्खूनं आरोचापेसि "महन्तं भयं भविस्सति, न सम्मा देवो वस्सिस्सति, भिक्खू पच्चयेहि किलमन्ता परियत्तिं सन्धारेतुं न सक्खिस्सन्ति, परतीरं गन्त्वा अय्येहि जीवितं रक्खितुं वट्टति । इमं महाउळुम्पं आरुय्ह गच्छथ भन्ते, येसं एत्थ निसज्जट्ठानं नप्पहोति, ते कट्ठखण्डेपि उरं ठपेत्वा गच्छन्तु, सब्बेसं भयं न भविस्सती"ति । तदा समुद्दतीरं पत्वा सट्ठि भिक्खू कतिकं कत्वा "अम्हाकं एत्थ गमनकिच्चं नत्थि, मयं इधेव हुत्वा तेपिटकं रक्खिस्सामा" ति ततो निवत्तित्वा दक्खिणमलयजनपदं गन्त्वा कन्दमूल-पण्णेहि जीविकं कप्पेन्ता वसिंसु, काये वहन्ते निसीदित्वा सज्झायं करोन्ति, अवहन्ते वालिकं उस्सारेत्वा[2] परिवारेत्वा सीसानि एकट्ठाने कत्वा परियत्तिं सम्मसन्ति । इमिना नियामेन द्वादस संवच्छरानि साट्ठकथं तेपिटकं परिपुण्णं कत्वा धारयिंसु ।

भये वूपसन्ते सत्तसता भिक्खू अत्तनो गतट्ठाने साट्ठकथे तेपिटके एकक्खरम्पि एकब्यञ्जनम्पि अविनासेत्वा इममेव दीपमागम्म कल्लगामजनपदे मण्डलारामविहारं पविसिंसु । थेरानं आगतपवत्तिं सुत्वा इमस्मिं दीपे ओहीना सट्ठि भिक्खू "थेरे पस्सिस्सामा" ति गन्त्वा थेरेहि सद्धिं तेपिटकं सोधेन्ता एकक्खरम्पि एकब्यञ्जनम्पि असमेन्तं नाम न पस्सिंसु । तस्मिं ठाने थेरानं अयं कथा उदपादि "परियत्ति नु खो सासनस्स मूलं, उदाहु पटिपत्ती"ति । पंसुकूलिकत्थेरा "पटिपत्ति मूलं" ति आहंसु, धम्मकथिका "परियत्ती"ति । अथ ने थेरा "तुम्हाकं द्विन्नम्पि जनानं वचनमत्तेनेव न सक्का विञ्ञातुं, जिनभासितं सुत्तं आहरथा" ति आहंसु । सुत्तं आहरितुं न भारोति–

---

1. अं–ट्ठ १-७१-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. उस्सापेत्वा (स्या.) ।

इमे च सुभद्द भिक्खू सम्मा विहरेय्युं, असुञ्ञो लोको अरहन्तेहि अस्सा" ति[1]। "पटिपत्तिमूलकं, महाराज सत्थुसासनं, पटिपत्तिसारकं महाराज सत्थुसासनं, पटिपत्ति B. 92 तिट्ठन्ती तिट्ठती"ति[2]—सुत्तं आहरिंसु।

इमं सुत्तं सुत्वा धम्मकथिका अत्तनो वादट्ठपनत्थाय इमं सुत्तं आहरिंसु—

"याव तिट्ठन्ति सुत्तन्ता, विनयो याव दिप्पति।
ताव दक्खन्ति[3] आलोकं, सूरिये अब्भुट्ठिते यथा।
सुत्तन्तेसु असन्तेसु, पमुट्ठे विनयम्हि च।
तमो भविस्सति लोके, सूरिये अत्थङ्गते यथा।
सुत्तन्ते रक्खिते सन्ते, पटिपत्ति होति रक्खिता।
पटिपत्तियं ठितो धीरो, योगक्खेमा न धंसती" ति।

इमस्मिं सुत्ते आहटे पंसुकूलिकत्थेरा तुण्ही अहेसुं। धम्मकथिकत्थेरानंयेव वचनं पुरतो[4] अहोसि। यथा हि गवसतस्स गवसहस्सस्स वा अन्तरे पवेणिपालिकाय धेनुया असति सो वंसो सा पवेणी न घटीयति, एवमेव आरद्धविपस्सकानं भिक्खूनं सतेपि सहस्सेपि विज्जमाने परियत्तिया असति अरियमग्गपटिवेधो नाम न होति। यथा च निधिकुम्भिया जाननत्थाय पासाणपिट्ठे अक्खरेसु उपनिबद्धेसु याव अक्खरानि धरन्ति, ताव निधिकुम्भी नट्ठा नाम न होति, एवमेव परियत्तिया धरमानाय सासनं अन्तरहितं नाम न होतीति। **तस्साधेय्यो** ति तस्सायत्तो।

४३९॥ **सो पना** ति सो पातिमोक्खो। सेसमेत्थ उत्तानमेव। गरहितुकामता, उपसम्पन्नस्स सन्तिके सिक्खापदविवण्णनञ्चाति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि।

विलेखनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

३. मोहनसिक्खापदवण्णना

B. 93

४४३॥ ततियं उत्तानमेव। मोहारोपनं, मोहेतुकामता, वुत्तनयेन सुतभावो, मोहनं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि।

मोहनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

1. दी. २-१२५-पिट्ठे।
2. खु-११-१३६ पिट्ठे मिलिन्दपञ्हेपि पस्सितब्बं।
3. रक्खन्ति-(क)।
4. परतो (स्या.)।

४. पहारसिक्खापदवण्णना

४५२॥ चतुत्थे **रत्तचित्तो** ति कायसंसग्गरागेन रत्तचित्तो । सचे पन मेथुनरागेन रत्तो पहारं देति, दुक्कटमेव । सेसमेत्थ उत्तानमेव । कुपितता, न मोक्खाधिप्पायता, उपसम्पन्नस्स पहारदानं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

पहारसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

----

५. तलसत्तिकसिक्खापदवण्णना

४५७॥ पञ्चमे **न पहरितुकामताय दिन्नत्ता दुक्कटं** ति एत्थ पहरितुकामताय पहटे पुरिमसिक्खापदेन पाचित्तियं, उच्चारेतुकामताय केवलं उग्गिरणमत्ते कते इमिना पाचित्तियं । इमिना पन विरज्झित्वा पहारो दिन्नो, तस्मा दुक्कटं । किमिदं दुक्कटं पहारपच्चया, उदाहु उग्गिरणपच्चया, तत्थ केचि ताव वदन्ति "पहारपच्चया एव दुक्कटं, उग्गिरणपच्चया पाचित्तियं ति सदुक्कटं पाचित्तियं युज्जति । पुरिमञ्हि उग्गिरणं, पच्छा पहारो, न च पच्छा पहारं निस्साय पुरिमं उग्गिरणं अनापत्तिवत्थुकं भवितुमरहती" ति ।

मयं पनेत्थ एवं तक्कयाम "उग्गिरणस्स अत्तनो सभावेनेव असण्ठितत्ता तप्पच्चया पाचित्तियेन न भवितब्बं, असुद्धचित्तेन कतपयोगत्ता पन न सक्का एत्थ अनापत्तिया भवितुं ति दुक्कटं वुत्तं । 'न पहरितुकामताय दिन्नत्ता' ति इमिना च पहारपच्चया पुरिमसिक्खापदेन पाचित्तियासम्भवे कारणं वुत्तं, न पन पहारपच्चया B. 94 दुक्कटसम्भवे । न हि अपहरितुकामताय पहारे दिन्ने पुरिमसिक्खापदेन पहारपच्चया पाचित्तियेन दुक्कटेन वा भवितुं युत्तं" ति । "तिरच्छानादीनं असुचिकरणादिं[1] दिस्वा कुज्झित्वापि उग्गिरन्तस्स मोक्खाधिप्पायो एवा" ति वदन्ति । सेसमेत्थ, उत्तानमेव । कुपितता, न मोक्खाधिप्पायता, उपसम्पन्नस्स तलसत्तिउग्गिरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

तलसत्तिकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

----

६. अमूलकसिक्खापदवण्णना

४५९॥ छट्ठं उत्तानत्थमेव । उपसम्पन्नता, संघादिसेसस्स अमूलकता, अनुद्धंसना, तङ्खणविजानना ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

अमूलकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

1. असुचिकिरणादीनि (स्या.) ।

७. सञ्चिच्चसिक्खापदवण्णना

४६४॥ सत्तमम्पि उत्तानत्थमेव । उपसम्पन्नता, अफासुकामता, कुक्कुच्चुप्पादनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

सञ्चिच्चसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

----

८. उपस्सुतिसिक्खापदवण्णना

४७१॥ अट्ठमे **सुतिसमीपं** ति सद्दसमीपं । सुय्यतीति हि सुति, सद्दस्सेतं अधिवचनं । तस्स समीपं **उपस्सुति**, सद्दसमीपं ति वुत्तं होति । **गण्ठिपदेसु** च सुय्यती-ति सद्दोव वुत्तो । यत्थ पन ठितेन सक्का होति सद्दं सोतुं, तत्थ तिट्ठन्तो सद्दसमीपे ठितो नाम होतीति आह **"यत्थ ठत्वा"** ति आदि । केचि पन "सुणाति एत्थाति सुति । यत्थ ठितो सुणाति, तस्स ठानस्सेतं नामं । तस्स समीपं उपस्सुती" ति वदन्ति, एवं पन गय्हमाने यस्मिं ठाने ठितो सुणाति, तस्स आसन्ने अञ्ञस्मिं पदेसे तिट्ठतीति आपज्जति । अट्ठकथायञ्च **उपस्सुति**-सद्दस्सेव अत्थं दस्सेतुं "यत्थ ठत्वा सक्का होति, तेसं वचनं सोतुं" ति वुत्तं, न **सुति**-सद्दस्स । तस्मा पुब्बनयोवेत्थ पसत्थतरो । अथ वा उपेच्च सुय्यति एत्थाति **उपस्सुति**, ठानं । यं ठानं उपगतेन सक्का होति कथेन्तानं सद्दं सोतुं, तत्थाति एवमत्थो गहेतब्बो । **मन्तेन्तं** ति भुम्मत्थे उपयोगवचनं ति आह **"मन्तयमाने"** ति । B. 95

४७३॥ **एकपरिच्छेदानीति** "सिया किरियं, सिया अकिरियं" ति इमिना नयेन एकपरिच्छेदानि । इमानि हि तीणि सिक्खापदानि कदाचि किरियतो समुट्ठहन्ति, कदाचि अकिरियतो, न एकक्खणेयेव किरियाकिरियतो समुट्ठहन्ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । उपसम्पन्नता, चोदनाधिप्पायो, सवनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

उपस्सुतिसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

----

९. कम्मपटिबाहनसिक्खापदवण्णना

४७४॥ नवमं उत्तानत्थमेव । धम्मकम्मता, धम्मकम्मं ति सञ्ञा, छन्दं दत्वा खिय्यनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

कम्मपटिबाहनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

----

१०. छन्दंअदत्वागमनसिक्खापदवण्णना

४७९॥ दसमं उत्तानत्थमेव । विनिच्छयकथाय पवत्तमानता, धम्मकम्मता, धम्मकम्मसञ्ञिता, समानसीमायं ठितता, समानसंवासकता, कोपेतुकामताय हत्थपासविजहनं ति इमानि पनेत्थ छ अङ्गानि ।

छन्दं अदत्वा गमनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

B. 96

११. दुब्बलसिक्खापदवण्णना

४८४॥ एकादसमम्पि उत्तानत्थमेव । उपसम्पन्नता, धम्मेन लद्धसम्मुतिता, संघेन सद्धिं विकप्पनुपगचीवरदानं, पच्छा खीयितुकामताय खिय्यना ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

दुब्बलसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

४८९। द्वादसमे नत्थि किञ्चि वत्तब्बं ।

निट्ठितो सहधम्मिकवग्गो अट्ठमो ।

----

९. राजवग्ग

१. अन्तेपुरसिक्खापदवण्णना

४९७-४९९॥ राजवग्गस्स पठमसिक्खापदे अट्ठकथायं सब्बं उत्तानत्थमेव । पाळियं पन अयमनुत्तानपदत्थो । **कतं वा करिस्सन्ति वा** ति मेथुनवीतिक्कमनं कतं वा करिस्सन्ति वा । **इमेसं** ति पदं विभत्तिविपरिणामं कत्वा उभयत्थ योजेतब्बं "इमेहि कतं इमे करिस्सन्ती"ति । **रतनं** ति मणिरतनादीसु यं किञ्चि । **उभतो** ति द्वीहि पक्खेहि । "उभतो सुजातो" ति एत्तके वुत्ते येहि केहिचि द्वीहि भागेहि सुजातता विञ्ञायेय्य, सुजात-सद्दो च "सुजातो चारुदस्सनो" ति आदीसु आरोहसम्पत्ति-परियायोति जातिवसेनेव सुजाततं विभावेतुं "मातितो च पितितो चा" ति वुत्तं । अनोरसपुत्तवसेनपि लोके मातुपितुसमञ्ञा दिस्सति, इध पन सा ओरसपुत्तवसेनेव इच्छितातति दस्सेतुं **"संसुद्धगहणिको"** ति वुत्तं । गब्भं गण्हाति धारेतीति गहणी। गब्भासयसञ्ञितो[1] मातुकुच्छिप्पदेसो । संसुद्धा गहणी अस्साति **संसुद्धगहणिको,** संसुद्धा तस्स मातु कुच्छीति वुत्तं होति । "समवेपाकिनिया गहणिया" ति एत्थ पन यथाभुत्तस्स आहारस्स विपाचनवसेन गण्हनतो अछड्डनतो कम्मजतेजोधातु "गहणी"-ति वुच्चति ।

याव सत्तमा पितामहयुगा ति एत्थ पितु पिता पितामहो, पितामहस्स युगं B. 97 पितामहयुगं । "युगं" ति आयुप्पमाणं वुच्चति । अभिलापमत्तमेव चेतं, अत्थतो पन पितामहोयेव पितामहयुगं । पिता च माता च पितरो, पितूनं पितरो पितामहा, तेसं युगो पितामहयुगो, तस्मा याव सत्तमा पितामहयुगा, पितामहद्वन्दाति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो । एवञ्हि पितामहग्गहणेनेव मातामहो पि गहितो होति । **युग**-सद्दो चेत्थ एकसेसेन दट्ठब्बो युगो च युगो च युगोति । एवञ्हि तत्थ तत्थ द्वन्दं गहितमेव होति, तस्मा ततो उद्धं सब्बेपि पुब्बपुरिसा पितामहयुगग्गहणेनेव गहिता । एवं याव सत्तमो पितामहयुगो, ताव संसुद्धगहणिको ।

अक्खित्तो ति "अपनेथ एतं, किं इमिना" ति एवं अक्खित्तो अनवक्खित्तो । **अनुपकुट्ठो** ति न उपकुट्ठो, न अक्कोसं वा निन्दं वा पत्तपुब्बो । केन कारणेनाति आह **"जातिवादेना"** ति । एत्थ च "उभतो.......पे०......पितामहयुगा" ति एकेन तस्स योनिदोसाभावो दस्सितो संसुद्धगहणिकभावकित्तनतो, "अक्खित्तो" ति इमिना किरिया-पराधाभावो । किरियापराधेन हि सत्ता खेपं पापुणन्ति । "अनुपकुट्ठो" ति इमिना

---

1. गब्भसेय्यसञ्ञातो (क)

अयुत्तसंसग्गाभावो । अयुत्तसंसग्गञ्हि पटिच्च सत्ता अक्कोसं लभन्ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । खत्तियता, अभिसित्तता, उभिन्नम्पि सयनिघरतो अनिक्खन्तता, अप्पटिसंविदितता, इन्दखीलातिक्कमोति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि ।

अन्तेपुरसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

२. रतनसिक्खापदवण्णना

५०२॥ दुतिये **महालतं नामाति** पतिकुलं गच्छन्तिया किर तस्सा पिता महालतापिळन्धनं नाम कारापेसि । तस्मिं पिळन्धने चतस्सो वजिरनाळियो तत्थ तत्थ अप्पेतब्बट्ठाने अप्पनवसेन विनियोगं अगमंसु, मुत्तानं एकादस नाळियो, पवाळस्स द्वावीसति नाळियो, मणीनं तेत्तिंस नाळियो । इति एतेहि च अञ्ञेहि च B. 98 वेळुरियलोहितङ्कमसारगल्लादीहि सत्तवण्णेहि च रतनेहि निट्ठानं अगमासि । तं सीसे पटिमुक्कं याव पादपिट्ठिया भस्सति, पञ्चन्नं हत्थीनं बलं धारयमानाव इत्थी नं धारेतुं सक्कोति । तं सन्धायेतं वुत्तं ।

५०६॥ आवसथस्स पन सुप्पपातो वा मुसलपातो वा उपचारो नामाति योजेतब्बं । **आवसथो** ति चेत्थ अन्तोआरामे वा होतु अञ्ञत्थ वा, अतनो वसनट्ठानं वुच्चति । **छन्देन पि भयेनपीति** वड्ढतीआदीसु छन्देन, राजवल्लभेसु भयेन । **तमेव भिक्खुं आसङ्कतीति** विस्सरित्वा गमनकाले अत्तनो पच्छतो अञ्ञस्साभावा आसङ्कन्ति। **पतिरूपं** नाम रतनसम्मते पंसुकूलग्गहणं वा रतने निरुस्सुक्कगमनं वा । यदि हि तं रतनसम्मतं आमासं चे, "नत्थि एतस्स सामी"ति पंसुकूलं गहेस्सति । अनामासं चे, 'नत्थि एतस्स सामी'ति पंसुकूलछिन्नपलिबोधो निरपेक्खो गमिस्सति । **समादपेत्वा** ति अञ्ञं समादपेत्वा, "उद्दिस्स अरिया तिट्ठन्ति, एसा अरियानयाचना" ति[1] वुत्तनयेन याचित्वा ति अत्थो । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अननुञ्ञातकरणं, परसन्तकता, विस्सासग्गाहपंसुकूलसञ्ञानं अभावो, उग्गहणं वा उग्गहापनं वाति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

रतनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

1. खु-५-१६२-पिट्ठे

३. विकालगामप्पविसनसिक्खापदवण्णना

५०८॥ ततिये **अरियमग्गस्साति** एत्थ सग्गमग्गोपि सङ्गहेतब्बो। अनिय्यानिकत्ता सग्गमोक्खमग्गानं तिरच्छानभूता हि कथा **तिरच्छानकथा**। **तिरच्छानभूतं** ति तिरोकरणभूतं विबन्धनभूतं। **राजपटिसंयुत्तं कथं** ति[1] राजानं आरब्भ "महासम्मतो मन्धाता धम्मासोको एवंमहानुभावो" ति आदिना नयेन पवत्तकथं। एत्थ च "असुको राजा अभिरूपो दस्सनीयो" ति आदिना नयेन गेहस्सितकथाव तिरच्छानकथा होति। "सोपि नाम एवंमहानुभावो खयं गतो" ति एवं पवत्ता पन अनिच्चतापटिसंयुत्ता कम्मट्ठानभावे तिट्ठति। **चोरेसुपि** "मूलदेवो एवंमहानुभावो, मेघमालो एवंमहानुभावो" B.99 ति तेसं कम्मं पटिच्च "अहो सूरा" ति गेहस्सितकथाव तिरच्छानकथा। **युद्धेपि** भरतयुद्धादीसु "असुकेन असुको एवं मारितो एवं विद्धो" ति कामस्सादवसेनेव कथा तिरच्छानकथा। "तेपि नाम खयं गता" ति एवं पवत्ता पन सब्बत्थ कम्मट्ठानमेव होति।

अपि च **अन्नादीसु** "एवं वण्णवन्तं गन्धवन्तं रसवन्तं फस्ससम्पन्नं खादिम्ह भुञ्जिम्ह पिविम्ह परिभुञ्जिम्हा" ति कामस्सादवसेन कथेतुं न वट्टति, सात्थकं पन कत्वा "पुब्बे एवं वण्णादिसम्पन्नं अन्नं पानं वत्थं सयनं मालागन्धं सीलवन्तानं अदम्ह, चेतियपूजं अकरिम्हा" ति कथेतुं वट्टति। **ञातिकथादीसुपि** "अम्हाकं ञातका सूरा समत्था" ति वा "पुब्बे मयं एवं विचित्रेहि यानेहि विचरिम्हा" ति वा अस्सादवसेन वत्तुं न वट्टति, सात्थकं पन कत्वा "तेपि नो ञातका गता" ति वा "पुब्बे मयं एवरूपा उपाहना संघस्स अदम्हा" ति वा कथेतब्बं। **गामकथापि** सुनिविट्ठदुन्निविट्ठसुभिक्खदुब्भिक्खादिवसेन वा 'असुकगामवासिनो सूरा समत्था" ति वा एवं अस्सादवसेन न वट्टति, सात्थकं पन कत्वा "सद्धा पसन्ना" ति वा "खयवयं गता" ति वा वत्तुं वट्टति। निगमनगरजनपदकथासुपि एसेव नयो।

इत्थिकथा पि वण्णसण्ठानादीनि पटिच्च अस्सादवसेन न वट्टति, "सद्धा पसन्ना, खयं गता" ति एवं वत्तुं वट्टति। **सूरकथापि** "नन्दिमित्तो नाम योधो सूरो अहोसी" ति अस्सादवसेन न वट्टति', सद्धो अहोसि, खयं गतो' ति एवमेव वट्टति। **विसिखा कथापि**" असुका विसिखा सुनिविट्ठा दुन्निविट्ठा सूरा समत्था" ति अस्सादवसेनेव न वट्टति, "सद्धा पसन्ना, खयं गता" इच्चेव वट्टति।

कुम्भट्ठानकथा ति कुटट्ठानकथा उदकतित्थकथा वुच्चति, कुम्भदासीकथा वा। सापि "पासादिका नच्चितुं गायितुं छेका" ति अस्सादवसेन न वट्टति"सद्धा पसन्ना ति आदिना नयेनेव वट्टति। **पुब्बपेतकथा** ति अतीतञातिकथा। तत्थ वत्तमानञातिकथा सदिसोव विनिच्छयो।

---

1. दी. ट्ठ. १-८५, म. ट्ठ. ३-१५५, सं. ट्ठ, ३-३२५, अं. ट्ठ ३-३१८. पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं।

नानत्तकथा ति पुरिमपच्छिमकथाविमुत्ता अवसेसा नानासभावा निरत्थककथा।

B. 100 **लोकक्खायिकाति** "अयं लोको केन निम्मितो, असुकेन पजापतिना ब्रह्मुना इस्सरेन वा निम्मितो, काको सेतो अट्ठीनं सेतत्ता, बका रत्ता लोहितस्स रत्तत्ता" ति एवमादिका लोकायतवितण्डसल्लापकथा। उप्पत्तिठितिसंहारादिवसेन लोकं अक्खायतीति **लोकक्खायिका**। **समुद्दक्खायिका** नाम कस्मा समुद्दो सागरो, सागरस्स रञ्ञो पुत्तेहि खतत्ता सागरो। खतो अम्हेहीति हत्थमुद्दाय निवेदितत्ता समुद्दो ति एवमादिका निरत्थका समुद्दक्खायिककथा।

इति भवो इति अभवोति यं वा तं वा निरत्थककारणं वत्वा पवत्तितकथा **इतिभवाभवकथा**। एत्थ च **भवो** ति सस्सतं, **अभवो** ति उच्छेदं। **भवो** ति वुद्धि, अभवो ति हानि। **भवो** ति कामसुखं, **अभवो** ति अत्तकिलमथो। इति इमाय छब्बिधाय इतिभवाभवकथाय सद्धिं बात्तिंस तिरच्छानकथा नाम होति। अथ वा पाळियं सरूपतो अनागतापि अरञ्ञपब्बतनदीदीपकथा **इति**-सद्देन सङ्गहेत्वा छत्तिंस[1] तिरच्छानकथाति वुच्चति। **इति वा** ति हि एत्थ **इति**-सद्दो पकारत्थे, **वा**-सद्दो विकप्पत्थे। इदं वुत्तं होति-"एवं पकारं इतो अञ्ञं वा तादिसं निरत्थककथं कथेन्ती"-ति। आदिअत्थे वा इति-सद्दो "इति वा इति एवरूपा नच्चगीतवादितविसूकदस्सना पटिविरतो" ति आदीसु[2] विय, एवमादिं अञ्ञम्पि तादिसं कथं, कथेन्तीति अत्थो।

५१२॥ **अपरिक्खित्तस्स गामस्स उपचारो अदिन्नादाने वुत्तनयेनेव वेदितब्बो** ति इमिना दुतियलेड्डुपातो इध उपचारो ति दस्सेति। सेसमेत्थ उत्तानमेव। सन्तं भिक्खुं अनापुच्छना, अनुञ्ञातकारणाभावो, विकाले गामप्पविसनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि।

विकालगामप्पविसनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

४. सूचिघरसिक्खापदवण्णना

५१७॥ चतुत्थे **तं अस्स अत्थीति** पठमं भिन्दित्वा पच्छा देसेतब्बत्ता तं भेदनकं

B. 101 तस्स पाचित्तियस्स अत्थीति **भेदनकं**, पाचित्तियं। अस्सत्थिअत्थे अ-कारपच्चयो

---

1. वात्तिंस (क)
2. दी. १-५-६० पिट्ठेसु।

दट्ठब्बो । **वासिजटे** ति वासिदण्डके । सेसमेत्थ उत्तानमेव । सूचिघरता, अट्ठिमयादिता, अत्तनो अत्थाय करणं वा कारापेत्वा वा पटिलाभोति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

सूचिघरसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

५. मञ्चपीठसिक्खापदवण्णना

५२२॥ पञ्चमे **छेदनकं वुत्तनयमेवा** ति छेदनमेव छेदनकं, तं तस्स अत्थीति **छेदनकं** ति इममत्थं अतिदिस्सति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । पमाणातिक्कन्तमञ्चपीठता, अत्तनो अत्थाय करणं वा कारापेत्वा वा पटिलाभोति पनेत्थ द्वे अङ्गानि .

मञ्चपीठसिक्खापदवण्णनानिट्ठिता ।

---

६. तूलोनद्धसिक्खापदवण्णना

५२६॥ छट्ठे **तूलं पक्खिपित्वा** ति हेट्ठा चिमिलिकं पत्थरित्वा तस्स उपरि तूलं पक्खिपित्वा ति अत्थो । **पोटकितूलं** ति एरकतूलादि यंकिञ्चि तिणजातीनं तूलं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । तूलोनद्धमञ्चपीठता, अत्तनो अत्थाय करणं वा कारापेत्वा वा पटिलाभोति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि । अत्तना कारापितस्स हि पटिलाभमत्तेनेव पाचित्तियं । तेनेव पदभाजने "पटिलाभेन उद्दालेत्वा पाचित्तियं देसेतब्बं" ति वुत्तं । **केनचि पन** "पटिलाभेन उद्दालेत्वा पाचित्तियं देसेतब्बं ति एत्थ किञ्चापि पटिलाभमत्तेनेव पाचित्तियं विय दिस्सति, परिभोगेयेव आपत्ति दट्ठब्बा । 'अञ्ञेन कतं पटिलभित्वा परिभुञ्जति, आपत्ति दुक्कटस्सा' ति वचनं एत्थ साधकं" ति वुत्तं, तं तस्स मतिमत्तं । न हि 'अञ्ञेन कतं पटिलभित्वा परिभुञ्जति , आपत्ति दुक्कटस्सा" ति इदं अत्तना कारापितं सन्धाय वुत्तं, करणकारापनपच्चया च इमिना सिक्खापदेन पाचित्तियं वुत्तं, न परिभोगपच्चया । 'न भिक्खवे तूलोनद्धं मञ्चं वा पीठं वा परिभुञ्जितब्बं, यो परिभुञ्जेय्य आपत्ति दुक्कटस्सा' ति हि खन्धके वुत्तत्ता अत्तना वा कतं होतु अञ्ञेन वा, परिभुञ्जन्तस्स परिभोगपच्चया दुक्कटमेव, न पाचित्तियं । B. 102

तूलोनद्धसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

७. निसीदनसिक्खापदवण्णना

५३१॥ सत्तमे यं वत्तब्बं, तं निसीदनसन्थतसिक्खापदे वुत्तमेव । निसीदनस्स पमाणातिक्कन्तता, अत्तनो अत्थाय करणं वा कारापेत्वा वा पटिलाभोति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

निसीदनसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

५३७-५४२-५४७॥ अट्ठमनवमदसमेसु नत्थि वत्तब्बं, अङ्गानिपि सत्तमेव वुत्तनयेनेव वेदितब्बानि ।

निट्ठितो राजवग्गो नवमो ।

इति समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय सारत्थदीपनियं खुद्दकवण्णना समत्ता ।

पाचित्तियकण्डं निट्ठितं ।

---

६. पाटिदेसनीयकण्ड

पाटिदेसनीयसिक्खापदवण्णना

५५२॥ **पाटिदेसनीयेसु पठमे** "गारय्हं आवुसोति आदि पटिदेसेतब्बाकारदस्सनं" ति वचनतो पाळियं आगतनयेनेव आपत्ति देसेतब्बा। **असप्पायं** ति सग्गमोक्खानं अहितं अननुकूलं। सेसमेत्थ उत्तानमेव। परिपुण्णूपसम्पन्नता, अञ्ञातिकता, अन्तरघरे ठिताय हत्थतो सहत्था पटिग्गहणं, यावकालिकता, अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि।

५५७-५६२-५७०॥ दुतियततियचतुत्थेसु नत्थि वत्तब्बं, अङ्गेसु पन दुतिये परिपुण्णूपसम्पन्नता, पञ्चभोजनता, अन्तरघरे ठिताय अनुञ्ञातप्पकारतो अञ्ञथा वोसासना, अनिवारणा, अज्झोहारो ति इमानि पञ्च अङ्गानि

ततिये सेक्खसम्मतता, पुब्बे अनिमन्तितता, अगिलानता, घरूपचारोक्कमनं, ठपेत्वा निच्चभत्तादीनि अञ्ञं आमिसं गहेत्वा भुञ्जनं ति इमानि पञ्च अङ्गानि।

चतुत्थे यथावुत्तआरञ्ञकसेनासनता, यावकालिकस्स अतत्थजातकता, अगिलानता, अगिलानावसेसकता, अप्पटिसंविदितता, अज्झारामे पटिग्गहणं, अज्झो-हरणं ति इमानि सत्त अङ्गानि।

पाटिदेसनीयसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

पाटिदेसनीयकण्डं निट्ठितं।

B. 104

७. सेखियकण्ड

१. परिमण्डलवग्गवण्णना

सेखियेसु **सिक्खितसिक्खेना**ति चतूहि मग्गेहि तिस्सो सिक्खा सिक्खित्वा ठितेन, **सब्बसो** परिनिट्ठितंकिच्चेनाति वुत्तं होति । **तादिना**ति अट्ठहि लोकधम्मेहि अकम्पियट्ठेन तादिना ।

५७६॥ **सिक्खा करणीया**ति एवं निवासेस्सामी"ति आरामेपि अन्तरघरेपि सब्बत्थ सिक्खा कत्तब्बा । एत्थ च यस्मा वत्तक्खन्धके वुत्तवत्तानि पि सिक्खितब्बत्ता सेखियानेव होन्ति, तस्मा पाराजिकादीसु विय परिच्छेदो न कतो, चारित्तनयदस्सनत्थञ्च "यो पन भिक्खु ओलम्बेन्तो निवासेय्य, दुक्कटं" ति एवं आपत्तिनामेन अवत्वा "सिक्खा करणीया" ति एवं सब्बसिक्खापदेसु पाळि आरोपिता । पदभाजने पन "आपत्ति दुक्कटस्सा" ति वुत्तत्ता सब्बत्थ अनादरियकरणे दुक्कटं वेदितब्बं । **वुत्तं**ति महाअट्ठकथायं वुत्तं । यस्मा अट्ठङ्गुलमत्तं ओतारेत्वा निवत्थमेव निसिन्नस्स चतुरङ्गुलमत्तं होति, तस्मा उभोपेते अट्ठकथावादा एकपरिच्छेदा । **ते सब्बे**ति निवासनदोसा ।

तं पनाति तं अनादरियं । किञ्चापि कुरुन्दिवादं पच्छा वदन्तेन "परिमण्डलं निवासेतुं अजानन्तस्स अनापत्ती" ति अयमत्थो पतिट्ठापितो, तथापि निवासनवत्तं साधुकं उग्गहेतब्बमेव । सञ्चिच्च अनुग्गण्हन्तस्स अनादरियं सिया । तेनेव **मातिकाट्ठकथायं**[1] वुत्तं "अजानन्तस्साति परिमण्डलं निवासेतुं अजानन्तस्स अनापत्ति, अपि च निवासनवत्तं उग्गहेतब्बं" ति ।

सचित्तकं ति वत्थुविजाननचित्तेन पण्णत्तिविजाननचित्तेन च सचित्तकं "अनादरियं पटिच्चा" ति वुत्तत्ता । "पाणातिपातादि विय निवासनदोसो लोकगरहितो न होतीति पण्णत्तिवज्जं" ति **फुस्सदेवत्थेरो** आह । उपतिस्सत्थेरो पन "यस्मा अनादरियवसेनेव आपज्जितब्बत्ता केवलं अकुसलमेव, तञ्च पकतिया वज्जं, B. 105 सञ्चिच्च वीतिक्कमनञ्च दोमनस्सितस्सेव होति, तस्मा लोकवज्जं अकुसलचित्तं दुक्खवेदनं" ति आह । अनादरियं अनापत्तिकारणाभावो अपरिमण्डलनिवासनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि । यथा चेत्थ, एवं सब्बत्थ पुरिमानि द्वे तत्थ तत्थ वुत्तपटिपक्खकरणञ्चाति तीणियेव होन्ति ।

---

1. कङ्खा-ट्ठ. २७७-पिट्ठे ।

५७७॥ दुतियादीसु **अनेकप्पकारं गिहिपारुतं** ति सेतपटपारुतं परिब्बाजकपारुतं एकसाटकपारुतं ति आदि अनेकप्पभेदं गिहिपारुतं । तस्सत्थो खन्धकेयेव आवि भविस्सति । **विहारेपीति** बुद्धुपट्ठानादिकालं सन्धाय वुत्तं ।

५७८॥ "सुप्पटिच्छन्नो" ति वुत्तत्ता "ससीसं पारुतो सब्बथा सुप्पटिच्छन्नत्ता सुप्पटिच्छन्नो नाम होती" ति यस्स सिया, तं सन्धायाह **"न ससीसं पारुतेना" ति** आदि ।

५८२॥ एकस्मिं पन ठाने ठत्वा ति एत्थ "गच्छन्तो पि परिस्सयाभावं ओलोकेतुं लभतियेव , तथा गामे पूजं" ति तीसुपि गण्ठिपदेसु वुत्तं

परिमण्डलवग्गवण्णना निट्ठिता ।

---

२. उज्जग्घिकवग्गवण्णना

५८६॥ दुतियवग्गे हसनीयस्मिं वत्थुस्मिं ति हासजनके कारणे ।

उज्जघिकवग्गवण्णना निट्ठिता ।

---

३. खम्भकतवग्गवण्णना

६०३॥ ततियवग्गे पत्ते सञ्ञा पत्तसञ्ञा, सा अस्स अत्थीति **पत्तसञ्ञी,** अत्तनो भाजने उपनिबन्धसञ्ञी हुत्वा ति अत्थो । ब्यञ्जनं पन अनादियित्वा अत्थमत्तमेव दस्सेतुं **"पत्ते सञ्ञं कत्वा"** ति वुत्तं ।

६०४॥ **ओलोणीति** एका ब्यञ्जनविकति । "यो कोचि सुद्धो कञ्जिकतक्कादिरसो" ति केचि । **साकसूपेय्यग्गहणेन** या काचि सूपेय्यसाकेहि कता ब्यञ्जनविकति वुत्ता । B. 106 **मंसरसादीनीति आदि-सद्देन** अवसेसा सब्बापि ब्यञ्जनविकति सङ्गहितातिति दट्ठब्बं । तेनेव **मातिकाट्ठकथायं**[1] वुत्तं "ठपेत्वा पन सूपं अवसेसा सब्बापि सुपेय्या ब्यञ्जनविकति रसरसो नाम होती" ति ।

६०५॥ **समपुण्णं** ति अधिट्ठानुपगस्स पत्तस्स अन्तोमुखवट्टिलेखं अनतिक्कामेत्वा रचितं । **समभरितं** ति तस्सेव वेवचनं । **फलाफलादीति आदि-सद्देन** ओदनादिम्पि सङ्गण्हाति । **हेट्ठा ओरोहतीति** समन्ता ओकाससब्भावतो चालियमानं हेट्ठा भस्सति । मत्थके थूपीकतं पूवमेव वटंसकसदिसत्ता **"पूववटंसकं"** ति वुत्तं । **पुप्फवटंसकादीसुपि** एसेव नयो ।

---

1. कङ्खा-ट्ठ. २८१-पिट्ठे ।

यस्मा "समतित्तिको पिण्डपातो पटिग्गहेतब्बो" ति वचनं पिण्डपातो सम्पुण्णो[1] पटिग्गहेतब्बो ति दीपेति, तस्मा अत्तनो हत्थगते पत्ते पिण्डपातो दिय्यमानो थूपीकतोपि चे होति, वट्टतीति दीपेति । "थूपीकतं पिण्डपातं पटिग्गण्हाति, आपत्ति दुक्कटस्सा" ति हि वचनं पठमं थूपीकतं पिण्डपातं "पच्छा पटिग्गण्हतो आपत्तीति दीपेती । "पत्ते पटिग्गण्हतो तं च थूपीकतं होति, वट्टति अथूपीकतस्स पटिग्गहितत्ता, पयोगो पन नत्थि अञ्ञत्र पुब्बदेसा" ति केनचि वुत्तं, तं न सारतो पच्चेतब्बं । "न थूपीकतं पिण्डपातं पटिग्गण्हाति" ति वचनं पठमं थूपीकतस्सेव पच्छा पटिग्गण्हनं दीपेति । न हि हत्थगतेपि पत्ते दीय्यमानं थूपीकतं गण्हन्तो थूपीकतं पिण्डपातं पटिग्गण्हन्तो नाम न होति, न च तेन समतित्तिको पिण्डपातो पटिग्गहितो ति सक्का विञ्ञातुं । "थूपीकतं" ति च भावनपुंसकनिद्देसो गय्हमाने अयमत्थो सुट्ठुतरं पाकटोयेवाति ।

खम्भकतवग्गवण्णना निट्ठिता ।

---

४. सक्कच्चवग्गवण्णना

६०८॥ चतुत्थवग्गे **सपदानं** ति एत्थ दानं वुच्चति अवखण्डनं, अपेतं B. 107 दानतो अपदानं, अनवखण्डनं ति अत्थो । सह अपदानेन सपदानं, अवखण्डनविरहितं, अनुपटिपाटियाति वुत्तं होति । तेनाह **"तत्थ तत्थ ओधिं अकत्वा अनुपटिपाटिया"** ति ।

६११॥ यस्मिं समये "पाणो न हन्तब्बो" ति राजानो भेरिं चरापेन्ति, अयं **माघातसमयो** नाम । इध अनापत्तियं गिलानो न आगतो, तस्मा गिलानस्सपि आपत्ति । सूपोदनविञ्ञत्तिसिक्खापदे **असञ्चिच्च अस्सतिया** ति एत्थ "मुखे पक्खिपित्वा पुन विप्पटिसारी हुत्वा छड्डेन्तस्स अरुचिया पविसन्ते 'असञ्चिच्चा' ति वुच्चति । विञ्ञत्तिम्पि अविञ्ञत्तिम्पि एकस्मिं ठाने ठितं सहसा गहेत्वा भुञ्जन्ते 'अस्सतिया' ति वुच्चती" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं ।

६१४-६१५॥ उज्झाने सञ्ञा उज्झानसञ्ञा, सा अस्स अत्थीति **उज्झानसञ्ञी** । "मयूरण्डं अतिमहन्तं" ति वचनतो मयूरण्डप्पमाणो कबळो न वट्टति । केचि पन "मयूरण्डतो महन्तो न वट्टती" ति वदन्ति, तं न गहेतब्बं, "नातिमहन्तं" ति च अतिमहन्तस्सेव पटिक्खित्तत्ता खुद्दके आपत्ति न दिस्सति । "मयूरण्डं अतिमहन्तं,

---

1. समपुण्णो (स्या)

कुक्कुटण्डं अतिखुद्दकं, तेसं वेमज्झप्पमाणो" ति इमिना पन सारुप्पवसेन खुद्दकम्पि पटिक्खिपित्वा परिच्छेदो न दस्सितो ति वेदितब्बं ।

सक्कच्चवग्गवण्णना निट्ठिता ।

---

५. कबळवग्गवण्णना

६१८॥ पञ्चमवग्गे **सब्बं हत्थं** ति एत्थ **हत्थ**-सद्दो तदेकदेसेसु अङ्गुलीसु दट्ठब्बो "हत्थमुद्दा" ति आदीसु विय, समुदाये पवत्तवोहारस्स अवयवेपि वत्तनतो एकङ्गुलिम्पि मुखे पक्खिपितुं न वट्टति ।

कबळवग्गवण्णना निट्ठिता

---

६. सुरुसुरुवग्गवण्णना

६२७॥ छट्ठवग्गे **सीतीकतो** ति सीतट्टो, सीतपीळितोति वुत्तं होति । **सिलकबुद्धो-**ति परिहासवचनमेतं । सिलकञ्हि कञ्चि दिस्वा "बुद्धो अयं" ति वोहरन्ति ।

६३४॥ **विलीवच्छत्तं** ति वेणुविलीवेहि कतं छत्तं । **तत्थजातकदण्डकेन** कतं ति तालपण्णं सह दण्डकेन छिन्दित्वा तमेव छत्तदण्डं करोन्ति गोपालकादयो विय, तं सन्धायेतं वुत्तं । **छत्तपादुकाय वा ठितं होतीति** एत्थ छत्तपादुका वुच्चति छत्ताधारो । यस्मिं छत्तं अपतमानं कत्वा ठपेन्ति, तादिसिकाय छत्तपादुकाय ठितं छत्तं "छत्तं" तिं अज्झाहरितब्बं । "छत्तं छत्तपादुकाय ठितं" तिपि पठन्ति, तत्थापि अयमेवत्थो । B. 108

६३७॥ **चापो** ति मज्झे वङ्का काचदण्डसदिसा धनुविकति । कोदण्डोति वट्टलदण्डा धनुविकति । पटिमुक्कं ति पवेसितं लग्गितं ।

सुरुसुरुवग्गवण्णना निट्ठिता ।

---

७. पादुकवग्गवण्णना

६४७॥ सत्तमवग्गे **पटिच्छन्नो हुत्वा** ति सो किर रत्तिभागे उय्यानं गन्त्वा अम्बं अभिरुहित्वा साखाय साखं अम्बं ओलोकेन्तो विचरि । तस्स तथा करोन्तस्सेव रत्ति विभायि । सो चिन्तेसि "सचे इदानि ओतरित्वा गमिस्सामि, दिस्वा मं चोरोति

गहेस्सन्ति, रत्तिभागे गमिस्सामी" ति। अथेकं विटपं अभिरुहित्वा निलीनो अच्छि। तं सन्धायेतं वुत्तं। सो रुक्खतो ओतरन्तो एकं ओलम्बिनिसाखं गहेत्वा तेसं उभिन्नम्पि अन्तरे पतिट्ठासि। तं सन्धाय वुत्तं **"तेसं द्विन्नम्पि अन्तरा रुक्खतो पतितो"** ति। **पाळिया अत्थं न जानन्तीति** अत्तनो गहणस्स अत्थं न जानन्ति।

जातकपाळियं[1] पन अयं गाथा–

"सब्बमिदं चरिमं कतं, उभो धम्मं न पस्सरे।

उभोपकतिया चुता, यो चायं मन्तेज्झापेति।

यो च मन्तं अधीयती" ति–

एवमागता। तस्सायमत्थो[2]–**सब्बमिदं चरिमं कतं** ति यं अम्हेहि तीहि जनेहि कतं, B. 109 सब्बमिदं किच्चं लामकं निम्मरियादं अधम्मिकं। एवं अत्तनो चोरभावं तेसञ्च मन्तेसु अगारवं गरहित्वा पुन इतरे द्वयेव गरहन्तो **"उभो धम्मं न पस्सरे"** ति आदिमाह। तत्थ **उभो** ति इमे द्वेपि जना गरुकाराहं पोराणकधम्मं न पस्सन्ति, ततोव धम्मपकतितो चुता। धम्मो हि पठमुप्पत्तिवसेन **पकति** नाम। वुत्तम्पि चेतं–

"धम्मो हवे पातुरहोसि पुब्बे,

पच्छा अधम्मो उदपादि लोके" ति[3]।

यो चायं ति यो च अयं नीचे निसीदित्वा मन्ते अज्झापेति, यो च उच्चे निसीदित्वा अधीयतीति।

सालीनं ति अयं गाथापि–

"सालीनं ओदनं भुञ्जे, सुचिं मंसूपसेचनं।

तस्मा एतं न सेवामि, धम्मं इसीहि सेवितं" ति[4]–

एवं जातके आगता। तत्थ **सुचिं** ति पण्डरं परिसुद्धं। **मंसूपसेचनं** ति नानप्पकाराय मंसविकतिया सित्तं भुञ्जे। भुञ्जामीति अत्थो। सेसं पाकटमेव।

धिरत्थू ति धि अत्थु, निन्दा भवतूति अत्थो, गरहामं तं मयं ति वुत्तं होति। **लद्धलाभो** ति धनलाभं यसलाभञ्च सन्धाय वदति। **विनिपातनहेतुना** ति विनिपातनस्स हेतुभावेन। **वुत्ति नाम होतीति** यथावुत्तो दुविधोपि लाभो अपायसंवत्तनिकताय सम्पराये विनिपातनहेतुभावेन पवत्तनतो सम्पति अधम्मचरणेन पवत्तनतो च वुत्ति नाम होतीति अत्थो। **एवरूपा या वुत्तीति** एवरूपा धनलाभ-

---

1. खु. ५-९७ पिट्ठे।
2. जातक-ट्ठ. ३-२७-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
3. खु. ५-२२९-पिट्ठे।
4. खु. ५-९७ पिट्ठे।

यसलाभसङ्खाता या वुत्ति । **अधम्मचरणेन वा** ति वा-सद्दो सम्पिण्डनत्थो । **त्वं** ति उपयोगत्थे पच्चत्तवचनं, तं इच्चेव वा पाठो । **अस्मा** ति पासाणधिवचनमेतं ।

पादुकवग्गवण्णना निट्ठिता ।

सेसं उत्तानमेव ।

सेखियकण्डं निट्ठितं ।

अधिकरणसमथेसु यं वत्तब्बं, तं अट्ठकथायं आगतट्ठानेयेव दस्सयिस्साम । B. 110

इति समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय सारत्थदीपनियं भिक्खुविभङ्ग वण्णना निट्ठिता ।

महाविभङ्गो निट्ठितो

B. 111

भिक्खुनीविभङ्गवण्णना

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स ।

१. पाराजिक कण्ड

१. पठमपाराजिकसिक्खापदवण्णना

६५६॥ भिक्खुनीविभङ्गे **यो** ति यो भिक्खुनीनं विभङ्गो । **मिगारनत्ता** ति मज्झपदलोपेनेतं वुत्तं ति आह "**मिगारमातुया पन नत्ता होती**"ति । **मिगारमाता** ति विसाखायेतं अधिवचनं । **नवकम्माधिट्ठायिकं** ति नवकम्मसंविधायिकं । ब्यञ्जनानं पटिविज्झितब्बो आकारो नातिगम्भीरो, यथासुतं धारणमेव तत्थ करणीयं ति सतिया ब्यापारो अधिको, पञ्ञा तत्थ गुणीभूताति[1] वुत्तं "**सतिपुब्बङ्गमाय पञ्ञाया**" ति । सति पुब्बङ्गमा एतिस्साति **सतिपुब्बङ्गमा** । पुब्बङ्गमता चेत्थ पधानभावो "**मनोपुब्बङ्गमा**" ति आदीसु विय । अत्थग्गहणे पन पञ्ञाय ब्यापारो अधिको पटिविज्झितब्बस्स अत्थस्स अतिगम्भीरत्ता ति आह "**पञ्ञापुब्बङ्गमाय सतिया**" ति । **आलसियविरहिताति** कोसज्जरहिता । यथा अञ्ञा कुसीता निसिन्नट्ठाने निसिन्नाव होन्ति, ठितट्ठाने ठिताव, एवं अहुत्वा विप्फारिकेन चित्तेन सब्बकिच्चं निप्फादेति ।

सब्बा भिक्खुनियो सत्थुलद्धूपसम्पदा संघतो लद्धूपसम्पदाति दुविधा । गरुधम्मपटिग्गहणेन हि लद्धूपसम्पदा महापजापतिगोतमी सत्थुसन्तिकाव लद्धूपसम्पदत्ता **सत्थुलद्धूपसम्पदा** नाम । सेसा सब्बापि **संघतो लद्धूपसम्पदा** । तापि एकतो उपसम्पन्ना उभतोउपसम्पन्नाति दुविधा । तत्थ या ता महापजापतिगोतमिया सद्धिं निक्खन्ता पञ्चसता साकियानियो, ता एकतोउपसम्पन्ना भिक्खुसंघतो एव लद्धूपसम्पदत्ता , इतरा **उभतोउपसम्पन्ना** उभतोसंघे उपसम्पन्नत्ता । एहिभिक्खुनीभावेन उपसम्पन्ना पन

B. 112 भिक्खुनियो न सन्ति तासं तथा उपसम्पदाय अभावतो । यदि एवं "एहि भिक्खुनी" ति इध कस्मा वुत्तं ति? देसनाय सोतपतितभावतो । अयञ्हि सोतपतितता नाम कत्थचि लब्भमानस्सपि अग्गहणेन होति, यथा अभिधम्मे मनोधातुनिद्देसे[2] लब्भमानम्पि झानङ्गं पञ्चविञ्ञाणसोते पतिताय न उद्धटं कत्थचि देसनाय असम्भवतो, यथा तत्थेव वत्थुनिद्देसे[3] हदयवत्थु । कत्थचि अलब्भमानस्सपि गहणवसेन यथाठितकप्पीनिद्देसे । यथाह–"

---

1. गुणभूताति (स्या)
2. अभि. १-४४. पिट्ठे ।
3. अभि. १-१४६ पिट्ठे ।

"कतमो च पुग्गलो ठितकप्पी? अयञ्च पुग्गलो सोतापत्तिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो अस्स, कप्पस्स च उड्डय्हनवेला अस्स, नेव ताव कप्पो उभड्डय्हेय्य, यावायं पुग्गलो न सोतापत्तिफलं सच्छिकरेय्या" ति[1]।

एवमिधापि अलब्भमानगहणवसेन वेदितब्बं। परिकप्पवचनञ्हेतं "सचे भगवा भिक्खुनीभावयोग्यं कञ्चि मातुगामं" एहि भिक्खुनी "ति वदेय्य, एवं भिक्खुनीभावो सिया" ति।

कस्मा पन भगवा एवं न कथेसीति? तथा कताधिकारानं अभावतो। ये पन "अनासन्नासन्निहितभावतो" ति कारणं वत्वा "भिक्खू एव हि सत्थु आसन्नचारिनो सदा सन्निहिता च होन्ति, तस्मा ते एव 'एहिभिक्खू' हि वत्तब्बतं अरहन्ति, न भिक्खुनियो" ति वदन्ति, तं तेसं मतिमत्तं सत्थु आसन्नदूरभावस्स भब्बाभब्बभावसिद्धत्ता। वुत्तञ्हेतं भगवता-

"सङ्घाटिकण्णे चेपि मे भिक्खवे भिक्खु गहेत्वा पिट्ठितो पिट्ठितो अनुबन्धो अस्स पादे पादं निक्खिपन्तो, सो च होति अभिज्झालु[2] कामेसु तिब्बसारागो ब्यापन्नचित्तो पदुट्ठमनसङ्कप्पो मुट्ठस्सति असम्पजानो असमाहितो विब्भन्तचित्तो पाकतिन्द्रियो, अथ खो सो आरकाव मय्हं, अहञ्च तस्स। तं किस्स हेतु? धम्मं हि सो भिक्खवे भिक्खु न पस्सति, धम्मं अपस्सन्तो न मं पस्सति। योजनसते चेपि सो भिक्खवे भिक्खु विहरेय्य, सो च होति अनभिज्झालु कामेसु न तिब्बसारागो अब्यापन्नचित्तो अप्पदुट्ठमनसङ्कप्पो उपट्ठितस्सति सम्पजानो समाहितो एकग्गचित्तो संवुतिन्द्रियो, अथ खो सो सन्तिकेव मय्हं, अहञ्च तस्स। तं किस्स हेतु? धम्मं हि सो भिक्खवे भिक्खु पस्सति, धम्मं पस्सन्तो मं पस्सती" ति B. 113

तस्मा अकारणं देसतो सत्थु आसन्नानासन्नता। अकताधिकारताय पन भिक्खुनीनं एहिभिक्खुनूपसम्पदाय अयोग्यता वेदितब्बा।

यदि एवं यं तं थेरीगाथासु भद्दाय कुण्डलकेसाय वुत्तं–

"निहच्च जाणुं वन्दित्वा, सम्मुखा अञ्जलिं अकं।
एहि भद्देहि मं अवच, सा मे आसूपसम्पदा" ति[3]

तथा अपदानेपि–

"आयाचितो तदा आह, एहि भद्देति नायको।
तदाहं उपसम्पन्ना, परित्तं तोयमद्दसं" ति[4]।

---

1. अभि. ३-११६ पिट्ठे।
2. खु. १-२५६ पिट्ठे।
3. खु. २-३९१ पिट्ठे।
4. खु-४-२४३-पिट्ठे।

तं कथं ति? नयिदं एहिभिक्खुनीभावेन उपसम्पदं सन्धाय वुत्तं, उपसम्पदाय पन हेतुभावतो "या सत्थु आणत्ति, सा मे आसूपसम्पदा" ति वुत्ता। तथा हि वुत्तं **अट्ठकथायं**[1] एहि भद्दे भिक्खुनुपस्सयं गन्त्वा भिक्खुनीनं सन्तिके पब्बजउपसम्पज्ज-सूति मं अवच आणापेसि, सा सत्थु आणा मय्हं उसम्पदाय कारणत्ता उपसम्पदा आसि आहोसी" ति। **अपदानगाथायम्पि** एवमेव अत्थो गहेतब्बो। तस्मा भिक्खुनीनं एहिभिक्खुनूपसम्पदा नत्थियेवाति निट्ठमेत्थ गन्तब्बं। यथा चेतं सोतपतितवसेन "एहि भिक्खुनी" ति वुत्तं, एवं "तीहि सरणगमनेहि उपसम्पन्नाति भिक्खुनी" ति इदम्पि सोतपतितवसेनेव वुत्तं ति दट्ठब्बं सरणगमनूपसम्पदायपि भिक्खुनीनं असम्भवतो।

६५९॥ भिक्खुविभङ्गे "कायसंसग्गं सादियेय्या" ति अवत्वा 'समापज्जेय्या' ति वुत्तत्ता **"भिक्खु आपत्तिया न कारेतब्बो"** ति वुत्तं। **तब्बहुलनयेनाति** किरियास-मुट्ठानस्सेव बहुलभावतो। दिस्सति हि तब्बहुलनयेन तब्बोहारो यथा "ब्राह्मणगामो-

B. 114 ति। ब्राह्मणगामेपि हि अन्तमसो रजकादीनि पञ्च कुलानि सन्ति। साति किरियासमुट्ठानता।

६६२॥ **तथेवा** ति कायसंसग्गरागेन अवस्सुतोयेवाति अत्थो। सेसमेत्थ उत्तानमेव।

पठमपाराजिकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

---

२. दुतियपाराजिकसिक्खापदवण्णना

६६६॥ दुतिये "किस्स पन त्वं अय्ये जानं पाराजिकं धम्मं अज्झापन्नं" ति वचनतो "उद्दिट्ठा खो अय्यायो अट्ठ पाराजिका धम्मा" ति आदिवचनतो च भिक्खुनीविभङ्गं पत्वा साधारणानि सिक्खापदानि भिक्खूनं उप्पन्नवत्थुस्मिं येव "या पन भिक्खुनी छन्दसो मेथुनं धम्मं पटिसेवेय्य। अन्तमसो तिरच्छानगतेनपि, पाराजिका होति असंवासा" तिआदिना नयेन सविसेसम्पि अविसेसम्पि मातिकं ठपेत्वा अनुक्कमेन पदभाजनं आपत्तिभेदं तिकच्छेदं अनापत्तिवारञ्च अनवसेसं वत्वा वित्थारेसि। सङ्गीतिकारकेहि पन असाधारणपञ्ञत्तियोयेव इध वित्थारिता ति वेदितब्बा।

---

1. थेरीगाथा-ट्ठ. १११ पिट्ठे।

अथ उपरिमेसु द्वीसु अपञ्ञत्तेसु अट्ठन्नं पाराजिकानं अञ्ञतरं ति इदं वचनं न युज्जतीति आह **"इदञ्च पाराजिकं पच्छा पञ्ञत्तं"** ति आदि। यदि एवं इमस्मिं ओकासे कस्मा ठपितं ति आह **"पुरिमेन पन सद्धिं युगळत्ता"** ति आदि, पुरिमेन सद्धिं एकसम्बन्धभावतो इध वुत्तं ति अधिप्पायो। "अट्ठन्नं पाराजिकानं अञ्ञतरं" ति वचनतो च वज्जपटिच्छादिकं या पटिच्छादेति, सापि वज्जपटिच्छादिकायेवाति दट्ठब्बं। किञ्चापि वज्जपटिच्छादनं पेमवसेन होति, तथापि सिक्खापदवीतिक्कमचित्तं दोमनस्सितमेव होतीति कत्वा "दुक्खवेदनं" ति वुत्तं। सेमेत्थ उत्तानमेव।

दुतियपाराजिक सिक्खापद वण्णना निट्ठिता।

६६८॥ ततियं उत्तानत्थमेव। B. 115

४. चतुत्थपाराजिकसिक्खापदवण्णना

६७५॥ चतुत्थे लोकस्सादमित्तसन्थववसेना ति लोकस्सादसङ्खातस्स मित्तसन्थवस्स वसेन। वुत्तमेवत्थं परियायन्तरेन विभावेतुं **"कायसंसग्गरागेना"** ति वुत्तं।

तिस्सित्थियो मेथुनं तं न सेवेति[1] या तिस्सो इत्थियो वुत्ता, तासुपि यं तं मेथुनं नाम, तं न सेवति। **तयो पुरिसे** ति तयो पुरिसेपि उपगन्त्वा मेथुनं न सेवति। **तयो च अनरियपण्डके** ति उभतोब्यञ्जनसङ्खाते तयो अनरिये, तयो च पण्डकेति इमेपि छ जने उपगन्त्वा मेथुनं न सेवति। **न चाचरे मेथुनं ब्यञ्जनस्मिं** ति अनुलोमपाराजिकवसेनपि अत्तनो निमित्ते मेथुनं नाचरति। **छेज्जं सिया मेथुनधम्मपच्चया**ति सिया मेथुनधम्मपच्चया पाराजिकं ति अयं पञ्हो अट्ठवत्थुकं सन्धाय वुत्तो। तस्सा हि मेथुनधम्मस्स पुब्बभागकायसंसग्गं आपज्जितुं वारमिन्तिया मेथुनधम्मपच्चया छेज्जं होति। छेदोयेव छेज्जं।

मेथुनधम्मस्स पुब्बभागत्ताति इमिना मेथुनधम्मस्स पुब्बभागभूतो कायसंसग्गोयेव तत्थ **मेथुनधम्म**-सद्देन वुत्तो, न द्वयंद्वयसमापत्तीति दीपेति। **वण्णावण्णो** ति द्वीहि सुक्कविस्सट्ठि वुत्ता। गमनुप्पादनं ति[2] सञ्चरित्तं। **सब्बपदेसू**ति "सङ्घाटिकण्णग्गहणं सादियेय्या" ति आदीसु। सेसमेत्थ उत्तानमेव। कायसंसग्गरागो, सउस्साहता, अट्ठमस्स वत्थुस्स पूरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि।

चतुत्थपाराजिकसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

भिक्खुनीविभङ्गे पाराजिककण्डवण्णना निट्ठिता।

पाराजिककण्डं निट्ठितं।

---

1. वि-ट्ठ-४-२४०-पिट्ठे पि पस्सितब्बं।
2. वनमनुप्पादनंति (स्या)

B. 116

२. संघादिसेसकण्ड

१. पठमसंघादिसेससिक्खापदवण्णना

६७९॥ संघादिसेसकण्डस्स पठमसिक्खापदे द्वीसु जनेसूति अड्डकारकेसु द्वीसु जनेसु। **यो कोचीति** तेसुयेव द्वीसु यो कोचि, अञ्ञो वा तेहि आणत्तो। **दुतियस्स आरोचेतीति** एत्थापि द्वीसु जनेसु यस्स कस्सचि दुतियस्स कथं यो कोचि आरोचेतीति एवमत्थो गहेतब्बो ति आह **"दुतियस्स आरोचेतीति एत्था पि एसेव नयो"** ति। **गतिगतं ति** चिरकालपवत्तं।

आपत्ति ति आपज्जनं। **सह वत्थुज्झाचाराति** वत्थुवीतिक्कमेन सह। सहयोगे करणवचनप्पसङ्गे इदं निस्सक्कवचनं। **यं** ति यं धम्मं। **निस्सारेतीति** आपन्नं भिक्खुनिसंघम्हा निस्सारेति। हेतुम्हि चायं कत्तुवोहारो। निस्सारणहेतुभूतो हि धम्मो **निस्सारणीयो** ति वुत्तो। गीवायेव होति, न पाराजिकं अनाणत्तिया गहितत्ता। यथा दासदासीवापीआदीनि सम्पटिच्छितुं न वट्टति, एवं तेसं अत्थाय अड्डकरणम्पि न वट्टतीति आह **"अयं अकप्पियअड्डो नाम, न वट्टती"** ति।

एत्थ च सचे अधिकरणट्ठानं गन्त्वा "अम्हाकं एसो दासो, दासी, वापी, खेत्तं, आरामो, आरामवत्थु, गावो, अजा, कुक्कुटा "ति आदिना वोहरति, अकप्पियं।" अयं अम्हाकं आरामिको, अयं वापी इत्थन्नामेन संघस्स भण्डधोवनत्थाय दिन्ना, इतो खेत्ततो आरामतो उप्पज्जनकचतुपच्चया इतो गावितो महिंसितो अजातो उप्पज्जनकगोरसा इत्थन्नामेन संघस्स दिन्नाति पुच्छिते वा अपुच्छिते वा वत्थुं वट्टती"ति वदन्ति। सेसमेत्थ उत्तानमेव। अनकड्ढिताय अड्डकरणं, अड्डपरियोसानं ति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि।

पठमसंघादिसेससिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

B. 117

२. दुतियसंघादिसेससिक्खापदवण्णना

६८३॥ दुतिये **मल्लगणभटिपुत्तगणादिकं** ति आदीसु[1] **मल्लगणो** नाम नारायनभत्तिको तत्थ तत्थ पानीयट्ठपनपोक्खरणीखणनादिपुञ्ञकम्मकारको गणो, **भटिपुत्तगणो** नाम कुमारभत्तिकगणो। **धम्मगणो** ति सासनभत्तिगणो अनेकप्पकारपुञ्ञकम्म-

---

1. मल्लगणभट्टि..... (स्या)

कारकगणो वुच्चति । **गन्धिकसेणीति** अनेकप्पकारसुगन्धिविकतिकारको गणो । दुस्सिकसेणीति पेसकारकगणो । **कप्पगतिकं** ति कप्पियभावं गतं ।

वुट्ठापेन्तियाति उपसम्पादेन्तिया । "चोरिं वुत्तनयेन अनापुच्छा पब्बाजेन्तिया दुक्कटं" ति वदन्ति । पण्णत्तिं अजानन्ता अरियापि वुट्ठापेन्तीति वा कम्मवाचा-परियोसाने आपत्तिक्खणे विपाकाब्याकतसमङ्गितावसेन वा **"तिचित्तं"** ति वुत्तं ति वेदितब्बं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । चोरिता, चोरिसञ्ञा, अञ्ञत्र अनुञ्ञातकारणा वुट्ठापनं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

दुतियसंघदिसेससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

३. ततियसंघादिसेससिक्खापदवण्णना

६९२॥ ततिये **परिक्खेपं अतिक्कामेन्तिया** ति सकगामतो अञ्ञस्स गामस्स परिक्खेपं अतिक्कामेन्तिया । "गामन्तरं गच्छेय्या" ति हि वचनतो अञ्ञस्स गामस्स परिपेक्खं अतिक्कामेन्तिया एव आपत्ति, न सकगामस्स । अञ्ञो हि गामो गामन्तरं । **अपरिक्खित्तस्स गामस्स उपचारं** ति एत्थ **उपचार**-सद्देन घरूपचारतो पठमलेड्डुपात-सङ्खातं परिक्खेपारहट्ठानं गहितं, न ततो दुतियलेड्डुपातसङ्खातो उपचारोति आह **"परिक्खेपारहट्ठानं"** ति । तेनेव पाळियं "उपचारं अतिक्कामेन्तिया" ति वुत्तं । अञ्ञथा यथा विकालगामप्पविसनसिक्खापदे "परिक्खित्तस्स गामस्स परिक्खेपं अतिक्कमन्तस्स, अपरिक्खितस्स गामस्स उपचारं ओक्कमन्तस्सा" ति[1] वुत्तं, एवमिधापि "परिक्खित्तस्स गामस्स परिक्खेपं अतिक्कामेन्तिया अपरिक्खित्तस्स गामस्स उपचारं ओक्कमन्तिया" ति वदेय्य । सङ्खेपतो वुत्तमत्थं विभजित्वा दस्सेन्तो **"अपिचेत्था"** ति आदिमाह। **विहारस्स चतुगामसाधारणत्ता** ति इमिना "विहारतो एकं गामं गन्तुं वट्टती" ति एत्थ कारणमाह। विहारस्स चतुगामसाधारणत्तायेव हि चतूसु गामेसु यंकिञ्चि एकं गामं गन्तुं वट्टति । B. 118

यत्था ति यस्सं नदियं । "पठमं पादं उत्तारेन्तिया आपत्ति थुल्लच्चयस्स, दुतियं पादं उत्तारेन्तिया आपत्ति संघादिसेसस्सा" ति वचनतो नदिं ओतरित्वा पदसा उत्तरन्तिया एव आपत्तीति आह **"सेतुना गच्छति, अनापत्तीति** आदि । **परतीरमेव अक्कमन्तिया अनापत्तीति** नदिं अनोतरित्वा याननावादीसु अञ्ञतरेन गन्त्वा परतीरमेव अक्कमन्तिया अनापत्ति । **उभयतीरेसु विचरन्ति, वट्टतीति** इदं असतिपि नदीपारगमने उपरि वक्खमानस्स विनिच्छयस्स फलमत्तदस्सनत्थं वुत्तं ति वेदितब्बं ।

---

1. वि. २-२१६ पिट्ठे ।

ओरिमतीरमेव आगच्छति, आपत्तीति परतीरं गन्तुकामताय ओतिण्णत्ता वुत्तं । **तमेवतीरं** ति तमेव ओरिमतीरं । **अनापत्तीति** परतीरं गन्तुकामताय अभावतो अनापत्ति ।

तादिसे अरञ्ञे ति "बहिइन्दखीला सब्बमेतं अरञ्ञं" ति[1] एवं वुत्तलक्खणे अरञ्ञे । अथ तादिसस्सेव अरञ्ञस्स गहितभावो कथं विञ्ञायतीति आह **"तेनेवा"** ति आदि । इमिना हि अट्ठकथावचनेन ईदिसेपि गामसमीपे दस्सनूपचारे विजहिते सति-पि सवनूपचारे आपत्ति होतीति विञ्ञायति । मग्गमूळ्हा उच्चासद्दं करोन्तीति आह **"मग्गमूळ्हसद्देन विया"** ति । **सद्दायन्तिया** ति सद्दं करोन्तिया । **पुरिमायो** ति पुरेतरं गच्छन्तियो । **अञ्ञं मग्गं गण्हातीति**[2] मग्गमूळ्हत्ता, न ओहातुं, तस्मा द्विन्नम्पि अनापत्ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अनन्तरायेन एकभावो, गामन्तरगमनादीसु अञ्ञतरतापज्जनं, आपदाय अभावोति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

ततियसंघादिसेससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

४. चतुत्थसंघादिसेससिक्खापदवण्णना

६९४॥ चतुत्थे **कारकगणस्सा** ति उक्खेपनीयकम्मकारकगणस्स । तेचत्तालीस-119 प्पभेदं वत्तं खन्धके आवि भविस्सति । **नेत्थारवत्ते** ति नित्थरणहेतुम्हि वत्ते । सेसं उत्तानमेव । धम्मेन कम्मेन उक्खित्तता, अञ्ञत्र अनुञ्ञातकारणा ओसारणं ति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

चतुत्थुसंघादिसेससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

५. पञ्चमसंघादिसेससिक्खापदवण्णना

७०१॥ **पञ्चमे एतं न वुत्तं** ति "भिक्खुनिया अवस्सुतभावो दट्ठब्बो" ति एतं नियमनं न वुत्तं । **तं** ति तं नियमेत्वा अवचनं । **पाळिया समेतीति** "एकतो अवस्सुके" ति अविसेसत्वा वुत्तपाळिया "अनवस्सुतोति जानन्ती पटिग्गण्हाती" ति इमाय च पाळिया समेति । यदि हि पुग्गलस्स अवस्सुतभावो नप्पमाणं, किं "अनवस्सुतो ति जानन्ती" ति इमिना वचनेन, "अनापत्ति उभतोअनवस्सुता होन्ति, अनवस्सुता

---

1. अभि. २-२६० पिट्ठे ।
2. गण्हाति ?

पटिग्गण्हाती" ति एत्तकमेव वत्तब्बं सिया ।" **उभतोअनवस्सुता होन्ति, अनवस्सुतो ति जानन्ती पटिग्गण्हातीति** इमस्स च अनापत्तिवारस्स अयमत्थो । उभो चे अनवस्सुता, सब्बथापि अनापत्ति । अथ भिक्खुनी अनवस्सुता समाना अवस्सुतम्पि "अनवस्सुतो" ति सञ्ञाय तस्स हत्थतो पटिग्गण्हाति, एवम्पि अनापत्ति । अथ सयं अनवस्सुतापि अञ्ञं अनवस्सुतं वा "अवस्सुतं" वा अवस्सुतो ति जानाति , दुक्कटमेव । वुत्तञ्हेतं अनन्तरसिक्खापदे "किस्स त्वं अय्ये न पटिग्गण्हासीति । अवस्सुता अय्येति । त्वं पन अय्ये अवस्सुताति । नाहं अय्ये अवस्सुता" ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । उदकदन्तपोनतो अञ्ञं अज्झोहरणीयं , उभतोअवस्सुतता सहत्था गहणं, अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि[1]

पञ्चमसंघादिसेससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

६. छट्ठसंघादिसेससिक्खापदवण्णना

७०५॥ छट्ठे परिवारगाथाय अयमत्थो । न देति न **पटिग्गण्हातीति**' न उय्योजिका देति, नापि उय्योजिता तस्सा हत्थो गण्हाति । **पटिग्गहो तेन न विज्जतीति** B. 120 तेनेव कारणेन उय्योजिकाय हत्थतो उय्योजिताय पटिग्गहो न विज्जति । **आपज्जति गरुकं** ति एवं सन्तेपि अवस्सुतस्स हत्थतो पिण्डग्गहणे उय्योजेन्ती संघदिसेसापत्तिं आपज्जति । **तञ्च परिभोगपच्चया** ति तञ्च पन आपत्तिं आपज्जमाना तस्सा उय्योजिताय परिभोगपच्चया आपज्जति । तस्सा हि भोजन- परियोसाने उय्योजिकाय संघादिसेसो होति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । मनुस्सपुरिसता, अञ्ञत्र अनुञ्ञातकारणा खादनीयं भोजनीयं गहेत्वा भुञ्जाति उय्योजना, तेन वचनेन गहेत्वा इतरिस्सा भोजनपरियोसानं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

छट्ठसंघादिसेससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

७. सत्तमसंघादिसेससिक्खापदवण्णना

७०९॥ सत्तमे **किन्नुमाव समणियो** ति किं नु इमाम एव समणियो । **तासाहं** ति तासं अहं । सेसं उत्तानमेव ।

सत्तमसंघादिसेससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

---

1. वि-ट्ठ-४: २४१ पिट्ठे ।

७१५॥ अट्ठमं उत्तानत्थमेव ।

९. नवमसंघादिसेससिक्खापद वण्णना

७२१॥ नवमे **वज्जपटिच्छादिका** ति खुद्दानुखुद्दकवज्जस्स पटिच्छादिका । समनुभासनकम्मकाले चेत्थ द्वे तिस्सो एकतो समनुभासितब्बा ।

नवमसंघादिसेससिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

७२७॥ दसमं उत्तानत्थमेव ।

भिक्खुनीविभङ्गे संघादिसेसवण्णना निट्ठिता ।

संघादिसेसकण्डं निट्ठितं ।

३. निस्सग्गियकण्ड

B. 121

७३३॥ निस्सग्गियेसु पठमं उत्तानमेव ।

७४०॥ दुतिये "**अय्याय दम्मीति एवं पटिलद्धं** ति निस्सट्ठपटिलद्धं । तेनेव **मातिकाट्ठकथायम्पि**" निस्सट्ठं पटिलभित्वापि यथादानेयेव उपनेतब्बं" ति वुत्तं । **यथादानेयेव उपनेतब्बं** ति यथा दायकेन दिन्नं, तथा उपनेतब्बं, अकालचीवरपक्खेयेव ठपेतब्बं ति वुत्तं होति । एत्थ च भाजापिताय लद्धचीवरमेव निस्सग्गियं होति, तं विनयकम्मं कत्वापि अत्तना न लभति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । अकालचीवरता, तथासञ्ञिता, कालचीवरं ति अधिट्ठाय लेसेन भाजापनं, पटिलाभोति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

७४३॥ ततिये **मे' तं** ति मे एतं । सकसञ्ञाय गहितत्ता पाचित्तियं दुक्कटञ्च वुत्तं । इतरथा भण्डग्घेन कारेतब्बं । उपसम्पन्नता, परिवत्तितचीवरस्स विकप्पनुपगता, सकसञ्ञाय अच्छिन्दनं वा अच्छिन्दापनं वा ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

७४८-७५२॥ चतुत्थे **आहटसप्पिं** दत्वा ति अत्तनो दत्वा । **यमकं पचितब्बं** ति सप्पिञ्च तेलञ्च एकतो कत्वा पचितब्बं । लेसेन गहेतुकामता, अञ्ञस्स विञ्ञापनं, पटिलाभोति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

७५३॥ पञ्चमे **साति** थुल्लनन्दा । अयं ति अयं सिक्खमाना । **चेतापेत्वाति जानापेत्वा इच्चेव अत्थो** ति इध वुत्तं, **मातिकाट्ठकथायं**[1] पन "अञ्ञं चेतापेत्वा ति अत्तनो कपिप्यभण्डेन इदं नाम आहरा ति अञ्ञं परिवत्तापेत्वा" ति वुत्तं, तस्मा "चेतापेत्वा" ति इमस्स परिवत्तापेत्वातिपि अत्थो दट्ठब्बो । अञ्ञं चेतापेय्या ति "एवं मे इदं दत्वा अञ्ञम्पि आहरिस्सती" ति मञ्ञमाना "न मे इमिना अत्थो, इदं नाम मे आहरा"ति ततो अञ्ञं चेतापेय्य ।

७५८॥ छट्ठे **धम्मकिच्चं** ति पुञ्ञकम्मं । **पावारिकस्सा** ति दुस्सवाणिजकस्स । याय चेतापितं, तस्सायेव निस्सग्गियं निस्सट्ठपटिलाभो च[2], तस्मा ताय भिक्खुनिया निस्सट्ठं पटिलभित्वा यथादाने उपनेतब्बं, न अत्तना गहेतब्बं । **अञ्ञस्सत्थायाति** चीवरादीसु अञ्ञतरस्सत्थाय । **अञ्ञुद्दिसिकेनाति** पुरिमस्सेवत्थदीपनं । **परिक्खारेना** ति कप्पियभण्डेन ।

B. 122

---

1. कङ्खा-ट्ठ-३१०. पिट्ठे ।
2. पटिलाभेव (स्या)

७६४॥ सत्तमे सयं याचितकेना ति **सयं याचितकेनापीति** अत्थो । तेनेव पाळियं "तेन च परिक्खारेन सयम्पि याचित्वा" ति वुत्तं, ततोयेव **मातिकाट्ठकथायं**[1] "सञ्ञाचिकेना ति सयं याचितकेना" पी अत्थो वुत्तो ।

७६८।७७३।७७८॥ अट्ठमनवमदसमानि उत्तानत्थानेव ।

७८४॥ एकादसमे यस्मा पवारितट्ठाने विञ्ञत्ति नाम न पटिसेधेतब्बा, तस्मा भगवा धम्मनिमन्तनवसेन पवारितट्ठाने "वदेय्यासि येनत्थो" ति वुत्ताय "चतुक्कंसपरमं विञ्ञापेतब्बं" ति परिच्छेदं दस्सेतीति वेदितब्बं । तेनेव **मातिकाट्ठकथायं** "चेतापेतब्बं ति ठपेत्वा सहधम्मिके च ञातकपवारिते च अञ्ञेन किस्मिञ्चिदेव गुणेपरितुट्ठेन वदेय्यासि येनत्थोति वुत्ताय विञ्ञापेतब्बं" ति वुत्तं ।

७८८॥ द्वादसमं उत्तानत्थमेव ।

भिक्खुनीविभङ्गे निस्सग्गियपाचित्तियसिक्खापदवण्णना निट्ठिता ।

निस्सग्गियकण्डं निट्ठितं ।

---

1. कङ्खा-ट्ठ. ३११-पिट्ठे ।

४. पाचित्तियकण्ड

B. 123

१. लसुणवग्गवण्णना

७९३-९७॥ पाचित्तियेसु लसुणवग्गस्स पठमे जातिं सरतीति **जातिस्सरो** । **सभावेनेवा** ति सूपसम्पाकादिं विनाव । **बदरसाळवं** नाम बदरफलानि सुक्खापेत्वा चुण्णेत्वा कत्तब्बा खादनीयविकति । सेसमेत्थ उत्तानमेव । आमकलसुणञ्चेव-अज्झोहरणञ्चा ति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

७९८-८०२-८०६॥ दुतियततियचतुत्थानि उत्तानत्थानेव ।

८१२॥ पञ्चमे **द्विन्नं पब्बानं उपरीति** एत्थ द्विन्नं अङ्गुलीनं सह पवेसने एकेकाय अङ्गुलिया एकेकं पब्बं कत्वा द्विन्नं पब्बानं उपरि । एकङ्गुलिपवेसने द्विन्नं पब्बानं उपरि न वट्टतीति वेदितब्बं । महापच्चरियम्पि अयमेव नयो दस्सितो । उदकसुद्धि-पच्चयेन पन सतिपि फस्ससादियने यथावुत्तपरिच्छेदे अनापत्ति ।

८१५-८१७॥ छट्ठे **आसुम्भित्वा** ति पातेत्वा । **दधिमत्थूति** दधिमण्डं दधिम्हि पसन्नोदकं । भुञ्जन्तस्स भिक्खुनो हत्थपासे ठानं, पानीयस्स वा विधूपनस्स वा गहणं ति इमानि पनेत्थ द्वे अङ्गानि ।

८२२॥ सत्तमे "पटिग्गण्हाति, आपत्ति दुक्कटस्सा" ति इदं पुब्बपयोगदुक्कटस्स निदस्सनमत्तं ति आह **"न केवलं पटिग्गहणेयेव होती"**ति आदि । पमाणं ति पाचित्तियापत्तिया पमाणं । इमेहियेव द्वीहि पाचित्तियं होति, नाञ्ञेहि भज्जनादीही-ति अत्थो । वुत्तमेवत्थं वित्थारतो दस्सेतुं "तस्मा" ति आदिमाह । तं **पुब्बापरविरुद्धं** ति पुनपि वुत्तं ति वुत्तवादं सन्धायाह । अञ्ञाय विञ्ञत्तिया लद्धम्पि हि अनाणत्तिया विञ्ञत्तिया इमिस्सा अविञ्ञत्तिया लद्धपक्खं भजति, तस्मा हेट्ठा अविञ्ञत्तिया लद्धे करणकारापनेसु विसेसं अवत्वा इध विसेसवचनं पुब्बापरविरुद्धं । यदि चेत्थ करणे पाचित्तियं, कारापनेपि पाचित्तियेनेव भवितब्बं । अथ कारापने दुक्कटं, करणेपि दुक्कटेनेव भवितब्बं । न हि करणे वा कारापने वा विसेसो अत्थि, तस्मा अञ्ञाय विञ्ञत्तिया **लद्धं** सयं भज्जनादीनि कत्वापि कारापेत्वापि भुञ्जन्तिया दुक्कटमेवा ति इदमेत्थ सन्निट्ठानं । **अविसेसेन** वुत्तं ति करणकारापनानं सामञ्ञतो वुत्तं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । सत्तन्नं धञ्ञानं अञ्ञतरस्स विञ्ञापनं वा विञ्ञापापनं वा, पटिलाभो, भज्जनादीनि कत्वा वा कारेत्वा वा अज्झोहरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

B. 124

८२४॥ अट्ठमे **निब्बिट्ठो** ति पतिट्ठापितो । केणीति रञ्ञो दातब्बस्स आयस्सेतं अधिवचनं । ठानन्तरं ति गामजनपदादिट्ठानन्तरं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । उच्चारादि-

भावो, अनवलोकनं, वळञ्जनंद्वानं तिरोकुट्टपाकारता, छड्डनं वा छड्डापनं वाति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि ।

८३०॥ नवमे **सब्बेसं** ति भिक्खुस्स भिक्खुनिया च । इध खेत्तपालका आरामादिगोपका च सामिका एव ।

८३७॥ दसमे **एकपयोगेना** ति एकदिसावलोकनपयोगेन । **तेसंयेवा** ति येसं नच्चं पस्सति । किञ्चापि सयं नच्चनादीसु पाचित्तियं पाळियं न वुत्तं, तथापि अट्ठकथापमाणेन गहेतब्बं ति दस्सेतुं **"सब्बअट्ठकथासु वुत्तं"** ति आह । **"आरामे ठत्वा** ति न केवलं ठत्वा, ततो ततो गन्त्वापि सब्बिरियापथेहि लभति, "आरामे ठिता" ति पन आरामपरियापन्नभावदस्सनत्थं वुत्तं । इतरथा निसिन्नापि न लभेय्या"ति तीसुपि गण्ठिपदेसु वुत्तं । सेसमेत्थ उत्तानमेव । नच्चादीनं अञ्ञतरता, अञ्ञत्र अनुञ्ञातकारणा गमनं, दस्सनं वा सवनं वा ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

लसुणवग्गवण्णना निट्ठिता

---

२. अन्धकारवग्गवण्णना

८४१॥ अन्धकारवग्गस्स पठमे **दाने वा पूजाय वा** ति दाननिमित्तं वा पूजानिमित्तं वा । **मन्तेतीति** कथेति । रत्तन्धकारता, पुरिसस्स हत्थपासे ठानं वा सल्लपनं वा, सहायाभावो, रहोपेक्खताति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

८४२-८४६-८५०॥ दुतियततियचतुत्थानि उत्तानत्थानेव ।

B. 125 ८५६-८५७॥ पञ्चमे **अनोवस्सकं अतिक्कामेन्तियाति** छन्नस्स अन्तो निसीदित्वा पक्कमन्तिं सन्धाय वुत्तं । "उपचारो द्वादसहत्थो" ति वदन्ति । **पल्लङ्कस्स अनोकासेति** ऊरुबद्धासनस्स अनोकासे अप्पहोन्ते । पुरेभत्तता, अन्तरघरे निसज्जा, आसनस्स पल्लङ्कोकासता, अञ्ञत्र अनुञ्ञातकारणा अनापुच्छनं, वुत्तपरिच्छेदातिक्कमोति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि ।

८५९-८६४॥ छट्ठसत्तमादीनि उत्तानत्थानेव ।

अन्धकारवग्गवण्णना निट्ठिता ।

---

३. नग्गवग्गवण्णना

८८३-८८७॥ नग्गवग्गस्स पठमदुतियानि उत्तनत्थानेव ।

८९३॥ ततिये **विसिब्बेत्वा** ति दुस्सिब्बितं पुन सिब्बनत्थाय विसिब्बेत्वा विजटेत्वा । **अञ्ञत्र चतूहपञ्चाहा** ति विसिब्बितदिवसतो पञ्च दिवसे अतिक्कमित्वा ।

निवासनपावुरणूपगचीवरता, उपसम्पन्नाय सन्तकता, सिब्बनत्थाय विसिब्बनं वा विसिब्बापनं वा, अञ्ञत्र अनुञ्ञातकारणा पञ्चाहातिक्कमो, धुरनिक्खेपोति इमानि पनेत्थ पञ्च अङ्गानि ।

८९८॥ चतुत्थे **पञ्चन्नं चीवरानं** ति तिचीवरं उदकसाटिका सङ्कच्चिकाति इमेसं पञ्चन्नं चीवरानं । पञ्चन्नं चीवरानं अञ्ञतरता, पञ्चाहातिक्कमो, अनुञ्ञातकारणा-भावो, अपरिवत्तनं ति इमानि पनेत्थ चत्तारि अङ्गानि ।

९०२॥ पञ्चमं उत्तानत्थमेव ।

९०७॥ छट्ठे **चीवरलाभं ति** लभितब्बचीवरं । विकप्पनुपगपच्छिमता, संघस्स परिणतभावो, विना आनिसंसदस्सनेन अन्तरायकरणं ति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि ।

९११॥ सत्तमं उत्तानत्थमेच ।

९१६॥ अट्ठमे कुम्भथूणं नाम कुम्भसद्दो, तेन चरन्ति कीळन्ति, तं वा सिप्पं एतेसं ति कुम्भथूणिका । तेनाह "घटकेन कीळनका" ति । दीघनिकायट्ठकथायं[1] पन "कुम्भथूणं नाम चतुरस्सअम्बणकताळं" ति वुत्तं । **चतुरस्सअम्बणकताळं** नाम रुक्खसारदन्तादीसु येन केनचि चतुरस्सअम्बणं कत्वा चतूसु पस्सेसु चम्मेन ओनन्धित्वा कतवादितभण्डं । **बिम्बिसकं** ति पि तस्सेव वेवचनं, तं वादेन्ति, तं वा सिप्पं एतेसं ति **कुम्भथूणिका** । तेनाह "**बिम्बिसकवादकातिपि वदन्ती**" ति । समण-चीवरता, ठपेत्वा सहधम्मिके मातापितरो च अञ्ञेसं दानं, अतावकालिकताति इमानि पनेत्थ तीणि अङ्गानि । B. 126

९२०॥ नवमं उत्तानत्थमेव ।

९२७॥ दसमे **धम्मिकं कथिनुद्धारं** ति सब्बासं भिक्खुनीनं अकालचीवरं दातुकामेन उपासकेन यत्तको अत्थारमूलको आनिसंसो, ततो अधिकं वा समकं वा दत्वा याचितकेन समग्गेन भिक्खुनिसंघेन यं कथिनं ञत्तिदुतियेन कम्मेन अन्तरा उद्धरीयति, तस्स सो उद्धारो धम्मिको ति वुच्चति, एवरूपं कथिनुद्धारं ति अत्थो । सेसं उत्तानत्थमेव ।

नग्गवग्गवण्णना निट्ठिता ।

९३२॥ तुवट्टवग्गे सब्बं उत्तानमेव ।

५. चित्तागारवग्गवण्णना

९७८॥ चित्तागारवग्गस्स पठमे कीळनउपवनं ति अन्तोनगरे ठितं सन्धाय वुत्तं, **कीळनुय्यानं** ति बहिनगरे ठितं सन्धाय । पाटेक्का आपत्तियो ति गीवाय

---

1. दी. ट्ठ-१-८१-पिट्ठे ।

परिवट्टनप्पयोगगणनाय आपत्तियो, न उम्मीलनगणनाय । **"अज्झारामे राजागारादीनि करोन्ति, तानि पस्सन्तिया अनापत्ती"** ति वचनतो "अन्तोआरामे तत्थ तत्थ गन्त्वा नच्चादीनि पस्सितुं लभती" ति पि सिद्धं ।

B. 127 ९८२॥ दुतियादीनि उत्तानत्थानेव ।

१०१५॥ नवमे हत्थिआदीसु **सिप्प**-सद्दो पच्चेकं योजेतब्बो, तथा आथब्बणादीसु **मन्त**-सद्दो । तत्थ आथब्बणमन्तो नाम आथब्बणवेदविहितो परूपघातकरो मन्तो, **खीलनमन्तो** नाम दारुसारखीलं मन्तेत्वा पथवियं पवेसेत्वा मारणमन्तो, **अगदप्पयोगो** विसयोजनं । **नागमण्डलं** ति सप्पानं पवेसनिवारणत्थं मण्डलबद्धमन्तो ।

१०१८॥ दसमं उत्तानत्थमेव ।

चित्तागारवग्गवण्णना निट्ठिता ।

१०२१॥ आरामवग्गे सब्बं उत्तानत्थमेव ।

१०६७॥ गब्भिनिवग्गेपि सब्बं सुविञ्ञेय्यमेव ।

---

८. कुमारिभूतवग्गवण्णना

१११९॥ कुमारिभूतवग्गस्स पठमे **सब्बपठमा द्वे महासिक्खमाना** ति गब्भिनिवग्गे सब्बपठमं वुत्ता द्वे सिक्खमाना । **सिक्खमाना इच्चेव वत्तब्बा** ति सम्मुतिकम्मादीसु एवं वत्तब्बा । **गिहिगताति वा कुमारिभूताति । वा न वत्तब्बा** ति सचे वदन्ति । कम्मं कुप्पतीति अधिप्पायो । इतो परं नवमपरियोसानं उत्तानत्थमेव ।

११६३॥ दसमे **अपुब्बसमुट्ठानसीसं** ति पठमपाराजिकसमुट्ठानादीसु तेरससु समट्ठानेसु अननुञ्ञातसमुट्ठानं सन्धाय वुत्तं । तञ्हि इतो पुब्बे तादिसस्स समुट्ठानसीसस्स अनागतत्ता "अपुब्बसमुट्ठानसीसं" ति वुत्तं ।

११९९॥ एकादसमादीनि उत्तानत्थानेव ।

कुमारिभूतवग्गवण्णना निट्ठिता ।

---

९. छत्तुपाहनवग्गवण्णना

B. 128

१२१४॥ छत्तुपाहनवग्गस्स एकादसमे **उपचारं सन्धाया** ति समन्ता द्वादसहत्थुपचारं सन्धाय । सेसं सब्बत्थ उत्तानमेव ।

छत्तुपाहनवग्गवण्णना निट्ठिता ।

गिरग्गसमज्जादीनि अचित्तकानि लोकवज्जानीति वुत्तत्ता नच्चन्ति वा वण्णकं ति वा अजानित्वाव पस्सन्तिया वा नहायन्तिया वा आपत्तिसम्भवतो वत्थु अजाननचित्तेन **अचित्तकानि**, नच्चंति वा वण्णकं ति वा जानित्वा पस्सन्तिया वा नहायन्तिया वा अकुसलेनेव आपज्जनतो **लोकवज्जानी** ति वेदितब्बानि । चोरीवुट्ठापनादीनि **चोरी** ति आदिना वत्थुं जानित्वा करणे एव आपत्तिसम्भवतो सचित्तकानि, उपसम्पदादीनं एकन्तअकुसलचित्तेनेव अकत्तब्बत्ता **पण्णतिवज्जानि** । "इध सचित्तकाचित्तकता पण्णत्तिजाननजाननताय अग्गहेत्वा वत्थुजाननाजाननताय गहेतब्बा" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । सेसमेत्थ उत्तानत्थमेव ।

भिक्खुनीविभङ्गे खुद्दकवण्णना निट्ठिता ।

पाचित्तियकण्डं निट्ठितं ।

B. 129

५. पाटिदेसनीयकण्ड

पाटिदेसनीयसिक्खापदवण्णना

१२२८॥ पाटिदेसनीया नाम ये अट्ठ धम्मा सङ्खेपेनेव सङ्गहं आरुळ्हाति सम्बन्धो। पाळिविनिमुत्तकेसूति पाळियं अनागतेसु सप्पिआदीसु।

पाटिदेसनीयसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

पाटिदेसनीयकण्डं निट्ठितं।

येन पन पञ्चसत्तति सेखिया धम्मा उद्दिट्ठा, ये च तेसं अनन्तरा सत्ताधिकरणव्हया धम्मा उद्दिट्ठाति सम्बन्धो। तत्थ तेसं ति तेसं सेखियानं। **सत्ताधिकरणव्हया** ति सत्ताधिकरणसमथसङ्खाता। तं अत्थविनिच्छयं तादिसंयेव यस्मा विदू वदन्तीति अत्थो।

यथा निट्ठिता ति सम्बन्धो। सब्बासवपहं मग्गं ति सब्बासवविघातकं अरहत्तमग्गं पत्वा ससन्ताने उप्पादेत्वा। **पस्सन्तु निब्बुतिं** ति मग्गञाणलोचनेन निब्बानं सच्छिकरोन्तु, पप्पोन्तूति वा पाठो। तत्थ **निब्बुतिं** ति खन्धपरिनिब्बानं गहेतब्बं।

इति समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय सारत्थदीपनियं भिक्खुनीविभङ्गवण्णना निट्ठिता।

उभतोविभङ्गट्ठकथावण्णना निट्ठिता।

महावग्ग



महावग्ग

B. 131

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स ।

१. महाखन्धक

बोधिकथावण्णना

इदानि उभतोविभङ्गानन्तरं सङ्गहमारोपितस्स महावग्गचूळवग्गसङ्गहितस्स खन्धकस्स अत्थसंवण्णनं आरभितुकामो **"उभिन्नं पातिमोक्खानं"** ति आदिमाह । तत्थ उभिन्नं पातिमोक्खानं ति उभिन्नं पातिमोक्खविभङ्गानं । पातिमोक्खग्गहणेन हेत्थ तेसं विभङ्गो अभेदेन गहितो । यं खन्धकं सङ्गायिंसूति सम्बन्धो । खन्धानं समूहो **खन्धको,** खन्धानं वा पकासनतो दीपनतो खन्धको । "खन्धा" ति चेत्थ पब्बज्जुपसम्पदादि-विनयकम्मसङ्खाता चारित्तवारित्तसिक्खापदसङ्खाता च पञ्ञत्तियो अधिप्पेता । पब्बज्जादीनि हि भगवता पञ्ञत्तत्ता "पञ्ञत्तियो" ति वुच्चन्ति । पञ्ञत्तियञ्च खन्धसद्दो दिस्सति "दारुक्खन्धो अग्गिक्खन्धो" ति आदीसु विय । अपि च भागरासट्ठतापेत्थ युज्जतियेव तासं पञ्ञत्तीनं भागतो रासितो च विभत्तत्ता । **खन्धकोविदा** ति पञ्ञत्तिभागरासट्ठवसेन खन्धट्ठे कोविदा ।

पदभाजनीये येसं पदानं अत्था येहि अट्ठकथानयेहि पकासिताति योजेतब्बं । **ते चे पुन वदेय्यामा** ति ते चे अट्ठकथानये पुनपि वदेय्याम । अथ वा पदभाजनीये येसं पदानं ये अत्था हेट्ठा पकासिता, ते चे अत्थे पुन वदेय्यामाति योजेतब्बं । इमस्मिं पक्खे हि-सद्दो पदपूरणे दट्ठब्बो । **परियोसानं** ति संवण्णनापरियोसानं । **उत्ताना चेव ये अत्था** ति ये अत्था पुब्बे अपकासितापि उत्ताना अगम्भीरा ।

१॥ **विसेसकारणं नत्थीति** "येन समयेन आयस्मतो सारिपुत्तत्थेरस्स सिक्खापदपञ्ञत्तियाचनहेतुभूतो परिवितक्को उदपादि, तेन समयेना" ति आदिना वुत्तकारणं विय इध विसेसकारणं नत्थि । **अयमभिलापो** ति "तेन समयेना" ति अयमभिलापो । **किं पनेतस्स वचने पयोजनं** ति यदि विसेसकारणं नत्थि, एतस्स वचने किं पयोजनं ति अधिप्पायो । निदानदस्सनं पयोजनं ति योजेतब्बं । तमेव विभावेतुं **"या हि भगवता"** ति आदि वुत्तं ।

B. 132

महावेला विय **महावेला,** विपुलवालुकपुञ्जताय महन्तो वेलातटो वियाति अत्थो । तेनाह **महन्ते वालिकरासिम्हीति अत्थो** ति। उरु मरु सिकता वालुका वण्णु वालिका ति इमे सद्दा समानत्था, ब्यञ्जनमेव नानं । तेनाह **"उरूति वालिका वुच्चती"** ति ।

इतो पट्ठाय च–

यस्मा सुत्तन्तपाळीनं, अत्थो सङ्खेपवण्णितो ।
तस्मा मयं करिस्साम, तासं अत्थस्स दीपनं ॥

नज्जाति[1] नदति सन्दतीति नदी, तस्सा नज्जा, नदिया निन्नगायाति[2] अत्थो । नेरञ्जराया ति "नेलञ्जलाया" ति वत्तब्बे ल–कारस्स र–कारं कत्वा "नेरञ्जराया" ति वुत्तं, कद्दमसेवालपणकादिदोसरहितसलिलायाति अत्थो । केचि "नीलंजलायाति वत्तब्बे नेरञ्जरायाति वुत्तं" ति वदन्ति । नाममेव वा एतं तस्सा नदियाति वेदितब्बं । तस्सा नदिया तीरे यत्थ भगवा विहासि । तं दस्सेतुं **"बोधिरुक्खमूले"** ति वुत्तं । "बोधि वुच्चति चतूसु मग्गेसु ञाणं" ति[3] एत्थ मग्गञाणं बोधीति वुत्तं, "पप्पोति बोधिं वरभूरिमेधसो" ति[4] एत्थ सब्बञ्ञुतञ्ञाणं । तदुभयम्पि बोधिं भगवा एत्थ पत्तोति रुक्खोपि "बोधिरुक्खो"त्वेव नामं लभि । अथ वा सत्त बोज्झङ्गे बुज्झतीति भगवा **बोधि** । तेन बुज्झन्तेन सन्निस्सितत्ता सो रुक्खो "बोधिरुक्खो" ति नामं लभि । अट्ठकथायं पन एकदेसेनेव अत्थं दस्सेतुं **"बोधि वुच्चति चतूसु मग्गेसु ञाणं"** ति आदि वुत्तं । मूले ति समीपे । **पठमाभिसम्बुद्धो** ति अनुनासिकलोपेनायं निद्देसोति आह "पठमं अभिसम्बुद्धो" ति । **पठमं** ति च भावनपुंसकनिद्देसो, तस्मा अभिसम्बुद्धो हुत्वा सब्बपठमं बोधिरुक्खमूले विहरतीति एवमेत्थ सम्बन्धो वेदितब्बो ।

B. 133 **अथ खो भगवा** ति एत्थ **अथा** ति तस्मिं समयेति एवमत्थो गहेतब्बो अनेकत्थत्ता निपातानं, यस्मिं समये अभिसम्बुद्धो हुत्वा बोधिरुक्खमूले विहरति, तस्मिं समयेति अत्थो । तेनेव **उदानपाळियं**[5] तेन खो पन समयेन भगवा सत्ताहं एकपल्लङ्केन निसिन्नो होति विमुत्तिसुखपटिसंवेदी" ति वुत्तं । **अथा** ति वा पच्छा ति इमस्मिं अत्थे निपातो, तस्मा अभिसम्बोधितो पच्छाति एवमत्थो गहेतब्बो । खो ति पदपूरणे निपातो । सत्त अहानि **सत्ताहं** । अच्चन्तसंयोगे चेतं उपयोगवचनं । यस्मा भगवा तं सत्ताहं निरन्तरताय अच्चन्तमेव फलसमापत्तिसुखेन विहासि, तस्मा "सत्ताहं"ति अच्चन्तसंयोगवसेन उपयोगवचनं वुत्तं । **एकपल्लङ्केना** ति विसाखपुण्णमाय अनत्थङ्गतेयेव सूरिये अपराजितपल्लङ्कवसेन वजिरासने निसिन्नकालतो पट्ठाय सकिम्पि अनुट्ठहित्वा यथाभुजितेन एकेनेव पल्लङ्केन ।

विमुत्तिसुखपटिसंवेदीति एत्थ तदङ्गविक्खम्भनसमुच्छेदपटिप्पस्सद्धिनिस्सरण-विमुत्तीसु पञ्चसु पटिप्पस्सद्धिविमुत्तिसङ्खाता भगवतो फलविमुत्ति अधिप्पेता ति

---

1. उदान-ट्ठ २५-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. निन्नतायाति (स्या.) ।
3. खु. ८-२३१ पिट्ठे चूळनिद्देसे ।
4. दी-३-१२९-पिट्ठे ।
5. खु. १-७८-पिट्ठे ।

आह **"विमुत्तिसुखं फलसमापत्तिसुखं पटिसंवेदयमानो"** ति। **विमुत्तीति** च उपक्किलेसेहि पटिप्पस्सद्धिवसेन चित्तस्स विमुत्तभावो, चित्तमेव वा तथा विमुत्तं वेदितब्बं। ताय विमुत्तिया जातं, सम्पयुत्तं वा सुखं विमुत्तिसुखं। "यायं भन्ते उपेक्खा सन्ते सुखे वुत्ता भगवता" ति[1] वचनतो उपेक्खापि चेत्थ सुखमिच्चेव वेदितब्बा। तथा हि वुत्तं **सम्मोहविनोदनियं**[2] "उपेक्खा पन सन्तत्ता, सुखमिच्चेव भासिता" ति। भगवा हि चतुत्थज्झानिकं अरहत्तफलमापत्तिं समापज्जति, न इतरं। अथ वा "तेसं वूपसमो सुखो" ति आदीसु[3] यथा सङ्खारदुक्खवूपसमो "सुखो" ति वुच्चति, एवं सकलकिलेसदुक्खूपसमभावतो अग्गफले लब्भमाना पटिप्पस्सद्धिविमुत्ति एव इध "सुखं" ति वेदितब्बा।

अथा ति अधिकारत्थे निपातो, खो ति पदपूरणे। तेसु अधिकारत्थेन "अथा" ति इमिना विमुत्तिसुखपटिसंवेदनतो अञ्ञं अधिकारं दस्सेति, को पनेसो ति ? पटिच्चसमुप्पादमनसिकारो। **रत्तिया** ति अवयवसम्बन्धे सामिवचनं। **पठमं** ति अच्चन्तसंयोगत्थे उपयोगवचनं। भगवा हि तस्सा रत्तिया सकलम्पि पठमं यामं तेनेव मनसिकारेन युत्तो अहोसीति। B. 134

पच्चयाकारं ति अविज्जादिपच्चयधम्मं। **पटिच्चा** ति पटिमुखं गन्त्वा, कारणसामग्गिं अपटिक्खिपित्वा ति अत्थो। पटिमुखगमनञ्च पच्चयस्स कारणसामग्गिया अङ्गभावेन फलस्स उप्पादनमेव। **अपटिक्खिपित्वा** ति पन विना ताय कारणसामग्गिया अङ्गभावं अगन्त्वा सयमेव न उप्पादेतीति अत्थो। एतेन कारणबहुता दस्सिता। अविज्जादिएकेकहेतुसीसेन हि हेतुसमूहो निद्दिट्ठो। **सहिते** ति समुदिते, अविनिब्भुत्तेति अत्थो। अविज्जादिको हि पच्चयधम्मो सहितेयेव अञ्ञमञ्ञं अविनिब्भोगवुत्तिधम्मे उप्पादेति। इमिना पच्चयुप्पन्नधम्मबहुता दस्सिता। उभयेनपि "एकं न एकतो" ति आदिनयो दीपितो होति। एकतो[4] हि कारणतो न इध किञ्चि एकं फलमत्थि, न अनेकं, नापि अनेकेहि कारणेहि एकं, अनेकेहि पन कारणेहि अनेकमेव होति। तथा हि अनेकेहि उतुपथवीबीजसलिलसङ्खातेहि कारणेहि अनेकमेव रूपगन्धरसादिअङ्कुरसङ्खातं फलमुप्पज्जमानं दिस्सति। यं पनेतं "अविज्जापच्चया सङ्खारा, सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं" ति एकेकहेतुफलदीपनं कतं, तत्थ पयोजनं न विज्जति।

भगवा हि कत्थचि पधानत्ता कत्थचि पाकटत्ता कत्थचि असाधारणत्ता देसनाविलासस्स च वेनेय्यानञ्च अनुरूपतो एकमेव हेतुं वा फलं वा दीपेति।

---

1. म. २-५९-पिट्ठे।
2. अभि ट्ठ-२-१७१ पिट्ठे।
3. दी-२-१२९-१६१-पिट्ठेसु।
4. अभि. ट्ठ. २-१४०, विसुद्धि-२-१७४-पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं।

"फस्सपच्चया वेदना" ति हि एकमेव हेतुं फलञ्चाह । फस्सो हि वेदनाय पधानहेतु यथाफस्सं वेदनाववत्थानतो । वेदना च फस्सस्स पधानफलं यथावेदनं फस्सववत्थानतो । "सेम्हसमुट्ठाना आबाधा" ति[1] पाकटत्ता एकं हेतुं आह । पाकटो हि एत्थ सेम्हो, न कम्मादयो । "ये केचि भिक्खवे अकुसला धम्मा, सब्बेते अयोनिसोमनसिकारमूलका" ति असाधारणत्ता एकं हेतुं आह । असाधारणो हि अयोनिसोमनसिकारो अकुसलानं, साधारणानि वत्थारम्मणादीनीति । तस्मा अविज्जा तावेत्थ विज्जमानेसुपि अञ्ञेसु वत्थारम्मणसहजातधम्मादीसु सङ्खारकारणेसु B. 135 "अस्सादानुपस्सिनो तण्हा पवड्ढती" ति[2] च अविज्जासमुदया आसवसमुदयो" ति[3] च वचनतो अञ्ञेसम्पि तण्हादीनं सङ्खारहेतूनं हेतूति पधानत्ता, "अविद्वा भिक्खवे अविज्जागतो पुञ्ञाभिसङ्खारम्पि अभिसङ्खरोती" ति पकाटत्ता असाधारणत्ता च सङ्खारानं हेतुभावेन दीपिताति वेदितब्बा । एवं सब्बत्थ एकेकहेतुफलदीपने यथासम्भवं नयो नेतब्बो । तेनाहु पोराणा–

"एकं न एकतो इध, नानेकमनेकतोपि नो एकं ।
फलमत्थि अत्थि पन एक-हेतुफलदीपने अत्थो ति ॥"

पच्चेतुमरहतीति **पटिच्चो** । यो हि नं पच्चेति अभिसमेति । तस्स अच्चन्तमेव दुक्खवूपसमाय संवत्तति । सम्मा सह च उप्पादेतीति **समुप्पादो** । पच्चयधम्मो हि अत्तनो फलं उप्पादेन्तो सम्पुण्णमेव उप्पादेति, न विकलं । ये च धम्मे उप्पादेति, ते सब्बे सहेव उप्पादेति, न एकेकं । इति पटिच्चो च सो समुप्पादो चाति **पटिच्चसमुप्पादो** ति एवम्पेत्थ अत्थो दट्ठब्बो । वित्थारो ति पटिच्चसमुप्पादपदवण्णनापपञ्चो । मयम्पि तं अतिपपञ्चभया इध न दस्सयिस्साम, एवं परतो वक्खमानम्पि वित्थारं । **अनुलोमपटिलोमं** ति भावनपुंसकनिद्देसो "विसमं चन्दिमसूरिया परिवत्तन्ती"तिआदीसु[4] विय । **स्वेवा** ति सो एव पच्चयाकारो । **पुरिमनयेन वा वुत्तो** ति "अविज्जापच्चया सङ्खारा" ति आदिना नयेन वुत्तो पच्चयाकारो । **पवत्तिया** ति संसारप्पवत्तिया । **मनसिअकासी** ति यो यो पच्चयधम्मो यस्स यस्स पच्चयुप्पन्नधम्मस्स यथा यथा हेतुपच्चयादिना पच्चयभावेन पच्चयो होति, तं सब्बं अविपरीतं अपरिहापेत्वा अनवसेसतो पच्चवेक्खणवसेन चित्ते अकासीति अत्थो ।

अविज्जापच्चया ति आदीसु[5] अविन्दियं कायदुच्चरितादिं विन्दतीति अविज्जा, विन्दियं कायसुचरितादिं न विन्दतीति अविज्जा, धम्मानं अविपरीतसभावं अविदितं

---

1. खु. ७-१०-पिट्ठे महानिद्देस ।
2. सं. १-३११-पिट्ठे ।
3. म-१-६८ पिट्ठे ।
4. अ. १-३८६-पिट्ठे ।
5. अभि-ट्ठ २-१२७, विसुद्धि, २-१५७, उदान-ट्ठ ३८ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

करोतीति अविज्जा, अन्तविरहिते संसारे भवादीसु सत्ते जवापेतीति अविज्जा, अविज्जमानेसु जवति, विज्जमानेसु न जवतीति अविज्जा, विज्जापटिपक्खाति वा अविज्जा। सा "दुक्खे अञ्ञाणं" ति आदिना चतुब्बिधा वेदितब्बा। पटिच्च नं न विना फलं एति उपज्जति चेव पवत्तति चाति **पच्चयो,** उपकारट्ठो वा पच्चयो। अविज्जा च सा पच्चयो चाति अविज्जापच्चयो, तस्मा अविज्जापच्चया। B. 136 सङ्खरोन्तीति **सङ्खारा,** लोकिया कुसलाकुसलचेतना। ते पुञ्ञापुञ्ञानेञ्जाभिसङ्खार-वसेन तिवधा वेदितब्बा। विजानातीति **विञ्ञाणं,** तं लोकियविपाकविञ्ञाणवसेन बातिंसविधं। नमतीति **नामं,** वेदनादिक्खन्धत्तयं। रुप्पतीति **रूपं,** भूतरूपं चक्खादिउपादारूपञ्च। आयतन्ति, आयतञ्च संसारदुक्खं नयतीति **आयतनं।** फुसतीति **फस्सो।** वेदयतीति **वेदना।** इदम्पि द्वयं द्वारवसेन छब्बिधं, विपाकवसेन गहणे बात्तिंसविधं। तस्सति परितस्सतीति **तण्हा,** सा कामतण्हादिवसेन सङ्खेपतो तिविधा, वित्थारतो अट्ठसतविधा च। उपादियतीति **उपादानं,** तं कामुपादानादिवसेन चतुब्बिधं।

भवति भावयति चाति **भवो,** सो कम्मोपपत्तिभेदतो दुविधो। जननं **जाति।** जीरणं **जरा।** मरन्ति तेनाति **मरणं।** सोचनं **सोको।** परिदेवनं **परिदेवो।** दुक्खयतीति **दुक्खं।** उप्पादट्ठितिवसेन द्वेधा खनतीति वा दुक्खं। दुम्मनस्स भावो **दोमनस्सं।** भुसो आयासो **उपयासो। सम्भवन्तीति** निब्बत्तन्ति। न केवलञ्च सोकादीहेव, अथ खो सब्बपदेहि "सम्भवन्ती"ति पदस्स योजना कातब्बा। एवञ्हि अविज्जापच्चया संङ्खारा सम्भवन्तीति पच्चयपच्चयुप्पन्नववत्थानं दस्सितं होति। तेनेवाह **"अविज्जापच्चया सङ्खारा सम्भवन्तीति इमिना नयेन सब्बपदेसु अत्थो वेदितब्बो"** ति। एवमेतस्स.....पे०..... समुदयो होतीति एत्थ पन अयमत्थो। एवं ति निद्दिट्ठनयनिदस्सनं। तेन अविज्जादीहेव कारणेहि, न इस्सरनिब्बानादीहीति दस्सेति। **एतस्सा**ति यथावुत्तस्स। **केवलस्सा** ति असम्मिस्सस्स, सकलस्स वा। **दुक्खक्खन्धस्सा** ति दुक्खसमूहस्स, न सत्तस्स, नापि सुभसुखादीनं। **समुदयो होतीति** निब्बत्ति सम्भवति।

अच्चन्तमेव सङ्खारेहि विरज्जति एतेनाति **विरागो।** अरियमग्गो ति आह "विरागसङ्खातेन मग्गेना ति। असेसं निरोधो **असेसनिरोधो,** असेसेत्वा निस्सेसेत्वा निरोधो समुच्छिन्दना अनुसयप्पहानवसेन अग्गमग्गेन अविज्जाय अच्चन्त-समुग्घाततो ति अत्थो। यदिपि हेट्ठिममग्गेहिपि पहीयमाना अविज्जा अच्चन्त-समुग्घातवसेनेव पहीयति, तथापि न अनवसेसतो पहीयति। अपायगमनीया हि अविज्जा पठममग्गेन पहीयति, तथा सकिदेव इमस्मिं लोके सब्बत्थ च अनरिय-भूमियं उपपत्तिया पच्चयभूता अविज्जा यथाक्कमं दुतियततियमग्गेहि पहीयति, न इतराति, अरहत्तमग्गेनेव पन सा अनवसेसं पहीयतीति। **अनुप्पादनिरोधो होतीति** B. 137

सब्बेसं सङ्खारानं अनवसेसं अनुप्पादनिरोधो होति। हेट्ठिमेन हि मग्गत्तयेन केचि सङ्खारा निरुज्झन्ति, केचि न निरुज्झन्ति अविज्जाय सावसेसनिरोधा, अग्गमग्गेन पनस्सा अनवसेसनिरोधा न केचि सङ्खारा न निरुज्झन्तीति। **एवं निरुद्धानं** ति एवं अनुप्पादनिरोधेन निरुद्धानं। **केवल**-सद्दो निरवसेसवाचको च होति "केवला अङ्गमगधा" ति आदीसु। असम्मिस्सवाचको च "केवला सालयो" ति आदीसु। तस्मा उभयथापि अत्थं वदति **"सकलस्स, सुद्धस्स वा"** ति। तत्थ **सकलस्सा** ति अनवसेसस्स सब्बभवादिगतस्स। **सत्तविरहितस्सा** ति परपरिकप्पितजीवरहितस्स।

अपिचेत्थ किञ्चापि "अविज्जानिरोधा सङ्खारनिरोधो, सङ्खारनिरोधा विञ्ञाणनिरोधो" ति एत्तावतापि सकलस्स दुक्खक्खन्धस्स अनवसेसतो निरोधो वुत्तो होति, तथापि यथा अनुलोमे यस्स यस्स पच्चयधम्मस्स अत्थिताय यो यो पच्चयुप्पन्नधम्मो न निरुज्झति पवत्तति एवाति इमस्स अत्थस्स दस्सनत्थं "अविज्जापच्चया सङ्खारा.....पे०.....समुदयो होती"ति वुत्तं। एवं तप्पटिपक्खतो तस्स तस्स पच्चयस्स अभावे सो सो पच्चयुप्पन्नधम्मो निरुज्झति न पवत्ततीति दस्सनत्थं इध "अविज्जानिरोधा सङ्खारनिरोधो, सङ्खारनिरोधा विञ्ञाणनिरोधो, विञ्ञाणनिरोधा नामरूपनिरोधो......पे०.....दुक्खक्खन्धस्स निरोधो होती" ति वुत्तं, न पन अनुलोमे विय कालत्तयपरियापन्नस्स दुक्खक्खन्धस्स निरोधदस्सनत्थं। अनागतस्सेव हि अरियमग्गभावनाय असति उप्पज्जनारहस्स दुक्खक्खन्धस्स अरियमग्गभावनाय निरोधो इच्छितोति अयम्पि विसेसो वेदितब्बो।

यदा हवे ति एत्थ हवे ति व्यत्तं ति इमस्मिं अत्थे निपातो। केचि पन "हवेति आहवे युद्धे" ति अत्थं वदन्ति, "योधेथ मारं पञ्ञावुधेना" ति[1] हि वचनतो किलेसमारेन युज्झनसमयेति तेसं अधिप्पायो। **आरम्मणूपनिज्झानलक्खणेना** ति आरम्मणूपनिज्झानसभावेन। **लक्खणूपनिज्झानलक्खणेना** ति एत्था पि एसेव नयो। तत्थ आरम्मणूपनिज्झानं नाम अट्ठ समापत्तियो कसिणारम्मणस्स उपनिज्झायनतो। लक्खणूपनिज्झानं नाम विपस्सनामग्गफलानि। विपस्सना हि B. 138 तीणि लक्खणानि उपनिज्झायतीति **लक्खणूपनिज्झानं**। मग्गो विपस्सनाय आगतकिच्चं साधेतीति **लक्खणूपनिज्झानं**, फलं तथलक्खणं निरोधसच्चं उपनिज्झायतीति **लक्खणूपनिज्झानं**। **नो कल्लो पञ्हो** ति अयुत्तो पञ्हो, दुप्पञ्हो एसो ति अत्थो। आदिसद्देन–

"फुसतीति अहं न वदामि। फुसतीति चाहं वदेय्यं, तत्रस्स
कल्लो पञ्हो 'को नु खो भन्ते फुसती' ति। एवञ्चाहं न
वदामि, एवं मं अवदन्तं यो एवं पुच्छेय्य "किं पच्चया

---

1. खु. १-१८-पिट्ठे।

> नु खो भन्ते फस्सो" ति । एस कल्लो पञ्हो, तत्र कल्लं वेय्याकरणं 'सळायतनपच्चया फस्सो, फस्सपच्चया वेदना'ति । को नु खो भन्ते वेदयतीति । नो कल्लो पञ्हो ति भगवा अवोच, वेदयतीति अहं न वदामि, वेदयतीति चाहं वदेय्यं । तत्रस्स कल्लो पञ्हो" को नु खो भन्ते वेदयती'- ति । एवञ्चाहं न वदामि, एवं मं अवदतं यो एवं पुच्छेय्य "किं पच्चया नु खो भन्ते वेदना" ति । एस कल्लो पञ्हो, तत्र कल्लं वेय्याकरणं "फस्सपच्चया वेदना, वेदनापच्चया तण्हा" ति[1]"–

एवमादिं पाळिसेसं सङ्गण्हाति ।

आदिना च नयेना ति एत्थ आदि-सद्देन पन "कतमा नु खो भन्ते जाति, कस्स च पनायं जातीति । "नो कल्लो पञ्हो" ति भगवा अवोचा" ति[2] एवमादिं सङ्गण्हाति । ननु चेत्थ "कतमं नु खो भन्ते जरामरणं" ति इदं सुपुच्छितं ति ? किञ्चापि सुपुच्छितं, यथा पन सतसहस्सग्घनके सुवण्णथालके वड्ढितस्स सुभोजनस्स मत्थके आमलकमत्ते गूथपिण्डे ठपिते सब्बं भोजनं दुब्भोजनं होति छड्डेतब्बं, एवमेव कस्स च पनिदं जरामणं" ति इमिना सत्तूपलद्धिवादपदेन गूथपिण्डेन तं भोजनं दुब्भोजनं विय अयम्पि सब्बो दुप्पञ्हो जातोति ।

सोळस कङ्खा ति "अहोसिं नु खो अहं अतीतमद्धानं, न नु खो अहोसिं, किं नु खो अहोसिं, कथं नु खो अहोसिं, किं हुत्वा किं अहोसिं नु खो अहं अतीतमद्धानं, भविस्सामि नु खो अहं अनागतमद्धानं न नु खो भविस्सामि, किं नु खो भविस्सामि, कथं नु खो भविस्सामि, किं हुत्वा किं भविस्सामि नु खो अहं अनागतमद्धानं, अहं नु खोस्मिं, नो नु खोस्मि, किं नु खोस्मि, कथं नु खोस्मि, अयं नु खो सत्तो कुतो आगतो, सो कुहिं गामी भविस्सती" ति[3] एवमागता अतीतानागतपच्चुप्पन्नविसया सोळसविधा कङ्खा । B. 139

तत्थ[4] **अहोसिं नु खो, न नु खो** ति सस्सताकारञ्च अधिच्चसमुप्पत्तिआकारञ्च निस्साय अतीते अत्तनो विज्जमानतञ्च अविज्जमानतञ्च कङ्खति, किं कारणं ति न वत्तब्बं । उम्मत्तको विय हि बालपुथुज्जनो यथा तथा वा पवत्तति । अपि च अयोनिसोमनसिकारोयेवेत्थ कारणं । एवं अयोनिसोमनसिकारस्स पन किं कारणं

---

1. सं-१–२५४-पिट्ठे ।
2. सं-१-२९१-पिट्ठे ।
3. सं-१-२६५, म-१-१०-पिट्ठेसु ।
4. म-ट्ठ१-७१, सं-ट्ठ-२-३९-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

ति ? स्वेव पुथुज्जनभावो अरियानं अदस्सनादीनि वा । ननु च पुथुज्जनोपि योनिसो मनसि करोतीति । को वा एवमाह "न मनसि करोती"ति । न पन तत्थ पुथुज्जनभावो कारणं, सद्धम्मसवनकल्याणमित्तादीनि तत्थ कारणानि । न हि मच्छमंसादीनि अत्तनो पकतिया सुगन्धानि, अभिसङ्खारपच्चया पन सुगन्धानिपि होन्ति ।

किं नु खो अहोसिं ति जातिलिङ्गुपपत्तियो निस्साय "खत्तियो नु खो अहोसिं, ब्राह्मणवेस्ससुद्दगहट्ठपब्बजितदेवमनुस्सानं अञ्ञतरो" ति कङ्खति ।

कथं नु खो ति सण्ठानाकारं निस्साय "दीघो नु खो अहोसिं, रस्सओदातकण्हप्पमाणिकअप्पमाणिकादीनं अञ्ञतरो" ति कङ्खति, केचि पन "इस्सरनिम्मानादिं निस्साय "केन नु खो कारणेन अहोसिं" ति हेतुतो कङ्खती" ति वदन्ति ।

किं हुत्वा किं अहोसिं ति जातिआदीनि निस्साय "खत्तियो हुत्वा नु खो ब्राह्मणो अहोसिं......पे०......देवो हुत्वा मनुस्सो"ति अत्तनो परम्परं कङ्खति । सब्बत्थेव पन अद्धानं ति कालाधिवचनमेतं, तञ्च भुम्मत्थे उपयोगवचनं दट्ठब्बं ।

भविस्सामि नु खो, न नु खो ति सस्सताकारञ्च उच्छेदाकारञ्च निस्साय अनागते अत्तनो विज्जमानतञ्च अविज्जमानतञ्च कङ्खति । सेसमेत्थ वुत्तनयमेव ।

B. 140 **अहं न खोस्मी**ति अत्तनो अत्थिभावं कङ्खति । युत्तं पनेतं ति ? युत्तं अयुतं ति का एत्थ चिन्ता । अपिचेत्थ इदं वत्थुम्पि उदाहरन्ति, चूळमाताय किर पुत्तो मुण्डो, महामाताय पुत्तो अमुण्डो । तं सुत्तं मुण्डेसुं । सो उट्ठाय "अहं नु खो चूळमाताय पुत्तो" ति चिन्तेसि । एवं "अहं नु खोस्मी" ति कङ्खा होति ।

नो नु खोस्मीति अत्तनो नत्थिभावं कङ्खति । तत्रापि इदं वत्थु–एको किर मच्छे गण्हन्तो उदके चिरट्ठानेन सीतिभूतं अत्तनो ऊरुं "मच्छो" ति चिन्तेत्वा पहरि । अपरो सुसानपस्से खेत्तं रक्खन्तो भीतो सङ्कुटितो सयि । सो पटिबुज्झित्वा अत्तनो जण्णुकानि "द्वे यक्खा" ति चिन्तेत्वा पहरि । एवं "नो नु खोस्मी" ति कङ्खति ।

किं नु खोस्मी ति खत्तियोव समानो अत्तनो खत्तियभावं कङ्खति कण्णो विय सूतपुत्तसञ्ञी[1] । एस नयो सेसेसु । देवो पन समानो देवभावं अजानन्तो नाम नत्थि । सोपि पन "अहं रूपी नु खो अरूपी नु खो" ति आदिना नयेन कङ्खति । खत्तियादयो कस्मा न जानन्तीति चे ? अप्पच्चक्खा तेसं तत्थ तत्थ कुले उप्पत्ति । गहट्ठापि च पातलिकादयो[2] पब्बजितसञ्ञिनो । पब्बजितापि "कुप्पं नु खो मे कम्मं" ति आदिना नयेन गहट्ठसञ्ञिनो । मनुस्सापि च एकच्चे राजानो विय अत्तनि देवसञ्ञिनो होन्ति ।

---

1. सुत्तपुत्तसञ्ञी (स्या) सुपूतपुत्तसञ्ञी (क) मूलपण्णासके सब्बासवसुत्तटीकायं पन पस्सितब्बं ।
2. पोटलिकादयो (स्या) ।

कथं न खोस्मीति वुत्तनयमेव । केवलञ्हेत्थ अब्भन्तरे जीवो नाम अत्थीति गहेत्वा तस्स सण्ठानाकारं निस्साय "दीघो नु खोस्मि, रस्सचतुरस्सछळंसअट्ठंस-सोळसंसादीनं अञ्ञतरप्पकारो" ति कङ्खन्तो" "कथं नु खोस्मी" ति कङ्खतीति वेदितब्बो । सरीरसण्ठानं पन पच्चुप्पन्नं अजानन्तो नाम नत्थि ।

कुतो आगतो, सो कुहिं गामी भविस्सतीति अत्तभावस्स आगतिगतिट्ठानं कङ्खति ।

वपयन्तीति वि अपयन्ति, इकारलोपेनायं निद्देसो । ब्यपयन्तीति वुत्तं होति । तेनाह "वपयन्ति अपगच्छन्ती"ति । अपगमनञ्च अनुप्पत्तिनिरोधवसेनाति आह "निरुज्झन्ती"ति ।

३ ॥ कदा पनस्स बोधिपक्खियधम्मा चतुसच्चधम्मा वा पातुभवन्ति उप्पज्जन्ति पकासन्तीति ? विपस्सनामग्गञाणेसु पवत्तमानेसु । तत्थ विपस्सनाञाणे ताव विपस्सनाञाणसम्पयुत्ता सतिआदयो विपस्सनाञाणञ्च यथारहं अत्तनो अत्तनो विसयेसु तदङ्गप्पहानवसेन सुभसञ्ञादिके पजहन्ता कायानुपस्सनादिवसेन विसुं विसुं उप्पज्जन्ति । **मग्गक्खणे** पन ते निब्बानमालम्बित्वा समुच्छेदवसेन पटिपक्खे पजहन्ता चतूसुपि अरियसच्चेसु असम्मोहपटिवेधसाधनवसेन सकिदेव उप्पज्जन्ति । एवं तावेत्थ बोधिपक्खियधम्मानं उप्पज्जनट्ठेन पातुभावो वेदितब्बो । अरियसच्चधम्मानं पन लोकियानं **विपस्सनाक्खणे** विपस्सनाय आरम्मणकरणवसेन लोकुत्तरानं तदधिमुत्ततावसेन **मग्गक्खणे** निरोधसच्चस्स आरम्मणाभिसमयवसेन सब्बेसम्पि किच्चाभिसमयवसेन पाकटभावतो पकासनट्ठेन पातुभावो वेदितब्बो ।

B. 141

इति भगवा सतिपि सब्बाकारेन सब्बधम्मानं अत्तनो ञाणस्स पाकटभावे पटिच्चसमुप्पादमुखेन विपस्सनाभिनिवेसस्स कतत्ता निपुणगम्भीरसुदुद्दसताय पच्चयाकारस्स तं पच्चवेक्खित्वा उप्पन्नबलवसोमनस्सो पटिपक्खसमुच्छेदविभावनेन सद्धिं अत्तनो तदभिसमयानुभावदीपकमेवेत्थ उदानं उदानेसि ।

"कामा ते पठमा सेना" ति आदिना नयेन वुत्तप्पकारं मारसेनं ति–

"कामा ते पठमा सेना, दुतिया अरति वुच्चति ।
ततिया खुप्पिपासा ते, चतुत्थी तण्हा पवुच्चति ॥
पञ्चमी थिनमिद्धं ते, छट्ठा भीरू पवुच्चति ।
सत्तमी विचिकिच्छा ते, मक्खो थम्भो च अट्ठमा ॥
लाभो सिलोको सक्कारो, मिच्छालद्धो च यो यसो ।
यो चत्तानं समुक्कंसे, परे च अवजानति ॥
एसा नमुचि ते सेना, कण्हस्साभिप्पहारिनी ।
न नं असूरो जिनाति, जेत्वा च लभते सुखं" ति[1]-

B. 142

इमिना नयेन वुत्तप्पकारं मारसेनं ।

---

1. खु. १-३४२ खु-७-७३ पिट्ठेसु ।

तत्थ[1] यस्मा आदितोव अगारियभूते सत्ते वत्थुकामेसु किलेसकामा मोहयन्ति, ते अभिभुय्य अनगारियभावं उपगतानं पन्तेसु वा सेनासनेसु अञ्ञतरञ्ञतरेसु वा अधिकुसलेसु धम्मेसु अरति उप्पज्जति । वुत्तम्पि चेतं "पब्बजितेन खो आवुसो अभिरति दुक्करा" ति[2] । ततो ते परपटिबद्धजीविकत्ता **खुप्पिपासा** बाधति, ताय बाधिकानं परियेसन **तण्हा** चित्तं किलमयति, अथ नेसं किलन्तचित्तानं **थिनमिद्धं** ओक्कमति, ततो विसेसमनधिगच्छन्तानं दुरभिसम्भवेसु अरञ्ञवनपत्थेसु सेनासनेसु विहरतं उत्राससञ्ञिता **भीरु** जायति, तेसं उस्सङ्कितपरिसङ्कितानं दीघरत्तं विवेक-रसमनुस्सादयमानानं विहरतं "न सिया नु खो एस मग्गो" ति पटिपत्तियं **विचिकिच्छा** उप्पज्जति, तं विनोदेत्वा विहरतं अप्पमत्तकेन विसेसाधिगमेन **मानमक्खथम्भा** जायन्ति, तेपि विनोदेत्वा विहरतं ततो अधिकतरं विसेसाधिगमं निस्साय **लाभसक्कारसिलोका** उप्पज्जन्ति, लाभादिमुच्छिता धम्मपतिरूपकानि पकासेन्ता **मिच्छायसं** अधिगन्त्वा तत्थ ठिता जातिआदीहि **अत्तानं उक्कंसेन्ति परं वम्भेन्ति,** तस्मा कामादीनं पठमसेनादिभावो वेदितब्बो ।

एवमेतं दसविधं सेनं उद्दिसित्वा यस्मा सा कण्हधम्मसमन्नागतत्ता कण्हस्स नमुचिनो उपकाराय संवत्तति, तस्मा नं "तव सेना" ति[3] निद्दिसन्तेन "एसा नमुचि ते सेना, कण्हस्साभिप्पहारिनी" ति वुत्तं । तत्थ **अभिप्पहारिनी**ति समणब्राह्मणानं घातनी निप्पोथनी[4], अन्तरायकरीति अत्थो । **न नं असूरो जिनाति, जेत्वा च लभते सुखं** ति एवं तव सेनं असूरो काये च जीविते च सापेक्खो पुरिसो न जिनाति, सूरो पन जिनाति, जेत्वा च मग्गसुखं फलसुखञ्च अधिगच्छतीति अत्थो । **सोपि ब्राह्मणो** ति सोपि खीणासवब्राह्मणो ।

B. 143 इदानि "तेन खो पन समयेन भगवा सत्ताहं एकपल्लङ्केन निसिन्नो होति विमुत्तिसुखपटिसंवेदी । अथ खो भगवा तस्स सत्ताहस्स अच्चयेन तम्हा समाधिम्हा वुट्ठहित्वा रत्तिया पठमं यामं पटिच्चसमुप्पादं अनुलोमं साधुकं मनसाकासि । रत्तिया मज्झिमं यामं पटिच्चसमुप्पादं पटिलोमं साधुकं मनसाकासि । रत्तिया पच्छिमं यामं पटिच्चसमुप्पादं अनुलोमपटिलोमं साधुकं मनसाकासी"ति एवं वुत्ताय उदान-पाळिया[5] इमिस्सा च खन्धकपाळिया अविरोधं दस्सेतुं **"उदाने पना"** ति आदि आरद्धं । **एत्थ तस्स वसेना** ति तस्स पच्चयाकारपजाननस्स पच्चयक्खयाधिगमस्स च वसेन । **एकेकमेव कोट्ठासं** ति अनुलोमपटिलोमेसु एकेकमेव कोट्ठासं । **पाटिपदरत्तिया**

---

1. सुत्तनिपात-ट्ठ.२-११७, महानिद्देस-ट्ठ-२०२ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. सं-२-४५६-पिट्ठे ।
3. घाटनी निप्फोटनी (स्या) ।
4. खु-१-७७ पिट्ठे ।
5. एकंसेन (स्या) ।

एवं मनसाकासीति रत्तिया तीसुपि यामेसु अनुलोमपटिलोमंयेव मनसाकासि । भगवा किर ठपेत्वा रतनघरसत्ताहं सेसेसु छसु सत्ताहेसु अन्तरन्तरा धम्मं पच्चवेक्खित्वा येभुय्येन विमुत्तिसुखपटिसंवेदी विहासि । रतनघरसत्ताहे पन अभिधम्मपविचय-वसेनेव विहासि । तस्मा अन्तरन्तरा धम्मपच्चवेक्खणवसेन उप्पादितमनसिकारेसु पाटिपदरत्तिया उप्पादितं मनसिकारं सन्धाय इमिस्सं खन्धकपाळियं एवं वुत्तं ति अधिप्पायो ।

बोधिकथावण्णना निट्ठिता ।

अजपालकथावण्णना

४॥ **तस्स सत्ताहस्स अच्चयेनाति** पल्लङ्कसत्ताहस्स अपगमनेन । **तम्हा समाधिम्हा वुट्ठहित्वाति** ततो अरहत्तफलसमापत्तिसमाधितो यथाकालपरिच्छेदं वुट्ठहित्वा । **अञ्ञेपि बुद्धत्तकरा** ति विसाखपुण्णमितो पट्ठाय रत्तिन्दिवं एवं निच्चसमाहित-भावहेतुभूतानं बुद्धगुणानं उपरि अञ्ञेपि बुद्धत्तसाधका । "अयं बुद्धो" ति बुद्धभावस्स परेसं विभावना धम्मा किं नु खो सन्तीति योजना । **एकच्चानं देवतानं** ति या अधिगतमग्गा सच्छिकतनिरोधा एकपदेसेन[1] बुद्धगुणे जानन्ति, ता ठपेत्वा तदञ्ञासं देवतानं । **अनिमिसेहीति** धम्मपीतिविप्फारवसेन पसादविभावनिच्चल- B. 144 दलताय[2] निमेसरहितेहि । **रतनचङ्कमेति** देवताहि मापिते रतनमयचङ्कमे । "रतनभूतानं सत्तन्नं पकरणानं तत्थ च अनुत्तरस्स धम्मरतनस्स सम्मसनेन तं ठानं रतनघरचेतियं नाम जातं" तिपि वदन्ति । तेनेव **अट्ठसालिनियं**[3] "रतनघरं नाम न रतनमयं गेहं, सत्तन्नं पन पकरणानं सम्मसितट्ठानं रतनघरं ति वेदितब्बं ति वुत्तं ।

तस्मा पनायं अजपालनिग्रोधो नाम जातोति आह "तस्स किरा" ति आदि । केचि पन "यस्मा तत्थ वेदे सज्झायितुं असमत्था महल्लकब्राह्मणा पाकार-परिक्खेपयुत्तानि निवेसनानि कत्वा सब्बे वसिंसु, तस्मास्स अजपालनिग्रोधो" ति नामं जातं" ति वदन्ति । तत्रायं वचनत्थो–न जपन्तीति अजपा, मन्तानं अनज्झायकाति अत्थो । अजपालं ति[4] आदियन्ति निवासं एत्थाति **अजपालो** ति । अपरे पन वदन्ति

---

1. एकंसेन (स्या) ।
2. पसादविकतनिच्चलताय (क) पसादविकसितनिच्चलताय (मूलपण्णासकेपासरासिसुत्त-टीकायं) ।
3. अभि. ट्ठ -१-१३ पिट्ठे ।
4. अलं ति (स्या) ।

"यस्मा मज्झन्हिके समये अन्तो पविट्ठे अजे अत्तनो छायाय पालेति रक्खति, तस्मा "अजपालो" तिस्स नामं रुळ्हं" ति । सब्बथापि नाममेतं तस्स रुक्खस्स ।

विमुत्तिसुखं पटिसंवेदेन्तोति धम्मं विचिनन्तोयेव अन्तरन्तरा विमुत्तिसुखञ्च पटिसंवेदेन्तो । "धम्मं विचिनन्तो विमुत्तिसुखञ्च पटिसंवेदेन्तो" ति एवं वा एत्थ पाठो गहेतब्बो । उदानट्ठकथायम्पि[1] हि अयमेव पाठो । धम्मं विचिनन्तो चेत्थ एवं अभिधम्मे नयमग्गं सम्मसि पठमं धम्मसङ्गणीपकरणं नाम, ततो विभङ्गप्पकरणं, धातुकथापकरणं, पुग्गलपञ्ञत्तिप्पकरणं, कथावत्थुं नाम, यमकं नाम, ततो महा-पकरणं पट्ठानं नामाति । तत्थस्स सण्हसुखुमट्ठानम्हि चित्ते ओतिण्णे पीति उप्पज्जि, पीतिया उप्पन्नाय लोहितं पसीदि, लोहिते पसन्ने छवि पसीदि, छविया पसन्नाय पुरत्थिमकायतो कूटागारादिप्पमाणा रस्मियो उट्ठहित्वा आकासे पक्खन्दं छद्दन्त-नागकुलं विय पाचीनदिसाय अनन्तानि चक्कवाळानि पक्खन्दा । पच्छिमकायतो उट्ठहित्वा पच्छिमदिसाय, दक्खिणंसकूटतो उट्ठहित्वा दक्खिणदिसाय, वामंसकूटतो B. 145 उट्ठहित्वा उत्तरदिसाय अनन्तानि चक्कवाळानि पक्खन्दा । पादतलेहि पवाळङ्कुर-वण्णा रस्मियो निक्खमित्वा महापथविं विनिब्बिज्झ उदकं द्विधा भिन्दित्वा वातक्खन्धं पदालेत्वा अजटाकासं पक्खन्दा । सीसतो संपरिवत्तियमानं मणिदामं विय नीलवण्णरस्मिवट्टि उट्ठहित्वा छ देवलोके विनिविज्झित्वा नव ब्रह्मलोके अतिक्कम्म अजटाकासं पक्खन्दा । तस्मिं दिवसे अपरिमाणेसु चक्कवाळेसु अपरिमाणा सत्ता सब्बे सुवण्णवण्णाव अहेसुं । तं दिवसञ्च पन भगवतो सरीरा निक्खन्ता यावज्जदिवसापि किर ता रस्मियो अनन्तलोकधातुयो गच्छन्तियेव । न केवलञ्च इमस्मिंयेव सत्ताहे धम्मं विचिनन्तस्स सरीरतो रस्मियो निक्खमिंसु, अथ खो रतनघरसत्ताहेपि पट्ठानं सम्मसन्तस्स एवमेव सरीरतो रस्मियो निक्खन्ता एवाति वेदितब्बं ।

वुत्तञ्हेतं अट्ठसालिनियं[2]–

"इमेसु च एकवीसतिया दिवसेसु एकदिवसेपि सत्थु सरीरतो रस्मियो न निक्खन्ता, चतुत्थे पन सत्ताहे पच्छिमुत्तराय दिसाय रतनघरे निसीदि । तत्थ धम्मसङ्गणिं सम्मसन्तस्सपि सरीरतो रस्मियो न निक्खन्ता । विभङ्गप्पकरणं, धातुकथं, पुग्गलपञ्ञत्तिं, कथावत्थुप्पकरणं, यमकप्पकरणं, सम्मसन्तस्सपि रस्मियो न निक्खन्ता । यदा पन महापकरणं ओरुय्ह "हेतुपच्चयो आरम्मणपच्चयो.......पे०...... अविगतपच्चयो" ति सम्मसनं आरभि, अथस्स चतुवीसतिसमन्तपट्ठानं सम्मसन्तस्स एकन्ततो सब्बञ्ञुतञ्ञाणं महापकरणे ओकासं लभि । यथा हि तिमिरपिङ्गल-

---

1. उदान-ट्ठ-४७-पिट्ठे ।
2. अभि. ट्ठ-१-१३ पिट्ठे

महामच्छो चतुरासीतियोजनसहस्सगम्भीरे महासमुद्देयेव ओकासं लभति, एवमेव सब्बञ्ञुतञ्ञाणं एकन्ततो महापकरणेयेव ओकासं लभि ।

सत्थु एवं लद्धोकासेन सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन यथासुखं सण्हसुखुमधम्मं सम्मसन्तस्स सरीरतो नीलपीतलोहितोदातमञ्जिट्ठपभस्सरवसेन छब्बण्णरस्मियो निक्खमिंसु । केसमस्सूहि चेव अक्खीनञ्च नीलट्ठानेहि **नीलरस्मियो** निक्खमिंसु, यासं वसेन गगनतलं अञ्जनचुण्णसमोकिण्णं विय उमापुप्फनीलुप्पलदलसञ्छन्नं विय वीतिपतन्त-मणितालवण्टं विय सम्पसारितमेचकपटं[1] विय च अहोसि । छवितो चेव B. 146 अक्खीनञ्च पीतट्ठानेहि **पीतरस्मियो** निक्खमिंसु, यासं वसेन दिसाभागा सुवण्णर-सनिसिञ्चमाना विय सुवण्णपटपसारिता विय कुङ्कुमचुण्णकणिकारपुप्फसम्परिकिण्णा विय च विरोचिंसु । मंसलोहितेहि चेव अक्खीनञ्च रत्तट्ठानेहि **लोहितरस्मियो** निक्खमिंसु, यासं वसेन दिसाभागा चीनपिट्ठचुण्णरञ्जिता विय सुपक्कलाखार-सनिसिञ्चमाना विय रत्तकम्बलपरिक्खित्ता विय जयसुमनपारिबद्धकबन्धुजीवक-कुसुमसम्परिकिण्णा विय च विरोचिंसु । अट्ठीहि चेव दन्तेहि च अक्खीनञ्च सेतट्ठानेहि ओदातरस्मियो निक्खमिंसु, यासं वसेन दिसाभागा रजतकुटेहि आसिञ्चमानखीरधारासम्परिकिण्णा विय पसारितरजतपटविताना विय वीतिपतन्तर-जततालवण्टा विय कुन्दकुमुदसिन्धुवारसुमनमल्लिकादिकुसुमसञ्छन्ना विय च विरोचिंसु । मञ्जिट्ठपभस्सरा पन तम्हा तम्हा सरीरप्पदेसा निक्खमिंसु । इति ता छब्बण्णरस्मियो निक्खमित्वा घनमहापथविं गण्हिंसु ।

चतुनहुताधिकद्वियोजनसतसहस्सबहला महापथवी निद्धन्तसुवण्णपिण्डि विय अहोसि । पथविं भिन्दित्वा हेट्ठा उदकं गण्हिंसु । पथवीसन्धारकं अट्ठनहुताधिकचतु-योजनसतसहस्सबहलं उदकं सुवण्णकलसेहि आसिञ्चमानविलीनसुवण्णं विय अहोसि । उदकं विनिविज्झित्वा वातं अग्गहेसुं । छन्नवुताधिकनवयोजनसतसहस्स-बहलो वातो समुस्सितसुवण्णक्खन्धो विय अहोसि । वातं विनिविज्झित्वा हेट्ठा अजटाकासं पक्खन्दिंसु । उपरिभागेन उग्गन्त्वापि चतुमहाराजिके गण्हिंसु । ते विनिविज्झित्वा तावतिंसे, ततो यामे, ततो तुसिते, ततो निम्मानरती, ततो परिनिम्मितवसवत्ती, ततो नव ब्रह्मलोके, ततो वेहप्फले, ततो पञ्च सुद्धावासे विनिविज्झित्वा चत्तारो आरुप्पे गण्हिंसु । चत्तारो च आरुप्पे विनिविज्झित्वा अजटाकासं पक्खन्दिंसु ।

तिरियभागेहि अनन्ता लोकधातुयो पक्खन्दिंसु, एत्तके ठाने चन्दम्हि चन्दप्पभा B. 147 नत्थि, सूरिये सूरियप्पभा नत्थि, तारकरूपेसु तारकरूपप्पभा नत्थि, देवतानं उय्यानविमानकप्परुक्खेसु सरीरे आभरणेसूति सब्बत्थ पभा नत्थि । तिसहस्सिम-

---

1. सम्पसारितमेव चक्कपटं (स्या.)

हासहस्सिलोकधातुया आलोकफरणसमत्थो महाब्रह्मापि सूरियुग्गमने खज्जोपनको विय अहोसि, चन्दसूरियतारकरूपदेवतुय्यानविमानकप्परुक्खानं परिच्छेदमत्तकमेव-पञ्ञायित्थ। एत्तकं ठानं बुद्धरस्मीहियेव अज्झोत्थटं अहोसि। अयञ्च नेव बुद्धानं अधिट्ठानिद्धि, न भावनामयिद्धि। सण्हसुखुमधम्मं पन सम्मसतो लोकनाथस्स लोहितं पसीदि, वत्थुरूपं पसीदि, छविवण्णो पसीदि। चित्तसमुट्ठाना वण्णधातु समन्ता असीतिहत्थमत्ते पदेसे निच्चला अट्ठासी" ति।

एवं निसिन्ने ति तम्हा समाधिम्हा वुट्ठहित्वा निसिन्ने। **एको ब्राह्मणो** ति नामगोत्तवसेन अनभिञ्ञातो अपाकटो एको ब्राह्मणो। "हुं हूं" ति करोन्तो विचरतीति सब्बं अचोक्खजातिकं[1] पस्सित्वा जिगुच्छन्तो "हुं हूं" ति करोन्तो विचरति। एतदवोचाति[2] एतं इदानि वत्तब्बं "कित्तावता नु खो" ति आदिवचनं अवोच। तत्थ कित्तावता ति कित्तकेन पमाणेन। नु-ति संसयत्थे निपातो, खो-तिं पदपूरणे। भो ति ब्राह्मणानं जातिसमुदागतं आलपनं। तथा हि वुत्तं "भोवादि नाम सो होति, सचे होति सकिञ्चनो" ति[3]। गोतमा ति भगवन्तं गोत्तेन आलपति। कथं पनायं ब्राह्मणो सम्पति समागतो भगवतो गोत्तं जानातीति ? नायं सम्पति समागतो, छब्बस्सानि पधानकरणकाले उपट्ठहन्तेहि पञ्चवग्गियेहि सद्धिं चरमानो अपरभागे तं वतं छड्डेत्वा उरुवेलायं सेननिगमे एको अदुतियो हुत्वा पिण्डाय चरमानोपि तेन ब्राह्मणेन दिट्ठपुब्बो चेव सल्लपितपुब्बो च, तेन सो पुब्बे पञ्चवग्गियेहि गय्हमानं भगवतो गोत्तं अनुस्सरन्तो "भो गोतमा" ति भगवन्तं गोत्तेन आलपति। यतो पट्ठाय वा B. 148 भगवा महाभिनिक्खमनं निक्खन्तो अनोमानदीतीरे पब्बजि, ततो पभुति "समणो गोतमो" ति चन्दो विय सूरियो विय पाकटो पञ्ञातो होति, न च तस्स गोत्तजानने कारणं गवेसितब्बं। **ब्राह्मणकरणाति**[4] ब्राह्मणं करोन्तीति ब्राह्मणकरणा, ब्राह्मण-भावकरा ति अत्थो। एत्थ च "कित्तावता" ति एतेन येहि धम्मेहि ब्राह्मणो होति, तेसं धम्मानं परिमाणं पुच्छति। **"कतमे"** ति पन इमिना तेसं सरूपं पुच्छति।

उदानं उदानेसीति "यो ब्राह्मणो"ति आदिकं उदानं उदानेसि, न पन तस्स ब्राह्मणस्स धम्मं देसेसि। कस्मा ? धम्मदेसनाय अभाजनभावतो। तथा हि तस्स ब्राह्मणस्स इमं गाथं[5] सुत्वा न सच्चाभिसमयो अहोसि। यथा च इमस्स, एवं उपकस्स आजीवकस्स बुद्धगुणप्पकासनं सुत्वा। धम्मचक्कप्पवत्तनतो हि पुब्बभागे भगवता भासितं परेसं सुणन्तानम्पि तपुस्सभल्लिकानं सरणदानं विय वासना-

---

1. अवोकजातिकं (स्या.)।
2. उदान-ट्ठ-४९ पिट्ठेसु पि पस्सितब्बं।
3. खु. १-७०-३७६ पिट्ठेसु।
4. ब्राह्मणकराणाति (?)।
5. कथं (क)।

भागियमेव जातं, न असेक्खभागियं वा निब्बेधभागियं वा। एसा हि धम्मताति। **वेदेहि वा अन्तं** ति एत्थ **अन्तं** नाम सब्बसङ्खारपरियोसानं निब्बानं। **इमे उस्सदा नत्थीति** सब्बसो इमे पहीनत्ता न सन्ति।

अजपालकथावण्णना निट्ठिता।

मुचलिन्दकथावण्णना

५॥ **मुचलिन्दमूले** ति[1] एत्थ **मुचलिन्दो** वुच्चति नीपरुक्खो, यो "निचुलो" ति पि वुच्चति, तस्स समीपे ति अत्थो। केचि पन "मुचलो ति तस्स रुक्खस्स नामं, वनजेट्ठकताय पन मुचलिन्दो ति वुत्तं" ति वदन्ति। **उदपादीति** सकलचक्कवाळगब्भं पूरेन्तो महामेघो उदपादि। एवरूपो किर मेघो द्वीसुयेव कालेसु वस्सति चक्कवत्तिम्हि वा उप्पन्ने बुद्धे वा, इध बुद्धुप्पादकाले उदपादि। **पोक्खरणिया निब्बत्तोति** पोक्खरणिया हेट्ठा नागभवनं अत्थि, तत्थ निब्बत्तो। **सकभवना** ति अत्तनो नागभवनतो। **एवं भोगेहि परिक्खिपित्वा** ति सत्त वारे अत्तनो सरीरभोगेहि भगवतो कायं परिवारेत्वा। **उपरिमुद्धनि महन्तं फणं विहच्चा** ति भगवतो B. 149 मुद्धप्पदेसस्स उपरि अत्तनो महन्तं फणं पसारेत्वा। "फणं फरित्वा" ति पि पाठो, सोयेवत्थो।

तस्स किर नागराजस्स एतदहोसि "भगवा च मय्हं भवनसमीपे रुक्खमूले निसिन्नो, अयञ्च सत्ताहवद्दलिका वत्तति, वासागारमस्स लद्धुं वट्टती"ति। सो सत्तरतनमयं पासादं निम्मिनितुं सक्कोन्तोपि "एवं कते कायसारो गहितो न भविस्सति, दसबलस्स कायवेय्यावच्चं करिस्सामी" ति महन्तं अत्तभावं कत्वा सत्थारं सत्तक्खत्तुं भोगेहि परिक्खिपित्वा उपरि फणं धारेसि। "तस्स परिक्खेपब्भन्तरं लोहपासादे भण्डागारगब्भप्पमाणं अहोसी"ति इध वुत्तं। मज्झिमट्ठकथायं[2] पन–

"परिपेक्खस्स अन्तो ओकासो हेट्ठा लोहपासादप्पमाणो अहोसि, "इच्छितिच्छितेन इरियापथेन सत्था विहरिस्सती"ति नागराजस्स अज्झासयो अहोसि, तस्मा एवं महन्तं ओकासं परिक्खिपि, मज्झे रतनपल्लङ्को पञ्ञत्तो होति, उपरि सुवण्णकारकविचित्तं समोसरितगन्धदामकुसुमचेलवितानं अहोसि, चतूसु कोणेसु गन्धतेलेन दीपा जलिता, चतूसु दिसासु विवरित्वा चन्दनकरण्डका ठपिता" ति–

---

1. उदान-ट्ठ ८९-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
2. म-ट्ठ-२-९०-पिट्ठे।

वुत्तं । **इच्छितिच्छितेन इरियापथेन विहरिस्सतीति** च नागराजस्स अज्झासयमत्तमेतं, भगवा पन यथानिसिन्नोव सत्ताहं वीतिनामेसि ।

किञ्चापि....पे०....चिन्तेतुं युत्तं ति एत्थ केचि वदन्ति "उण्हग्गहणं भोगपरिक्खेपस्स विपुलभावकरणे कारणकित्तनं । खुद्दके हि तस्मिं भगवन्तं नागराजस्स सरीरसम्भूता उस्मा बाधेय्य, विपुलभावकरणेन पन तादिसं मा उण्हं बाधयित्था" ति । सउपसग्गपदस्स अत्थो उपसग्गेन विनापि विञ्ञायतीति आह "विद्धन्ति उब्बिद्धं" ति, सा चस्स उब्बिद्धता उपक्किलेसविगमेन दूरभावेन उपट्ठानं ति आह "**मेघ-विगमेन दूरीभूतं**" ति । इन्दनीलमणि विय दिब्बति जोततीति देवो, आकासो । **विदित्वा ति** " इदानि विगतवलाहको आकासो, नत्थि भगवतो सीतादिउपद्दवो" ति ञत्वा । B. 150 **विनिवेठेत्वा** ति अपनेत्वा । **अत्तनो रूपं** ति अत्तनो नागरूपं । **पटिसंहरित्वा** ति अन्तरधापेत्वा । **माणवकवण्णं** ति कुमारकरूपं ।

एतमत्थं विदित्वा ति "विवेकसुखपटिसंवेदिनो यत्थ कत्थचि सुखमेव होती"ति एतं अत्थं सब्बाकारेन जानित्वा । **इमं उदानं** ति इमं विवेकसुखानुभावदीपकं उदानं उदानेसि । **सुतधम्मस्साति** विस्सुतधम्मस्स । तेनाह "**पकासितधम्मस्सा**" ति । **अकुप्पनभावो** ति अकुप्पनसभावो[1] ।

मुचलिन्दकथावण्णना निट्ठिता ।

राजायतनकथावण्णना

६॥ **ओसधहरीतकं उपनेसीति** न केवलं ओसधहरीतकमेव, दन्तकट्ठम्पि उपनेसि। पच्चग्घेति एत्थ पुरिमं अत्थविकप्पं केचि न इच्छन्ति, तेनेव **आचरियधम्मपालत्थेरेन** वुत्तं "पच्चग्घेति अभिनवे । पच्चेकं महग्घताय पच्चग्घेति केचि, तं न सुन्दरं । न हि बुद्धा भगवन्तो महग्घं पटिग्गण्हन्ति परिभुञ्जन्ति वा" ति ।

राजायतनकथावण्णना निट्ठिता ।

ब्रह्मयाचनकथावण्णना

७॥ **आचिण्णसमाचिण्णो** ति आचरितो चेव आचरन्तेहि च सम्मदेव आचरितो ति अत्थो । एतेन अयं परिवितक्को सब्बबुद्धानं पठमाभिसम्बोधियं उप्पज्जते वा ति

---

1. अकुज्झनसभावो (स्या)

अयमेत्थ धम्मता ति दस्सेति । गम्भीरोपि धम्मो पटिपक्खविधमनेन सुपाकटो भवेय्य, पटिपक्खविधमनं पन सम्मापटिपत्तिपटिबद्धं, सा सद्धम्मसवनाधीना, तं सत्थरि धम्मे च पसादायत्तं । सो विसेसतो लोके सम्भावनीयस्स गरुकातब्बस्स अभिपत्थनाहेतुकोति परम्पराय सत्तानं धम्मसम्पटिपत्तिया ब्रह्मुनो याचनानिमित्तं ति तं दस्सेन्तो **"ब्रह्मुना याचिते देसेतुकामताया"** तिआदिमाह ।

अधिगतो ति पटिविद्धो, सयम्भूञाणेन "इदं दुक्खं" ति आदिना यथाभूतं B. 151 अवबुद्धो ति अत्थो । **धम्मो** ति चतुसच्चधम्मो तब्बिनिमुत्तस्स पटिविज्झितब्बधम्मस्स अभावतो । **गम्भीरो** ति महासमुद्दो विय मकस-तुण्डसूचिया अञ्ञत्र समुपचितपरिपक्कञाणसम्भारेहि अञ्ञेसं ञाणेन अलब्भनेय्यपतिट्ठो । गम्भीरत्ताव **दुद्दसो** दुक्खेन दट्ठब्बो, न सक्का सुखेन दट्ठुं । यो हि अलब्भनेय्यपतिट्ठो, सो ओगाहितुं असक्कुणेय्यताय सरूपतो च विसेसतो च सुखेन पस्सितुं न सक्का, अथ खो किच्छेन केनचि कदाचिदेव दट्ठब्बो । दुद्दसत्ताव **दुरनुबोधो** दुक्खेन अवबुज्झितब्बो, न सक्का सुखेन अवबुज्झितुं । यञ्हि दट्ठुमेव न सक्का, तस्स ओगाहेत्वा अनुबुज्झने कथा एव नत्थि अवबोधस्स दुक्करभावतो । इमस्मिं ठाने "तं किं मञ्ञथ भिक्खवे कतमं नु खो दुक्करतरं वा दुरभिसम्भवतरं वा" ति **सुत्तपदं**[1] वत्तब्बं ।

सन्तो ति अनुपसन्तसभावानं किलेसानं सङ्खारानञ्च अभावतो वूपसन्त-सब्बपरिळाहताय सन्तो निब्बुतो सन्तारम्मणताय वा सन्तो । एत्थ च निरोधसच्चं सन्तं आरम्मणं "ति सन्तारम्मणं, मग्गसच्चं सन्तं सन्तारम्मणञ्चाति सन्तारम्मणं । पधानभावं नीतो ति **पणीतो** । अथ वा **पणीतो** ति अतित्तिकरणट्ठेन अतप्पको सादुरसभोजनं विय । सन्तपणीतभावेनेव चेत्थ असेचनकताय अतप्पकता दट्ठब्बा । इदञ्हि द्वयं लोकुत्तरमेव सन्धाय वुत्तं । **अतक्कावचरो** ति उत्तमञाणविसयत्ता तक्केन अवचरितब्बो ओगाहितब्बो न होति, ञाणेनेव अवचरितब्बो । ततो एव निपुणञाण-गोचरताय सण्हसुखुमसभावत्ता च **निपुणो सण्हो** । **पण्डितवेदनीयो** ति बालानं अविसयत्ता सम्मापटिपदं पटिपन्नेहि पण्डितेहि एव वेदितब्बो ।

अल्लीयन्ति अभिरमितब्बट्ठेन सेवियन्तीति **आलया,** पञ्च कामगुणा ति आह **"सत्ता पञ्चकामगुणे** अल्लीयन्ति, तस्मा **ते आलया ति वुच्चन्ती** "ति । **तत्थ पञ्चकामगुणे अल्लीयन्ती**ति पञ्चकामगुणे सेवन्तीति अत्थो । ते ति पञ्च कामगुणा । **रमन्ती**ति रतिं विन्दन्ति कीळन्ति लळन्ति । आलीयन्ति अभिरमणवसेन सेवन्तीति आलया, अट्ठसतं तण्हाविचरितानि, तेहि आलयेहि रमन्तीति **आलयरामा** ति एवम्पेत्थ अत्थो दट्ठब्बो । इमे हि सत्ता यथा कामगुणे, एवं रागम्पि अस्सादेन्ति अभिनन्दन्तियेव । यथेव हि B. 152

---

1. सं३-३९५ पिट्ठे ।

सुसज्जितपुप्फफलभरितरुक्खादिसम्पन्नं उय्यानं पविट्ठो राजा ताय ताय सम्पत्तिया रमति, सम्मुदितो आमोदितपमोदितो होति, न उक्कण्ठति, सायम्पि निक्खमितुं न इच्छति, एवमिमेहि कामालयतण्हालयेहि सत्ता रमन्ति, संसारवट्टे सम्मोदिता अनुक्कण्ठिता वसन्ति। तेन नेसं भगवा दुविधम्पि आलयं उय्यानभूमिं विय दस्सेन्तो **"आलयरामा"** ति आदिमाह। **रता** ति निरता। **सुट्ठु मुदिता** ति अतिविय मुदिता अनुक्कण्ठनतो।

ठानं सन्धाया ति ठानसद्दं सन्धाय। अत्थतो पन ठानं ति च पटिच्चसमुप्पादो एव अधिप्पेतो। तिट्ठति एत्थ फलं तदायत्तवुत्तितायाति **ठानं**, सङ्खारादीनं पच्चयभूता अविज्जादयो। इमेसं सङ्खारादीनं पच्चयाति इदप्पच्चया, अविज्जादयोव। इदप्पच्चया एव **इदप्पच्चयता** यथा देवो एव देवता। इदप्पच्चयानं वा अविज्जादीनं अत्तनो फलं पटिच्च पच्चयभावो उप्पादनसमत्थता **इदप्पच्चयता**। तेन समत्थपच्चयलक्खणो पटिच्चसमुप्पादो दस्सितो होति। पटिच्च समुप्पज्जति फलं एतस्माति **पटिच्चसमुप्पादो**। पदद्वयेन पि धम्मानं पच्चयट्ठो एव विभावितो। सङ्खारादिपच्चयानञ्हि अविज्जादीनं एतं अधिवचनं इदप्पच्चयतापटिच्चसमुप्पादो ति। **सब्बसङ्खारसमथो** ति आदि सब्बं अत्थतो निब्बानमेव। यस्मा हि तं आगम्म पटिच्च अरियमग्गस्स आरम्मणपच्चयभावहेतु सब्बसङ्खारविप्फन्दितानि सम्मन्ति वूपसम्मन्ति, तस्मा "सब्बसङ्खारसमथो" ति वुच्चति। सब्बसङ्खतविसंयुत्ते हि निब्बाने सङ्खारवूपसमपरियायो आयागतोयेवाति। इदं पनेत्थ निब्बचनं–सब्बे सङ्खारा सम्मन्ति एत्था ति **सब्बसङ्खारसमथो** ति।

यस्मा च तं आगम्म सब्बे उपधयो पटिनिस्सट्ठा समुच्छेदवसेन परिच्चत्ता होन्ति, अट्ठसतप्पभेदा सब्बापि तण्हा खीयन्ति, सब्बे किलेसरागा विरज्जन्ति, जरामरणादिभेदं सब्बं वट्टदुक्खं निरुज्झति, तस्मा **"सब्बूपधिपटिनिसग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो"** ति वुच्चति, या पनेसा तण्हा तेन तेन भवेन भवन्तरं भवनिकन्तिभावेन विनति संसिब्बति, फलेन वा सद्धिं कम्मं विनति संसिब्बतीति कत्वा वानं ति वुच्चति, ततो निक्खन्तं वानतो ति **निब्बानं**। **किलमथो** ति कायकिलमथो। विहेसापि कायविहेसायेव, चित्ते पन उभयम्पेतं बुद्धानं नत्थि बोधिमूलेयेव समुच्छिन्नत्ता। एत्थ च चिरनिसज्जाचिरभासनेहि पिट्ठिआगिलायनतालुगलसोसादिवसेन कायकिलमथो चेव कायविहेसा च वेदितब्बा, सा च खो देसनाय अत्थं अजानन्तानञ्च अप्पटिपज्जन्तानञ्च वसेन। जानन्तानं पन पटिपज्जन्तानञ्च देसनाय कायपरिस्समोपि सत्थु अपरिस्समोव, तेनाह भगवा "न च मं धम्माधिकरणं विहेसेती" ति। तेनेव वुत्तं **"या अजानन्तानं देसना नाम, सो मम किलमथो अस्सा"** ति।

B. 153

अपिस्सूति सम्पिण्डनत्थे निपातो । सो न केवलं एतदहोसि, इमापि गाथा पटिभंसूति दीपेति । **भगवन्तं** ति पटिसद्दयोगेन सामिअत्थे उपयोगवचनं ति आह "**भगवतो**" ति । वुद्धिप्पत्ता अच्छरिया वा **अनच्छरिया** । वुद्धिअत्थोपि हि अ-कारो होति यथा "असेक्खा धम्मा" ति । कप्पानं चत्तारि असङ्ख्येय्यानि सतसहस्सञ्च सदेवकस्स लोकस्स धम्मसंविभागकरणत्थमेव पारमियो पूरेत्वा इदानि समधिगत-धम्मरज्जस्स तत्थ अप्पोस्सुक्कतापत्तिदीपनत्ता गाथात्थस्स अनुअच्छरियता तस्स वुद्धिप्पत्ति च वेदितब्बा । अत्थद्वारेन[1] हि गाथानं अनच्छरियता । **गोचरा अहेसुं** ति उपट्ठहंसु, उपट्ठानञ्च वितक्कयितब्बताति[2] आह "**परिवितक्कयितब्बभावं पापुणिंसूति** ।

किच्छेनाति न दुक्खप्पटिपदाय । बुद्धानञ्हि चत्तारोपि मग्गा सुखप्पटिपदाव होन्ति । पारमीपूरणकाले पन सरागसदोससमोहस्सेव सतो आगतागतानं याचकानं अलङ्कतप्पटियत्तं सीसं कन्तित्वा गललोहितं नीहरित्वा सुअञ्जितानि अक्खीनि उप्पाटेत्वा कुलवंसप्पदीपं पुत्तं मनापचारिनिं भरियं ति एवमादीनि देन्तस्स अञ्ञानि च खन्तिवादिसदिसेसु अत्तभावेसु छेज्जभेज्जादीनि पापुणन्तस्स आगमनीयपटिपदं सन्धायेतं वुत्तं । ह-इति वा ब्यत्तं ति एतस्मिं अत्थे निपातो । एकंसत्थेति केचि । ह ब्यत्तं एकंसेन वा अलं निप्पयोजनं एवं किच्छेन अधिगतं धम्मं देसेतुं ति योजना । **फलं** ति वा अलं ति इमिना समानत्थं पदं "फलं ति वदामी"ति आदीसु विय । "पकासितं" तिपि पठन्ति, देसितं ति अत्थो । एवं किच्छेन अधिगतस्स धम्मस्स अलं देसितं परियत्तं देसितं, को अत्थो देसितेनाति वुत्तं होति । **रागदोसपरेतेहीति** रागदोसफुट्ठेहि, फुट्ठविसेन विय सप्पेन रागेन दोसेन च सम्फुट्ठेहि अभिभूतेहीति B. 154 अत्थो । अथ वा **रागदोसपरेतेहीति** रागदोसानुगतेहि, रागेन च दोसेन च अनुबन्धेही-ति अत्थो ।

पटिसोतगामिं ति[3] निच्चगाहादीनं पटिसोतं अनिच्चं दुक्खमनत्ता असुभं ति एवं गतं पवत्तं चतुसच्चधम्मं ति अत्थो । **रागरत्ता** ति कामरागेन भवरागेन दिट्ठिरागेन च रत्ता । **न दक्खन्तीति** अनिच्चं दुक्खमनत्ता असुभं ति इमिना सभावेन न पस्सिस्सन्ति, ते अपस्सन्ते को सक्खिस्सति अनिच्चं ति आदिना सभावेन याथावतो धम्मं जानापेतुं ति अधिप्पायो । रागदोसपरेततापि नेसं सम्मुळहभावेनेवाति आह "**तमोखन्धेन आवुटा**" ति, अविज्जारासिना अज्झोत्थटाति अत्थो ।

---

1. अत्थुद्धारेन (स्या)
2. वितक्कस्साति (स्या)
3. दी-ट्ठ-२-५६, म-ट्ठ २-८१, सं-ट्ठ-१-१८० पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

अपोस्सुक्कताय चित्तं नमतीति कस्मा पनस्स एवं चित्तं नमि, ननु एस "मुत्तोहं मोचेस्सामि, तिण्णोहं तारेस्सामि,

किं मे अञ्ञातवेसेन, धम्मं सच्छिकतेनिध।

सब्बञ्ञुतं पापुणित्वा, तारयिस्सं सदेवकं "ति[1]–

पत्थनं कत्वा पारमियो पूरेत्वा सब्बञ्ञुतं पत्तोति ? सच्चमेव, तदेव पच्चवेक्खणानुभावेन पनस्स एवं चित्तं नमि। तस्स हि सब्बञ्ञुतं पत्वा सत्तानं किलेसगहनतं धम्मस्स च गम्भीरतं पच्चवेक्खन्तस्स सत्तानं किलेसगहनता च धम्मगम्भीरता च सब्बाकारेन पाकटा जाता। अथस्स "इमे सत्ता कञ्जियपुण्णलाबु विय तक्कभरितचाटि विय वसातेलपीतपिलोतिका विय अञ्जनमक्खितहत्थो विय च किलेसभरिता अतिसंकिलिट्ठा रागरत्ता दोसदुट्ठा मोहमुळ्हा, ते किं नाम पटिविज्झिस्सन्ती"ति चिन्तयतो किलेसगहनपच्चवेक्खणानुभावेनपि एवं चित्तं नमि।

"अयं धम्मो पथवीसन्धारकउदकक्खन्धो विय **गम्भीरो**, पब्बतेन पटिच्छादेत्वा ठपितो सासपो विय **दुद्दसो**, सतधा भिन्नस्स वालस्स कोटि विय **अणु**। मया हि इमं धम्मं पटिविज्झितुं वायमन्तेन अदिन्नं दानं नाम नत्थि, अरक्खितं सीलं नाम नत्थि, अपरिपूरिता काचि पारमी नाम नत्थि, तस्स मे निरुस्साहं विय मारबलं B. 155 विधमन्तस्सपि पथवी न कम्पित्थ, पठमयामे पुब्बेनिवासं अनुस्सरन्तस्सपि न कम्पित्थ, मज्झिमयामे दिब्बचक्खुं विसोधेन्तस्सपि न कम्पित्थ, पच्छिमयामे पन पटिच्चसमुप्पादं पटिविज्झन्तस्सेव मे दससहस्सिलोकधातु कम्पित्थ। इति मादिसेनपि तिक्खञाणेन किच्छेनेवायं धम्मो पटिविद्धो, तं लोकियमहाजना कथं पटिविज्झिस्सन्ती"ति धम्मगम्भीरताय पच्चवेक्खणानुभावेनपि एवं चित्तं नमीति वेदितब्बं।

अपि च ब्रह्मुना याचिते देसेतुकामतायपिस्स एवं चित्तं नमि। जानाति हि भगवा "मम अप्पोस्सुक्कताय चित्ते नममाने महाब्रह्मा धम्मदेसनं याचिस्सति, इमे च सत्ता ब्रह्मगरुका, ते "सत्था किर धम्मं न देसेतुकामो अहोसि, अथ नं महाब्रह्मा याचित्वा देसापेति, सन्तो वत भो धम्मो पणीतो" ति मञ्ञमाना सुस्सूसिस्सन्ती" ति। इदम्पिस्स कारणं पटिच्च अप्पोस्सुक्कताय चित्तं नमि, नो धम्मदेसनायाति वेदितब्बं।

८॥ **सहम्पतिस्साति** सो किर कस्सपस्स भगवतो सासने सहको नाम थेरो पठमज्झानं निब्बत्तेत्वा पठमज्झानभूमियं कप्पायुकब्रह्मा हुत्वा निब्बत्तो, तत्र नं सहम्पति ब्रह्मा ति सञ्जानन्ति। तं सन्धायाह "**ब्रह्मुनो सहम्पतिस्सा**" ति। **नस्सति वताति** सो किर इमं सद्दं तथा निच्छारेति, यथा दससहस्सिलोकधातुब्रह्मानो सुत्वा

---

1. खु॰-४-३१० पिट्ठे थोकं विसदिसं।

सब्बे सन्निपतिंसु । **अप्परजक्खजातिका** ति पञ्ञामये अक्खिम्हि अप्पं परित्तं रागदोसमोहरजं एतेसं एवंसभावाति अप्परजक्खजातिका । अप्पं रागादिरजं येसं ते सभावा अप्परजक्खजातिकाति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो । **अस्सवनता** ति "सयं अभिञ्ञा" ति आदीसु विय करणत्थे पच्चत्तवचनं, अस्सवनतायाति अत्थो । **भविस्सन्तीति** पुरिमबुद्धेसु दसपुञ्ञकिरियवसेन कताधिकारा परिपाकगतपदुमानि विय सूरियरस्मिसम्फस्सं धम्मदेसनंयेव आकङ्खमाना चतुप्पदिकगाथावसाने अरियभूमिं ओक्कमनारहा न एको, न द्वे, अनेकसतसहस्सा धम्मस्स अञ्ञातारो भविस्सन्तीति दस्सेति ।

पातुरहोसीति पातुभवि । **समलेहि चिन्तितो** ति समलेहि पूरणकस्सपादीहि छहि सत्थारेहि चिन्तितो । ते हि पुरेतरं उप्पज्जित्वा सकलजम्बुदीपे कण्टके पत्थरमाना विय विसं सिञ्चमाना विय च समलं मिच्छादिट्ठिधम्मं देसयिंसु । ते किर बुद्धकोलाहलानुस्सवेन सञ्जातकुतूहला लोकं वञ्चेत्वा कोहञ्ञे ठत्वा सब्बञ्ञुतं पटिजानन्ता यं किञ्चि अधम्मंयेव धम्मोति दीपेसुं । **अपापुरेतं** ति विवर एतं । **अमतस्स द्वारं** ति अमतस्स निब्बानस्स द्वारभूतं अरियमग्गं । इदं वुत्तं होति–एतं कस्सपस्स भगवतो सासनन्तरधानतो पभुति पिहितं निब्बाननगरस्स महाद्वारं अरियमग्गं सद्धम्मदेसनाहत्थेन अपापुर विवर उग्घाटेहीति । **सुणन्तु धम्मं विमलेनानुबुद्धं** ति इमे सत्ता रागादिमलानं अभावतो विमलेन सम्मासम्बुद्धेन अनुबुद्धं चतुसच्चधम्मं सुणन्तु ताव भगवा ति याचति ।

B. 156

सेलपब्बतो उच्चो होति थिरो च, न पंसुपब्बतो मिस्सकपब्बतो वाति आह "**सेले** यथा पब्बतमुद्धनिट्ठितो" ति । तस्सत्थो "सेलमये एकग्घने पब्बतमुद्धनि यथाठितोव । न हि तत्थ ठितस्स दस्सनत्थं गीवुक्खिपनपसारणादिकिच्चं अत्थी" ति । **तथूपमं** ति तप्पटिभागं सेलपब्बतूपमं । **धम्ममयं पासादं** ति लोकुत्तरधम्ममाह । सो हि सब्बसो पसादावहो सब्बधम्मे अतिक्कम्म अब्भुग्गतट्ठेन[1] पासादसदिसो च, पञ्ञापरियायो वा इध धम्म-सद्दो । पञ्ञा हि अब्भुग्गतट्ठेन पासदो ति अभिधम्मे निद्दिट्ठा । यथा चाह–

"पञ्ञापासादमारुय्ह, असोको सोकिनिं पजं ।
पब्बतट्ठोव भूमट्ठे, धीरो बाले अवेक्खती" ति[2] ॥

अयं पनेत्थ सङ्खेपत्थो–यथा सेलपब्बतमुद्धनि यथाठितोव चक्खुमा पुरिसो समन्ततो जनतं पस्सेय्य, तथा त्वम्पि सुमेध सुन्दरपञ्ञ सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन समन्तचक्खु भगवा धम्ममयं पञ्ञामयं पासादमारुय्ह सयं अपेतसोको सोकावतिण्णं जातिजराभिभूतं जनतं अवेक्खस्सु उपधारय उपपरिक्खाति । अयं पनेत्थ अधिप्पायो–यथा हि

1. अच्चुग्गतट्ठेन (स्या.) ।
2. खु-१-१७-पिट्ठे ।

पब्बतपादे समन्ता महन्तं खेत्तं कत्वा तत्थ केदारपाळीसु कुटिकायो कत्वा रत्तिं अग्गिं जालेय्युं, चतुरङ्गसमन्नागतञ्च अन्धकारं अस्स, अथ तस्स पब्बतस्स मत्थके ठत्वा चक्खुमतो पुरिसस्स भूमिं ओलोकयतो नेव खेत्तं, न केदारपाळियो, न कुटियो, B. 157 न तत्थ सयितमनुस्सा पञ्ञायेय्युं अनुज्जलभावतो, कुटिकासु पन अग्गिजालामत्तमेव पञ्ञायेय्य उज्जलभावतो, एवं धम्मपासादं आरुय्ह सत्तनिकायं ओलोकयतो तथागतस्स ये ते अकतकल्याणा सत्ता, ते एकविहारे दक्खिणजाणुपस्से निसिन्नापि बुद्धचक्खुस्स आपाथं नागच्छन्ति ञाणग्गिना अनुज्जलभावतो अनुळारभावतो च, रत्तिं खित्ता सरा विय होन्ति। ये पन कतकल्याणा वेनेय्यपुग्गला, ते एवस्स दूरेपि ठिता आपाथमागच्छन्ति परिपक्कञाणग्गिताय समुज्जलभावतो उळारसन्तानताय च, सो अग्गि विय हिमवन्तपब्बतो विय च। वुत्तम्पि चेतं–

"दूरे सन्तो पकासेन्ति, हिमवन्तोव पब्बतो।
असन्तेत्थ न दिस्सन्ति, रत्तिं खित्ता यथा सरा" ति[1]।

उट्ठेहीति भगवतो धम्मदेसनत्थं चारिकचरणं याचन्तो भणति। **उट्ठेहीति** वा धम्मदेसनाय अप्पोस्सुक्कतासङ्खातसङ्कोचापत्तितो किलासुभावतो उट्ठह। **वीरा-** तिआदीसु भगवा सातिसयचतुब्बिधसम्मप्पधानवीरियवन्तताय **वीरो**, देवपुत्तमच्चु-किलेसाभिसङ्खारानं विजितत्ता **विजितसङ्गामो**, जातिकन्तारादितो वेनेय्यसत्थं वाहन-समत्थताय निब्बानसङ्खातं खेमप्पदेसं सम्पापनसमत्थताय सत्थवाहो, कामच्छन्द-इणस्स अभावतो **अणणो** ति वेदितब्बो। यो हि परेसं इणं गहेत्वा विनासेति, सो तेहि "इणं देही" ति तज्जमानोपि फरुसं वुच्चमानोपि वम्भमान्होपि[2] वधियमानोपि किञ्चि पटिप्पहरितुं न सक्कोति, सब्बं तितिक्खति। तितिक्खकारणञ्हिस्स तं इणं होति, एवमेव यो यम्हि कामच्छन्देन रज्जति, तण्हागहणेन तं वत्थुं गण्हाति, सो तेन फरुसं वुच्चमानोपि वम्भमानोपि वधियमानोपि किञ्चि पटिप्पहरितुं न सक्कोति, सब्बं तितिक्खति। तितिक्खकारणञ्हिस्स सो कामच्छन्दो होति घरसामिकेहि विहेठियमानानं इत्थीनं विय। कस्मा ? इणसदिसत्ता कामच्छन्दस्स।

९॥ **अज्झेसनं** गरुट्ठानीयं पयिरुपासित्वा गरुतरं पयोजनं उद्दिस्स अभिपत्थना अज्झेसना, सापि अत्थतो याचना एव। **बुद्धचक्खुना** ति इन्द्रियपरोपरियत्तञाणेन च आसयानुसयञाणेन च। इमेसञ्हि द्विन्नं ञाणानं बुद्धचक्खू ति नामं, सब्बञ्ञु-B. 158 तञ्ञाणस्स **समन्तचक्खू** ति। हेट्ठिमानं तिण्णं मग्गञाणानं धम्मचक्खू ति। अप्परजक्खा ति आदीसु येसं वुत्तनयेनेव पञ्ञाचक्खुम्हि रागादिरजं अप्पं, ते अप्परजक्खा। येसं तं महन्तं, ते **महारजक्खा**। येसं सद्धादीनि इन्द्रियानि तिक्खानि,

1. खु-१-५६-पिट्ठे।
2. बज्झमानोपि (स्या.)।

ते **तिक्खिन्द्रिया**। येसं तानि मुदूनि, ते **मुदिन्द्रिया**। येसं तेयेव सद्धादयो आकारा सुन्दरा, ते **स्वाकारा**। ये कथितकारणं सल्लक्खेन्ति, सुखेन सक्का होन्ति विञ्ञापेतुं, ते **सुविञ्ञापया**। ये परलोकञ्चेव वज्जञ्च भयतो पस्सन्ति, ते **परलोकवज्जभयदस्साविनो** नाम।

उप्पलानि एत्थ सन्तीति उप्पलिनी, गच्छोपि जलासयोपि, इध पन जलासयो अधिप्पेतो, तस्मा **उप्पलिनियं** ति उप्पलवने ति एवमत्थो गहेतब्बो। इतो परेसुपि एसेव नयो। **अन्तोनिमुग्गपोसीनीति** यानि उदकस्स अन्तो निमुग्गानेव हुत्वा पुस्सन्ति वड्ढन्ति, तानि अन्तोनिमुग्गपोसीनि। **उदकं अच्चुग्गम्म तिट्ठन्तीति** उदकं अतिक्कमित्वा तिट्ठन्ति। तत्थ यानि अच्चुग्गम्म ठितानि सूरियरस्मिसम्फस्सं आगमयमानानि, तानि अज्ज पुप्फनकानि। यानि समोदकं ठितानि, तानि स्वे पुप्फनकानि। यानि उदका अनुग्गतानि अन्तोनिमुग्गपोसीनि, तानि ततियदिवसे पुप्फनकानि। उदका पन अनुग्गतानि अञ्ञानिपि सरोगउप्पलादीनि नाम अत्थि, यानि नेव पुप्फिस्सन्ति मच्छकच्छपभक्खानेव भविस्सन्ति, तानि पाळिं नारुळ्हानि, आहरित्वा पन दीपेतब्बानीति अट्ठकथायं पकासितानि[1]। यथेव हि तानि चतुब्बिधानि पुप्फानि, एवमेव उग्घटितञ्ञू विपञ्चितञ्ञू नेय्यो पदपरमोति चत्तारो पुग्गला।

तत्थ यस्स पुग्गलस्स सह उदाहटवेलाय धम्माभिसमयो होति, अयं "चत्तारो सतिपट्ठाना" तिआदिना नयेन सङ्खित्तेन मातिकाय ठपियमानाय[2] देसनानुसारेन ञाणं पेसेत्वा अरहत्तं गण्हितुं समत्थो पुग्गलो **उग्घटितञ्ञूति** वुच्चति। यस्स पुग्गलस्स संङ्खित्तेन भासितस्स वित्थारेन अत्थे विभजियमाने धम्माभिसमयो होति, अयं वुच्चति पुग्गलो **विपञ्चितञ्ञू**। यस्स पुग्गलस्स उद्देसतो परिपुच्छतो योनिसो मनसिकरोतो कल्याणमित्ते सेवतो भजतो पयिरुपासतो अनुपुब्बेन धम्माभिसमयो होति, अयं वुच्चति पुग्गलो **नेय्यो**। यस्स पुग्गलस्स बहुम्पि सुणतो बहुम्पि भणतो बहुम्पि धारयतो बहुम्पि वाचयतो न ताय जातिया धम्मभिसयो होति, तेन B. 159 अत्तभावेन मग्गं वा फलं वा अन्तमसो झानं वा विपस्सनं वा निब्बत्तेतुं न सक्कोति, अयं वुच्चति पुग्गलो **पदपरमो**। तत्थ भगवा उप्पलवनादिसदिसं दससहस्सिलोकधातुं ओलोकेन्तो अज्ज पुप्फनकानि विय उग्घटितञ्ञू, स्वे पुप्फनकानि विय विपञ्चितञ्ञू ततियदिवसे पुप्फनकानि विय नेय्ये, मच्छकच्छपभक्खपुप्फानि विय पदपरमे च अद्दस, पस्सन्तो च "एत्तका अप्परजक्खा, एत्तका महारजक्खा, तत्रापि एत्तका उग्घटितञ्ञू" ति एवं सब्बाकारतोव अद्दस।

---

1. अट्ठकथायं न पकासितानि (स्या.)।
2. दीपियमानाय (क)।

तत्थ तिण्णं पुग्गलानं इमस्मिञ्ञेव अत्तभावे भगवतो धम्मदेसना अत्थं साधेति । पदपरमानं अनागतत्थाय वासना होति । अथ भगवा इमेसं चतुन्नं पुग्गलानं अत्थावहं धम्मदेसनं विदित्वा देसेतुकम्यतं उप्पादेत्वा पुन सब्बेपि तीसु भवेसु सत्ते भब्बाभब्बवसेन द्वे कोट्ठासे अकासि । ये सन्धाय वुत्तं "ये ते सत्ता कम्मावरणेन समन्नागता विपाकावरणेन समन्नागता किलेसावरणेन समन्नागता अस्सद्धा अच्छन्दिका दुप्पञ्ञा अभब्बा नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं, इमे ते सत्ता अभब्बा। कतमे ते सत्ता भब्बा। ये ते सत्ता न कम्मावरणेन......पे०.....इमे ते सत्ता भब्बा" ति[1] । तत्थ सब्बेपि अभब्बपुग्गले पहाय भब्बपुग्गलेयेव ञाणेन परिग्गहेत्वा "एत्तका रागचरिता, एत्तका दोस, मोह, वितक्क, सद्धा, बुद्धिचरिता" ति छ कोट्ठासे अकासि, एवं कत्वा धम्मं देसेस्सामीति चिन्तेसि । एत्थ च अप्परजक्खादिभब्बादिवसेन आवज्जेन्तस्स भगवतो ते सत्ता पुञ्जपुञ्जाव हुत्वा उपट्ठहन्ति, न एकेकाति दट्ठब्बं ।

पच्चभासीति पतिअभासि । **अपारुता** ति विवटा । **अमतस्स द्वारा** ति अरियमग्गो । सो हि अमतसङ्खातस्स निब्बानस्स द्वारं, सो मया विवरित्वा ठपितो महाकरुणूपनिस्सयेन सयम्भूञाणेन अधिगतत्ताति दस्सेति । "अपारुतं तेसं अमतस्स द्वारं" ति केचि पठन्ति । **पमुञ्चन्तु सद्धं** ति सब्बे अत्तनो सद्धं मुञ्चन्तु विस्सज्जेन्तु पवेदेन्तु, मया देसिते धम्मे मयि च अत्तनो सद्दहनाकारं उट्ठापेन्तूति अत्थो । पच्छिमपदद्वये B. 160 अयमत्थो–अहञ्हि अत्तनो पगुणं सुप्पवत्तितम्पि इमं पणीतं उत्तमं धम्मं कायवाचाकिलमथसञ्ञी हुत्वा न भासिं, न भासिस्सामीति चिन्तेसिं, इदानि पन सब्बो जनो सद्धाभाजनं उपनेतु, पूरेस्सामि नेसं सङ्कप्पंति । **अन्तरधायीति** सत्थारं गन्धमालादीहि पूजेत्वा अन्तरहितो, सकट्ठानमेव गतोति अत्थो । सत्थुसन्तिकञ्हि उपगतानं देवानं ब्रह्मानञ्च तस्स पुरतो अन्तरधानं नाम सकट्ठानगमनमेव ।

ब्रह्मयाचनकथावण्णना निट्ठिता ।

पञ्चवग्गियकथावण्णना

१०॥ **एतदहोसी** ति एतं अहोसि, "कस्स नु खो अहं पठमं धम्मं देसेय्यं" ति अयं धम्मदेसनापटिसंयुत्तो वितक्को उदपादीति अत्थो । आळारो ति तस्स नामं । दीघपिङ्गलो किरेस । सो हि तुङ्गसरीरताय दीघो, पिङ्गलचक्खुताय पिङ्गलो, तेनस्स "आळारो" ति नामं अहोसि । **कालामो** ति गोत्तं । पण्डितो ति[2] पण्डिच्चेन

---

1. अभि. २-३५५ पिट्ठे ।
2. म-ट्ठ-२-९१-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

समन्नागतो, समापत्तिपटिलाभसंसिद्धेन अधिगमबाहुसच्चसङ्खातेन पण्डितभावेन समन्नागतो ति अत्थो। **ब्यत्तो** ति वेय्यत्तियेन समन्नागतो, समापत्तिपटिलाभपच्चयेन पारिहारिकपञ्ञासङ्खातेन ब्यत्तभावेन समन्नागतो ति अत्थो। **मेधावी**ति ठानुप्पत्तिया पञ्ञाय समन्नागतो। अथ वा **मेधावी**ति तिहेतुकपटिसन्धिपञ्ञासङ्खाताय तं तं इति-कत्तब्बतापञ्ञासङ्खाताय च मेधाय समन्नागतो ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो। **अप्परजक्खजातिको** ति समापत्तिया विक्खम्भितत्ता निक्किलेसजातिको विसुद्धसत्तो। **आजानिस्सती** ति सल्लक्खेस्सति पटिविज्झिस्सति।

भगवतोपि खो ञाणं उदपादीति भगवतो पि सब्बञ्ञुतञ्ञाणं उप्पज्जि। भगवा किर देवताय कथितेनेव निट्ठं अगन्त्वा सयम्पि सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन ओलोकेन्तो इतो सत्तमदिवसमत्थके कालं कत्वा आकिञ्चञ्ञायतने निब्बत्तोति अद्दस। तं सन्धायाह "भगवतो पि खो ञाणं उदपादी"ति। **महाजानियो** ति सत्तदिवसब्भन्तरे पत्तब्ब- B. 161 मग्गफलतो परिहीनत्ता महती जानि परिहानि अस्साति महाजानियो। अक्खणे निब्बत्तत्ता[1] इध धम्मदेसनट्ठानं आगमनपादापि नत्थि, अथाहं तत्थ गच्छेय्यं, गन्त्वा देसियमानं धम्मम्पिस्स सोतुं सोतपसादोपि नत्थि, एवं महाजानियो जातोति दस्सेति। किं पन भगवता तं अत्तनो बुद्धानुभावेन धम्मं ञापेतुं न सक्काति ? आम न सक्का, न हि परतोघोसमन्तरेन सावकानं धम्माभिसमयो सम्भवति, अञ्ञथा इतरपच्चयर-हितस्सपि धम्माभिसमयेन भवितब्बं, न च तं अत्थि। वुत्तञ्हेतं "द्वेमे भिक्खवे पच्चया सम्मादिट्ठिया उप्पादाय परतो च घोसो अज्झत्तञ्च योनिसोमनसिकारो" ति[2]।

उदको ति तस्स नामं, रामस्स पन पुत्तताय **रामपुत्तो**। **अभिदोसकालकतो** ति अड्ढरत्ते कालकतो। भगवतो पि खो ञाणं उदपादीति इधापि किर भगवा देवताय कथितवचनेन सन्निट्ठानं अकत्वा सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन ओलोकेन्तो "हिय्यो अड्ढरत्ते कालं कत्वा उदको रामपुत्तो नेवसञ्ञानासञ्ञायतने निब्बत्तो" ति अद्दस, तस्मा एवं वुत्तं। सेसं पुरिमसदिसमेव।

बहुपकारा ति बहुउपकारा। **पधानपहितत्तं उपट्ठहिंसू**ति पधानत्थाय पेसितत्तभावं वसनट्ठाने परिवेणसम्मज्जनेन पत्तचीवरं गहेत्वा अनुबन्धनेन मुखोदकदन्तकट्ठदा-नादिना च उपट्ठहिंसु। के पनेते पञ्चवग्गिया नाम ? ये ते–

रामो धजो लक्खणो चापि मन्ती[3],
कोण्डञ्ञो च भोजो सुयामो सुदत्तो।
एते तदा अट्ठ अहेसुं ब्राह्मणा,
छळङ्गवा मन्तं वियाकरिंसू ति[4]।

---

1. निब्बत्तो (स्या.)।
2. अं-१-८७-पिट्ठे।
3. जोतिमं ति (क)।
4. खु-११-२२९पिट्ठे, मिलिन्दपञ्हे चुण्णियवसेन आगता, म. ट्ठ. २-९२, जातक-ट्ठ-१-६६, अपदान,-ट्ठ-१-६८ पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं।

बोधिसत्तस्स जातकाले सुपिनपटिग्गाहका चेव लक्खणपटिग्गाहका च अट्ठब्राह्मणा । तेसु तयो द्वेधा ब्याकरिंसु "इमेहि लक्खणेहि समन्नागतो अगारं अज्झावसमानो राजा होतीति चक्कवत्ती, पब्बजमानो बुद्धो" ति । पञ्च ब्राह्मणा B. 162 एकंसब्याकरणा अहेसुं "इमेहि लक्खणेहि समन्नागतो अगारे न तिट्ठति, बुद्धोव होती"ति । तेसु पुरिमा तयो यथामन्तपदं गता । एते हि लक्खणमन्त-सङ्खातवेदवचनानुरूपं पटिपन्ना द्वे गतियो भवन्ति अनञ्ञाति वुत्तनियामेन निच्छिनितुं असक्कोन्ता वुत्तमेव पटिपज्जिंसु, न महापुरिसस्स बुद्धभावप्पत्तिं पच्चासीसिंसु । इमे पन कोण्डञ्ञादयो पञ्च "एकंसतो बुद्धो भविस्सती"ति जातनिच्छयत्ता मन्तपदं अतिक्कन्ता । ते अत्तना लद्धं तुट्ठिदानं ञातकानं विस्सज्जेत्वा "अयं महापुरिसो अगारे न अज्झावसिस्सति, एकन्तेन बुद्धो भविस्सती" ति निब्बेमतिका बोधिसत्तं उद्दिस्स समणपब्बज्जं पब्बजिता, तेसं पुत्तातिपि वदन्ति, तं अट्ठकथायं पटिक्खित्तं । एते किर दहरकालेव बहू मन्ते जानिंसु, तस्मा ने ब्राह्मणा आचरियट्ठाने ठपयिंसु । ते "पच्छा अम्हेहि पुत्तदारजटं छिन्दित्वा न सक्का भविस्सति पब्बजितुं" ति दहरकालेयेव पब्बजित्वा रमणीयानि सेनासनानि परिभुञ्जन्ता विचरिंसु । कालेन कालं पन "किं भो महापुरिसो महाभिनिक्खमनं निक्खन्तो" ति पुच्छन्ति । मनुस्सा "कुहिं तुम्हे महापुरिसं पस्सिस्सथ, तीसु पासादेसु विविधनाटकमज्झे देवो विय सम्पत्तिं अनुभोती"ति वदन्ति । ते सुत्वा "न ताव महापुरिसस्स ञाणं परिपाकं गच्छती" ति अप्पोस्सुक्का विहरिंसुयेव ।

कस्मा पनेत्थ भगवा "बहुकारा खो मे पञ्चवग्गिया" ति आह । किं उपकार-कानंयेव एस धम्मं देसेति, अनुपकारकानं न देसेतीति ? नो न देसेति । परिचय-वसेन हेस आळारञ्चेव कालामं उदकञ्च रामपुत्तं ओलोकेसि । एतस्मिं पन बुद्धक्खेत्ते ठपेत्वा अञ्ञासिकोण्डञ्ञं अञ्ञो पठमं धम्मं सच्छिकातुं समत्थो नाम नत्थि । कस्मा ? तथाविधउपनिस्सयत्ता । पुब्बे किर पुञ्ञकरणकाले द्वे भातरो अहेसुं । ते च एकतो सस्सं अकंसु । तत्थ जेट्ठस्स "एकस्मिं सस्से नव वारे अग्गसस्सदानं मया दातब्बं" ति अहोसि । सो वप्पकाले बीजग्गं नाम दत्वा गब्भकाले कनिट्ठेन सद्धिं मन्तेसि "गब्भकाले गब्भं फालेत्वा दस्सामी" ति । कनिट्ठो "तरुणसस्सं नासेतुकामोसी"ति आह । जेट्ठो कनिट्ठस्स अननुवत्तनभावं ञत्वा खेत्तं विभजित्वा अत्तनो कोट्ठासतो गब्भं फालेत्वा खीरं नीहरित्वा सप्पिफाणितेन योजेत्वा अदासि, पुथुककाले पुथुकं कारेत्वा अदासि, लायने लायनग्गं, वेणिकरणे वेणग्गं, B. 163 वेणियो पुरिसभारवसेन बन्धित्वा कलापकरणे कलापग्गं, खले कलापानं ठपनदिवसे खलग्गं, मद्दित्वा वीहीनं रासिकरणदिवसे खलभण्डग्गं, कोट्ठागारे धञ्ञस्स पक्खिपन-दिवसे कोट्ठग्गं ति एवं एकस्मिं सस्से नव वारे अग्गदानं अदासि । कनिट्ठो पन

खलतो धञ्ञं उद्धरित्वा गहणदिवसे अदासि । तेसु जेट्ठो अञ्ञासिकोण्डञ्ञत्थेरो जातो, कनिट्ठो सुभद्दपरिब्बाजको । इति एकस्मिं सस्से नवन्नं अग्गदानानं दिन्नत्ता ठपेत्वा थेरं अञ्ञो पठमं धम्मं सच्छिकातुं समत्थो नाम नत्थि । "नवन्नं अग्गदानानं दिन्नत्ता" ति इदञ्च तस्स रत्तञ्ञूनं अग्गभावत्थाय कताभिनीहारानुरूपं पवत्तित-सावकपारमिया चिण्णन्ते पवत्तितत्ता वुत्तं । तिण्णम्पि हि बोधिसत्तानं तं तं पारमिया सिखाप्पत्तकाले पवत्तितं पुञ्ञं अपुञ्ञं वा गरुतरविपाकमेव होति, धम्मस्स च सब्बपठमं सच्छिकिरियाय विना कथं रत्तञ्ञूनं अग्गभावसिद्धीति ? "बहुकारा खो मे पञ्चवग्गिया" ति इदं पन उपकारानुस्सरणमत्तकेनेव वुत्तं ।

इसिपतने मिगदाये ति तस्मिं किर पदेसे अनुप्पन्ने बुद्धे पच्चेकसम्बुद्धा गन्ध-मादनपब्बते सत्ताहं निरोधसमापत्तिया वीतिनामेत्वा निरोधा वुट्ठाय नागलतादन्तकट्ठं खादित्वा अनोतत्तदहे मुखं धोवित्वा पत्तचीवरमादाय आकासेन आगन्त्वा निपतन्ति । तत्थ चीवरं पारुपित्वा नगरे पिण्डाय चरित्वा कतभत्तकिच्चा गमनकालेपि ततोयेव उप्पत्तित्वा गच्छन्ति । इति इसयो एत्थ निपतन्ति उप्पतन्ति चाति तं ठानं "इसिपतनं" ति सङ्खं गतं, मिगानं पन अभयत्थाय दिन्नत्ता "मिगदायो" ति वुच्चति । तेन वुत्तं इसिपतने मिगदाये" ति । अञ्ञे बुद्धा पठमं धम्मदेसनत्थाय गच्छन्ता आकासेन गन्त्वा तत्थेव ओतरन्ति, अम्हाकं पन भगवा उपकस्स आजीवकस्स उपनिस्सयं दिस्वा" उपको इमं अद्धानं पटिपन्नो, सो मं दिस्वा सल्लपित्वा गमिस्सति, अथ पुन निब्बिन्नो[1] आगम्म अरहत्तं सच्छिकरिस्सती" ति ञत्वा अट्ठारसयोजनं मग्गं पदसाव अगमासि । तेन वुत्तं "येन बाराणसी, तेन चारिकं "पक्कामी" ति ।

११॥ **अन्तरा च गयं अन्तरा च बोधिं** ति गयाय च बोधिस्स च विवरे तिगावुतन्तरे ठाने । बोधिमण्डतो हि गया तीणि गावुतानि, बाराणसी अट्ठारस B. 164 योजनानि । उपको बोधिमण्डस्स च गयाय च अन्तरे भगवन्तं अद्दस । अन्तरा-सद्देन पन युत्तत्ता उपयोगवचनं कतं । ईदिसेसु च ठानेसु अक्खरचिन्तका "अन्तरा गामञ्च नदिञ्च याती"ति एवं एकमेव अन्तरा–सद्दं पयुज्जन्ति, सो दुतियपदेन पि योजेतब्बो होति, अयोजियमाने उपयोगवचनं न पापुणाति सामिवचनस्स पसङ्गे अन्तरा–सद्दयोगेन उपयोगवचनस्स इच्छितत्ता । इध पन योजेत्वा एव वुत्तो । **अद्धानमग्गं** ति अद्धानसङ्खातं मग्गं, दीघमग्गं ति अत्थो । अद्धानगमनसमयस्स विभङ्गे "अद्धयोजनं गच्छिस्सामीति भुञ्जितब्बं" ति आदि-वचनतो[2] अद्धयोजनम्पि अद्धानमग्गो होति । बोधिमण्डतो पन गया तिगावुतं । **विप्पसन्नानीति** सुट्ठु पसन्नानि । **इन्द्रियानीति** मनच्छट्ठानि इन्द्रियानि । **परिसुद्धो** ति

1. निब्बिण्णो (स्या.) ।
2. वि. २-१०१-पिट्ठे ।

निद्दोसो । **परियोदातो** ति तस्सेव वेवचनं । निरुपक्किलेसतायेव हि एस "परियोदातो" ति वुत्तो, न सेतभावेन । एतस्स परियोदाततं दिस्वाव इन्द्रियानं विप्पसन्नतं अञ्ञासि, नयग्गाहीपञ्ञा किरेसा तस्स आजीवकस्स ।

सब्बाभिभूति सब्बं तेभूमकधम्मं अभिभवित्वा ठितो । **सब्बविदू**ति सब्बं चतुभूमकधम्मं अवेदिं अञ्ञासिं सब्बसो ञेय्यावरणस्स पहीनत्ता । **सब्बेसु धम्मेसु अनूपलित्तो** ति सब्बेसु तेभूमकधम्मेसु रज्जनदुस्सनमुय्हनादिना किलेसलेपेन अलित्तो । **सब्बञ्जहो** ति सब्बं तेभूमकधम्मं जहित्वा ठितो । अप्पहातब्बम्पि हि कुसलाब्याकतं तप्पटिबद्धकिलेसप्पहानेन पहीनत्ता न होतीति जहितमेव होति । **तण्हक्खये विमुत्तो**ति तण्हक्खये निब्बाने आरम्मणकरणवसेन विमुत्तो । **सयं अभिञ्ञाया**ति सब्बं चतुभूमकधम्मं अत्तनाव जानित्वा । कमुद्दिसेय्यं ति कं अञ्ञं "अयं मे आचरियो" ति उद्दिसेय्यं ।

न मे आचरियो अत्थीति लोकुत्तरधम्मे मय्हं आचरियो नाम नत्थि । किञ्चापि हि लोकियधम्मानम्पि यादिसो लोकनाथस्स अधिगमो, न तादिसो अधिगमो[1] परूपदेसो अत्थि, लोकुत्तरधम्मे पनस्स लेसोपि नत्थि । **नत्थि मे पटिपुग्गलो** ति मय्हं सीलादीहि गुणेहि पटिनिधिभूतो पुग्गलो नाम नत्थि । **सम्मासम्बुद्धो ति हेतुना**[2] नयेन चत्तारि सच्चानि सयं बुद्धो । **सीतिभूतो** ति सब्बकिलेसग्गिनिब्बापनेन सीतिभूतो, किलेसानं येव निब्बुतत्ता **निब्बुतो** ।

B. 165 **कासिनं पुरं** ति कासिरट्ठे नगरं । **आहञ्छं** ति आहनिस्सामि । **अमतदुन्दुभिं** ति वेनेय्यानं अमताधिगमाय उग्घोसनादिं[3] कत्वा सत्थु धम्मदेसना "अमतदुन्दुभी" ति वुत्ता, धम्मचक्कपटिलाभाय तं अमतभेरिं पहरिस्सामीति गच्छामीति वुत्तं होति ।

अरहसि अनन्तजिनो ति अनन्तजिनोपि भवितुं युत्तोति अत्थो । अनन्तञाणो जितकिलेसो ति **अनन्तजिनो** । **हुपेय्यपावुसो** ति आवुसो एवम्पि नाम भवेय्य, एवंविधे नाम रूपरतने[4] ईदिसेन ञाणेन भवितब्बं ति अधिप्पायो । अयञ्हिस्स पब्बज्जाय पच्चयो जातो । कताधिकारो हेस । तथा हि भगवा तेन समागमनत्थं पदसाव तं मग्गं पटिपज्जि । **पक्कामी** ति वङ्कहारजनपदं नाम अगमासि ।

तत्थेकं मिगलुद्दकगामकं निस्साय वासं कप्पेसि, जेट्ठकलुद्दको तं उपट्ठासि । तस्मिञ्च जनपदे चण्डा मक्खिका[5] होन्ति । अथ नं एकाय चाटिया वसापेसुं । मिगलुद्दको दूरं मिगवं गच्छन्तो "अम्हाकं अरहन्ते मा पमज्जी"ति चापं नाम धीतरं

1. आगमो (स्या.) ।
2. सहेतुना (म-ट्ठ-२-९४-पिट्ठे) ।
3. उग्घोसना ति (स्या.) ।
4. नामरूपकायरतने (स्या.) ।
5. मच्छिका (स्या. क.) म-ट्ठ-२-९४-पिट्ठे पन पस्सितब्बं ।

आणापेत्वा अगमासि सद्धिं पुत्तभातुकेहि । सा चस्स धीता दस्सनीया होति कोट्ठाससम्पन्ना । दुतियदिवसे उपको घरं आगतो तं दारिकं सब्बं उपचारं[1] कत्वा परिविसितुं उपगतं दिस्वा रागेन अभिभूतो भुञ्जितुम्पि असक्कोन्तो भाजनेन भत्तं आदाय वसनट्ठानं गन्त्वा भत्तं एकमन्तं निक्खिपित्वा "सचे चापं लभामि, जीवामि । नो चे, मरामी"ति निराहारो सयि । सत्तमे दिवसे मागविको आगन्त्वा धीतरं उपकस्स पवत्तिं पुच्छि । सा "एकदिवसमेव आगन्त्वा पुन नागतपुब्बो" ति आह ।

मागविको आगतवेसेनेव[2] नं उपसङ्कमित्वा पुच्छिस्सामीति तङ्खणंयेव गन्त्वा "किं भन्ते अफासुकं" ति पादे परामसन्तों पुच्छि । उपको नित्थुनन्तो" परिवत्ततियेव । सो "वद भन्ते, यं मया सक्का कातुं, सब्बं करिस्सामी"ति आह । उपको "सचे चापं लभामि, जीवामि, नो चे, मय्हमेव मरणं सेय्यो" ति आह । जानासि किर भन्ते किञ्चि सिप्पं ति । न जानामीति । न भन्ते किञ्चि सिप्पं अजानन्तेन सक्का घरावासं अधिट्ठातुं ति । सो आह "नाहं किञ्चि सिप्पं जानामि, अपि च तुम्हाकं मंसहारको भविस्सामि, मंसञ्च विक्किणिस्सामी" ति । मागविको "अम्हाकम्पि एतदेव रुच्चती"ति उत्तरसाटकं दत्वा घरं आनेत्वा धीतरं अदासि । तेसं संवासमन्वाय पुत्तो विजायि, "सुभद्दो" तिस्स नामं अकंसु । चापा तस्स रोदनकाले "मंसहारकस्स पुत्त मिगलुद्दकस्स पुत्त मा रोदि मा रोदी"ति आदीनी वदमाना पुत्ततोसनगीतेन उपकं उप्पण्डेसि । "भद्दे त्वं मं अनाथो ति मञ्ञसि, अत्थि मे अनन्तजिनो नाम सहायो, तस्साहं सन्तिकं गमिस्सामी"ति आह । चापा "एवमयं अट्टीयती"ति ञत्वा पुनप्पुनं कथेसि । सो एकदिवसं अनारोचेत्वाव मज्झिमदेसाभिमुखो पक्कामि ।

B. 166

भगवा च तेन समयेन सावत्थियं विहरति जेतवने, अथ खो भगवा पटिकच्चेव भिक्खू आणापेसि" यो भिक्खवे अनन्तजिनो ति पुच्छमानो आगच्छति, तस्स मं दस्सेय्याथा" ति । उपकोपि खो "कुहिं अनन्तजिनो वसती" ति पुच्छन्तो अनुपुब्बेन सावत्थिं आगन्त्वा विहारमज्झे ठत्वा" कुहिं अनन्तजिनो" ति पुच्छि । तं भिक्खू भगवतो सन्तिकं नयिंसु । सो च भगवन्तं दिस्वा" सञ्जानाथ मं भगवा" ति आह । आम उपक सञ्जानामि, कुहिं पन त्वं वसित्थाति । वङ्कहारजनपदे भन्ते ति । उपक महल्लकोसि जातो, पब्बजितुं सक्खिस्ससीति । पब्बजिस्सामि भन्ते ति । भगवा पब्बाजेत्वा तस्स कम्मट्ठानं अदासि । सो कम्मट्ठाने कम्मं करोन्तो अनागामिफले पतिट्ठाय कालं कत्वा अविहेसु निब्बत्तो, निब्बत्तिक्खणेयेव च

1. उपहारं (स्या.) ।
2. आगतदिवसेनेव (स्या.) ।

अरहत्तं पापुणि । अविहे निब्बत्तमत्ता हि सत्त जना अरहत्तं पापुणिंसु, तेसं सो अञ्ञतरो । वुत्तञ्हेतं–

"अविहं उपपन्नासे, विमुत्ता सत्त भिक्खवो ।
रागदोसपरिक्खीणा, तिण्णा लोके विसत्तिकं ॥
उपको पलगण्डो च, पुक्कुसाति च ते तयो ।
भद्दियो खण्डदेवो च, बाहुरग्गि च सङ्गियो[1] ।
ते हित्वा मानुसं देहं, दिब्बयोगं उपच्चगुं" ति[2] ॥

१२॥ **सण्ठपेसुं** ति "नेव अभिवादेतब्बो" ति आदिना कतिकं अकंसु । **बाहुल्लिको** ति चीवरबाहुल्लादीनं अत्थाय पटिपन्नो । **पधानविब्भन्तो** ति पधानतो पुब्बे अनुट्ठित-दुक्करचरणतो विब्भन्तो भट्ठो परिहीनो । **आवत्तो बाहुल्लाया** ति चीवरादि-बहुभावत्थाय आवत्तो । **अपि च खो आसनं ठपेतब्बं** ति अपि च खो पनस्स उच्चकुले निब्बत्तस्स आसनमत्तं ठपेतब्बं ति वदिंसु । **असण्ठहन्ता** ति बुद्धानुभावेन बुद्धतेजेन अभिभूता अत्तनो कतिकाय ठातुं असक्कोन्ता । **नामेन च आवुसोवादेन च समुदाचरन्तीति** "गोतमा" ति च "आवुसो" ति च वदन्ति, "आवुसो गोतम मयं उरुवेलायं पधानकाले तुय्हं पत्तचीवरं गहेत्वा विचरिम्ह, मुखोदकं दन्तकट्ठं अदम्ह, वुत्थपरिवेणं सम्मज्जिम्ह, पच्छा ते को वत्तपटिपत्तिं अकासि, कच्चि अम्हेसु पक्कन्तेसु न चिन्तयित्था" ति एवरूपं कथं कथेन्तीति अत्थो ।

B. 167

न चिरस्सेवा ति अचिरेनेव । **कुलपुत्ता** ति दुविधा कुलपुत्ता जातिकुलपुत्ता आचारकुलपुत्ता च, एते पन उभयथापि कुलपुत्तायेव । **अगारस्मा** ति घरा । अगाराय हितं अगारियं, कसिगोरक्खादि कुटुम्बपोसनकम्मं वुच्चति । नत्थि एत्थ अगारियं ति अनगारियं । पब्बज्जायेतं अधिवचनं । **पब्बजन्तीति** उपगच्छन्ति उपसङ्कमन्ति । **तदनुत्तरं** ति तं अनुत्तरं । **ब्रह्मचरियपरियोसानं** ति मग्गब्रह्मचरियस्स परियोसानं, अरहत्तफलं ति वुत्तं होति । तस्स हि अत्थाय कुलपुत्ता पब्बजन्ति । दिट्ठेव **धम्मे** ति तस्मिं येव अत्तभावे । **सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा** ति अत्तनोयेव पञ्ञाय पच्चक्खं कत्वा, अपरप्पच्चयं कत्वाति[3] अत्थो । **उपसम्पज्ज विहरिस्सथा** ति पापुणित्वा सम्पादेत्वा विहरिस्सथ ।

इरियाया ति दुक्करइरियाय । **पटिपदाया** ति **दुक्करपटिपत्तिया** । **दुक्करकारिकाया** ति पसतपसतमुग्गयूसादिआहरणादिना दुक्करकरणेन । **उत्तरि मनुस्सधम्मा** ति मनुस्स-धम्मतो उपरि । अलं अरियं कातुं ति अलमरियो, अरियभावाय समत्थो ति वुत्तं

1. बाहुदंति च पिङ्गियो (स्या.) ।
2. सं-१-३२-५९-पिट्ठेसु ।
3. ञत्वाति (क) ।

होति, ञाणदस्सनमेव ञाणदस्सनविसेसो, अलमरियो च सो ञाणदस्सनविसेसो चाति **अलमरियञाणदस्सनविसेसो** । ञाणदस्सनं ति च दिब्बचक्खुपि विपस्सनापि मग्गोपि फलम्पि पच्चवेक्खणञाणम्पि सब्बञ्ञुतञ्ञाणम्पि वुच्चति । "अप्पमत्तो समानो ञाणदस्सनं आराधेती" ति[1] हि एत्थ दिब्बचक्खु ञाणदस्सनं नाम । "ञाणदस्सनाय चित्तं अभिनीहरति अभिनिन्नामेती" ति[2] एत्थ विपस्सनाञाणं । "अभब्बा ते ञाणदस्सनाय अनुत्तराय सम्बोधाया"–ति[3] एत्थ मग्गो । "अयमञ्ञो उत्तरि-मनुस्सधम्मा अलमरियञाणदस्सनविसेसो अधिगतो फासुविहारो" ति[4] एत्थ फलं । "ञाणञ्च पन मे दस्सनं उदपादि 'अकुप्पा मे चेतो विमुत्ति, अयमन्तिमा जाति, नत्थि दानि पुनब्भवो' ति"[5] एत्थ पच्चवेक्खणञाणं । "ञाणञ्च पन मे दस्सनं उदपादि 'सत्ताहकालकतो आळारो कालामो' ति[6] एत्थ सब्बञ्ञुतञ्ञाणं । इध पन सब्बञ्ञुतञ्ञाणपदट्ठानो अरियमग्गो सब्बञ्ञुतञ्ञाणमेव वा अधिप्पेतं । B. 168

अभिजानाथ मे नो ति अभिजानाथ नु मे । **एवरूपं पभावितमेतं** ति[7] एत्थ एवरूपं वाक्यभेदं ति अत्थो, अपि नु अहं उरुवेलायं पधाने तुम्हाकं सङ्गण्हनत्थं अनुक्कण्ठनत्थं रत्तिं वा दिवा वा आगन्त्वा "आवुसो मयं यत्थ कत्थचि गमिस्सामा-ति मा वितक्कयित्थ, मय्हं ओभासो वा कम्मट्ठाननिमित्तं वा पञ्ञायती"ति एवरूपं कञ्चि वचनभेदं अकासिं ति[8] अधिप्पायो । ते एकपदेनेव सतिं लभित्वा उप्पन्नगारवा "अद्धा एस बुद्धो जातो" ति सद्दहित्वा "नो हेतं भन्ते" ति आहंसु । **असक्खि खो भगवा 'पञ्चवग्गिये भिक्खू(सञ्ञापेतुं** ति भगवा 'पञ्चवग्गिये भिक्खू "बुद्धो अहं"ति जानापेतुं असक्खि । **अञ्ञा चित्तं उपट्ठापेसुं** ति अञ्ञाय अरहत्तप्पत्तिया चित्तं उपट्ठपेसुं अभिनीहरिंसु ।

धम्मचक्कप्पवत्तनसुत्तवण्णना

१३॥ **द्वेमे भिक्खवे अन्ता** ति द्वे इमे भिक्खवे कोट्ठासा, द्वे भागा ति अत्थो । भागवचनो हेत्थ अन्त-सद्दो "पुब्बन्ते ञाणं अपरन्ते ञाणं" ति आदीसु[9] विय । इमस्स पन पदस्स उच्चारणसमकालं पवत्तनिग्घोसो बुद्धानुभावेन हेट्ठा अवीचिं उपरि

---

1. म-१-२५७ पिट्ठे ।
2. दी-१-७२ पिट्ठे ।
3. अं. १-५२१-पिट्ठे ।
4. म. १-२६८-पिट्ठे ।
5. सं-३-३७०, वि. ३-१६ पिट्ठेसु ।
6. म-१-२२६-, म-२-२६४, वि. ३-१० पिट्ठेसु ।
7. भासितमेतं ति (स्या) ।
8. अभासिं ति-(क) ।
9. अभि-१-२१५-पिट्ठे ।

भवग्गं पत्वा दससहस्सिलोकधातुं फरित्वा[1] अट्ठासि । तस्मिं येव समये परिपक्क-कुसलमूला सच्चाभिसम्बोधाय कताधिकारा अट्ठारसकोटिसङ्खा ब्रह्मानो समागच्छिंसु । पच्छिमदिसाय सूरियो अत्थमेति, पाचीनदिसाय आसाळ्हनक्खत्तेन युत्तो पुण्ण-B. 169 चन्दो उग्गच्छति । तस्मिं समये भगवा धम्मचक्कप्पवत्तनसुत्तं आरभन्तो "द्वेमे भिक्खवे अन्ता" ति आदिमाह ।

तत्थ **पब्बजितेना** ति गिहिबन्धनं छेत्वा पब्बज्जुपगतेन । **न सेवितब्बा** ति न वळञ्जेतब्बा नानुयुञ्जितब्बा । **यो चायं कामेसु कामसुखल्लिकानुयोगो** ति यो च अयं वत्थुकामेसु किलेसकामसुखस्स अनुयोगो, किलेसकामसंयुत्तस्स सुखस्स अनुगतो ति[2] अत्थो। **हीनो** ति लामको । **गम्मो** ति गामवासीनं सन्तको तेहि सेवितब्बताय । **पोथुज्जनिको** ति पुथुज्जनेन अन्धबालजनेन आचिण्णो । अनरियो ति न अरियो न विसुद्धो न उत्तमो, न वा अरियानं सन्तको । **अनत्थसंहितो** ति न अत्थसंहितो, हितसुखावहकारणं अनिस्सितो ति अत्थो । **अत्तकिलमथानुयोगो** ति अत्तनो किल-मथस्स अनुयोगो, दुक्खकरणं दुक्खुप्पादनं ति अत्थो । **दुक्खो** ति कण्टकापस्सय-सेय्यादीहि अत्तबाधनेहि दुक्खावहो । **मज्झिमा पटिपदा** ति अरियमग्गं सन्धाय वुत्तं । मग्गो हि कामसुखल्लिकानुयोगो एको अन्तो, अत्तकिलमथानुयोगो एको अन्तो, एते द्वे अन्ते न उपेति न उपगच्छति, विमुत्तो एतेहि अन्तेहि, तस्मा "मज्झिमा पटिपदा" ति वुच्चति । एतेसं मज्झे भवत्ता **मज्झिमा**, वट्टदुक्खनिस्सरणत्थिकेहि पटिपज्जि-तब्बतो च **पटिपदा** ति, तथा लोभो एको अन्तो, दोसो एको अन्तो । सस्सतं एकं अन्तं, उच्छेदो एको अन्तो ति पुरिमनयेनेव वित्थारेतब्बं ।

चक्खुकरणीति आदीहि तमेव पटिपदं थोमेति । पञ्ञाचक्खुं करोतीति चक्खुकरणी । सा हि चतुन्नं सच्चानं दस्सनाय संवत्तति परिञ्ञाभिसमयादिभेदस्स दस्सनस्स पवत्तनट्ठेनाति "चक्खुकरणी"ति वुच्चति । तयिदं सतिपि पटिपदाय अनञ्ञत्ते अवयववसेन सिज्झमानो अत्थो समुदायेन कतो नाम होतीति उपचारवसेन वुत्तं ति दट्ठब्बं । दुतियपदं तस्सेव वेवचनं । **उपसमाया** ति किलेसुपसमत्थाय । **अभिञ्ञाया** ति चतुन्नं सच्चानं अभिजाननत्थाय । **सम्बोधाया** ति तेसंयेव सम्बुज्झनत्थाय । **निब्बानायाति** निब्बानसच्छिकिरियाय । अथ वा **निब्बानाया-** ति अनुपादिसेसनिब्बानाय । "उपसमाया" ति हि इमिना सउपादिसेसनिब्बानं गहितं ।

B. 170 इदानि तं मज्झिमप्पटिपदं सरूपतो दस्सेतुकामो "कतमा च सा" ति पुच्छित्वा "अयमेवा" ति आदिना नयेन विस्सज्जेसि । तत्थ **अयमेवा** ति अवधारणवचनं अञ्ञस्स निब्बानगामिमग्गस्स अत्थिभावपटिसेधनत्थं । सत्तापटिक्खेपो[3] हि इध

1. पत्थरित्वा (स्या) ।
2. अनुभवोति (स्या) ।
3. सत्तपटिक्खेपो (स्या) ।

पटिसेधनं अलब्भमानत्ता अञ्ञस्स मग्गस्स। **अरियो** ति किलेसानं आरकत्ता अरियो निरुत्तिनयेन। अरिपहानाय संवत्ततीति पि **अरियो** अरयो पापधम्मा यन्ति अगपच्छन्ति एतेनाति कत्वा। अरियेन भगवता देसितत्ता अरियस्स अयं ति पि अरियो, अरियभावप्पटिलाभाय संवत्ततीतिपि **अरियो**। एत्थ पन अरियकरो अरियोति पि उत्तरपदलोपेन अरिय-सद्दसिद्धि वेदितब्बा। अट्ठहि अङ्गेहि उपेतत्ता **अट्ठङ्गिको**। मग्गङ्गसमुदाये हि मग्गवोहारो, समुदायो च समुदायीहि समन्नागतो नाम होति। अयं पनेत्थ वचनत्थो–अत्तनो अवयवभूतानि अट्ठङ्गानि एतस्स सन्तीति अट्ठङ्गिको ति। परमत्थतो पन अङ्गानियेव मग्गो पञ्चङ्गिकतूरियादीनि विय, न च अङ्गविनिमुत्तो छळङ्गो वेदो विय। किलेसे मारेन्तो गच्छतीति **मग्गो** निरुत्तिनयेन, निब्बानं मग्गति गवेसतीति **मग्गो**। अरियमग्गो हि निब्बानं आरम्मणं करोन्तो गवेसन्तो विय होति। निब्बानत्थिकेहि मग्गीयतीति वा **मग्गो** विवट्टूपनिस्सय-पुञ्ञकरणतो पट्ठाय तदत्थपटिपत्तितो। गम्मति वा तेहि पटिपज्जीयतीति **मग्गो**। एत्थ पन आदिअन्तविपरियायेन सद्दसिद्धि वेदितब्बा।

सेय्यथिदं ति निपातो, तस्स कतमो सो इति चेति अत्थो, कतमानि वा तानि अट्ठङ्गानीति। सब्बलिङ्गविभत्तिवचनसाधारणो हि अयं निपातो। एकमेकम्पि अङ्गं मग्गोयेव। यथाह "सम्मादिट्ठि मग्गो चेव हेतु चा" ति[1]। पोराणापि भणन्ति "दस्सनमग्गो सम्मादिट्ठि, अभिनिरोपनमग्गो सम्मासङ्कप्पो.......पे०......अविक्खेपमग्गो सम्मासमाधी" ति। ननु च अङ्गानि समुदितानि मग्गो अन्तमसो सत्तङ्गविकलस्स अरियमग्गस्स अभावतो ति? सच्चमेतं सच्चसम्पटिवेधे, मग्गप्पच्चयताय पन यथासकं किच्चकरणेन पच्चेकम्पि तानि मग्गोयेव, अञ्ञथा समुदितानम्पि तेसं मग्गकिच्चं न सम्भवेय्याति। सम्मादिट्ठिआदीसु सम्मा पस्सतीति **सम्मादिट्ठि**, सम्मा सङ्कप्पेति सम्पयुत्तधम्मे निब्बानसङ्खाते आरम्मणे अभिनिरोपेतीति **सम्मासङ्कप्पो**, B. 171 सम्मावदति एतायाति **सम्मावाचा**, सम्मा करोति एतेनाति सम्माकम्मं, तदेव **सम्माकम्मन्तो**, सम्मा आजीवति एतेनाति **सम्माआजीवो**[2], सम्मा वायमति उस्सह-तीति **सम्मावायामो**, सम्मा सरति अनुस्सरतीति **सम्मासति**, सम्मासमाधियति चित्तं एतेनाति **सम्मासमाधीति** एवं निब्बचनं वेदितब्बं। इदानि **अयं खो सा भिक्खवे** ति तमेव पटिपदं निगमेन्तो आह। तस्सत्थो–य्वायं चत्तारोपि लोकुत्तरमग्गे एकतो कत्वा कथितो अट्ठङ्गिको मग्गो, अयं खो सा भिक्खवे....पे०.....निब्बानाय संवत्ततीति।

---

1. अभि-१-२१२ पिट्ठे।
2. अभि–ट्ठ-२-७८, विसुद्धि, २-१२५ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

१४॥ एवं मज्झिमपटिपदं सरूपतो दस्सेत्वा इदानि चत्तारि अरियसच्चानि दस्सेतुं **"इदं खो पन भिक्खवे"** ति आदिमाह। तत्थ[1] दुक्खं ति एत्थ दु-इति अयं सद्दो कुच्छिते दिस्सति। कुच्छितञ्हि पुत्तं "दुपुत्तो" ति वदन्ति, खं–सद्दो पन तुच्छे। तुच्छञ्हि आकासं "खं" ति वुच्चति। इदञ्च पठमसच्चं कुच्छितं अनेकउपद्द-वाधिट्ठानतो, तुच्छं बालजनपरिकप्पितधुवसुभसुखत्तभावविरहिततो, तस्मा कुच्छितत्ता तुच्छत्ता च "दुक्खं" ति वुच्चति। यस्मा पनेतं बुद्धादयो अरिया पटिविज्झन्ति, तस्मा **अरियसच्चं** ति वुच्चति। अरियपटिविज्झितब्बञ्हि सच्चं पुरिमपदे उत्तरपदलोपेन "अरियसच्चं" ति वुत्तं। अरियस्स तथागतस्स सच्चं ति पि अरियसच्चं। तथागतेन हि सयं अधिगतत्ता पवेदितत्ता ततो एव च अञ्ञेहि अधिगमनीयत्ता तं तस्स होती-ति। अथ वा एतस्स अभिसम्बुद्धत्ता अरियभावसिद्धितो अरियसाधकं सच्चं तिपि **अरियसच्चं** पुब्बे विय उत्तरपदलोपेन। अवितथभावेन वा अरणीयत्ता अधिगन्तब्बत्ता अरियं सच्चं तिपि **अरियसच्चं**। सच्चत्थं पन चतुन्नम्पि सच्चानं परतो एकज्झं दस्सयिस्साम।

इदानि तं दुक्खं अरियसच्चं सरूपतो दस्सेतुं **"जातिपि दुक्खा"** ति आदिमाह। तत्रायं **जाति**-सद्दो अनेकत्थो। तथा हेस "एकम्पि जातिं द्वेपि जातियो "ति[2] एत्थ भवे आगतो। "अत्थि विसाखे निगण्ठा नाम समणजाती" ति[3] एत्थ निकाये। "जाति B. 172 द्वीहि खन्धेहि सङ्गहिता" ति[4] एत्थ सङ्खतलक्खणे। "यं मातुकुच्छिस्मिं पठमं चित्तं उप्पन्नं पठमं विञ्ञाणं पातुभूतं, तदुपादाय सावस्स जाती" ति[5] एत्थ पटिसन्धियं।" सम्पतिजातो आनन्द बोधिसत्तो" ति[6] एत्थ पसूतियं। "अक्खित्तो अनुपकुट्ठो जातिवादेना" ति[7] एत्थ कुले। स्वायमिध गब्भसेय्यकानं पटिसन्धितो पट्ठाय याव मातुकुच्छिम्हा निक्खमनं, ताव पवत्तेसु खन्धेसु, इतरेसं पटिसन्धिक्खणेस्वेवा ति दट्ठब्बो। अयम्पि च परियायकथाव, निप्परियायतो पन तत्थ तत्थ निब्बत्तमानानं सत्तानं ये खन्धा पातुभवन्ति, तेसं पठमपातुभावो जाति नाम।

कस्मा पनेसा दुक्खाति चे ? अनेकेसं दुक्खानं वत्थुभावतो। अनेकानि हि दुक्खानि। सेय्यथिदं ? दुक्खदुक्खं विपरिणामदुक्खं सङ्खारदुक्खं पटिच्छन्नदुक्खं अप्पटिच्छन्नदुक्खं परियायदुक्खं निप्परियायदुक्खं ति। तत्थ कायिकचेतसिका दुक्खा वेदना सभावतो च नामतो च दुक्खत्ता दुक्खदुक्खं ति वुच्चति। सुखा वेदना

1. अभि. ट्ठ. २-७८, विसुद्धि. २-१२५ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
2. दी. १-१२-७६, म. १-१०१-पिट्ठेसु।
3. अं.-१-२०६ पिट्ठे।
4. अभि ३-१३ पिट्ठे।
5. वि-३-१२९-पिट्ठे।
6. दी-२-१३, म. ३-१६४-पिट्ठेसु।
7. दी-१-१०६-पिट्ठे।

विपरिणामदुक्खुप्पत्तिहेतुतो **विपरिणामदुक्खं**। उपेक्खा वेदना चेव सेसा च तेभूमका सङ्खारा उदयब्बयपीळितत्ता **सङ्खारदुक्खं**। कण्णसूलदन्तसूलरागजपरिळाहदोसजपरिळाहादिकायिकचेतसिका आबाधा पुच्छित्वा जानितब्बतो उपक्कमस्स च अपाकटभावतो **पटिच्छन्नदुक्खं**। द्वत्तिंसकम्मकारणादिसमुट्ठानो आबाधो अपुच्छित्वाव जानितब्बतो उपक्कमस्स च पाकटभावतो **अप्पटिच्छन्नदुक्खं**। ठपेत्वा दुक्खदुक्खं सेसदुक्खं सच्चविभङ्गे आगतं जाति आदि सब्बम्पि तस्स तस्स दुक्खस्स वत्थुभावतो **परियायदुक्खं**। दुक्खदुक्खं पन **निप्परियायदुक्खं** ति वुच्चति। तत्रायं जाति यं तं **बालपण्डितसुत्तादीसु**[1] भगवतापि उपमावसेन पकासितं आपायिकं दुक्खं, यञ्च सुगतियम्पि मनुस्सलोके गब्भोक्कन्तिमूलकादिभेदं दुक्खं उप्पज्जति, तस्स वत्थुभावतो दुक्खा। तेनाहु पोराणा–

"जायेथ नो चे नरकेसु सत्तो,
तत्थग्गिदाहादिकमप्पसय्हं।
लभेथ दुक्खं न कुहिं पतिट्ठं,
इच्चाह दुक्खाति मुनीध जातिं॥

दुक्खं तिरच्छेसु कसापतोद–
दण्डाभिघातादिभवं अनेकं।
यं तं कथं तत्थ भवेय्य जातिं
विना तहिं जाति ततोपि दुक्खा॥

B. 173

पेतेसु दुक्खं पन खुप्पिपासा–
वातातपादिप्पभवं विचित्तं।
यस्मा अजातस्स न तत्थ अत्थि,
तस्मा पि दुक्खं मुनि जातिमाह॥

तिब्बन्धकारे च असय्ह सीते,
लोकन्तरे यं असुरेसु दुक्खं।
न तं भवे तत्थ न चस्स जाति,
यतो अयं जाति ततोपि दुक्खा॥

यञ्चापि गूथनरके विय मातु गब्भे,
सत्तो वसं चिरमतो बहि निक्खमञ्च।
पप्पोति दुक्खमतिघोरमिदम्पि नत्थि,
जातिं विना इतिपि जाति अयञ्हि दुक्खा॥

1. म. ३-२०१-पिट्ठे।

किं भासितेन बहुना ननु यं कुहिञ्चि,
अत्थीध किञ्चिदपि दुक्खमिदं कदाचि ।
नेवत्थि जातिविरहेन यतो महेसि,
दुक्खाति सब्बपठमं इममाह जातिं" ति[1] ॥

जरापि दुक्खा ति एत्थ पन दुविधा जरा सङ्खतलक्खणञ्च खण्डिच्चादिसम्मतो सन्ततियं एकभवपरियापन्नक्खन्धपुराणभावो च, सा इध अधिप्पेता । सा पनेसा जरा सङ्खारदुक्खभावतो चेव दुक्खवत्थुतो च दुक्खा । यञ्हि अङ्गपच्चङ्गसिथिलभाव-इन्द्रियविकारविरूपतायोब्बनविनासवीरियाविसादसतिमतिविप्पवासपरपरिभवादि-अनेकपच्चयं कायिकचेतसिकं दुक्खमुप्पज्जति, जरा तस्स वत्थु । तेनाहु पोराणा–

"अङ्गानं सिथिलीभावा, इन्द्रियानं विकारतो,
योब्बनस्स विनासेन, बलस्स उपघाततो ।
B. 174 विप्पवासा सतादीनं, पुत्तदारेहि अत्तनो ।
अप्पसादनीयतो चेव, भिय्यो बालत्तपत्तिया ।
पप्पोति दुक्खं यं मच्चो, कायिकं मानसं तथा ।
सब्बमेतं जराहेतु, यस्मा तस्मा जरा दुखा" ति[2] ।

ब्याधिपि दुक्खा ति इदं पदं विभङ्गे दुक्खसच्चनिद्देसपाळियं न आगतं, तेनेव **विसुद्धिमग्गेपि** दुक्खसच्चनिद्देसे तं न उद्धटं, धम्मचक्कपवत्तनसुत्तन्तपाळियंयेव पन उपलब्भति, तस्मा तत्थेपिमस्स वचने अञ्ञत्थ च अवचने कारणं वीमंसितब्बं ।

मरणम्पि दुक्खं ति एत्थापि दुविधं मरणं सङ्खतलक्खणञ्च । यं सन्धाय वुत्तं "जरामरणं द्वीहि खन्धेहि सङ्गहितं ति[3] । एकभवपरियापन्नजीवितिन्द्रियप्पबन्ध-विच्छेदो च । यं सन्धाय वुत्तं "निच्चं मरणतो भयं" ति[4], तं इध अधिप्पेतं । जाति-पच्चयमरणं उपक्कममरणं सरसमरणं आयुक्खयमरणं पुञ्ञक्खयमरणं ति पि तस्सेव नामं । तयिदं दुक्खस्स वत्थुभावतो दुक्खं ति वेदितब्बं, तेनाहु पोराणा–

"पापस्स पापकम्मादि-निमित्तमनुपस्सतो,
भद्दस्सापसहन्तस्स, वियोगं पियवत्थुकं ।
मीयमानस्स यं दुक्खं, मानसं अविसेसतो ॥
सब्बेसञ्चापि यं सन्धि-बन्धनच्छेदनादिकं ।
वितुज्जमानधम्मानं, होति दुक्खं सरीरजं ॥

1. विसुद्धि-२-१३१, अभि-ट्ठ-२-९१, महानिद्देस-ट्ठ-६४, पटिसं-ट्ठ-१-१३४ पिट्ठेसुपि ।
2. विसुद्धि. २-१३३, अभि-ट्ठ-२-९४, महानिद्देस-ट्ठ-६२, पटिसं-ट्ठ-१-१३५ पिट्ठेसुपि ।
3. अभि ३-१३ पिट्ठे ।
4. खु-१ ३७१, खु-५-२३७ पिट्ठेसु ।

असय्हमप्पटिकारं , दुक्खस्सेतस्सिदं यतो ।
मरणं वत्थु तेनेतं, दुक्खमिच्चेव भासितं" ति ॥

इमस्मिञ्च ठाने "सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासापि दुक्खा"ति विभङ्गे दुक्खसच्चनिद्देसे आगतं, इध पन तं नत्थि, तत्थापि कारणं परियेसितब्बं ।

अप्पियेहि सम्पयोगो दुक्खो ति एत्थ अप्पियसम्पयोगो नाम अमनापेहि सत्तसङ्खारेहि समोधानं । सोपि दुक्खवत्थुतो दुक्खो । तेनाहु पोराणा–

"दिस्वाव अप्पिये दुक्खं, पठमं होति चेतसि । B. 175
तदुपक्कमसम्भूत-मथ काये यतो इध ॥
ततो दुक्खद्वयस्सापि, वत्थुतो सो महेसिना ।
दुक्खो वुत्तोति विञ्ञेय्यो, अप्पियेहि समागमो" ति ॥

पियेहि विप्पयोगो दुक्खो ति एत्थ पन पियविप्पयोगो नाम मनापेहि सत्तसङ्खारेहि विनाभावो । सोपि सोकदुक्खस्स वत्थुतो दुक्खो । तेनाहु पोराणा–

"ञातिधनादिवियोगा,
सोकसरसमप्पिता वितुज्जन्ति ।
बाला यतो ततोयं,
दुक्खोति मतो पियविप्पयोगो" ति ॥

यम्पिच्छं न लभती ति एत्थ "अहो वत मयं न जातिधम्मा अस्सामा" ति आदीसु अलब्भनेय्यवत्थूसु इच्छाव" यम्पिच्छं न लभति, तम्पि दुक्खं" ति वुत्ता, सापि दुक्खवत्थुतो दुक्खा । तेनाहु पोराणा–

"तं तं पत्थयमानानं, तस्स तस्स अलाभतो ।
यं विघातमयं दुक्खं, सत्तानं इध जायति ॥
अलब्भनेय्यवत्थूनं, पत्थना तस्स कारणं ।
यस्मा तस्मा जिनो दुक्खं, इच्छितालाभमब्रवी" ति ॥

संखित्तेन पञ्चुपादानक्खन्धा दुक्खा ति एत्थ पन यस्मा इन्धनमिव पावको, लक्खमिव पहरणानि, गोरूपं विय डंसमकसादयो, खेत्तमिव लायका, गामं विय गामघातका, उपादानक्खन्धपञ्चकमेव जातिआदयो नानप्पकारेहि विबाधेन्ता तिणलतादीनि विय भूमियं , पुप्फफलपल्लवानि विय रुक्खेसु उपादानक्खन्धेसुयेव निब्बत्तन्ति, उपादानक्खन्धानञ्च आदिदुक्खं जाति, मज्झेदुक्खं जरा, परियोसानंदुक्खं मरणं, मनोरथविघातप्पत्तानञ्च इच्छाविघातदुक्खं इच्छितालाभोति एवं नानप्पकारतो उपपरिक्खियमाना उपादानक्खन्धाव दुक्खाति यदेतं एकमेकं दस्सेत्वा वुच्चमानं अनेकेहिपि कप्पेहि न सक्का अनवसेसतो वत्तुं, तस्मा तं सब्बम्पि दुक्खं

एकजलबिन्दुम्हि सकलसमुद्दजलरसं विय येसु केसुचि पञ्चुपादानक्खन्धेसु सङ्खिपित्वा B. 176 दस्सेतुं "सखित्तेन पञ्चुपादानक्खन्धा दुक्खा"–ति भगवा अवोच । तेनाहु पोराणा–

"जातिप्पभुतिकं दुक्खं, यं वुत्तमिध तादिना ।
अवुत्तं यञ्च तं सब्बं, विना एते न विज्जति ॥
यस्मा तस्मा उपादान-क्खन्धा सङ्खेपतो इमे ।
दुक्खाति वुत्ता दुक्खन्त-देसकेन महेसिना" ति ॥

एवं सरूपतो. दुक्खसच्चं दस्सेत्वा इदानि समुदयसच्चं दस्सेतुं "**इदं खो पन भिक्खवे दुक्खसमुदयं**" ति आदिमाह । तत्थ सं-इति अयं सद्दो "समागमो समेतं" ति आदीसु संयोगं दीपेति, उ-इति अयं "उप्पन्नं उदितं" ति आदीसु उप्पत्तिं । अय-सद्दो पन कारणं दीपेति । इदञ्चापि दुतियसच्चं अवसेसपच्चयसमायोगे सति दुक्खस्सुप्पत्तिकारणं ति दुक्खस्स संयोगे उप्पत्तिकारणत्ता "दुक्खसमुदयं"ति वुच्चति । **यायं तण्हा** ति या अयं तण्हा । **पोनोब्भविका** ति पुनब्भवकरणं पुनब्भवो उत्तरपदलोपेन, पुनब्भवो सीलमेतिस्साति पोनोब्भविका । नन्दीरागेन सहगता ति नन्दीरागसहगता । इदं वुत्तं होति "नन्दनतो रज्जनतो च नन्दीरागभावं सब्बासु अवत्थासु अप्पच्चक्खाय वुत्तिया नन्दीरागसहगता" ति । **तत्र तत्राभिनन्दिनी**ति यत्र यत्र अत्तभावो निब्बत्तति, तत्रतत्राभिनन्दिनी ।

सेय्यथिदं ति निपातो, तस्स सा कतमाति चेति अयमत्थो । रूपतण्हादिभेदेन छब्बिधायेव तण्हा पवत्तिआकारभेदतो कामतण्हादिवसेन तिविधा वुत्ता । रूपताण्हायेव हि यदा चक्खुस्स आपाथमागतं रूपारम्मणं कामस्सादवसेन अस्सादयमाना पवत्तति, तदा **कामतण्हा** नाम होति । यदा तदेवारम्मणं धुवं सस्सतं ति पवत्ताय सस्सतादिट्ठिया सद्धिं पवत्तति, तदा **भवतण्हा** नाम होति । सस्सतदिट्ठिसहगतो हि रागो "भवतण्हा" ति वुच्चति । यदा पन तदेवारम्मणं उच्छिज्जति विनस्सतीति पवत्ताय उच्छेददिट्ठिया सद्धिं पवत्तति, तदा **विभवतण्हा** नाम होति। उच्छेददिट्ठिसहगतो हि रागो "विभवतण्हा" ति वुच्चति । एस नयो सद्दतण्हादीसुपि ।

B. 177 कस्मा पनेत्थ तण्हाव समुदयसच्चं वुत्ताति? विसेसहेतुभावतो । अविज्जा हि भवेसु आदीनवं पटिच्छादेन्ती दिट्ठिआदिउपादानञ्च तत्थ तत्थ अभिनिविसमानं तण्हं अभिवड्ढेति, दोसादयोपि कम्मस्स कारणं होन्ति, तण्हा पन तं तं भवयोनिगतिविञ्ञाणट्ठितिसत्तावाससत्तनिकायकुलभोगिस्सरियादिविचित्ततं अभिपत्थेन्ती कम्मविचित्तताय उपनिस्सयतं कम्मस्स च सहायभावं उपगच्छन्ती भवादिविचित्तकं नियमेति, तस्मा दुक्खस्स विसेसहेतुभावतो अञ्ञेसुपि अविज्जाउपादानकम्मादीसु सुत्ते अभिधम्मे च अवसेसकिलेसाकुसलमूलादीसु वुत्तेसु दुक्खहेतूसु विज्जमानेसु तण्हाव "समुदयसच्चं" ति वुत्ता ति वेदितब्बं ।

इदानि दुक्खनिरोधं अरियसच्चं दस्सेतुं **"इदं खो पन भिक्खवे दुक्खनिरोधं"** ति आदिमाह। तत्थ यस्मा **नि**-सद्दो अभावं, **रोध**-सद्दो च चारकं दीपेति, तस्मा अभावो एत्थ संसारचारकसङ्खातस्स दुक्खरोधस्स सब्बगतिसुञ्ञत्ता, समधिगते वा तस्मिं संसारचारकसङ्खातस्स दुक्खरोधस्स अभावो होति तप्पटिपक्खत्तातिपि "दुक्खनिरोधं" ति वुच्चति। दुक्खस्स वा अनुप्पादनिरोधपच्चयत्ता **दुक्खनिरोधं**। दुक्खनिरोधं दस्सेन्तेन चेत्थ **"यो तस्सायेव तण्हाया"** ति आदिना नयेन समुदयनिरोधो वुत्तो, सो कस्मा वुत्तो ति चे? समुदयनिरोधेन दुक्खनिरोधो। ब्याधिनिमित्तवूपसमेन ब्याधिवूपसमो विय हि हेतुनिरोधेन फलनिरोधो, तस्मा समुदयनिरोधेनेव दुक्खं निरुज्झति, न अञ्ञथा। तेनाह–

"यथापि मूले अनुपद्दवे दळ्हे,
छिन्नोपि रुक्खो पुनरेव रूहति।
एवम्पि तण्हानुसये अनूहते,
निब्बत्तति दुक्खमिदं पुनप्पुनं" ति[1]॥

इति यस्मा समुदयनिरोधेनेव दुक्खं निरुज्झति, तस्मा भगवा दुक्खनिरोधं दस्सेन्तो समुदयनिरोधेन देसेसि। सीहसमानवुत्तिनो हि तथागता। ते दुक्खं निरोधेन्ता दुक्खनिरोधञ्च देसेन्ता हेतुम्हि पटिपज्जन्ति, न फले। यथा हि सीहो येनत्तनि सरो खित्तो, तत्थेव अत्तनो बलं दस्सेति, न सरे, तथा बुद्धानं कारणे पटिपत्ति, न फले। तित्थिया पन सुवानवुत्तिनो। ते दुक्खं निरोधेन्ता दुक्खनिरोधञ्च देसेन्ता अत्तकिलमथानुयोगदेसनादीहि फले पटिपज्जन्ति, न हेतुम्हि। यथा हि सुनखा केनचि लेड्डुप्पहारे दिन्ने भुस्सन्ता लेड्डुं खादन्ति, न पहारदायके उड्ढहन्ति, एवं अञ्ञतित्थिया दुक्खं निरोधेतुकामा कायखेदमनुयुज्जन्ति, न किलेसनिरोधनं, एवं ताव दुक्खनिरोधस्स समुदयनिरोधवसेन देसनाय पयोजनं वेदितब्बं। B. 178

अयं पनेत्थ अत्थो। **तस्सायेव तण्हाया** ति तस्सा पोनोब्भविका" ति वत्वा कामतण्हादिवसेन विभत्ततण्हाय। विरागो वुच्चति मग्गो।" विरागा विमुच्चती"ति[2] हि वुत्तं। विरागेन निरोधो विरागनिरोधो, अनुसयसमुग्घाततो असेसो विरागनिरोधो **असेसविरागनिरोधो**। अथ वा विरागोति पहानं वुच्चति, तस्मा अनुसयसमुग्घाततो असेसो विरागो असेसो निरोधो ति एवम्पेत्थ योजना दट्ठब्बा, अत्थतो पन सब्बानेव एतानि निब्बानस्स वेवचनानि। परमत्थतो ति दुक्खनिरोधो अरियसच्चं ति निब्बानं वुच्चति। यस्मा पन तं आगम्म तण्हा विरज्जति चेव निरुज्झति च, तस्मा "विरागो" ति च "निरोधो" ति च वुच्चति। यस्मा च तदेव आगम्म तस्सा चागादयो होन्ति,

1. खु-१-६२-पिट्ठे।
2. म-१-१९२, सं-२-१८-५६ पिट्ठेसु।

कामगुणालयादीसु चेत्थ एकोपि आलयो नत्थि, तस्मा **चागो पटिनिस्सग्गो मुत्ति अनालयो** ति वुच्चति ।

इदानि दुक्खनिरोधगामिनिपटिपदाअरियसच्चं दस्सेतुं **"इदं खो पन भिक्खवे दुक्खनिरोधगामिनी"** ति आदिमाह । यस्मा पनेतं अरियसच्चं दुक्खनिरोधं गच्छति आरम्मणवसेन तदभिमुखभूतत्ता, पटिपदा च होति दुक्खनिरोधप्पत्तिया, तस्मा "दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा" ति वुच्चति । सेसमेत्थ वुत्तनयमेव । को पन नेसं दुक्खादीनं सच्चट्ठो ति ? यो पञ्ञाचक्खुना उपपरिक्खियमानानं[1] मायाव विपरीतो, मरीचिव विसंवादको, तित्थियानं अत्ता विय अनुपलब्भसभावो च न होति, अथ खो बाधनप्पभवसन्तिनिय्यानप्पकारेन तच्छाविपरीतभूतभावेन अरियञाणस्स गोचरो होतियेव; एस अग्गिलक्खणं विय लोकपकति विय च तच्छाविपरीतभूतभावो सच्चट्ठो ति वेदितब्बो । एत्थ च अग्गिलक्खणं नाम उण्हत्तं । तञ्हि कत्थचि B.179 कट्ठादिउपादानभेदे विसंवादकं विपरीतं अभूतं वा कदाचिपि न होति, "जातिधम्मा जराधम्मा, अथो मरणधम्मिनो" ति[2] एवं वुत्तजातिआदिका लोकपकतीति वेदितब्बा । "एकच्चानं तिरच्छानानं तिरियं दीघता, मनुस्सादीनं उद्धं दीघता, बुद्धिनिट्ठप्पत्तानं पुन अवड्ढनं ति एवमादिका च लोकपकती" ति वदन्ति ।

अपि च–

नाबाधकं यतो दुक्खं, दुक्खा अञ्ञं न बाधकं ।
बाधकत्तनियामेन, ततो सच्चमिदं मतं ॥
तं विना नाञ्ञतो दुक्खं, न होति न च तं ततो ।
दुक्खहेतुनियामेन, इति सच्चं विसत्तिका ॥
नाञ्ञा निब्बानतो सन्ति, सन्तं न च तं यतो ।
सन्तभावनियामेन, ततो सच्चमिदं मतं ॥
मग्गा अञ्ञं न निय्यानं, अनिय्यानो न चापि सो ।
तच्छनिय्यानभावत्ता, इति सो सच्चसम्मतो ॥
इति तच्छाविपल्लास–भूतभावं चतूसुपि ।
दुक्खादीस्वविसेसेन, सच्चट्ठं आहु पण्डितातिं[3] ॥

१५॥ **पुब्बे अननुस्सुतेसूति** इतो पुब्बे "इदं दुक्खं" ति आदिना न अनुस्सुतेसु अस्सुतपुब्बेसु चतुसच्चधम्मेसु । **चक्खुं** ति आदीनि ञाणवेवचनानेव । ञाणमेव हेत्थ पच्चक्खतो दस्सनट्ठेन चक्खु वियाति **चक्खु**, ञाणट्ठेन **ञाणं**, पकारतो जाननट्ठेन **पञ्ञा**,

---

1. उपपरिक्खियमानो (स्या) ।
2. अं-२-६६ पिट्ठे ।
3. अभि-ट्ठ-२-८०-पिट्ठेपि ।

पटिविज्झनट्ठेन **विज्जा,** सच्चप्पटिच्छादकस्स मोहन्धकारस्स विधमनतो ओभासनट्ठेन **आलोको** ति वुत्तं । तं पनेतं चतूसु सच्चेसु लोकियलोकुत्तरमिस्सकं निद्दिट्ठं ति वेदितब्बं ।

१६॥ **यावकीवञ्चा** ति यत्तकं कालं । **तिपरिवट्टं ति** सच्चञाणकिच्चञाणकतञाण-सङ्खातानं तिण्णं परिवट्टानं वसेन तपरिवट्टं । सच्चञाणादिवसेन हि तयो परिवट्टा एतस्साति तिपरिवट्टं ति वुच्चति ञाणदस्सनं । एत्थ च "इदं दुक्खं अरियसच्चं, इदं दुक्खसमुदयं" ति एवं चतूसु सच्चेसु यथाभूतञाणं **सच्चञाणं** नाम । तेसुयेव "परिञ्ञेय्यं पहातब्बं सच्छिकातब्बं भावेतब्बं" ति एवं कत्तब्बकिच्चजाननञाणं B. 180 **किच्चञाणं** नाम । परिञ्ञातं पहीनं सच्छिकतं भावितं" ति एवं तस्स कतभाव-जाननञाणं **कतञाणं** नाम । **द्वादसाकारं** ति तेसंयेव एकेकस्मिं सच्चे तिण्णं तिण्णं आकारानं वसेन द्वादसाकारं । **ञाणदस्सनं** ति एतेसं तिपरिवट्टानं द्वादसन्नं आकारानं वसेन उप्पन्नञाणसङ्खातं दस्सनं ।

अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं ति उत्तरविरहितं सब्बसेट्ठं सम्मा सामञ्च बोधिं । अथ वा पसत्थं सुन्दरञ्च बोधिं । **बोधीति** च भगवतो अरहत्तमग्गो इधाधिप्पेतो । सावकानं अरहत्तमग्गो अनुत्तरा बोधि होति, न होती ति ? न होति । कस्मा ? असब्ब-गुणदायकत्ता । तेसञ्हि कस्सचि अरहत्तमग्गो अरहत्तफलमेव देति, कस्सचि तिस्सो विज्जा, कस्सचि छ अभिञ्ञा, कस्सचि चतस्सो पटिसम्भिदा, कस्सचि सावक-पारमीञाणं । पच्चेकबुद्धानम्पि पच्चेकबोधिञाणमेव देति, बुद्धानं पन सब्बगुण-सम्पत्तिं देति अभिसेको विय रञ्ञो सब्बलोकिस्सरियभावं । तस्मा अञ्ञस्स कस्सचिपि अनुत्तरा बोधि न होतीति । **अभिसम्बुद्धो ति पच्चञ्ञासिं** ति अभिसम्बुद्धो अहं पत्तो पटिविज्झित्वा ठितोति एवं पटिजानिं । **ञाणञ्च पन मे दस्सनं उदपादीति** अधिगतगुणानं यथावतो दस्सनसमत्थं पच्चवेक्खणञाणञ्च पन मे उदपादि । **अकुप्पा मे विमुत्तीति** अयं मय्हं अरहत्तफलविमुत्ति अकुप्पा पटिपक्खेहि न कोपेतब्बा ति एवं ञाणं उदपादि । तत्थ द्वीहाकारेहि अकुप्पता वेदितब्बा मग्गसङ्खातकारणतो च आरम्मणतो च । सा हि चतूहि मग्गेहि समुच्छिन्नकिलेसानं पुन अनिवत्तनताय **कारणतोपि** अकुप्पा, अकुप्पधम्मं निब्बानं आरम्मणं कत्वा पवत्तताय **आरम्मणतोपि** अकुप्पा अनाकुप्पारम्मणानं[1] लोकियसमापत्तीनं तदभावतो । **अन्तिमा** ति पच्छिमा । **नत्थि दानि पुनब्भवो** ति इदानि पुन अञ्ञो भवो नाम नत्थीति ।

इमस्मिञ्च पन वेय्याकरणस्मिं ति इमस्मिं निग्गाथके सुत्ते । निग्गाथकञ्हि सुत्तं पुच्छाविस्सज्जनसहितं "वेय्याकरणं" ति वुच्चति । **भञ्ञमाने** ति भणियमाने, देसिय-मानेति अत्थो । **विरजं** ति अपायगमनीयरागरजादीनं विगमेन विरजं । वीतमलं ति

---

1. अनिब्बानारम्मणानं (स्या) ।

B. 181 अनवसेसदिट्ठिविचिकिच्छामलापगमेन वीतमलं । पठममग्गवज्झकिलेसरजाभावेन वा विरजं । पञ्चविधदुस्सीलमलापगमेन **वीतमलं** । **धम्मचक्खुं** ति **ब्रह्मायुसुत्ते**[1] ? हेट्ठिमा तयो मग्गा वुत्ता, **चूळराहुलोवादे**[2] आसवक्खयो, इध पन सोतापत्तिमग्गो अधिप्पेतो । चतुसच्चसङ्खातेसु धम्मेसु तेसं दस्सनट्ठेन चक्खूति धम्मचक्खु, हेट्ठिमेसु वा तीसु मग्गधम्मेसु एकं सोतापत्तिमग्गसङ्खातं चक्खूति धम्मचक्खु, समथविपस्सनाधम्म-निब्बत्तताय सीलादितिविधधम्मक्खन्धभूतताय वा धम्ममयं चक्खूति पि **धम्मचक्खु**, तस्स उप्पत्तिआकारदस्सनत्थं **"यं किञ्चि समुदयधम्मं, सब्बं तं निरोधधम्मं"** ति आह । ननु च मग्गञाणं असङ्खतधम्मारम्मणं, न सङ्खतधम्मारम्मणं ति ? सच्चमेतं, यस्मा तं निरोधं आरम्मणं कत्वा किच्चवसेन सब्बसङ्खतं असम्मोहप्पटिवेधवसेन पटिविज्झन्तं उप्पज्जति, तस्मा तथा वुत्तं ।

१७॥ **धम्मचक्के** ति पटिवेधञाणञ्चेव देसनाञाणञ्च पवत्तनट्ठेन चक्कं ति धम्मचक्कं । बोधिपल्लङ्के निसिन्नस्स हि चतूसु सच्चेसु उप्पन्नं द्वादसाकारं पटिवेधञाणम्पि, इसिपतने निसिन्नस्स द्वादसाकाराय सच्चदेसनाय पवत्तकं[3] देसनाञाणम्पि धम्मचक्कं नाम । उभयम्पि हेतं दसबलस्स उरे पवत्तञाणमेव । तदुभयं इमाय देसनाय पकासेन्तेन भगवता धम्मचक्कं पवत्तितं नाम । तं पनेतं धम्मचक्कं याव अञ्ञासिकोण्डञ्ञत्थेरो अट्ठारसहि ब्रह्मकोटीहि सद्धिं सोत्तापत्तिफले पतिट्ठाति[4], ताव भगवा **पवत्तेति** नाम पवत्तनकिच्चस्स अनिट्ठितत्ता । पतिट्ठिते **पवत्तितं** नाम कस्सपसम्मासम्बुद्धस्स सासनन्तरधानतो पट्ठाय याव बुद्धुप्पादो, एत्तकं कालं अप्पवत्तपुब्बस्स पवत्तितत्ता । तं सन्धाय "पवत्तिते च पन भगवता धम्मचक्के भुम्मा देवा सद्दमनुस्सावेसुं" ति आदि वुत्तं । तत्थ **भुम्मा** ति भुमट्ठकदेवता । **सद्दमनुस्सावेसुं**ति एकप्पहारेनेव साधुकारं दत्वा "एतं भगवता" ति आदीनि वदन्ता अनुस्सावयिंसु । **ओभासो** ति सब्बञ्ञुतञ्ञाणानुभावेन पवत्तो चित्तपच्चयउतुसमुट्ठानो ओभासो । सो हि तदा देवानं देवानुभावं अतिक्कमित्वा विरोचित्थ । अञ्ञासि वत भो कोण्डञ्ञो ति इमस्सपि उदानस्स उदाहरणघोसो दससहस्सिलोकधातुं फरित्वा अट्ठासि । भगवतो हि धम्मचक्कप्पवत्तनस्स आरम्भे विय परिसमापनेपि अतिविय उळारतमं पीतिसोमनस्सं उदपादि ।

B. 182 १८॥ दिट्ठो अरियसच्चधम्मो एतेनाति **दिट्ठधम्मो** । एस नयो सेसपदेसुपि । एत्थ च दस्सनं नाम ञाणदस्सनतो अञ्ञम्पि अत्थीति तं निवत्तनत्थं **"पत्तधम्मो"** ति वुत्तं । पत्ति च ञाणसम्पत्तितो अञ्ञापि विज्जतीति ततो विसेसनत्थं **"विदितधम्मो"** ति

---

1. म-२-३३४-पिट्ठे ।
2. म-३-३२५-पिट्ठे ।
3. पवत्तितं (सं-ङ्ग. ३-३२८ पिट्ठे) ।
4. न पतिट्ठाति (स्या) ।

वुत्तं। सा पनेसा विदितधम्मता एकदेसतोपि होतीति निप्पदेसतो विदितभावं दस्सेतुं **"परियोगाळ्हधम्मो"** ति वुत्तं। तेनस्स सच्चाभिसम्बोधिं येव दीपेति। मग्गञाणञ्हि एकाभिसमयवसेन परिञ्ञादिकिच्चं साधेन्तं निप्पदेसेन चतुसच्चधम्मं समन्ततो ओगळ्हं नाम होति। सप्पटिभयकन्तारसदिसा सोळसवत्थुका अट्ठवत्थुका च तिण्णा विचिकिच्छा अनेनाति **तिण्णविचिकिच्छो**। पवत्तिआदीसु "एवं नु खो न नु खो" ति एवं पवत्तिका विगता समुच्छिन्ना कथंकथा अस्साति **विगतकथंकथो**। **वेसारज्जप्पत्तो** ति सारज्जकरानं पापधम्मानं पहीनत्ता तप्पटिपक्खेसु च सीलादीसु गुणेसु सुप्पतिट्ठितत्ता विसारदभावं वेय्यत्तियं पत्तो अधिगतो। स्वायं वेसारज्जप्पत्तिसुप्पतिट्ठितभावो कत्था ति आह **"सत्थुसासने"** ति। अत्तना पच्चक्खतो अधिगतत्ता न परं पच्चेति, परस्स सद्धाय एत्थ नप्पवत्तति, न तस्स[1] परो पच्चेतब्बो अत्थीति **अपरप्पच्चयो**।

लभेय्याहं ति लभेय्यं अहं, आयाचनवचनमेतं। **एहीति** आयाचितानं पब्बज्जूपसम्पदानं अनुमतभावप्पकासनवचनं, तस्मा एहि सम्पटिच्छाहि यथायाचितं पब्बज्जूपसम्पदविसेसं ति अत्थो। **इति-सद्दो** तस्स एहिभिक्खूपसम्पदापटिलाभनिमित्तवचनपरियोसानदस्सनो। तदवसानो हि तस्स भिक्खुभावो। तेनेवाह **"एहि भिक्खूति भगवतो वचनेन अभिनिप्फन्ना साव तस्स आयस्मतो एहिभिक्खूपसम्पदा अहोसी"** ति। **चर ब्रह्मचरियं** ति उपरिमग्गत्तयसङ्खातं ब्रह्मचरियं समधिगच्छ। किमत्थं ? **सम्मा दुक्खस्स अन्तकिरियाय**। इधापि "अवोचा" ति सम्बन्धितब्बा। "नव कोटिसहस्सानी"ति आदिना[2] वुत्तप्पभेदानं अनेकसहस्सानं संवरविनयानं समादियित्वा वत्तनेन उपरिभूता अग्गभूता सम्पदाति **उपसम्पदा**।

१९॥ **नीहारभत्तो** ति नीहटभत्तो, गामतो भिक्खं नीहरित्वा भिक्खूहि दिन्नभत्तो ति अत्थो। भगवा हि दहरकुमारके विय ते भिक्खू परिहरन्तो पाटिपददिवसतो पट्ठाय पिण्डपातत्थायपि गामं अपविसित्वा अन्तोविहारेयेव वसि। B. 183

धम्मचक्कप्पवत्तनसुत्तवण्णना निट्ठिता।

अनत्तलक्खणसुत्तवण्णना

२०॥ **आमन्तेसीति** आसाळ्हीपुण्णमदिवसे धम्मचक्कप्पवत्तनतो पट्ठाय अनुक्कमेन सोतापत्तिफले पतिट्ठिते अञ्ञासिकोण्डञ्ञप्पमुखे पञ्चवग्गिये "इदानि तेसं आसवक्खयाय धम्मं देसेस्सामी"ति पञ्चमिया पक्खस्स आमन्तेसि। **अनत्ता** ति

---

1. वास्स (स्या)।
2. विसुद्धि-१-४४, पटिसं-ट्ठ-१-१८८ पिट्ठेसु।

अवसवत्तनट्ठेन असामिकट्ठेन सुञ्ञतट्ठेन अत्तपटिक्खेपट्ठेनाति एवं चतूहि कारणेहि अनत्ता । तत्थ "उप्पन्नं रूपं ठितिं मा पापुणातु[1], ठानप्पत्तं मा जीरतु, जरप्पत्तं मा भिज्जतु, उदयब्बयेहि मा किलमयतू" ति न एत्थ कस्सचि वसीभावो अत्थि, स्वायमस्स **अवसवत्तनट्ठो** । सामिभूतस्स कस्सचि अभावो **असामिकट्ठो** । निवासी-कारकवेदकअधिट्ठायकविरहेन ततो सुञ्ञता **सुञ्ञतट्ठो** । परपरिकप्पितअत्तसभावाभावो एव **अत्तपटिक्खेपट्ठो** । इदानि अनत्ततंयेव विभावेतुं **"रूपञ्च हिदं भिक्खवे"** तिआदिमाह। तत्थ **अत्ता अभविस्सा** ति कारको वेदको सयंवसीति एवंभूतो अत्ता अभविस्साति अधिप्पायो । एवञ्हि सति रूपस्स आबाधाय संवत्तनं अयुज्जमानकं सिया । कामञ्चेत्थ "यस्मा च खो भिक्खवे रूपं अनत्ता, तस्मा रूपं आबाधाय संवत्तती" ति रूपस्स अनत्तताय दुक्खता विभाविता विय दिस्सति, तथापि "यस्मा रूपं आबाधाय संवत्तति, तस्मा अनत्ता "ति पाकटाय साबाधताय रूपस्स अत्तसाराभावो विभावितो, ततो एव च "न लब्भति रूपे" एवं मे रूपं होतु, एवं मे रूपं मा अहोसी" ति रूपे कस्सचि अनिस्सरता तस्स च अवसवत्तनाकारो दस्सितो । **वेदनादीसुपि** एसेव नयो ।

२१॥ **तं किं मञ्ञथ भिक्खवेति** इदं कस्मा आरद्धं ? एत्तकेन ठानेन अनत्त-B. 184 लक्खणमेव कथितं, न अनिच्चदुक्खलक्खणानि, इदानि तानि दस्सेत्वा समोधानेत्वा तीणिपि लक्खणानि दस्सेतुं इदमारद्धं ति वेदितब्बं । **अनिच्चं भन्ते** ति भन्ते यस्मा हुत्वा न होति, तस्मा अनिच्चं । यस्मा पुब्बे असन्तं पच्चयसमवायेन हुत्वा उप्पज्जित्वा पुन भङ्गुपगमनेन न होति, तस्मा न निच्चं "ति अनिच्चं, अद्धुवंति अधिप्पायो । अथ वा उप्पादवयवन्तताय तावकालिकताय विपरिणामकोटिया निच्चपटिक्खेपतोति इमेहिपि कारणेहि **अनिच्चं** । एत्थ खणे खणे उप्पज्जन-वसेन निरुज्झनवसेन च पवत्तनतो **उप्पादवयवन्ता** । तङ्खणिकताय **तावकालिकता** । विपरिणामवन्तताय विपरिणामकोटि । रूपञ्हि उप्पादादिविकारापज्जनेन विपरिणा-मन्तं विनासं पापुणाति । निच्चसभवाभावो एव **निच्चपटिक्खेपो** । अनिच्चा हि धम्मा, तेनेव अत्तनो अनिच्चभावेन अत्थतो निच्चतं पटिक्खिपन्ति नाम ।

दुक्खं भन्ते ति भन्ते पटिपीळनाकारेन दुक्खं । उप्पादजराभङ्गवसेन हि रूपस्स निरन्तरं बाधति, पटिपीळनाकारेनस्स दुक्खता । अथ वा सन्तापट्ठेन दुक्खमट्ठेन दुक्खवत्थुकट्ठेन सुखपटिक्खेपट्ठेन चाति चतूहि कारणेहि दुक्खं । एत्थ च सन्तापो नाम दुक्खदुक्खतादिवसेन सन्तापनं परिदहनं । ततो एवस्स दुस्सहताय **दुक्खमता** । तिस्सन्नं दुक्खतानं संसारदुक्खस्स च अधिट्ठानताय **दुक्खवत्थुकता** । सुखसभावाभावो एव **सुखपटिक्खेपो** । **विपरिणाम धम्मं** ति जराय मरणेन च विपरिणामसभावं । **कल्लं नू** ति युत्तं नु । तं ति एवं अनिच्चं दुक्खं विपरिणामधम्मं रूपं । **एतं ममा** ति

1. ठितिं पापुणातु (स्या) ।

तण्हागाहो ममङ्कारभावतो । **एसोहमस्मीति** मानगाहो अहङ्कारभावतो । **एसो मे अत्ता** ति दिट्ठिगाहो अत्तभावविपल्लासग्गाहतो । **तण्हागाहो** चेत्थ अट्ठसततण्हाविचरित-वसेन, **मानगाहो** नवविधमानवसेन, दिट्ठिगाहो द्वासट्ठिदिट्ठिवसेन वेदितब्बो । इमेसं तिण्णं तण्हामानदिट्ठिगाहानं वसेन युत्तं नु तं समनुपस्सितुं ति वुत्तं होति ।

इति भगवा अनिच्चदुक्खवसेन अनत्तलक्खणंयेव दस्सेसि । भगवा हि कत्थचि अनिच्चवसेन अनत्ततं दस्सेति, कत्थचि दुक्खवसेन, कत्थचि उभयवसेन । तथा हि "चक्खु अत्ता ति यो वदेय्य, तं न उपपज्जति, चक्खुस्स उप्पादोपि वयोपि पञ्ञायति । यस्स खो पन उप्पादोपि वयोपि पञ्ञायति, "अत्ता मे उप्पज्जति चेव वेति चा" ति इच्चस्स एवमागतं, होति, तस्मा तं न उपपज्जति ।" चक्खु अत्ता" तिं B. 185 यो वदेय्य, इति चक्खु अनत्ता" ति इमस्मिञ्च **छछक्कसुत्ते**[1] अनिच्चवसेन अनत्ततं दस्सेसि । "रूपञ्च हिदं भिक्खवे अत्ता अभविस्स......पें०.....एवं मे रूपं मा अहोसी"ति इमस्मिं येव अनत्तलक्खणसुत्ते दुक्खवसेन अनत्ततं दस्सेसि । "रूपं भिक्खवे अनिच्चं, यदनिच्चं तं दुक्खं, यं दुक्खं तदनत्ता, यदनत्ता, तं "नेतं मम, नेसोहमस्मि, न मे सो अत्ता" ति एदमेतं यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय दट्ठब्बं" ति इमस्मिं **अरहन्तसुत्ते**[2] उभयवसेन अनत्ततं दस्सेसि । कस्मा ? अनिच्चं दुक्खञ्च पाकटं, अनत्ता अपाकटं । परिभोग-भाजनादीसु हि भिन्नेसु "अहो अनिच्चं" ति वदन्ति, "अहो अनत्ता" ति पन वत्ता नाम नत्थि । सरीरे गण्डपिळकासु वा उट्ठितासु कण्टकेन वा विद्धा "अहो दुक्खं" ति वदन्ति, "अहो, अनत्ता" ति पन वत्ता नाम नत्थि । कस्मा ? इदञ्हि अनत्तलक्खणं नाम अविभूतं दुद्दसं दुप्पञ्ञापनं । तथा हि सरभङ्गादयोपि सत्थारो नाद्दसंसु, कुतो पञ्ञापना, तेन नं भगवा अनिच्चवसेन वा दुक्खवसेन वा उभयवसेन वा दस्सेसि । तयिदं इमस्मिम्पि तेपरिवट्टे अनिच्चदुक्खवसेनेव दस्सितं । **वेदनादीसुपि** एसेव नयो ।

२२॥ **तस्मातिह** ति तस्मा इच्चेव वुत्तं । **ति**-कार **ह**-कारा निपाता, यस्मा इमे पञ्चक्खन्धा अनिच्चा दुक्खा अनत्ता, तस्मा ति अत्थो । **यं किञ्चीति** अनवसेस-परियादानमेतं । यं ति हि सामञ्ञेन अनियमदस्सनं, **किञ्चीति** पकारतो भेदं आमसित्वा अनियमदस्सनं । उभयेनपि अतीतं वा.......पे०......सन्तिके वा अप्पं वहुं वा यादिसं वा तादिसं वा नुपंसकनिद्देसारहं सब्बं ब्यापेत्वा सङ्गण्हाति, तस्मा अनवसेसपरियादानमेतं "यं किञ्ची"ति । एवञ्च सति अञ्ञेसुपि नपुंसकनिद्देसारहेसु पसङ्गं दिस्वा तत्थ अधिप्पेतत्थं अधिच्च पवत्तनतो अतिप्पसङ्गस्स नियमनत्थं "रूपं" ति वुत्तं । एवं पदद्वयेनपि रूपस्स असेसपरिग्गहो कतो होति । अथस्स

1. म-३-३२९-पिट्ठे ।
2. सं-२-६८-६९ पिट्ठेसु ।

अतीतादिविभागं अरभति **"अतीतानागतपच्चुप्पन्नं"** ति आदिना। तञ्हि किञ्चि अतीतं किञ्चि अनागतादिभेदं ति। एस नयो **वेदनादीसुपि**।

तत्थ रूपं ताव अद्धासन्ततिसमयखणवसेन चतुधा अतीतं नाम होति, तथा B. 186 अनागतपच्चुप्पन्नं। तत्थ **अद्धावसेन** ताव एकस्स एकस्मिं भवे पटिसन्धितो पुब्बे अतीतं, चुतितो उद्धमनागतं, उभिन्नमन्तरे पच्चुप्पन्नं। **सन्ततिवसेन** सभागेकउतुसमुट्ठानएकाहारसमुट्ठानञ्च पुब्बापरियवसेन वत्तमानम्पि पच्चुप्पन्नं, ततो पुब्बे विसभागउतुआहारसमुट्ठानं अतीतं, पच्छा अनागतं। चित्तजं एकवीथिएकजवनएकसमापत्तिसमुट्ठानं पच्चुप्पन्नं, ततो पुब्बे अतीतं, पच्छा अनागतं। कम्मसमुट्ठानस्स पाटियेक्कं सन्ततिवसेन अतीतादिभेदो नत्थि। तेसंयेव पन उतुआहारचित्तसमुट्ठानानं उपत्थम्भकवसेन तस्स अतीतादिभावो वेदितब्बो। **समयवसेन** एकमुहुत्तपुब्बण्हसायन्हरत्तिदिवादीसु समयेसु सन्तानवसेन पवत्तमानं तं तं समयवन्तं रूपं पच्चुप्पन्नं नाम, ततो पुब्बे अतीतं, पच्छा अनागतं। खणवसेन उप्पादादिक्खणत्तयपरियापन्नं पच्चुप्पन्नं, ततो पुब्बे अतीतं, पच्छा अनागतं, इदमेवेत्थ निप्परियायं, सेसा परियायकथा।

अज्झत्तं वा बहिद्धा वा ति चक्खादिपञ्चविधं रूपं अत्तभावं अधिकिच्च पवत्तत्ता अज्झतं, सेसं ततो बाहिरत्ता बहिद्धा। अपि च नियकज्झत्तम्पि इध अज्झत्तं, परपुग्गलिकम्पि च बहिद्धा ति वेदितब्बं। **ओळारिकं वा सुखुमं वा** ति चक्खादीनि नव, आपोधातुवज्जा तिस्सो धातुयो चाति द्वादसविधं रूपं घट्टनवसेन गहेतब्बतो ओळारिकं, सेसं ततो विपरीतत्ता सुखुमं। **हीनं वा पणीतं वा** ति एत्थ हीनपणीतभावो परियायतो निप्परियायतो च। तत्थ अकनिट्ठानं रूपतो सुदस्सीनं रूपं हीनं, तदेव सुदस्सानं रूपतो पणीतं। एवं याव नरकसत्तानं रूपं, ताव परियायतो हीनपणीतता वेदितब्बा। निप्परियायतो पन यं आरम्मणं कत्वा अकुसलविपाकविञ्ञाणं उप्पज्जति, तं हीनं अनिट्ठभावतो। यं पन आरम्मणं कत्वा कुसलविपाकविञ्ञाणं उप्पज्जति, तं पणीतं इट्ठभावतो। यथा हि अकुसलविपाको सयं अनिट्ठो अनिट्ठे एव उप्पज्जति, न इट्ठे, एवं कुसलविपाकोपि सयं इट्ठो इट्ठेयेव उप्पज्जति, न अनिट्ठे। यं दूरे सन्तिके वा ति यं सुखुमं, तदेव दुप्पटिविज्झसभावत्ता दूरे, इतरं सुप्पटिविज्झसभावत्ता सन्तिके। अपिचेत्थ ओकासतो पि उपादायुपादाय दूरसन्तिकता वेदितब्बा। तं सब्बं ति तं अतीतादीहि पदेहि विसुं निद्दिट्ठं सब्बं रूपं। **सम्मप्पञ्ञाय दट्ठब्बं** ति सहविपस्सनाय मग्गपञ्ञाय दट्ठब्बं।

B. 187 **या काचि वेदना** ति आदीसु पन सन्ततिवसेन च खणवसेन च वेदनाय अतीतानागतपच्चुप्पन्नभावो वेदितब्बो। तत्थ[1] सन्ततिवसेन एकवीथिएकजवन-

1. विसुद्धि-२-१०४-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

एकसमापत्तिपरियापन्ना एकविधविसयसमायोगप्पवत्ता च दिवसम्पि बुद्धरूपं पस्सन्तस्स धम्मं सुणन्तस्स पवत्तसद्धादिसहितवेदना पच्चुप्पन्ना, ततो पुब्बे अतीता, पच्छा अनागता। खणवसेन खणत्तयपरियापन्ना पच्चुप्पन्ना, ततो पुब्बे अतीता, पच्छा अनागता। अज्झत्तबहिद्धाभेदो नियकज्झत्तवसेन वेदितब्बो। ओळारिकसुखुमभेदो "अकुसला वेदना ओळारिका, कुसलाब्याकता वेदना सुखमा" ति आदिना नयेन विभङ्गे[1] वुत्तेन जातिसभावपुग्गललोकियलोकुत्तरवसेन वेदितब्बो। **जातिवसेन** ताव अकुसलवेदना सावज्जकिरियहेतुतो किलेससन्तापसभावतो च अवूपसन्तवुत्तीति कुसलवेदनाय ओळारिका, सब्यापारतो सउस्साहतो सविपाकतो किलेससन्तापसभाव-तो सावज्जतो च विपाकाब्याकताय ओळारिका, सविपाकतो किलेससन्तापसभावतो सब्यापज्जतो सावज्जतो च किरियाब्याकताय ओळारिका, कुसलाब्याकता पन वुत्तविपरियायतो अकुसलाय सुखुमा। द्वेपि कुसलाकुसलवेदना सब्यापारतो सउस्साहतो सविपाकतो च यथायोगं दुविधायपि अब्याकताय ओळारिका, वुत्तविपरियायेन दुविधापि अब्याकता ताहि सुखुमा। एवं ताव जातिवसेन ओळारि-कसुखुमता वेदितब्बा।

सभावसेन पन दुक्खवेदना निरस्सादतो सविप्फारतो[2] उब्बेजनीयतो अभि-भवनतो च इतराहि द्वीहि ओळारिका, इतरा पन द्वे सातता सन्ततो पणीततो मनापतो मज्झत्ततो च यथायोगं दुक्खाय सुखुमा। उभो पन सुखदुक्खा सविप्फारतो खोभकरणतो पाकटतो च अदुक्खमसुखाय ओळारिका, सा वुत्तविपरियायेन तदुभयतो सुखुमा। एवं सभाववसेन ओळारिकसुखुमता वेदितब्बा। **पुग्गलवसेन** पन असमापन्नस्स वेदना नानारम्मणविक्खित्तभावतो समापन्नस्स वेदनाय ओळारिका, विपरियायेन इतरा सुखमा। एवं पुग्गलवसेन ओळारिकसुखुमता वेदितब्बा। **लोकियलोकुत्तरवसने** पन सासवा वेदना लोकिया। सा आसवुप्पत्तिहेतुतो ओघनियतो योगनियतो गन्थनियतो नीवरणीयतो उपादानियतो संकिलेसिकतो पुथुज्जन-साधारणतो च अनासवाय ओळारिका, सा विपरियायेन सासवाय सुखुमा। एवं लोकियलोकुत्तरवसेन ओळारिकसुखुमता वेदितब्बा। B. 188

तत्थ जातिआदिवसेन सम्भेदो परिहरितब्बो। अकुसलविपाककायविञ्ञाण-सम्पयुत्ता हि वेदना जातिवसेन अब्याकतत्ता सुखुमा पि समानासभावादिवसेन ओळारिका होति। वुत्तञ्हेतं "अब्याकता वेदना सुखुमा, दुक्खा वेदना ओळारिका। असमापन्नस्स वेदना ओळारिका, सासवा वेदना ओळारिका" ति[3]। यथा च

1. अभि-२-४-पिट्ठे।
2. अविप्फारतो (स्या)।
3. अभि-२-४-पिट्ठे।

दुक्खवेदना, एवं सुखादयोपि जातिवसेन ओळारिका, सभावादिवसेन सुखुमा होन्ति। तस्मा यथा जातिआदिवसेन सम्भेदो न होति। तथा वेदनानं ओळारिकसुखुमता वेदितब्बा। सेय्यथिदं ? अब्याकता जातिवसेन कुसलाकुसलाहि सुखुमा। न तत्थ "कतमा अब्याकता, किं दुक्खा, किं सुखा, किं समापन्नस्स, किं असमापन्नस्स, किं सासवा, किं अनासवा" ति एवं सभावादिभेदो परामसितब्बो। एस नयो सब्बत्थ।

अपि च "तं तं वा पन वेदनं उपादायुपादाय वेदना ओळारिका सुखुमा दट्ठब्बा"-ति[1] वचनतो अकुसलादीसुपि लोभसहगताय दोससहगतवेदना अग्गि विय अत्तनो निस्सयदहनतो ओळारिका, लोभसहगता सुखुमा। दोससहगतापि नियताओळारिका, अनियता सुखुमा। नियतापि कप्पट्ठितिका ओळारिका, इतरा सुखुमा। कप्पट्ठितिकासुपि असङ्खारिका ओळारिका, इतरा सुखुमा। लोभसहगता पन दिट्ठिसम्पयुत्ता ओळारिका, इतरा सुखुमा। सापि नियता कप्पट्ठितिका असङ्खारिका ओळारिका, इतरा सुखुमा, अविसेसेन अकुसला बहुविपाका ओळारिका, अप्पविपाका सुखुमा। कुसला पन अप्पविपाका ओळारिका, बहुविपाका सुखुमा।

अपि च कामावचरकुसला ओळारिका, रूपावचरा सुखुमा, ततो अरूपावचरा, ततो लोकुत्तरा। कामावचरा च दानमया ओळारिका, सीलमया सुखुमा, ततो B. 189 भावनामया। भावनामयापि दुहेतुका ओळारिका, तिहेतुका सुखुमा। तिहेतुकापि ससङ्खारिका ओळारिका, असङ्खारिका सुखुमा। रूपावचरा पठमज्झानिका ओळारिका.......पे०.......पञ्चमज्झानिका सुखुमा। अरूपावचरा आकासानञ्चायतनसम्पयुत्ता ओळारिका......पे०......नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसम्पयुत्ता सुखुमाव। लोकुत्तरा च सोतापत्तिमग्गसम्पयुत्ता ओळारिका......पे०......अरहत्तमग्गसम्पयुत्ता सुखुमाव। एस नयो तं तं भूमिविपाककिरियवेदनासु दुक्खादिअसमापन्नादिसासवादिवसेन वुत्तवेदानासु च।

ओकासवसेन चापि निरये दुक्खा ओळारिका, तिरच्छानयोनियं सुखुमा......पे०..... परनिम्मितवसवत्ती सुखुमाव। यथा च दुक्खा, एवं सुखापि सब्बत्थ यथानुरूपं योजेतब्बा। **वत्थुवसेन** चापि हीनवत्थुका या काचि वेदना ओळारिका, पणीतवत्थुका सुखुमा। हीनप्पणीतभेदे या ओळारिका, सा हीना। या च सखुमा, सा पणीताति वेदितब्बा। दूरपदं पन अकुसला वेदना कुसलाब्याकताहि वेदनाहि दूरे, सन्तिकपदं अकुसला वेदना अकुसलाय वेदनाय सन्तिके ति आदिना नयेन विभत्तं। तस्मा अकुसला वेदना विसभागतो असंसट्ठतो असरिक्खतो च कुसलाब्याकताहि दूरे, तथा कुसलाब्याकता अकुसलाय। एस नयो सब्बवारेसु। अकुसला पन वेदना सभागतो

---

1. अभि-२-४-पिट्ठे।

च संसट्ठतो च सरिक्खतो च अकुसलाय सन्तिके ति । तं तं वेदनासम्पयुत्तानं पन सञ्ञादीनम्पि एवमेव वेदितब्बं ।

२३॥ **सुतवा** ति आगमाधिगमसङ्खातेन बाहुसच्चेन समन्नागतत्ता सुतवा । **निब्बिन्दतीति** उक्कण्ठति । एत्थ च निब्बिदा ति वुट्ठानगामिनीविपस्सना अधिप्पेता । निब्बिन्दं **विरज्जतीति** एत्थ विरागवसेन चत्तारो मग्गा कथिता । विरागा विमुच्चतीति विरागेन मग्गेनेव हेतुभूतेन पटिप्पस्सद्धिविमुत्तिवसेन विमुच्चति । इमिना चत्तारि सामञ्ञफलानि कथितानि । **विमुत्तस्मिं विमुत्तमिति ञाणं होतीति** इमिना पन पच्चवेक्खणञाणं कथितं । खीणा जातीति आदीहि तस्स भूमि । तेन हि ञाणेन अरियसावको पच्चवेक्खन्तो "खीणा जाती"तिआदीनि पजानाति । कतमा पनस्स जाति खीणा, कथञ्च नं पजानातीति ? न तावस्स अतीता जाति खीणा पुब्बेव खीणत्ता, न अनागता अनागते वायामाभावतो, न पच्चुप्पन्ना । या पन मग्गस्स अभावितत्ता उप्पज्जेय्य एकचतुपञ्चवोकारभवेसु एकचतुपञ्चक्खन्धप्पभेदा जाति, सा मग्गस्स भावितत्ता अनुप्पादधम्मतं आपज्जनेन खीणा, तं सो मग्गभावनाय B. 190 पहीनकिलेसे पच्चवेक्खित्वा किलेसाभावे विज्जमानम्पि कम्मं आयतिं अप्पटिसन्धिकं होतीति जानन्तो पजानाति ।

वुसितं ति वुत्थं परिवुत्थं, कतं चरितं निट्ठितं ति अत्थो । ब्रह्मचरियं ति मग्गब्रह्मचरियं । पुथुज्जनकल्याणकेन हि सद्धिं सत्त सेक्खा मग्गब्रह्मचरियं वसन्ति नाम, खीणासवो वुत्थवासो, तस्मा अरियसावको अत्तनो ब्रह्मचरियवासं पच्चवेक्खन्तो "वुसितं ब्रह्मचरियं" ति पजानाति । **कतं करणीयं** ति चतूसु सच्चेसु चतूहि मग्गेहि परिञ्ञापहानसच्छिकिरियाभावनावसेन सोळसविधम्पि किच्चं निट्ठापितं ति अत्थो । पुथुज्जनकल्याणकादयो हि तं किच्चं करोन्ति, खीणासवो कतकरणीयो । तस्मा अरियसावको अत्तनो करणीयं पच्चवेक्खन्तो "कतं करणीयं" ति पजानाति । **नापरं इत्थत्ताया** ति इदानि पुन इत्थभावाय एवंसोळसकिच्चभावाय, किलेसक्खयाय वा मग्गभावनाकिच्चं मे नत्थीति पजानाति । अथ वा इत्थत्ताया ति इत्थभावा[1] इमस्मा एवंपकारा इदानि वत्तमानक्खन्धसन्ताना अपरं खन्धसन्तानं मय्हं नत्थि, इमे पन पञ्चक्खन्धा परिञ्ञाता तिट्ठन्ति छिन्नमूलका रुक्खा विय । ते चरिमकविञ्ञाणनिरोधेन अनुपादानो विय जातवेदो निब्बायिस्सन्तीति पजानाति ।

२४॥ **अत्तमना ते[2] भिक्खू भगवतो भासितं अभिनन्दुं** ति ते भिक्खू सकमना तुट्ठमना, पीतिसोमनस्सेहि वा समत्तमना[3] हुत्वा करवीकरुतमञ्जुना कण्णसुखेन

1. इत्थभावतो (दी-ट्ठ-१-२०२, म-ट्ठ-१-१३२-पिट्ठेसु ।
2. पञ्चवग्गिया (पाळियं) ।
3. सम्पत्तमना (स्या) सम्पयुत्तमना (म-ट्ठ१-९०-पिट्ठे ।

पण्डितजनहदयानं अमताभिसेकसदिसेन ब्रह्मस्सरेन भासतो भगवतो वचनं सुकथितं सुलपितं "एवमेतं भगवा, एवमेतं सुगता" ति मत्थकेन सम्पटिच्छन्ता अनुमोदिंसु चेव सम्पटिच्छिंसु चाति अत्थो। अयञ्हि **अभिनन्द**-सद्दो "अभिनन्दति अभिवदती" ति आदीसु[1] तण्हायपि आगतो। "अन्नमेवाभिनन्दन्ति, उभये देवमानुसा" ति आदीसु[2] उपगमनेपि।

"चिरप्पवासिं पुरिसं, दूरतो सोत्थिमागतं।
ञातिमित्ता सुहज्जा च, अभिनन्दन्ति आगतं" ति[3]-

B. 191 आदीसु सम्पटिच्छनेपि। "अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा" ति आदीसु[4] अनुमोदनेपि। स्वायमिध अनुमोदनसम्पटिच्छनेसु युज्जति। तेन वुत्तं "अनुमोदिंसु चेव सम्पटिच्छिंसु चा" ति। **अनुपादाय आसवेहि चित्तानि विमुच्चिंसूति** अनुप्पादनिरोधेन निरुज्झमानेहि आसवेहि अनुपादाय अग्गहेत्वा कञ्चि धम्मं "अहं ममा" ति अनादियित्वाव चित्तानि विमुच्चिंसु। **छ अरहन्तो** ति भगवता सद्धिं छ जना अरहन्तो। अञ्ञेसं पन वदेब्रह्मानम्पि अरहत्तप्पत्तिसम्भवतो इदं मनुस्सअरहन्तेयेव सन्धाय वुत्तं ति आह **"छ मनुस्सा अरहन्तो होन्ती"** ति।

अनत्तलक्खणसुत्तवण्णना निट्ठिता।

पञ्चवग्गियकथा निट्ठिता।

यसस्स पब्बज्जाकथावण्णना

२५॥ इदानि यसस्स पब्बज्जं दस्सेतुं **"तेन खो पन समयेना"** ति आदि आरद्धं। तत्रायं अनुत्तानपदवण्णना-**हेमन्तिको** ति आदीसु[5] यत्थ सुखं होति हेमन्तकाले वसितुं, अयं हेमन्तिको। इतरेसुपि एसेव नयो। अयं पनेत्थ वचनत्थो–हमन्ते वासो हेमन्तं उत्तरपदलोपेन, हेमन्तं अरहतीति **हेमन्तिको**। इतेरेसुपि एसेव नयो। तत्थ वस्सिको पासादो नातिउच्चो होति नातिनीचो, द्वारवातपानानिपिस्स नातिबहूनि नातितनूनि, भूमत्थरणपच्चत्थरणखज्जभोज्जानिपेत्थ मिस्सकानेव वट्टन्ति। हेमन्तिके थम्भापि भित्तियोपि नीचा होन्ति, द्वारवातपानानि तनुकानि सुखुमछिद्दानि, उण्हप्पवेसनत्थाय

---

1. सं-२-१२-३११-३२१-पिट्ठादीसु।
2. सं-१-२९-पिट्ठे।
3. खु-१-४५, खु-२-७३-पिट्ठेसु।
4. म-१-१६०-पिट्ठे।
5. दी-ट्ठ २-४५, अं-ट्ठ२-१२६-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

भित्तिनिय्यूहानि हरियन्ति, भूमत्थरणपच्चत्थरणनिवासनपारुपनानि पनेत्थ उण्ह-विकिरियानि कम्बलादीनि वट्टन्ति, खज्जभोज्जं सिनिद्धं कटुकसन्निस्सितञ्च । गिम्हिके थम्भापि भित्तियोपि उच्चा होन्ति, द्वारवातपानानि पनेत्थ बहूनि विपुलजातानि होन्ति, भूमत्थरणानि सीतविकिरियानि दुकूलमयानि वट्टन्ति, खज्जभोज्जानि मधुररससीतविकिरियानि, वातपानसमीपेसु चेत्थ नवा चाटियो ठपेत्वा उदकस्स पूरेत्वा नीलुप्पलादीहि सञ्छादेन्ति, तेसु तेसु पदेसेसु उदकयन्तानि करोन्ति, येहि देवे वस्सन्ते विय उदकधारा निक्खमन्ति ।

निप्पुरिसेहीति पुरिसविरहितेहि । न केवलञ्चेत्थ तूरियानेव निप्पुरिसानि, B. 192 सब्बट्ठानानिपि निप्पुरिसानेव । दोवारिकापि इत्थियोव, नहापनादिपरिकम्मकरापि इत्थियोव । पिता किर "तथारूपं इस्सरियसुखसम्पत्तिं अनुभवमानस्स पुरिसं दिस्वा परिसङ्का उप्पज्जति, सा मे पुत्तस्स मा अहोसी"ति सब्बकिच्चेसु इत्थियोव ठपापेसि । **पञ्चहि कामगुणेहीति** रूपसद्दादीहि पञ्चहि कामकोट्ठासेहि । **समप्पितस्साति** सम्मा अप्पितस्स, उपेतस्साति अत्थो । **समङ्गीभूतस्सा** ति तस्सेव वेवचनं । **परिचारय-मानस्साति** परितो चारयमानस्स, तस्मिं तस्मिं कामगुणे इन्द्रियानि चारयमानस्सा ति अत्थो । **आळम्बरं** ति पणवं । **विकेसिकं** ति मुत्तकेसं, विप्पकिण्णकेसं ति अत्थो । **विक्खेळिकं** ति विस्सन्दमानलालं । **विप्पलपन्तियो** ति विरुद्धं पलपन्तियो वा रुदन्तियो वा । **सुसानं मञ्ञे** ति आमकसुसानं विय अद्दस सकं परिजनं ति सम्बन्धो । **उदानं उदानेसीति** संवेगवसेन उदानं उदानेसि, संवेगवसप्पवत्तं वाचं निच्छारेसीति अत्थो ।

२६॥ **इदं खो यसा** ति भगवा निब्बानं सन्धायाह । तञ्हि तण्हादीहि किलेसेहि अनुपद्दुतं अनुपस्सट्ठञ्च । **अनुपुब्बिं कथं** ति[1] दानान्तरं सीलं, सीलानन्तरं सग्गं, सग्गानन्तरं मग्गं ति एवमनुपटिपाटिकथं । तत्थ **दानकथा** नाम "इदं दानं नाम सुखानं निदानं, सम्पतीनं मूलं, भोगानं पतिट्ठा, विसमगतस्स ताणं लेणं गति परायणं, इधलोकपरलोकेसु दानसदिसो अवस्सयो पतिट्ठा आरम्मणं[2] ताणं लेणं गति परायणं नत्थि । इदञ्हि अवस्सयट्ठेन रतनमयसीहासनसदिसं, पतिट्ठानट्ठेन महापथवीसदिसं, आरम्मणट्ठेन[3] आलम्बनरज्जुसदिसं, इदञ्हि दुक्खनित्थरणट्ठेन नावा, समस्सासनट्ठेन सङ्गामसूरो, भयपरित्ताणट्ठेन सुसङ्खतनगरं, मच्छेरमलादीहि अनुपलित्तट्ठेन पदुमं, तेसं निदहनट्ठेन अग्गि, दुरासदट्ठेन आसीविसो, असन्तासनट्ठेन सीहो, बलवन्तट्ठेन हत्थी, अभिमङ्गलसम्मतट्ठेन सेतउसभो, खेमन्तभूमिसम्पापनट्ठेन वलाहको अस्सराजा । दानं नामेतं मया गतमग्गो, मय्हेवेसो वंसो, मया दस पारमियो पूरेन्तेन वेलाममहायञ्ञा

---

1. दी. ट्ठ. २-६२, म-ट्ठ-३-६४ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. आलम्बनं (?) ।
3. आलम्बनट्ठेन (?) ।

महागोविन्दमहायञ्ञा महासुदस्सनमहायञ्ञा वेस्सन्तरमहायञ्ञाति अनेके महायञ्ञा B. 193 पवत्तिता, ससभूतेन जलिते अग्गिक्खन्धे अत्तानं निय्यातेन्तेन सम्पत्तयाचकानं चित्तं गहितं। दानञ्हि लोके सक्कसम्पत्तिं देति, मारसम्पत्तिं ब्रह्मसम्पत्तिं चक्कवत्तिसम्पत्तिं सावकपारमिञाणं पच्चेकबोधिञाणं अभिसम्बोधिञाणं देती" ति एवमादिना दानगुणप्पटिसंयुत्तकथा।

यस्मा पन दानं ददन्तो सीलं समादातुं सक्कोति, तस्मा तदनन्तरं सीलकथं कथेसि। दानञ्हि नाम दक्खिणेय्येसु हितज्झासयेन पूजनज्झासयेन वा अत्तनो सन्तकस्स परेसं परिच्चजनं, तस्मा दायको सत्तेसु एकन्तहितज्झासयो पुरसिपुग्गलो, परेसं वा सन्तकं[1] हरतीति अट्ठानमेतं। तस्मा दानं ददन्तो सीलं समादातुं सक्कोतीति दानानन्तरं सीलं वुत्तं। अपि च **दानकथा** ताव पचुरजनेसुपि पवत्तिया सब्बसाधारणत्ता सुकरत्ता सीले पतिट्ठानस्स उपायभावतो च आदितो कथिता। परिच्चागसीलो हि पुग्गलो परिग्गहवत्थूसु निस्सङ्गभावतो सुखेनेव सीलानि समादियति, तत्थ च सुप्पतिट्ठितो होति। सीलेन दायकपटिग्गाहकविसुद्धितो परानुग्गहं वत्वा परपीळानिवत्तिवचनतो किरियधम्मं वत्वा अकिरियधम्मवचनतो भोगयससम्पत्तिहेतुं वत्वा भवसम्पत्तिहेतुवचनतो च दानकथानन्तरं सीलकथा कथिता।

सीलकथा नाम "सीलं नामेतं अवस्सयो पतिट्ठा आरम्मणं ताणं लेणं गति परायणं। सीलं नामेतं मम वंसो, अहं सङ्खपालनागराजकाले भूरिदत्तनागराजकाले चम्पेय्यनागराजकाले सीलवराजकाले मातुपोसकहत्थिराजकाले छद्दन्तहत्थिराजकालेति अनन्तेसु अत्तभावेसु सीलं परिपूरेसिं। इधलोकपरलोकसम्पत्तीनञ्हि सीलसदिसो अवस्सयो सीलसदिसा पतिट्ठा आरम्मणं ताणं लेणं गति परायणं नत्थि, सीलालङ्कारसदिसो अलङ्कारो नत्थि, सीलपुप्फसदिसं पुप्फं नत्थि, सीलगन्धसदिसो गन्धो नत्थि। सीलालङ्कारेन हि अलङ्कतं सीलकुसुमपिळन्धनं सीलगन्धानुलित्तं सदेवकोपि लोको ओलोकेन्तो तित्तिं न गच्छती" ति एवमादि सीलगुणप्पटिसंयुत्तकथा।

इदं पन सीलं निस्साय अयं सग्गो लब्भतीति दस्सनत्थं सीलानन्तरं सग्गकथं B. 194 कथेसि। **सग्गकथा** नाम "अयं सग्गो नाम इट्ठो कन्तो मनापो, निच्चमेत्थ कीळा, निच्चं सम्पत्तियो लब्भन्ति, चातुमहाराजिका देवा नवुतिवस्ससतसहस्सानि दिब्बसुखं दिब्बसम्पत्तिं पटिलभन्ति, तावतिंसा तिस्सो च वस्सकोटियो सट्ठि च वस्ससतसहस्सानी"ति एवमादिसग्गगुणपटिसंयुत्तकथा। सग्गसम्पत्तिं कथयन्तानञ्हि बुद्धानं

---

1. पुरिसपुग्गलो परे हन्ति, परेसं वा सन्तकं (स्या)।

मुखं नप्पहोति । वुत्तम्पि चेतं "अनेकपरियायेन खो अहं भिक्खवे सग्गकथं कथेय्यं" ति आदि ।

एवं सग्गकथाय पलोभेत्वा पुन हत्थिं अलङ्करित्वा तस्स सोण्डं छिन्दन्तो विय अयम्पि सग्गो अनिच्चो अद्धुवो, न एत्थ छन्दरागो कातब्बोति दस्सनत्थं "अप्पस्सादा कामा बहुदुक्खा बहुपायासा, आदीनवो एत्थ भिय्यो" ति आदिना[1] नयेन कामानं आदीनवं ओकारं संकिलेसं कथेसि । तत्थ **आदीनवो** ति दोसो, अनिच्चतादिना अप्पस्सादतादिना च दूसितभावो ति अत्थो । अथ वा आदीनं वाति पवत्ततीति आदीनवो, परमकपणता । तथा च कामा यथाभूतं पच्चवेक्खन्तानं पच्चुपतिट्ठन्ति । **ओकारो** ति लामकभावो निहीनभावो असेट्ठेहि सेवितब्बता सेट्ठेहि न सेवितब्बता च । **संकिलेसो** ति तेहि सत्तानं संकिलिस्सनं, विबाधेतब्बता उपतापेतब्बताति अत्थो ।

एवं कामादीनवेन तज्जेत्वा **नेक्खम्मे आनिसंसं पकासेसि** । यत्तका च कामेसु आदीनवा, पटिपक्खतो तत्तकाव नेक्खम्मे आनिसंसा । अपि च "नेक्खम्मं नामेतं असम्बाधं असंकिलिट्ठं, निक्खन्तं कामेहि, निक्खन्तं कामसञ्ञाय, निक्खन्तं कामवितक्केहि, निक्खन्तं कामपरिळाहेहि, निक्खन्तं ब्यापारतो" ति आदिना नयेन नेक्खम्मे आनिसंसं पकासेसि, पब्बज्जाय झानादीसु च गुणे विभावेसि वण्णेसि । एत्थ च सग्गं कथेत्वा स्वायं सग्गो रागादीहि उपक्किलिट्ठो, सब्बथापि अनुपक्किलिट्ठो अरियमग्गो ति दस्सनत्थं सग्गानन्तरं मग्गो कथेतब्बो । मग्गञ्च कथेन्तेन तदधिगमुपायसन्दस्सनत्थं सग्गपरियापन्नापि पगेव इतरे सब्बेपि कामा नाम बह्वादीनवा अनिच्चा अद्धुवा विपरिणामधम्मा ति कामानं आदीनवो, हीना गम्मा पोथुज्जनिका अनरिया अनत्थसञ्हिताति लेसं ओकारो लामकभावो, सब्बेपि भवा किलेसानं वत्थुभूताति तत्थ संकिलेसो, सब्बसंकिलेसविप्पमुत्तं निब्बानं ति नेक्खम्मे B. 195 आनिसंसो च कथेतब्बो ति कामेसु आदीनवो ओकारो संकिलेसो नेक्खम्मे च आनिसंसो पकसितो ति दट्ठब्बं ।

कल्लचित्तं ति कम्मनियचित्तं, हेट्ठा पवत्तितदेसनाय अस्सद्धियादीनं चित्तदोसानं विगतत्ता उपरिदेसनाय भाजनभावूपगमनेन कम्मक्खमचित्तं ति अत्थो । अस्सद्धियादयो वा यस्मा चित्तस्स रोगभूता तदा तस्स विगता, तस्मा कल्लचित्तं अरोगचित्तं ति अत्थो । दिट्ठिमानादिकिलेसविगमेन **मुदुचित्तं**, कामच्छन्दादिविगमेन **विनीवरणचित्तं**, सम्मापटिपत्तियं उळारपीतिपामोज्जयोगेन **उदग्गचित्तं** । तत्थ सद्धासम्पत्तिया पसन्नचित्तं यदा भगवा अञ्ञासीति सम्बन्धो । अथ वा **कल्लचित्तं** ति कामच्छन्दविगमेन अरोगचित्तं । **मुदुचित्तं** ति ब्यापादविगमेन मेत्तावसेन अकठिन-

---

1. म-१-१२६, वि-२-१७६-पिट्ठेसु ।

चित्तं । **विनीवरणचित्तं** ति उद्धच्चकुक्कुच्चविगमेन विक्खेपस्स विगतत्ता तेन अपिहितचित्तं । **उदग्गचित्तं** ति थिनमिद्धविगमेन सम्पग्गहवसेन अलीनचित्तं । **पसन्नचित्तं** ति विचिकिच्छाविगमेन सम्मापटिपत्तियं अधिमुत्तचितं" ति एवम्पेत्थ अत्थो वेदितब्बो । **सामुक्कंसिका** ति सामं उक्कंसिका, अत्तनायेव उद्धरित्वा गहिता, सयम्भूञाणेन दिट्ठा असाधारणा अञ्ञेसं ति अत्थो । का च पन साति ? अरियसच्चदेसना । तेनेवाह "दुक्खं समुदयं निरोधं मग्गं" ति ।"

सेय्यथापीति आदिना उपमावसेन तस्स किलेसप्पहानं अरियमग्गुप्पादञ्च दस्सेति । **अपगतकाळकं** ति विगतकाळकं । **सम्मदेवा** ति सुट्ठु एव । रजनं ति नीलपीतादिरङ्गजातं । **पटिग्गण्हेय्या** ति गण्हेय्य, पभस्सरं भवेय्य । **तस्मिं येव आसनेति** तस्संयेव निसज्जायं । एतेनस्स लहुविपस्सकता तिक्खपञ्ञता सुखपटिपदखिप्पाभिञ्ञता च दस्सिता होति । **विरजं** ति आदि वुत्तनयमेव । तत्रिदं उपमासंसन्दनं– वत्थं विय चित्तं, वत्थस्स आगन्तुकमलेहि किलिट्ठभावो विय चित्तस्स रागादिमलेहि संकिलिट्ठभावो, धोवनसिला विय अनुपुब्बिकथा, उदकं विय सद्धा, उदकेन तेमेत्वा तेमेत्वा ऊसगोमयछारिकखारकेहि काळकपदेसे सम्मद्दित्वा वत्थस्स धोवनपयोगो विय सद्धासिनेहेन तेमेत्वा तेमेत्वा सतिसमाधिपञ्ञाहि दोसे सिथिले कत्वा सीलसुतादिविधिना[1] चित्तस्स सोधने वीरियारम्भो, तेन पयोगेन वत्थे काळकापगमो B. 196 विय वीरियारम्भेन किलेसविक्खम्भनं, रङ्गजातं विय अरियमग्गो, तेन सुद्धस्स वत्थस्स पभस्सरभावो विय विक्खम्भितकिलेसस्स चित्तस्स मग्गेन परियोदपनं ति ।

२७ ॥ **अस्सदूते** ति आरुळ्हअस्से दूते । **इद्धाभिसङ्खारं** ति इद्धिकिरियं । **अभिसङ्खरेसीति** अभिसङ्खरि, अकासीति अत्थो । किमत्थं ति चे ? उभिन्नं पटिलभितब्बविसेसन्तरायनिसेधनत्थं । यदि हि सो पुत्तं पस्सेय्य, पुत्तस्सपि अरहत्तप्पत्ति सेट्ठिस्सपि धम्मचक्खुपटिलाभो न सिया । अदिट्ठसच्चोपि[2] हि "देहि ते मातुया जीवितं" ति याचन्तो कथञ्हि नाम विक्खेपं पटिबाहित्वा भगवतो धम्मदेसनानुसारेन ञाणं पेसेत्वा धम्मचक्खुं पटिलभेय्य, यसो च एवं तेन याचियमानो कथं तं विक्खेपं पटिबाहित्वा अरहत्ते पतिट्ठहेय्य ।

एतदवोचा ति भगवतो धम्मदेसनं अब्भनुमोदमानो एतं "अभिक्कन्तं भन्ते" ति आदिवचनं अवोच । **अभिक्कन्त**–सद्दो चायमिध अब्भनुमोदने, तस्मा साधु साधु भन्तेति वुत्तं होति ।

"भये कोधे पसंसायं, तुरिते कोतूहलच्छरे ।
हासे सोके पसादे च, करे आमेडितं बुधो" ति–

---

1. सिथिलीकतादिविधिना (स्या) ।
2. दिट्ठसच्चोपि–(क) ।

इमिनाव लक्खणेन इध पसादवसेन पसंसावसेन चायं द्विक्खत्तुं वुत्तोति वेदितब्बो। **सेय्यथापी**ति आदिना चतूहि उपमाहि भगवतो देसनं थोमेति। तत्थ **निक्कुज्जितं** ति अधोमुखठपितं, हेट्ठामुखजातं वा। **उक्कुज्जेय्या** ति उपरिमुखं करेय्य। पटिच्छन्नं ति तिणपण्णादिछादितं। **विवरेय्या** ति उग्घाटेय्य। **मूळ्हस्सा** ति दिसामूळ्हस्स। **मग्गं आचिक्खेय्या** ति हत्थे गहेत्वा "एस मग्गो" ति वदेय्य। **अन्धकारे**ति काळपक्खचातुद्दसी अड्ढरत्तिघनवनसण्डमेघपटलेहि चतुरङ्गतमे।

एवं देसनं थोमेत्वा इमाय देसनाय रतनत्तये पसन्नचित्तो पसन्नाकारं करोन्तो "**एसाहं**" ति आदिमाह। तत्थ **एसाहं** ति एसो अहं। **उपासकं मं भगवा धारेतू**ति मं भगवा "उपासको अयं" ति एवं धारेतु, जानातूति अत्थो। **अज्जतग्गे** ति एत्थायं **अग्ग**–सद्दो आदिअत्थे, तस्मा **अज्जतग्गे** ति अज्जतं आदिं कत्वा ति एवमत्थो B. 197 वेदितब्बो। अज्जतं ति अज्जभावं। "**अज्जदग्गे**" ति वा पाठो, द-कारो पदसन्धिकरो, अज्ज अग्गं कत्वा ति अत्थो। **पाणुपेतं** ति पाणेहि उपेतं। याव मे जीवितं पवत्तति, ताव उपेतं, अनञ्ञसत्थुकं तीहि सरणगमनेहि सरणं गतं उपासकं कप्पियकारकं मं भगवा धारेतु जानातु। अहञ्हि सचेपि मे तिखिणेन असिना सीसं छिन्देय्य, नेव बुद्धं "न बुद्धो"ति वा, धम्मं "न धम्मो" ति वा, संघं "न संघो" ति वा वदेय्यं ति एवं अत्तसन्निय्यातनेन सरणं अगमासि। एवं "अभिक्कन्तं" ति आदीनं अनुत्तानपदत्थो वेदितब्बो, वित्थारो पन हेट्ठा वेरञ्जकण्डवण्णनायं[1] आगतोयेवाति इध न दस्सितो।

२८ ॥ **भूमिं पच्चवेक्खन्तस्सा** ति अत्तना दिट्ठमत्थं पच्चवेक्खन्तस्स। **इद्धाभिसङ्खारं पटिप्पस्सम्भेसी**ति यथा तं सेट्ठि गहपति तत्थ निसिन्नोव यसं कुलपुत्तं पस्सति, तथा अधिट्ठासीति अत्थो। **अधिवासेतू** ति सम्पटिच्छतु। **अज्जतनाया**ति यं मे तुम्हेसु सक्कारं करोतो अज्ज भविस्सति पुञ्ञञ्च पीतिपामोज्जञ्च, तदत्थाय। **अधिवासेसि भगवा तुण्हीभावेना** ति भगवा कायङ्गं वा वाचङ्गं वा अचोपेत्वा अब्भन्तरेयेव खन्तिं करोन्तो तुण्हीभावेन अधिवासेसि, सेट्ठिस्स अनुग्गहत्थं मनसाव सम्पटिच्छीति वुत्तं होति। "**एहि भिक्खू**" **ति भगवा अवोचा** ति तस्स किर इद्धिमयपत्तचीवरस्स उपनिस्सयं ओलोकेन्तो अनेकासु जातीसु चीवरादिअट्ठपरिक्खारदानं दिस्वा "एहि भिक्खू" ति अवोच। सो तावदेव भण्डु कासाववसनो अट्ठहि भिक्खुपरिक्खारेहि सरीरे पटिमुक्केहेव वस्ससट्ठिकत्थेरो[2] विय भगवन्तं नमस्समानोव निसीदि। यो हि चीवरादिके अट्ठ परिक्खारे पत्तचीवरमेव वा सोतापन्नादिअरियस्स पुथुज्जनस्सेव वा सीलसम्पन्नस्स दत्वा "इदं परिक्खारदानं अनागते एहिभिक्खुभावाय पच्चयो होतू" ति पत्थनं पट्ठपेति, तस्स तं सति अधिकारसम्पत्तियं बुद्धानं सम्मुखीभावे इद्धिमयपरिक्खारलाभाय संवत्ततीति वेदितब्बं।

---

1. वि-ट्ठ-१-१३८-पिट्ठे।
2. वस्ससतिकत्थेरो (स्या)।

२९॥ **पणीतेनाति** उत्तमेन । **सहत्था** ति सहत्थेन । **सन्तप्पेत्वा** ति सुट्ठु तप्पेत्वा, परिपुण्णं सुहितं यावदत्थं कत्वा । **सम्पवारेत्वा** ति सुट्ठु पवारेत्वा, अलं अलं ति B. 198 हत्थसञ्ञाय पटिक्खिपापेत्वा । **भुत्ताविं** ति भुत्तवन्तं । **ओनीतपत्तपाणिं** ति पत्ततो ओनीतपाणिं, अपनीतहत्थं ति वुत्तं होति । "ओनित्तपत्तपाणिं" ति पि पाठो, तस्सत्थो–ओनित्तं नानाभूतं विनाभूतं पत्तं पाणितो अस्साति ओनित्तपत्तपाणि, तं **ओनित्तपत्तपाणिं,** हत्थे च पत्तञ्च धोवित्वा एकमन्तं पत्तं निक्खिपित्वा निसिन्नं ति अत्थो । **एकमन्तं निसीदिंसू** ति भगवन्तं एवंभूतं ञत्वा एकस्मिं ओकासे **निसीदिंसू** ति अत्थो । **धम्मिया कथायाति** आदीसु तङ्खणानुरूपाय धम्मिया कथाय दिट्ठधम्मिक-सम्परायिकअत्थं **सन्दस्सेत्वा** कुसले च धम्मे **समादपेत्वा** तत्थ च नं **समुत्तेजेत्वा** सउस्साहं कत्वा ताय च सउस्साहताय अञ्ञेहि च विज्जमानगुणेहि **सम्पहंसेत्वा** धम्मरतनवस्सं वस्सित्वा उट्ठायासना पक्कामि ।

यसस्स पब्बज्जाकथावण्णना निट्ठिता ।

चतुगिहिसहायपब्बज्जाकथावण्णना

३०॥ इदानि तस्स सहायानं पब्बज्जं दस्सेन्तो "अस्सोसुं खो ति आदिमाह । तत्रायं अनुत्तानपदवण्णना–सेट्ठिनो च अनुसेट्ठिनो च येसं कुलानं तानि सेट्ठानुसेट्ठीनि कुलानि, तेसं **सेट्ठानुसेट्ठीनं कुलानं,** पवेणिवसेन आगतेहि सेट्ठीहि च अनुसेट्ठीहि च समन्नागतानं कुलानं ति अत्थो । **विमलो** ति आदीनि तेसं पुत्तानं नामानि । **केसमस्सु ओहारेत्वा** ति केसञ्च मस्सुञ्च ओरोपेत्वा । **कासायानि वत्थानीति** कसायरसपीतानि ब्रह्मचरियं चरन्तानं अनुच्छविकानि वत्थानि । **ओरकोति** ऊनको लामको । सेसमेत्थ वुत्तनयमेव ।

चतुगिहिसहायपब्बज्जाकथावण्णना निट्ठिता ।

पञ्ञासगिहिसहायपब्बज्जाकथावण्णना

३१॥ पञ्ञासमत्तानं गिहिसहायानं पब्बज्जायपि यं वत्तब्बं, तं वुत्तमेव । इमेसं B. 199 पन सब्बेसं पुब्बयोगो वत्तब्बो ति तं दस्सेतुं **"यसआदीनं कुलपुत्तानं अयं पुब्बयोगो"** ति आदिमाह । तत्थ **वग्गबन्धनेना** ति गणबन्धनेन, एकीभूता ति वुत्तं होति । **अनाथसरीरानीति** अनाथानि मतकळेवरानि । **पटिजग्गन्ता** ति बहि नीहरित्वा झापेन्ता ।

पञ्ञासगिहिसहायपब्बज्जाकथावण्णना निट्ठिता ।

मारकथावण्णना

३२॥ इदानि सरणगमनूपसम्पदं दस्सेतुं "अथ खो **भगवा**" ति आदि आरद्धं। तत्रायं अनुपुब्बपदवण्णना[1]-**मुत्ताहं** ति मुत्तो अहं। **चारिकं** ति अनुपुब्बगमनचारिकं, गामनिगमराजधानीसु अनुक्कमेन गमनसङ्खातं चारिकं ति अत्थो। **चरथा** ति दिवसं योजनपरमं गच्छन्ता चरथ। **मा एकेन द्वे अगमित्था** ति एकेन मग्गेन द्वीसु गतेसु एकस्मिं धम्मं देसेन्ते एकेन तुण्हीभूतेन ठातब्बं होति, तस्मा एवमाह। **आदिकल्याणं** ति आदिम्हि कल्याणं सुन्दरं भद्दकं, तथा **मज्झपरियोसानेसु**। आदिमज्झपरियो-सानञ्च नामेतं सासनस्स च देसनाय च वसेन दुब्बिधं। तत्थ सासनस्स सीलं आदि, समथविपस्सनामग्गा मज्झं, फलनिब्बानानि परियोसानं। सीलसमाधयो वा आदि, विपस्सनामग्गा मज्झं, फलनिब्बानानि परियोसानं। सीलसमाधिविपस्सना वा आदि, मग्गो मज्झं, फलनिब्बानानि परियोसानं। देसनाय पन चतुप्पदिकगाथाय ताव पठमपादो आदि, दुतियततिया मज्झं, चतुत्थो परियोसानं। पञ्चपदछप्पदानं पठमपादो आदि, अवसानपादो परियोसानं सेसा मज्झं। एकानुसन्धिकस्स सुत्तस्स निदानं आदि, इदमवोचाति परियोसानं, सेसं मज्झं। अनेकानुसन्धिकस्स सुत्तस्स मज्झे बहुकम्पि अनुसन्धि मज्झमेव, निदानं आदि, इदमवोचाति परियोसानं। **सत्थं** ति सात्थकं कत्वा देसेथ। **सब्यञ्जनं** ति ब्यञ्जनेहि चेव पदेहि च परिपूरं कत्वा देसेथ। **केवलपरिपुण्णं** ति सकलपरिपुण्णं। **परिसुद्धं** ति निरुपक्किलेसं। **ब्रह्मचरियं** ति सिक्खत्तयसङ्गहं सासनब्रह्मचरियं। **पकासेथा** ति आवि करोथ।

अप्परजक्खजातिका ति पञ्ञाचक्खुम्हि अप्पकिलेसरजसभावा, दुकूलसाणिया पटिच्छन्ना विय चतुप्पदिकगाथापरियोसाने अरहत्तं पत्तुं समत्था सत्ता सन्तीति अत्थो। **परिहायन्तीति** अलाभपरिहानिया धम्मतो परिहायन्ति। तेनेवाह "**अनधिगतं नाधिगच्छन्ता विसेसाधिगमतो परिहायन्ती**" ति। सेनानिगमो ति सेनाय निगमो। पठमकप्पिकानं किर तस्मिं ठाने सेनानिवेसो अहोसि, तस्मा सो पदेसो "सेनानिगमो" ति वुच्चति। "सेनानिगामो" तिपि पाठो, सेनानि नाम सुजाताय पिता, तस्स गामो ति अत्थो। **तेनुपसङ्कमिस्सामीति** नाहं तुम्हे उय्योजेत्वा परिवेणादीनि कारेत्वा उपट्ठाकादीहि परिचरियमानो विहरिस्सामि, तिण्णं पन जटिलानं अड्ढुड्ढानि पाटिहारियसहस्सानि दस्सेत्वा धम्ममेव देसेतुं उपसङ्कमिस्सामि। B.200

३३॥ **मारो पापिमा** ति अत्तनो विसयं अतिक्कमितुं पटिपन्ने सत्ते मारेतीति **मारो**, परे पापे नियोजेति, सयं वा पापे नियुत्तोति **पापिमा**। अञ्ञानिपिस्स कण्हो अधिपति वसवत्ती अन्तको नमुचि पमत्तबन्धूति आदीनि बहूनि नामानि, इध पन नामद्वयमेव गहितं। उपसङ्कमीति "अयं समणो गोतमो महायुद्धं विचारेन्तो विय 'मा एकेन द्वे

1. सं. इ-१-१५७-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

अगमित्थ, धम्मं देसेथा' ति सद्धिं जने उय्योजेति, इमस्मिं पन एकस्मिम्पि धम्मं देसेन्ते मय्हं चित्तस्स सातं नत्थि, एवं बहूसु देसेन्तेसु कुतो भविस्सति, पटिबाहामि नं" ति चिन्तेत्वा उपसङ्कमि ।

सब्बपासेहीति सब्बेहि किलेसपासेहि । **ये दिब्बा ये च मानुसा** ति ये दिब्ब-कामगुणसङ्खाता मानुसककामगुणसङ्खाता च किलेसपासा नाम अत्थि, सब्बेहि तेहि त्वं बद्धो ति वदति । **महाबन्धनबद्धो** ति महता किलेसबन्धनेन बद्धो, महति वा बन्धने बद्धो, किलेसबन्धनस्स ठानभूते भवचारके बद्धोति अत्थो । **न मे समण मोक्खसीति** समण त्वं मम विसयतो न मुच्चिस्ससि । "न मे समण मोक्खसी" ति च इदं मारो "मुत्ताहं भिक्खवे सब्बपासेही" ति भगवतो वचनं असद्दहन्तो वदति, सद्दहन्तोपि वा" एवमयं परेसं सत्तानं मोक्खाय उस्साहं न करेय्या" ति सन्तज्जेन्तो कोहञ्ञे ठत्वा वदति ।

निहतो ति त्वं मया निहतो, निब्बिसेवनभावं गमितो पराजितो ति अत्थो । अन्तलिक्खे चरन्ते पञ्चाभिञ्ञेपि बन्धतीति **अन्तलिक्खचरो** । रागपासो हि B: 201 अन्तलिक्खचरेसुपि किच्चसाधनतो "अन्तलिक्खचरो" ति वुच्चति, तेनेव नं मारोपि अन्तलिक्खचरो ति मञ्ञति । मनसि जातो ति **मानसो,** मनसम्पयुत्तो ति अत्थो । ससमेत्थ उत्तानत्थमेव ।

मारकथावण्णना निट्ठिता ।

पब्बज्जूपसम्पदाकथावण्णना

३४॥ "अनुजानामि भिक्खवे" ति आदिकाय पन पाळिया यो पब्बज्जूपसम्पदा-विनिच्छयो वत्तब्बो, तं वित्थारतो दस्सेतुं **"पब्बज्जापेक्खं कुलपुत्तं पब्बाजेन्तेना"** ति आदिमाह । तत्थ ये पुग्गला पटिक्खित्ताति सम्बन्धो । **सयं पब्बाजेतब्बो** ति केसच्छेद-नादीनि सयं करोन्तेन पब्बाजेतब्बो । केसच्छेदनं कासायच्छादनं सरणदानं ति हि इमानि तीणि करोन्तो **"पब्बाजेती"** ति वुच्चति । एतेसु एकं द्वे वापि करोन्तो तथा वोहरीयतियेव, तस्मा एतं **पब्बाजेहीति** केसच्छेदनं कासायच्छादनञ्च सन्धाय वुत्तं । **उपज्झायं उद्दिस्स पब्बाजेतीति** एत्थापि एसेव नयो । **खण्डसीमं नेत्वा** ति भण्डुकम्मा-रोचनपरिहरणत्थं वुत्तं । तेन सभिक्खुके विहारे अञ्ञम्पि "एतस्स केसे छिन्दा" ति वत्तुं न वट्टति । **पब्बाजेत्वा** ति केसच्छेदनं सन्धाय वदति । **भिक्खुतो अञ्ञो पब्बाजेतुं न लभतीति** सरणदानं सन्धाय वुत्तं । तेनेवाह **"सामणेरो पना"** ति आदि । **सब्बरूपो** ति भब्बसभावो । तमेवत्थं परियायन्तरेन विभावेति **"सहेतुको"** ति । **ञातो** ति पाकटो । **यसस्सीति** परिवारसम्पत्तिया समन्नागतो ।

वण्णसण्ठानगन्धासयोकासवसेन असुचिजेगुच्छपटिकूलभावं पाकटं करोन्तेनाति सम्बन्धो। तत्थ **केसा** नामेते वण्णतोपि पटिकूला, सण्ठानतोपि गन्धतोपि आसयतोपि ओकासतोपि पटिकूला। मनुञ्ञेपि[1] हि यागुपत्ते वा भत्तपत्ते वा केसवण्णं किञ्चि दिस्वा "केसमिस्सकमिदं, हरथ नं" ति, जिगुच्छन्ति, एवं केसा **वण्णतो** पटिकूला। रत्तिं भुञ्जन्तापि केससण्ठानं अक्कवाकं वा मकचिवाकं वा छुपित्वा तथेव B. 202 जिगुच्छन्ति, एवं **सण्ठानतो** पटिकूला। तेलमक्खनपुप्फधूमादिसङ्खारविरहितानञ्च केसानं गन्धो परमजेगुच्छो होति, ततो जेगुच्छतरो अग्गिम्हि पक्खित्तानं। केसा हि वण्णसण्ठानतो अप्पटिकूलापि सियुं, **गन्धेन** पन पटिकूलायेव। यथा हि दहरस्स कुमारकस्स वच्चं वण्णतो हलिद्दिवण्णं, सण्ठानतोपि हलिद्दिपिण्डिसण्ठानं। सङ्कारट्ठाने छड्डितञ्च उद्धुमातककाळसुनखसरीरं वण्णतो तालपक्कवण्णं, सण्ठानतो वट्टेत्वा विस्सट्ठमुदिङ्गसण्ठानं, दाठापिस्स सुमनमकुळसदिसा, तं उभयम्पि वण्णसण्ठानतो सिया अप्पटिकूलं, गन्धेन पन पटिकूलमेव, एवं केसापि सियुं वण्णसण्ठानतो अप्पटिकूला, गन्धेन पन पटिकूलायेवा ति। यथा पन असुचिट्ठाने गामनिस्सन्देन जातानि सूपेय्यपण्णानि नागरिकमनुस्सानं जेगुच्छानि होन्ति अपरिभोगानि, एवं केसापि पुब्बलोहितमुत्तकरीसपित्तसेम्हादिनिस्सन्देन जातत्ता परमजेगुच्छाति **एवं आसयतो** पटिकूला। इमे च केसा नाम गूथरसिम्हि उट्ठितकण्णकं विय एकतिंसकोट्ठासरासिम्हि जाता, ते सुसानसङ्कारट्ठानादीसु जातसाकं विय परिखादीसु जातकमलकुवलयादिपुप्फं विय च असुचिट्ठाने जातत्ता परमजेगुच्छाति एवं **ओकासतो** पटिकूला ति आदिना नयेन तचपञ्चकस्स वण्णादिवसेन पटिकूलभावं पकासेन्तेनाति अत्थो।

निज्जीवनिस्सत्तभावं वा पाकटं करोन्तेना ति इमे केसा नाम सीसकटाहपलिवेठनचम्मे जाता। तत्थ यथा वम्मिकमत्थके जातेसु कुन्थतिणेसु न वम्मिकमत्थको जानाति "मयि कुन्थतिणानि जातानी" ति, नापि कुन्थतिणानि जानन्ति "मयं वम्मिकमत्थके जातानी" ति, एवमेव न सीसकटाहपलिवेठनचम्मं जानाति "मयि केसा जाता" ति, नापि केसा जानन्ति "मयं सीसकटाहपलिवेठनचम्मे जाता" ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति केसा नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातूतिआदिना नयेन निज्जीवनिस्सत्तभावं पकासेन्तेन। **पुब्बे** ति पुरिमबुद्धानं सन्तिके। **मद्दितसङ्खारो** ति नामरूपववत्थानेन चेव पच्चयपरिग्गहवसेन च ञाणेन परिमद्दितसङ्खारो। **भावितभावनो** ति कलापसम्मसनादिना सब्बसो कुसलभावनाय पूरणेन भावितभावनो।

---

1. विसुद्धि-१-२४२, अभि-ट्ठ-२-२२२, सारत्थ-टी.-२-१७३ पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं।

B. 203 **अदिन्नं न वट्टतीति** एत्थ पब्बज्जा न रुहतीति वदन्ति । **अनुञ्ञातउपसम्पदा** ति ञत्तिचतुत्थकम्मेन अनुञ्ञातउपसम्पदा । **ठानकरणसम्पदं** ति एत्थ उरादीनि ठानानि, संवुतादीनि करणानीति वेदितब्बानि । अनुनासिकं ति कत्वा दानकाले अन्तरा विच्छेदं अकत्वा दातब्बानीति दस्सेतुं **"एकसम्बन्धानी"** ति वुत्तं । **विच्छिन्दित्वा** ति म-कारन्तं कत्वा दानसमये विच्छेदं कत्वा । **सब्बमस्स कप्पियाकप्पियं आचिक्खितब्बं** ति दससिक्खापदविनिमुत्तं परामासापरामासादिभेदं कप्पियाकप्पियं आचिक्खितब्बं । **आभिसमाचारिकेसु विनेतब्बो** ति इमिना सेखियउपज्झायवत्तादिआभिसमाचारिक-सीलमनेन पूरेतब्बं, तत्थ च कत्तब्बस्स अकरणे अकत्तब्बस्स च करणे दण्डकम्मारहो होतीति दीपेति ।

पब्बज्जूपसम्पदाकथावण्णना निट्ठिता ।

दुतियमारकथावण्णना

३५॥ **अथ खो भगवा वस्सं वुट्ठो** ति आदिकाय पन पाळिया अयं अपुब्बपद-वण्णना । **योनिसो मनसिकारा** ति उपायमनसिकारेन, अनिच्चादीसु अनिच्चादितो मनसिकरणेनाति अत्थो । **योनिसो सम्मप्पधाना** ति उपायवीरियेन, अनुप्पन्ना-कुसलानुप्पादनादिविधिना पवत्तवीरियेनाति अत्थो । **विमुत्तीति** उक्कट्ठनिद्देसेन अरहत्तफलविमुत्ति वुत्ता । **अज्झभासीति** "अयं अत्तना वीरियं कत्वा अरहत्तं पत्वापि न तुस्सति, इदानि अञ्ञेसम्पि "पापुणाथा" ति उस्साहं करोति, पटिबाहेस्सामि नं" ति चिन्तेत्वा अभासि । **मारपासेना** ति किलेसपासेन । सेसमेत्थ वुत्तनयमेव ।

दुतियमारकथावण्णना निट्ठिता ।

भद्दवग्गियकथावण्णना

३६॥ तिंसभद्दवग्गियवत्थुम्हि **यथाभिरन्तं विहरित्वा** ति यथाअज्झासयं विहरित्वा। बुद्धानञ्हि एकस्मिं ठाने वसन्तानं छायूदकादीनं विपत्तिं वा अफासुकसेनासनं वा B. 204 मनुस्सानं अस्सद्धादिभावं वा आगम्म अनभिरति नाम नत्थि, तेसं सम्पत्तिया "इध फासुं विहरामा" ति अभिरमित्वा चिरविहारो पि नत्थि । यत्थ पन तथागते विहरन्ते सत्ता सरणेसु वा तीसु पतिट्ठहन्ति, सीलानि वा समादियन्ति, पब्बजन्ति वा, सतोपत्तिमग्गादीनं वा परेसं उपनिस्सयो होति, तत्थ बुद्धा सत्ते तासु सम्पत्तीसु

पतिट्ठापनअज्झासयेन वसन्ति, तासं अभावे पक्कमन्ति, तेन वुत्तं **"यथाअज्झासयं विहरित्वा"** ति। **अज्झोगाहेत्वाति** पविसित्वा। **तिंसमत्ता** ति तिंसपमाणा। सेसमेत्थ वुत्तनयमेव।

भद्दवग्गियकथावण्णना निट्ठिता।

उरुवेलपाटिहारियकथावण्णना

३७-३८॥ उरुवेलकस्सपवत्थुम्हि **जटिलो** ति जटाधरो। जटाअस्स अत्थीति हि **जटिलो**। नेतीति **नायको**, सामं विनेति अत्तनो लद्धिं सिक्खापेतीति **विनायको**। **सचे ते कस्सप अगरू** ति कस्सप सचे तुय्हं भारियं अफासुकं किञ्चि नत्थि। **अग्यागारे** ति अग्गिसालायं। **उभिन्नं सजोतिभूतानं** ति उभोसु सजोतिभूतेसु पज्जलितेसु। **यत्र हि नामा** ति यो नाम।

३९॥ **अज्जण्हो** ति अज्ज एकदिवसं। **अग्गिसालम्हीति** अग्यागारे। **सुमनमनसो**-ति सुन्दरचित्तसङ्खातमनो। **तेजोधातूसु कुसलो** ति तेजोकसिणसमापत्तीसु कुसलो। **उदिच्छरे** ति उल्लोकेसुं, परिवारेसुं ति वा अत्थो। **पत्तम्हि ओदहित्वा** ति पत्ते पक्खिपित्वा। **धुवभत्तेना** ति निच्चभत्तेन।

४०॥ **अभिक्कन्ताय रत्तिया** ति एत्थ **अभिक्कन्त**-सद्दो खये वत्तति, तेन परिक्खीणाय रत्तिया ति अत्थो। एते हि चत्तारो महाराजानो मज्झिमयामसमनन्तरे आगता। नियामो किरेस देवतानं, यदिदं बुद्धानं वा बुद्धसावकानं उपट्ठानं आगच्छन्ता मज्झिमयामसमनन्तरे आगच्छन्ति। **अभिक्कन्तवण्णा** ति अभिरूपछविवण्णा। इट्ठवण्णा मनापवण्णा ति वुत्तं होति। देवता हि मनुस्सलोकं आगच्छमाना पकतिवण्णं पकतिइद्धिं जहित्वा ओळारिकं अत्तभावं कत्वा अतिरेकवण्णवत्थालङ्कारकायादीहि B. 205 ओभासं मुञ्चमानादिवसेन च दिब्बं इद्धानुभावञ्च निम्मिनित्वा नटसमज्जादीनि गच्छन्ता मनुस्सा विय अभिसङ्खतेन कायेन आगच्छन्ति। तत्थ कामावचरा अनभिसङ्खतेनपि आगन्तुं सक्कोन्ति ओळारिकरूपत्ता। तथा हि ते कबळीकाराहार-भक्खा, रूपावचरा पन अनभिसङ्खतेन कायेन आगन्तुं न सक्कोन्ति सुखुमतररूपत्ता। तेसञ्हि अति सुखुमोव अत्तभावो, न तेन इरियापथकप्पनं होति। तस्मा ब्रह्म-लोकेपि ब्रह्मानो येभुय्येन निम्मितरूपेनेव पवत्तन्ति। मूलपटिसन्धिरूपञ्हि नेसं अतिविय सुखुममहारूपं[1], केवलं तं चित्तुप्पादस्स निस्सयाधिट्ठानभूतं सण्ठानवन्तं हुत्वा तिट्ठति।

---

1. सुखुमं पभावरूपं (स्या)।

केवलकप्पं ति एत्थ **केवल**-सद्दस्स अनवसेसत्तं[1] अत्थो, कप्प-सद्दस्स समन्तभावो, तस्मा **केवलकप्पं वनसण्डं** ति अनवसेसं समन्ततो वनसण्डं ति अत्थो। अनवसेसं फरितुं समत्थस्सपि हि ओभासस्स केनचि कारणेन एकदेसफरणम्पि सिया, अयं पन सब्बसो फरतीति दस्सेतुं समन्तत्थो कप्प-सद्दो गहितो। अथ वा ईसं असमत्थं केवलकप्पं। भगवतो पभाय अनोभासितमेव हि पदेसं देवता अत्तनो पभाय ओभासेन्ति। न हि भगवतो पभा कायचि पभाय अभिभूयति, सूरियादीनम्पि पन पभं सा अभिभुय्य तिट्ठतीति। **ओभासेत्वा** ति वत्थालङ्कारसरीरसमुट्ठिताय आभाय फरित्वा, चन्दो विय सूरियो विय च एकोभासं एकपज्जोतं करित्वा ति अत्थो। देवतानञ्हि सरीराभा दसद्वादसयोजनमत्तट्ठानं ततो भिय्योपि फरित्वा तिट्ठति, तथा वत्थाभरणादीसु समुट्ठिता पभा। **चतुद्दिसा** ति चतूसु दिसासु। **यत्र हि नामा** ति यं नाम।

४३॥ **अङ्गमगधा** ति उभो अङ्गमगधरट्ठवासिनो। इद्धिपाटिहारियं ति इद्धिभूतं पाटिहारियं, न आदेसनानुसासनीपाटिहारियं ति अत्थो। तिविधञ्हि पाटिहारियं इद्धिपाटिहारियं आदेसनापाटिहारियं अनुसासनीपाटिहारियं ति। तत्थ "इध भिक्खु एको पि हुत्वा बहुधा होति, बहुधापि हुत्वा एको होति आविभावं तिरोभावं" ति आदिनयप्पवत्तं[2] इद्धिविधमेव **इद्धिपाटिहारियं**। "इध भिक्खु परसत्तानं परपुग्गलानं चित्तम्पि आदिसति, चेतसिकम्पि आदिसति, वितक्कितम्पि आदिसति, विचारितम्पि आदिसति 'एवम्पि ते मनो, इत्थम्पि ते मनो' ति आदिनयप्पवत्तं[3] परस्स चित्तं ञत्वा कथनं आदेसनापाटिहारियं। "इध भिक्खु एवमनुसासति 'एवं वितक्केथ, मा एवं वितक्कयित्थ, एवं मनसि करोथ, मा एवं मानसा करित्थ, इदं पजहथ, इदं उपसम्पज्ज विहरथा' ति एवमादिनयप्पवत्ता सावकानं बुद्धानञ्च सब्बकालं देसेतब्ब-धम्मदेसना **अनुसासनीपाटिहारियं**।

B. 206

तत्थ[4] पाटिहारियपदस्स वचनत्थं पटिपक्खहरणतो रागादिकिलेसापनयनतो **पाटिहारियं** ति वदन्ति। भगवतो पन पटिपक्खा रागादयो न सन्ति ये हरितब्बा, पुथुज्जनानम्पि विगतूपक्किलेसेअट्ठगुणसमन्नागते चित्ते हतपटिपक्खे इद्धिविधं वत्तति, तस्मा तत्थ पवत्तवोहारेन च न सक्का इध पाटिहरियं ति वत्तुं। सचे पन महाकारुणिकस्स भगवतो वेनेय्यगता च किलेसा पटिपक्खा, तेसं हरणतो **पाटिहारियं**-ति वुत्तं, एवं सति युत्तमेतं। अथ वा भगवतो च सासनस्स च पटिपक्खा तित्थिया, तेसं हरणतो **पाटिहारियं**। ते हि दिट्ठिहरणवसेन दिट्ठिप्पकासने असमत्थभावेन च

---

1. अनवसेसं ति (क)।
2. दी-१-७३-७४, म-१-९८, सं-१-३४२, सं ३-२४७-पिट्ठेसु।
3. खु-९-४०२ पिट्ठे।
4. उदान-ट्ठ-९ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

इद्धिआदेसनानुसासनीहि हरिता अपनीता होन्तीति । **पटी**ति वा अयं सद्दो पच्छाति एतस्स अत्थं बोधेति "तस्मिं पटिपविट्ठम्हि, अञ्ञो आगञ्छि ब्राह्मणो" ति आदीसु[1] विय, तस्मा समाहिते चित्ते विगतूपक्किलेसेन कतकिच्चेन पच्छा हरितब्बं पवत्तेतब्बं ति पटिहारियं, अत्तनो वा उपक्किलेसेसु चतुत्थज्झानमग्गेहि हरितेसु पच्छा हरणं पटिहारियं, इद्धिआदेसनानुसासनियो च विगतूपक्किलेसेन कतकिच्चेन सत्तहितत्थं पुन पवत्तेतब्बा, हरितेसु च अत्तनो उपक्किलेसेसु परसत्तानं उपक्किलेसहरणानि होन्तीति पटिहारियानि भवन्ति, पटिहारियमेव **पाटिहारियं** । पटिहारिये वा इद्धिआदेसनानुसासनीसमुदाये भवं एकेकं **पाटिहारियं** ति वुच्चति । पटिहारियं वा चतुत्थज्झानं मग्गो च पटिपक्खहरणतो, तत्थ जातं निमित्तभूते, ततो वा आगतं ति **पाटिहारियं । स्वातनाया ति** स्वे दातब्बस्स अत्थाय ।

४४॥ **पंसुकूलं उप्पन्नं होती**ति परियेसमानस्स पटिलाभवसेन उप्पन्नं होति | B. 207 विचित्तपाटिहारियदस्सनत्थाव सा परियेसना । यस्मा पाणिना फुट्ठमत्ते सा पोक्खरणी निम्मिता अहोसि, तस्मा वुत्तं **"पाणिना पोक्खरणिं खणित्वा"** ति ।

४६-४९॥ **जटिला** ति तापसा । ते हि जटाधारिताय इध "जटिला" ति वुत्ता । **अन्तरट्ठकासु हिमपातसमये** ति हेमन्तस्स उतुनो अब्भन्तरभूते माघमासस्स अवसाने चतस्सो, फग्गुणमासस्स आदिम्हि चतस्सो ति एवं उभिन्नमन्तरे अट्ठरत्तीसु हिमपतन-काले । **नेरञ्जराय उम्मुज्जन्तीति** केचि तस्मिं तित्थसम्मते उदके पठमं निमुग्ग-सकलसरीरा ततो उम्मुज्जन्ता वुट्ठहन्ति उप्पिलवन्ति । **निमुज्जन्तीति** ससीसं उदके ओसीदन्ति । **उम्मुज्जननिमुज्जनम्पि करोन्तीति** पुनप्पुनं उम्मुज्जननिमुज्जनानिपि करोन्ति । तत्थ हि केचि "एकुम्मुज्जनेनेव पापसुद्धि होती"ति एवं दिट्ठिका, ते उम्मुज्जनमेव कत्वा गच्छन्ति । उम्मुज्जनं पन निमुज्जनमन्तरेन नत्थीति अविनाभावतो निमुज्जनम्पि ते करोन्तियेव । येपि "एकनिमुज्जनेनेव पापसुद्धि होती"-ति एवंदिट्ठिका, तेपि एकवारमेव निमुज्जित्वा वुत्तनयेनेव अविनाभावतो उम्मुज्जनम्पि कत्वा पक्कमन्ति । अपरे "पुनप्पुनं उम्मुज्जननिमुज्जनानि कत्वा नहाते पापसुद्धि होती" ति एवंदिट्ठिका, ते कालेन कालं उम्मुज्जननिमुज्जनानि करोन्ति । ते सब्बेपि सन्धाय वुत्तं "उम्मुज्जन्ति पि निमुज्जन्ति पि उम्मुज्जन-निमुज्जनम्पि करोन्ती" ति । एत्थ च किञ्चापि निमुज्जनपुब्बकं उम्मुज्जनं, निमुज्जनमेव पन करोन्तो कतिपया, उम्मुज्जनं तदुभयञ्च करोन्ता बहू ति तेसं येभुय्यभावदस्सनत्थं उम्मुज्जनं पठमं वुत्तं ।

---

1. खु-८-१-पिट्ठे ।

५०-५१॥ **उदकवाहको** ति उदकोघो । रेणुहतायाति[1] रजोगताय, रजोकिण्णायाति वुत्तं होति । **नेव च खो त्वं कस्सप अरहा** ति एतेन तदा कस्सपस्स असेक्खभावं पटिक्खिपति, **नापि अरहत्तमग्गसमापन्नो** ति एतेन सेक्खभावं । उभयेनपिस्स अनरियभावमेव दीपेति । **सापि ते पटिपदा नत्थि, याय त्वं अरहा वा अस्ससि अरहत्तमग्गं वा समापन्नो** ति इमिना पनस्स कल्याणपुथुज्जनभावम्पि पटिक्खिपति । तत्थ **पटिपदा** ति सीलविसुद्धिआदयो छ विसुद्धियो । पटिपज्जति एताय अरियमग्गो B. 208 ति पटिपदा । **अस्ससीति** भवेय्यासि । **चिरपटिका** ति चिरकालतो पट्ठाय, नागदमनतो पट्ठायाति अत्थो । **खारिकाजमिस्सं** ति एत्थ **खारीति** अरणीकमण्डलुसूचिआदयो तापसपरिक्खारा, तं हरणकाजं **खारिकाजं** । **अग्गिहुतमिस्सं** ति दब्बिआदिअग्गिपूजोपकरणं ।

५२-५३॥ **उपसग्गो** ति उपद्दवो । इदानि अड्ढुड्ढानि पाटिहारियसहस्सानि एकतो गणेत्वा दस्सेतुं **"भगवतो अधिट्ठानेन पञ्च कट्ठसतानि न फालियिंसू"** ति आदि आरद्धं । नागदमनादीनि पन सोळस पाटिहारियानि इध न गणितानि, तेहि सद्धिं सोळसातिरेकअड्ढुड्ढपाटिहारियसहस्सानीति वेदितब्बं ।

आदित्तपरियायसुत्तवण्णना

५४॥ इदानि तस्स भिक्खुसहस्सस्स आदित्तपरियायदेसनाय अरहत्तपत्तिं दस्सेतुं **"अथ खो भगवा"** ति आदि आरद्धं । तत्थ **गयायं विहरति गयासीसे** ति गयानामिकाय नदिया अविदूरे भवत्ता गामो गया नाम, तस्सं गयायं विहरति । समीपत्थे चेतं भुम्मवचनं । गयागामस्स हि अविदूरे गयाति एका पोक्खरणीपि अत्थि नदीपि गयासीसनामको हत्थिकुम्भसदिसो पिट्ठिपासाणोपि । यत्थ भिक्खुसहस्सस्स ओकासो पहोति, भगवा तत्थ विहरति । तेन वुत्तं **"गयासीसे"** ति, गयागामस्स आसन्ने गयासीसनामके पिट्ठिपासाणे विहरतीति वुत्तं होति । **भिक्खू आमन्तेसीति** तेसं सप्पायधम्मदेसनं विचिनित्वा तं देसेस्सामीति आमन्तेसि । भगवा हि तं इद्धिमयपत्तचीवरधरं समणसहस्सं आदाय गयासीसं गन्त्वा तेन परिवारितो निसीदित्वा "कतरा नु खो एतेसं धम्मकथा सप्पाया" ति चिन्तेन्तो "इमे सायं पातं अग्गिं परिचरन्ति, इमेसं द्वादसायतनानि आदित्तानि सम्पज्जलितानि विय कत्वा दस्सेस्सामि, एवं इमे अरहत्तं पापुणितुं सक्खिस्सन्ती" ति सन्निट्ठानमकासि । अथ नेसं तथा देसेतुं "सब्बं भिक्खवे आदित्तं" ति आदिना इमं आदित्तपरियायं अभासि ।

---

1. रेणुगताया ति (स्या.) ।

तत्थ[1] सब्बं नाम चतुब्बिधं सब्बसब्बं आयतनसब्बं सक्कायसब्बं पदेससब्बं ति। तत्थ–

"न तस्स अद्दिट्ठमिधत्थि किञ्चि,
अथो अविञ्ञातमजानितब्बं।
सब्बं अभिञ्ञासि यदत्थि नेय्यं,
तथागतो तेन समन्तचक्खू" ति–।[2]

B. 209

इदं **सब्बसब्बं** नाम। "सब्बं वो भिक्खवे देसेस्सामि, तं सुणाथा" ति[3] इदं **आयतनसब्बं** नाम। "सब्बधम्ममूलपरियायं वो भिक्खवे देसेस्सामी"ति[4] इदं **सक्कायसब्बं** नाम। "सब्बधम्मेसु वा पठमसमन्नाहारो उप्पज्जति चित्तं मनो मानसं तज्जा मनोविञ्ञाणधातू" ति इदं **पदेससब्बं** नाम। इति पञ्चारम्मणमत्तं पदेससब्बं, तेभूमका धम्मा सक्कायसब्बं, चतुभूमका धम्मा आयतनसब्बं, यं किञ्चि नेय्यं सब्बसब्बं। पदेससब्बं सक्कायसब्बं न पापुणाति तस्स तेभूमकधम्मेसुपि एकदेसस्स असङ्गण्हनतो। सक्कायसब्बं आयतनसब्बं न पापुणाति लोकुत्तरधम्मानं असङ्गण्हनतो। आयतनसब्बं सब्बसब्बं न पापुणाति। कस्मा? यस्मा आयतनसब्बेन चतुभूकधम्माव परिग्गहिता, न लक्खणपञ्ञत्तियो ति। इमस्मिं पन सुत्ते आयतनसब्बं अधिप्पेतं, तत्थापि इध विपस्सनुपगधम्माव गहेतब्बा।

चक्खू[5] ति द्वे चक्खूनि ञाणचक्खु चेव मंसचक्खु च। तत्थ ञाणचक्खु पञ्चविधं बुद्धचक्खु धम्मचक्खु समन्तचक्खु दिब्बचक्खु पञ्ञाचक्खू ति। तेसु **बुद्धचक्खु** नाम आसयानुसयञाणञ्चेव इन्द्रियपरोपरियत्तञाणञ्च, यं "बुद्धचक्खुना लोकं वोलोकेन्तो"ति[6] आगतं। **धम्मचक्खु** नाम हेट्ठिमा तयो मग्गा तीणि च फलानि, यं "विरजं वीतमलं धम्मचक्खुं उदपादी" ति[7] आगतं। **समन्तचक्खु** नाम सब्बञ्ञुतञ्ञाणं, यं "पासादमारुय्ह समन्तचक्खू"ति[8] आगतं। **दिब्बचक्खु** नाम आलोकवड्ढनेन उप्पन्नञाणं, यं "दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेना" ति[9] आगतं। **पञ्ञाचक्खु** नाम चतुसच्चपरिच्छेदकञाणं, यं "चक्खुं उदपादी" ति[10] आगतं। मंसचक्खुपि दुविधं

---

1. सं-ट्ठ-३-४-पिट्ठेपि पस्सितब्बं।
2. खु-७-२८०, खु-८-९३, खु ९-१२७-पिट्ठेसुपि।
3. सं-२-२४८ पिट्ठे।
4. म-१-१-पिट्ठे।
5. अभि-ट्ठ-१-३४४, सं-ट्ठ-3-1-पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं।
6. दी-२-३३, म-१-२२५ पिट्ठेसु।
7. दी-१-१४१, सं-३-३७१-पिट्ठेसु।
8. दी. १-१४१, सं. ३-३७० पिट्ठेसु।
9. म-१-१०१-२२७-पिट्ठेसु।
10. सं. ३-३७०, वि-३-१६ पिट्ठेसु। [।

ससम्भारचक्खु पसादचक्खूति । तेसु य्वायं अक्खिकूपके अक्खिपटलेहि परिवारितो B. 210 मंसपिण्डो । यत्थ चतस्सो धातुयो वण्णगन्धरसोजा सम्भवो जीवितं भावो चक्खुप्पसादो कायप्पसादो ति सङ्खेपतो तेरस सम्भारा होन्ति, वित्थरतो पन चतस्सो धातुयो वण्णगन्धरसोजा सम्भवो ति इमे नव चतुसमुट्ठानवसेन छत्तिंस, जीवितं भावो चक्खुप्पसादो कायप्पसादो ति इमे कम्मसमुट्ठाना ताव चत्तारो ति चत्तालीस सम्भारा होन्ति, इदं **ससम्भारचक्खु** नाम । यं पनेत्थ सेतमण्डलपरिच्छिन्नेन कण्हमण्डलेन परिवारिते दिट्ठिमण्डले[1] सन्निविट्ठं रूपदस्सनसमत्थं पसादमत्तं, इदं **पसादचक्खु** नाम । तस्स ततो परेसञ्च सोतादीनं वित्थारकथा **विसुद्धिमग्गे**[2] वुत्ताव ।

तत्थ यदिदं पसादचक्खु, तञ्च गहेत्वा भगवा "**चक्खु आदित्तं**" ति आदिमाह । तत्थ **आदित्तं** ति पदित्तं, सम्पज्जलितं एकादसहि अग्गीहि एकजालीभूतं ति अत्थो । चक्खुसन्निस्सितं विञ्ञाणं **चक्खुविञ्ञाणं**, चक्खुस्स वा कारणभूतस्स विञ्ञाणं **चक्खुविञ्ञाणं** । कामं रूपालोकमनसिकारादयोपि तस्स विञ्ञाणस्स कारणं, ते पन साधारणकारणं, चक्खु असाधारणं ति असाधारणकारणेनायं निद्देसो यथा "यवङ्कुरो" ति । **सोतविञ्ञाणादीसुपि** एसेव नयो । चक्खुसन्निस्सितो फस्सो **चक्खुसम्फस्सो**, चक्खुविञ्ञाणसम्पयुत्तफस्सस्सेतं अधिवचनं । **सोतसम्फस्सादीसुपि** एसेव नयो । **चक्खुसम्फस्सपच्चया उप्पज्जति वेदयितं** ति चक्खुसम्फस्सं मूलपच्चयं कत्वा उप्पन्ना सम्पटिच्छनसन्तीरणवोट्ठब्बनजवनवेदना । चक्खुविञ्ञाणसम्पयुत्ताय पन वेदनाय चक्खुसम्फस्सस्स पच्चयभावे वत्तब्बमेव नत्थि । चक्खुसम्फस्सो हि सहजाताय वेदनाय सहजातादिवसेन, असहजाताय उपनिस्सयादिवसेन पच्चयो होति । तेनेव "चक्खुसम्फस्सपच्चया उप्पज्जति वेदयितं सुखं वा दुक्खं वा अदुक्खमसुखं वा" ति वुत्तं । **सोतद्वारवेदनादीसुपि** एसेव नयो । एत्थ पन **मनो** ति भवङ्गचित्तं मनोद्वारस्स अधिप्पेतत्ता । **धम्मा** ति धम्मारम्मणं । **मनोविञ्ञाणं** ति सहावज्जनकं जवनं । **मनोसम्फस्सोति** भवङ्गसहजातो फस्सो । **वेदयितं** ति आवज्जनवेदनाय सद्धिं जवनवेदना । भवङ्गसम्पयुत्ताय पन वेदनाय गहणे वत्तब्बमेव नत्थि । आवज्जनं वा भवङ्गतो अमोचेत्वा **मनो** ति सावज्जनं भवङ्गं दट्ठब्बं । धम्मा ति धम्मारम्मणमेव । B. 211 **मनोविञ्ञाणं** ति जवनविञ्ञाणं । **मनोसम्फस्सो** ति भवङ्गावज्जनसहजातो **फस्सो** । **वेदयितं** ति जवनसहजाता वेदना, भवङ्गावज्जनसहजातापि वट्टतियेव ।

रागग्गिना ति आदीसु रागोव अनुदहनट्ठेन अग्गीति **रागग्गि** । रागो हि तिखिणं हुत्वा उप्पज्जमानो सत्ते अनुदहति झापेति, तस्मा "अग्गी" ति वुच्चति । इतरेसुपि

---

1. दिट्ठमण्डले (स्या का) ।
2. विसुद्धि-२-७६ पिट्ठे ।

द्वीसु एसेव नयो । तत्रिमानि वत्थूनि[1]–एका दहरभिक्खुनी चित्तलपब्बतविहारे उपोसथागारं गन्त्वा द्वारपालरूपं ओलोकयमाना ठिता । अथस्सा अन्तो रागो तिखिणतरो हुत्वा उप्पन्नो, तस्मा तंसमुट्ठाना तेजोधातु अतिविय तिखिणभावेन सद्धिं अत्तना सहजातधम्मेहि हदयपदेसं झापेसि यथा तं बाहिरा तेजोधातु सन्निस्सयं[2], तेन सा भिक्खुनी झायित्वा कालमकासि । भिक्खुनियो गच्छमाना "अयं दहरा ठिता, पक्कोसथ नं" ति आहंसु । एका गन्त्वा "कस्मा ठितासी"ति हत्थे गण्हि । गहितमत्ता परिवत्तित्वा पपता । इदं ताव रागस्स अनुदहनताय वत्थु ।

दोसस्स पन अनुदहनताय मनोपदोसिका देवा दट्ठब्बा । तेसु[3] किर एको देवपुत्तो "नक्खत्तं कीळिस्सामी" ति सपरिवारो रथेन वीथिं पटिपज्जति । अथञ्ञो निक्खमन्तो तं पुरतो गच्छन्तं दिस्वा "भो[4] अयं कपणो अदिट्ठपुब्बं विय एतं दिस्वा पीतिया उद्धुमातो विय भिज्जमानो[5] विय च गच्छती"ति कुज्झति । पुरतो गच्छन्तो पि निवत्तित्वा तं कुद्धं दिस्वा कुद्धा नाम सुविजाना होन्तीति कुद्धभावमस्स ञत्वा "त्वं कुद्धो मय्हं किं करिस्ससि, अयं सम्पत्ति मय्हं दानसीलादीनं वसेन लद्धा, न तुय्हं वसेना" ति पटिकुज्झति । एकस्मिञ्हि कुद्धे इतरो अकुद्धो रक्खति । कुद्धस्स हि सो कोधो इतरस्मिं अकुज्झन्ते अनुपादानो एकवारमेव उप्पत्तिया अनासेवनो चावेतुं न सक्कोति, उदकं पत्वा अग्गि विय निब्बायति, तस्मा अकुद्धो तं वचनतो रक्खति । उभोसु पन कुद्धेसु एकस्स कोधो इतरस्स पच्चयो होति, तस्सपि कोधो इतरस्स पच्चयो होतीति उभो कन्दन्तानंयेव ओरोधानं चवन्ति । उभोसु हि कुद्धेसु भिय्यो भिय्यो अञ्ञमञ्ञम्हि परिवड्ढनवसेन तिखिणसमुदाचारो निस्सयदहनरसो कोधो B. 212 उप्पज्जमानो हदयवत्थुं निद्दहन्तो अच्चन्तसुखुमालं करजकायं विनासेति, ततो सकलोपि अत्तभावो अन्तरधायति । इदं दोसस्स अनुदहनताय वत्थु ।

मोहस्स पन अनुदहनताय खिड्डापदोसिका देवा दट्ठब्बा । मोहवसेन हि तेसं सतिसम्मोसो होति, तस्मा खिड्डावसेन आहारकालं अतिवत्तेत्वा कालं करोन्ति । ते[6] किर पुञ्ञविसेसाधिगतेन महन्तेन अत्तनो सिरिविभवेन नक्खत्तं कीळन्ता ताय सम्पत्तिमहन्तताय "आहारं परिभुञ्जिम्ह, न परिभुञ्जिम्हा" तिपि न जानन्ति । अथ एकाहारातिक्कमनतो पट्ठाय निरन्तरं खादन्ता पि पिवन्तापि चवन्तियेव न तिट्ठन्ति । कस्मा? कम्मजतेजस्स बलवताय । मनुस्सानञ्हि कम्मजतेजो मन्दो, करजकायो

1. दी.-ट्ठ-३-१७६, अभि-ट्ठ-२-४८०-पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं
2. सन्निस्सितं (क)
3. दी. ट्ठ-१-१०५-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।
4. किं भो (स्या,क)
5. गज्जमानो (स्या, क)
6. दी-ट्ठ-१-१०४-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।

बलवा । तेसं तेजस्स मन्दताय करजकायस्स बलवताय सत्ताहम्पि अतिक्कमित्वा उण्होदकअच्छयागुआदीहि सक्का वत्थुं उपत्थम्भेतुं । देवानं पन तेजो बलवा होति उळारपुञ्ञनिब्बत्तत्ता उळारगरुसिनिद्धसुधाहारजिरणको च, करजं मन्दं मुदुसुखुमालभावतो । तेनेव हि भगवा इन्दसालगुहायं पकतिपंथवियं पतिट्ठातुं असक्कोन्तं सक्कं देवराजानं "ओळारिककायं अधिट्ठाही" ति आह, तस्मा ते एकं आहारवेलं अतिक्कमित्वा सण्ठातुं न सक्कोन्ति । यथा नाम गिम्हानं मज्झन्हिके तत्तपासाणे ठपितं पदुमं वा उप्पलं वा सायन्हसमये घटसतेनपि सिञ्चियमानं पाकतिकं न होति विनस्सतियेव, एवमेव पच्छा निरन्तरं खादन्तापि पिवन्तापि चवन्तियेव न तिट्ठन्ति ।

को पन तेसं आहारो, का आहारवेलाति? सब्बेसम्पि कामावचरदेवानं सुधा आहारो, सो हेट्ठिमेहि हेट्ठिमेहि उपरिमानं उपरिमानं पणीततमो होति । तं यथासकं दिवसवसेन दिवसे दिवसे भुञ्जन्ति । केचि पन "बिळारपदप्पमाणं सुधाहारं भुञ्जन्ति । सो जिव्हाय ठपितमत्तो याव केसग्गनखग्गा कायं फरति, तेसंयेव दिवसवसेन सत्तदिवसं यापनसमत्थोव होती" ति वदन्ति ।

के पन ते खिड्डापदोसिका नाम देवाति ? इमे नामाति अट्ठकथायं विचारणा B. 213 नत्थि, "कम्मजतेजो बलवा होति, करजं मन्दं" ति अविसेसेन वुत्तत्ता पन ये केचि कबळीकाराहारूपजीविनो एवं करोन्ति, ते एवं चवन्तीति वेदितब्बा । केचि पनाहु "निब्बानरतिपरनिम्मितवसवत्तिनो ते देवा । खिड्डाय पदुस्सनमत्तेनेव हेते खिड्डापदोसिका ति वुत्ता" ति । मनोपदोसिका पन चातुमहाराजिका ति अट्ठकथायमेव वुत्तं । केचि पन "खिड्डापदोसिकापि चातुमहाराजिकायेवा" ति वदन्ति । एवं ताव रागादयो तयो अनुदहनट्ठेन "अग्गी"ति वेदितब्बा । जातिआदित्तयं पन नानप्पकारदुक्खवत्थुभावेन अनुदहनतो अग्गि । सोकादीनं अनुदहनता पाकटायेव । सेसमेत्थ वुत्तनयमेव । इति इमस्मिं सुत्ते दुक्खलक्खणं कथितं चक्खादीनं एकादसहि अग्गीहि आदित्तभावेन दुक्खमताय दुक्खभावस्स कथितत्ता ।

आदित्तपरियायसुत्तवण्णना निट्ठिता ।

उरुवेलपाटिहारियकथावण्णना निट्ठिता ।

बिम्बिसारसमागमकथावण्णना

५५॥ इदानि "अथ खो भगवा गयासीसे यथाभिरन्तं विहरित्वा "तिआदीसु या सा अनुत्तानपदवण्णना, तं दस्सेतुं" लट्ठिवनेति तालुय्याने" ति आदि आरद्धं । तत्थ तालुय्याने ति तालरुक्खानं बहुभावतो एवं लद्धनामे उय्याने । अप्पेकच्चे येन भगवा

तेनञ्जलिं पणामेत्वा ति आदीसु **अञ्जलिं पणामेत्वा** ति ये उभतोपक्खिका, ते सन्धायेतं वुत्तं। ते किर एवं चिन्तयिंसु "सचे नो मिच्छादिट्ठिका चोदेस्सन्ति 'कस्मा तुम्हे समणं गोतमं वन्दित्था' ति, तेसं किं अञ्जलिमत्तकरणेनपि वन्दितं होतीति वक्खाम। सचे नो सम्मादिट्ठिका चोदेस्सन्ति 'कस्मा भगवन्तं न वन्दित्था' ति, किं सीसेन भूमिं पहरन्तेनेव वन्दितं होति, ननु अञ्जलिकम्मम्पि वन्दना एवा' ति वक्खामा" ति। **नामगोत्तं साबेत्वा** ति "भो गोतम अहं असुकस्स पुत्तो दत्तो नाम मित्तो नाम इध आगतो" ति वदन्ता नामं सावेन्ति नाम, "भो गोतम अहं वासेट्ठो नाम कच्चानो नाम इधागतो" ति वदन्ता गोत्तं सावेन्ति नाम। एते किर दलिद्दा जिण्णकुलपुत्ता परिसमज्झे नामगोत्तवसेन पाकटा भविस्सामाति एवं अकंसु। ये पन तुण्हीभूता B. 214 निसीदिंसु, ते केराटिका चेव अन्धबाला च। तत्थ केराटिका "एकं द्वे कथासल्लापे करोन्ते विस्सासिको होति, अथ विस्सासे सति एकं द्वे भिक्खा अदातुं न युत्तं" ति ततो अत्तानं मोचेन्ता तुण्ही निसीदन्ति। अन्धबाला अञ्ञाणतायेव अवक्खित्ता मत्तिकापिण्डो विय यत्थ कत्थचि तुण्हीभूता निसीदन्ति।

किसकोवदानोति एत्थ किसकानं ओवदानो **किसकोवदानो** ति इमं ताव अत्थविकप्पं दस्सेतुं **"तापसचरियाय किससरीरत्ता"** ति आदि वुत्तं। **अग्गिहुत्तं** ति अग्गिपरिचरणं। रूपादयोव इध कामनीयट्ठेन **"कामा"** ति वुत्ताति आह **"एते रूपादयो कामे"** ति। **यञ्ञा अभिवदन्तीति** यागहेतु इज्झन्तीति वदन्ति। **उपधीसूति** एत्थ चत्तारो उपधी कामुपधि खन्धुपधि किलेसुपधि अभिसङ्खारुपधीति। कामापि हि "यं पञ्च कामगुणे पटिच्च उप्पज्जति सुखं सोमनस्सं, अयं कामानं अस्सादो" ति[1] एवं वुत्तस्स सुखस्स अधिट्ठानभावतो उपधीयति एत्थ सुखं ति इमिना वचनत्थेन "उपधी" ति वुच्चन्ति। खन्धापि खन्धमूलकस्स दुक्खस्स अधिट्ठानभावतो, किलेसापि अपाय-दुक्खस्स अधिट्ठानभावतो, अभिसङ्खारा पि भवदुक्खस्स अधिट्ठानभावतो "उपधी"ति वुच्चन्ति, तेसु खन्धुपधि इधाधिप्पेतो ति आह **"खन्धुपधीसु मलं ति ञत्वा"** ति। **यञ्ञा मलमेव वदन्तीति** यागहेतु मलमेव इज्झतीति वदन्ति। **यिट्ठे** ति महायागे। हुतेति दिवसे दिवसे कत्तब्बअग्गिपरिचरणे। **कामभवे असत्तं** ति कामभवे अलग्गं, तब्बिनिमुत्तं ति वुत्तं होति।

५७-५८॥ **आसीसना** ति पत्थना। दिब्बसुवण्णेसुपि सिङ्गीसुवण्णस्स सब्बसेट्ठता **"सिङ्गीनिक्खसवण्णो"** ति वुत्तं। यथेव हि मनुस्सपरिभोगे सुवण्णे युत्तिकतं हीनं, ततो रसविद्धं सेट्ठं, रसविद्धतो आकरुप्पन्नं, ततो यं किञ्चि दिब्बं सेट्ठं, एवं दिब्बसुवण्णे-सुपि चामीकरतो सातकुम्भं, सातकुम्भतो जम्बुनदं, जम्बुनदतो सिङ्गीसुवण्णं, तस्मा तं सब्बसेट्ठं। **सिङ्गीनिकक्खं** ति च निक्खपरिमाणेन सिङ्गीसुवण्णेन कतं सुवण्णपट्टं।

1. म-१-१२० पिट्ठे।

ऊनकनिक्खेन कतञ्हि घट्टनमज्जनक्खमं न होति, अतिरेकेन कतं घट्टनमज्जनं खमति, वण्णवन्तं पन न होति, फरुसधातुकं खायति, निक्खेन कतं घट्टनमज्जनञ्चेव B. 215 खमति वण्णवन्तञ्च होति। निक्खं पन वीसतिसुवण्णं ति केचि। पञ्चवीसतिसुवण्णं ति अपरे। **मज्झिमनिकायट्ठकथायं** पन "निक्खं नाम पञ्चसुवण्णा" ति वुत्तं। **सुवण्णो** नाम चतुधरणं ति वदन्ति।

दससु अरियवासेसु वुत्थवासो ति–

"इध[1] भिक्खवे भिक्खु पञ्चङ्गविप्पहीनो होति छळङ्गसमन्नागतो एकारक्खो चतुरापस्सेनो पनुण्णपच्चेकसच्चो समवयसट्ठेसनो अनाविलसङ्कप्पो पस्सद्धकाय-सङ्खारो सुविमुत्तचित्तो सुविमुत्तपञ्ञो।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु पञ्चङ्गविप्पहीनो होति? इध भिक्खवे भिक्खुनो कामच्छन्दो पहीनो होति, ब्यापादो पहीनो होति, थिनमिद्धं पहीनं होति, उद्धच्च-कुक्कुच्चं पहीनं होति, विचिकिच्छा पहीना होति। एवं खो भिक्खवे भिक्खु पञ्चङ्ग-विप्पहीनो होति।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु छळङ्गसमन्नागतो होति ? इध भिक्खवे भिक्खु चक्खुना रूपं दिस्वा नेव सुमनो होति न दुम्मनो, उपेक्खको विहरति सतो सम्पजानो। सोतेन सद्दं सुत्वा ....पे०...... घानेन गन्धं घायित्वा। जिव्हाय रसं सायित्वा। कायेन फोट्ठब्बं फुसित्वा। मनसा धम्मं विञ्ञाय नेव सुमनो होति न दुम्मनो, उपेक्खको विहरति सतो सम्पजानो। एवं खो भिक्खवे भिक्खु छळङ्गसमन्नागतो होति।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु एकारक्खो होति? इध भिक्खवे भिक्खु सतारक्खेन चेतसा समन्नागतो होति। एवं खो भिक्खवे भिक्खु एकारक्खो होति।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु चतुरापस्सेनो होति ? इध भिक्खवे भिक्खु सङ्खायेकं पटिसेवति, सङ्खायेकं अधिवासेति, सङ्खायेकं परिवज्जेति, सङ्खायेकं विनोदेति। एवं खो भिक्खवे भिक्खु चतुरापस्सेनो होति।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु पनुण्णपच्चेकसच्चो होति? इध भिक्खवे भिक्खु यानि B. 216 तानि पुथुसमणब्राह्मणानं पुथुपच्चेकसच्चानि, सब्बानि तानि नुण्णानि होन्ति पनुण्णानि चत्तानि वन्तानि मुत्तानि पहीनानि पटिनिस्सट्ठानि। एवं खो भिक्खवे भिक्खु पनुण्णपच्चेकसच्चो होति।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु समवयसट्ठेसनो होति? इध भिक्खवे भिक्खुनो कामेसना पहीना होति, भवेसना पहीना होति, ब्रह्मचरियेसना पटिप्पस्सद्धा। एवं खो भिक्खवे भिक्खु समवयसट्ठेसनो होति।

---

1. दी-३-२२४-अं-३-२८० पिट्ठेसु।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु अनाविलसङ्कप्पो होति? इध भिक्खवे भिक्खुनो कामसङ्कप्पो पहीनो होति, ब्यापादसङ्कप्पो पहीनो होति, विहिंसासङ्कप्पो पहीनो होति। एवं ख़ो भिक्खवे भिक्खु अनाविलसङ्कप्पो होति।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु पस्सद्धकायसङ्खारो होति? इध भिक्खवे भिक्खु सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एवं खो भिक्खवे भिक्खु पस्सद्धकायसङ्खारो होति।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु सुविमुत्तचित्तो होति? इध भिक्खवे भिक्खुनो रागा चित्तं विमुत्तं होति, दोसा चित्तं विमुत्तं होति, मोहा चित्तं विमुत्तं होति। एवं खो भिक्खवे भिक्खु सुविमुत्तचित्तो होति।

कथञ्च भिक्खवे भिक्खु सुविमुत्तपञ्ञो होति? इध भिक्खवे भिक्खु रागो मे पहीनो उच्छिन्नमूलो तालावत्थुकतो अनभावंकतो आयतिं अनुप्पादधम्मो" ति पजानाति, 'दोसो मे पहीनो ......पे०...... मोहो मे पहीनो उच्छिन्नमूलो तालावत्थुकतो अनभावंकतो आयतिं अनुप्पादधम्मो' ति पजानाति। एवं खो भिक्खवे भिक्खु सुविमुत्तपञ्ञो होती" ति–

एवमागतेसु दससु अरियवासेसु वुत्थवासो।

तत्थ वसन्ति एत्था ति वासा, अरियानं एव वासा ति **अरियवासा** अनरियानं तादिसानं वासानं असम्भवतो। अरियाति चेत्थ उक्कट्ठनिद्देसेन खीणासवा गहिता। B. 217 **एकारक्खो** ति एका सतिसङ्खाता आरक्खा एतस्साति एकारक्खो। खीणासवस्स[1] हि तीसु द्वारेसु सब्बकाले सति आरक्खकिच्चं साधेति। तेनेवस्स चरतो च तिट्ठतो च सुत्तस्स च जागरस्स च सततं समितं ञाणदस्सनं पच्चुपट्ठितं होतीति वुच्चति।

चतुरापस्सेनो ति चत्तारि अपस्सेनानि अपस्सया एतस्साति चतुरापस्सेनो। **सङ्खाया** ति ञाणेन[2]। **पटिसेवतीति** ञाणेन ञत्वा सेवितब्बयुत्तकमेव सेवति। तस्स वित्थारो "पटिसङ्खा योनिसो चीवरं परिभुञ्जती"ति आदिना[3] नयेन वेदितब्बो। **सङ्खायेकं अधिवासेतीति** ञाणेन ञत्वा अधिवासेतब्बयुत्तकमेव अधिवासेति। वित्थारो पनेत्थ "पटिसङ्खा योनिसो खमो होति सीतस्सा" ति आदिना[4] नयेन वेदितब्बो। **परिवज्जेतीति** ञाणेन ञत्वा परिवज्जेतब्बयुत्तकमेव परिवज्जेति। तस्मा वित्थारो "पटिसङ्खा योनिसो चण्डं हत्थिं परिवज्जेती"ति आदिना[5] नयेन वेदितब्बो।

1. दी-ट्ठ-३-२३४, अं-ट्ठ-३-२९२ पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं।
2. दी-ट्ठ-३-१९० पिट्ठेपि पस्सितब्बं।
3. म-१-१२, अं २-३४१-पिट्ठेसु।
4. म-१-१३, अं-२-३४१-पिट्ठेसु।
5. म-१-१३, अं-२-३४२-पिट्ठेसु।

विनोदेतीति ञाणेन ञत्वा विनोदेतब्बमेव विनोदेति नुदति नीहरति अन्तो वसितुं न देति। तस्स वित्थारो "उप्पन्नं कामवितक्कं नाधिवासेती" ति आदिना[1] नयेन वेदितब्बो।

पनुण्णपच्चेकसच्चो ति[2] "इदमेव दस्सनं सच्चं, इदमेव सच्चं" ति एवं पाटियेक्कं गहितत्ता पच्चेकसङ्खातानि दिट्ठिसच्चानि पनुण्णानि नीहटानि पहीनानि अस्साति पनुण्णपच्चेकसच्चो। **पुथुसमणब्राह्मणानं** ति बहूनं समणब्राह्मणानं। एत्थ च समणा ति पब्बज्जुपगता। **ब्राह्मणा** ति भोवादिनो। **पुथुपच्चेकसच्चानीति** बहूनि पाटेक्क-सच्चानि, "इदमेव दस्सनं सच्चं, इदमेव सच्चं" ति पाटियेक्कं गहितानि बहूनि सच्चानीति अत्थो। **नुण्णानीति** नीहटानि। **पनुण्णानीति** सुट्ठु नीहतानि। **चत्तानीति** विस्सट्ठानि। **वन्तानीति** वमितानि। **मुत्तानी** ति छिन्नबन्धनानि कतानि। **पहीनानी** ति पजहितानि। **पटिनिस्सट्ठानीति** यथा न पुन चित्तं आरोहन्ति, एवं पटिविस्स-ज्जितानि। सब्बानेव चेतानि अरियमग्गाधिगमतो पुब्बे गहितस्स दिट्ठिग्गाहस्स विस्सट्ठभाववेवचनानि।

B. 218 **समवयसट्ठेसनो** ति[3] एत्थ **अवया** ति अनूना। सट्ठाति निस्सट्ठा। सम्मा अवया सट्ठा एसना अस्साति **समवयसट्ठेसनो**, सम्मा विस्सट्ठसब्बएसनो ति अत्थो। **"रागा चित्तं विमुत्तं"** ति आदीहि मग्गस्स किच्चनिप्फत्ति कथिता रागादीनं पहीनभाव-दीपनतो। **"रागो मे पहीनो"** ति आदीहि पच्चवेक्खणामुखेन अरियफलं कथितं। अधिगते हि अग्गफले सब्बसो रागादीनं अनुप्पादधम्मतं पजानाति, तञ्च पजाननं पच्चवेक्खणञाणं ति। तत्थ पञ्चङ्गविप्पहानपच्चेकसच्चापनोदनएसनासमवय-सज्जनानि "सङ्खायेकं पटिसेवति अधिवासेति परिवज्जेति विनोदेती" ति वुत्तेसु अपस्सेनेसु विनोदना च मग्गकिच्चानेव, इतरे च मग्गेनेव समिज्झन्ति।

दसबलो ति कायबलसङ्खातानि ञाणबलसङ्खातानि च दस बलानि एतस्साति दसबलो। दुविधञ्हि तथागतस्स बलं कायबलं ञाणबलञ्च। तेसु कायबलं हत्थि-कुलानुसारेन वेदितब्बं। वुत्तञ्हेतं पोराणेहि–

"काळावकञ्च गङ्गेय्यं, पण्डरं तम्बपिङ्गलं।
गन्धमङ्गलहेमञ्च, उपोसथछद्दन्तिमे दसा" ति[4]॥

इमानि हि दस हत्थिकुलानि। तत्थ **काळावकं** ति पकतिहत्थिकुलं दट्ठब्बं। यं दसन्नं पुरिसानं कायबलं, तं एकस्स काळावकस्स हत्थिनो। यं दसन्नं काळावकानं बलं, तं एकस्स गङ्गेय्यस्स। यं दसन्नं गङ्गेय्यानं, तं एकस्स पण्डरस्स। यं दसन्नं

---

1. म-१-१४, अं-२-३४२-पिट्ठेसु।
2. अं-ट्ठ-२-३००, दी-ट्ठ-३-२३४-पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं।
3. दी-ट्ठ-३-२३५, अं-ट्ठ-३-२९२ पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं।
4. म-ट्ठ-१-३३१, सं-ट्ठ-२-४१, अं-ट्ठ-३-२९३, अभि-ट्ठ-२-३८०, उदान-ट्ठ-३६४, बुद्धवंस-ट्ठ. -६१, पटिसं-ट्ठ-२-२३०, चूळनिद्देस-ट्ठ-४९ पिट्ठेसुपि।

पण्डरानं, तं एकस्स तम्बस्स । यं दसन्नं तम्बानं, तं एकस्स पिङ्गलस्स । यं दसन्नं पिङ्गलानं, तं एकस्स गन्धहत्थिनो । यं दसन्नं गन्धहत्थीनं, तं एकस्स मङ्गलस्स । यं दसन्नं मङ्गलानं, तं एकस्स हेमवतस्स । यं दसन्नं हेमवतानं, तं एकस्स उपोसथस्स । यं दसन्नं उपोसथानं, तं एकस्स छद्दन्तस्स । य दसन्नं छद्दन्तानं, तं एकस्स तथागतस्स कायबलं । नारायनसङ्खातबलं तिपि इदमेव वुच्चति । तत्थ नारा वुच्चन्ति रस्मियो, ता बहू नानाविधा ततो उप्पज्जन्तीति नारायनं, वजिरं । तस्मा वजिरसङ्खातबलं ति अत्थो । तदेतं पकतिहत्थिगणनाय हत्थीनं कोटिसहस्सानं, पुरिसगणनाय दसन्नं B. 219 पुरिसकोटिसहस्सानं बलं होति । इदं ताव तथागतस्स **कायबलं** ।

ञाणबलं पन पाळियं आगतमेव । तत्रायं पाळि[1]–

दस खो पनिमानि सारिपुत्त तथागतस्स तथागतबलानि, येहि बलेहि समन्नागतो तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति । कतमानि दस ? इध सारिपुत्त तथागतो ठानञ्च ठानतो अट्ठानञ्च अट्ठानतो यथाभूतं पजानाति, यम्पि सारिपुत्त तथागतो ठानञ्च ठानतो अट्ठानञ्च अट्ठानतो यथाभूतं पजानाति । इदम्पि सारिपुत्त तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति ।

पुन च परं सारिपुत्त तथागतो अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं पजानाति......पे०...... ।

पुन च परं सारिपुत्त तथागतो सब्बत्थगामिनिं पटिपदं यथाभूतं पजानाति ......पे०...... ।

पुन च परं सारिपुत्त तथागतो अनेकधातुं नाना धातुं लोकं यथाभूतं पजानाति ......पे०...... ।

पुन च परं सारिपुत्त तथागतो सत्तानं नानाधिमुत्तिकतं यथाभूतं पजानाति ......पे०...... ।

पुन च परं सारिपुत्त तथागतो परसत्तानं परपुग्गलानं इन्द्रियपरोपरियत्तं यथाभूत्तं पजानाति......पे०...... ।

पुन च परं सारिपुत्त तथागतो झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं संकिलेसं वोदानं वुट्ठानं यथाभूतं पजानाति ।

पुन च परं सारिपुत्त तथागतो अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति । सेय्यथिदं- B. 220 एकम्पि जातिं द्वेपि जातियो......पे०...... । इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति......पे०...... ।

1. म-१-९९, अं-३-२८३-पिट्ठेसु ।

पुन च परं सारिपुत्त तथागतो दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे सुगते दुग्गते, यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति.......पे०....... ।

पुन च परं सारिपुत्त तथागतो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति......पे०...... । **इदम्पि** सारिपुत्त तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति । इमानि खो सारिपुत्त दस तथागतस्स तथागतबलानी" ति ।

तत्थ[1] **ठानञ्च ठानतो** ति कारणञ्च कारणतो । "ये ये धम्मा येसं येसं धम्मानं हेतू पच्चया उप्पादाय, तं तं ठानं । ये ये धम्मा येसं येसं धम्मानं न हेतू न पच्चया उप्पादाय, तं तं अट्ठानं" ति पजानन्तो ठानञ्च ठानतो अट्ठानञ्च अट्ठानतो यथाभूतं पजानाति । **यम्पीति** येन ञाणेन ।

कम्मसमादानानं ति समादियित्वा कतानं कुसलाकुसलकम्मानं, कम्ममेव वा कम्मसमादानं । **ठानसो हेतुसो** ति पच्चयतो चेव हेतुतो च । तत्थ गतिउपधिकालपयोगा विपाकस्स ठानं, कम्मं हेतु ।

सब्बत्थगामिनिं ति सब्बगतिगामिनिञ्च अगतिगामिनिञ्च । **पटिपदं** ति मग्गं । **यथाभूतं पजानातीति** बहूसुपि मनुस्सेसु एकमेव पाणं घातेन्तेसु कामं सब्बेसम्पि चेतना तस्सेवेकस्स जीवितिन्द्रियारम्मणा, तं पन कम्मं तेसं नानाकारं । तेसु हि एको आदरेन छन्दजातो करोति, एको "एहि त्वम्पि करोही" ति परेहि निप्पीळितो करोति, B. 221 एको समानच्छन्दो विय हुत्वा अप्पटिबाहियमानो विचरति, तस्मा तेसु एको तेनेव कम्मेन निरये निब्बत्तति, एको तिरच्छानयोनियं, एको पेत्तिविसये । तं तथागतो आयूहनक्खणेयेव "इमिना नीहारेन आयूहितत्ता एस निरये निब्बत्तिस्सति, एस तिरच्छानयोनियं, एस पेत्तिविसये" ति जानाति । निरये निब्बत्तमानम्पि "एस महानिरये निब्बत्तिस्सति, एस उस्सदनिरये" ति जानाति । तिरच्छानयोनियं निब्बत्तमानम्पि" एस अपादको भविस्सति, एस द्विपादको, एस चतुप्पादो, एस बहुप्पादो" ति जानाति । पेत्तिविसये निब्बत्तमानम्पि "एस निज्झामतण्हिको भविस्सति, एस खुप्पिपासिको, एस परदत्तूपजीवी" ति जानाति । तेसु च कम्मेसु "इदं कम्मं पटिसन्धिं आकड्ढिस्सति, एतं अञ्ञेन दिन्नाय पटिसन्धिया उपधिवेपक्कं भविस्सती" ति जानाति ।

तथा सकलगामवासिकेसु एकतो पिण्डपातं ददमानेसु कामं सब्बेसम्पि चेतना पिण्डपातारम्मणाव, तं पन कम्मं तेसं नानाकारं । तेसु हि एको आदरेन करोतीति

---

1. म-ट्ठ-१-३३४, अं-ट्ठ-३-२९५, अभि-ट्ठ-२-३८३-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

सब्बं पुरिमसदिसं। तस्मा तेसु च केचि देवलोके निब्बत्तन्ति, केचि मनुस्सलोके। तं तथागतो आयूहनक्खणेयेव जानाति। "इमिना नीहारेन आयूहितत्ता एस मनुस्सलोके निब्बत्तिस्सति, एस देवलोके, तत्थापि एस खत्तियकुले, एस ब्राह्मणकुले, एस वेस्सकुले, एस सुद्दकुले, एस परनिम्मितवसवत्तीसु, एस निम्मानरतीसु, एस तुसितेसु एस यामेसु, एस तावतिंसेसु, एस चातुमहाराजिकेसु, एस भुम्मदेवेसू" ति आदिना तत्थ तत्थ हीनपणीतसुवण्णदुब्बण्णअप्पपरिवारमहापरिवारतादिभेदं तं तं विसेसं आयूहनक्खणेयेव जानाति।

तथा विपस्सनं पट्ठपेन्तेसुयेव "इमिना नीहारेन एस किञ्चि सल्लक्खेतुं न सक्खिस्सति, एस महाभूतमत्तमेव ववत्थपेस्सति, एस रूपपरिग्गहे एव ठस्सति, एस अरूपपरिग्गहेयेव, एस नामरूपपरिग्गहेयेव, एस पच्चयपरिग्गहेयेव, एस लक्खणारम्मणिकविपस्सनायमेव, एस पठमफलेयेव, एस दुतियफले एव, एस ततियफले एव, एस अरहत्तं पापुणिस्सती"ति जानाति। कसिणपरिकम्मं करोन्तेसुपि "इमस्स परिकम्ममत्तमेव भविस्सति, एस निमित्तं उप्पादेस्सति, एस अप्पनं एव पापुणिस्सति, एस झानं पादकं कत्वा विपस्सनं पट्ठपेत्वा अरहत्तं गण्हिस्सती" ति जानाति।

B. 222 **अनेकधातुं** ति चक्खुधातुआदीहि, कामधातुआदीहि वा धातूहि बहुधातुं। **नानाधातुं** ति तासंयेव धातूनं विलक्खणत्ता नानप्पकारधातुं। **लोकं** ति खन्धायतनधातुलोकं। **यथाभूतं पजानातीति** तासं धातूनं अविपरीततो सभावं पटिविज्झति।

नानाधिमुत्तिकतं ति हीनादीहि अधिमुत्तीहि नानाधिमुत्तिकभावं। **परसत्तानं** ति पधानसत्तानं। **परपुग्गलानं** ति ततो परेसं हीनसत्तानं। एकत्थमेव वा एतं पदद्वयं, वेनेय्यवसेन पन द्वेधा वुत्तं। **इन्द्रियपरोपरियत्तं** ति सद्धादीनं इन्द्रियानं परभावञ्च अपरभावञ्च, वुद्धिञ्च हानिञ्चाति अत्थो।

झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं ति पठमादीनं चतुन्नं झानानं "रूपी रूपानि पस्सती"ति आदीनं अट्ठन्नं विमोक्खानं, सवितक्कसविचारादीनं तिण्णं समाधीनं, पठमझानसमापत्तिआदीनञ्च नवन्नं अनुपुब्बसमापत्तीनं। **संकिलेसं** ति हानभागियधम्मं। **वोदानं** ति विसेसभागियधम्मं। वुट्ठानं ति "वोदानम्पि वुट्ठानं, तम्हा तम्हा समाधिम्हा वुट्ठानम्पि वुट्ठानं" ति[1] एवं वुत्तं पगुणज्झानञ्चेव भवङ्गफलसमापत्तियो च। हेट्ठिमं हेट्ठिमञ्हि पगुणज्झानं उपरिमस्स उपरिमस्स पदट्ठानं होति। तस्मा "वोदानम्पि वुट्ठानं" ति वुत्तं। भवङ्गेन सब्बझानेहि वुट्ठानं होति, फलसमापत्तिया निरोधसमापत्तितो वुट्ठानं होति। तमेतं सन्धाय "तम्हा तम्हा समाधिम्हा वुट्ठानम्पि वुट्ठानं" ति वुत्तं। सब्बञाणानञ्च वित्थारकथाय विनिच्छयो **सम्मोहविनोदनियं**

---

1. अभि-२-३५७ पिट्ठे।

विभङ्गट्ठकथायं[1] वुत्तो । पुब्बेनिवासानुस्सतिदिब्बचक्खुआसवक्खयञाणकथा पन वेरञ्ज-**कण्डे**[2] वित्थारितायेव ।

इमानि खो सारिपुत्ता ति यानि पुब्बे "दस खो पनिमानि सारिपुत्त तथागतस्स तथागतबलानी" ति अवोचं, इमानि तानीति अप्पनं करोति । तत्थ परवादिकथा होति "दसबलञाणं नाम पाटियेक्कं नत्थि, सब्बञ्ञुतञ्ञाणस्सेवायं पभेदो" ति, तं न तथा दट्ठब्बं । अञ्ञमेव हि दसबलञाणं, अञ्ञं सब्बञ्ञुतञ्ञाणं । दसबलञाणं सकसककिच्चमेव जानाति, सब्बञ्ञुतञ्ञाणं तम्पि ततो अवसेसम्पि पजानाति । दसबलञाणेसु हि पठमं कारणाकारणमेव जानाति, दुतियं कम्मन्तरविपाकन्तरमेव, B. 223 ततियं कम्मपरिच्छेदमेव, चतुत्थं धातुनानत्तकारणमेव, पञ्चमं सत्तानं अज्झासयाधिमुत्तिमेव, छट्ठं इन्द्रियानं तिक्खमुदुभावमेव, सत्तमं झानादीहि सद्धिं तेसं संकिलेसादिमेव, अट्ठमं पुब्बेनिवुत्थक्खन्धसन्ततिमेव, नवमं सत्तानं चुतिपटिसन्धिमेव, दसमं सच्चपरिच्छेदमेव । सब्बञ्ञुतञ्ञाणं पन एतेहि जानितब्बञ्च ततो उत्तरिञ्च पजानाति, एतेसं पन किच्चं न सब्बं करोति । तञ्हि झानं हुत्वा अप्पेतुं न सक्कोति, इद्धि हुत्वा विकुब्बितुं न सक्कोति, मग्गो हुत्वा किलेसे खेपेतुं न सक्कोति । इति यथावुत्तकायबलेन चेव ञाणबलेन च समन्नागतत्ता भगवा "दसबलो" ति वुच्चति ।

दसहि असेक्खेहि अङ्गेहि उपेतो ति "असेक्खा सम्मादिट्ठि, असेक्खो सम्मासङ्कप्पो, असेक्खा सम्मावाचा, असेक्खो सम्माकम्मन्तो, असेक्खो सम्माआजीवो, असेक्खो सम्मावायामो, असेक्खा सम्मासति, असेक्खो सम्मासमाधि, असेक्खं सम्माञाणं, असेक्खा सम्माविमुत्ती"[3] ति एवं वुत्तेहि दसहि असेक्खधम्मेहि समन्नागतो । असेक्खा सम्मादिट्ठिआदयो च सब्बे फलसम्पयुत्तधम्मा एव । एत्थ च **सम्मादिट्ठि सम्माञाणं** ति द्वीसु ठानेसु पञ्ञाव कथिता "सम्मा दस्सनट्ठेन सम्मादिट्ठि, सम्मा पजाननट्ठेन सम्माञाणं" ति । अत्थि हि दस्सनजानननानं विसये पवत्तिआकारविसेसो । **सम्माविमुत्तीति** इमिना पन पदेन वुत्तावसेसा फलसमापत्तिसहगतधम्मा सङ्गहिताति वेदितब्बा । अरियफलसम्पयुत्तधम्मापि हि सब्बसो पटिपक्खतो विमुत्ततं उपादाय विमुत्तीति वत्तब्बतं लभन्ति ।

५९। **वचनसद्देन अप्पसद्दं** ति आरामुपचारेन गच्छतो अद्धिकजनस्सपि वचनसद्देन अप्पसद्दं । **नगरनिग्घोससद्देना** ति अविभावितत्थेन[4] नगरे मनुस्सानं निग्घोससद्देन ।

---

1. अभि-ट्ठ-२-३८२ पिट्ठे ।
2. वि.-१-५-पिट्ठे ।
4. अविभावत्थेन (स्या) अविकप्पत्थेन (क) दी-ट्ठ-३-१७, म-ट्ठ-३-२४१ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
3. दी. ३-२२५-२६० पिट्ठेसु ।

मनुस्सेहि समागम्म एकज्झं पवत्तितसद्दो हि निग्घोसो । **अनुसञ्चरणजनस्सा** ति अन्तोसञ्चारिनो जनस्स । **मनुस्सानं रहस्सकिरियट्ठानियं** ति मनुस्सानं रहस्सकरणस्स युत्तं अनुच्छविकं । विवेकानुरूपं ति एकीभावस्स अनुरूपं । सेसमेत्थ उत्तानमेव ।

बिम्बिसारसमागमकथावण्णना निट्ठिता ।

सारिपुत्तमोग्गल्लानपब्बज्जाकथावण्णना

B. 224

६०॥ इदानि "तेन खो पन समयेन सञ्जयो परिब्बाजको" ति आदीसु अपुब्बपदवण्णनं दस्सेन्तो **"सारिपुत्तमोग्गल्लाना"** ति आदिमाह । तत्थ सारिब्राह्मणिया पुत्तो **सारिपुत्तो,** मोग्गल्लीब्राह्मणिया पुत्तो **मोग्गल्लानो** । अम्हाकं किर[1] भगवतो निब्बत्तितो पुरेतरमेव सारिपुत्तो राजगहनगरस्स अविदूरे उपतिस्सगामे सारी-ब्राह्मणिया नाम कुच्छियं पटिसन्धिं गण्हि । तंदिवसमेवस्स सहायोपि राजगहस्सेव अविदूरे कोलितगामे मोग्गलीब्राह्मणिया कुच्छियं पटिसन्धिं गण्हि । तानि किर द्वेपि कुलानि याव सत्तमा कुलपरिवट्टा आबद्धपटिबद्धसहायानेव[2] । तेसं द्विन्नं एकदिवसमेव गब्भपरिहारं अदंसु । दसमासच्चयेन जातानम्पि तेसं छसट्ठि धातियो उपनयिंसु । नामग्गहणदिवसे सारीब्राह्मणिया पुत्तस्स उपतिस्सगामे जेट्ठकुलस्स पुत्तत्ता "उपत्तिस्सो" ति नामं अकंसु, इतरस्स कोलितगामे जेट्ठकुलस्स पुत्तत्ता "कोलितो" ति नामं अकंसु । तेन वुत्तं **"गिहिकाले उपतिस्सो कोलितो ति एवं पञ्ञायमाननामा** ति ।

अड्ढतेय्यसतमाणवकपरिवारा ति एत्थ पञ्चपञ्चसतमाणवकपरिवारातिपि वदन्ति । वुत्तञ्हेतं **अङ्गुत्तरनिकायट्ठकथायं**[3]–

"उपतिस्समाणवकस्स कीळनत्थाय नदिं वा उय्यानं वा गमनकाले पञ्च सुवण्णसिविकासतानि परिवारानि होन्ति, कोलितमाणवकस्स पञ्च आजञ्ञरथ-सतानि । द्वेपि जना पञ्चपञ्चमाणवकसतपरिवारा होन्ती" ति ।

राजगहे च अनुसंवच्छरं गिरग्गसमज्जं नाम होति । तेसं द्विन्नम्पि एकट्ठानेयेव मञ्चकं बन्धन्ति । द्वेपि एकतोव निसीदित्वा समज्जं पस्सित्वा हसितब्बट्ठाने हसन्ति, संवेगट्ठाने संविज्जन्ति, दायं दातुं युत्तट्ठाने दायं देन्ति । तेसं इमिनाव नियामेन एकदिवसं समज्जं पस्सन्तानं परिपाकगतत्ता ञाणस्स पुरिमदिवसेसु विय हसि-तब्बट्ठाने हासो वा संगवेगट्ठाने संविज्जनं वा दायं दातुं युत्तट्ठाने दायदानं वा

---

1. अं-ट्ठ-१-१२१, धम्मपद-ट्ठ-१-५६-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. अखण्डपटिबद्धसहायानेव (स्या.) ।
3. अं-ट्ठ-१-१२२-पिट्ठे ।

B. 225 नाहोसि । द्वेपि पन जना एवं चिन्तयिंसु "किं एत्थ अलोकेतब्बं अत्थि, सब्बेपिमे अप्पत्ते वस्ससते अपण्णत्तिकभावं गमिस्सन्ति, अम्हेहि पन एकं मोक्खधम्मं गवेसितुं वट्टती" ति आरम्मणं गहेत्वा निसीदिंसु । ततो कोलितो उपतिस्सं आह "सम्म उपतिस्स न त्वं अञ्ञदिवसेसु विय हट्ठपहट्ठो, अनत्तमनधातुकोसि, किं ते सल्लक्खितं" ति । "सम्म कोलित एतेसं ओलोकने सारो नत्थि, निरत्थकमेतं, अत्तनो मोक्खधम्मं गवेसितुं वट्टती" ति इदं चिन्तयन्तो निसिन्नोम्हीति । त्वं पन कस्मा अनत्तमनो ति । सोपि तथेव आह । अथस्स अत्तना सद्धिं एकज्झासयतं ञत्वा उपतिस्सो एवमाह "अम्हाकं उभिन्नं सुचिन्तितं, मोक्खधम्मं पन गवेसन्तेहि एका पब्बज्जा लद्धुं वट्टति, कस्स सन्तिके पब्बजामा" ति ।

तेन खो पन समयेन सञ्जयो परिब्बाजको राजगहे पटिवसति महतिया परिब्बाजकपरिसाय सद्धिं । ते "तस्स सन्तिके पब्बजिस्सामा" ति पञ्चहि माणवकसतेहि सद्धिं सञ्जयस्स सन्तिके पब्बजिंसु । तेसं पब्बजितकालतो पट्ठाय सञ्जयो अतिरेकलाभग्गयसग्गप्पत्तो अहोसि । ते कतिपाहेनेव सब्बं सञ्जयस्स समयं परिमद्दित्वा "आचरिय तुम्हाकं जाननसमयो एत्तकोव, उदाहु उत्तरिपि अत्थी" ति पुच्छिंसु । सञ्जयो "एत्तकोव, सब्बं तुम्हेहि ञातं" ति आह । तस्स कथं सुत्वा चिन्तयिंसु "एवं सति इमस्स सन्तिके ब्रह्मचरियवासो निरत्थको, मयं मोक्खधम्मं गवेसितुं निक्खन्ता, सो इमस्स सन्तिके उप्पादेतुं न सक्का, महा खो पन जम्बुदीपो, गामनिगमराजधानियो चरन्ता अवस्सं मोक्खधम्मदेसकं आचरियं लभिस्सामा" ति । ते ततो पट्ठाय "यत्थ यत्थ पण्डिता समणब्राह्मणा अत्थी" ति सुणन्ति, तत्थ तत्थ गन्त्वा पञ्हसाकच्छं करोन्ति, तेहि पुट्ठं पञ्हं अञ्ञो कथेतुं समत्थो नाम नत्थि, ते पन तेसं पञ्हं विस्सज्जेन्ति । एवं सकलजम्बुदीपं परिग्गण्हित्वा निवत्तित्वा सकट्ठानमेव आगन्त्वा "सम्म कोलित यो पठमं अमतं अधिगच्छति, सो आरोचेतू"- ति कतिकं अकंसु । इममेव वत्थुं सङ्खिपित्वा दस्सेन्तो **"तत्र नेसं महाजनं दिस्वा......पे०...... कतिकं अकंसू"** ति आह ।

तत्थ **छन्नपरिब्बाजकस्सा** ति सेतपटधरस्स परिब्बाजकस्स । तेन नायं नग्गपरिब्बाजको ति दस्सेति । **पासादिकेन अभिक्कन्तेना** ति आदीसु **पासादिकेना** ति B. 226 पसादावहेन सारुप्पेन समणानुच्छविकेन । **अभिक्कन्तेना** ति गमनेन । **पटिक्कन्तेना** ति निवत्तनेन । **आलोकितेना** ति पुरतो दस्सनेन । **विलोकितेना** ति इतो चितो दस्सनेन । **समिञ्जितेना** ति पब्बसङ्कोचनेन । **पसारितेना** ति तेसंयेव पसारणेन । सब्बत्थ इत्थम्भूतलक्खणे[1] करणवचनं, तस्मा सतिसम्पजञ्ञकेहि अभिसङ्खतत्ता पासादिकअभिक्कन्तपटिक्कन्तआलोकितविलोकितसमिञ्जितपसारितो हुत्वा ति वुत्तं होति ।

---

1. इत्थम्भूताख्यानत्थे (स्या) ।

ओक्खित्तचक्खूति हेट्ठाखित्तचक्खु । **इरियापथसम्पन्नो** ति ताय पासादिक-अभिक्कन्तादिताय सम्पन्नइरियापथो । अत्थिकेहि उपञ्ञातं ति "मरणे सति अमतेनपि भवितब्बं" ति एवं अनुमानञाणेन "अत्थी" ति उपगतं निब्बानं नाम, तं मग्गन्तो परियेसन्तो यन्नूनाहं इमं भिक्खुं पिट्ठितो पिट्ठितो अनुबन्धेय्यं ति सम्बन्धो । **सुदिन्नकण्डे वुत्तप्पकारं** ति "दानपतीनं घरेसु साला होन्ति, आसनानि चेत्थ पञ्ञत्तानि होन्ति, उपट्ठापितं उदककञ्जियं, तत्थ पब्बजिता पिण्डाय चरित्वा निसीदित्वा भुञ्जन्ति । सचे इच्छन्ति, दानपतीनम्पि सन्तकं गण्हन्ति, तस्मा तम्पि अञ्ञतरस्स कुलस्स ईदिसाय सालाय अञ्ञतरं कुट्टमूलं ति वेदितब्बं" ति[1] एवं वुत्तप्पकारं ।

अप्पं वा बहूं वा भासस्सू ति परिब्बाजको "अहं उपतिस्सो नाम, त्वं यथासत्तिया अप्पं वा बहुं वा पावद, एतं नयसतेन नयसहस्सेन पटिविज्झितुं मय्हं भारो" ति चिन्तेत्वा एवमाह । निरोधो च निरोधुपायो च एकदेससरूपेकसेसनयेन "निरोधो" ति वुत्तो ति दस्सेन्तो "अथ वा" ति आदिमाह । **पटिपादेन्तो** ति निगमेन्तो । **इमं धम्मपरियायं सुत्वा विरजं वीतमलं धम्मचक्खुं उदपादीति** एत्थ परिब्बाजको पठमपदद्वयमेव सुत्वा सहस्सनयसम्पन्ने सोतापत्तिफले पतिट्ठहि । इतरपदद्वयं सोतापन्नकाले निट्ठासीति वेदितब्बं ।

बहुकेहि कप्पनहुतेहीति एत्थ दस दसकानि सतं, दस सतानि सहस्सं, सहस्सानं सतं सतसहस्सं, सतसहस्सानं सतं कोटि, कोटिसतसहस्सानं सतं पकोटि, पकोटिसत-सहस्सानं सतं कोटिपकोटि, कोटिपकोटिसतसहस्सानं सतं एकनहुतं ति वेदितब्बं ।

६१॥ **अथ खो सारिपुत्तो परिब्बाजको येन मोग्गल्लानो परिब्बाजको तेनुपसङ्कमीति**[2] सोतापन्नो हुत्वा उपरिविसेसे अप्पवत्तन्ते "भविस्सति एत्थ कारणं"ति सल्लक्खेत्वा B. 227 थेरं आह "भन्ते मा उपरि" धम्मदेसनं वड्ढयित्थ, एत्तकमेव होतु, कहं अम्हाकं सत्था वसती"ति । वेळुवने परिब्बजका ति । भन्ते तुम्हे पुरतो याथ, मय्हं एको सहायको अत्थि, अम्हेहि च अञ्ञमञ्ञं कतिका कता 'यो पठमं अमतं अधिगच्छति, सो आरोचेतू' ति, अहं तं पटिञ्ञं मोचेत्वा सहायकं गहेत्वा तुम्हाकं गतमग्गेनेव सत्थु सन्तिकं आगमिस्सामी" ति पञ्चपतिट्ठितेन थेरस्स पादेसु निपतित्वा तिक्खत्तुं पदक्खिणं कत्वा थेरं उय्योजेत्वा परिब्बाजकारामाभिमुखो अगमासि ।

६२॥ **सारिपुत्तं परिब्बाजकं एतदवोचा** ति "अज्ज मय्हं सहायस्स मुखवण्णो न अञ्ञदिवसेसु विय, अद्धा अनेन अमतं अधिगतं भविस्सती"ति अमताधिगमं पुच्छन्तो एतदवोच । सोपिस्स "आमावुसो अमतं अधिगतं" ति पटिजानित्वा सब्बं पवत्तिं आरोचेत्वा तमेव गाथं अभासि । गाथापरियोसाने मोग्गल्लानो परिब्बाजको

1. वि-ट्ठ-१-१७४ पिट्ठे ।
2. अं-ट्ठ-१-१२४, धम्मपद-ट्ठ-१-५९ पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं ।

सोतापत्तिफले पतिट्ठहि । तेन वुत्तं **"अथ खो मोग्गल्लानस्स परिब्बाजकस्स......पे०...... धम्मचक्खुं उदपादी"** ति । **गच्छाम मयं आवुसो भगवतो सन्तिकेति** "कहं सम्म सत्था वसती" ति पुच्छित्वा "वेळुवने किर सम्म, एवं नो आचरियेन अस्सजित्थेरेन कथितं" ति वुत्ते एवमाह ।

सारिपुत्तत्थेरो च नामेस सदापि आचरियपूजकोव, तस्मा सहायं मोग्गल्लानं परिब्बाजकं एवमाह "अम्हेहि अधिगतं अमतं अम्हाकं आचरियस्स सञ्जय-परिब्बाजकस्सपि कथेस्साम, बुज्झमानो पटिविज्झिस्सति, अप्पटिविज्झन्तो अम्हाकं सद्दहित्वा सत्थु सन्तिकं गमिस्सति, बुद्धानं देसनं सुत्वा मग्गफलपटिवेधं करिस्सती"ति । ततो द्वेपि जना सञ्जयस्स सन्तिकं अगमंसु । तेन वुत्तं **"अथ खो सारिपुत्तमोग्गल्लाना येन सञ्जयो परिब्बाजको तेनुपसङ्कमिंसू"** ति । उपसङ्कमित्वा च B. 228 "आचरिय त्वं किं करोसि, लोके बुद्धो उप्पन्नो, स्वाक्खातो धम्मो, सुप्पटिपन्नो संघो, आयाम दसबलं पस्सिस्सामा" ति । सो "किं वदथ ताता" ति तेपि वारेत्वा लाभग्गय-सग्गप्पवत्तिमेव नेसं दीपेति । ते "अम्हाकं एवरूपो अन्तेवासिकवासो निच्चमेव होतु, तुम्हाकं पन गमनं वा अगमनं वा जानाथा" ति आहंसु । सञ्जयो "इमे एत्तकं जानन्ता मम वचनं न करिस्सन्ती" ति ञत्वा "गच्छथ तुम्हे ताता, अहं महल्लककाले अन्तेवासिकवासं वसितुं न सक्कोमी" ति आह । ते अनेकेहिपि कारणसतेहि तं बोधेतुं असक्कोन्ता अत्तनो ओवादे वत्तमानं जनं आदाय वेळुवनं अगमंसु । पञ्चसु अन्तेवासिकसतेसु [अड्ढतेय्यसता निवत्तिंसु, अड्ढतेय्यसता तेहि सद्धिं अगमंसु । तेन वुत्तं **"अथ खो सारिपुत्तमोग्गल्लाना तानि अड्ढतेय्यानि परिब्बाजकसतानि आदाय येन वेळुवनं तेनुपसङ्कमिंसू"** ति ।

विमुत्ते ति यथावुत्तलक्खणे निब्बाने तदारम्मणाय फलविमुत्तिया अधिमुत्ते ने सारिपुत्तमोग्गल्लाने ब्याकासीति सम्बन्धो ।

एवं ब्याकरित्वा च सत्था चतुपरिसमज्झे धम्मं देसेन्तो नेसं परिसाय चरिय-वसेन धम्मदेसनं वड्ढेसि, ठपेत्वा द्वे अग्गसावके सब्बेपि अड्ढतेय्यसता परिब्बाजका अरहत्तं पापुणिंसु । सत्था "एथ भिक्खवो" ति हत्थं पसारेसि, सब्बेसं केसमस्सु अन्तरधायि, इद्धिमयपत्तचीवरं कायपटिबद्धं अहोसि । अग्गसावकानम्पि इद्धिमय-पत्तचीवरं आगतं, उपरिमग्गत्तयकिच्चं पन न निट्ठाति । कस्मा ? सावक-पारमीञाणस्स महन्तताय । अथायस्मा महामोग्गल्लानो पब्बजितदिवसतो सत्तमे दिवसे मगधरट्ठे कल्लवाळगामकं उपनिस्साय समणधम्मं करोन्तो थिनमिद्धं ओक्कमन्तो सत्थारा संवेजितो थिनमिद्धं विनोदेत्वा तथागतेन दिन्नं धातुकम्मट्ठानं सुणन्तोव उपरिमग्गत्तयकिच्चं निट्ठापेत्वा सावकपारमीञाणस्स मत्थकं पत्तो । सारिपुत्तत्थेरो पि पब्बजितदिवसतो अड्ढमासं अतिक्कमित्वा सत्थारा सद्धिं

तमेव राजगहं उपनिस्साय सुकरखतलेणे विहरन्तो अत्तनो भागिनेय्यस्स दीघनख-परिब्बाजकस्स वेदनापरिग्गहसुत्तन्ते देसियमाने सुत्तानुसारेन ञाणं पेसेत्वा परस्स वड्ढितभत्तं भुञ्जन्तो विय सावकपारमीञाणस्स मत्थकं पत्तो । तेनेवाह **"महामोग्गल्लानत्थेरो सत्तहि दिवसेहि अरहत्ते पतिट्ठितो,** सारिपुत्तत्थेरो अड्ढमासेना" ति ।

यदिपि महामोग्गलानत्थेरो न चिरस्सेव अरहत्तं पत्तो, धम्मसेनापति ततो B. 229 चिरेन, एवं सन्तेपि सारिपुत्तत्थेरोव महापञ्ञतरो । महामोग्गल्लानत्थेरो हि सावकानं सम्मसनचारं यट्ठिकोटिया उप्पीळेन्तो विय एकदेसमेव सम्मसन्तो सत्त दिवसे वायमित्वा अरहत्तं पत्तो । सारिपुत्तत्थेरो ठपेत्वा बुद्धानं पच्चेकबुद्धानञ्च सम्म-सनचारं सावकानं सम्मसनचारं निप्पदेसं सम्मसि, एवं सम्मसन्तो अड्ढमासं वायमि । उक्कंसगतस्स सावकानं सम्मसनचारस्स निप्पदेसेन पवत्तियमानत्ता सावक-पारमीञाणस्स च कथा परिपाचेतब्बत्ता । यथा हि पुरिसो "वेणुयट्ठिं गण्हिस्सामी" ति महाजटं वेणुं दिस्वा "जटं छिन्दन्तस्स पपञ्चो भविस्सती" ति अन्तरेन हत्थं पवेसेत्वा सम्पत्तमेव यट्ठिं मूले च अग्गे च छिन्दित्वा आदाय पक्कमेय्य, सो किञ्चापि पठमतरं गच्छति, यट्ठिं पन सारं वा उजुं वा न लभति । अपरो तथारूपमेव वेणुं दिस्वा सचे सम्पत्तयट्ठिं गण्हिस्सामि, सारं वा उजुं वा न लभिस्सामीति कच्छं बन्धित्वा महन्तेन सत्थेन वेणुजटं छिन्दित्वा सारा चेव उजू च यट्ठियो उच्चिनित्वा आदाय पक्कमेय्य, अयं किञ्चापि पच्छा गच्छति, यट्ठियो पन सारा चेव उजू च लभति, एवंसम्पदमिदं इमेसं द्विन्नं थेरानं पधानं ।

सम्मसनचारा च नामेत्थ विपस्सनाभूमि वेदितब्बा, सम्मसनं चरति एत्थाति सम्मसनचारो ति कत्वा । तत्थ बुद्धानं सम्मसनचारो दससहस्सलोकधातुयं सत्त-सन्तानगता अनिन्द्रियबद्धा च सङ्खाराति वदन्ति । कोटिसतसहस्सचक्कवाळेसूति अपरे । तथा हि अत्तनियवसेन पटिच्चसमुप्पादनयं ओतरित्वा छत्तिंसकोटिसत-सहस्समुखेन बुद्धानं महावजिरञाणं पवत्तं । पच्चेकबुद्धानं ससन्तानगतेहि सद्धिं मज्झिमदेसवासीसत्तसन्तानगता अनिन्द्रियबद्धा च सङ्खारा सम्मसनचारो ति वदन्ति । जम्बुदीपवासीसन्तानगता ति केचि । ससन्तानगते सब्बधम्मे परसन्तानगते च सन्तानविभागं अकत्वा बहिद्धाभावसामञ्ञतो सम्मसनं, अयं सावकानं सम्म-सनचारो । मोग्गल्लानत्थेरो पन बहिद्धा धम्मेपि ससन्तानविभागेन केचि केचि उद्धरित्वा सम्मसि, तञ्च खो ञाणेन फुट्ठमत्तं कत्वा । तेन वुत्तं "यट्ठिकोटिया उप्पीळेन्तो विय एकदेसमेव सम्मसन्तो" ति । तत्थ ञाणेन नाम यावता नेय्यं वत्तितब्बं, तावता अवत्तनतो "यट्ठिकोटिया उप्पीळेन्तो विया" ति वुत्तं, अनुपदधम्म- B. 230 विपस्सनाय अभावतो "एकदेसमेव सम्मसन्तो" ति वुत्तं । धम्मसेनापतिनोपि यथावुत्तसावकानं विपस्सनाय भूमियेव सम्मसनचारो । तत्थ पन थेरो सातिसयं

निरवसेसं अनुपदञ्च सम्मा विपस्सि । तेन वुत्तं "सावकानं सम्मसनचारं निप्पदेसं सम्मसी" ति ।

एत्थ च सुक्खविपस्सका लोकियाभिञ्ञप्पत्ता पकतिसावका महासावका अग्गसावका पच्चेकबुद्धा सम्मासम्बुद्धा ति छसु जनेसु सुक्खविपस्सकानं झानाभिञ्ञाहि अनधिगतपञ्ञानेपुञ्ञत्ता[1] अन्धानं विय इच्छितपदेसोक्कमनं विपस्सनाकाले इच्छितिच्छितधम्मभावना नत्थि, ते यथापरिग्गहितधम्ममत्तेयेव विपस्सनं वड्ढेन्ति । लोकियाभिञ्ञप्पत्ता पन पकतिसावका येन मुखेन विपस्सनं आरभन्ति, ततो अञ्ञेनपि विपस्सनं वित्थारिकं कातुं सक्कोन्ति विपुलञाणत्ता । महासावका अभिनीहारसम्पन्नत्ता ततो सातिसयं विपस्सनं वित्थारिकं कातुं सक्कोन्ति । अग्गसावकेसु दुतियो अभिनीहारसम्पत्तिया समाधानस्स सातिसयत्ता विपस्सनं ततोपि वित्थारिकं करोति । पठमो पन ततो पि महापञ्ञताय सावकेहि असाधारणं कत्वा विपस्सनं वित्थारिकं करोति । पच्चेकबुद्धा तेहिपि महाभिनीहारताय अत्तनो अभिनीहारानुरूपं ततोपि वित्थारिकं विपस्सनं करोन्ति । बुद्धानं सम्मदेव परिपूरितपञ्ञापारमीपभाविता सब्बञ्ञुतञ्ञाणाधिगमस्स अनुरूपा यथा नाम कतवालवेधपरिचयेन सरभङ्गसदिसेन धनुग्गहेन खित्तो सरो अन्तरा रुक्खलतादीसु असज्जमानो लक्खेयेव पतति, न सज्जति न विरज्जति, एवं अन्तरा असज्जमाना अविरज्जमाना विपस्सना सम्मसनीयधम्मेसु याथावतो नानानयेहि पवत्तति, यं "महावजिरञाणं" ति वुच्चति ।

एतेसु च सुक्खविपस्सकानं विपस्सनाचारो खज्जोतप्पभासदिसो, अभिञ्ञप्पत्तपकतिसावकानं दीपप्पभासदिसो, महासावकानं उक्काप्पभासदिसो, अग्गसावकानं ओसधितारकप्पभासदिसो, पच्चेकबुद्धानं चन्दप्पभासदिसो, सम्मासम्बुद्धानं रस्मिसहस्सपटिमण्डितसरदसूरियमण्डलसदिसो हुत्वा उपट्ठाति । तथा सुक्खविपस्सकानं B. 231 विपस्सनाचारो अन्धानं यट्ठिकोटिया गमनसदिसो, लोकियाभिञ्ञप्पत्तपकतिसावकानं दण्डकसेतुगमनसदिसो, महासावकानं जङ्घसेतुगमनसदिसो, अग्गसावकानं सकटसेतुगमनसदिसो, पच्चेकबुद्धानं महाजङ्घमग्गगमनसदिसो, सम्मासम्बुद्धानं महासकटमग्गगमनसदिसो । तथा बुद्धानं पच्चेकबुद्धानञ्च[2] विपस्सना चिन्तामयञाणसंवड्ढितत्ता सयम्भूञाणभूता,इतरेसं सुतमयञाणसंवड्ढितत्ता परोपदेससम्भूताति वेदितब्बा ।

---

1. अनधिगतञाणे सुञ्ञत्ता (स्या) ।
2. तथा बुद्धानञ्च । (क)

इदानि उभिन्नम्पि थेरानं पुब्बयोगं दस्सेतुं **अतीते किरा** ति आदिमाह। तं सब्बं उत्तानत्थमेव।

६३॥ गिरिब्बजनगरं ति समन्ता पब्बतपरिक्खित्तं वजसदिसं हुत्वा तिट्ठतीति गिरिब्बजं ति एवं लद्धनामं राजगहनगरं। उसूयनकिरियाय कम्मभावं सन्धाय **"उपयोगत्थे वा"** ति वुत्तं।

सारिपुत्तमोग्गल्लानपब्बज्जाकथावण्णना निट्ठिता।

उपज्झायवत्तकथावण्णना

६४॥ वज्जावज्जं उपनिज्झायतीति उपज्झायो, नत्थि उपज्झायो एतेसं ति **अनुपज्झायका**। तेनाह **"वज्जावज्जं उपनिज्झायकेन गरुना विरहिता"** ति। तत्थ वज्जावज्जं ति खुद्दकं महन्तञ्च वज्जं। वुद्धिअत्थो हि अयमकारो "फलाफलं" ति आदीसु विय। **उत्तिट्ठपत्तं** ति एत्थ उच्छिट्ठ-सद्दसमानत्थो **उत्तिट्ठ**-सद्दो। तेनेवाह **"तस्मिं हि मनुस्सा उच्छिट्ठसञ्ञिनो, तस्मा उत्तिट्ठपत्तं ति वुत्तं"** ति। **पिण्डाय चरणकपत्तं**-ति इमिना पन पत्तस्स सरूपदस्सनमुखेन उच्छिट्ठकप्पनाय कारणं विभावितं। **तस्मिं** ति तस्मिं पिण्डाय चरणकपत्ते।

६५॥ **सगारवा सप्पतिस्सा** ति एत्थ गरुभावो गारवं, पासाणच्छत्तं विय गरुकरणीयता। सह गारवेनाति सगारवा। गरुना किस्मिञ्चि वुत्ते गारववसेन पतिस्सवनं पतिस्सो, पतिस्सवभूतं तं सभागञ्च यंकिञ्चि गारवं ति अत्थो। सह पतिस्सेनाति सप्पतिस्सा, ओवादं सम्पटिच्छन्ता ति अत्थो। पतिस्सीयतीति वा पतिस्सो, गरुकातब्बो। तेन सह पतिस्सेनाति **सप्पतिस्सा**। अट्ठकथायं पन B. 232 ब्यञ्जनविचारं अकत्वा अत्थमत्तमेव दस्सेतुं **"गरुकभावञ्चेव जेट्ठकभावञ्च उपट्ठपेत्वा"** ति वुत्तं। साहूति साधु। **लहूति** अगरु, मम तुम्हं उपज्झायभावे भारियं नाम नत्थीति अत्थो। **ओपायिकं** ति उपायपटिसंयुत्तं ते उपज्झायग्गहणं इमिना उपायेन त्वं मे इतो पट्ठाय भारो जातोसीति वुत्तं होति। **पतिरूपं** ति अनुरूपं तव उपज्झायग्गहणं ति अत्थो। **पासादिकेनाति** पसादावहेन कायवचीपयोगेन। **सम्पादेही**-ति तिविधसिक्खं निप्फादेहीति अत्थो। **कायेन** वा ति हत्थमुद्दादिं दस्सेन्तो कायेन वा विञ्ञापेति। **गहितो तया.....पे०.....** **विञ्ञापेतीति** "साहू" ति आदीसु एकं वदन्तोयेव इममत्थं विञ्ञापेतीति वुच्चति। तेनेवाह **"इदमेव ही"** ति आदि। **साधूति सम्पटिच्छनं खन्धाया** ति उपज्झायेन "साहू" ति वुत्ते सद्धिविहारिकस्स "साधू" ति सम्पटिच्छनवचनं सन्धाय। कस्मा नप्पमाणं ति आह **"आयाचनदानमत्तेन ही"** ति आदि, सद्धिविहारि-

कस्स "उपज्झायो मे भन्ते होती" ति आयाचनमत्तेन, उपज्झायस्स च "साहू" ति आदिना दानवचनमत्तेनाति अत्थो । **न एत्थ सम्पटिच्छनं अङ्गं** ति सद्धिविहारिकस्स सम्पटिच्छनवचनं एत्थ उपज्झायग्गहणे अङ्गं न होति ।

६६॥ **सम्मावत्तनाति** सम्मापवत्ति । **अस्साति** सद्धिविहारिकस्स । **तादिसमेव मुखधोवनोदकं दातब्बं** ति उतुम्हि सरीरसभावे च एकाकारे तादिसमेव दातब्बं । **द्वे चीवरानीति** पारुपनं सङ्घाटिञ्च सन्धाय वदति । यदि एवं "सङ्घाटियो" ति कस्मा वुत्तं ति आह **"सब्बं हि चीवरं सङ्घटितत्ता सङ्घाटीति वुच्चती"** ति । **पदवीतिहारेहीति** एत्थ पदं वीतिहरति एत्थाति **पदवीतिहारो,** पदवीतिहरणट्ठानं दूतविलम्बितं अकत्वा समगमने द्विन्नं पदानं अन्तरे मुट्ठिरतनमत्तं । पदानं वा वीतिहरणं अभिमुखं हरित्वा निक्खेपो **पदवीतिहारो** ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो । **इतोपट्ठाया** ति "न उपज्झायस्स भणमानस्सा" ति एत्थ वुत्त न-कारतो पट्ठाय । **सब्बत्थ दुक्कटापत्ति वेदितब्बा** ति "ईदिसेसु गिलानोपि न मुच्चती"ति दस्सनत्थं वुत्तं । अञ्ञम्पि हि यथावुत्तं उपज्झायवत्तं अनादरियेन अकरोन्तस्स अगिलानस्स वत्तभेदे सब्बत्थ दुक्कटमेव । B. 233 तेनेव वक्खति "अगिलानेन हि सद्धिविहारिकेन सट्ठिवस्सेनपि सब्बं उपज्झायवत्तं कातब्बं, अनादरेन अकरोन्तस्स वत्तभेदे दुक्कटं । न-कारपटिसंयुत्तेसु पन पदेसु गिलानस्सपि पटिक्खित्तकिरियं करोन्तस्स दुक्कटमेवा" ति[1] । **आपत्तिया आसन्नवाचं** ति आपत्तिजनकमेव वचनं सन्धाय वदति । याय हि वाचाय आपत्तिं आपज्जति, सा वाचा तस्सा आपत्तिया आसन्नाति वुच्चति ।

चीवरेन पत्तं वेठेत्वा ति एत्थ "उत्तरासङ्गस्स एकेन कण्णेन वेठेत्वा" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **गामे** ति गामपरियापन्ने तादिसे किस्मिञ्चि पदेसे । **अन्तरघरे** ति अन्तोगेहे । **पटिक्कमने** ति आसनसालायं । तिक्खत्तुं पानीयेन पुच्छितब्बो ति सम्बन्धो, आदिम्हि मज्झे अन्ते ति एवं तिक्खत्तुं पुच्छितब्बो ति अत्थो । **उपकट्ठो** ति आसन्नो । **धोतवालिकाया** ति निरजाय परिसुद्धवालिकाय । **सचे पहोतीति** वुत्तमेवत्थं विभावेति **"न केनचि गेलञ्ञेन अभिभूतो होती" ति** । **परिवेणं गन्त्वाति** उपज्झायस्स परिवेणं **गन्त्वा** ।

उपज्झायवत्तकथावण्णना निट्ठिता ।

६७॥ सद्धिविहारिकवत्तकथा उत्तानत्थायेव ।

नसम्मावत्तनादिकथावण्णना

६८॥ नसम्मावत्तनादिकथायं **गेहस्सितपेमं** ति "पिता मे अयं" ति एवं उप्पन्नपेमं । उपज्झायम्हि पितुचित्तुपट्ठानमेव हि इध गेहस्सितपेमं नाम । न हि इदं

---

1. वि-ट्ठ-३-२६१-पिट्ठे ।

अकुसलपक्खियं गेहस्सितपेमं सन्धाय वुत्तं पटिविद्धसच्चानं पहीनानुगेधानं[1] तदसम्भवतो, न च भगवा भिक्खू संकिलेसे नियोजेति, गेहस्सितपेमसदिसत्ता पन पेममुखेन मेत्तासिनेहो इध वुत्तो ति वेदितब्बं । "तेसु एको वत्तसम्पन्नो भिक्खु ....पे०...... तेसं अनापत्ती"ति वचनतो सचे एको वत्तसम्पन्नो भिक्खु "भन्ते तुम्हे अप्पोस्सुक्का होथ, अहं तुम्हाकं सद्धिविहारिकं अन्तेवासिकं वा गिलानं उपट्ठहिस्सामि, ओवदितब्बं ओवदिस्सामि, इति करणीयेसु उस्सुक्कं आपज्जिस्सामी"ति वदति, ते एव वा सद्धिविहारिकादयो "भन्ते तुम्हे केवलं अप्पोस्सुक्का होथा"ति वदन्ति, वत्तं वा न सादियन्ति, ततो पट्ठाय आचरियुपज्झायानं अनापत्तीति वदन्ति । B. 234 सेसमेत्थ उत्तानमेव ।

नसम्मावत्तनादिकथावण्णना निट्ठिता ।

राधब्राह्मणवत्थुकथावण्णना

६९॥ राधब्राह्मणवत्थुम्हि **किसो अहोसीति** खादितुं वा भुञ्जितुं वा असक्कोन्तो तनुको अहोसि अप्पमंसलोहितो । **उप्पण्डुप्पण्डुकजातो** ति सञ्जातुप्पण्डुप्पण्डुकभावो पण्डुपलासप्पटिभागो । **धमनिसन्थतगत्तो** ति परियादिन्नमंसलोहितत्ता सिराजालेनेव सन्थरितगत्तो । **अधिकारं** ति अधिकिरियं, सक्कारं ति वुत्तं होति । कतं जानन्तीति **कतञ्ञुनो,** कतं पाकटं कत्वा जानन्तीति **कतवेदिनो** । किं पन थेरो भगवता बाराणसियं तीहि सरणगमनेहि अनुञ्ञातं पब्बज्जं उपसम्पदञ्च न जानातीति ? नो न जानाति । यदि एवं "कथाहं भन्ते तं ब्राह्मणं पब्बाजेमि उपसम्पादेमी" ति कस्मा आहाति इमं अनुयोगं सन्धायाह **"किञ्चापि आयस्मा सारिपुत्तो"** ति आदि । **परिमण्डलेहीति** परिपुण्णेहि । **अञ्ञथा वा वत्तब्बं अञ्ञथा वदतीति** "भन्ते" ति वत्तब्बं **"बन्धे"** ति[2] वदति ।

७१-७३॥ **समन्तरा** ति अनन्तरं । **पण्णत्तिवीतिक्कमं करोतीति** सिक्खापदवीतिक्कमं करोति । अत्तभावपरिहरणत्थं निस्सीयन्तीति **निस्सया,** पिण्डियालोपभोजनादिका चत्तारो पच्चया । तत्थ **पिण्डियालोपभोजनं** ति जङ्घपिण्डियबलेन चरित्वा आलोपमत्तं लद्धभोजनं । **अतिरेकलाभोति** "पिण्डियालोपभोजनं निस्साया" ति एवं वुत्तभिक्खाहारलाभतो अधिकलाभो संघभत्तादि । तत्थ सकलस्स संघस्स दातब्बभत्तं **संघभत्तं** । कतिपये भिक्खू उद्दिसित्वा दातब्बभत्तं **उद्देसभत्तं** । निमन्तेत्वा दातब्बभत्तं निमन्तनं ।

1. पहीनानुरोधानं (स्या) ।
2. भदन्तेति (स्या) ।

सलाकं गाहापेत्वा दातब्बभत्तं **सलाकभत्तं** । एकस्मिं पक्खे एकदिवसं दातब्बभत्तं **पक्खिकं** । उपोसथे दातब्बभत्तं **उपोसथिकं** । पाटिपददिवसे दातब्बभत्तं **पाटिपदिकं** । वित्थारकथा नेसं सेनासनक्खन्धकवण्णनायं आवि भविस्सति ।

B. 235 **विहारो** ति पाकारपरिच्छिन्नो सकलो आवासो । **अड्ढयोगो** ति दीघपासादो । गरुळसण्ठानपासादो ति पि वदन्ति । **पासादो** ति चतुरस्सपासादो । **हम्मियं** ति मुण्डच्छदनपासादो । अपरे पन भणन्ति "विहारो नाम दीघमुखपासादो, अड्ढयोगो एकपस्सच्छदनकसेनासनं, तस्स किर एकपस्से भित्ति उच्चतरा होति, इतरपस्से नीचा, तेन तं एकपस्सच्छदनकं होति, पासादो आयतचतुरस्सपासादो, हम्मियं मुण्डच्छदनं चन्दिकङ्गणयुत्तं" ति । **गुहा** ति पब्बतगुहा । **पूतिमुत्तं** ति यं किञ्चि मुत्तं । यथा सुवण्णवण्णोपि कायो "पूतिकायो" ति वुच्चति, एवं अभिनवम्पि मुत्तं पूतिमुत्तमेव । सेसमेत्थ उत्तानत्थमेव ।

राधब्राह्मणवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

आचरियवत्तकथावण्णना

७५॥ उपसेनवत्थुम्हि **आचिण्णं** ति चरितं वत्तं अनुधम्मता । **कच्चि भिक्खु खमनीयं** ति भिक्खु कच्चि तुय्हं इदं चतुचक्कं नवद्वारं सरीरयन्तं खमनीयं सक्का खमितुं सहितुं परिहरितुं, न किञ्चि दुक्खं उप्पादेतीति । **कच्चि यापनीयं** ति कच्चि सब्बकिच्चेसु यापेतुं सक्का, न किञ्चि अन्तरायं दस्सेतीति । **जानन्तापि** तथागता ति एवमादि यं परतो "कति वस्सोसि त्वं भिक्खू" ति आदिना पुच्छि, तस्स परिहार-दस्सनत्थं वुत्तं । तत्रायं सङ्खेपत्थो–तथागता नाम जानन्ता पि सचे तादिसं पुच्छाकारणं होति, पुच्छन्ति । सचे पन तादिसं पुच्छाकारणं नत्थि, जानन्तापि न पुच्छन्ति । यस्मा पन बुद्धानं अजाननं नाम नत्थि, तस्मा "अजानन्तापी" ति न वुत्तं । **कालं विदित्वा पुच्छन्तीति** सचे तस्सा पुच्छाय सो कालो होति, एवं तं कालं विदित्वा पुच्छन्ति । सचे न होति, एवम्पि कालं विदित्वाव न पुच्छन्ति । एवं पुच्छन्तापि च अत्थसंहितं तथागता पुच्छन्ति, यं अत्थनिस्सितं कारणनिस्सितं, तदेव पुच्छन्ति, नो अनत्थसंहितं । कस्मा ? यस्मा **अनत्थसंहिते सेतुघातो तथागतानं** । **सेतु** वुच्चति मग्गो, मग्गेनेव तादिसस्स वचनस्स घातो समुच्छेदो ति वुत्तं होति ।

इदानि अत्थसंहितं ति एत्थ यं अत्थनिस्सितं वचनं तथागता पुच्छन्ति, तं B. 236 दस्सेन्तो "द्वीहि आकारेही" ति आदिमाह । तत्थ आकारेहीति कारणेहि । **धम्मं वा देसेस्सामाति** अट्ठुप्पत्तियुत्तं सुत्तं वा पुब्बचरितकारणयुत्तं जातकं वा कथयिस्साम ।

सावकानं वा सिक्खापदं पञ्ञपेस्सामाति सावकानं वा ताय पुच्छाय वीतिक्कमं पाकटं कत्वा गरुकं वा लहुकं वा सिक्खापदं पञ्ञपेस्साम आणं ठपेस्साम । **अतिलहुं** ति अतिसीघं ।

७६॥ अञ्ञतित्थियवत्थुम्हि **अञ्ञतित्थियपुब्बो** ति पुब्बे अञ्ञतित्थियो भूतोति अञ्ञतित्थियपुब्बो । एत्थ[1] च तित्थं जानितब्बं, तित्थकरो जानितब्बो, तित्थिया जानितब्बा, तित्थियसावका जानितब्बा । तत्थ **तित्थं** नाम द्वासट्ठि दिट्ठियो । एत्थ हि सत्ता तरन्ति उप्पिलवन्ति उम्मुज्जनिमुज्जं करोन्ति, तस्मा तित्थं ति वुच्चन्ति । तासं दिट्ठीनं उप्पादेता **तित्थकरो** नाम पूरणकस्सपादिको । तस्स लद्धिं गहेत्वा पब्बजिता **तित्थिया** नाम । ते हि तित्थे जाताति तित्थिया, यथावुत्तं वा दिट्ठिगतसङ्खातं तित्थं एतेसं अत्थीति तित्थिका, तित्थिका एव तित्थिया । तेसं पच्चयदायका **तित्थियसावकाति** वेदितब्बा । **सहधम्मिकं वुच्चमानो** ति सहधम्मिकेन वुच्चमानो, करणत्थे उपयोगवचनं । पञ्चहि सहधम्मिकेहि सिक्खितब्बत्ता, तेसं वा सन्तकत्ता "सहधम्मिकं" ति लद्धनामेन बुद्धपञ्ञत्तेन सिक्खापदेन वुच्चमानो ति अत्थो । **पसूरो** ति तस्स नामं । **परिब्बाजको** ति गिहिबन्धनं पहाय पब्बज्जुपगतो ।

तंयेव तित्थायतनं ति एत्थ द्वासट्ठिदिट्ठिसङ्खातं तित्थमेव आयतनं ति तित्थायतनं, तित्थं वा एतेसं अत्थीति तित्थिनो, तित्थिया, तेसं आयतनं तिपि **तित्थायातनं** । **आयतनं** ति च "अस्सानं कम्बोजो आयतनं, गुन्नं दक्खिणपथो आयतनं" ति एत्थ सञ्जातिट्ठानं आयतनं नाम ।

"मनोरमे आयतने, सेवन्ति नं विहङ्गमा ।
छायं छायत्थिनो यन्ति, फलत्थं फलभोजिनो" ति[2]—

एत्थ समोसरणट्ठानं । "पञ्चिमानि भिक्खवे विमुत्तायतनानी" ति एत्थ[3] कारणं, तं इध सब्बम्पि लब्भति । सब्बेपि हि दिट्ठिगतिका सञ्जायमाना इमासुयेव द्वासट्ठिया दिट्ठीसु सञ्जायन्ति, समोसरमानापि एतासुयेव समोसरन्ति सन्निपतन्ति, दिट्ठिगतिकभावे च नेसं इमायेव द्वासट्ठि दिट्ठियो कारणं, तस्मा यथावुत्तं तित्थमेव सञ्जातिआदिना अत्थेन आयतनं ति तित्थायतनं, तेनेवत्थेन तित्थीनं आयतनं तिपि तित्थायतनं। B. 237

आयस्मतो निस्साय वच्छामीति एत्थ आयस्मतो ति उपयोगत्थे सामिवचनं, आयस्मन्तं निस्साय वसिस्सामीति अत्थो । **ब्यत्तो**.......पे०...... वुत्तलक्खणोयेवा ति परिसुपट्ठापकबहुस्सुतं सन्धाय वदति । पञ्चहुपालि अङ्गेहीति आदीसु यं वत्तब्बं, तं परतो आवि भविस्सति ।

आचरियवत्तकथावण्णना निट्ठिता ।

---

1. अ-ट्ठ-२-१५५-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।
2. अं-२-३६-पिट्ठे।
3. अं-२-१७ पिट्ठे ।

पणामनाखमापनाकथावण्णना

८०॥ यं पुब्बे लक्खणं वुत्तं ति सम्बन्धो, 'तेनेव लक्खणेन निस्सयन्तेवासिकस्स आपत्ति वेदितब्बा" ति पोत्थकेसु पाठो दिस्सति, "न तेनेव लक्खणेन निस्सयन्तेवासिकस्स आपत्ति वेदितब्बा" ति एवं पनेत्थ पाठो वेदितब्बो । सद्धिविहारिकस्स वुत्तलक्खणेन निस्सयन्तेवासिकस्स आपत्ति न वेदितब्बाति एवं पनेत्थ अत्थो पि वेदितब्बो । अञ्ञथा 'निस्सयन्तेवासिकेन हि याव आचरियं निस्साय वसति, ताव सब्बं आचरियवत्तं कातब्बं" ति इदं विरुज्झेय्य । इदञ्हि वचनं निस्सयन्तेवासिकस्स अमुत्तनिस्सयस्सेव वत्तं अकरोन्तस्स आपत्तीति दीपेति । तस्मा सद्धिविहारिकस्स यथावुत्तवत्तं अकरोन्तस्स निस्सयमुत्तकस्स अमुत्तकस्सपि आपत्ति, निस्सयन्तेवासिकस्स पन अमुत्तनिस्सयस्सेव आपत्तीति गहेतब्बं । तेनेव **विसुद्धिमग्गेपि**[1] **ञातिपलिबोधकथायं**–

'ञातीति विहारे आचरियुपज्झायसद्धिविहारिकअन्तेवासिकसमानुपज्झायकसमानाचरियका, घरे माता पिता भगिनी भाताति एवमादिका । ते गिलाना इमस्स पलिबोधा होन्ति, तस्मा सो पलिबोधो उपट्ठहित्वा तेसं पाकतिककरणेन उपच्छिन्दितब्बो। तत्थ उपज्झायो ताव गिलानो सचे लहुं न वुट्ठाति, यावजीवं पटिजग्गितब्बो । तथा पब्बज्जाचरियो उपसम्पदाचरियो सद्धिविहारिको उपसम्पादितपब्बाजितअन्तेवासिकसमानुपज्झायका च । निस्सयाचरिय उद्देसाचरिय निस्सयन्तेवासिक उद्देसन्तेवासिकसमानाचरियका पन याव निस्सयउद्देसा अनुपच्छिन्ना, ताव पटिजग्गितब्बा" ति–विभागेन वुत्तं । अयञ्च विभागो 'तेनेव लक्खणेन निस्सयन्तेवासिकस्स आपत्ति वेदितब्बा" ति एवं पाठे सति न युज्जेय्य । अयञ्हि पाठो सद्धिविहारिकस्स विय निस्सयन्तेवासिकस्सपि यथावुत्तवत्तं अकरोन्तस्स निस्सयमुत्तकस्स अमुत्तकस्सपि आपत्तीति इममत्थं दीपेति, तस्मा वुत्तनयेनेवेत्थ पाठो गहेतब्बो ।

पब्बज्जउपसम्पदधम्मन्तेवासिकेहि पन.......पे०......**ताव वत्तं कातब्बं** ति पब्बज्जाचरियउपसम्पदाचरियधम्माचरियानं एतेहि यथावुत्तवत्तं कातब्बं । तत्थ येन सिक्खापदानि दिन्नानि, अयं **पब्बज्जाचरियो** । येन उपसम्पदकम्मवाचा वुत्ता, अयं **उपसम्पदाचरियो** । यो उद्देसं परिपुच्छं वा देति, अयं **धम्माचरियो** ति वेदितब्बं । सेसमेत्थ उत्तानमेव ।

पणामनाखमापनाकथावण्णना निट्ठिता ।

---

1. विसुद्धि-१-९१ पिट्ठे ।

निस्सयपटिप्पस्सद्धिकथावण्णना

८३॥ निस्सयपटिप्पस्सद्धिकथायं **दिसं गतो** ति पुन आगन्तुकामो अनागन्तुकामो वा हुत्वा वासत्थाय कञ्चि दिसं गतो। **भिक्खुनो सभागतं** ति पेसलभावं। **ओलोकेत्वा** ति उपपरिक्खित्वा। **विब्भन्ते......पे०......तत्थ गन्तब्बं** ति एत्थ सचे केनचि करणीयेन तदहेव गन्तुं असक्कोन्तो कतिपाहेन गमिस्सामीति गमने सउस्साहो होति, रक्खतीति वदन्ति। **मा इध पटिक्कमीति** मा इध पविसि। **तत्रेव वसितब्बं** ति तत्थेव निस्सयं गहेत्वा वसितब्बं। **तंयेव विहारं......पे०......वसितुं वट्टतीति** एत्थ उपज्झायेन परिच्चत्तत्ता उपज्झायसमोधानपरिहारो नत्थि, तस्मा उपज्झायेन समोधानगतस्सपि आचरियस्स सन्तिके गहितनिस्सयो न पटिप्पस्सम्भति।

आचरियम्हा निस्सयपटिप्पस्सद्धीसु आचरियो पक्कन्तो वा होतीति एत्थ B. 239 "पक्कन्तोति दिसं गतो" ति आदिना उपज्झायस्स पक्कमने यो विनिच्छयो वुत्तो, सो तत्थ वुत्तनयेनेव इधापि सक्का विञ्ञातुं ति तं अवत्वा "कोचि आचरियो आपुच्छित्वा पक्कमती" ति आदिना अञ्ञोयेव नयो आरद्धो, अयञ्च नयो उपज्झायपक्कमने पि वेदितब्बोयेव। ईदिसेसु हि ठानेसु एकत्थ वुत्तलक्खणं अञ्ञत्थापि दट्ठब्बं। **सचे द्वे लेड्डुपाते अतिक्कमित्वा निवत्तति, पटिप्पस्सद्धो होतीति** एत्थ एत्तावता दिसापक्कन्तो नाम होतीति अन्तेवासिके अनिक्खित्तधुरेपि निस्सयो पटिप्पस्सम्भति। **आचरियुपज्झाया द्वे लेड्डुपाते अतिकम्म अञ्ञस्मिं विहारे वसन्तीति** बहिउपचारसीमायं अन्तेवासिकसद्धिविहारिकानं वसनट्ठानतो द्वे लेड्डुपातेअतिक्कम्म अञ्ञस्मिं सेनासने वसन्ति, अन्तोउपचारसीमायं पन द्वे लेड्डुपाते अतिक्कमित्वापि वसतो निस्सयो न पटिप्पस्सम्भति। "सचे पि आचरियो मुञ्चितुकामोव हुत्वा निस्सयपणामनाय पणामेती" ति आदि सब्बं उपज्झायस्स आणत्तियम्पि वेदितब्बं। सेसमेत्थ उत्तानमेव।

निस्सयपटिप्पस्सद्धिकथावण्णना निट्ठिता।

उपसम्पादेतब्बपञ्चककथावण्णना

८४॥ **पञ्चहि भिक्खवे अङ्गेहि समन्नागतेना** ति आदीसु **न सामणेरो उपट्ठापेतब्बो** ति उपज्झायेन हुत्वा सामणेरो न गहेतब्बो। अयमत्थो **अङ्गुत्तरनिकायट्ठकथायं**[1] वुत्तोयेव।

"अत्तानमेव पठमं, पतिरूपे निवेसये।
अथञ्ञमनुसासेय्य, न किलिस्सेय्य पण्डितो" ति[2]—

1. अं-ट्ठ-३-८५ पिट्ठे।
2. खु-१-३७-पिट्ठे।

इमस्स अनुरूपवसेन पठमं ताव अत्तसम्पत्तियं नियोजेतुं **"न असेक्खेन सीलक्खन्धेना"** ति आदि वुत्तं, न आपत्तिअङ्गवसेन। तत्थ **असेक्खेन सीलक्खन्धेना** ति असेक्खस्स सीलक्खन्धो असेक्खो सीलक्खन्धो नाम। असेक्खस्स अयं ति हि असेक्खो, B. 240 सीलक्खन्धो। एवं सब्बत्थ। एवञ्च कत्वा विमुत्तिञाणदस्सनसङ्खातस्स पच्चवेक्खण-ञाणस्सपि असेक्खता उपपन्ना। **असेक्खसीलं** ति च न मग्गफलमेव[1] अधिप्पेतं, अथ खो यंकिञ्चि असेक्खसन्ताने पवत्तसीलं लोकियलोकुत्तरमिस्सकस्स सीलस्स इधाधिप्पेतत्ता। समाधिक्खन्धादीसुपि विमुत्तिक्खन्धपरियोसानेसु अयमेव नयो। तस्मा यथा सीलसमाधिपञ्ञक्खन्धा मिस्सका अधिप्पेता, एवं विमुत्तिक्खन्धोपीति तदङ्गविमुत्तिआदयोपि वेदितब्बा, न पटिप्पस्सद्धिविमुत्ति एव। विमुत्तिञाणदस्सनं पन लोकियमेव। तेनेव **संयुत्तनिकायट्ठकथायं**[2] वुत्तं "पुरिमेहि चतूहि पदेहि लोकियलो-कुत्तरसीलसमाधिपञ्ञाविमुत्तियो कथिता, विमुत्तिञाणदस्सनं पच्चवेक्खणञाणं होति, तं लोकियमेवा" ति।

अस्सद्धो ति आदीसु तीसु वत्थूसु सद्धा एतस्स नत्थीति **अस्सद्धो**। सुक्कपक्खे सद्दहतीति सद्धो, **सद्धा** वा एतस्स अत्थीतिपि सद्धो। नत्थि एतस्स हिरीति **अहिरिको,** अकुसलसमापत्तिया अजिगुच्छमानस्सेतं अधिवचनं। हिरी एतस्स अत्थीति **हिरिमा**। न ओत्तप्पतीति **अनोत्तप्पी,** अकुसलसमापत्तिया न भायतीति वुत्तं होति। तब्बिपरीतो **ओत्तप्पी**। कुच्छितं सीदतीति **कुसीतो,** हीनवीरियस्सेतं अधिवचनं। आरद्धं वीरियं एतस्साति **आरद्धवीरियो,** सम्मप्पधानयुत्तस्सेतं अधिवचनं। मुट्ठा सति एतस्साति मुट्ठस्सति, नट्ठस्सतीति वुत्तं होति। उपट्ठिता सति एतस्साति **उपट्ठितस्सति,** निच्चं आरम्मणाभिमुखप्पवत्तसतिस्सेतं अधिवचनं।

अधिसीले सीलविप्पन्नो च अज्झाचारे आचारविपन्नो च आपज्जित्वा अवुट्ठितो। सस्सतुच्छेदसङ्खातं अन्तं गण्हाति गाहयतीति वा अन्तग्गाहिका, मिच्छादिट्ठि। **पुरिमानि द्वे पदानीति** "न पटिबलो होति अन्तेवासिं वा सिद्धविहारिं वा गिलानं उपट्ठातुं वा उपट्ठापेतुं वा, अनभिरतं वूपकासेतुं वा वूपकासापेतुं वा" ति इमानि द्वे पदानि।

अभिविसिट्ठो उत्तमो समाचारो ति अभिसमाचारो, अभिसमाचारोव सिक्खि-तब्बतो सिक्खाति **आभिसमाचारिका सिक्खा,** अभिसमाचारं वा आरब्भ पञ्ञत्ता B. 241 सिक्खा **आभिसमाचारिका**। मग्गब्रह्मचरियस्स आदिभूता ति **आदिब्रह्मचरियका,** उभतोविभङ्गपरियापन्नसिक्खायेतं अधिवचनं। तेनेव "उभतोविभङ्गपरियापन्नं

---

1. अग्गफलसीलमेव (स्या)
2. सं-ट्ठ-१-१५२-पिट्ठे

आदिब्रह्मचरियकं, खन्धकवत्तपरियापन्नं आभिसमाचारिकं" ति **विसुद्धिमग्गे**[1] वुत्तं । तस्मा **सेक्खपण्णत्तियं** ति एत्थ सिक्खितब्बतो सब्बापि उभतोविभङ्गपरियापन्ना पण्णत्तीति गहेतब्बा । तेनेव **गण्ठिपदे** पि वुत्तं "सेक्खपण्णत्तियं ति पाराजिकमादिं कत्वा सिक्खितब्बसिक्खापदपञ्ञत्तियं" ति । सेसमेत्थ उत्तानत्थमेव

उपसम्पादेतब्बपञ्चककथावण्णना निट्ठिता ।

अञ्ञतित्थियपुब्बवत्थुकथावण्णना

८६॥ अञ्ञतित्थियवत्थुम्हि आजीवको अचेलको ति दुविधो नग्गपरिब्बाजको ति आह **"नग्गपरिब्बाजकस्सेव आजीवकस्स वा"** ति आदि । तत्थ **आजीवको** उपरि एकमेव वत्थं उपकच्छके पवेसेत्वा परिदहति, हेट्ठा नग्गो । **अचेलको** सब्बेन सब्बं नग्गोयेव ।

८७॥ **आमिसकिञ्चिक्खसम्पदानं** नाम अप्पमत्तकस्सेव देय्यधम्मस्स अनुप्पदानं । **रूपूपजीविकाति** अत्तनो रूपंयेव निस्साय जीवन्तियो । वेसिया गोचरो मित्तसन्थववसेन उपसङ्कमितब्बट्ठानं अस्साति **वेसियागोचरो** । एस नयो सब्बत्थ । **योब्बनप्पत्ता योब्बनातीता वा** ति उभयेनपि महल्लिका अनिविद्धकुमारियोव वदति । **भिक्खुनियो** नाम उस्सन्नब्रह्मचरिया, तथा भिक्खूपि । तेसं अञ्ञमञ्ञविसभागवत्थुभावतो सन्थववसेन उपसङ्कमने कतिपाहेनेव ब्रह्मचरियन्तरायो सिया ति आह **"ताहि सद्धिं खिप्पमेव विस्सासो होति, ततो सीलं भिज्जती"** ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव ।

अञ्ञतित्थियपुब्बवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

पञ्चाबाधवत्थुकथावण्णना

८८॥ पञ्चाबाधवत्थुम्हि **नखपिट्ठिप्पमाणं** ति एत्थ "कनिट्ठङ्गुलिनखपिट्ठि अधिप्पेता" ति तीसुपि **गण्ठिपदेसु** वुत्तं" । **तञ्चे नखपिट्ठिप्पमाणम्पि वड्ढनकपक्खे ठितं होति, न पब्बाजेतब्बो"** ति इमिना सामञ्ञतो लक्खणं दस्सितं, तस्मा यत्थ कत्थचि सरीरावयवेसु नखपिट्ठिप्पमाणं वड्ढनकपक्खे ठितञ्चे, न वट्टतीति सिद्धं । एवञ्च सति नखपिट्ठिप्पमाणम्पि अवड्ढनकपक्खे ठितञ्चे, सब्बत्थ वट्टतीति आपन्नं, तञ्च न सामञ्ञतो अधिप्पेतं ति पदेसविसेसेयेव नियमेत्वा दस्सेन्तो **"सचे पना"** ति B. 242

---

1. विसुद्धि-१-१२-पिट्ठे ।

आदिमाह । सचे हि अविसेसेन नखपिट्ठिप्पमाणं अवड्ढनकपक्खे ठितं वट्टेय्य, "निवासनपारुपनेहि पकतिपटिच्छन्ने ठाने" ति पदेसनियमं न करेय्य, तस्मा निवासनपारुपनेहि पकतिपटिच्छन्नट्ठानतो अञ्ञत्थ नखपिट्ठिप्पमाणं अवड्ढनकपक्खे ठितम्पि न वट्टतीति सिद्धं, नखपिट्ठिप्पमाणतो खुद्दकतरं पन अवड्ढनकपक्खे न वड्ढनकपक्खे वा ठितं होतु, वट्टति नखपिट्ठिप्पमाणतो खुद्दकतरस्स वड्ढनकपक्खे अवड्ढनकपक्खे वा ठितस्स मुखादीसुयेव पटिक्खित्तत्ता ।

गण्डे पि इमिनाव नयेन विनिच्छयो वेदितब्बो । तत्थ पन मुखादीसु कोलट्ठिमत्ततो खुद्दकतरो पि गण्डो न वट्टतीति विसुं न दस्सितो । "मुखादिके अप्पटिच्छन्नट्ठाने अवड्ढनकपक्खे ठितो पि न वट्टती"ति एत्तकमेव हि तत्थ वुत्तं, तथापि **कुट्ठे** वुत्तनयेनमुखादीसु कोलट्ठिप्पमाणतो खुद्दकतरो पि गण्डो न वट्टतीति विञ्ञायति, तस्मा **अवड्ढनकपक्खे ठितो पी** ति एत्थ पि–सद्दो अवुत्तसम्पिण्डनत्थो । तेन कोलट्ठिमत्ततो खुद्दकतरो पि न वट्टतीति अयमत्थो दस्सितोयेवाति अयमम्हाकं खन्ति । **पकतिवण्णे जाते** ति रोगहेतुकस्स विकारवण्णस्स अभावं सन्धाय वुत्तं । कोलट्ठिमत्तको ति बदरट्ठिप्पमाणो । **सुछविं**[1] **कारेत्वा** ति सञ्जातछविं कारेत्वा । 'सछविं[2] कारेत्वा' तिपि पाठो, विज्जमानछविं कारेत्वा ति अत्थो । **पदुमपुण्डरीकपत्तवण्णं** ति रत्तपदुमसेतपदुमवसेन पदुमपत्तवण्णं । सोसब्याधीति खयरोगो ।

पञ्चाबाधवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

B. 243,

राजभटादिवत्थुकथावण्णना

९०-९६॥ राजभटादिवत्थूसु **आहंसू** ति मनुस्सा[3] वदिंसु । **तस्मा**......पे॰..... **एवमाहाति** यस्मा सयं धम्मस्सामी, तस्मा भिक्खूहि अपब्बाजितब्बं चोरं अङ्गुलिमालं पब्बाजेत्वा आयतिं अकरणत्थाय भिक्खूनं सिक्खापदं पञ्ञपेन्तो "न भिक्खवे धजबन्धो चोरो पब्बाजेतब्बो, यो पब्बाजेय्य, आपत्ति दुक्कटस्सा" ति आह । **उपरमन्तीति** विरमन्ति निवत्तन्ति । **भिन्दित्वा** ति अन्दुबन्धनं भिन्दित्वा । **छिन्दित्वाति** **सङ्खलिकबन्धनं** छिन्दित्वा । **मुञ्चित्वा** ति रज्जुबन्धनं मुञ्चित्वा । **विवरित्वा** ति

---

1. सञ्छविं (स्या) ।
2. सछविं (स्या) ।
3. मुसा (क) ।

गामबन्धनादीसु गामद्वारादीनि विवरित्वा । **अपस्समानानं वा पलायतीति** पुरिसगुत्तियं पुरिसानं अपस्समानानं पलायति । **उपड्डुपड्ढंति** थोकं थोकं ।

९७॥ अभिसेकादीसु बन्धनागारादीनि सोधेन्ति, तं सन्धायाह **'सब्बसाधारणेन वा नयेना** ति । **सचे सयमेव पण्णं आरोपेन्ति, न वट्टतीति** ता भुजिस्सित्थियो "मयम्पि दासियो होमा' ति सयमेव दासिपण्णं लिखापेन्ति, न वट्टति । **तक्कं सीसे आसित्तकसदिसाव होन्तीति** यथा अदासे करोन्ता तक्केन सीसं धोवित्वा अदासं करोन्ति, एवं आरामिकवचनेन दिन्नत्ता अदासाव तेति अधिप्पायो । तक्कासिञ्चनं पन सीहळदीपे चारित्तं ति वदन्ति । **नेव पब्बाजेतब्बो ति वुत्तं** ति कप्पियवचनेन दिन्नेपि संघस्स आरामिकदासत्ता एवं वुत्तं । **निस्सामिकदासो** नाम यस्स सामिका सपुत्तदारादयो मता होन्ति, न कोचि तस्स परिग्गाहको, सोपि पब्बाजेतुं न वट्टति, तं पन अत्तनापि भुजिस्सं कातुं वट्टति । ये वा पन तस्मिं रट्ठे सामिनो, तेहिपि कारापेतुं वट्टति । 'देवदासिपुत्तं पब्बाजेतुं वट्टती" ति **तीसु गण्ठिपदेसु** वुत्तं । दासस्स पब्बजित्वा अत्तनो सामिके दिस्वा पलायन्तस्स आपत्ति नत्थीति वदन्ति । सेसं सब्बत्थ उत्तानमेव ।

राजभटादिवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

निस्सयमुच्चनककथावण्णना

B. 244

१०३॥ निस्सयमुच्चनकस्स वत्तेसु पञ्चकछक्केसु पन **उभयानि खो पन**......पे०..... **अनुब्यञ्जनसोति** एत्थ "सब्बोपि चायं पभेदो मातिकाट्ठकथायं आतायं आतो होती" ति **तीसुपि गण्ठिपदेसु** वुत्तं । आपत्तिं जानातीति आदीसु च 'पाठे अवत्तमानेपि "इदं नाम कत्वा इदं आपज्जती" ति जानाति चे, वट्टती" ति तत्थेव वुत्तं । तञ्च खो पुब्बे पाठे पगुणे कतेति गहेतब्बं ति च आचरियुपज्झायानम्पि एसेव नयो ति च केचि वदन्ति । सेसमेत्थ उत्तानमेव ।

निस्सयमुच्चनककथावण्णना निट्ठिता ।

राहुलवत्थुकथावण्णना

१०५॥ राहुलवत्थुम्हि **तत्थेव विहरिंसूति** सब्बेपि ते अरहत्तं पत्तकालतो पट्ठाय अरिया नाम मज्झत्ताव होन्तीति रञ्ञो पहितसासनं दसबलस्स अनारोचेत्वाव तत्थ विहरिंसु । **एकदिवसं जातं काळुदायिं नाम अमच्चं** ति अयं किर[1] पदुमुत्तरबुद्धकाले

---

1. अं-ट्ठ १-२३३ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

हंसवतीनगरे कुलगेहे निब्बत्तो सत्थु धम्मदेसनं सुणन्तो सत्थारं एकं भिक्खुं कुलप्पसादकानं अग्गट्ठाने ठपेन्तं दिस्वा अधिकारकम्मं कत्वा तं ठानन्तरं पत्थेसि। सो यावजीवं कुसलं कत्वा देवमनुस्सेसु संसरन्तो अम्हाकं बोधिसत्तस्स मातुकुच्छियं पटिसन्धिग्गहणदिवसे कपिलवत्थुस्मिंयेव अमच्चगेहे पटिसन्धिं गण्हि। जातदिवसे बोधिसत्तेन सद्धिंयेव जातोति तं दिवसंयेव दुकूलचुम्बटके निपज्जापेत्वा बोधिसत्तस्स उपट्ठानत्थाय नयिंसु। बोधिसत्तेन हि सद्धिं बोधिरुक्खो राहुलमाता चतस्सो निधिकुम्भियो आरोहनियहत्थी कण्डको[1] छन्नो काळुदायीति इमे सत्त एकदिवसे जातत्ता सहजाता नाम अहेसुं। अथस्स नमग्गहणदिवसे सकलनगरस्स उदग्गचित्त-दिवसे जातोति उदायीत्वेव नामं अकंसु। थोकं काळधातुकत्ता पन काळुदायी नाम जातो। सो बोधिसत्तेन सद्धिं कुमारकीळं कीळन्तो वुड्ढिं अगमासि।

B. 245 **सट्ठिमत्ताहि गाथाहीति**–

"अङ्गारिनो दानि दुमा भदन्ते,
फलेसिनो छदनं विप्पहाय।
ते अच्चिमन्तोव पभासयन्ति,
समयो महावीर भागीरसानं॥
नातिसीतं नातिउण्हं, नाति दुब्भिक्खछातकं।
सद्दला हरिता भूमि, एस कालो महामुनी" ति[2]–

आदिकाहि सट्ठिमत्ताहि गाथाहि। **पोक्खरवस्सं** ति पोक्खरपत्तवण्णमुदकं' ति **गण्ठिपदेसु वुत्तं**। पोक्खरपत्तप्पमाणं मज्झे उट्ठहित्वा अनुक्कमेन सतपटलं सहस्स-पटलं हुत्वा वस्सनकवस्संति पि वदन्ति। तस्मिं किर वस्सन्ते तेमेतुकामाव तेमेन्ति, न इतरे। **एको पि राजा वा......पे०.....गतो नत्थीति** धम्मदेसनं सुत्वा पक्कन्तेसु ञातीसु एकोपि राजा वा राजमहामत्तो वा "स्वे अम्हाकं भिक्खं गण्हथा" ति निमन्तेत्वा गतो नत्थि। पितापिस्स सुद्धोदनमहाराजा "मय्हं पुत्तो मम गेहं अनागन्त्वा कहं गमिस्सती"ति अनिमन्तेत्वाव अगमासि, गन्त्वा पन गेहे वीसतिया भिक्खुसहस्सानं यागुआदीनि पटियादापेत्वा आसनानि पञ्ञापेसि।

कुलनगरेति ञातिकुलस्स नगरे। **उण्हीसतो पट्ठाया** ति सीसतो पट्ठाय। उण्हीसं ति हि उण्हीससदिसत्ता भगवतो परिपुण्णनलाटस्स परिपुण्णसीसस्स च एतं अधिवचनं। भगवतो हि दक्खिणकण्णचूळिकतो पट्ठाय मंसपटलं उट्ठहित्वा सकलनलाटं छादयमानं पूरयमानं गन्त्वा वामकण्णचूळिकाय पतिट्ठितं सण्हतमताय सुवण्णवण्णताय पभस्सरताय परिपुण्णताय च रञ्ञो बद्धउण्हीसपट्टो विय विरोचति।

---

1. कण्ठको (स्या)।
2. खु-२-३००-पिट्ठे।

भगवतो किर इमं लक्खणं दिस्वा राजूनं उण्हीसपट्टं अकंसु । अञ्ञो पन जना अपरिपुण्णसीसा होन्ति, केचि कप्पसीसा,[1] केचि फलसीसा, केचि अट्ठिसीसा, केचि तुम्बसीसा, केचि कुम्भसीसा, केचि पब्भारसीसा, भगवतो पन आरग्गेन वट्टेत्वा ठपितं विय सुपरिपुण्णं उदकपुब्बुळसदिसम्पि होति । तेनेव उण्हीसवेठितसीस-सदिसत्ता उण्हीसं विय सब्बत्थ परिमण्डलसीसत्ता च उण्हीससीसो ति भगवा वुच्चति ।

नरसीहगाथाहि नाम अट्ठहि गथाहीति– B. 246

"सिनिद्धनीलमुदुकुञ्चितकेसो,
सूरियनिम्मलतलाभिनलाटो ।
युत्ततुङ्गमुदुकायतनासो,
रंसिजालवितततो नरसीहो" ति[2]–

एवमादिकाहि अट्ठहि गथाहि । गण्ठिपदेसु पन–

चक्कवरङ्कितरत्तसुपादो,
लक्खणमण्डितआयतपण्हि ।
चामरछत्तविभूसितपादो,
एस हि तुय्ह पिता नरसीहो ॥
सक्यकुमारवरो सुखुमालो,
लक्खणचित्तिकपुण्णसरीरो ।
लोकहिताय गतो नरवीरो,
एस हि तुय्ह पिता नरसीहो ॥
पुण्णससङ्कनिभो[3] मुखवण्णो,
देवनरान पियो नरनागो ।
मत्तगजिन्दविलासितगामी,
एस हि तुय्ह पिता नरसीहो ॥
खत्तियसम्भवअग्गकुलीनो ,
देवमनुस्सनमस्सितपादो ।
सीलसमाधिपतिट्ठितचित्तो,
एस हि तुय्ह पिता नरसीहो ॥
आयतयुत्तसुसण्ठितनासो,

1. कपिसीसा (क) ।
2. जातक-ट्ठ-१-१०४, अपदान, ट्ठ.-१०५-पिट्ठेसुपि ।
3. पुण्णससिकनिभो (स्या)

गोपखुमो अभिनीलसुनेत्तो।
इन्दधनूअभिनीलभमूको,
एस हि तुय्ह पिता नरसीहो॥

B. 247

वट्टसुवट्टसुसण्ठितगीवो,
सीहहनू मिगराजसरीरो।
कञ्चनसुच्छविउत्तमवण्णो,
एस हि तुय्ह पिता नरसीहो॥
सिनिद्धसुगम्भीरमञ्जुसघोसो,
हिङ्गुलबन्धुकरत्तसुजिव्हो।
वीसतिवीसतिसेत सुदन्तो,
एस हि तुय्ह पिता नरसीहो॥
अञ्जनवण्णसुनीलसुकेसो,
कञ्चनपट्टविसुद्धनलाटो।
ओसधिपण्डरसुद्धसुउण्णो,
एस हि तुय्ह पिता नरसीहो॥
गच्छति निलपथे विय चन्दो,
तारगणापरिवेठितरूपो
सावकमज्झगतो समणिन्दो,
एस हि तुय्ह पिता नरसीहो" ति[1]–

इमा नव गाथायो पि एत्थ दस्सिता, ता पन "अट्ठहि गाथा ही" ति वचनेन न समेन्ति। उण्हीसतो पट्ठाय याव पादतलाति वुत्तानुक्कमो पि तत्थ न दिस्सति। भिक्खाय चरतीति **भिक्खाचारो**।

उत्तिट्ठे ति उत्तिट्ठित्वा परेसं घरद्वारे ठत्वा गहेतब्बपिण्डे। **नप्पमज्जेयाति** पिण्डचारिकवत्तं हापेत्वा पणीतभोजनानि परियेसन्तो उत्तिट्ठे पमज्जति नाम, सपदानं पिण्डाय चरन्तो पन नप्पमज्जति नाम, एवं करोन्तो उत्तिट्ठे नप्पमज्जेय। **धम्मं** ति अनेसनं पहाय सपदानं चरन्तो तमेव भिक्खाचरियधम्मं सुचरितं चरे। **सुखं सेतीति** देसनामत्तमेतं, एवं पनेतं भिक्खाय चरियधम्मं चरन्तो धम्मचारी इधलोके च परलोके च चतूहिपि इरियापथेहि सुखं विहरतीति अत्थो।

B. 248

दुतियगाथाय न नं **दुच्चरितं** ति वेसियादिभेदे अगोचरे चरन्तो नं भिक्खाचरियधम्मं दुच्चरितं चरति नाम, एवं अचरित्वा तं धम्मं चरे सुचरितं, न नं दुच्चरितं चरे। सेसमेत्थ वुत्तत्थमेव। इमं पन दुतियगाथं पितु निवेसनं गन्त्वा

1. जातक-ट्ठ-१-१०४ पिट्ठे।

अभासीति वेदितब्बं । तेनेव **थेरगाथासंवण्णनायं**[1] **आचरियधम्मपालत्थेरेन** वुत्तं "दुतियदिवसे पिण्डाय पविट्ठो 'उत्तिट्ठे नप्पमज्जेय्या' ति गाथाय पितरं सोतापत्तिफले पतिट्ठापेत्वा निवेसनं गन्त्वा 'धम्मं चरे सुचरितं' ति गाथाय महापजापतिं सोतापत्तिफले राजानञ्च सकदागामिफले पतिपट्ठापेसी" ति । धम्मपदट्ठकथायम्पि[2] वुत्तं "पुनदिवसे पिण्डाय पविट्ठो 'उत्तिट्ठे नप्पमज्जेय्या' ति गाथाय पितरं सोतापत्तिफले पतिट्ठापेत्वा 'धम्मं चरे' ति गाथाय महापजापतिं सोतापतिफले राजानञ्च सकदागामिफले पतिट्ठापेसी" ति ।

धम्मपालजातकं सुत्वा अनागामिफले पतिट्ठासीति पुनेकदिवसं राजनिवेसने कतपातरासो एकमन्तं निसिन्नेन रञ्ञा "भन्ते तुम्हाकं दुक्करकारिककाले एका देवता मं उपसङ्कमित्वा 'पुत्तो ते कालकतो' ति आह । अहं तस्सा वचनं असद्दहन्तो 'न मय्हं पुत्तो बोधिं अप्पत्वा कालं करेतीति पटिक्खिपिं ति वुत्ते इदानि कथं सद्दहिस्सथ, पुब्बेपि अट्ठिकानि दस्सेत्वा 'पुत्तो ते मतो' ति वुत्ते न सद्दहित्था" ति इमिस्सा अट्ठुप्पत्तिया महाधम्मपालजातकं कथेसि । तं सुत्वा राजा अनागामिफले पतिट्ठहि ।

केसविस्सज्जनं ति कुलमरियादवसेन केसोरोपनं । पट्टबन्धो ति युवराज-पट्टबन्धो । अभिनवघरप्पवेसनमहो घरमङ्गलं, विवाहकरणमहो आवाहमङ्गलं । छत्तमङ्गलं ति युवराजछत्तमङ्गलं । जनपदकल्याणीति[3] जनपदम्हि कल्याणी उत्तमा छसरीरदोसरहिता पञ्चकल्याणसमन्नागता । सा हि यस्मा नातिदीघा नातिरस्सा नातिकिसा नातिथूला नातिकाळा नाच्चोदाताति अतिक्कन्ता मानुसं वण्णं, अप्पत्ता, दिब्बं वण्णं, तस्मा छसरीरदोसरहिता । छविकल्याणं मंसकल्याणं नहारुकल्याणं अट्ठिकल्याणं वयकल्याणं ति इमेहि पन पञ्चहि कल्याणेहि समन्नागतत्ता पञ्च-कल्याणसमन्नागता नाम । तस्सा हि आगन्तुकोभासकिच्चं नत्थि । अत्तनो B. 249 सरीरोभासेनेव द्वादसहत्थट्ठाने आलोकं करोति, पियङ्गुसामा वा होति सुवण्णसामा वा, अयमस्सा **छविकल्याणता** । चत्तारो पनस्सा हत्थपादामुखपरियोसानञ्च लाखार-सपरिकम्मकतं विय रत्तपवाळरत्तकम्बलसदिसं होति, अयमस्सा **मंसकल्याणता** । वीसति पन नखपत्तानि मंसतो अमुत्तट्ठाने लाखारसपूरितानि विय मुत्तट्ठाने खीरधारासदिसानि होन्ति, अयमस्सा **नहारुकल्याणता** । द्वत्तिंसं दन्ता सुफुसिता सुधोतवजिरपन्ति विय खायन्ति, अयमस्सा **अट्ठिकल्याणता** । वीसतिवस्ससतिकापि

---

1. थेरगाथा-ट्ठ-१-३५२-पिट्ठे ।
2. धम्मपद-ट्ठ-१-७४ पिट्ठे ।
3. उदान-ट्ठ-१५२-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।

समाना सोळसवस्सुद्देसिका विय होति निवलिपलिता, अयमस्सा **वयकल्याणता**। इति इमेहि पञ्चहि कल्याणेहि समन्नागतत्ता जनपदकल्याणीति वुच्चति।

तुवटं ति सीघं। सोपि भगवन्तं 'पत्तं गण्हथा' ति वत्तुं अविसहमानो विहारंयेव अगमासीति। सो किर तथागते गारवेन 'पत्तं वो भन्ते गण्हथा' ति वत्तुं नासक्खि। एवं पन चिन्तेसि 'सोपानसीसे पत्तं गण्हिस्सती" ति। सत्था तस्मिम्पि ठाने न गण्हि। इतरो "सोपानपादमूले गण्हिस्सती' ति चिन्तेसि। सत्था तत्थापि न गण्हि। इतरो 'राजङ्गणे गण्हिस्सती' ति चिन्तेसि। सत्था तत्थापि न गण्हि। कुमारो निवत्तितुकामो अरुचिया गच्छन्तो सत्थु गारवेन "पत्तं गण्हथा" ति वत्तुम्पि असक्कोन्तो 'इध गण्हिस्सति, एत्थ गण्हिस्सती" ति चिन्तेन्तो गच्छति। जनपदकल्याणिया च वुत्तवचनं तस्स हदये तिरियं पतित्वा विय ठितं। नन्दकुमारञ्हि अभिसेकमङ्गलं न तथा पीळेसि, यथा जनपदकल्याणिया वुत्तवचनं, तेनस्स चित्तसन्तापो बलवा अहोसि। अथ नं 'इमस्मिं ठाने निवत्तिस्सति, इमस्मिं ठाने निवत्तिस्सती" ति चिन्तेन्तमेव सत्था विहारं नेत्वा "पब्बजिस्ससि नन्दा" ति आह। सो बुद्धगारवेन 'न पब्बजिस्सामी" ति अवत्वा 'आम पब्बजिस्सामी" ति आह। सत्था 'तेन हि नन्दं पब्बाजेथा" ति वत्वा पब्बाजेसि। तेन वुत्तं **"अनिच्छमानंयेव भगवा पब्बाजेसी"** ति। सत्था कपिलपुरं गन्त्वा ततियदिवसे नन्दं पब्बाजेसी" ति **धम्मपदट्ठकथायं**[1] वुत्तं, **अङ्गुत्तरनिकायट्ठकथायं**[2] पन–

'महासत्तोपि सब्बञ्ञुतं पत्वा पवत्तितवरधम्मचक्को लोकानुग्गहं करोन्तो B. 250 राजगहतो कपिलवत्थुं गन्त्वा पठमदस्सनेनेव पितरं सोतापत्तिफले पतिट्ठापेसि, पुनदिवसे पितु निवेसनं गन्त्वा राहुलमाताय ओवादं कत्वा सेसजनस्सपि धम्मं कथेसि, पुनदिवसे नन्दकुमारस्स, अभिसेकगेहप्पवेसनआवाहमङ्गलेसु वत्तमानेसु तस्स निवेसनं गन्त्वा कुमारं पत्तं गाहापेत्वा पब्बाजेतुं विहाराभिमुखो पायासी' ति–

वुत्तं, इध पन "भगवा कपिलपुरं आगन्त्वा दुतियदिवसे नन्दं पब्बाजेसी" ति वुत्तं, सब्बम्पेतं आचरियेन तं तं भाणकानं तथा तथा अनुस्सववसेन परिहरित्वा आगतभावतो तत्थ तत्थ तथा तथा वुत्तं ति नत्थेत्थ आचरियवचने पुब्बापरविरोधो।

ब्रह्मरूपवण्णं ति ब्रह्मरूपसमानरूपं। **त्यस्सा** ति ते अस्स। **वट्टानुगतं** ति वट्टपरियापन्नं। **सविघातं** ति दुक्खसहितत्ता सविघातं, सदुक्खं ति अत्थो। सत्तविधं अरियधनं ति–

"सद्धाधनं सीलधनं, हिरिओत्तप्पियं धनं।
सुतधनञ्च चागो च, पञ्ञा वे सत्तमं धनं" ति[3]–

---

1. धम्मपद-ट्ठ-१-७४-पिट्ठे।
2. अं-ट्ठ-१-२४४-पिट्ठे।
3. अं. २-३९८-३९९-पिट्ठेसु।

एवं वुत्तं सत्तविधं अरियधनं। **उञ्छाचरियायाति** भिक्खाचरियाय। पुत्तसिनेहो उप्पज्जमानो सकलसरीरं खोभेत्वा अट्ठिमिञ्जंआहच्च तिट्ठतीति आह **"पुत्तपेमं भन्ते....पे०....अट्ठिमिञ्जं आहच्च तिट्ठती"** ति। पुत्तसिनेहो हि बलवभावतो सहजात-पीतिवेगस्स सविप्फारताय तंसमुट्ठानरूपधम्मेहि फरणवसेन सकलसरीरं आलोळेत्वा अट्ठिमिञ्जं आहच्च तिट्ठति। यत्र हि नामा ति यो नाम। सेसमेत्थ उत्तानमेव।

राहुलवत्थुकथावण्णना निट्ठिता।

सिक्खापददण्डकम्मवत्थुकथावण्णना

१०६ ॥ अनुजानामि भिक्खवे सामणेरानं दस सिक्खापदानीतिआदीसु सिक्खितब्बानि पदानि **सिक्खापदानि,** सिक्खाकोट्ठासा ति अत्थो। सिक्खाय वा पदानि सिक्खापदानि, अधिसीलअधिचित्तअधिपञ्ञासिक्खाय अधिगमुपाया ति अत्थो। B. 251 अत्थतो पन कामावचरकुसलचित्तसम्पयुत्ता विरतियो, तंसम्पयुत्तधम्मा पनेत्थ तग्गहणेनेव गहेतब्बा। सरसेनेव पतनसभावस्स अन्तरा एव अतिपातनं अतिपातो, सणिकं पतितुं अदत्वा सीघं पातनं ति अत्थो। अतिक्कम्म वा सत्थादीहि अभिभवित्वा पातनं अतिपातो, पाणस्स अतिपातो **पाणातिपातो,** पाणवधो पाणघातो ति वुत्तं होति। **पाणो** ति चेत्थ वोहारतो सत्तो, परमत्थतो जीवितिन्द्रियं। तस्मिं पन पाणे पाणसञ्ञिनो जीवितिन्द्रियुपच्छेदकउपक्कमसमुट्ठापिका कायवचीद्वारानं अञ्ञतरप्पवत्ता वधकचेतना पाणातिपातो, ततो पाणातिपाता।

वेरमणीति वेरहेतुताय वेरसञ्ञितं पाणातिपातादिपापधम्मं मणति, "मयि इध ठिताय कथमागच्छसी" ति वा तज्जेन्ती विय नीहरतीति वेरमणी। विरमति एकतायाति वा विरमणीति वत्तब्बे निरुत्तिनयेन "वेरमणी" ति वुत्तं। अत्थतो पन **वेरमणीति** कामावचरकुसलचित्तसम्पयुत्ता विरतियो। सा "पाणातिपातादिं विरमन्तस्स या तस्मिं समये पाणातिपाता आरति विरति पटिविरति वेरमणी अकिरिया अकरणं अनज्झापत्ति वेलानतिक्कमो सेतुघातो" ति एवमादिना नयेन **विभङ्गे**[1] वुत्ता। कामञ्चेसा वेरमणी नाम लोकुत्तरापि अत्थि, इध पन समादानवसप्पवत्ता विरति अधिप्पेता ति लोकुत्तराय विरतिया समादानवसेन पवत्तिअसम्भवतो कमावचर-कुसलचित्तसम्पयुत्ता विरतियो गहेतब्बा।

आदिन्नादाना वेरमणीति आदीसु अदिन्नस्स आदानं **अदिन्नादानं,** परस्सहरणं, थेय्यं चोरिका ति वुत्तं होति। तत्थ **अदिन्नं** ति परपरिग्गहितं। यत्थ परो यथाकामकारितं

---

1. अभि-२-२९९-पिट्ठे।

आपज्जन्तो अदण्डारहो अनुपवज्जो च होति, तस्मिं पन परपरिग्गहिते परपरिग्गहितसञ्ञिनो तदादायकउपक्कमसमुट्ठापिका थेय्यचेतना अदिन्नादानं।

अब्रह्मचरियं नाम असेट्ठचरियं द्वयंद्वयसमापत्ति। सा हि "अप्पस्सादा कामा बहुदुक्खा बहुपायासा, आदीनवो एत्थ भिय्यो" ति आदिना[1] हीळितत्ता असेट्ठा अप्पसत्था चरिया ति वा असेट्ठानं निहीनानं इत्थिपुरिसानं चरिया ति वा B. 252 असेट्ठचरियं, असेट्ठचरियत्ता अब्रह्मचरियं ति च वुच्चति, अत्थतो पन असद्धम्मसेवनाधिप्पायेन कायद्वारप्पवत्ता मग्गेनमग्गप्पटिपत्तिसमुट्ठापिका चेतना अब्रह्मचरियं।

मुसा ति अभूतं अतच्छं वत्थु, **वादो** ति तस्स भूततो तच्छतो विञ्ञापनं। लक्खणतो पन अतथं वत्थुं तथतो परं विञ्ञापेतुकामस्स तथाविञ्ञत्तिसमुट्ठापिका चेतना **मुसावादो** मुसा वदीयति वुच्चति एताया ति कत्वा।

सुरामेरयमज्जप्पमादट्ठाना ति एत्थ **सुरा** ति पूवसुरा पिट्ठसुरा ओदनसुरा किण्णपक्खित्ता सम्भारसंयुत्ता ति पञ्च सुरा। मेरयं ति पुप्फासवो फलासवो मध्वासवो गुळासवो सम्भारसंयुत्तो ति पञ्च आसवा। तत्थ पूवे भाजने पक्खिपित्वा तज्जं उदकं दत्वा मद्दित्वा कता पूवसुरा। एवं सेससुरा पि। **किण्णा** ति पन तस्सा सुराय बीजं वुच्चति, ये सुरामोदकाति वुच्चन्ति, ते पक्खिपित्वा कता **किण्णपक्खित्ता**। हरीतकीसासपादिनानासम्भारेहि संयोजिता **सम्भारसंयुत्ता**। मधुकतालनाळिकेरादिपुप्फरसो चिरपरिवासितो **पुप्फासवो**। पनसादिफलरसो **फलासवो**। मुद्दिकारसो **मध्वासवो**। उच्छुरसो गुळासवो। हरीतकामलककटुकभण्डादिनानासम्भारानं रसो चिरपरिवासितो **सम्भारसंयुत्तो**। तं सब्बम्पि मदकरणवसेन **मज्जं** पिवन्तं मदयतीति कत्वा। **पमादट्ठानं** ति पमादकारणं। याय चेतनाय तं मज्जं पिवन्ति। तस्सा एतं अधिवचनं। सुरामेरयमज्जे पमादट्ठानं सुरामेरयमज्जप्पमादट्ठानं, तस्मा **सुरामेरयमज्जप्पमादट्ठाना**।

विकालभोजना ति अरुणुग्गमनतो पट्ठाय याव मज्झन्हिका। अयं बुद्धादीनं अरियानं आचिण्णसमाचिण्णो भोजनस्स कालो नाम, तदञ्ञो विकालो। भुञ्जितब्बट्ठेन भोजनं, यागुभत्तादि सब्बं यावकालिकवत्थु। यथा च "रत्तूपरतो" ति[2] एत्थ रत्तिया भोजनं रत्तीति उत्तरपदलोपेन वुच्चति, एवमेत्थ भोजनज्झोहरणं भोजनं ति। विकाले भोजनं विकालभोजनं, ततो **विकालभोजना**, विकाले यावकालिकवत्थुस्स अज्झोहरणा ति अत्थो। अथ वा न एत्थ कम्मसाधनो भुञ्जितब्बत्थवाचको B. 253 भोजनसद्दो, अथ खो भावसाधनो अज्झोहरणत्थवाचको गहेतब्बो, तस्मा विकाले भोजनं अज्झोहरणं विकालभोजनं। कस्स पन अज्झोहरणं ति ? यामकालिकादीनं

---

1. म-१-१२६, मं-२-२७-पिट्ठेसु।
2. दी-१-५-६०, म-१-२३७, म-३-१२-पिट्ठेसु।

अनुञ्ञातत्ता विकालभोजन–सद्दस्स वा यावकालिकज्झोहरणे निरुळ्हत्ता यावकालिकस्साति विञ्ञायति, अत्थतो पन कायद्वारप्पवत्ता विकाले यावकालिकज्झोहरणचेतना "विकालभोजनं" ति वेदितब्बा।

नच्चगीतवादितविसूकदस्सना ति एत्थ सासनस्स अननुलोमत्ता विसूकं पटाणीभूतं दस्सनं ति विसूकदस्सनं। नच्चादीनञ्हि दस्सनं सछन्दरागप्पवत्तितो सङ्खेपतो "सब्बपापस्स अकरणं" ति आदिनयप्पवत्तं[1] भगवतो सासनं न अनुलोमेति। नच्चञ्च गीतञ्च वादितञ्च विसूकदस्सनञ्च **नच्चगीतवादितविसूकदस्सनं**। अत्तना पयोजियमानं परेहि पयोजापियमानञ्चेत्थ नच्चं नच्चभावसामञ्ञतो पाळियं एकेनेव नच्च–सद्देन गहितं, तथा गीतवादित–सद्देहि गायनगायापनवादनवादापनानि, तस्मा अत्तना नच्चननच्चापनादिवसेन नच्चा च गीता च वादिता च अन्तमसो मयूरनच्चादिवसेनपि पवत्तानं नच्चादीनं विसूकभूता दस्सना च वेरमणीति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो। नच्चादीनि अत्तना पयोजेतुं वा परेहि पयोजापेतुं वा पयुत्तानि पस्सितुं वा नेव भिक्खूनं न भिक्खुनीनं वट्टति। दस्सनेन चेत्थ सवनम्पि सङ्गहितं विरूपेकसेसनयेन। यथा सकं विसयआलोचनसभावताय वा पञ्चन्नं विञ्ञाणानं सवनकिरियायपि दस्सनसङ्खेपसम्भवतो "दस्सना" इच्चेव वुत्तं। तेनेव वुत्तं "पञ्चहि विञ्ञाणेहि न कञ्चि धम्मं पटिविजानाति अञ्ञत्र अभिनिपातमत्ता" ति। दस्सनकम्यताय उपसङ्कमित्वा पस्सतो एव चेत्थ वीतिक्कमो होति, ठितनिसिन्नसयनोकासे पन आगतं गच्छन्तस्स वा आपाथगतं पस्सतो सिया संकिलेसो, न वीतिक्कमो।

मालागन्धविलेपनधारणमण्डनविभूसनट्ठाना ति एत्थ **माला** ति यं किञ्चि पुप्फं। किञ्चापि हि माला–सद्दो लोके बद्धमालवाचको, सासने पन रुळ्हिया पुप्फेसुपि वुत्तो, तस्मा यं किञ्चि पुप्फं बद्धमबद्धं वा, तं सब्बं "माला" ति दट्ठब्बं। गन्धं ति वासचुण्णधूमादिकं[2] विलेपनतो अञ्ञं यं किञ्चि **गन्धजातं**। **विलेपनं** ति विलेपनत्थं पिसित्वा पटियत्तं यं किञ्चि छविरागकरणं। पिळन्धनं **धारणं**, ऊनट्ठानपूरणं मण्डनं, गन्धवसेन छविरागवसेन च सादियनं **विभूसनं**। तेनेव **दीघनिकायट्ठकथायं**[3] **मज्झिमनिकायट्ठकथायञ्च**[4] "पिळन्धन्तो धारेति नाम, ऊनट्ठानं पूरेन्तो मण्डेति नाम, गन्धवसेन छविरागवसेन च सादियन्तो विभूसेति नामा" ति वुत्तं। **परमत्थजोतिकायं** B. 254

1. दी–२-४२, खु–१-४१-पिट्ठेसु।
2. वासचुण्णधूपादिकं (स्या)।
3. दी-ट्ठ-१-७६-पिट्ठे।
4. म-ट्ठ-२-११३ पिट्ठे।

पन खुद्दकट्ठकथायं[1] "मालादीसु धारणादीनि यथासङ्ख्यं योजेतब्बानी" ति एतकमेव वुत्तं । ठानं वुच्चति कारणं, तस्मा याय दुस्सील्यचेतनाय तानि मालाधारणादीनि महाजनो करोति, सा धारणमण्डनविभूसनट्ठानं ।

उच्चासयनमहासयनाति एत्थ उच्चा ति उच्च-सद्देन समानत्थं एकं सद्दन्तरं । सेति एत्थाति सयनं, उच्चासयनञ्च महासयनञ्च **उच्चासयनमहासयनं** । **उच्चासयनं** वुच्चति पमाणतिक्कन्तं मञ्चादि । **महासयनं** अकप्पियत्थरणेहि अत्थतं आसन्दादि । आसनञ्चेत्थ सयनेनेव सङ्गहितं ति दट्ठब्बं । यस्मा पन आधारे पटिक्खित्ते तदाधारा किरिया पटिक्खित्ताव होति, तस्मा "उच्चासयनमहासयना" इच्चेव वुत्तं, अत्थतो पन तदुपभोगभूतनिसज्जानिपज्जनेहि विरति दस्सिता ति दट्ठब्बा । अथ वा उच्चासयन-महासयनसयनाति एतस्मिं अत्थे एकसेसनयेन अयं निद्देसो कतो यथा "नाम-रूपच्चया सळायतनं" ति, आसनकिरियापुब्बकत्ता सयनकिरियाय सयनग्गहणेनेव आसनम्पि गहितं ति वेदितब्बं ।

जातरूपरजतपटिग्गहणाति एत्थ **जातरूपं** ति सुवण्णं । रजतं ति कहापणो लोहमासको जतुमासको दारुमासको ति ये वोहारं गच्छन्ति, तस्स उभयस्सपि पटिग्गहणं जातरूपरजतपटिग्गहणं । तिविधञ्चेत्थ पटिग्गहणं कायेन वाचाय मनसा-ति । तत्थ कायेन पटिग्गहणं उग्गण्हनं, वाचाय पटिग्गहणं उग्गहापनं, मनसा पटिग्गहणं सादियनं । तिविधम्पि पटिग्गहणं सामञ्ञनिद्देसेन एकसेसनयेन वा गहेत्वा "पटिग्गहणा" ति वुत्तं, तस्मा नेव उग्गहेतुं न उग्गहापेतुं न उपनिक्खित्तं वा सादितुं वट्टति । इमानि पन दस सिक्खापदानि गहट्ठानम्पि साधारणानि । वुत्तञ्हेतं विसुद्धिमग्गे[2]" उपसकउपासिकानं निच्चसीलवसेन पञ्चसिक्खापदानि, सति वा उस्साहे दस, उपोसथङ्गवसेन अट्ठाति इदं गहट्ठसीलं" ति । एत्थ हि **दसा** ति B. 255 सामणेरेहि रक्खितब्बसीलमाह घटिकारादीनं विय । **परमत्थजोतिकायं** पन **खुद्दकट्ठकथायं**[3] "आदितो द्वे चतुत्थपञ्चमानि उपासकानं सामणेरानञ्च साधारणानि निच्चसीलवसेन, उपोसथसीलवसेन पन उपासकानं सत्तमट्ठमं चेतं अङ्गं कत्वा सब्बपच्छिमवज्जानि सब्बानिपि सामणेरेहि साधारणानि, पच्छिमं पन सामणेरानमेव विसेसभूतं" ति वुत्तं, तं "सति वा उस्साहे दसा" ति इमिना न समेति । **नासनवत्थूति** लिङ्गनासनाय वत्थु, अधिट्ठानं कारणं ति वुत्तं होति ।

१०७ ॥ **किन्तीति** केन नु खो उपायेन । **"अत्तनो परिवेणं** ति इदं पुग्गलिकं सन्धाय वुत्तं" ति **गण्ठिदेसु** वुत्तं । अयमेत्थ गण्ठिपदकारानं अधिप्पायो–"वस्सग्गेन

---

1. खुद्दकपाठ-ट्ठ-२६-पिट्ठे ।
2. विसुद्धि-१-१५-पिट्ठे ।
3. खुद्दकपाठ-ट्ठ-१४-पिट्ठे ।

पत्तसेनासनं"ति इमिना तस्स वस्सग्गेन पत्तं संघिकसेनासनं वुत्तं, "अत्तनो परिवेणं" ति इमिनापि तस्सेव पुग्गलिकसेनासनं वुत्तं ति। अयं पनेत्थ अम्हाकं खन्ति–"यत्थ वा वसती" ति इमिना संघिकं वा होतु पुग्गलिकं वा, तस्स निबद्धवसनकसेनासनं वुत्तं। "यत्थ वा पटिक्कमती" ति इमिना पन यं आचरियस्स उपज्झायस्स वा वसनट्ठानं उपट्ठानादिनिमित्तं निबद्धं पविसति, तं आचरियुपज्झायानं वसनट्ठानं वुत्तं। तस्मा तदुभयं दस्सेतुं **"उभयेनपि अत्तनो परिवेणञ्च वस्सग्गेन पत्तसेनासनञ्च वुत्तं"** ति आह। तत्थ **अत्तनो परिवेणं** ति इमिना आचरियुपज्झायानं वसनट्ठानं दस्सितं, **वस्सग्गेन पत्तसेनासनं** ति इमिना पन तस्स वसनट्ठानं। तदुभयम्पि संघिकं वा होतु पुग्गलिकं वा, आवरणं कातब्बमेवाति। **मुखद्वारिकं** ति मुखद्वारेन भुञ्जितब्बं। **दण्डकम्मं कत्वा** ति दण्डकम्मं योजेत्वा। दण्डेन्ति विनेन्ति एतेनाति दण्डो, सोयेव कातब्बत्ता कम्मं ति **दण्डकम्मं**, आवरणादि।

सिक्खापददण्डकम्मवत्थुकथावण्णना निट्ठिता।

अनापुच्छावरणवत्थुआदिकथावण्णना

१०८॥ **दण्डकम्मस्स करोथा** ति अस्स दण्डकम्मं योजेथ आणापेथ। **दण्डकम्मं** ति वा निग्गहकम्मं, तस्मा निग्गहमस्स करोथा ति वुत्तं होति। एस नयो सब्बत्थ ईदिसेसु ठानेसु। **सेनासनग्गाहो च पटिप्पस्सम्भतीति** इमिना च छिन्नवस्सो च होतीति दीपेति। **सचे आकिण्णदोसोव होति, आयतिं संवरे न तिट्ठति, निक्कड्ढितब्बो** ति एत्थ सचे यावततियं वुच्चमानो न ओरमति, संघं अपलोकेत्वा नासेतब्बो। पुन पब्बज्जं याचमानो पि अपलोकेत्वा पब्बाजेतब्बो ति वदन्ति। **पच्छिमिकाय वस्सावासिकं लच्छतीति** पच्छिमिकाय पुन वस्सं उपगतत्ता लच्छति। अपलोकेत्वा लाभो दातब्बो ति छिन्नवस्सताय वुत्तं। **इतरानि पञ्च सिक्खापदानीति** विकालभोजनादीनि पञ्च। **अच्चयं देसापेतब्बो** ति "अच्चयो मं भन्ते अच्चगमा" ति आदिना नयेन देसापेतब्बो। B. 256

अनापुच्छावरणवत्थुआदिकथावण्णना निट्ठिता।

पण्डकवत्थुकथावण्णना

१०९॥ पण्डकवत्थुम्हि "यो काळपक्खे इत्थी होति, जुण्हपक्खे पुरिसो, अयं **पक्खपण्डको**" ति केचि वदन्ति। अट्ठकथायं पन "काळपक्खे पण्डको होति, जुण्हपक्खे पनस्स परिळाहो वूपसम्मती" ति अपण्डकपक्खे परिलाहवूपसमस्सेव वुत्तत्ता पण्डक-

पक्खे उस्सन्नपरिळाहता पण्डकभावापत्तीति विञ्ञायति, तस्मा इदमेवेत्थ सारतो पच्चेतब्बं[1]। इत्थिभावो पुम्भावो वा नत्थि एतस्साति **अभावको**। **तस्मिं येवस्स पक्खे पब्बज्जा वारिता** ति एत्थ "अपण्डकपक्खे पब्बाजेत्वा पण्डकपक्खे नासेतबो" ति **तीसुपि गण्ठिपदेसु** वुत्तं। केचि पन "अपण्डकपक्खे पब्बजितो सचे किलेसक्खयं पापुणाति, न नासेतब्बो" ति वदन्ति, तं तेसं मतिमत्तं पण्डकस्स किलेसक्खया-सम्भवतो खीणकिलेसस्स च पण्डकभावानुपपत्तितो। अहेतुकपटिसन्धिकथायञ्हि अविसेसेन पण्डकस्स अहेतुकपटिसन्धिता वुत्ता। आसित्तउसूयपक्खपण्डकानञ्च पटिसन्धितो पट्ठायेव पण्डकसभावो, न पवत्तियंयेवाति वदन्ति। तेनेव अहेतुक-पटिसन्धिनिद्देसे जच्चन्धबधिरादयो विय पण्डको जातिसद्देन विसेसेत्वा न निद्दिट्ठो। B. 257 इधापि चतुत्थपाराजिकसंवण्णनायं[2] "अभब्बपुग्गले दस्सेन्तेन पण्डकतिरच्छानगत-उभतोब्यञ्जनका तयो वत्थुविपन्ना अहेतुकपटिसन्धिका, तेसं सग्गो अवारितो, मग्गो पन वारितो"ति अविसेसेन वुत्तं।

पण्डकवत्थुकथावण्णना निट्ठिता।

थेय्यसंवासकवत्थुकथावण्णना

११०॥ थेय्यसंवासकवत्थुम्हि **कोलञ्ञा** ति मातुवंसे पितुवंसे च जाता मातापितुप्पभुतिसब्बञातयो। थेय्याय संवासो एतस्साति **थेय्यसंवासको**। सो च न संवासमत्तस्सेव थेनको इधाधिप्पेतो, अथ खो लिङ्गस्स तदुभयस्स च थेनकोपीति आह **"तयो थेय्यसंवासका"** ति आदि। **न यथावुड्ढं वन्दनं सादियतीति** यथावुड्ढं भिक्खूनं वा सामणेरानं वा वन्दनं न सादियति। **यथावुड्ढं वन्दनं सादियतीति** अत्तना मुसावादं कत्वा दस्सितवस्सानुरूपं यथावुड्ढं वन्दनं सादियति। **भिक्खुवस्स-गणनादिकोति** इमिना न एककम्मादिकोव इध संवासो नामा ति दस्सेति।

राज....पे०....भयेना ति एत्थ भय-सद्दो पच्चेकं योजेतब्बो "राजभयेन दुब्भिक्खभयेना" ति आदिना। **संवासं नाधिवासेति, याव सो सुद्धमानसो** ति राजभयादीहि गहितलिङ्गताय सो सुद्धमानसो याव संवासं नाधिवासेतीति अत्थो। यो हि राजभयादिं विना केवलं भिक्खू वञ्चेत्वा तेहि सद्धिं संवसितुकामताय लिङ्गं गण्हाति, सो असुद्धचित्तताय लिङ्गग्गहणेनेव थेय्यसंवासको नाम होति। अयं पन तादिसेन असुद्धचित्तेन भिक्खू वञ्चेतुकामताय अभावतो याव संवासं नाधिवासेति,

---

1. विञ्ञायति, वीमंसित्वा युत्ततरं गहेतब्बं (स्या)।
2. १-वि-ट्ठ--२-१०३-पिट्ठे।

ताव थेय्यसंवासको नाम न होति । तेनेव "राजभयादीहि गहितलिङ्गानं 'गिही मं समणो ति जानन्तू' ति वञ्चनाचित्ते सतिपि भिक्खूनं वञ्चेतुकामताय अभावा दोसो न जातो" ति **तीसुपि गण्ठिपदेसु** वुत्तं । केचि पन "वूपसन्तभयता[1] इध सुद्धचित्तता" B. 258 ति वदन्ति, एवञ्च सति सो वूपसन्तभयो याव संवासं नाधिवासेति, ताव थेय्यसंवासको न होतीति अयमत्थो विञ्ञायति । इमस्मिञ्च अत्थे विञ्ञायमाने अवूपसन्तभयस्स संवाससादियनेपि थेय्यसंवासकता न होतीति आपज्जेय्य, न च अट्ठकथायं अवूपसन्तभयस्स संवाससादियनेपि अथेय्यसंवासकता दस्सिता । **सब्बपासण्डियभत्तानि भुञ्जन्तो** ति च इमिना अवूपसन्तभयेनपि संवासं असादियन्तेनेव वसितब्बं ति दीपेति । तेनेव **तीसुपि गण्ठिपदेसु** वुत्तं "यस्मा विहारं आगन्त्वा संघिकं गण्हन्तस्स संवासं परिहरितुं दुक्करं, तस्मा सब्बपासण्डियभत्तानि भुञ्जन्तो ति इदं वुत्तं" ति, तस्मा राजभयादीहि गहितलिङ्गतायेवेत्थ सुद्धचित्तता ति गहेतब्बं ।

सब्बपासण्डियभत्तानीति सब्बसामयिकानं साधारणं कत्वा वीथिचतुक्कादीसु ठपेत्वा दातब्बभत्तानि । **कायपरिहारियानीति** कायेन परिहरितब्बानि । **अब्भुग्गच्छन्ती**ति अभिमुखं गच्छन्ति । **कम्मन्तानुट्ठानेना**ति कसिगोरक्खादिकम्मकरणेन । **तदेव पत्तचीवरं आदाय विहारं गच्छती**ति चीवरानि निवासनपारुपनवसेन आदाय पत्तञ्च अंसकूटे लग्गेत्वा विहारं गच्छति । **नापि सयं जानाती** ति "यो एवं पब्बजति, सो थेय्यसंवासको नाम होती"ति वा" एवं कातुं न लभती"ति वा" एवं पब्बजितो समणो न होती" ति वा न जानाति । यो **एवं पब्बजति, सो थेय्यसंवासको नाम होती**ति इदं पन निदस्सनमत्तं । **अनुपसम्पन्नकालेयेवा**ति इमिना उपसम्पन्नकाले सुत्वा सचेपि नारोचेति, थेय्यसंवासको न होतीति दीपेति ।

सिक्खं अप्पच्चक्खाय....पे॰.....थेय्यसंवासको **न होती**ति इदं भिक्खूहि दिन्नलिङ्गस्स अपरिच्चत्तत्ता न लिङ्गत्थेनको होति, लिङ्गानुरूपस्स संवासस्स सादितत्ता नापि संवासथेनको होतीति वुत्तं । **एको भिक्खु कासाये सउस्साहोव ओदातं निवासेत्वा** ति एत्थापि इदमेव कारणं दट्ठब्बं । परतो **सामणेरो सलिङ्गे ठितो ति** आदिना सामणेरस्स वुत्तविधानेसु पि अथेय्यसंवासकपक्खे अयमेव नयो । **भिक्खुनियापि एसेव नयो** ति वुत्तमेवत्थं **"सापि हि गिहिभावं पत्थयमाना"** ति आदिना विभावेति । **यो कोचि वुड्ढपब्बजितो** ति सामणेरं सन्धाय वुत्तं । **महापेळादीसूति** एतेन गिहिसन्तकं दस्सितं । B. 259 **सयं सामणेरोव.....**पे॰.....**थेय्यसंवासको न होती**ति एत्थ किञ्चापि थेय्यसंवासको न होति, पाराजिकं पन आपज्जतियेव । सेसमेत्थ उत्तानमेव ।

थेय्यसंवासकवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

---

1. अवूपसन्तभयता (स्या) ।

तित्थियपक्कन्तककथावण्णना

तित्थियपक्कन्तककथायं **तेसं लिङ्गे आदिन्नमत्ते तित्थियपक्कन्तको होतीति** "तित्थियो भविस्सामी" ति गतस्स लिङ्गग्गहणेनेव तेसं लद्धिपि गहितायेव होतीति कत्वा वुत्तं। केनचि पन "तेसं लिङ्गे आदिन्नमत्ते लद्धिया गहितायपि अग्गहितायपि तित्थियपक्कन्तको होती" ति वुत्तं, तं न गहेतब्बं। न हि "तित्थियो भविस्सामी"ति गतस्स लिङ्गसम्पटिच्छनतो अञ्ञं लद्धिग्गहणं नाम अत्थि। लिङ्गसम्पटिच्छनेनेव हि सो गहितलद्धिको होति। तेनेव "**वीमंसनत्थं कुसचीरादीनि.....पे०.....याव न सम्पटिच्छति, ताव तं लद्धि रक्खति। सम्पटिच्छितमत्ते** तित्थियपक्कन्तको **होती**" ति वुत्तं। **नग्गोव आजीवकानं उपस्सयं गच्छति, पदवारे पदवारे दुक्कटं** ति "आजीवको भविस्सं" ति असुद्धचित्तेन गमनपच्चया दुक्कटं वुत्तं। नग्गेन हुत्वा गमनपच्चयापि दुक्कटा न मुच्चतियेव। **कूटवस्सं गणेन्तोति** कूटवस्सं गणेत्वा संवासं सादियन्तो ति अधिप्पायो।

तित्थियपक्कन्तककथावण्णना निट्ठिता।

१११॥ तिरच्छानगतवत्थु उत्तानमेव।

मातुघातकादिवत्थुकथावण्णना

११२॥ मातुघातकादिवत्थूसु **अपवाहनं** ति अपगमनं, पतिकरणं ति[1] अत्थो। यथा समानजातिकस्स विकोपने कम्मं गरुतरं, न तथा विजातिकस्सा ति आह B. 260 "**मनुस्सित्थिभूता**" ति। पुत्तसम्बन्धेन मातुपितुसमञ्ञा, दत्तकित्तिमादिवसेनपि पुत्तवोहारो लोके दिस्सति, सो च खो परियायतो ति निप्परियायसिद्धतं दस्सेतुं "**जनिका माता**" ति वुत्तं। यथा मनुस्सत्तभावे ठितस्सेव कुसलधम्मानं तिक्खविसदसूरभावापत्ति यथा तं तिण्णम्पि बोधिसत्तानं बोधित्तयनिब्बत्तियं, एवं मनुस्सत्तभावे ठितस्सेव अकुसलधम्मानम्पि तिक्खविसदसूरभावापत्तीति आह "**सयम्पि मनुस्सजातिकेनेवा**" ति। चुतिअनन्तरं फलं अनन्तरं नाम, तस्मिं अनन्तरे नियुत्तं, तंनिब्बत्तनेन अनन्तरकरणसीलं, अनन्तरपयोजनं वा आनन्तरियं, तेन **आनन्तरियेन मातुघातककम्मेन**। पितुघातकेपि येन मनुस्सभूतो जनको पिता सयम्पि मनुस्सजातिकेनेव सता सञ्चिच्च जीविता वोरोपितो, अयं आनन्तरियेन पितुघातककम्मेन पितुघातकोतिआदिना सब्बं वेदितब्बं ति आह "**पितुघातकेपि एसेव नयो**" ति।

---

1. बहिकरणं ति (स्या)।

परिवत्तितलिङ्गम्पि[1] मातरं पितरं वा जीविता वोरोपेन्तस्स आनन्तरियकम्मं होतियेव। सतिपि हि लिङ्गपरिवत्ते सो एव एककम्मनिब्बत्तो भवङ्गप्पबन्धो जीवितिन्द्रियप्पबन्धो च, नाञ्ञोति। यो पन सयं मनुस्सो तिरच्छानभूतं मातरं वा पितरं वा, सयं वा तिरच्छानभूतो मनुस्सभूतं, तिरच्छानभूतोयेव वा तिरच्छानभूतं जीविता वोरोपेति, तस्स कम्मं आनन्तरियं न होति, भारियं पन होति, आनन्तरियं आहच्चेव तिट्ठति। एळकचतुक्कं सङ्गामचतुक्कं चोरचतुक्कञ्चेत्थ कथेतब्बं। "एळकं मारेमी" ति अभिसन्धिनापि हि एळकट्ठाने ठितं मनुस्सो मनुस्सभूतं मातरं वा पितरं वा मारेन्तो आनन्तरियं फुसति मरणाधिप्पायेनेव आनन्तरियवत्थुनो विकोपितत्ता। एळकाभिसन्धिना पन मातापितिअभिसन्धिना वा एळकं मारेन्तो आनन्तरियं न फुसति आनन्तरियवत्थुअभावतो। मातापितिअभिसन्धिना मातापितरो मारेन्तो फुसतेव। एस नयो इतरस्मिम्पि चतुक्कद्वये। यथा च मातापितूसु, एवं अरहन्तेपि एतानि चतुक्कानि वेदितब्बानि। सब्बत्थ हि पुरिमं अभिसन्धिचित्तं अप्पमाणं, वधकचित्तं पन तदारम्मणं जीवितिन्द्रियञ्च आनन्तरियानानन्तरभावे पमाणं। कतानन्तरियकम्मो च" तस्स कम्मस्स विपाकं पटिबाहिस्सामी" ति सकलचक्कवाळं-महाचेतियप्पमाणेहि कञ्चनथूपेहि पूरेत्वा पि सकलचक्कवाळं पूरेत्वा निसिन्नस्स B. 261 भिक्खुसंघस्स महादानं दत्वापि बुद्धस्स भगवतो सङ्घाटिकण्णं अमुञ्चन्तो विचरित्वापि कायस्स भेदा निरयमेवं उपपज्जति, पब्बज्जञ्च न लभति।

११५॥ **इच्छमानं** ति ओदातवत्थवसनं इच्छमानं। तेनेवाह **"गिहिभावे सम्पटिच्छितमत्तेयेवा"** ति। संघभेदककथावित्थारो परतो आवि भविस्सति। **चतुन्नं कम्मानं** ति अपलोकनादीनं चतुन्नं कम्मानं। **दुट्ठचित्तेना** ति वुत्तमेवत्थं विभावेति **"वधकचित्तेना"** ति। वधकचेतनाय हि दूसितचित्तं इध दुट्ठचित्तं नाम। **लोहितं उप्पादेतीति** एत्थ तथागतस्स अभेज्जकायताय परूपक्कमेन चम्मच्छेदं कत्वा लोहितपग्घरणं नाम नत्थि, सरीरस्स पन अन्तोयेव एकस्मिं ठाने लोहितं समोसरति, आघातेन पकुप्पमानं सञ्चितं होति। देवदत्तेन पविद्धसिलतो भिज्जित्वा गत-सक्खलिकापि तथागतस्स पादन्तं पहरि, फरसुना पहटो विय पादो अन्तोलोहितोयेव अहोसि। जीवको पन तथागतस्स रुचिया सत्थकेन चम्मं छिन्दित्वा तम्हा ठाना दुट्ठलोहितं नीहरित्वा फासुमकासि, तेनस्स पुञ्ञकम्ममेव अहोसि। तेनाह **"जीवको विया"** ति आदि।

अथ ये परिनिब्बुते तथागते चेतियं भिन्दन्ति, बोधिं छिन्दन्ति, धातुम्हि उपक्कमन्ति, तेसं किं होतीति ? भारियं कम्मं होति आनन्तरियसदिसं। सधातुकं पन थूपं वा पटिमं वा बाधमानं बोधिसाखं छिन्दितुं वट्टति। सचेपि तत्थ निलीना

1. म-ट्ठ-४-७६, अं-ट्ठ-१-३५५, अभि-ट्ठ २-४०७ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

सकुणा चेतिये वच्चं पातेन्ति, छिन्दितुं वट्टतियेव । परिभोगचेतियतो हि सरीरचेतियं गरुतरं । चेतियवत्थुं भिन्दित्वा गच्छन्ते बोधिमूलेपि छिन्दित्वा हरितुं वट्टति । या पन बोधिसाखा बोधिघरं बाधति, तं गेहरक्खणत्थं छिन्दितुं न लभति । बोधिअत्थञ्हि गेहं, न गेहत्थाय बोधि[1] । आसनघरेपि एसेव नयो । यस्मिं पन आसनघरे धातु निहिता होति, तस्स रक्खणत्थाय बोधिसाखं छिन्दितुं वट्टति । बोधिजग्गनत्थं ओजोहरणसाखं वा पूतिट्ठानं वा छिन्दितुं वट्टतियेव, सत्थु रूपकायपटिजग्गने विय पुञ्ञम्पि होति ।

मातुघातकादिवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

B. 262

उभतोब्यञ्जनकवत्थुकथावण्णना

११६॥ **उभतो ब्यञ्जनमस्स अत्थीति उभतोब्यञ्जनको** ति इमिना असमानाधिकरणविसयो बाहिरत्थसमासोयं, पुरिमपदे च विभत्तिअलोपो ति दस्सेति । **ब्यञ्जनं** ति चेत्थ इत्थिनिमित्तं पुरिसनिमित्तञ्च अधिप्पेतं । अथ उभतोब्यञ्जनकस्स एकमेव इन्द्रियं, उदाहु द्वेति ? एकमेव "यस्स इत्थिन्द्रियं उप्पज्जति, तस्स पुरिसिन्द्रियं उप्पज्जतीति? नो । यस्स वा पन पुरिसिन्द्रियं उप्पज्जति, तस्स इत्थिन्द्रियं उप्पज्जतीति? नो" ति[2] एकस्मिं सन्ताने इन्द्रियद्वयस्स पटिसिद्धत्ता, तञ्च खो इत्थिउभतोब्यञ्जनकस्स इत्थिन्द्रियं, पुरिसउभतोब्यञ्जनकस्स पुरिसिन्द्रियं । यदि एवं दुतियब्यञ्जनकस्स अभावो आपज्जति । इन्द्रियञ्हि व्यञ्जनकारणं वुत्तं,, तञ्च तस्स नत्थीति ? वुच्चते–न तस्स इन्द्रियं दुतियब्यञ्जनकारणं । कस्मा ? सदा अभावतो । इत्थिउभतोब्यजनकस्स हि यदा इत्थिया रागचित्तं उप्पज्जति, तदा पुरिसब्यञ्जनं पाकटं होति, इत्थिब्यञ्जनं पटिच्छन्नं गुळ्हं होति, तथा इतरस्स इतरं । यदि च तेसं इन्द्रियं दुतियब्यञ्जनकारणं भवेय्य, सदापि ब्यञ्जनद्वयं तिट्ठेय्य, न पन तिट्ठति, तस्मा वेदितब्बमेतं "न तस्स तं ब्यञ्जनकारणं, कम्मसहायं पन रागचित्तमेवेत्थ कारणं" ति ।

यस्मा चस्स एकमेव इन्द्रियं होति, तस्मा इत्थिउभतोब्यञ्जनको सयम्पि गब्भं गण्हाति, परम्पि गण्हापेति । पुरिसउभतोब्यञ्जनको परं गण्हापेति, सयं पन न गण्हाति । यदि पटिसन्धियं पुरिसलिङ्गं, यदि पटिसन्धियं इत्थिलिङ्गं ति च पटिसन्धियं लिङ्गसब्भावो कुरुन्दियं वुत्तो, सो च अयुत्तो । पवत्तियंयेव हि इत्थिलिङ्गादीनि समुट्ठहन्ति, न पटिसन्धियं । पटिसन्धियं पन इन्द्रियमेव समुट्ठाति, न

---

1. बोधिं (स्या, क) ।
2. अभि-७-११७-पिट्ठे ।

लिङ्गादीनि । न च इन्द्रियमेव लिङ्गं ति सक्का वत्तुं इन्द्रियलिङ्गानं भिन्नसभावत्ता । वुत्तञ्हेतं **अट्ठसालिनियं**[1]–

"इत्थत्तं इत्थिभावोति उभयं एकत्थं, इत्थिसभावोति अत्थो । अयं कम्मजो पटिसन्धिसमुट्ठितो । इत्थिलिङ्गादि पन इत्थिन्द्रियं पटिच्च पवत्ते समुट्ठितं । यथा बीजे सति बीजं पटिच्च बीजपच्चया रुक्खो वड्ढित्वा साखाविटपसम्पन्नो हुत्वा आकासं पूरेत्वा तिट्ठति, एवमेव इत्थिभावसङ्खाते इत्थिन्द्रिये सति इत्थिलिङ्गादीनि B. 263 होन्ति । बीजं विय हि इत्थिन्द्रियं, बीजं पटिच्च वड्ढित्वा आकासं पूरेत्वा ठितरुक्खो विय इत्थिन्द्रियं पटिच्च इत्थिलिङ्गादीनि पवत्ते समुट्ठहन्ति । तत्थ इत्थिन्द्रियं न चक्खुविञ्ञेय्यं, मनोविञ्ञेय्यमेव । इत्थिलिङ्गादीनि चक्खुविञ्ञेय्यानिपि मनोविञ्ञेय्यानिपी" ति ।

तेनेवाह **"तत्थ विचारणक्कमो वित्थारतो अट्ठसालिनिया धम्मसङ्गहट्ठकथाय वेदितब्बो"** ति

उभतोब्यञ्जनकवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

अनुपज्झायकादिवत्थुकथावण्णना

११७॥ **सिक्खापदं अपञ्ञत्तं होतीति** इधेव पञ्ञत्तं सिक्खापदं सन्धाय वुत्तं । **उपज्झं अग्गाहापेत्वा** ति "उपज्झायो मे भन्ते होही" ति एवं उपज्झं अग्गाहापेत्वा । कम्मवाचाय पन उपज्झायकित्तनं कतंयेवाति दट्ठब्बं । अञ्ञथा "पुग्गलं न परामसती"ति वुत्तकम्मविपत्तिसम्भवतो कम्मं कुप्पेय्य, तेनेव "उपज्झायं अकित्तेत्वा" ति अवत्वा "उपज्झं अग्गाहापेत्वा" इच्चेव वुत्तं । यथा च अपरिपुण्णपत्तचीवरस्स उपसम्पादनकाले कम्मवाचाय "परिपुण्णस्स पत्तचीवरं"ति असन्तवत्थुं कित्तेत्वा कम्मवाचायकतायपि उपसम्पदा रुहति, एवं "अयं बुद्धरक्खितो आयस्मतो धम्मरक्खितस्स उपसम्पदापेक्खो" ति असन्तं पुग्गलं कित्तेत्वा केवलं सन्तपदनीहारेन कम्मवाचाय कताय उपसम्पदा रुहतियेवाति दट्ठब्बं । तेनेवाह **"कम्मं पन न कुप्पती"**ति । "न भिक्खवे अनुपज्झायको उपसम्पादेतब्बो, यो उपसम्पादेय्य, आपत्ति दुक्कटस्सा" ति एत्तकमेव वत्वा "सो च पुग्गलो अनुपसम्पन्नो" ति अवुत्तत्ता कम्मविपत्तिलक्खणस्स च असम्भवतो **"तं न गहेतब्बं"** ति वुत्तं । "पञ्चवग्गकरणञ्चे भिक्खवे कम्मं पण्डकपञ्चमो कम्मं करेय्य, अकम्मं न च करणीयं" ति आदिवचनतो[2] पण्ड-

---

1. अभि-ट्ठ-१-३५८-पिट्ठे ।
2. वि–३-४४०-पिट्ठे ।

कादीनम्पि उभतोब्यञ्जनकपरियन्तानं गणपूरकभावेयेव कम्मं कुप्पति, न अञ्ञथाति आह "**उभतोब्यञ्जनकुपज्झायपरियोसानेसुपि एसेव नयो**" ति ।

अनुपज्झायकादिवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

B. 264

अपत्तकादिवत्थुकथावण्णना

११८॥ अञ्ञे वा भिक्खू दातुकामा होन्तीति सम्बन्धो । **अतामट्ठपिण्डपातं** ति अग्गहितअग्गं पिण्डपातं । **सामणेरभागसमको आमिसभागो** ति एत्थ किञ्चापि सामणेरानं आमिसभागस्स समकमेव दिय्यमानत्ता विसुं सामणेरभागो नाम नत्थि, हेट्ठा गच्छन्तं पन भत्तं कदाचि मन्दं भवेय्य, तस्मा उपरि अग्गहेत्वा सामणेर-पाळियाव गहेत्वा दातब्बो ति अधिप्पायो । नियतपब्बज्जस्सेव चायं भागो दीयति । तेनेव "**अपक्कं पत्तं**"ति आदि वुत्तं ।

अपत्तकादिवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

हत्थच्छिन्नादिवत्थुकथावण्णना

११९॥ **अजपदके** ति अजपदसण्ठाने पदेसे । **ब्रह्मुजुगत्तो** ति ब्रह्मा विय उजुगत्तो । **अवसेसो सत्तो** ति इमिना लक्खणेन रहितसत्तो । एतेन ठपेत्वा महापुरिसं चक्कवत्तिञ्च इतरे सत्ता खुज्जपक्खिकाति दस्सेति । येभुय्येन हि सत्ता खन्धे कटियं जाणूसूति तीसु ठानेसु नमन्ति । ते कटियं नमन्ता पच्छतो नमन्ति, इतरेसु द्वीसु ठानेसु नमन्ता पुरतो नमन्ति । दीघसरीरा पन एकेन पस्सेन वङ्का होन्ति, एके मुखं उन्नामेत्वा नक्खत्तानि गणयन्ता विय चरन्ति, एके अप्पमंसलोहिता सूलसदिसा होन्ति, एके पुरतो पब्भारा होन्ति, पवेधमाना गच्छन्ति । **परिवटुमो** ति समन्ततो वट्टलो ।

अट्ठिसिराचम्मसरीरो ति अट्ठिसिराचम्ममत्तसरीरो । **कप्पसीसोति** द्विधाभूतसीसो । **केकरोति** तिरियं पस्सन्तो । "**उदकतारका** नाम उदकपुब्बुळं" ति गण्ठिपदेसु वुत्तं । **अक्खितारका** ति अक्खिभण्डका । **निप्पखुमक्खीति** अक्खिदललोमेहि विरहित-अक्खिको । पखुम-सद्दो हि लोके अक्खिदललोमेसु निरुळ्हो । पटङ्गमण्डूको[1] नाम महामुखमण्डूको । **एळमुखो** ति निच्चपग्घरणकलालमुखो । **सब्बञ्चेतं** "ति कच्छुगत्तो

---

1. खरङ्कमण्डूको (स्या) ।

वा" ति आदिं सन्धाय वदति । **वातण्डिको** ति अण्डकेसु वुद्धिरोगेन समन्नागतो । **विकटो** ति तिरियं गमनपादेहि समन्नागतो, यस्स च चङ्कमतो जाणुका बहि B. 265 गच्छन्ति । **पण्हो** ति[1] पच्छतो परिवत्तपादेहि समन्नागतो, यस्स चङ्कमतो जाणुका अन्तो पविसन्ति ।

कुदण्डपादताय कारणं विभावेति **"मज्झे सङ्कुटितपादत्ता"** ति । **अग्गे सङ्कुटितपादत्ताति** कुण्डपादताय कारणनिदस्सनं । कुण्डपादस्सेव गमनसभावं विभावेति **"पिट्ठिपादग्गेन चङ्कमन्तो"** ति । **मम्मनं** ति खलितवचनं । यो एकमेव अक्खरं चतुपञ्चक्खत्तुं वदति, तस्सेतं अधिवचनं ।

हत्थच्छिन्नादिवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

अलज्जीनिस्सयवत्थुकथावण्णना

१२०॥ निस्सयपटिसंयुत्तवत्थूसु भिक्खूहि समानो सीलादिगुणभागो अस्साति भिक्खुसभागो, तस्स भावो **भिक्खुसभागता** । **द्वे तीणि दिवसानि वसित्वा गन्तुकामेन अनिस्सितेन वसितब्बं** ति एत्थ "याव भिक्खुसभागतं जानामी" ति आभोगं विनापि अनिस्सितेन वसितुं वट्टतीति अधिप्पायो । भिक्खुसभागतं पन जानन्तो "स्वे गमिस्सामि, किं मे निस्सयेना" ति अरुणं उट्ठपेतुं न लभति । "पुरारुणा उट्ठहित्वाव गमिस्सामी" ति आभोगेन सयन्तस्स सचे अरुणो उग्गच्छति, वट्टति । **"सत्ताहं वसिस्सामी" ति आलय करोन्तेन पन निस्सयो गहेतब्बो** ति "सत्ताहमत्तं वसिस्सामि, किं भिक्खुसभागताजाननेना"ति जानने धुरं निक्खिपित्वा वसितुं न लभति, भिक्खुसभागतं उपपरिक्खित्वा निस्सयो गहेतब्बो ति अत्थो ।

गमिकादिनिस्सयवत्थुकथावण्णना

१२१॥ **अन्तरामग्गे विस्समन्तो वा.....पे०....अनापत्तीति** असति निस्सयदायके अनापत्ति । **तस्स निस्साया** ति पाळिअनुरूपतो वुत्तं, तं निस्सायाति अत्थो । **सचे पन आसाळीमासे.....पे०....तत्थ गन्तब्बं** ति एत्थ सचे सो वस्सूपनायिकाय आसन्नाय गन्तुकामो सुणाति "असुको महाथेरो आगमिस्सती" ति, तञ्चे आगमेति, वट्टति । आगमेन्तस्सेव चे वस्सूपनायिकदिवसो होति, होतु, गन्तब्बं तत्थ, यत्थ निस्सयदायकं B. 266 लभति । केचि पन "सचे सो गच्छन्तो जीवितन्तरायं ब्रह्मचरियन्तरायं वा पस्सति, तत्थेव वसितब्बं" ति वदन्ति ।

---

1. सण्डोति (स्या, क) ।

गोत्तेन अनुस्सावनानुजाननकथावण्णना

१२२॥ इत्थन्नामो इत्थन्नामस्स आयस्मतो" ति नामकित्तनस्स अनुस्सावनाय आगतत्ता **"नाहं उस्सहामि थेरस्स नामं गहेतुं"** ति वुत्तं, "आयस्मतो पिप्पलिस्स उपसम्पदापेक्खो" ति एवं नामं गहेतुं न उस्सहामीति अत्थो ।" गोत्तेनपि अनुस्सावेतुं" ति वचनतो येन वोहारेन वोहरति, तेन वट्टतीति सिद्धं । कोनामो ते उपज्झायो" ति पुट्ठेनपि गोत्तमेव नामं कत्वा वत्तब्बं ति सिद्धं होति, तस्मा चतुब्बिधेसु नामेसु येन केनचि नामेन अनुस्सावना कातब्बा ति वदन्ति । एकस्स बहूनि नामानि होन्ति, तत्थ एकं नामं ञत्तिया, एकं अनुस्सावनाय कातुं न वट्टति, अत्थतो ब्यञ्जनतो च अभिन्नाहि अनुस्सावनाहि भवितब्बं ति । किञ्चापि "इत्थन्नामो इत्थन्नामस्स आयस्मतो "ति पाळियं" आयस्मतो" ति पदं पच्छा वुत्तं । कम्मवाचापाळियं पन "अयं बुद्धरक्खितो आयस्मतो धम्मरक्खितस्सा"ति पठमं लिखितं ति तं उप्पटिपाटिया वुत्तं ति न पच्चेतब्बं । पाळियञ्हि "इत्थन्नामो इत्थन्नामस्स आयस्मतो" ति अत्थमत्तं दस्सितं, तस्मा पाळियं अवुत्तोपि "अयं बुद्धरक्खितो आयस्मतो धम्मरक्खितस्सा" ति कम्मवाचापळियं पयोगो दस्सितो । "न मे दिट्ठो इतो पुब्बे इच्चायस्मा सारिपुत्तो" ति च "आयस्मा सारिपुत्तो अत्थकुसलो" ति च पठमं "आयस्मा" ति पयोगस्स दस्सनतोति वदन्ति । कत्थचि "आयस्मतो बुद्धरक्खितत्थेरस्सा" ति वत्वा कत्थचि केवलं "बुद्धरक्खितस्सा" ति सावेति, सावनं हापेतीति न वुच्चति नामस्स अहापितत्ता ति एके । सचे कत्थचि "आयस्मतो बुद्धरक्खितस्सा" ति वत्वा कत्थचि "बुद्धरक्खितस्सायस्मतो" ति सावेति, पाठानुरूपत्ता खेत्तमेव ओतिण्णं ति पि एके । ब्यञ्जनभेदप्पसङ्गतो अनुस्सावनानं तं न वट्टतीति वदन्ति । सचे पन सब्बट्ठानेपि एतेनेव पकारेन वदति, वट्टति ।

B. 267

द्वेउपसम्पदापेक्खादिवत्थुकथावण्णना

१२३॥ **एकानुस्सावने** ति एत्थ एकतो अनुस्सावनं एतेसं ति **एकानुस्सावना** ति असमानाधिकरणविसयो बाहिरत्थसमासो ति दट्ठब्बं । तेनेवाह **"द्वे एकतोअनुस्सावने"** ति । तत्थ **एकतो** ति एकक्खणे ति अत्थो, विभत्तिअलोपेन चायं निद्देसो । **पुरिमनयेनेव एकतो अनुस्सावने कातुं** ति "एकेन एकस्स, अञ्ञेन इतरस्सा" ति आदिना पुब्बे वुत्तनयेन द्वीहि वा तीहि वा आचरियेहि एकेन वा एकतो अनुस्सावने कातुं ।

उपसम्पदाविधिकथावण्णना

१२६॥ **वज्जावज्जं उपनिज्झायतीति उपज्झा** ति इमिना उपज्झायसद्दसमानत्थो उपज्झासद्दोपीति दस्सेति ।

चत्तारोनिस्सयादिकथावण्णना

१३०॥ **सम्भोगे** ति धम्मसम्भोगे आमिससम्भोगे च । **अनापत्ति सम्भोगे संवासे** ति एत्थ च अयमधिप्पायो–यस्मा अयं ओसारणकम्मस्स कतत्ता पकतत्तट्ठाने ठितो, तस्मा न उक्खित्तकेन सद्धिं सम्भोगादिपच्चया पाचित्तियं, नापि अलज्जिना सद्धिं परिभोगपच्चया दुक्कटं अलज्जीलक्खणानुपपत्तितो । यो हि उच्छुरसकसटानं सत्ताहकालिकयावजीविकत्ता वट्टति विकाले उच्छु खादितुं ति सञ्ञं उप्पादेत्वा तं खादित्वा तप्पच्चया पाचित्तियं न पस्सति "वट्टती" ति तथासञ्ञिताय, यो वा पन आपत्तिमापन्नभावं पटिजानित्वा "न पटिकरोमी" ति अभिनिविसति, अयं–

"सञ्चिच्च आपत्तिं आपज्जति, आपत्तिं परिगूहति ।

अगतिगमनञ्च गच्छति, एदिसो वुच्चति अलज्जीपुग्गलो" ति[1]–

वुत्तलक्खणे अपतनतो अलज्जी नाम न होति, तस्मा यथा पुब्बे याव उक्खेपनीयकम्मं कतं, ताव तेन सद्धिं सम्भोगे संवासे च अनापत्ति, एवमिधापीति सब्बथा अनापत्तिट्ठानेयेव अनापत्ति वुत्ता ति वेदितब्बं । न हि भगवा अलज्जिना सद्धिं B. 268 सम्भोगपच्चया आपत्तिसम्भवे सति "अनापत्ति सम्भोगे संवासे" ति वदति । ततो यमेत्थ केनचि "अनापत्ति सम्भोगे संवासे" ति इमिना पाचित्तियेन अनापत्ति वुत्ता, "अलज्जीपरिभोगपच्चया दुक्कटं पन आपज्जतियेवा" ति वत्वा बहुधा पपञ्चितं, न तं सारतो पच्चेतब्बं । सेसमेत्थ उत्तानमेव ।

इति समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय सारत्थदीपनियं महाखन्धकवण्णना निट्ठिता ।

---

1. वि.-५-२७९-पिट्ठे ।

B. 269

२. उपोसथक्खन्धक

सन्निपातानुजाननादिकथा वण्णना

१३२॥ उपोसथक्खन्धके तरन्ति प्लवन्ति एत्थ बाला ति तित्थं । इतो ति इमस्मिं सासने लद्धितो । तं कथेन्तीति "इमस्मिं नाम दिवसे मुहुत्ते वा इदं कत्तब्बं" ति आदिना कथेन्ति ।

१३४॥ "सुणातु मे भन्ते" ति आदीसु यं वत्तब्बं, तं **मातिकाट्ठकथायं**[1] वित्थारतो आगतमेवाति न इध वित्थारयिस्साम, अत्थिकेहि पन ततोयेव गहेतब्बं ।

१३५॥ **आपज्जित्वा वा वुट्ठितो** ति एत्थ आरोचितापि आपत्ति असन्ती नाम होतीति वेदितब्बं । तेनेव **मातिकाट्ठकथायं**[2] वुत्तं "यस्स पन एवं अनापन्ना वा आपत्ति आपज्जित्वा च पन वुट्ठिता वा देसिता वा आरोचिता वा, तस्स सा आपत्ति असन्ती नाम होती" ति । मुसावादो नाम वचीभेदपच्चया होतीति आह "**न मुसावादलक्खणेना**" ति । **भगवतो पन वचनेना** ति सम्पजानमुसावादे किं होति? "दुक्कटं होती" ति इमिना वचनेन । **वचीद्वारे अकिरियसमुट्ठाना आपत्ति होती**ति यस्मा यस्स भिक्खुनो अधम्मिकाय पटिञ्ञाय तुण्हीभूतस्स निसिन्नस्स मनोद्वारे आपत्ति नाम नत्थि, यस्मा पन आवि कातब्बं न आवि अकासि, तेनस्स वचीद्वारे अकिरियसमुट्ठाना आपत्ति होति ।

वाचा ति वाचाय, य-कारलोपेनायं निद्देसो । केनचि मनुजेन वाचाय अनालपन्तो ति योजेतब्बं । **गिरं नो च परे भणेय्या** ति "इमे सोस्सन्ती" ति परपुग्गले सन्धाय सद्दम्पि न निच्छारेय्य । **आपज्जेय्य वाचसिकं** ति वाचतो समुट्ठितं आपत्तिं आपज्जेय्य ।

अन्तरायकरो ति विप्पटिसारवत्थुताय पामोज्जादिसम्भवं निवारेत्वा पठमज्झाना-

B. 270 दीनं अधिगमाय अन्तरायकरो । **तस्स भिक्खुनो फासु होती**ति अविप्पटिसारमूलकानं पामोज्जादीनं वसेन तस्स भिक्खुनो सुखा पटिपदा सम्पज्जतीति अत्थो ।

सन्निपातानुजाननादिकथावण्णना निट्ठिता ।

सीमानुजाननकथावण्णना

१३८॥ **इतरोपी**ति सुद्धपंसुपब्बतादिं सन्धाय वदति । **हत्थिप्पमाणो नाम पब्बतो** हेट्ठिमकोटिया अड्ढट्ठमरतनुब्बेधो । तस्मा ति यस्मा एकेन न वट्टति, तस्मा । **द्वत्तिं-**

---

1. कङ्खा-ट्ठ-८५-पिट्ठे ।
2. कङ्खा-ट्ठ-१००-पिट्ठे ।

सपलगुळपिण्डप्पमाणता थूलताय[1] गहेतब्बा, न तुलगणनाय । **अन्तोसारमिस्सकानं** ति अन्तोसाररुक्खेहि मिस्सकानं । **सूचिदण्डकप्पमाणो** ति सीहळदीपे लेखनदण्डप्पमाणो ति वदन्ति, सो च कनिट्ठङ्गुलिपरिमाणो ति दट्ठब्बं । एतं ति नवमूलसाखानिग्गमनं । **परभागे कित्तेतुं वट्टतीति** बहि निक्खमित्वा ठितेसु अट्ठसु मग्गेसु एकिस्सा दिसाय एकं; अपराय एकं ति एवं चतूसु ठानेसु कित्तेतुं वट्टति ।

यत्थ कत्थचि उत्तरन्तिया भिक्खुनिया अन्तरवासको तेमियतीति सिक्खाकरणीयं आगतलक्खणेन तिमण्डलं पटिच्छादेत्वा अन्तरवासकं अनुक्खिपित्वा तित्थेन वा अतित्थेन वा उत्तरन्तिया भिक्खुनिया एकद्वङ्गुलमत्तम्पि अन्तरवासको तेमियति । भिक्खुनिया एव गहणञ्चेत्थ भिक्खुनीविभङ्गे भिक्खुनिया वसेन नदीलक्खणस्स पाळियं आगतत्ता तेनेव नयेन दस्सनत्थं कतं । **सीमं बन्धन्तानं निमित्तं होतीति** अयं वुत्तलक्खणा नदी समुद्दं वा पविसतु तळाकं वा, पभवतो पट्ठाय निमित्तं होति । **अज्झोत्थरित्वा आवरणं पवत्ततियेवा** ति आवरणं अज्झोत्थरित्वा सन्दतियेव । **अप्पवत्तमाना** ति असन्दमानुदका । आवरणञ्हि पत्वा नदिया यत्तके पदेसे उदकं असन्दमानं सन्तिट्ठति, तत्थ नदीनिमित्तं कातुं न वट्टति । उपरि सन्दमानट्ठानेयेव वट्टति, असन्दमानट्ठाने पन उदकनिमित्तं कातुं वट्टति । ठितमेव हि उदकनिमित्ते वट्टति, न सन्दमानं । तेनेवाह **"पवत्तनट्ठाने नदीनिमित्तं, अप्पवत्तनट्ठाने उदकनिमित्तं कातुं वट्टती"** ति । **नदिं भिन्दित्वा** ति मातिकामुखद्वारेन नदीकूलं भिन्दित्वा । **उक्खेपिमं** ति कूपतो विय उक्खिपित्वा गहेतब्बं ।

सिङ्घाटकसण्ठाना ति तिकोणरच्छासण्ठाना । **मुदिङ्गसण्ठाना** ति मुदिङ्गभेरी विय मज्झेवित्थता उभोसु कोटीसु सङ्कोटिका होति । **उपचारं ठपेत्वा** ति पच्छा सीमं बन्धन्तानं सीमाय ओकासं ठपेत्वा । **अन्तोनिमित्तगतेहि पना** ति एकस्स गामस्स उपड्ढं अन्तो कत्तुकामताय सति सब्बेसं आगमने पयोजनं नत्थीति कत्वा वुत्तं । **आगन्तब्बं** ति च सामीचिवसेन वुत्तं, नायं नियमो "आगन्तब्बमेवा" ति । तेनेवाह **"आगमनम्पि अनागमनम्पि वट्टती"** ति । अबद्धाय हि सीमाय नानागामखेत्तानं नानासीमसभावत्ता तेसं अनागमनेपि वग्गकम्मं न होति, तस्मा अनागमनम्पि वट्टति । बद्धाय पन सीमाय एकसीमभावतो पुन अञ्ञस्मिं कम्मे करियमाने अन्तो सीमगतेहि आगन्तब्बमेवाति आह **"अविप्पवाससीमा.....पे०.....आगन्तब्बं"** ति । निमित्तकित्तनकाले असोधितायपि सीमाय नेवत्थि दोसो निमित्तकित्तनस्स अपोलोकनादीसु अञ्ञतराभावतो ।

भण्डुकम्मापुच्छनं सन्धाय **पब्बज्जा**-गहणं । **सुखकरणत्थं** ति सब्बेसं सन्निपातन-परिस्समं पहाय अप्पतरेहि सुखकरणत्थं । **एकवीसति भिक्खू गण्हातीति** वीसति-

B. 271

---

1. थुलताय (क) ।

वग्गकरणीयपरमत्ता संघकम्मस्स कम्मारहेन सद्धिं एकवीसति भिक्खू गण्हाति । इदञ्च निसिन्नानं वसेन वुत्तं । हेट्ठिमन्ततो हि यत्थ एकवीसति भिक्खू निसीदितुं सक्कोन्ति, तत्तके पदेसे सीमं **बन्धितुं** वट्टति । न सक्खिस्सन्तीति अविप्पवाससीमाय बद्धभावं असल्लक्खेत्वा "समानसंवासकमेव समूहनिस्सामा" ति" वायमन्ता न सक्खिस्सन्ति । बद्धाय हि अविप्पवाससीमाय" तं असमूहनित्वा "समानसंवासकसीमं समूहनिस्सामा" ति कतायपि कम्मवाचाय असमूहताव होति सीमा । पठमञ्हि अविप्पवासं समूहनित्वा पच्छा सीमा समूहनितब्बा । एकरतनप्पमाणा सुविञ्ञेय्यतरा होतीति कत्वा वुत्तं **"एकरतनप्पमणा वट्टती"** ति । एकङ्गुलमत्तापि सीमन्तरिका वट्टतियेव । तत्तकेनपि हि सीमा असम्भिन्नाव होति ।

अवसेसनिमित्तानीति महासीमाय बाहिरपस्से निमित्तानि । खण्डसीमतो पट्ठाय बन्धनं आचिण्णं, आचिण्णकरणेनेव च सम्मोहो न होतीति आह **"खण्डसीमतोव पट्ठाय बन्धितब्बा" ति** । **कुटिगेहे**ति कुटिघरे, भूमिघरे ति अत्थो । **उदुक्खलं** ति खुद्दकावाटं । **निमित्तं न कातब्बं** ति तं राजिं वा उदुक्खलं वा निमित्तं न कातब्बं ।

B. 272 **हेट्ठा न ओतरती**ति भित्तितो ओरं निमित्तानि ठपेत्वा कित्तितत्ता हेट्ठा आकासप्पदेसं न ओतरति । **हेट्ठापि ओतरती**ति सचे हेट्ठा अन्तोभित्तिय एकवीसतिया भिक्खूनं ओकासो होति, ओतरति । ओतरमाना च उपरिसीमप्पमाणेन न ओतरति, समन्ता भित्तिप्पमाणेन ओतरति । **ओतरणानोतरणं वुत्तनयेनेव वेदितब्बं** ति सचे हेट्ठा एकवीसतिया भिक्खूनं ओकासो होति, ओतरति । नो चे, न ओतरतीति अधिप्पायो । **सब्बो पासादो सीमट्ठो होतीति** उपरिमतलेन सद्धिं एकाबद्धभित्तिको वा होतु मा वा, सब्बो पि पासादो सीमट्ठोव होति ।

तालमूलकपब्बते ति तालमूलसदिसे पब्बते । सो च हेट्ठा महन्तो हुत्वा अनुपुब्बेन तनुको होतीति दट्ठब्बं । **पणवसण्ठानो** मज्झे तनुको होति मूले अग्गे च वित्थतो । **हेट्ठा वा मज्झे वा** ति मुदिङ्गसण्ठानस्स हेट्ठा पणवसण्ठानस्स मज्झे । **आकासपब्भारं** ति भित्तिया अपरिक्खित्तपब्भारं । **अन्तोलेणं होती**ति पब्बतस्स अन्तो लेणं होति । **सीमामाळके** ति खण्डसीमामाळके । **महासीमं सोधेत्वा वा कम्मं कातब्बं** ति महासीमगता भिक्खू हत्थपासं वा आनेतब्बा, सीमतो वा बहि कातब्बा ति अधिप्पायो । **गण्ठिपदेसु** पन "महासीमगतेहि भिक्खूहि तं साखं वा पारोहं वा अनामसित्वा ठातब्बं ति अधिप्पायो" ति वुत्तं, तं न गहेतब्बं । **पुरिमनये पी**ति खण्डसीमाय उट्ठहित्वा महासीमाय **ओणतरुक्खे** पि । **उक्खिपापेत्वा कातुं न वट्टती**ति खण्डसीमाय अन्तो ठितत्ता रुक्खस्स तत्थ ठितो हत्थपासंयेव आनेतब्बोति उक्खिपापेत्वा कातुं न वट्टति ।

१४०॥ **पारयती**ति अज्झोत्थरति । **पारा** ति सीमापेक्खो इत्थिलिङ्गनिद्देसो । अस्सा ति भेवेय्य । इधाधिप्पेतनावाय पमाणं दस्सेन्तो आह **"या सब्बन्तिमेन परिच्छेदेन.....पे०....तयो जने वहती"** ति । इमिना च वुत्तप्पमाणतो खुद्दका नावा विज्जमानापि इध असन्तपक्खं भजतीति दीपेति । अवस्सं लब्भनेय्या **धुवनावाव** होतीति सम्बन्धो । रुक्खं छिन्दित्वा कतो ति पाठसेसो । **परतीरे सम्मुखट्ठानेति** ओरिमतीरे सब्बपरियन्तनिमित्तस्स सम्मुखट्ठाने । **सब्बनिमित्तानं अन्तो ठिते** भिक्खू **हत्थपासगते कत्वा** ति एत्थ सचे एकं गामखेत्तं होति, उभोसु तीरेसु सब्बनिमित्तानं अन्तो ठिते भक्खू हत्थपासगते कत्वा सम्मन्नितब्बा । नानागामक्खेत्तं चे, समान- B. 273 संवासकसीमाबन्धनकाले अनागन्तुम्पिं वट्टति । अविप्पवाससीमासम्मुतियं पन आगन्तब्बमेव । यस्मा उभोसु तीरेसु निमित्तकित्तनमत्तेन दीपको सङ्गहितो नाम न होति, तस्मा दीपकेपि निमित्तानि विसुं कित्तेतब्बानेवाति आह **"दीपकस्स ओरिमन्ते च पारिमन्ते च निमित्तं कित्तेतब्बं"** ति । **दीपकसिखरं** ति दीपकमत्थकं । **पब्बतसण्ठाना** ति दीपकस्स एकतो अधिकतरत्ता वुत्तं ।

सीमानुजाननकथावण्णना निट्ठिता ।

उपोसथागारादिकथावण्णना

१४२॥ वत्थुवसेन वुत्तं ति मयञ्चम्हा असम्मताय भूमिया निसिन्ना पातिमोक्खं अस्सुम्हा" ति वत्थुम्हि पातिमोक्खसवनस्स आगतत्ता वुत्तं । **उपोसथप्पमुखं** नाम उपोसथागारस्स सम्मुखट्ठानं । पाळियं "पठमं निमित्ता कित्तेतब्बा" ति एत्तकमेव वत्वा सीमासम्मुतियं विय "पब्बतनिमित्तं पासाणनिमित्तं" ति आदिना विसेसेत्वा निमित्तानं अदस्सितत्ता **"खुद्दकानि वा....पे०....यानि कानिचि निमित्तानी"** ति वुत्तं । कित्तेतुं वट्टतीति इमिना सम्बन्धो ।

अविप्पवाससीमानुजाननकथावण्णना

१४४॥ **अस्सा** ति भिक्खुनिसंघस्स । **द्वेपि सीमायो** ति पठमं वुत्ता अविप्पवाससीमा समानसंवासकसीमा च । **न कम्मवाचं वग्गं करोन्तीति** कम्मवाचं न भिन्दन्ति, कम्मं न कोपेन्तीति अधिप्पायो । **एत्था** ति "ठपेत्वा गामञ्च गामूपचारञ्चा"ति एत्थ । **गामञ्च गामूपचारञ्च" न ओत्थरतीति** "ठपेत्वा गामञ्च गामूपचारञ्चा"ति वुत्तत्ता । **सीमासङ्ख्यमेव गच्छतीति** अविप्पवाससीमासङ्ख्यं गच्छति । **एकम्पि कुलं पविट्ठं वा** ति अभिनवकतगेहेसु सब्बपठमं एकम्पि कुलं पविट्ठं अत्थि । **अगतं वा** ति पोराणकगामे अञ्ञेसु गेहानि छड्डेत्वा गतेसु एकम्पि कुलं आगतं अत्थि ।

अविप्पवाससीमा न समूहन्तब्बा ति महासीमं सन्धाय वदति । **निरासङ्कट्ठानेसु ठत्वाति** चेतियङ्गणादीनं खण्डसीमाय अनोकासत्ता वुत्तं । खण्डसीमञ्हि बन्धन्ता B. 274 तादिसं ठानं पहाय अञ्ञस्मिं विवित्ते ओकासे बन्धन्ति । **अप्पेव नाम समूहनितुं सक्खिस्सन्ती**ति अविप्पवाससीमंयेव समूहनितुं सक्खिस्सन्ति, न खण्डसीमं । **पटिबन्धितुं पन न सक्खिस्सन्ते वा** ति खण्डसीमाय अञ्ञातत्ता न सक्खिस्सन्ति । **न समूहनितब्बा** ति खण्डसीमं अजानन्तेहि न समूहनितब्बा । उपोसथस्स विसुं गहितत्ता अवसेस-कम्मवसेन समानसंवासता वेदितब्बा ।

गामसीमादिकथावण्णना

१४७॥ **अपरिच्छिन्नाया** ति बद्धसीमावसेन अकतपरिच्छेदाय । **येन केनचि खणित्वा अकतो** ति अन्तमसो तिरच्छानेनपि खणित्वा अकतो । **तस्स अन्तोहत्थपासं विजहित्वा ठितो कम्मं कोपेती**ति इमिना बहिपरिच्छेदतो यत्थ कत्थचि ठितो कम्मं न कोपेतीति दीपेति । यं पन वुत्तं **मातिकाट्ठकथायं**[1] परिच्छेदब्भन्तरे हत्थपासं विजहित्वा ठितो पि परिच्छेतो बहि अञ्ञं तत्तकंयेव परिच्छेदं अनतिक्कमित्वा ठितोपि कम्मं कोपेति, इदं सब्बअट्ठकथासु सन्निट्ठानं" ति, तत्थ "अञ्ञं तत्तकंयेव परिच्छेदं अनतिक्कमित्वा ठितोपि कम्मं कोपेती"ति इदं नेव पाळियं, न अट्ठकथायं उपलब्भति । यदि चेतं द्विन्नं संघानं विसुं उपोसथादिकम्मकरणाधिकारे वुत्तत्ता उदकुक्खेपतो बहि अञ्ञं उदकुक्खेपं अनतिक्कमित्वा उपोसथादिकरणत्थं ठितो संघो सीमासम्भेदसम्भवतो कम्मं कोपेतीति इमिना अधिप्पायेन वुत्तं सिया, एवं सति युज्जेय्य । तेनेव **मातिकाट्ठकथाय लीनत्थप्पकासनियं** वुत्तं "अञ्ञं तत्तकंयेव परिच्छेदं ति दुतियं उदकुक्खेपं अनतिक्कन्तोपि कोपेति । कस्मा ? अत्तनो उदकुक्खेपसीमाय परेसं उदकुक्खेपसीमाय अज्झोत्थटत्ता सीमासम्भेदो होति, तस्मा कोपेती" ति । "इदं सब्बअट्ठकथासु सन्निट्ठानं" ति च इमिना अधिप्पायेन वुत्तं ति गहेतब्बं सब्बासु पि अट्ठकथासु सीमासम्भेदस्स अनिच्छितत्ता । तेनेव हि "अत्तनो च अञ्ञेसञ्च उदकुक्खेपपरिच्छेदस्स अन्तरा अञ्ञो उदकुक्खेपो सीमन्तरिकत्थाय ठपेतब्बो" ति वुत्तं । अञ्ञे पनेत्थ अञ्ञथापि पपञ्चेन्ति, तं न गहेतब्बं ।

सब्बत्थ संघो निसीदतीति हत्थपासं अविजहित्वा निसीदति । **उदकुक्खेपसीमाकम्मं** B. 275 **नत्थी**ति यस्मा सब्बो पि नदीपदेसो भिक्खूहि अज्झोत्थटो, तस्मा समन्ततो नदिया अभावा उदकुक्खेपे पयोजनं नत्थि । उदकुक्खेपप्पमाणा सीमन्तरिका सुविञ्ञेय्यतरा होति, सीमासम्भेदसङ्का न च सियाति सामीचिदस्सनत्थं "**अञ्ञो उदकुक्खेपो सीमन्तरिकत्थाय ठपेतब्बो**" ति वुत्तं । यत्तकेन पन सीमासम्भेदो न होति, तत्तकं ठपेतुं

1. कङ्खा-ट्ठ-९१-पिट्ठे ।

वट्टतियेव । तेनेवाहु पोराणा "यत्तकेन सीमासङ्करो न होति, तत्तकम्पि ठपेतुं वट्टती"ति । **ऊनकं पन न वट्टती**ति इदम्पि उदकुक्खेपसीमाय परिसवसेन वड्ढनतो सीमासम्भेदसङ्का सियाति तं निवारणत्थमेव वुत्तं ।

गच्छन्तिया पन नावाय कातुं न वट्टतीति एत्थ उदकुक्खेपमनतिक्कमित्वा परिवत्तमानाय कातुं वट्टतीति वेदितब्बं । **सीमं वा सोधेत्वा** ति एत्थ **सीमसोधनं** नाम गामसीमादीसु ठितानं हत्थपासानयनादि । **"नदिं बिनासेत्वा तळाकं करोन्ती"**ति वुत्तमेवत्थं विभावेति **"हेट्ठा पाळि बद्धा"** ति, हेट्ठानदिं आवरित्वा पाळि बद्धा ति अत्थो । **छड्डितमोदकं** ति तळाकरक्खणत्थं एकमन्तेन छड्डितमुदकं । **देवे अवस्सन्ते** ति दुब्बुट्ठिकाले वस्सानेपि देवे अवस्सन्ते । **उप्पतित्वा** ति उत्तरित्वा । **गामनिगमसीमं ओत्थरित्वा पवत्तती**ति वुत्तप्पकारे वस्सकाले चत्तारो मासे अब्बोच्छिन्ना पवत्तति । **विहारसीमं** ति बद्धसीमं सन्धाय वदति ।

अगमनपथे ति यत्थ तदहेव गन्त्वा पच्चागन्तुं न सक्का होति, तादिसे पदेसे अरञ्ञसीमासङ्खमेव गच्छतीति सत्तब्भन्तरसीमं सन्धाय वदति । **तेसं** ति मच्छ-बन्धानं । **गमनपरियन्तस्स ओरतो** ति गमनपरियन्तस्स ओरिमभागे दीपकं पब्बतञ्च सन्धाय वुत्तं, न समुद्दप्पदेसं ।

१४८॥ **संसट्ठविटपाति** इमिना अञ्ञमञ्ञस्स आसन्नतं दीपेति । **बद्धा होती**ति पच्छिमदिसाभागे सीमं सन्धाय वुत्तं । **तस्सा पदेसं** ति यत्थ ठत्वा भिक्खूहि कम्मं कातुं सक्का होति, तादिसं पदेसं । यत्थ पन ठितेहि कम्मं कातुं न सक्का होति, तादिसं पदेसं अन्तोकरित्वा बन्धन्ता सीमाय सीमं सम्भिन्दन्ति नाम । **द्विन्नं सीमानं निमित्तं होती**ति निमित्तस्स सीमतो बाहिरत्ता सीमासम्भेदो न होतीति वुत्तं । **सीमासङ्करं करोती**ति वड्ढित्वा सीमप्पदेसं पविट्ठे द्विन्नं सीमानं गतट्ठानस्स दुविञ्ञेय्यत्ता वुत्तं, न पन तत्थ कम्मं कातुं न वट्टतीति दस्सनत्थं । न हि सीमा तत्तकेन असीमा होति, द्वे पन सीमा पच्छा वड्ढितेन रुक्खेन अज्झोत्थटत्ता B. 276 एकाबद्धा होन्ति, तस्मा एकत्थ ठत्वा कम्मं करोन्तेहि इतरं सोधेत्वा कातब्बं ।

गामसीमादिकथावण्णना निट्ठिता ।

उपोसथभेदादिकथावण्णना

१४९॥ **अधम्मेन वग्गं उपोसथकम्मं** ति एत्थ यत्थ चत्तारो वसन्ति, तत्थ पातिमोक्खुद्देसो अनुञ्ञातो । यत्थ द्वे वा तयो वा वसन्ति, तत्थ पारिसुद्धिउपोसथो । इध पन तथा अकत्वा चतुन्नं वसनट्ठाने पारिसुद्धिउपोसथस्स कतत्ता तिण्णं वसनट्ठाने

च पातिमोक्खस्स उद्दिट्ठत्ता "अधम्मेना" ति वुत्तं । यस्मा सब्बेव न सन्निपतिंसु, छन्दपारिसुद्धि च संघमज्झंयेव आगच्छति, न गणमज्झं, तस्मा "वग्गं" ति वुत्तं ।

पातिमोक्खुद्देसकथावण्णना

१५०॥ **एवमेतं धारयामीति** "सुता खो पनायस्मन्तेही" ति एत्थ "एवमेतं धारयामी" ति वत्वा "उद्दिट्ठं खो आयस्मन्तो निदानं, सुता खो पनायस्मन्तेहि चत्तारो पाराजिका धम्मा" ति वत्तब्बं । तेनेव **मातिकाट्ठकथायं**[1] "तत्थायस्मन्ते पुच्छामि कच्चित्थ परिसुद्धा, दुतियम्पि पुच्छामि......पे०......तस्मा तुण्ही, एवमेतं धारयामीति वत्वा 'उद्दिट्ठं खो आयस्मन्तो निदानं" ति आदिना नयेन अवसेसे सुतेन साविते उद्दिट्ठो होती" ति वुत्तं । **सुतेना** ति सुतपदेन । **सवरभयं** ति[2] वनचरकभयं । तेनाह **"अटविमनुस्सभयं"** ति । "अवसेसं सुतेन सावेतब्बं" ति वचनतो निदानुद्देसे अनिट्ठिते सुतेन सावेतब्बं नाम नत्थीति आह **"दुतियादीसु उद्देसेसू"** ति । उद्दिट्ठउद्देसापेक्खञ्हि अवसेसग्गहणं, तस्मा निदाने उद्दिट्ठे पाराजिकुद्देसादीसु यस्मिं विप्पकते अन्तरायो उप्पज्जति, तेन सद्धिं अवसेसं सुतेन सावेतब्बं ।

B. 277 तीहिपि विधीहीति ओसारणकथनसरभञ्ञेहि । एत्थ च अत्थं भणितुकामताय सुत्तस्स ओसारणा **ओसारणं** नाम । तस्सेव अत्थप्पकासना **कथनं** नामं । सुत्तस्स तदत्थस्स वा सरेन भणनं सरभञ्ञं नाम । सज्झायं अधिट्ठहित्वा ति "सज्झायं करोमी" ति चित्तं उप्पादेत्वा । **ओसारेत्वा पन कथेन्तेना** ति पठमं उस्सारेत्वा पच्छा अत्थं कथेन्तेन । **मनुस्सानं पन "भणाही" ति वत्तुं वट्टती**ति एत्थ उच्चतरे निसिन्नेनपि मनुस्सानं भणाहीति विसेसेत्वायेव वत्तुं वट्टति, अविसेसेत्वा पन न वट्टति । **सज्झायं करोन्तेना** ति यत्थ कत्थचि निसीदित्वा सज्झायं करोन्तेन । **थेरो** ति यो कोचि अत्तना वुड्ढतरो । **एकं आपुच्छित्वा** ति एकं वुड्ढतरं आपुच्छित्वा । **अपरो आगच्छती**ति अपरो ततोपि वुड्ढतरो आगच्छति ।

पातिमोक्खुद्देसकथावण्णना निट्ठिता ।

पातिमोक्खुद्देसकअज्झेसनादिकथावण्णना

१५५॥ **चोदनावत्थु** नाम एकं नगरं । **संघउपोसथादिभेदेन नवविधं** ति संघे-उपोसथो गणे उपोसथो पुग्गले उपोसथो ति एवं कारकवसेन तयो, सुत्तुद्देसो पारिसुद्धिउपोसथो अधिट्ठानुपोसथो ति एवं कत्तब्बाकारवसेन तयो, चातुद्दसिको

1. कङ्खा-ट्ठ-८४-पिट्ठे ।
2. सञ्चरभयं ति (स्या) ।

पन्नरसिको सामग्गी उपोसथो ति एवं दिवसवसेन तयो ति नवविधं । **चतुब्बिधं उपोसथकम्मं** ति अधम्मेन वग्गं उपोसथकम्मं, अधम्मेन समग्गं उपोसथकम्मं धम्मेन वग्गं उपोसथकम्मं, धम्मेन समग्गं उपोसथकम्मं ति एवं चतुब्बिधम्पि उपोसथकम्मं । **दुविधं पातिमोक्खं** ति भिक्खुपातिमोक्खं भिक्खुनीपातिमोक्खं ति दुविधं पातिमोक्खं । **नवविधं पातिमोक्खुद्देसं** ति भिक्खूनं पञ्च उद्देसा, भिक्खूनीनं ठपेत्वा अनियतुद्देसं अवसेसा चत्तारो ति नवविधं पातिमोक्खुद्देसं ।

पक्खगणनादिउग्गहणानुजाननकथावण्णना

१५८-१६१॥ **समन्नाहरथा** ति सल्लक्खेथ । **परियेसितब्बानीति** भिक्खाचारेन परियेसितब्बानि ।

दिसंगमिकादिवत्थुकथावण्णना

B. 278

१६३॥ **उतुवस्सेयेवा** ति हेमन्तगिम्हेसुयेव ।

पारिसुद्धिदानकथावण्णना

१६४॥ **येन केनचि अङ्गपच्चङ्गेन विञ्ञापेतीति** मनसा चिन्तेत्वा हत्थप्पयोगादिना येन केनचि विञ्ञापेति । **संघो नप्पहोतीति** द्विन्नं द्विन्नं अन्तरा हत्थपासं अविजहित्वा पटिपाटिया ठातुं नप्पहोति । **इतरा पन बिळालसङ्खलिकपारिसुद्धि नामा** ति एत्थ केचि वदन्ति "बिळालसङ्खलिका बद्धाव होति अन्तोगेहे एव सम्पयोजनत्ता, यथा सा न कत्थचि गच्छति, तथा सापि न गच्छतीति अधिप्पायो । इतरथा विसेसनं निरत्थकं होती"ति । अपरे पन "यथा बहूहि मनुस्सेहि एकस्स बिळालस्स अत्तनो अत्तनो सङ्खलिका गीवाय आबद्धा बिळाले गच्छन्ते गच्छन्ति आबद्धता, न अञ्ञस्मिं बिळाले गच्छन्ते गच्छन्ति अनाबद्धत्ता, एवमेवस्स भिक्खुस्स बहूहि सङ्खलिकसदिसा छन्दपारिसुद्धि दिन्ना, सा तस्मिं भिक्खुस्मिं गच्छन्ते गच्छति तस्मिं सङ्खलिका विय आबद्धत्ता, न अञ्ञस्मिं अनाबद्धत्ता" ति वदन्ति । सब्बम्पेतं न सारतो पच्चेतब्बं । अयं पनेत्थ सारो–यथा सङ्खलिकाय पठमवलयं दुतियंयेव वलयं पापुणाति, न ततियं, एवमयम्पि पारिसुद्धिदायकेन यस्स दिन्ना, ततो अञ्ञत्थ न गच्छतीति सङ्खलिकसदिसत्ता "बिळालसङ्खलिका" ति वुत्ता । बिळालसङ्खलिकगहणञ्चेत्थ यासं कासञ्चि सङ्खलिकानं उपलक्खणमत्तं ति दट्ठब्बं ।

छन्ददानकथावण्णना

१६५॥ "सन्ति संघस्स करणीयानी" ति बत्तब्बे वचनविपल्लासेन "करणीयं" ति वुत्तं । तस्स सम्मुतिदानकिच्चं नत्थि । "हत्थपासं आनेतब्बोयेवा" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं ।

संघुपोसथादिकथावण्णना

१६८॥ संघसन्निपाततो पठमं कातब्बं **पुब्बकरणं** ति वुत्तं, पुब्बकरणतो पच्छा कातब्बम्पि उपोसथकम्मतो पठमं कातब्बत्ता **पुब्बकिच्चं** ति वुत्तं । उभयम्पि चेतं उपोसथकम्मतो पठमं कत्तब्बत्ता कत्थचि **पुब्बकिच्च**मिच्चेव वोहरीयति" किं संघस्स पुब्बकिच्चं" ति आदीसु विय ।

B. 279 **उपोसथो** ति तीसु उपोसथदिवसेसु अञ्ञतरदिवसो । तस्मिञ्हि सति इदं संघस्स उपोसथकम्मं पत्तकल्लं नाम होति, नासति । यथाह "न च भिक्खवे अनुपोसथे उपोसथो कातब्बो" ति[1] । **यावतिका च भिक्खू कम्मंप्पत्ता** ति यत्तका भिक्खू तस्स उपोसथकम्मस्स पत्ता युत्ता अनुरूपा सब्बन्तिमेन परिच्छेदेन चत्तारो भिक्खू पकतत्ता, ते च खो हत्थपासं अविजहित्वा एकसीमायं ठिता । **सभागापत्तियो च न विज्जन्तीति** एत्थ यं सब्बो संघो विकालभोजनादिना सभागवत्थुना लहुकापत्तिं आपज्जति, एवरूपा **"वत्थुसभागा"** ति वुच्चन्ति । एतासु हि अविज्जमानासु विसभागासु विज्जमानासुपि **पत्तकल्लं** होतियेव ।

वज्जनीया च पुग्गला तस्मिं न होन्तीति "न भिक्खवे सगहट्ठाय परिसाया" ति[2] वचनतो गहट्ठो, "न भिक्खवे भिक्खुनिया निसिन्नपरिसाय पातिमोक्खं उद्दिसितब्बं" ति आदिना[3] नयेन वुत्ता भिक्खुनी सिक्खमाना सामणेरो सामणेरी सिक्खापच्चक्खातको अन्तिमवत्थु अज्झापन्नको आपत्तिया अदस्सने उक्खित्तको आपत्तिया अप्पटिकम्मे उक्खित्तको पापिकाय दिट्ठिया अप्पटिनिस्सग्गे उक्खित्तको पण्डको थेय्यसंवासको तित्थियपक्कन्तको तिरच्छानगतो मातुघातको पितुघातको अरहन्तघातको भिक्खुनी-दूसको संघभेदको लोहितुप्पादको उभतोब्यञ्जनकोति इमे वीसति चाति एकवीसति पुग्गला वज्जनीया नाम, ते हत्थपासतो बहिकरणवसेन वज्जेतब्बा । एतेसु हि तिविधे उक्खित्तके सति उपोसथं करोन्तो संघो पाचित्तियं आपज्जति, सेसेसु दुक्कटं । एत्थ च **तिरच्छानगतो** ति यस्स उपसम्पदा पटिक्खिता, सोव अधिप्पेतो, तित्थिया गहट्ठेनेव सङ्गहिता । एतेपि हि वज्जनीया । एवं पत्तकल्लं इमेहि चतूहि अङ्गेहि सङ्गहितं ति वेदितब्बं ।

अज्ज मे उपोसथो पन्नरसो ति पीति पि–सद्देन पाळियं आगतनयेनेव "अज्ज मे उपोसथो" तिपि वत्तुं वट्टतीति दीपेति । **मातिकाट्ठकथायं**[4] पन "अज्ज मे उपोसथो चातुद्दसो ति वा पन्नरसो ति वा वत्वा अधिट्ठामीति वत्तब्बं" ति वुत्तं

संघुपोसथादिकथावण्णना निट्ठिता ।

---

1. वि-३-१९०-पिट्ठे ।
2. वि.-३-१५५-पिट्ठे ।
3. वि.-३-१८९-पिट्ठे ।
4. कङ्खा-ट्ठ-९५-पिट्ठे ।

आपत्तिपटिकम्मविधिकथावण्णना

B. 280

१६९॥ ननु च "न भिक्खवे सापत्तिकेन उपोसथो कातब्बो, यो करेय्य, आपत्ति दुक्कटस्सा" ति एवं सापत्तिकस्स उपोसथकरणे विसुं पञ्ञत्ता आपत्ति न दिस्सति, तस्मा भगवता पञ्ञत्तं "न सापत्तिकेन उपोसथो कातब्बो" ति इदं कस्मा वुत्तं ति आह **"यस्स सिया आपत्ति....पे०....पञ्ञत्तं होतीति वेदितब्बं"** ति । किञ्चापि विसुं पञ्ञत्ता आपत्ति न दिस्सति, अथ खो "यस्स सिया आपत्ति, सो आविकरेय्या" ति आदिं वदन्तेन अत्थतो पञ्ञत्तायेवाति अधिप्पायो ।

पारिसुद्धिदानपञ्ञापनेन चाति इमिनाव "सापत्तिकेन पारिसुद्धिपि न दातब्बा" ति दीपितं होति । न हि सापत्तिको समानो "पारिसुद्धिं दम्मि, पारिसुद्धिं मे हर, पारिसुद्धिं मे आरोचेही" ति वत्तुमरहति । तस्मा पारिसुद्धिं देन्तेन पठमं सन्ती आपत्ति देसेतब्बा "अहं आवुसो इत्थन्नामाय आपत्तिया वेमतिको, यदा निब्बेमतिको भविस्सामि, तदा तं आपत्तिं पटिकरिस्सामी"ति वत्वा उपोसथो कातब्बो । "पातिमोक्खं सोतब्बं" ति वचनतो याव निब्बेमतिको न होति, ताव सभागापत्तिं पटिग्गहेतुं न लभति, अञ्ञेसञ्च कम्मानं परिसुद्धो नाम होति । "पुन निब्बेमतिको हुत्वा देसेतब्बं न चा' ति[1] नेव पाळियं न अट्ठकथायं अत्थि, देसिते पन दोसो नत्थि । "इतो वुट्ठहित्वा पटिकरिस्सामीति एत्थापि एसेव नयो" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । यथा सब्बो संघो सभागापत्तिं आपज्जित्वा "सुणातु मे भन्ते संघो......पे०..... पटिकरस्सती"ति ञत्तिं ठपेत्वा उपोसथं कातुं लभति, एवं तीहि" सुणन्तु मे आयस्मन्ता, इमे भिक्खू सभागं आपत्तिं आपन्ना । यदा अञ्ञं भिक्खुं सुद्धं अनापत्तिकं पस्सिस्सन्ति, तदा तस्स सन्तिके तं आपत्तिं पटिकरिस्सन्ती"ति गणञत्तिं ठपेत्वा द्वीहि अञ्ञमञ्ञं आरोचेत्वा उपोसथं कातुं वट्टति । एकेनपि "परिसुद्धं लभित्वा पटिकरिस्सामी"ति आभोगं कत्वा कातुं वट्टतीति च वदन्ति ।

आपत्तिपटिकम्मविधिकथावण्णना निट्ठिता ।

लिङ्गादिदस्सनकथावण्णना

B. 281

१७९॥ **आचारसण्ठानं** ति आचारसण्ठिति । आकरीयति पकासीयति एतेनाति **आकारो** । लीनं गमयति बोधेतीति लिङ्गं । निमियन्ति परिच्छिज्ज ञायन्ति एतेनाति

---

1. न वाति (स्या)

निमित्तं। उद्दिसीयन्ति अपदिसीयन्ति एतेनाति **उद्देसो**। "अम्हाकं इदं" ति अञ्ञातं अविदितं ति अञ्ञातकं। तञ्च अत्थतो परसन्तकंयेवाति आह **"अञ्ञेसं सन्तकं"** ति।

१८०॥ **नानासंवासकभावं** ति लद्धिनानासंवासकभावं। तस्स अभिभवो नाम तेसं लद्धिविस्सज्जापनं ति आह **"तं दिट्ठिं न निस्सज्जापेन्तीति अत्थो"** ति।

नगन्तब्बगन्तब्बवारकथावण्णना

१८१॥ **उपोसथाधिट्ठानत्थं सीमापि नदीपि न गन्तब्बाति** गरुकं पातिमोक्खुद्देसं विस्सज्जेत्वा लहुकस्स अकत्तब्बत्ता वुत्तं। **आरञ्ञकेनापि भिक्खुना** ति एकचारिकेन आरञ्ञकभिक्खुना, यत्थ वा संघपहोनका भिक्खू न सन्ति, तादिसे अरञ्ञे वसन्तेन। **तत्थ उपोसथं कत्वाव गन्तब्बं** ति तस्स वसनट्ठाने संघुपोसथस्स अप्पवत्तनतो वुत्तं। **उपोसथन्तरायो**ति अत्तनो उपोसथन्तरायो।

वज्जनीयपुग्गलसन्दस्सनकथावण्णना

१८३॥ **हत्थपासुपगमनमेव पमाणं** ति भिक्खुनीआदयो ठिता वा होन्तु निसिन्ना वा, तेसं हत्थपासुपगमनमेव आपत्तिया पमाणं ति अधिप्पायो, तस्मा एकसीमायम्पि हत्थपासं जहापेत्वा उपोसथं कातुं वट्टति। सेसमेत्थ उत्तानमेव।

उपोसथक्खन्धकवण्णना निट्ठिता।

----

३. वस्सूपनायिकक्खन्धक

B. 282

वस्सूपनायिकानुजाननकथावण्णना

१८४॥ वस्सूपनायिकक्खन्धके **इध-सद्दो निपातमत्तो** ति ओकासपरिदीपनस्सपि असम्भवतो अत्थन्तरस्स अबोधनतो वुत्तं । **अपरज्जुगताय अस्साति** इमिना असमानाधिकरणविसयो बाहिरत्थसमासोयं ति दस्सेति । **अपरज्जूति** आसाळ्ही-पुण्णमितो अपरं दिनं, पाटिपदं ति अत्थो । अस्सा ति आसाळहीपुण्णमिया ।

वस्साने चारिकापटिक्खेपादिकथावण्णना

१८५॥ **अनपेक्खगमनेन वा अञ्ञत्थ अरुणं उट्ठापनेन वा आपत्ति वेदितब्बा** ति एत्थ अनपेक्खगमनेन उपचारातिक्कमे आपत्ति वेदितब्बा, सापेक्खगमनेन अञ्ञत्थ अरुणुट्ठापनेन आपत्ति वेदितब्बा ।

सत्ताहकरणीयानुजाननकथावण्णना

१८७-१८९॥ **तीणि परिहीनानीति** भिक्खुनीनं वच्चकुटिआदीनं पटिक्खित्तत्ता पहीनानि । **वारेय्यं** ति आवाहविवाहमङ्गलं । **सुत्तन्तो** ति अत्तनो पगुणसुत्तन्तो । **न पलुज्जतीति** न विनस्सति न अन्तरधायति ।

पहितेयेव अनुजाननकथावण्णना

१९९॥ **भिक्खुगतिकोति** भिक्खुनिस्सितको । सो पन यस्मा भिक्खूहि सद्धिं वसति, तस्मा वुत्तं **"भिक्खूहि सद्धिं वसनकपुरिसो"** ति । सत्ताहकरणीयेन गन्त्वा बहिद्धा **अरुणुट्ठापनं रत्तिच्छेदो । अनिमन्तितेन** गन्तुं न **वट्टतीति** एत्थ अनिमन्तितत्ता सत्ताहकिच्चं अधिट्ठहित्वा गच्छन्तस्सपि वस्सच्छेदो चेव दुक्कटञ्च होतीति वेदितब्बं । यथावुत्तञ्हि रतिच्छेदकारणं विना तिरोविहारे वसित्वा आगच्छिस्सामीति गच्छतोपि वस्सच्छेदं वदन्ति । **गन्तुं वट्टतीति** सत्ताहकरणीयेन गन्तुं वट्टति । एवं गच्छन्तेन च अन्तोउपचारसीमायं ठितेनेव "अन्तोसत्ताहे आगच्छिस्सामी" ति आभोगं कत्वा गन्तब्बं । सचे आभोगं अकत्वा उपचारसीमं अतिक्कमति, छिन्नवस्सोव होतीति वदन्ति । **भण्डकं** ति चीवरं सन्धाय वुत्तं । **पहिणन्तीति** चीवरधोवनादिकम्मेन पहिणन्ति । **सम्पापुणितुं न सक्कोति, वट्टतीति** एत्थ "अज्जेव आगमिस्सामी" ति सामन्तविहारं गन्त्वा पुन आगच्छन्तस्स अन्तरामग्गे सचे अरुणुग्गमनं होति, वस्सच्छेदोपि न होति, रत्तिच्छेददुक्कटञ्च नत्थीति वदन्ति । **"आचरियं वस्सिस्सामी"** ति

B. 283

पन गन्तुं लभतीति "अगिलानम्पि आचरियं उपज्झायं वा पस्सिस्सामी" ति सत्ताहकरणीयेन गन्तुं लभति । **सचे पन नं आचरियो "अज्ज मा गच्छा" ति वदति, वट्टतीति** एवं सत्ताहकरणीयेन गतं अन्तोसत्ताहेयेव पुन आगच्छन्तं सचे आचरियो उपज्झायो वा "अज्ज मा गच्छा" ति वदति, वट्टति, सत्ताहातिक्कमेपि अनापत्तीति अधिप्पायो, वस्सच्छेदो पन होतियेवा ति दट्ठब्बं सत्ताहस्स बहिद्धा वीतिनामितत्ता ।

अन्तराये अनापत्तिवस्सच्छेदकथावण्णना

२०१॥ **सचे दूरं गतो होति, सत्ताहवारेन अरुणो उट्ठापेतब्बो** ति इमिना वस्सच्छेदकारणे सति सत्ताहकरणीयेन गतुं वट्टतीति दीपेति ।

वजादीसु वस्सूपगमनकथावण्णना

२०३॥ **"इध वस्सं उपेमी"ति तिक्खत्तुं वत्तब्बं** ति सत्थस्साविहारत्ता "इमस्मिं विहारे" ति अवत्वा "इध वस्सं उपेमी"ति एत्तकमेव वत्तब्बं । **सत्थे पन वस्सं उपगन्तुं न वट्टतीति** कुटिकादीनं अभावे[1] "इध वस्सं उपेमी" ति वचीभेदं कत्वा उपगन्तुं न वट्टति, आलयकरणमत्तेनेव वट्टतीति अधिप्पायो । **विप्पकिरतीति** विसुं विसुं गच्छति । **तीसु ठानेसु नत्थि वस्सच्छेदे आपत्तीति** तेहि सद्धिं गच्छन्तस्सेव नत्थि आपत्ति, तेहि वियुज्जित्वा गमने पन आपत्तियेव, पवारेतुञ्च न लभति ।

वस्सं अनुपगन्तब्बट्ठानकथावण्णना

२०४॥ **सेय्यथापि पिसाचिल्लिकाति** एत्थ पिसाचा एव पिसाचिल्लिका, पिसाचदारकातिपि वदन्ति । **पविसनद्वारं योजेत्वा** ति सकवाटबद्धमेव योजेत्वा । **पञ्चन्नं छदनानं** ति तिणपण्णइट्ठकसिलासुधासङ्खातानं पञ्चन्नं छदनानं । इदञ्च B. 284 येभुय्येन वुत्तं ति वेदितब्बं रुक्खादीसु पदरच्छदनायपि कुटिकाय वस्सूपगमनस्स वुत्तत्ता । **न भिक्खवे असेनासनिकेन वस्सं उपगन्तब्बं** ति वचीभेदं कत्वा वस्सूपगमनं सन्धायेव पटिक्खेपो, न आलयकरणवसेन उपगमनं सन्धायाति वदन्ति । पाळियं पन अविसेसेन वुत्तत्ता अट्ठकथायञ्च दुतियपारजिकसंवण्णनायं[2] "वस्सं उपगच्छन्तेन हि नालकपटिपदं पटिपन्नेनपि पञ्चन्नं छदनानं अञ्ञतरेन छन्नेयेव सद्वारबन्धे सेनासने उपगन्तब्बं । तस्मा वस्सकाले सचे सेनासनं लभति, इच्चेतं कुसलं । नो चे लभति, हत्थकम्मं परियेसित्वा पि कातब्बं । हत्थकम्मं अलभन्तेन सामम्पि कातब्बं, न त्वेव असेनासनिकेन वस्सं उपगन्तब्बं" ति दळ्हं कत्वा वुत्तत्ता असेनासनिकस्स नावादिं विना अञ्ञत्थ आलयो न वट्टतीति अम्हाकं खन्ति । नावासत्थवजेसुयेव हि

1. अभावेन (स्या)
2. वि.-ट्ठ-१-२४८-पिट्ठे ।

"अनुजानामि भिक्खवे नावाय वस्सं उपगन्तुं" ति आदिना सति असति वा सेनासने वस्सूपगमनस्स विसुं अनुञ्ञातत्ता" न भिक्खवे असेनासनिकेन वस्सं उपगन्तब्बं" ति अयं पटिक्खेपो तत्थ न लब्भतीति असति सेनासने आलयवसेनपि नावादीसु उपगमनं वुत्तं । **टङ्कितमञ्चो** नाम दीघे पञ्चपादे मज्झे विज्झित्वा अटनियो पवेसेत्वा कतो मञ्चो । तस्स इदं उपरि इदं हेट्ठाति नत्थि, परिवत्तेत्वा अत्थतोपि तादिसोव होति, तं सुसाने देवट्ठाने च ठपेन्ति, चतुन्नं पासाणानं उपरि पासाणं अत्थरित्वा कतं गेहम्पि "टङ्कितमञ्चो" ति वुच्चति ।

वस्सं अनुपगन्तब्बट्ठानकथावण्णना निट्ठिता ।

अधम्मिककतिककथावण्णना

२०५॥ **तस्सा लक्खणं महाविभङ्गे वुत्तं** ति चतुत्थपाराजिकसंवण्णनायं "यो इमम्हा आवासा पठमं पक्कमिस्सति, तं मयं अरहा ति जानिस्सामा" ति एत्थ[1] दस्सितं अधम्मिककतिकवत्तलक्खणं सन्धाय वदति, परतोपि सेनासनक्खन्धकवण्णनायं अधम्मिकं कतिकवत्तं आवि भविस्सतियेव ।

पटिस्सवदुक्कटापत्तिकथावण्णना

B. 285

२०७॥ यस्मा नानासीमायं द्वीसु आवासेसु वस्सं वसन्तस्स दुतिये "वसामी" ति चित्ते उप्पन्ने पठमसेनासनग्गाहो पटिप्पस्सम्भति, पुन पठमेयेव "वसामी" ति चित्ते उप्पन्ने दुतियो पटिप्पस्सम्भति, तस्मा "**तस्स भिक्खवे भिक्खुनो पुरिमिका च न पञ्ञायती**"ति वुत्तं । पटिस्सवस्स विसंवादनपच्चया होन्तम्पि दुक्कटं सतियेव पटिस्सवे होतीति आह "**तस्स तस्स पटिस्सवे दुक्कटं**" ति । **तेनेवाह** "**तञ्च खो.....पे०.....पच्छा विसंवादनपच्चया**" ति ।

अकरणीयो ति सत्ताहकरणीयेन अकरणीयो । **सकरणीयो** ति सत्ताहकरणीयेनेव सकरणीयो । यदि एवं "सत्ताहकरणीयेन अकरणीयो सकरणीयो" ति च कस्मा न वुत्तं ति ? "अकरणीयो" ति वुत्तेपि सत्ताहकरणीयेन सकरणीयाकरणीयता विञ्ञायतीति कत्वा न वुत्तं । यदि एवं परतो "सत्ताहकरणीयेन पक्कमती" ति वारद्वयेपि "सकरणीयो पक्कमती" ति एत्तकमेव कस्मा न वुत्तं ति ? वुच्चते–तत्थ "सत्ताहकरणीयेना" ति अवत्वा "सकरणीयो पक्कमती" ति वुत्ते सो तं सत्ताहं बहिद्धा

1. वि-१-१४४-पिट्ठे ।

वीतिनामेतीति न सक्का वत्तुं ति "सत्ताहकरणीयेन पक्कमती" ति वुत्तं। एवञ्हि वुत्ते सत्ताहस्स अधिकतत्ता सो तं सत्ताहं बहि वीतिनामेतीति सक्का वत्तुं।

एत्थ च आदिम्हि चत्तारो वारा निरपेक्खगमनं सन्धाय वुत्ता, तत्थापि पुरिमा द्वे वारा वस्सं अनुपगतस्स वसेन वुत्ता, पच्छिमा पन द्वे वारा वस्सं उपगतस्स वसेन, ततो परं द्वे वारा सापेक्खगमनं सन्धाय वुत्ता, तत्थापि पठमवारो सापेक्खस्स पि सत्ताहकरणीयेन गन्त्वा तं सत्ताहं बहिद्धा वीतिनामेन्तस्स वस्सच्छेददस्सनत्थं वुत्तो, इतरो वुत्तनयेनेव गन्त्वा अन्तोसत्ताहे निवत्तन्तस्स वस्सच्छेदाभावदस्सनत्थं। "सो सत्ताहं अनागताय पवारणाय सकरणीयो पक्कमती" ति अयं पन वारो नवमितो पट्ठाय गन्त्वा सत्ताहं बहिद्धा वीतिनामेन्तस्सपि वस्सच्छेदाभावदस्सनत्थं वुत्तो। एत्थ च "अकरणीयो पक्कमती"ति दुतियवारस्स अनागतत्ता नवमितो पट्ठाय गच्छन्तेनपि सतियेव करणीये गन्तब्बं, नासतीति दट्ठब्बं। इमे च सत्त वारा बहिद्धा B. 286 कतउपोसथिकस्स वसेन आगता, अपरे सत्त अन्तोविहारं गन्त्वा कतउपोसथस्स वसेनाति एवं पुरिमिकाय वसेन चुद्दस्स वारा वुत्ता, ततो परं पच्छिमिकाय वसेन तेयेव चुद्दस वारा वुत्ताति एवमेतेसं नानाकरणं वेदितब्बं।

इमेहि पन सब्बवारेहि वुत्तमत्थं सम्पिण्डेत्वा दस्सेतुं **"सो तदहेव अकरणीयो ति आदीसू"**ति आदि आरद्धं। **को पन वादो द्वीहतीहं वसित्वा अन्तोसत्ताहे निवत्तन्तस्सा**ति वस्सं उपगन्त्वा द्वीहतीहं वसित्वा सत्ताहकरणीयेन गन्त्वा अन्तोसत्ताहे निवत्तन्तस्स को पन वादो, कथा एव नत्थीति अधिप्पायो। **असतिया पन वस्सं न उपेतीति** "इमस्मिं विहारे इमं तेमासं वस्सं उपेमी" ति वचीभेदं कत्वा न उपेति।

कोमुदिया चातुमासिनिया ति पच्छिमकत्तिकपुण्णमायं। सा हि कुमुदानं अत्थिताय कोमुदी, चतुन्नं वस्सिकानं मासानं परियोसानत्ता "चातुमासिनी" ति वुच्चति। तदा हि कुमुदानि सुपुप्फितानि होन्ति, तस्मा कुमुदानं समूहो, कुमुदानि एव वा **कोमुदा**, ते एत्थ अत्थीति **"कोमुदी"**ति वुच्चति, कुमुदवतीति वुत्तं होति। सेसमेत्थ उत्तानमेव।

पटिस्सवदुक्कटापत्तिकथावण्णना निट्ठिता।

वस्सूपनायिकक्खन्धकवण्णना निट्ठिता।

----

४. पवारणक्खन्धक

B. 287

अफासुकविहारकथावण्णना

२०९॥ पवारणक्खन्धके आदितो लापो **आलापो**, वचनपटिवचनवसेन समं लापो **सल्लापो** । **पिण्डाय पटिक्कमेय्या** ति गामे पिण्डाय चरित्वा पच्चागच्छेय्य । **अवक्कारपातिं धोवित्वा उपट्ठापेय्या** ति अतिरेकपिण्डपातं अपनेत्वा ठपनत्थाय एकं समुग्गपातिं धोवित्वा ठपेय्य । **समुग्गपाति** नाम समुग्गपुटसदिसा पाति । **अप्पहरिते** ति अपरूळ्ह-हरिते, यस्मिं ठाने पिण्डपातज्झोत्थरणेन विनस्सनधम्मानि तिणानि नत्थि, तस्मिं ति अत्थो । तेन नित्तिणञ्च महातिणगहनञ्च यत्थ सकटेनपि छड्डिते पिण्डपाते तिणानि न विनस्सन्ति, तञ्च ठानं परिग्गहितं होति । भूतगामसिक्खापदस्स हि अविकोपनत्थमेतं वुत्तं । **अप्पाणके** ति निप्पाणके, पिण्डपातज्झोत्थरणेन मरितब्बपाण-करहिते वा महाउदकक्खन्धे । परित्तोदके एव हि भत्तपक्खेपेन आलुळिते सुखुमपाणका मरन्ति, न महातळाकादीसूति । पाणकानुरक्खणत्थञ्हि एतं वुत्तं । **ओपिलापेय्या** ति निमुज्जापेय्य ।

वच्चघटं ति आचमनकुम्भी । **रित्तं** ति रित्तकं । **तुच्छं** ति तस्सेव वेवचनं । **अविसय्हं** ति उक्खिपितुं असक्कुणेय्यं अतिभारिकं । **हत्थविकारेना**ति हत्थसञ्ञाय । हत्थेहि उक्खिपनं हत्थविलङ्घनं । तेनाह **"हत्थुक्खेपकेना"** ति । अथ वा विलङ्घेति देसन्तरं पापेति एतेनाति विलङ्घको, हत्थो एव विलङ्घको हत्थविलङ्घको, तेन **हत्थविलङ्घकेन,** अञ्ञमञ्ञं संसिब्बितहत्थेनाति वुत्तं होति । द्वे हि जना हत्थेन हत्थं संसिब्बेत्वा द्वीसु हत्थेसु ठपेत्वा उट्ठपेन्ता हत्थविलङ्घकेन उट्ठपेन्ति नाम । **तित्थियसमादानं ति तित्थियेहि समादातब्बं ।**

अफासुकविहारकथावण्णना निट्ठिता ।

पवारणाभेदकथावण्णना

B. 288

२१२॥ **द्वेमा भिक्खवे पवारणा चातुद्दसिका च पन्नरसिका चा** ति एत्थ पुरिमवस्संवुत्थानं पुब्बकत्तिकपुण्णमा, तेसंयेव सचे भण्डनकारकेहि उपद्दुता पवारणं पच्चुक्कड्ढन्ति, अथ कत्तिकमासस्स काळपक्खचातुद्दसो वा पच्छिमकत्तिकपुण्णमा वा, पच्छिमवस्संवुत्थानञ्च पच्छिमकत्तिकपुण्णमा एव वा ति इमे तयो पवारणदिवसाति वेदितब्बा। इदञ्च पकतिचारित्तवसेन वुत्तं, तथारूपपच्चये पन सति

द्विन्नं कत्तिकपुण्णमानं पुरिमेसु चातुद्दसेसुपि पवारणं कातुं वट्टति, तेनेव महाविहारे भिक्खू चातुद्दसिया पवारेत्वा पन्नरसिया कायसामग्गिं देन्ति, चेतियगिरिमहदस्सनत्थम्पि अट्ठमिया गच्छन्ति, तम्पि चातुद्दसियं पवारेतुकामानञ्ञेव होति ।

पवारणादानानुजाननकथावण्णना

२१३॥ **सचे पन वुड्ढतरो होतीति** सचे पवारणदायको भिक्खु वुड्ढतरो होति । **तेन च भिक्खुना** ति पवारणदायकेन भिक्खुना ।

अनापत्तिपन्नरसककथावण्णना

२२२॥ पन्नरसकेसु **पवारितमत्ते** ति पवारितसमनन्तर । **अवुट्ठिताय परिसाया** ति पवारेत्वा पच्छा अञ्ञमञ्ञं कथेन्तिया । **एकच्चाय वुट्ठितायाति** एकच्चेसु यथानिसिन्नेसु एकच्चेसु सकसकट्ठानं गतेसु । **पुन पवारितब्बं** ति पुनपि सब्बेहि समागन्त्वा पवारेतब्बं । **आगच्छन्ति समसमा, तेसं सन्तिके पवारेतब्बं** ति गते अनानेत्वा निसिन्नानञ्ञेव सन्तिके पवारेतब्बं । **सब्बाय वुट्ठिताय परिसाय आगच्छन्ति समसमा, तेसं सन्तिके पवारेतब्बं** ति यदि सब्बे वुट्ठहित्वा गता सन्निपातेतुञ्च न सक्का, एकच्चे सन्निपातेत्वा पवारेतुं वट्टति, ञत्तिं ठपेत्वा कत्तब्बसंघकम्माभावा वग्गं न होति । उपोसथेपि एसेव नयो ।

पवारणाठपनकथावण्णना

२३७॥ "नत्थि दिन्नं" ति आदिनयप्पवत्ता दसवत्थुका मिच्छदिट्ठि । "होति तथागतो परं मरणा, न होति तथागतो परं मरणा" ति आदिना सस्सतुच्छेदसङ्खातं अन्तं गण्हातीति **अन्तग्गाहिका** ।

B. 289

भण्डनकारकवत्थुकथावण्णना

२४०॥ **चतुत्थे कते सुणन्तीति** चतुत्थे पन्नरसिकुपोसथे कते अम्हाकं पवारणं ठपेस्सन्तीति सुणन्ति । **एवम्पि द्वे चातुद्दसिका** होन्तीति ततियेन सद्धिं द्वे चातुद्दसिका होन्ति ।

पवारणासङ्गहकथावण्णना

२४१॥ अयं पवारणासङ्गहो एकस्स दिन्नोपि सब्बेसं दिन्नोव होतीति आह **"एकस्सपि वसेन दातब्बो"** ति । **आगन्तुका तेसं सेनासनं गहेतुं न लभन्तीति** सचेपि सट्ठिवस्सभिक्खू आगच्छन्ति, तेसं सेनासनं गहेतुं न लभन्ति । **पवारेत्वा पन अन्तरापि चारिकं पक्कमितुं लभन्तीति** पवारणासङ्गहे कते अन्तरा पक्कमितुकामा संघं सन्निपातापेत्वा पवारेतुं लभन्ति । सेसमेत्थ पाळितो अट्ठकथातो च सुविञ्ञेय्यमेव ।

पवारणक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

B. 290

५. चम्मक्खन्धक

सोणकोळिविसवत्थुकथावण्णना

२४२॥ चम्मक्खन्धके **उण्णपावारणं** ति उण्णामयं पावारणं। **विहारपच्छायायं** ति विहारपच्चन्ते छायायं। विहारस्स वड्ढमानच्छायायं ति पि वदन्ति।

सोणस्स पब्बज्जाकथावण्णना

२४३॥ सुत्तत्थो पन सुत्तवण्णनातोयेव गहेतब्बो ति एत्थायं सुत्तवण्णना। **सीतवने**ति[1] एवंनामके वने। तस्मिं किर पटिपाटिया पञ्च चङ्कमनसतानि मापितानि, तेसु थेरो अत्तनो सप्पायं चङ्कमनं गहेत्वा समणधम्मं करोति। तस्स आरद्धवीरियस्स हुत्वा चङ्कमतो पादतलानि भिज्जिंसु, जाणूहि चङ्कमतो जाणुकानि पि हत्थतलानि पि भिज्जिंसु, छिद्दानि अहेसुं। एवं आरद्धवीरियो विहरन्तो ओभासनिमित्तमत्तकम्पि दस्सेतुं नासक्खि। तस्स वीरियेन किलमितकायस्स चङ्कमनकोटियं पासाणफलके निसिन्नस्स यो वितक्को उदपादि, तं दस्सेतुं **"अथ खो आयस्मतो"** ति आदि वुत्तं। तत्थ **आरद्धवीरिया** ति परिपुण्णपग्गहितवीरिया। **न अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चती**ति "सचे अहं उग्घटितञ्ञू वा विपञ्चितञ्ञू वा नेय्यो वा, न मे चित्तं न विमुच्चेय्य, अद्धा पन पदपरमो, येन मे चित्तं न मुच्चती"ति सन्निट्ठानं कत्वा "संविज्जन्ति खो पना" ति आदीनि चिन्तेसि। तत्थ **भोगा ति** उपयोगत्थे पच्चत्तं।

पातुरहोसीति थेरस्स चित्ताचारं ञत्वा "अयं सोणो अज्ज सीतवने पधानभूमियं निसिन्नो इमं वितक्कं वितक्केति, गन्त्वास्स वितक्कं सहोड्ढुं[2] गण्हित्वा वीणोपमकम्मट्ठानं कथेस्सामी" ति सीतवने पातुरहोसि। **पञ्ञत्ते आसने** ति पधानिकभिक्खू अत्तनो वसनट्ठाने ओवदितुं आगतस्स बुद्धस्स भगवतो निसीदनत्थं यथालाभेन आसनम्पि पञ्ञपेत्वाव पधानं करोन्ति, अञ्ञं अलभमाना पुराणपण्णानि सङ्करित्वा उपरि सङ्घाटिं पञ्ञपेन्ति। थेरो पि आसनं पञ्ञपेत्वाव पधानं अकासि, तं सन्धाय वुत्तं "पञ्ञत्ते आसने" ति।

B. 291

तं किं मञ्ञसीति सत्था "इमस्स भिक्खुनो अवसेसकम्मट्ठानेन अत्थो नत्थि, अयं गन्धब्बसिप्पे छेको चिण्णवसी, अत्तनो विसये कथियमाने खिप्पमेव सल्लक्खेस्सती" ति वीणोपमं कथेतुं "तं किं मञ्ञसी"ति आदिमाह। **वीणाय तन्तिस्सरे कुसलता** नाम वीणाय वादनकुसलता, सो च तत्थ कुसलो। मातापितरो हिस्स "अम्हाकं पुत्तो अञ्ञं

---

1. अं-ट्ठ-३-१२३-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
2. सहोढं (स्या)।

सिप्पं सिक्खन्तो कायेन किलमिस्सति, इदं.पन आसने निसिन्नेनेव सक्का उग्गण्हितुं" ति गन्धब्बसिप्पमेव उग्गण्हापेसुं । तस्स–

"सत्त सरा तयो गामा, मुच्छना एकवीसति ।
ठाना एकूनपञ्ञास, इच्चेते सरमण्डला" ति–

आदिकं गन्धब्बसिप्पं सब्बमेव पगुणं अहोसि। **अच्चायताति** अतिआयता खरमुच्छना[1] । **सरवतीति** सरसम्पन्ना । **कम्मञ्ञा** ति कम्मक्खमा कम्मयोग्गा । **अतिसिथिलाति** मन्दमुच्छना । **समे गुणे पतिट्ठिता** ति मज्झिमे सरे ठपेत्वा मुच्छिता ।

अच्चारद्धं ति अतिगाळ्हं । **उद्धच्चाय संवत्ततीति** उद्धतभावाय संवत्तति । **अतिलीनं** ति अतिसिथिलं । **कोसज्जाया** ति कुसीतभावत्थाय । **वीरियसमथं अधिट्ठाही**ति वीरियसम्पयुत्तं समथं अधिट्ठाहि, वीरियं समथेन योजेहीति अत्थो । **इन्द्रियानञ्च समतं अधिट्ठाहीति** सद्धादीनं इन्द्रियानं समतं समभावं अधिट्ठाहि । तत्थ सद्धं पञ्ञाय, पञ्ञञ्च सद्धाय, वीरियं समाधिना, समाधिञ्च वीरियेन योजयता इन्द्रियानं समता अधिट्ठिता नाम होति । सति पन सब्बत्थिका, सा सदापि बलवतीयेव वट्टति । तञ्च पन नेसं योजनाविधानं **विसुद्धिमग्गे**[2] आगतनयेन वेदितब्बं । **तत्थ च निमित्तं गण्हाहीति** तस्मिञ्च समभावे[3] सति येन आदासे मुखबिम्बेनेव निमित्तेन उप्पज्जितब्बं, तं समथनिमित्तं विपस्सनानिमित्तं मग्गनिमित्तं फलनिमित्तञ्च गण्ह निब्बत्तेहीति एवमस्स सत्था अरहत्ते पक्खिपित्वा कम्मट्ठानं कथेसि ।

तत्थ निमित्तं अग्गहेसीति समथनिमित्तञ्च विपस्सनानिमित्तञ्च अग्गहेसि । **एको** ति असहायो । **वूपकट्ठो** ति वत्थुकामेहि च किलेसकामेहि च कायेन चेव B. 292 चित्तेन च वूपकट्ठो । **अप्पमत्तो** ति कम्मट्ठाने सतिं अविजहन्तो । **आतापीति** कायिकचेतसिकवीरियातापेन आतापो । आतप्पति किलेसेहीति आतापो, वीरियं । **पहितत्तोति** काये च जीविते च अनपेक्खताय पेसितत्तो विस्सट्ठअत्तभावो, निब्बाने वा पेसितचित्तो । **न चिरस्सेवा** ति कम्मट्ठानारम्भतो न चिरेनेव । **अञ्ञतरो** ति एको । **अरहं** ति भगवतो सावकानं अरहन्तानं अब्भन्तरो एको महासावको अहोसीति अत्थो ।

२४४॥ **वुसितवा** ति वुत्थब्रह्मचरियवासो । **कतकरणीयोति** चतूहि मग्गेहि कत्तब्बं कत्वा ठितो । **ओहितभारो** ति खन्धभारं किलेसभारं अभिसङ्खारभारञ्च ओतारेत्वा ठितो । **अनुप्पत्तसदत्थो** ति सदत्थो वुच्चति अरहत्तं, तं पत्तोति अत्थो । **परिक्खीणभवसंयोजनोति** खीणभवबन्धनो । **सम्मदञ्ञा विमुत्तो** ति सम्मा हेतुना कारणेन

---

1. खरमुच्छिता (क) ।
2. विसुद्धि-१-१२५ पिट्ठे ।
3. समथे (स्या, क) अं-ट्ठ-३-१२४-पिट्ठे पन पस्सितब्बं ।

जानित्वा विमुत्तो । **छ ठानानी**ति छ कारणानि । **अधिमुत्तोहोती**ति पटिविज्झित्वा पच्चक्खं कत्वा ठितो होति । **नेक्खम्माधिमुत्तो** ति आदि सब्बं अरहत्तवसेन वुत्तं । अरहत्तञ्हि सब्बकिलेसेहि निक्खन्तत्ता **नेक्खम्मं**, तेहेव पविवित्तत्ता **पविवेको,** ब्यापज्जाभावतो **अब्यापज्जं**, उपादानस्स खयन्ते उप्पन्नत्ता उपादानक्खयो, तण्हाय खयन्ते उप्पन्नत्ता **तण्हक्खयो,** सम्मोहाभावतो **असम्मोहो** ति च वुच्चति ।

केवलं सद्धामत्तकं ति पटिवेधरहितं केवलं पटिवेधपञ्ञाय असम्मिस्सं सद्धामत्तकं । **पटिचयं** ति पुनप्पुनं करणेन वड्ढिं । **वीतरागत्ता** ति मग्गपटिवेधेन रागस्स विहतत्तायेव नेक्खम्मसङ्खातं अरहत्तं पटिविज्झित्वा सच्छिकत्वा ठितो होति, फलसमापत्तिविहारेन विहरति, तन्निन्नमानसोयेव होतीति अत्थो । सेसपदेसुपि एसेव नयो ।

लाभसक्कारसिलोकं ति चतुपच्चयलाभञ्च तेसंयेव सुकतभावञ्च वण्णभणनञ्च । **निकामयमानो** ति इच्छमानो पत्थयमानो । **पविवेकाधिमुत्तो** ति "पविवेके अधिमुत्तो अहं" ति एवं अरहत्तं ब्याकरोतीति अत्थो ।

सीलब्बतपरामासं ति सीलञ्च वतञ्च परामसित्वा गहितग्गहणमत्तं । **सारतो पच्चागच्छन्तो** ति सारभावेन जानन्तो । **अब्यापज्जाधिमुत्तो** ति अब्यापज्जं अरहत्तं B. 293 ब्याकरोति । इमिनाव नयेन सब्बवारेसु अत्थो दट्ठब्बो । अपिचेत्थ "नेक्खम्माधिमुत्तोति इमस्मिंयेव अरहत्तं कथितं, सेसेसु पञ्चसु निब्बानं" ति एके वदन्ति । अपरे "असम्मोहाधिमुत्तो ति एत्थेव निब्बानं कथितं, सेसेसु अरहत्तं" ति वदन्ति । अयं पनेत्थ सारो–"सब्बेस्वेवेतेसु अरहत्तम्पि निब्बानम्पि कथितमेवाति ।

भुसा ति वलवन्तो दिब्बरूपसदिसा । **नेवस्स चित्तं परियादियन्ती**ति एतस्स खीणासवस्स चित्तं गहेत्वा ठातुं न सक्कोन्ति । किलेसा हि उप्पज्जमाना चित्तं गण्हन्ति नाम । **अमिस्सीकतं ति अमिस्सकतं** । किलेसा हि आरम्मणेन सद्धिं चित्तं मिस्सं करोन्ति, तेसं अभावा अमिस्सीकतं । **ठितं** ति पतिट्ठितं । **आनेञ्जप्पत्तं** ति अचलनप्पतं । **वयञ्चस्सानुपस्सती**ति तस्स चेस चित्तस्स उप्पादम्पि वयम्पि पस्सति । **भुसा वातवुट्ठी**ति बलवा वातक्खन्धो । **नेव नं सङ्कम्पेय्या** ति एकभागेन चालेतुं न सक्कुणेय्य । न **सम्पकम्पेय्या** ति थूणं विय सब्बभागतो कम्पेतुं न सक्कुणेय्य । न **सम्पवेधेय्या** ति वेधेत्वा पवेधेत्वा पातेतुं[1] न सक्कुणेय्य ।

नेक्खम्मं अधिमुत्तस्सा ति अरहत्तं पटिविज्झित्वा ठितस्स । सेसपदेसुपि अरहत्तमेव कथितं । **उपादानक्खयस्स चा** ति उपयोगत्थे सामिवचनं । **असम्मोहञ्च चेतसो** ति चित्तस्स च असम्मोहं अधिमुत्तस्स । **दिस्वा आयतनुप्पादं** ति आयतनानं उप्पादञ्च वयञ्च दिस्वा । **सम्मा चित्तं विमुच्चती**ति सम्मा हेतुना नयेन इमाय विपस्सनाय

1. पचालेतुं (क) ।

पटिपत्तिया फलसमापत्तिवसेन चित्तं विमुच्चति, निब्बानारम्मणे अधिमुच्चति । अथ वा इमिना खीणासवस्स पुब्बभागपटिपदा कथिता । तस्स हि आयतनुप्पादं दिस्वा इमाय विपस्सनाय अधिगतस्स अरियमग्गस्स आनुभावेन सब्बकिलेसेहि सम्मा चित्तं विमुच्चति । एवं **तस्स सम्मा विमुत्तस्स.....पे०.....न विज्जति** । **तत्थ सन्तचित्तस्सा** ति निब्बुतचित्तस्स । सेसमेत्थ उत्तानत्थमेव ।

सोणस्स पब्बज्जाकथावण्णना निट्ठिता ।

B. 294

सब्बनीलिकादिपटिक्खेपकथावण्णना

२४६॥ **अद्दारिट्ठकवण्णा** ति अभिनवारिट्ठफलवण्णा । उदकेन तिन्तकाकपत्तवण्णा ति पि वदन्ति ।

अज्झारामे उपाहनपटिक्खेपकथावण्णना

२४८॥ अभिजीवन्ति एतेनाति **अभिजीवनिकं** । किं तं ? सिप्पं । तेनाह **"येन सिप्पेना"**तिआदि ।

कट्ठपादुकादिपटिक्खेपकथावण्णना

२५१॥ **उण्णाहि कतपादुका** ति उण्णालोममयकम्बलेहि, उण्णालोमेहि एव वा कतपादुका । **न भिक्खवे गावीनं विसाणेसु गहेतब्बं** ति आदीसु "मोक्खाधिप्पायेन विसाणादीसु गहेतुं वट्टती" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं ।

यानादिपटिक्खेपकथावण्णना

२५३॥ **अनुजानामि भिक्खवे पुरिसयुत्तं हत्थवट्टकं** ति एत्थ "अनुजानामि भिक्खवे पुरिसयुत्तं, अनुजानामि भिक्खवे हत्थवट्टकं" ति एवं पच्चेकवाक्यपरिसमापनं अधिप्पेतं ति आह **"पुरिसयुत्तं इत्थिसारथि** वा......पे०.....पुरिसा वा, वट्टतियेवा" ति । **पीठकसिविकं** ति पीठकयानं । पाटङ्किं ति अन्दोलिकायेतं[1] अधिवचनं ।

उच्चासयनमहासयनपटिक्खेपकथावण्णना

२५४॥ **वाळरूपानीति** आहरिमानि वाळरूपानि । "अकप्पियरूपाकुलो[2] अकप्पियमञ्चो पल्लङ्को" ति **सारसमासे** वुत्तं । **"दीघलोमको महाकोजवोति** चतुरङ्गुलाधिकलोमो

---

1. अन्धोलिकायेतं (स्या) ।
2. अकप्पियरूपकतो (क) ।

काळकोजवो। "चतुरङ्गुलाधिकानि किर तस्स लोमानी" ति वचनतो चतुरङ्गुलतो हेट्ठा वट्टतीति वदन्ति । **वानचित्रो उण्णामयत्थरणो** ति भित्तिच्छेदादिवसेन विचित्रो उण्णामयत्थरणो । घनपुप्फको उण्णामयत्थरणोति उण्णामयलोहितत्थरणो । **पकतितूलिका**ः ति रुक्खतूललतातूलपोटकीतूलसङ्खातानं तिण्णं तूलानं अञ्ञतरपुण्णा तूलिका । **उद्दलोमी**ति उभतोदसं उण्णामयत्थरणं । **एकन्तलोमी**ति एकतोदसं उण्णामयत्थरणं "ति **दीघनिकायट्ठकथायं**[1] वुत्तं, **सारसमासे** पन "उद्दलोमीति एकतो उग्गतपुप्फं । एकन्तलोमीति उभतो उग्गतपुप्फं" ति वुत्तं । **कोसेय्यकट्टिस्समयं** ति कोसेय्यकसटमयं" ति **आचरियधम्मपालत्थेरेन** वुत्तं । **सुद्धकोसेय्यं** ति रतनपरिसिब्बनरहितं । **दीघनिकायट्ठकथायं** पनेत्थ "ठपेत्वा तूलिकं सब्बानेव गोनकादीनि रतनपरिसिब्बितानि वट्टन्ती" ति वुत्तं । तत्थ "ठपेत्वा तूलिकं" ति एतेन रतनपरिसिब्बनरहितापि तूलिका न वट्टतीति दीपेति । "रतनपरिसिब्बितानि वट्टन्ती"ति इमिना पन यानि रतनपरिसिब्बितानि, तानि भूमत्थरणवसेन यथानुरूपं मञ्चादीसु च उपनेतुं वट्टतीति दीपितं ति वेदितब्बं । एत्थ च विनयपरियायं पत्वा गरुके ठातब्बत्ता इध वुत्तनयेनेवेत्थ विनिच्छयो वेदितब्बो । सुत्तन्तिकदेसनायं पन गहट्ठानम्पि वसेन वुत्तत्ता **तेसं** सङ्गण्हनत्थं "**ठपेत्वा** तूलिकं......पे०......वट्टन्ती"ति वुत्तं ति अपरे ।

अजिनचम्मेहीति अजिनमिगचम्मेहि । तानि किर चम्मानि सुखुमतरानि, तस्मा दुपट्टतिपट्टानि कत्वा सिब्बन्ति । तेन वुत्तं "**अजिनपवेणी**"ति । उत्तरं उपरिभागं छादेतीति उत्तरच्छदो, वितानं, तञ्च लोहितवितानं इधाधिप्पेतं ति आह "**उपरिबद्धेन रत्तवितानेना**" ति । "रत्तवितानेसु च कासावं वट्टति, कुसुम्भादिरत्तमेव न वट्टती" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **महाउपधानं** ति पमाणातिक्कन्तं उपधानं । एत्थ च किञ्चापि **दीघनिकायट्ठकथायं**[2] "अलोहितकानि द्वेपि वट्टन्तियेव, ततो उत्तरि लभित्वा अञ्ञेसं दातब्बानि, दातुं असक्कोन्तो मञ्चे तिरियं अत्थरित्वा उपरि पच्चत्थरणं दत्वा निपज्जितुम्पि लभती"ति अविसेसेन वुत्तं, **सेनासनक्खन्धकवण्णनायं**[3] पन अगिलानस्स सीसुपधानञ्च पादुपधानञ्चाति द्वयमेव वट्टति, गिलानस्स बिम्बोहनानि सन्थरित्वा उपरि पच्चत्थरणं दत्वा निपज्जितुम्पि वट्टती"ति वुत्तत्ता गिलानोयेव मञ्चे तिरियं अत्थरित्वा निपज्जितुं लभतीति वेदितब्बं ।

उच्चासयनमहासयनपटिक्खेपकथावण्णना निट्ठिता ।

---

1. दी-ट्ठ-१-८३-पिट्ठे ।
2. दी-ट्ठ-१-८४-पिट्ठे ।
3. वि-ट्ठ-४-६०-पिट्ठे ।

B. 295

B. 296

गिहिविकतानुञ्ञातादिकथावण्णना

२५६॥ **अभिनिस्साय निसीदितुं** ति अपस्साय निसीदितुं ।

सोणकुटिकण्णवत्थुकथावण्णना

२५७॥ **पपतके पब्बते** ति एत्थ "पवत्ते पब्बते" तिपि पठन्ति, पवत्तनामके पब्बते ति अत्थो । **सोणो उपासको** ति आदीसु[1] नामेन सोणो नाम, तीहि सरण-गमनेहि उपासकत्तपटिवेदनेन उपासको, कोटिअग्घनकस्स कण्णपिळन्धनस्स धारणेन "कोटिकण्णो" ति च वत्तब्बे "कुटिकण्णो" ति एवं अभिञ्ञातो, न सुकुमारसोणो ति अधिप्पायो । अयञ्हि आयस्मतो महाकच्चानस्स सन्तिके धम्मं सुत्वा सासने अभिप्पसन्नो सरणेसु च सीलेसु च पतिट्ठितो पपतके पब्बते छायूदकसम्पन्ने ठाने विहारं कारेत्वा थेरं तत्थ वसापेत्वा चतूहि पच्चयेहि उपट्ठाति । तेन वुत्तं "**आयस्मतो महाकच्चानस्स उपट्ठाको होती**" ति ।

सो कालेन कालं थेरस्स उपट्ठानं गच्छति, थेरो चस्स धम्मं देसेति, तेन संवेग-बहुलो धम्मचरियायं उस्साहजातो विहरति । सो एकदा सत्थेन सद्धिं वाणिज्जत्थाय उज्जेनिं गच्छन्तो अन्तरामग्गे अटवियं सत्थे निविट्ठे रत्तियं जनसम्बाधभयेन एकमन्तं अपक्कम्म निद्दं उपगञ्छि । सत्थो पच्चूसवेलायं उट्ठाय गतो, न एकोपि सोणं पबोधेसि, सब्बे विस्सरित्वा अगमिंसु । सो पभाताय रत्तिया पबुज्झित्वा उट्ठाय कञ्चि अपस्सन्तो सत्थेन गतमग्गं गहेत्वा सीघं सीघं गच्छन्तो एकं वटरुक्खं उपगञ्छि । तत्थ अद्दस एकं महाकायं विरूपदस्सनं वीभच्छं पुरिसं अट्ठितो मुत्तानि अत्तनो मंसानि सयमेव खादन्तं, दिस्वान "कोसि त्वं" ति पुच्छि । पेतोस्मि भन्ते ति । कस्मा एवं करोसीति । अत्तनो पुब्बकम्मेनाति । किं पन तं कम्मं ति । अहं पुब्बे भारुकच्छनगरवासी कूटवाणिजो हुत्वा परेसं सन्तकं वञ्चेत्वा खादिं, समणे च भिक्खाय उपगते "तुम्हाकं मंसं खादथा" ति अक्कोसिं, तेन कम्मेन एतरहि इमं दुक्खं अनुभवामीति । तं सुत्वा सोणो अतिविय संवेगं पटिलभि ।

B. 297

ततो परं गच्छन्तो मुखतो पग्घरितकाळलोहिते द्वे पेतदारके पस्सित्वा तथेव पुच्छि, तेपिस्स अत्तनो कम्मं कथेसुं । ते किर भारुकच्छनगरे दारककाले गन्धवाणिज्जाय जीविकं कप्पेन्ता अत्तनो मातरि खीणासवे निमन्तेत्वा भोजेन्तिया गेहं गन्त्वा "अम्हाकं सन्तकं कस्मा समणानं देसि, तया दिन्नं भोजनं भुञ्जनक-समणानं मुखतो काळलोहितं पग्घरतू" ति अक्कोसिंसु । ते तेन कम्मेन निरये पच्चित्वा तस्स विपाकावसेसेन पतेयोनियं निब्बत्तित्वा तदा इमं दुक्खं अनुभवन्ति । तम्पि सुत्वा सोणो अतिवय संवेगजातो अहोसि ।

---

1. उदान-ट्ठ-२७८-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

सो उज्जेनिं गन्त्वा तं करणीयं तीरेत्वा कुररघरं पच्चागतो थेरं उपसङ्कमित्वा कतपटिसन्थारो तमत्थं आरोचेसि। थेरोपिस्स पवत्तिनिवत्तीसु आदीनवानिसंसे विभावेन्तो धम्मं देसेसि। सो थेरं वन्दित्वा गेहं गतो सायमासं भुञ्जित्वा सयनं उपगतो थोकंयेव निद्दायित्वा पबुज्झित्वा सयनतले निसज्ज यथासुतं धम्मं पच्चवेक्खितुं आरद्धो। तस्स तं धम्मं पच्चवेक्खतो ते च पेतत्तभावे अनुस्सरतो संसारदुक्खं अतिविय भयानकं हुत्वा उपट्ठासि, पब्बज्जाय चित्तं नमि। सो विभाताय रत्तिया सरीरपटिजग्गनं कत्वा थेरं उपगन्त्वा अत्तनो अज्झासयं आरोचेत्वा पब्बज्जं याचि। तेन वुत्तं **"अथ खो सोणो उपासको.....पे०.....पब्बाजेतु मं भन्ते अय्यो महाकच्चानो"** ति।

तत्थ **यथा यथा** ति आदिपदानं अयं सङ्खेपत्थो–येन येन आकारेन अय्यो महाकच्चानो धम्मं देसेति आचिक्खति पञ्ञपेति पट्ठपेति विवरति विभजति उत्तानिं करोति पकासेति, तेन तेन मे उपपरिक्खतो एवं होति "यदेतं सिक्खत्तयब्रह्मचरियं एकम्पि दिवसं अखण्डं कत्वा चरिमकचित्तं पापेतब्बताय **एकन्तपरिपुण्णं**, एकदिवसम्पि किलेसमलेन अमलीनं कत्वा चरिमकचित्तं पापेतब्बताय **एकन्तपरिसुद्धं**, **सङ्खलिखितं** लिखितसङ्खसदिसं धोतसङ्खसप्पटिभागं चरितब्बं, इदं न सुकरं अगारं अज्झावसता अगारमज्झे वसन्तेन एकन्तपरिपुण्णं......पे०......चरितुं" ति।

एवं अत्तनो परिवितक्कितं सोणो उपासको थेरस्स आरोचेत्वा तं पटिपज्जितुकामो **"इच्छामहं भन्ते"** तिआदिमाह। थेरो पन "न तावस्स ञाणं परिपाकं गतं" B. 298 ति उपधारेत्वा ञाणपरिपाकं आगमयमानो "दुक्करं खो" ति आदिना पब्बज्जाछन्दं निवारेसि। तत्थ **एकसेय्यं** ति अदुतियसेय्यं। एत्थ च सेय्यसीसेन "एको तिट्ठति, एको गच्छति, एको निसीदती"ति आदिना नयेन वुत्तं चतूसु इरियापथेसु कायविवेकं दीपेति, न एकिका हुत्वा सयनमत्तं। **एकभत्तं** ति "एकभत्तिको होति रत्तूपरतो विरतो विकालभोजना" ति[1] एवं वुत्तं विकालभोजना विरतिं सन्धाय वदति। **ब्रह्मचरियं** ति मेथुनविरतिब्रह्मचरियं, सिक्खत्तयानुयोगसङ्खातं सासनब्रह्मचरियं वा। **इङ्घ** ति चोदनत्थे निपातो। **तत्थेवा** ति गेहेयेव। **बुद्धानं सासनं अनुयुञ्जा** ति निच्चसील-उपोसथसीलनियमादिभेदं पञ्चङ्गं अट्ठङ्गं दसङ्गञ्च सीलं तदनुरूपञ्च समाधिपञ्ञाभावनं अनुयुञ्ज। एतञ्हि उपासकेन पुब्बभागे अनुयुञ्जितब्बं बुद्धसासनं नाम। तेनाह **"कालयुत्तं एकसेय्यं एकभत्तं ब्रह्मचरियं"** ति।

तत्थ कालयुत्तं ति चातुद्दसीपञ्चदसीअट्ठमीपाटिहारिकपक्खसङ्खातेन कालेन युत्तं, यथावुत्तकाले वा तुय्हं अनुयुञ्जन्तस्स युत्तं पतिरूपं सक्कुणेय्यं, न सब्बकालं सब्बं

1. दी-१-५-६०-म-१-२३७, अं-१-२१२-पिट्ठेसु।

ति[1] अधिप्पायो। सब्बमेतं ञाणस्स अपरिपक्कत्ता तस्स कामानं दुप्पहानताय सम्मा पटिपत्तियं योग्यं कारापेतुं वदति, न पब्बज्जाछन्दं निवारेतुं। **पब्बज्जाभिसङ्खारो** ति पब्बजितुं आरम्भो उस्साहो। **पटिप्पस्सम्भी**ति इन्द्रियानं अपरिपक्कत्ता संवेगस्स च नातितिक्खभावतो वूपसमि। किञ्चापि पटिप्पस्सम्भि, थेरेन वुत्तविधिं पन अनुतिट्ठन्तो कालेन कालं थेरं उपसङ्कमित्वा पयिरुपासन्तो धम्मं सुणाति। तस्स वुत्तनयेनेव दुतियम्पि पब्बज्जाय चित्तं उप्पज्जि, थेरस्स च आरोचेसि, दुतियम्पि थेरो पटिक्खिपि। ततियवारे पन ञाणस्स परिपक्कभावं ञत्वा "इदानि नं पब्बाजेतुं कालो" ति थेरो पब्बाजेसि, पब्बजितञ्च तं तीणि संवच्छरानि अतिक्कमित्वा गणं परियेसित्वा उपसम्पादेसि। तं सन्धाय वुत्तं "**दुतियम्पि खो सोणो.....पे०..... उपसम्पादेसी**" ति।

तत्थ **अप्पभिक्खुको** ति कतिपयभिक्खुको। तदा किर भिक्खू येभुय्येन B. 299 मज्झिमदेसेयेव वसिंसु, तस्मा तत्थ कतिपया एव अहेसुं। ते च एकस्मिं गामे एको, एकस्मिं निगमे द्वेति एवं विसुं विसु वसिंसु। **किच्छेना** ति दुक्खेन। कसिरेनाति आयासेन। **ततो ततो** ति तस्मा तस्मा गामनिगमादितो। थेरेन हि कतिपये भिक्खू आनेत्वा अञ्ञेसु आनीयमानेसु पुब्बे आनीता केनचिदेव करणीयेन पक्कमिंसु, किञ्चि कालं आगमेत्वा पुन तेसु आनीयमानेसु इतरे पक्कमिंसु। एवं पुनप्पुनं आनयनेन सन्निपातो चिरेनेव अहोसि। थेरोपि तदा एकविहारी अहोसि। तेन वुत्तं "**तिण्णं वस्सानं.....पे०.....सन्निपातापेत्वा**" ति।

वस्सं वुत्थस्साति वस्सं उपगन्त्वा वुसितवतो। **एदिसो च एदिसो चा** ति एवरूपो च एवरूपो च। एवरूपाय नाम रूपकायसम्पत्तिया समन्नागतो, एवरूपाय धम्मकाय-सम्पत्तिया समन्नागतो" ति **सुतोयेव मे सो भगवा। न च मया सम्मुखा दिट्ठो** ति एत्थ पन[2] पुथुज्जनसद्धाय एव आयस्मा सोणो भगवन्तं दट्ठुकामो अहोसि। अपरभागे पन सत्थारा सद्धिं एकगन्धकुटियं वसित्वा पच्चूससमयं अज्झिट्ठो सोळस अट्ठक-वग्गियानि सत्थु सम्मुखा अट्ठिं कत्वा मनसि कत्वा सब्बं चेतसा समन्नाह-रित्वा अत्थधम्मपटिसंवेदी हुत्वा भणन्तो धम्मुपसञ्हितपामोज्जादिमुखेन समाहितो सरभञ्ञपरियोसाने विपस्सनं पट्ठपेत्वा सङ्खारे सम्मसन्तो अनुपुब्बेन अरहत्तं पापुणि। एतदत्थमेव हिस्स भगवतो अत्तना सद्धिं एकगन्धकुटियं वासो आणत्तो ति वदन्ति।

केचि पनाहु "न च मया सम्मुखा दिट्ठोति इदं रूपकायदस्सनमेव सन्धाय वुत्तं। अयस्मा हि सोणो पब्बजित्वा थेरस्स सन्तिके कम्मट्ठानं गहेत्वा घटेन्तो वायमन्तो अनुपसम्पन्नोव सोतापन्नो हुत्वा उप्पसम्पज्जित्वा 'उपासकापि सोतापन्ना होन्ति,

1. सब्बदा ति (स्या), पब्बज्जाति (उदान-ट्ठ-२८१-पिट्ठे)।
2. एतेन–(स्या), उदान-ट्ठ-२८२-पिट्ठे च)।

अहम्पि सोतापन्नो, किमेत्थ चित्तं" ति उपरिमग्गत्थाय विपस्सनं वड्ढेत्वा अन्तोवस्सेयेव छळभिञ्ञो हुत्वा विसुद्धिपवारणाय पवारेसि । अरियसच्चदस्सनेन भगवतो धम्मकायो दिट्ठो नाम होति । वुत्तञ्हेतं "यो खो वक्कलि धम्मं पस्सति, सो मं पस्सती"ति[1] । तस्मास्स धम्मकायदस्सनं पगेव सिद्धं, पवारेत्वा पन रूपकायं दट्ठुकामो अहोसी" ति ।

पासादिकं ति आदिपदानं अत्थो अट्ठकथायमेव वुत्तो । तत्थ **विसूकायिक-विप्फन्दितानं** ति पटिपक्खभूतानं दिट्ठिचित्तविप्फन्दितानं ति अत्थो । **पासादिकं**[2] ति वा द्वत्तिंसमहापुरिसलक्खणअसीतिअनुब्यञ्जनब्यामप्पभाकेतुमालालङ्कताय समन्त-पासादिकाय अत्तनो सरीरप्पभाय[3] सम्पत्तिया रूपकायदस्सनब्यावटस्स जनस्स सब्बभागतो पसादावहं । **पसादनीयं** ति दसबलचतुवेसारज्जछअसाधारणञाण-अट्ठारसआवेणिकबुद्धधम्मप्पभुतिअपरिमाणगुणगणसमन्नागताय धम्मकायसम्पत्तिया परिक्खकजनस्स[4] पसादनीयं पसीदितब्बयुत्तं पसादकं[5] वा । सन्तिन्द्रियं ति चक्खादिपञ्चिन्द्रियलोलताविगमेन वूपसन्तपञ्चिन्द्रियं । **सन्तमानसं** ति छट्ठस्स मनिन्द्रियस्स निब्बिसेवनभावूपगमनेन वूपसन्तमानसं । **उत्तमदमथसमथं अनुप्पत्तं** ति लोकुत्तरपञ्ञाविमुत्तिचेतोविमुत्तिसङ्खातं उत्तमं दमथं समथञ्च अनुप्पत्वा अधिगन्त्वा ठितं । **दन्तं** ति सुपरिसुद्धकायसमाचारताय हत्थपादकुक्कुच्चाभावतो दवादिअभावतो च कायेन दन्तं । **गुत्तं** ति सुपरिसुद्धवचीसमाचारताय निरत्थकवाचाभावतो रवादिअभावतो च वाचाय गुत्तं । **यतिन्द्रियं** ति सुपरिसुद्धमनोसमाचारताय अरियिद्धियोगेन अब्यावटअप्पटिसङ्खुपेक्खाभावतो च मनिन्द्रियवसेन यतिन्द्रियं । **नागं** तिं छन्दादिवसेन अगमनतो, पहीनानं रागादिकिलेसानं अपुनागमनतो अपच्चागमनतो कस्सचि पि आगुस्स सब्बथा पि अकरणतो, पुनब्भवस्स च अगमनतो ति इमेहि कारणेहि नागं । एत्थ च "पासादिकं" ति इमिना रूपकायेन भगवतो पमाणभूततं दीपेति, "पसादनीयं" ति इमिना धम्मकायेन । "सन्तिन्द्रियं" ति आदिना सेसेहि पमाणभूततं दीपेति, तेन चतुप्पमाणिके लोकसन्निवासे अनवसेसतो सत्तानं भगवतो पमाणभावो पकासितो ति वेदितब्बो । **एकविहारे** ति एकगन्धकुटियं । गन्धकुटि हि इध "विहारो" ति अधिप्पेतो । **वत्थुं** ति वसितुं ।

B. 300

1. सं-२-९८-पिट्ठे ।
2. उदान-ट्ठ-७८-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।
3. सरीरसोभाय (स्या) ।
4. सरिक्खकजनस्स (क) ।
5. पसादिकं (स्या.) ।

२५८॥ **अज्झोकासे वीतिनामेत्वा** ति[1] अज्झोकासे निसज्जाय वीतिनामेत्वा । "यस्मा भगवा आयस्मतो सोणस्स समापत्तिसमापज्जनेन पटिसन्थारं करोन्तो B. 301 सावकसाधारणा सब्बा समापत्तियो अनुलोमपटिलोमं समापज्जन्तो बहुदेव रत्तिं अज्झोकासे निसज्जाय वीतिनामेत्वा पादे पक्खालेत्वा विहारं पाविसि, तस्मा आयस्मापि सोणो भगवतो अधिप्पायं ञत्वा तदनुरूपं सब्बा ता समापत्तियो समापज्जन्तो बहुदेव रत्तिं अज्झोकासे निसज्जाय वीतिनामेत्वा पादे पक्खालेत्वा विहारं पाविसी"ति केचि वदन्ति । पविसित्वा च भगवता अनुञ्ञातो चीवरं तिरोकरणीयं कत्वा पि भगवतो पादपस्से निसज्जाय वीतिनामेसि । **अज्झेसी**ति आणापेसि । **पटिभातु तं भिक्खु धम्मो भासितुं ति भिक्खु** तुय्हं धम्मो भासितुं उपट्ठातु ञाणमुखं आगच्छतु, यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं भणाहीति अत्थो ।

सब्बानेव अट्ठकवग्गिकानीति अट्ठकवग्गभूतानि **कामसुत्तादीनि**[2] सोळस सुत्तानि । **सरेन अभासी**ति सुत्तुस्सारणसरेन अभासि, सरभञ्ञवसेन कथेसीति अत्थो । **सरभञ्ञ-परियोसाने** ति उस्सारणावसाने । **सुग्गहितानी**ति सम्मा उग्गहितानि । **सुमनसिकतानी**ति सुट्ठु मनसि कतानि । एकच्चो उग्गहणकाले सम्मा उग्गहेत्वापि पच्छा सज्झायादि-वसेन मनसिकरणकाले ब्यञ्जनानि वा मिच्छा रोपेति[3], पदपच्चाभट्ठं वा करोति, न एवमयं । इमिना पन सम्मदेव यथुग्गहितं मनसि कतानि । तेन वुत्तं "सुमनसिकता-नीति सुट्ठु मनसि कतानी" ति । **सूपधारितानी**ति अत्थतोपि सुट्ठु उपधारितानि । अत्थे हि सुट्ठु उपधारिते सक्का पाळि सम्मा उस्सारेतुं । **कल्याणियापि**[4] **वाचाय समन्नागतो** ति सिथिलधनितादीनं यथाविधानं वचनेन परिमण्डलपदब्यञ्जनाय पोरिया वाचाय समन्नागतो[5] । **विस्सट्ठाया** ति विमुत्ताय । एतेनस्स विमुत्तवादिकं दस्सेति । **अनेलगलाया**ति एलं वुच्चति दोसो, तं न पग्घरतीति अनेलगला, ताय निद्दोसायाति अत्थो । अथ वा **अनेलगलाया**ति अनेलाय च अगलाय च, निद्दोसाय अगलित-पदब्यञ्जनाय अपरिहीनपदब्यञ्जनायाति अत्थो । तथा हि नं भगवा "एतदग्गं भिक्खवे मम सावकानं भिक्खूनं कल्याणवाक्करणानं यदिदं सोणो कुटिकण्णो" ति[6] एतदग्गे ठपेसि । **अत्थस्स विञ्ञापनिया**ति यथाधिप्पेतं अत्थं ञापेतुं समत्थाय ।

B. 302 **कतिवस्सो** ति सो किर मज्झिमवयस्स ततिये कोट्ठासे ठितो आकप्पसम्पन्नो च परेसं चिरतरपब्बजितो विय खायति । तं सन्धाय भगवा पुच्छीति केचि, तं अकारणं । एवं सन्तं समाधिसुखं अनुभवितुं युत्तो, एत्तकं कालं कस्मा पमादं

1. उदान-ट्ठ.-२८३-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. खु-७-१-पिट्ठे ।
3. वाचेति (स्या) ।
4. कल्याणियासि (स्या) ।
5. समन्नागतो अहोसि (स्या) ।
6. अं-१-२४-पिट्ठे ।

आपन्नोसीति पन अनुयुञ्जितुं सत्था "कतिवस्सोसी" ति तं पुच्छि । तेनेवाह **"किस्स पन त्वं भिक्खु एवं चिरं अकासी"** ति । तत्थ **किस्सा**ति किं कारणा । **एवं चिरं अकासी**ति एवं चिरायि, केन कारणेन एवं चिरकालं पब्बज्जं अनुपगन्त्वा अगारमज्झे वसीति अत्थो । **चिरं दिट्ठो मे** ति चिरेन चिरकालेन मया दिट्ठो । **कामेसू**ति वत्थुकामेसु किलेसकामेसु च । **आदीनवो** ति दोसो । **अपिचा**ति कामेसु आदीनवे केनचि पकारेन दिट्ठेपि न तावाहं घरावासतो निक्खमितुं असक्खिं । कस्मा ? सम्बाधो घरावासो, उच्चावचेहि किच्चकरणीयेहि समुपब्यूळ्हो अगारियभावो । तेनेवाह **"बहुकिच्चो बहुकरणीयो"** ति ।

एतमत्थं विदित्वा ति कामेसु यथाभूतं आदिनवदस्सिनो चित्तं चिरायित्वापि घरावासे न पक्खन्दति, अञ्ञदत्थु पदुमपलासे उदकबिन्दु विय विनिवत्तत्तियेवाति एतमत्थं सब्बाकारतो विदित्वा । **इमं उदानं** ति पवत्तिं निवत्तिञ्च सम्मदेव जानन्तो पवत्तियं तंनिमित्ते च न कदाचिपि रमतीति इदमत्थदीपकं इमं उदानं उदानेसि ।

तत्थ **दिस्वा आदीनवं लोके** ति सब्बस्मिम्पि सङ्खारलोके "अनिच्चो दुक्खो विपरिणामधम्मो" ति आदीनवं दोसं पञ्ञाचक्खुना पस्सित्वा । एतेन विपस्सनाचारो कथितो । ञत्वा धम्मं निरूपधिं ति सब्बूपधिपटिनिस्सग्गत्ता निरुपधिं निब्बानधम्मं यथाभूतं ञत्वा, निस्सरणविवेकासङ्खतामतसभावतो मग्गञाणेन पटिविज्झित्वा । "दिस्वा ञत्वा" ति इमेसं पदानं "घतं पिवित्वा बलं होति, सीहं दिस्वा भयं होति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ती" ति आदीसु[1] विय हेतुअत्थता दट्ठब्बा । **अरियो न रमती पापे ति** किलेसेहि आरकत्ता अरियो सप्पुरिसो अणुमत्तेपि पापे न रमति । कस्मा ? "पापे न रमती सुची"ति सुविसुद्धकायसमाचारादिताय सुचि सुद्धपुग्गलो राजहंसो विय उच्चारट्ठाने पापे संकिलिट्ठधम्मे न रमति नाभिनन्दति । "पापो न रमती सुचिं" तिपि पाठो, तस्सत्थो–पापो पुग्गलो सुचिं अनवज्जं वोदानधम्मं न रमति, अञ्ञदत्थु गामसूकरादयो विय उच्चारट्ठानं असुचिं संकिलेस-धम्मंयेव रमतीति पटिपक्खतो देसनं परिवत्तेति । B. 303

सोणकुटिकण्णवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

२५९॥ **काळसीहो** ति काळमुखवानरजाति । सेसमेत्थ पाळितो अट्ठकथातो च सुविञ्ञेय्यमेवाति ।

चम्मक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

---

1. म.-१-२१५-पिट्ठे ।

B. 304

६. भेसज्जक्खन्धक

पञ्चभेसज्जादिकथावण्णना

२६१॥ भेसज्जक्खन्धके **नच्छादेन्ती**ति रुचिं न उप्पादेन्ति ।

२६२॥ **सुसुका** ति समुद्दे भवा एका मच्छजाति । कुम्भीलातिपि वदन्ति । **संसट्ठं** ति परिस्सावितं । **तेलपरिभोगेना** ति सत्ताहकालिकपरिभोगं सन्धाय वुत्तं ।

२६३॥ **पिट्ठेही**ति पिसितेहि । **उब्भिदं** नाम ऊसरपंसुमयं ।

२६४॥ **छकणं ति गोमयं** । **पाकतिकपुण्णं** नाम अपक्ककसावचुण्णं । तेन ठपेत्वा गन्धचुण्णं सब्बं वट्टतीति वदन्ति ।

२६५॥ **सुवण्णगेरुको**ति सुवण्णतुत्थादि । **अञ्जनूपपिसनं** ति अञ्जनत्थाय उपपिसि-तब्बं यं किञ्चि चुण्णजातं ।

२६८॥ **सामं गहेत्वा** ति एत्थ सप्पदट्ठस्स अत्थाय अञ्ञेन भिक्खुना गहितम्पि सामं गहितसङ्खमेव गच्छतीति वेदितब्बं ।

२६९॥ **घरदिन्नकाबाधो** नाम वसीकरणत्थाय घरणिया दिन्नभेसज्जसमुट्ठितो आबाधो । तेनाह "**वसीकरणपाणकसमुट्ठितरोगो**" ति । घर-सद्दो चेत्थ अभेदेन घरणिया वत्तमानो अधिप्पेतो । "**अकटयूसेना** ति अनभिसङ्खतेन मुग्गयूसेन । **कटाकटेना**ति मुग्गे पचित्वा अचालेत्वाव परिस्सावितेन मुग्गसूपेना" ति गण्ठिपदेसु वुत्तं ।

गुळादिअनुजाननकथावण्णना

२७२॥ गुळकरणं ति गुळकरणट्ठानं, उच्छुसालं ति वुत्तं होति ।

२७४॥ अविस्सत्था ति[1] सासङ्का ।

B. 305

२७६॥ **अप्पमत्तकेपि पवारेन्ती**ति अप्पमत्तकेपि गहिते पवारेन्ति, "बहुम्पि गहिते अञ्ञेसं नप्पहोती"ति मञ्ञमाना अप्पमत्तकं गहेत्वा पवारेन्तीति अधिप्पायो । पटिसङ्खापि पटिक्खिपन्तीति "दिवा भोजनत्थाय भविस्सती"ति सल्लक्खेत्वापि पटिक्खिपन्ति ।

२७९॥ सम्बाधे दहनकम्मं पटिक्खेपाभावा वट्टति ।

२८०॥ **उभतोपसन्ना** ति उभयतो[2] पसन्ना । **माघातो**ति "मा घातेथ पाणिनो" ति एवं माघातघोसितदिवसो ।

---

1. अविस्सट्ठाति (क.) ।
2. उभो (स्या) ।

यागुमधुगोळकादिकथावण्णना

२८२॥ **मधुगोळकं** ति सक्करादिसंयुत्तपूवं । **आयुं देतीति** आयुदानं देति । **वण्णं** ति सरीरवण्णं । **सुखं** ति कायिकचेतसिकसुखं । **बलं** ति सरीरथामं । **पटिभानं** ति युत्तमुत्तपटिभानं[1] । **वातं अनुलोमेतीति** वातं अनुलोमेत्वा हरति । **वत्थिं सोधेतीति** धमनियो सुद्धं करोति । **आमावसेसं पाचेतीति** सचे आमावसेसकं होति, तं पाचेति । **अनुप्पवेच्छतीति** देति । वातञ्च ब्यपनेतीति सम्बन्धितब्बं ।

२८३॥ ननु च "परम्परभोजनेन कारेतब्बो" ति कस्मा वुत्तं । परम्परभोजनञ्हि पञ्चन्नं भोजनानं अञ्ञतरेन निमन्तितस्स तं ठपेत्वा अञ्ञं पञ्चन्नं भोजनानं अञ्ञतरं भुञ्जन्तस्स होति, इमे च भिक्खू भोज्जयागुं परिभुञ्जिंसु, पञ्चसु भोजनेसु अञ्ञतरं ति आह "**भोज्जयागुया हि पवारणा होती**"ति । यस्मा पञ्चन्नं भोजनानं अञ्ञतरं पटिक्खिपन्तस्स वुत्ता पवारणा भोज्जयागुं पटिक्खिपन्तस्सपि होतियेव, तस्मा भोज्जयागुपि ओदनगतिकायेवाति अधिप्पायो ।

२८४॥ **सुखुमोजं पक्खिपिंसू** ति "भगवा परिभुञ्जिस्सती"ति मञ्ञमाना पक्खिपिंसु ।

पाटलिगामवत्थुकथावण्णना

B. 306

२८५॥ **पाटलिगामो**[2] ति एवंनामको मगधरट्ठे एको गामो । तस्स किर गामस्स मापनदिवसे गामङ्गणट्ठाने द्वे तयो पाटलङ्कुरा पथवितो उब्भिज्जित्वा निक्खमिंसु । तेन तं "पाटलिगामो" त्वेव वोहरिंसु । **तदवसरी**ति तं पाटलिगामं अवसरि अनुपापुणि । **पाटलिगामिका** ति पाटलिगामवासिनो । उपासका ति ते किर भगवतो पठमदस्सनेन केचि सरणेसु च सीलेसु च पतिट्ठिता । तेन वुत्तं "उपासका" ति । **येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसू** ति पाटलिगामे किर अजातसत्तुनो लिच्छविराजूनञ्च मनुस्सा कालेन कालं गन्त्वा गेहसामिके गेहतो नीहरित्वा मासम्पि अड्ढमासम्पि वसन्ति । तेन पाटलिगामवासिनो मनुस्सा निच्चुपद्दुता "एतेसञ्चेव आगतकाले वसनट्ठानं भविस्सतीति एकपस्से इस्सरानं भण्डपटिसामनट्ठानं, एकपस्से वसनट्ठानं, एकपस्से आगन्तुकानं अड्ढिकमनुस्सानं, एकपस्से दलिद्दानं कपणमनुस्सानं, एकपस्से गिलानानं वसनट्ठानं भविस्सती"ति सब्बेसं अञ्ञमञ्ञं अघट्टेत्वा वसनप्पहोनकं नगरमज्झे महतिं सालं कारेसुं, तस्स नामं **आवसथागारं** ति । आगन्त्वा वसन्ति एत्थ आगन्तुकाति आवसथो, तदेव आगारं **आवसथागारं**।

---

1. युत्तमत्तपटिभानं (स्या) ।
2. उदान-ट्ठ-३६७-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

तं दिवसञ्च तं निट्ठानं आगमासि । ते तत्थ गन्त्वा इट्ठककम्मसुधा-कम्मचित्तकम्मादिवसेन सुपरिनिट्ठितं सुसज्जितं देवविमानसदिसं द्वारकोट्ठकतो पट्ठाय ओलोकेत्वा "इदं आवसथागारं अतिविय मनोरमं सस्सिरिकं, केन नु खो पठमं परिभुत्तं अम्हाकं दीघरत्तं हिताय सुखाय अस्सा" ति चिन्तेसुं, तस्मिं येव च खणे "भगवा तं गामं अनुप्पत्तो" ति अस्सोसुं, तेन ते उप्पन्नपीतिसोमनस्सा "अम्हेहि भगवा गन्त्वापि आनेतब्बो सिया, सो सयमेव अम्हाकं वसनट्ठानं सम्पत्तो, अज्ज मयं भगवन्तं इध वसापेत्वा पठमं परिभुञ्जापेस्साम, तथा भिक्खुसंघं, भिक्खुसंघे आगते तेपिटकं बुद्धवचनं आगतमेव भविस्सति, सत्थारं मङ्गलं वदापेस्साम, धम्मं कथापेस्साम, इति तीहि रतनेहि परिभुत्ते पच्छा अम्हाकं परेसञ्च परिभोगो भविस्सति, एवं नो दीघरत्तं हिताय सुखाय भविस्सती"ति सन्निट्ठानं कत्वा एतदत्थमेव B. 307 भगवन्तं उपसङ्कमिंसु । तस्मा एवमाहंसु **"अधिवासेतु नो भन्ते भगवा आवसथागारं"** ति । **तेनुपसङ्कमिंसू** ति[1] किञ्चापि तं दिवसमेव परिनिट्ठितत्ता देवविमानं विय सुसज्जितं सुपटिजग्गितं, बुद्धारहं पन कत्वा न पञ्ञत्तं । बुद्धा हि नाम अरञ्ञ-ज्झासया अरञ्ञारामा, अन्तो गामे वसेय्युं वा नो वा, तस्मा भगवतो रुचिं जानित्वाव पञ्ञपेस्सामाति चिन्तेत्वा ते भगवन्तं उपसङ्कमिंसु, इदानि भगवतो रुचिं जानित्वा तथा पञ्ञापेतुकामा येनावसथागारं तेनुपसङ्कमिंसु । **सब्बसन्थरिं आवसथागारं सन्थरित्वा** ति एत्थ सन्थरणं सन्थरि, सब्बो सकलो सन्थरि एत्थाति सब्बसन्थरि । अथ वा सन्थतं ति सन्थरि, सब्बं सन्थरि सब्बसन्थरि, तं सब्बसन्थरिं । भावन-पुंसकनिद्देसोवायं, यथा सब्बमेव सन्थतं होति, एवं सन्थरित्वाति अत्थो । सब्बपठमं ताव "गोमयं नाम सब्बमङ्गलेसु वट्टती" ति सुधापरिकम्मकतम्पि भूमिं अल्लगोमयेन ओपुञ्जापेत्वा परिसुक्खभावं ञत्वा यथा अक्कन्तट्ठाने पदं पञ्ञायति, एवं चातुज्जातियगन्धेहि लिम्पेत्वा उपरि नानावण्णकटसारके सन्थरित्वा तेसं उपरि महापिट्ठिककोजवे आदिं कत्वा हत्थत्थरणादीहि नानावण्णेहि अत्थरणेहि सन्थरि-तब्बयुत्तकं सब्बोकासं सन्थरापेसुं । तेन वुत्तं "सब्बसन्थरिं आवसथागारं सन्थरित्वा" ति ।

आसनानीति मज्झट्ठाने ताव मङ्गलत्थम्भं निस्साय महारहं बुद्धासनं पञ्ञपेत्वा तत्थ यं यं मुदुकञ्च मनोरमञ्च पच्चत्थरणं, तं तं अत्थरित्वा उभतोलोहितकं मनुञ्ञदस्सनं उपधानं उपदहित्वा उपरि सुवण्णरजततारकविचित्तवितानं बन्धित्वा गन्धदामपुप्फदामपत्तदामादीहि अलङ्करित्वा समन्ता द्वादसहत्थे ठाने पुप्फजालं कारेत्वा तिंसहत्थमत्तं ठानं पटसाणिया परिक्खिपापेत्वा पच्छिमभित्तिं निस्साय भिक्खुसंघस्स पल्लङ्कपीठअपस्सयपीठमुण्डपीठादीनि पञ्ञपापेत्वा उपरि सेत-

1. दी-ट्ठ-३-१५३, म-ट्ठ-३-१२-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

पच्चत्थरणेहि पच्चत्थरापेत्वा सालाय पाचीनपस्सं अत्तनो निसज्जायोग्गं कारेसुं। तं सन्धाय वुत्तं "आसनानि पञ्ञपेत्वा" ति।

उदकमणिकं ति महाकुच्छिकं समेखलं उदकचाटिं। एवं भगवा भिक्खुसंघो च यथारुचिया हत्थपादे धोविस्सन्ति, मुखं विक्खालेस्सन्तीति तेसु तेसु ठानेसु मणिवण्णस्स उदकस्स पूरेत्वा वासत्थाय नानापुप्फानि चेव उदकवासचुण्णानि च B.308 पक्खिपित्वा कदलिपण्णेहि पिदहित्वा पतिट्ठपेसुं। तेन वुत्तं "उदकमणिकं पतिट्ठापेत्वा"ति।

तेलपदीपं आरोपेत्वा ति रजतसुवण्णादिमयदण्डासु दण्डदीपिकासु योनकरूपकादीनं[1] हत्थे ठपितसुवण्णरजतादिमयकपल्लिकासु च तेलपदीपे जलयित्वा। येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसू ति एत्थ पन ते पाटलिगामिकउपासका न केवलं आवसथागारमेव, अथ खो सकलस्मिम्पि गामे वीथियो सज्जापेत्वा धजे उस्सापेत्वा गेहद्वारेसु पुण्णघटे च कदलिआदयो च ठपापेत्वा सकलगामं दीपमालाहि विप्पकिण्णतारकं विय कत्वा "खीरपके दारके खीरं पायेथ, दहरकुमारे लहुं लहुं भोजेत्वा सयापेथ, उच्चासद्दं मा करित्थ, अज्ज एकरत्तिं सत्था अन्तोगामे वसिस्सति, बुद्धा नाम अप्पसद्दकामा होन्ती" ति भेरिं चरापेत्वा सयं दण्डदीपिका आदाय येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु।

अथ खो भगवा निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सद्धिं भिक्खुसंघेन येन आवसथागारं तेनुपसङ्कमीति "यस्स दानि भन्ते भगवा कालं मञ्ञती" ति एवं किर तेहि काले आरोचिते भगवा लाखारसेन तिन्तरत्तकोविळारपुप्फवण्णं सुरत्तं दुपट्टं कत्तरिया पदुमं कन्तेन्तो विय, संविधाय तिमण्डलं पटिच्छादेन्तो निवासेत्वा सुवण्णपामङ्गेन पदुमकलापं परिक्खिपन्तो विय, विज्जुलतासस्सिरिकं कायबन्धनं बन्धित्वा रत्तकम्बलेन गजकुम्भं[2] परियोनन्धन्तो विय, रतनसतुब्बेधे सुवण्णग्घिके पवाळजालं खिपमानो विय, महति सुवण्णचेतिये रत्तकम्बलकञ्चुकं पटिमुञ्चन्तो विय, गच्छन्तं पुण्णचन्दं रत्तवलाहकेन पटिच्छादयमानो विय, कञ्चनगिरिमत्थके सुपक्कलाखारसं परिसिञ्चन्तो विय, चित्तकूटपब्बतमत्थकं विज्जुलताजालेन परिक्खिपन्तो विय च सचक्कवाळसिनेरुयुगन्धरमहापथविं चालेत्वा गहितनिग्रोधपल्लवसमानवण्णं रत्तवरपंसुकूलं पारुपित्वा वनगहनतो केसरसीहो विय, उदयपब्बतकूटतो पुण्णचन्दो विय, बालसूरियो विय च अत्तना निसिन्नतरुसण्डतो निक्खमि।

अथस्स कायतो मेघमुखतो विज्जुकलापा विय रस्मियो निक्खमित्वा सुवण्णरसधारापरिसेकपिञ्जरपत्तपुप्फफलसाखाविटपे विय समन्ततो रुक्खे करिंसु। तावदेव B.309

---

1. सोनकरूपकादीनं (क)।
2. रजतकुम्भं।

अत्तनो अत्तनो पत्तचीवरमादाय महाभिक्खुसंघो भगवन्तं परिवारेसि । ते च नं परिवारेत्वा ठितभिक्खू एवरूपा अहेसुं अप्पिच्छा सन्तुट्ठा पविवित्ता असंसट्ठा आरद्धवीरिया वत्तारो वचनक्खमा चोदका पापगरहिनो सीलसम्पन्ना समाधिसम्पन्ना पञ्ञासम्पन्ना विमुत्तिसम्पन्ना विमुत्तिञाणदस्सनसम्पन्ना । तेहि परिवारितो भगवा रत्तकम्बलपरिक्खित्तो विय सुवण्णक्खन्धो, रत्तपदुमसण्डमज्झगता विय सुवण्णनावा, पवाळवेदिकापरिक्खित्तो विय सुवण्णपासादो विरोचित्थ । महाकस्सपप्पमुखा पन महाथेरा मेघवण्णं पंसुकूलचीवरं पारुपित्वा मणिवम्मवम्मिता विय महानागा परिवारयिंसू वीतरागा भिन्नकिलेसा विजटितजटा छिन्नबन्धना कुले वा गणे वा अलग्गा ।

इति भगवा सयं वीतरागो वीतरागेहि, वीतदोसो वीतदोसेहि, वीतमोहो वीतमोहेहि, नित्तण्हो नित्तण्हेहि, निक्किलेसो निक्किलेसेहि, सयं बुद्धो अनुबुद्धेहि परिवारितो पत्तपरिवारितं विय केसरं, केसरपरिवारिता विय कण्णिका, अट्ठनाग-सहस्सपरिवारितो विय छद्दन्तो नागराजा, नवुतिहंससहस्सपरिवारितो विय धतरट्ठो हंसराजा, सेनङ्गपरिवारितो विय चक्कवत्ती, मरुगणपरिवारितो विय सक्को देवराजा, ब्रह्मगणपरिवारितो विय हारितमहाब्रह्मा, तारागणपरिवुतो विय पुण्णचन्दो असमेन बुद्धवेसेन अपरिमाणेन बुद्धविलासेन पाटलिगामीनं मग्गं पटिपज्जि ।

अथस्स पुरत्थिमकायतो सुवण्णवण्णा घनबुद्धरस्मियो उट्ठहित्वा असीतिहत्थं ठानं अग्गहेसुं, पच्छिमकायतो दक्खिणपस्सतो वामपस्सतो सुवण्णवण्णा घनरस्मियो उट्ठहित्वा असीतिहत्थं ठानं अग्गहेसुं, उपरिकेसन्ततो पट्ठाय सब्बकेसावत्तेहि मोरगीववण्णा घनबुद्धरस्मियो उट्ठहित्वा गगनतले असीतिहत्थं ठानं अग्गहेसुं, हेट्ठापादतलेहि पवाळवण्णा रस्मियो उट्ठहित्वा घनपथवियं असीतिहत्थं ठानं अग्गेहेसुं, दन्ततो अक्खीनं सेतट्ठानतो, नखानञ्च मंसविनिमुत्तट्ठानतो ओदाता घनबुद्धरस्मियो उट्ठहित्वा असीतिहत्थं ठानं अग्गहेसुं, रत्तपीतवण्णानं सम्भिन्नट्ठानतो मज्जिट्ठवण्णा रस्मियो उट्ठहित्वा असीतिहत्थं ठानं अग्गहेसुं, सब्बत्थकमेव पभस्सरा रस्मियो उट्ठहिंसु । एवं समन्ता असीतिहत्थमत्तं ठानं छब्बण्णा बुद्धरस्मियो B. 310 विज्जोतमाना विप्फन्दमाना विधावमाना कञ्चनदण्डदीपिकाहि निच्छरित्वा आकासं पक्खन्दमाना महापदीपजाला विय, चातुद्दीपिकमहामेघतो[1] निक्खन्तविज्जुलता विय च दिसोदिसं पक्खन्दिंसु । याहि सब्बदिसाभागा सुवण्णचम्पकपुप्फेहि विकिरियमाना विय, सुवण्णघटतो निक्खन्तसुवण्णरसधाराहि आसिञ्चियमाना विय, पसारित-सुवण्णपट्टपरिक्खित्ता विय वेरम्भवातसमुद्धतकिंसुककणिकारकिकिरातपुप्फचुण्ण-समोकिण्णा विय चीनपिट्ठचुण्णसम्परिरञ्जिता विय च विरोचिंसु ।

---

1. चातुद्दिसिकमहामेघतो (क), –म.-ट्ठ-३-१५, उदान-ट्ठ. ३७१ पिट्ठेसु पन पस्सितब्बं ।

भगवतोपि असीतिअनुब्यञ्जनब्यामप्पभापरिक्खेपसमुज्जलं द्वत्तिंसमहापुरिसलक्खणपटिमण्डितं सरीरं अब्भमहिकादिउपक्किलेसविमुत्तं समुज्जलतारकपभासितं विय गगनतलं, विकसितं विय पदुमवनं, सब्बपालिफुल्लो विय योजनसतिको पारिच्छत्तको, पटिपाटिया ठपितानं द्वत्तिंसचन्दानं द्वत्तिंससूरियानं द्वत्तिंसचक्कवत्तीनं द्वत्तिंसदेवराजानं द्वत्तिंसमहाब्रह्मानं सिरिया सिरिं अभिभवमानं विय विरोचित्थ, यथा तं दसहि पारमीहि दसहि उपपारमीहि दसहि परमत्थपारमीहीति सम्मदेव परिपूरिताहि समतिंसाय पारमीहि अलङ्कतं कप्पसतसहस्साधिकानि चत्तारि असङ्ख्येय्यानि दिन्नेन दानेन रक्खितेन सीलेन कतेन कल्याणकम्मेन एकस्मिं अत्तभावे समोसरित्वा विपाकं दातुं ओकासं अलभमानेन सम्बाधप्पत्तेन विय निब्बत्तितं नावासहस्सस्स भण्डं एकं नावं आरोपनकालो विय, सकटसहस्सस्स भण्डं एकं सकटं आरोपनकालो विय, पञ्चवीसतिया गङ्गानं सम्भिज्ज[1] मुखद्वारे एकतो रासीभूतकालो विय च अहोसि ।

इमाय बुद्धरस्मिया ओभासमानस्सपि भगवतो पुरतो अनेकानि दण्डदीपिकासहस्सानि उक्खिपिंसु, तथा पच्छतो वामपस्से दक्खिणपस्से । जातिसुमनचम्पकवनमालिकारत्तुप्पलनीलुप्पलबकुलसिन्दुवारादिपुप्फानि चेव नीलपीतादिवण्णसुगन्धगन्धचुण्णानि च चातुद्दीपिकमहामेघविस्सट्ठा सलिलवुट्ठियो विय विप्पकिरिंसु । पञ्चङ्गिकतूरियनिग्घोसा चेव बुद्धधम्मसंघगुणपटिसंयुत्ता थुतिघोसा च सब्बा दिसा पूरयमाना मुखरा विय अकंसु । देवसुपण्णनागयक्खगन्धब्बमनुस्सानं अक्खीनि अमतपानं विय लभिंसु । इमस्मिं पन ठाने ठत्वा पदसहस्सेहि गमनवण्णं वत्तुं वट्टति । तत्रिदं मुखमत्तं[2]—

B. 311

एवं सब्बङ्गसम्पन्नो, कम्पयन्तो वसुन्धरं ।
अहेठयन्तो पाणानि, याति लोकविनायको ॥

दक्खिणं पठमं पादं, उद्धरन्तो नरासभो ।
गच्छन्तो सिरिसम्पन्नो, सोभते द्विपदुत्तमो ॥

गच्छतो बुद्धसेट्ठस्स, हेट्ठापादतलं मुदु ।
समं सम्फुसते भूमिं, रजसानुपलिम्पति ॥

निन्नं ठानं उन्नमति, गच्छन्ते लोकनायके ।
उन्नतञ्च समं होति, पथवी च अचेतना ॥

पासाणा सक्खरा चेव, कथला खाणुकण्टका ।
सब्बे मग्गा विवज्जन्ति, गच्छन्ते लोकनायके ॥

---

1. पच्छिज्ज (क) ।
2. म-ट्ठ-३-१६, उदान-ट्ठ-३७२-पिट्ठेसु ।

नातिदूरे उद्धरति, नाच्चासन्ने च निक्खिपं ।
अघट्टयन्तो निय्याति, उभो जाणू च गोप्फके ॥
नातिसीघं पक्कमति, सम्पन्नचरणो मुनि ।
न चातिसणिकं याति, गच्छमानो समाहितो ॥
उद्धं अघो तिरियञ्च, दिसञ्च विदिसं तथा ।
न पेक्खमानो सो याति, युगमत्तञ्हि पेक्खति ॥
नागविक्कन्तचारो सो, गमने सोभते जिनो ।
चारु गच्छति लोकग्गो, हासयन्तो सदेवके ॥
उसभराजाव सोभन्तो, चातुचारीव केसरी ।
तोसयन्तो बहू सत्ते, गामसेट्ठं उपागमी" ति ॥

वण्णकालो नाम किरेस । एवंविधेसु कालेसु भगवतो सरीरवण्णे वा गुणवण्णे वा धम्मकथिकस्स थामोयेव पमाणं । चुण्णियपदेहि गथाबन्धेहि वा यत्तकं सक्कोति, तत्तकं वत्तब्बं, "दुक्कथितं" ति वा "अतित्थेन पक्खन्दो" ति वा न वत्तब्बो । अपरिमाणवण्णा हि बुद्धा भगवन्तो, तेसं बुद्धापि अनवसेसतो वण्णं वत्तुं असमत्था । सकलम्पि हि कप्पं वदन्ता परियोसापेतुं न सक्कोन्ति, पगेव इतरा पजाति । इमिना सिरिविलासेन अलङ्कतपटियत्तं पाटलिगामं पविसित्वा भगवा पसन्नचित्तेन जनेन पुप्फगन्धधूमवासचुण्णादीहि पूजियमानो आवसथागारं पाविसि । तेन वुत्तं "अथ खो भगवा निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सद्धिं भिक्खुसंघेन येन आवसथागारं तेनुपसङ्कमी"ति ।

B. 312

पादे पक्खालेत्वा ति यदिपि भगवतो पादे रजोजल्लं न उपलिम्पति, तेसं पन उपासकानं कुसलाभिवुद्धिं आकङ्खन्तो परेसं दिट्ठानुगतिं आपज्जनत्थं भगवा पादे पक्खालेसि । अपि च उपादिन्नकसरीरं नाम सीतिकातब्बम्पि होतीति तदत्थम्पि भगवा नहानपादधोवनानि करोतियेव । **भगवन्तंयेव पुरक्खत्वा** ति भगवन्तं पुरतो कत्वा । तत्थ भगवा भिक्खूनञ्चेव उपासकानञ्च मज्झे निसिन्नो गन्धोदकेन नहापेत्वा[1] दुकूलचुम्बटेन वोदकं[2] कत्वा जातिहिङ्गुलकेन मज्जित्वा रत्तकम्बलपलिवेठिते पीठे ठपिता रत्तसुवण्णघनपटिमा विय अतिविय विरोचित्थ । अयं पनेत्थ पोराणानं वण्णभणनमग्गो–

"गन्त्वान मण्डलमाळं, नागविक्कन्तचारणो ।
ओभासयन्तो लोकग्गो, निसीदि वरमासने ॥
तहिं निसिन्नो नरदम्मसारथि,
देवातिदेवो सतपुञ्ञलक्खणो ।

1. नहात्वा (स्या) ।
2. निरोदकं (क) ।

बुद्धासने मज्झगतो विरोचति,
सुवण्णनेक्खं विय पण्डुकम्बले ॥
नेक्खं जम्बोनदस्सेव, निक्खितं पण्डुकम्बले ।
विरोचति वीतमलो, मणि वेरोचनो यथा ॥
महासालोव सम्फुल्लो, मेरुराजावलङ्कतो ।
सुवण्णथूपसङ्कासो, पदुमो कोसको यथा ॥
जलन्तो दीपरुक्खोव, पब्बतग्गे यथा सिखी ।
देवानं पारिच्छत्तोव, सब्बफुल्लो विरोचथा" ति[1] ॥

पाटलिगामिके उपासके आमन्तेसीति यस्मा तेसु उपासकेसु बहू जना सीले पतिट्ठिता, तस्मा पठमं ताव सीलविपत्तिया आदीनवं पकासेत्वा पच्छा सीलसम्पदाय आनिसंसं दस्सेतुं **"पञ्चिमे गहपतयो"** तिआदिना धम्मदेसनत्थं आमन्तेसि । तत्थ[2] **दुस्सीलो** ति निस्सीलो । अभावत्थो हेत्थ दु-सद्दो "दुप्पञ्ञो" ति आदीसु विय । B. 313 **सीलविपन्नो** ति विपन्नसीलो भिन्नसंवरो । एत्थ च "दुस्सीलो" ति पदेन पुग्गलस्स सीलाभावो वुत्तो । सो पनस्स सीलाभावो दुविधो असमादानेन वा समादिन्नस्स भेदेन वा ति । तेसु पुरिमो न तथा सावज्जो, यथा दुतियो सावज्जतरो । यथाधिप्पेतादीनवनिमित्तं सीलाभावं पुग्गलाधिट्ठानाय देसनाय दस्सेतुं **"सीलविपन्नो"** ति वुत्तं, तेन "दुस्सीलो" ति पदस्स अत्थं दस्सेति । **पमादाधिकरणं** ति पमादकारणा । इदञ्च सुत्तं गहट्ठानं वसेन आगतं, पब्बजितानम्पि पन लब्भतेव । गहट्ठो हि येन येन सिप्पट्ठानेन जीविकं कप्पेति यदि कसिया यदि वणिज्जाय यदि गोरक्खेन । पाणातिपातादिवसेन पमत्तो तं तं यथाकालं सम्पादेतुं न सक्कोति, अथस्स कम्मं विनस्सति । माघातकाले पाणातिपातं पन अदिन्नादानादीनि च करोन्तो दण्डवसेन महतिं भोगजानिं निगच्छति । पब्बजितो दुस्सीलो पमादकारणा सीलतो बुद्धवचनतो झानतो सत्तअरियधनतो च जानिं निगच्छति ।

पापको कित्तिसद्दो ति गहट्ठस्स "असुको असुककुले जातो दुस्सीलो पापधम्मो परिच्चत्तइधलोकपरलोको सलाकभत्तमत्तम्पि न देती" ति चतुपरिसमज्झे पापको कित्तिसद्दो अब्भुग्गच्छति । पब्बजितस्स "असुको नाम सत्थुसासने पब्बजित्वा नासक्खि सीलानि रक्खितुं, न बुद्धवचनं उग्गहेतुं, वेज्जकम्मादीहि जीवति, छहि अगारवेहि समन्नागतो" ति एवं पापको कित्तिसद्दो अब्भुग्गच्छति ।

अविसारदो ति गहट्ठो ताव "अवस्सं बहूनं सन्निपातट्ठाने कोचि मम कम्मं जानिस्सति, अथ मं निग्गण्हिस्सन्ती"ति वा, "राजकुलस्स वा दस्सन्ती"ति सभयो

1. म-ट्ठ-3-१७, उदान-ट्ठ३७४-पिट्ठेसुपि ।
2. दी-ट्ठ-२-१२८, अं-ट्ठ-३-७९, उदान-ट्ठं-३७५-पिट्ठादीसुपिपस्सितब्बं ।

उपसङ्कमति, मङ्कुभूतो पत्तक्खन्धो अधोमुखो निसीदति, विसारदो हुत्वा कथेतुं न सक्कोति । पब्बजितोपि "बहू भिक्खू सन्निपतिता, अवस्सं कोचि मम कम्मं जानिस्सति, अथ मे उपोसथम्पि पवारणम्पि ठपेत्वा सामञ्ञतो चावेत्वा निक्कड्ढिस्सन्ती"ति सभयो उपसङ्कमति, विसारदो हुत्वा कथेतुं न सक्कोति । एकच्चो पन दुस्सीलोपि समानो दप्पितो विय वदति, सोपि अज्झासयेन मङ्कु होतियेव विप्पटिसारीभावतो ।

B. 314 **सम्मूळ्हो कालं करोतीति** दुस्सीलस्स हि मरणमञ्चे निपन्नस्स दुस्सील्यकम्मानं समादाय वत्तितट्ठानानि आपाथमागच्छन्ति । सो उम्मीलेत्वा अत्तनो पुत्तदारादिदस्सनवसेन इधलोकं पस्सति, निमीलेत्वा गतिनिमित्तुपट्ठानवसेन परलोकं पस्सति, तस्स चत्तारो अपाया कम्मानुरूपं उपट्ठहन्ति । सत्तिसतेन पहरियमानो विय अग्गिजालाय आलिङ्गियमानो विय च होति । सो "वारेथ वारेथा" ति विरवन्तोव मरति । तेन वुत्तं "सम्मूळ्हो कालं करोती" ति ।

कायस्स भेदा ति उपादिन्नकक्खन्धपरिच्चागा । **परं मरणाति** तदनन्तरं अभिनिब्बत्तक्खन्धग्गहणे । अथ वा **कायस्स भेदा** ति जीवितिन्द्रियस्स उपच्छेदा । **परं मरणा** ति चुतितो उद्धं । **अपायं** ति आदि सब्बं निरयवेवचनं । निरयो हि सग्गमोक्खहेतुभूता पुञ्ञसङ्खाता अया अपेतत्ता, सुखानं वा आयस्स आगमनस्स अभावा अपायो । दुक्खस्स गति पटिसरणं ति **दुग्गति,** दोसबहुलताय वा दुट्ठेन कम्मुना निब्बत्ता गतीति **दुग्गति** । विवसा निपतन्ति एत्थ दुक्कटकारिनोति **विनिपातो,** विनस्सन्ता वा एत्थ निपतन्ति संभिज्जमानङ्गपच्चङ्गाति **विनिपातो** । नत्थि एत्थ अस्सादसञ्ञितो अयो ति निरयो ।

अथ वा अपायग्गहणेन तिरच्छानयोनिं दीपेति । तिरच्छानयोनि हि अपायो सुगतितो अपेतत्ता, न दुग्गति महेसक्खानं नागराजादीनं सम्भवतो । दुग्गतिग्गहणेन पेत्तिविसयं दीपेति । सो हि अपायो चेव दुग्गति च सुगतितो अपेतत्ता दुक्खस्स च गतिभूतत्ता, न तु विनिपातो असुरसदिसं अविनिपतितत्ता । पेतमहिद्धिकानं विमानानिपि निब्बत्तन्ति । विनिपातग्गहणेन असुरकायं दीपेति । सो हि यथावुत्तेनत्थेन अपायो चेव दुग्गति च सब्बसम्पत्तिसमुस्सयेहि विनिपातत्ता विनिपातोति च वुच्चति । निरयग्गहणेन पन अवीचिआदिकं अनेकप्पकारं निरयमेव दीपेति । **उप्पज्जतीति** निब्बत्तति ।

आनिसंसकथा वुत्तविपरियायेन वेदितब्बा । अयं पन विसेसो—**सीलवा** ति समादानवसेन सीलवा । **सीलसम्पन्नो** ति परिसुद्धं परिपुण्णञ्च कत्वा सीलस्स सम्पादनेन सीलसम्पन्नो । भोगक्खन्धं ति भोगरासिं । **सुगतिं सग्गं लोकं** ति एत्थ सुगतिग्गहणेन मनुस्सगतिपि सङ्गय्हति, सग्गग्गहणेन देवगति एव । तत्थ सुन्दरा

गतीति **सुगति**, रूपादीहि विसयेहि सुट्ठु अग्गोति **सग्गो**, सो सब्बोपि लुज्जन- B. 315
पलुज्जनट्ठेन **लोको** ति ।

पाटलिगामिके उपासके बहुदेव रत्तिं धम्मिया कथाया ति अञ्ञायपि पाळिमुत्ताय धम्मकथाय चेव आवसथानुमोदनकथाय च । तदा हि भगवा यस्मा अजातसत्तुना तत्थ पाटलिपुत्तनगरं मापेन्तेन अञ्ञासु गामनिगमराजधानीसु ये सीलाचारसम्पन्ना कुटुम्बिका, ते आनेत्वा धनधञ्ञानि घरवत्थुखेत्तवत्थादीनि चेव परिहारञ्च दापेत्वा निवेसियन्ति, तस्मा पाटलिगामिका उपासका आनिसंसदस्साविताय विसेसतो सीलगरुकाति सब्बगुणानञ्च सीलस्स अधिट्ठानभावतो तेसं पठमं सीलानिसंसे पकासेत्वा ततो परं आकासगङ्गं ओतारेन्तो विय पथवोजं आकड्ढन्तो विय महाजम्बुं मत्थके गहेत्वा चालेन्तो विय योजनप्पमाणं महामधुं चक्कयन्तेन पीळेत्वा सुमधुररसं पायमानो विय च पाटलिगामिकानं उपासकानं हितसुखावहं पकिण्णककथं कथेन्तोपि "आवासदानं नामेतं गहपतयो महन्तं पुञ्ञं, तुम्हाकं आवासो मया परिभुत्तो, भिक्खुसंघेन परिभुत्तो, मया च भिक्खुसंघेन च परिभुत्ते धम्मरतनेनपि परिभुत्तोयेव होति, एवं तीहि रतनेहि परिभुत्ते अपरिमेय्योव विपाको, अपि च आवासदानस्मिं दिन्ने सब्बदानं दिन्नमेव होति । भूमट्ठकपण्णसालाय वा साखामण्डपस्स वा संघ उद्दिस कतस्स आनिसंसो परिच्छिन्दितुं न सक्का । आवासदानानुभावेन हि भवे निब्बत्तमानस्सपि सम्पीळितगब्भवासो नाम न होति, द्वादसहत्थो ओवरको वियस्स मातुकुच्छि असम्बाधोव होती" ति एवं नानानयविचित्तं बहुं धम्मकथं कथेत्वा–

"सीतं उण्हं पटिहन्ति, ततो वाळमिगानि च ।
सरीसपे च मकसे, सिसिरे चापि वुट्ठियो ॥
ततो वातातपो घोरो, सञ्जातो पटिहञ्ञति ॥
लेणत्थञ्च सुखत्थञ्च, झायितुञ्च विपस्सितुं ॥
विहारदानं संघस्स, अग्गं बुद्धेन वण्णितं ।
तस्मा हि पण्डितो पोसो, सम्पस्सं अत्थमत्तनो ॥
विहारे कारये रम्म, वासयेत्थ बहुस्सुते ।
तेसं अन्नञ्च पानञ्च, वत्थसेनासनानि च ॥
ददेय्य उजुभूतेसु, विप्पसन्नेन चेतसा । B. 316
ते तस्स धम्मं देसेन्ति, सब्बदुक्खापनूदनं ।
यं सो धम्मं इधञ्ञाय, परिनिब्बाति अनासवो" ति[1] ॥

---

1. वि-४-२९१-३१४ पिट्ठेसु ।

एवं अयम्पि आवासदाने आनिसंसो अयम्पि आवासदाने आनिसंसोति बहुदेव रत्तिं अतिरेकदियड्ढयामं आवासदानानिसंसं कथेसि। तत्थ इमा गाथाव सङ्गहं आरुळ्हो, पकिण्णकधम्मदेसना पन सङ्गहं न आरोहति। **सन्दस्सेत्वा** ति आदीनि वुत्तत्थानेव।

अभिक्कन्ता ति अतिक्कन्ता द्वे यामा गता। **यस्सदानि तुम्हे कालं मञ्ञथाति** यस्स गमनस्स तुम्हे कालं मञ्ञथ, गमनकालो तुम्हाकं, गच्छथाति वुत्तं होति। कस्मा पन भगवा ते उय्योजेसीति ? अनुकम्पाय। तियामरत्तिं[1] हि निसीदित्वा वीतिनामेन्तानं तेसं सरीरे आबाधो उप्पज्जेय्य, भिक्खुसंघोपि च महा, तस्स सयननिसज्जानं ओकासं लद्धुं वट्टति, इति उभयानुकम्पाय उय्योजेसि।

सुञ्ञागारं ति पाटियेक्कं सुञ्ञागारं नाम तत्थ नत्थि। ते किर गहपतयो तस्सेव आवसथागारस्स एकपस्से पटसाणिं परिक्खिपापेत्वा कप्पियमञ्च पञ्ञपेत्वा तत्थ कप्पियपच्चत्थरणानि अत्थरित्वा उपरि सुवण्णरजततारकगन्धमालादिदामपटिमण्डितं वितानं बन्धित्वा गन्धतेलपदीपं आरोपयिंसु "अप्पेव नाम सत्था धम्मासनतो वुट्ठाय थोकं विस्समेतुकामो इध निपज्जेय्य, एवं नो इदं आवसथागारं भगवता चतूहि इरियापथेहि परिभुत्तं दीघरत्तं हिताय सुखाय भविस्सती"ति। सत्थापि तदेव सन्धाय तत्थ सङ्घाटिं पञ्ञपेत्वा सीहसेय्यं कप्पेसि। तं सन्धाय वुत्तं "सुञ्ञागारं पाविसी"ति। तत्थ पादधोवनट्ठानतो पट्ठाय याव धम्मासना अगमासि, एत्तके ठाने गमनं निप्फन्नं। धम्मासनं पत्वा थोकं अट्ठासि, इदं तत्थं ठानं। द्वे यामे धम्मासने निसीदि, एत्तके ठाने निसज्जा निप्फन्ना। उपासके उय्योजेत्वा धम्मासनतो ओरुय्ह यथावुत्ते ठाने B. 317 सीहसेय्यं कप्पेसि। एतं ठानं भगवता चतूहि इरियापथेहि परिभुत्तं अहोसीति।

पाटलिगामवत्थुकथावण्णना निट्ठिता।

सुनिधवस्सकारवत्थुकथावण्णना

२८६॥ सुनिधवस्सकारा ति[2] सुनिधो च वस्सकारो च द्वे ब्राह्मणा। **मगधमहामत्ता** ति मगधरञ्ञो महाअमच्चा, मगधरट्ठे वा महामत्ता, महतिया इस्सरियमत्ताय समन्नागताति मगधमहामत्ता। **पाटलिगामे नागरं मापेन्तीति** पाटलिगामन्तसङ्खाते भूमिप्पदेसे नगरं मापेन्ति, पुब्बे "पाटलिगामो" ति लद्धनामं ठानं इदानि नगरं कत्वा मापेन्तीति अत्थो। **वज्जीनं पटिवाहायाति** लिच्छविराजूनं आयमुखपच्छिन्दनत्थं। **वत्थूनीति** घरवत्थूनि घरपतिट्ठापनट्ठानानि। **चित्तानि नमन्ति निवेसनानि मापेतुं** ति रञ्ञो राजमहामत्तानञ्च निवेसनानि मापेतुं वत्थुविज्जापाठकानं

---

1. द्वियामरत्तिं (क)।
2. दी-ट्ठ-२-१३०, उदान-ट्ठ-३७९-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

चित्तानि नमन्ति । ते किर अत्तनो सिप्पानुभावेन हेट्ठापथवियं तिंसहत्थमत्ते ठाने "इध नागानं निवासपरिग्गहो, इध यक्खानं, इध भूतानं निवासपरिग्गहो, इध पासाणो वा खाणुको वा अत्थी"ति जानन्ति, ते तदा सिप्पं जप्पित्वा तादिसं सारम्भट्ठानं परिहरित्वा अनारम्भे ठाने ताहि वत्थुपरिग्गाहिकाहि देवताहि सद्धिं मन्तयमाना विय तं तं गेहानि मापेन्ति ।

अथ वा नेसं सरीरे देवता अधिमुच्चित्वा तत्थ तत्थ निवेसनानि मापेतुं चित्तं नामेन्ति । ता चतूसु कोणेसु खाणुके कोट्टेत्वा वत्थुम्हि गहितमत्ते पटिविगच्छन्ति । सद्धानं कुलानं सद्धा देवता तथा करोन्ति, अस्सद्धानं कुलानं अस्सद्धा देवता च । किं कारणा ? सद्धानञ्हि एवं होति "इध मनुस्सा निवेसनं मापेन्ता पठमं भिक्खुसंघं निसीदापेत्वा मङ्गलं वदापेस्सन्ति, अथ मयं सीलवन्तानं दस्सनं धम्मकथं पञ्हविस्सज्जनं अनुमोदनञ्च सोतुं लभिस्साम, मनुस्सा दानं दत्वा अम्हाकं पत्तिं दस्सन्ती"ति । अस्सद्धा देवतापि "अत्तनो इच्छानुरूपं तेसं पटिपत्तिं पस्सितुं कथञ्च सोतुं लभिस्सामा" ति तथा करोन्ति ।

तावतिंसेहीति यथा हि एकस्मिं कुले एकं पण्डितं मनुस्सं, एकस्मिञ्च विहारे एकं B. 318 बहुस्सुतं भिक्खुं उपादाय "असुककुले मनुस्सा पण्डिता, असुकविहारे भिक्खू बहुस्सुता" ति सद्दो अब्भुग्गच्छति, एवमेवं सक्कं देवराजानं विस्सकम्मञ्च देवपुत्तं उपादाय "तावतिंसा पण्डिता" ति सद्दो अब्भुग्गतो । तेनाह "तावतिंसेहीति । **सेय्यथापी**ति आदिना देवेहि तावतिंसेहि सद्धिं मन्तेत्वा विय सुनिधवस्सकारा नगरं मापेन्तीति दस्सेति ।

यावता अरियं[1] **आयतनं** ति यत्तकं अरियमनुस्सानं ओसरणट्ठानं नाम अत्थि । **यावता वणिप्पथो** ति यत्तकं वाणिजानं आहटभण्डस्स रासिवसेनेव कयविक्कयट्ठानं नाम, वाणिजानं वसनट्ठानं वा अत्थि । **इदं अग्गनगरं** ति तेसं अरियायतन-वणिप्पथानं इदं नगरं अग्गं भविस्सति जेट्ठकं पामोक्खं । **पुटभेदनं** ति भण्ड-पुटभेदनट्ठानं, भण्डगन्थिकानं[2] मोचनट्ठानं ति वुत्तं होति । सकलजम्बुदीपे अलद्धभण्डम्पि हि इधेव लभिस्सति, अञ्ञत्थ विक्कयं अगच्छन्तम्पि इध विक्कयं गच्छिस्सति, तस्मा इधेव पुटं भिन्दिस्सतीति अत्थो । आयन्ति यानि[3] चतूसु द्वारेसु चत्तारि, सभायं एकं ति एवं दिवसे दिवसे पञ्चसतसहस्सानि तत्थ उट्ठहिस्सन्ति, तानिस्स भावीनि आयानि दस्सेति । **अग्गितो वा**ति आदीसु च–कारत्थो वा–सद्दो, अग्गिना च उदकेन च मिथुभेदेन च नस्सिस्सतीति अत्थो । तस्स हि एको कोट्ठासो

1. अरियानं (स्या) ।
2. भण्डगण्ठिकानं (स्या) ।
3. आयानम्पि ति (उदान-ट्ठ. ३८० पिट्ठे) ।

अग्गिना नस्सिस्सति, निब्बापेतुम्पि नं न सक्खिस्सति, एकं कोट्ठासं गङ्गा गहेत्वा गमिस्सति, एको इमिना अकथितं अमुस्स, अमुना अकथितं इमस्स वदन्तानं पिसुणवाचानं वसेन भिन्नानं मनुस्सानं अञ्ञमञ्ञभेदेन विनस्सिस्सति।

एवं वत्वा भगवा पच्चूसकाले गङ्गातीरं गन्त्वा कतमुखधोवनो भिक्खाचारकालं आगमयमानो निसीदि। सुनिधवस्सकारापि "अम्हाकं राजा समणस्स गोतमस्स उपट्ठाको, सो अम्हे उपगते पुच्छिस्सति' 'सत्था किर पाटलिगामं अगमासि, किं तस्स सन्तिकं उपसङ्कमित्थ, न उपसङ्कमित्था' ति, 'उपसङ्कमिम्हा' ति च वुत्ते' निमन्तयित्थ, न निमन्तयित्था' ति पुच्छिस्सति, 'न निमन्तयिम्हा' ति च वुत्ते अम्हाकं B. 319 दोसं आरोपेत्वा निग्गण्हिस्सति, इदञ्चापि मयं अकतट्ठाने नगरं मापेम, समणस्स खो पन गोतमस्स गतगतट्ठाने काळकण्णिसत्ता पटिक्कमन्ति, तं मयं नगरमङ्गलं वाचापेस्सामा" ति चिन्तेत्वा सत्थारं उपसङ्कमित्वा निमन्तयिंसु। तेन वुत्तं **"अथ खो सुनिधवस्सकारा"**ति आदि। **पुब्बण्हसमयं** ति पुब्बण्हकाले। **निवासेत्वा** ति गामप्पवेसननीहारेन निवासनं निवासेत्वा कायबन्धनं बन्धित्वा। **पत्तचीवरमादाया**ति पत्तञ्च चीवरञ्च आदियित्वा कायपटिबद्धं कत्वा, चीवरं पारुपित्वा पत्तं हत्थेन गहेत्वा ति अत्थो।

सीलवन्तेत्था ति सीलवन्ते एत्थ अत्तनो वसनट्ठाने। **सञ्ञते** ति कायवाचाचित्तेहि सञ्ञते। **तासं दक्खिणमादिसे** ति संघस्स दिन्ने चत्तारो पच्चये तासं घरदेवतानं आदिसेय्य पत्तिं ददेय्य। **पूजिता पूजयन्ती**ति "इमे मनुस्सा अम्हाकं ञातकापि न होन्ति, तथापि नो पत्तिं देन्तीति आरक्खं सुसंविहितं करोथा" ति सुट्ठु आरक्खं करोन्ति। **मानिता मानयन्ती**ति कालानुकालं बलिकम्मकरणेन मानिता "एते मनुस्सा अम्हाकं ञातकापि न होन्ति, तथापि चतुमासछमासन्तरे नो बलिकम्मं करोन्ती"ति मानेन्ति उप्पन्नपरिस्सयं हरन्ति। **ततो नं** ति ततो नं पण्डितजातिकं मनुस्सं। **ओरसं** ति उरे ठपेत्वा संवड्ढितं[1], यथा माता ओरसं पुत्तं अनुकम्पति, उप्पन्न-परिस्सयहरणत्थमेवस्स वायमति, एवं अनुकम्पन्तीति अत्थो। **भद्रानि पस्सती**ति सुन्दरानि पस्सति।

अनुमोदित्वा ति तेहि तदा पसुतपुञ्ञस्स अनुमोदनवसेन तेसं धम्मकथं कत्वा। सुनिधवस्सकारापि "या तत्थ देवता आसुं, तासं दक्खिणमादिसे" ति भगवतो वचनं सुत्वा देवतानं पत्तिं अदंसु। **तं गोतमद्वारं नाम अहोसी**ति तस्स नगरस्स येन द्वारेन भगवा निक्खमि, तं गोतमद्वारं नाम अहोसि। गङ्गाय पन उत्तरणत्थं अनोतिण्णत्ता गोतमतित्थं नाम नाहोसि। पूरा ति पुण्णा। **समतित्तिका** ति तीरसमं[2] उदकस्स

---

1. ओबन्धितं (क)।
2. तटसमं (स्या)।

तित्ता भरिता। **काकपेय्या** ति तीरे ठितकाकेहि पातुं सक्कुणेय्यउदका। तीहिपि पदेहि उभतोकूलसमं परिपुण्णभावमेव वदति। **उळुम्पं** ति पारगमनत्थाय लहुके दारुदण्डे गहेत्वा कवाटफलके विय अञ्ञमञ्ञसम्बन्धे कातुं आणियो कोट्टेत्वा नावासङ्खेपेन कतं। **कुल्लं** ति वेळुनळादिके सङ्करित्वा वल्लिआदीहि कलापवसेन बन्धित्वा कतं।

एतमत्थं विदित्वा ति एतं महाजनस्स गङ्गुदकमत्तस्सपि केवलं तरितुं असमत्थतं, B. 320 अत्तनो पन भिक्खुसंघस्स च अतिगम्भीरवित्थतं संसारमहण्णवं तरित्वा ठितभावञ्च सब्बाकारतो विदित्वा तदत्थपरिदीपनं इमं उदानं उदानेसि। उदानगाथाय अत्थो पन अट्ठकथायं दस्सितोयेव। तत्थ **उदकट्ठानस्सेतं अधिवचनं** ति यथावुत्तस्स यस्स कस्सचि उदकट्ठानस्स एतं अण्णवं ति अधिवचनं, न समुद्दस्सेवाति अधिप्पायो। सरं ति इध नदी अधिप्पेता सरति सन्दतीति कत्वा। **गम्भीरं वित्थतं** ति अगाधट्ठेन गम्भीरं, सकललोकत्तयब्यापिताय वित्थतं। **विसज्जा**ति अनासज्ज अप्पत्वा एव पल्ललानि तेसं अतरणतो। **कुल्लं हि जनो बन्धतीति** कुल्लं बन्धितुं आयासं आपज्जति। **विना एव कुल्लेना** ति ईदिसं उदकं कुल्लेन ईदिसेन विना एव। **तिण्णा मेधाविनो जना** ति अरियमग्गञाणसङ्खाताय मेधाय समन्नागतत्ता मेधाविनो बुद्धा च बुद्धसावका च तिण्णा परतीरे पतिट्ठिता।

सुनिधवस्सकारवत्थुकथावण्णना निट्ठिता।

कोटिगामे सच्चकथावण्णना

२८७॥ **कोटिगामो** ति महापनादस्स रञ्ञो पासादकोटियं कतगामो, पतितस्स[1] पासादस्स थुपिकाय पतिट्ठितट्ठाने निविट्ठगामोति अत्थो। **अरियसच्चानं** ति ये पटि-विज्झन्ति, तेसं अरियभावकरानं सच्चानं। **अननुबोधाति** अबुज्झनेन अजाननेन। **अप्पटिवेधा** ति अप्पटिविज्झनेन। **अनुबोध**ो चेत्थ पुब्बभागियञाणं, **पटिवे**धो मग्ग-ञाणेन अभिसमयो। तत्थ यस्मा अनुबोधपुब्बको पटिवेधो अनुबोधेन विना न होति, अनुबोधोपि एकच्चो पटिवेधसम्बन्धो तदुभयाभावहेतुकञ्च वट्टे संसरणं, तस्मा वुत्तं "अननुबोधा.....पे०.....तुम्हाकञ्चा" ति। **तत्थ सन्धावितं** ति पटिसन्धिग्गहणवसेन भवतो भवन्तरुपगमनेन सन्धावितं। **संसरितं** ति अपरापरं चवनुपपज्जनवसेन संसरितं। **ममञ्चेव तुम्हाकञ्चा** ति मया च तुम्हेहि च। अथ वा **सन्धावितं संसरितं** ति सन्धावनं संसरणं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च अहोसीति एवमेत्थ अत्थो वेदितब्बो।

---

1. तस्स (क)।

B. 321 **संसितं** ति संसरितं । **भवनेत्ति समूहता** ति दीघरज्जुया बद्धसकुणं विय रज्जुहत्थो पुरिसो देसन्तरं, तण्हारज्जुया बद्धसत्तसन्तानं अभिसङ्खारो भवन्तरं नेति एतायाति भवनेत्ति, सा भवतो भवं नयनसमत्था तण्हारज्जु अरियमग्गसत्थेन सुट्ठु हता छिन्ना अप्पवत्तिकताति भवनेत्ति समूहता ।

अम्बपालीवत्थुकथावण्णना

२८८॥ **यानस्स भूमीति** यत्थ सक्का होति यानं आरुय्ह यानेन गन्तुं, अयं यानस्स भूमि नाम । **याना पच्चोरोहित्वा** ति विहारस्स बहिद्वारकोट्ठके यानतो ओरोहित्वा ।

लिच्छवीवत्थुकथावण्णना

२८९॥ **नीला** ति इदं सब्बसङ्गाहकवचनं । **नीलवण्णा** ति आदि तस्सेव विभागदस्सनत्थं[1] । तत्थ न तेसं पकतिवण्णो नीलो, नीलविलेपनविलित्तत्ता पनेतं वुत्तं । नीलवत्था ति पटदुकूलकोसेय्यादीनिपि नेसं नीलानेव होन्ति । **नीलालङ्कारा** ति नीलमणिअलङ्कारेहि नीलपुप्फेहि च अलङ्कता । ते किर अलङ्कारा सुवण्ण-विचित्तापि[2] इन्दनीलमणिओभासेहि एकनीला विय खायन्ति, रथापि नेसं नीलमणि-खचिता नीलवत्थपरिक्खित्ता नीलधजनीलवम्मिकेहि नीलाभरणेहि नीलअस्सेहि युत्ता, पतोदयट्ठियोपि नीलायेवाति इमिना नयेन सब्बपदेसु अत्थो वेदितब्बो । **पटिवट्टेसीति**[3] पहरि[4] । **किस्स जे अम्बपाली** जे–ति आलपनं, भोति अम्बपालि किं कारणाति वुत्तं होति । **साहारं** ति एत्थ आहरन्ति इमस्मा राजपुरिसा बलिं ति **आहारो**, तब्भुत्तजनपदो । तेन सहितं साहारं, सजनपदं ति अत्थो । अङ्गुलिं **फोटेसुं** ति अङ्गुलिं चालेसुं । **अम्बकाया** ति मातुगामेन । उपचारवचनञ्हेतं, इत्थीसु यदिदं अम्बका मातुगामो जननिकाति । **ओलेकेथा** ति पस्सथ । **अपलोकेथा** ति अपवत्तित्वा ओलेकेथ, पुनप्पुनं पस्सथाति अत्थो । **उपसंहरथा** ति उपनेथ, इमं लिच्छवीपरिसं B. 322 तुम्हाकं चित्तेन तावतिंससदिसं उपसंहरथ उपनेथ अल्लीयापेथ । येथेव तावतिंसा अभिरूपा पासादिका नीलादिनानावण्णा, एवमिमे लिच्छवीराजानोपीति तावतिंसेहि समके कत्वा पस्सथाति अत्थो ।

कस्मा पन भगवा अनेकसतेहि सुत्तेहि चक्खादीनं रूपादीसु निमित्तग्गाहं पटिसेधेत्वा इध महन्तेन उस्साहेन निमित्तग्गाहे नियोजेतीति ? हितकामताय तेसं भिक्खूनं यथा आयस्मतो नन्दस्स हितकामताय सग्गसम्पत्तिदस्सनत्थं । तत्र किर

---

1. विभागदस्सनं (स्या) ।
2. सुवण्णविरहितापि (क) ।
3. पटिवत्तेसीति (स्या) ।
4. पहारेसि (?)

एकच्चे भिक्खू ओसन्न वीरिया, ते सम्पत्तिया पलोभेन्तो "अप्पमादेन समणधम्मं करोन्तानं एवरूपा इस्सरियसम्पत्ति सुलभा" "ति समणधम्मे उस्साहजननत्थं आह। अथ वा नयिदं निमित्तग्गाहे नियोजनं, केवलं पन "दिब्बसम्पत्तिसदिसा एतेसं राजूनं इस्सरियसम्पत्ती"ति अनुपुब्बिकथाय सम्पत्तिकथनं विय दट्ठब्बं। अनिच्चलक्खण-विभावनत्थञ्चापि एवमाह। न चिरस्सेव हि सब्बेपिमे अजातसत्तुस्स वसेन विनासं पापुणिस्सन्ति, अथ नेसं रज्जसिरिसम्पत्तिं दिस्वा ठितभिक्खू "तथारूपायपि नाम सिरिसम्पत्तिया विनासो पञ्ञायिस्सती" ति अनिच्चलक्खणं भावेत्वा सह पटि-सम्भिदाहि अरहत्तं पापुणिस्सन्ती ति अनिच्चलक्खणविभावनत्थं आह।

अधिवासेतू ति अम्बपालिया निमन्तितभावं ञत्वापि कस्मा निमन्तेन्तीति ? असद्दहनताय च वत्तसीसेन च। सा हि धुत्ता इत्थी अनिमन्तेत्वापि "निमन्तेसिं" ति वदेय्याति तेसं अहोसि। धम्मं सुत्वा गमनकाले च निमन्तेत्वा गमनं नाम मनुस्सानं वत्तमेव।

लिच्छवीवत्थुकथावण्णना निट्ठिता।

सीहसेनापतिवत्थुकथावण्णना

२९०॥ **अभिञ्ञाता** ति[1] ञाता पञ्ञाता पाकटा। **सन्थागारे** ति महाजनस्स सन्थम्भनागारे विस्समनत्थाय कते अगारे। सा किर सन्थागारसाला नगरमज्झे अहोसि, चतूसु द्वारेसु ठितानं पञ्ञायति, चतूहि दिसाहि आगतमनुस्सा पठमं तत्थ विस्समित्वा पच्छा अत्तनो अत्तनो फासुकट्ठानं गच्छन्ति। राजकुलानं रज्जकिच्च-सन्थरणत्थं[2] कतं अगारं ति पि वदन्ति येव। तत्थ हि निसीदित्वा लिच्छवीराजानो रज्जकिच्चं सन्थरन्ति[3] करोन्ति विचारेन्ति। **सन्निसिन्ना** ति तेसं निसीदनत्थंयेव[4] पञ्ञत्तेसु महारहपच्चत्थरणेसु समुस्सितसेतच्छत्तेसु आसनेसु सन्निसिंन्ना। **अनेक-परियायेन बुद्धस्स वण्णं भासन्ती**ति राजकुलकिच्चञ्चेव लोकत्थकिरियञ्च विचारेत्वा अनेकेहि कारणेहि बुद्धस्स वण्णं भासन्ति। पण्डिता हि ते राजानो सद्धासम्पन्ना सोतापन्नापि सकदागामिनोपि अनागामिनोपि अरियसावका, ते सब्बेपि लोकियजटं भिन्दित्वा बुद्धादीनं तिण्णं रतनानं वण्णं भासन्ति। B. 323

---

1. अं-ट्ठ.-३-२०८-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
2. रज्जकिच्चसन्धरणत्थं (क)।
3. सन्थारेन्ति (स्या)।
4. निसीदनत्थं पस्सेव (क)।

तत्थ तिविधो बुद्धवण्णो नाम चरियवण्णो सरीरवण्णो गुणवण्णो ति । तत्रिमे राजानो चरियाय वण्णं आरभिंसु–"दुक्करं वत कतं सम्मासम्बुद्धेन कपसतसहस्साधिकानि चत्तारि असङ्ख्येय्यानि दस पारमियो दस उपपारमियो दस परमत्थपारमियो ति समतिंस पारमियो पूरेन्तेन ञातत्थचरियं लोकत्थचरियं बुद्धत्थचरियं मत्थकं पापेत्वा पञ्च महापरिच्चागे परिच्चजन्तेना" ति अड्ढच्छक्केहि जातकसतेहि बुद्धवण्णं कथेन्ता तुसितभवनं पापेत्वा ठपयिंसु । धम्मस्स वण्णं भासन्ता पनेते "भगवता धम्मो देसितो, निकायतो पञ्च निकाया होन्ति, पिटकतो तीणि पिटकानि, अङ्गतो नव अङ्गानि, खन्धतो चतुरासीतिधम्मक्खन्धसहस्सानी"ति कोट्ठासवसेन धम्मगुणं कथयिंसु । संघस्स वण्णं भासन्ता "सत्थु धम्मदेसनं सुत्वा पटिलद्धसद्धा कुलपुत्ता भोगक्खन्धञ्चेव ञातिपरिवट्टञ्च पहाय सेतच्छत्तउपरज्जसेनापतिसेट्ठिभण्डागारिकट्ठानन्तरादीनि अगणयित्वा निक्खम्म सत्थु वरसासने पब्बजन्ति, सेतच्छत्तं पहाय पब्बजितानं भद्दियमहाराजमहाकप्पिनपुक्कुसातिआदिराजपब्बजितानंयेव बुद्धकाले असीति सहस्सानि अहेसुं, अनेककोटिधनं पहाय पब्बजितानं पन यसकुलपुत्तसोणसेट्ठिपुत्तरट्ठपालपुत्तादीनं परिच्छेदो नत्थि, एवरूपा च एवरूपा च कुलपुत्ता सत्थु सासने पब्बजन्ती" ति पब्बज्जासङ्खेपवसेन संघगुणं कथयिंसु ।

सीहो सेनापतीति एवंनामको सेनाय अधिपति । वेसालियञ्हि सत्त सहस्सानि सत्त सतानि सत्त च राजानो, ते सब्बेपि सन्निपतित्वा सब्बेसं मनं गहेत्वा "रट्ठं विचारेतुं समत्थं एकं विचिनथा" ति विचिनन्ता सीहराजकुमारं दिस्वा "अयं सक्खिस्सती" ति B. 324 सन्निट्ठानं कत्वा तस्स रत्तमणिवण्णकम्बलपरियोनद्धं सेनापतिच्छत्तं अदंसु । तं सन्धाय वुत्तं "सीहो सेनापती" ति । **निगण्ठसावको** ति निगण्ठस्स नाटपुत्तस्स पच्चयदायको उपट्ठाको । जम्बुदीपतलस्मिञ्हि तयो जना निगण्ठानं अग्गुपट्ठाका– नाळन्दायं उपालि गहपति, कपिलपुरे वप्पो सक्को, वेसालियं अयं सीहो सेनापतीति । **निसिन्नो होती**ति सेसराजूनम्पि परिसाय अन्तरे[1] आसनानि पञ्ञापयिंसु, सीहस्स पन मज्झे ठानेति तस्मिं पञ्ञत्ते महारहे राजासने निसिन्नो होति । **निस्संसयं** ति निब्बिचिकिच्छं अद्धा एकंसेन । न हेते यस्स वा तस्स वा अप्पेसक्खस्स एवं अनेकसतेहि कारणेहि वण्णं भासन्ति ।

येन निगण्ठो नाटपुत्तो तेनुपसङ्कमीति निगण्ठो किर नाटपुत्तो "सचायं सीहो कस्सचिदेव समणस्स गोतमस्स वण्णं कथेन्तस्स सुत्वा समणं गोतमं दस्सनाय उपसङ्कमिस्सति, मय्हं परिहानि भविस्सती"ति चिन्तेत्वा पठमतरंयेव सीहं सेनापतिं एतदवोच "सेनापति इमस्मिं लोके 'अहं बुद्धो अहं बुद्धो' ति बहू वदन्ति, सचे त्वं कञ्चि दस्सनाय उपसङ्कमितुकामो अहोसि, मं पुच्छेय्यासि, अहं ते युत्तट्ठानञ्चेव पेसेस्सामि, अयुत्तट्ठानतो निवारेस्सामी" ति । सो तं कथं अनुस्सरित्वा "सचे मं

1. अग्गन्तरे (स्या) ।

पेसेस्सति, गमिस्सामि । नो चे, न गमिस्सामी" ति चिन्तेत्वा येन निगण्ठो नाटपुत्तो तेनुपसङ्कमि ।

अथस्स वचनं सुत्वा निगण्ठो महापब्बतेन विय बलवसोकेन ओत्थटो "यत्थ दानिस्साहं गमनं न इच्छामि, तत्थेव गन्तुकामो जातो, हतोहमस्मी" ति अनत्तमनो हुत्वा "पटिबाहनुपायमस्स करिस्सामी" ति चिन्तेत्वा "किं पन त्वं" ति आदिमाह । एवं वदन्तो चरन्तं गोणं तुण्डे पहरन्तो विय जलमानं पदीपं निब्बापेन्तो विय भत्तभरितं पत्तं निकुज्जन्तो विय च सीहस्स उप्पन्नं पीतिं विनासेसि । **गमिकाभिसङ्खारो** ति[1] हत्थियानादीनं योजापनगन्धमालादिग्गहणवसेन पवत्तो पयोगो । **सो पटिप्पस्सम्भी**ति सो वूपसन्तो ।

दुतियम्पि खो ति दुतियवारम्पि । इमस्मिञ्च वारे बुद्धस्स वण्णं भासन्ता तुसितभवनतो पट्ठाय याव महाबोधिपल्लङ्का दसबलस्स हेट्ठा पादतलेहि उपरि केसग्गेहि परिच्छिन्दित्वा द्वत्तिंसमहापुरिसलक्खणअसीतिअनुब्यञ्जनब्यामप्पभावसेन सरीरवण्णं कथयिंसु । धम्मस्स वण्णं भासन्ता "एकपदेपि एकब्यञ्जनेपि अवक्खलितं नाम नत्थी" ति सुकथितवसेनेव धम्मगुणं कथयिंसु । संघस्स वण्णं भासन्ता "एवरूपं यससिरिविभवं पहाय सत्थु सासने पब्बजिता न कोसज्जपकतिका होन्ति, तेरससु पन धुतगुणेसु परिपूरकारिनो हुत्वा सत्तसु अनुपस्सनासु कम्मं करोन्ति, अट्ठतिंस अरम्मणविभत्तियो वळञ्जेन्ती"ति पटिपदावसेन संघगुणे कथयिंसु ।

B. 325

ततियवारे पन बुद्धस्स वण्णं भासमाना "इतिपि सो भगवा"ति सुत्तन्तपरियायेनेव बुद्धगुणे कथयिंसु, "स्वाक्खातो भगवता धम्मो" तिआदिना सुत्तन्तपरियायेनेव धम्मगुणे, "सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसंघो" तिआदिना सुत्तन्तपरियायेनेव संघगुणे च कथयिंसु । ततो सीहो चिन्तेसि "इमेसं लिच्छवीराजकुलानं ततियदिवसतो पट्ठाय बुद्धधम्मसंघगुणे कथेन्तानं मुखं नप्पहोति, अद्धा अनोमगुणसमन्नागतो सो भगवा, इमं दानि उप्पन्नं पीतिं अविजहित्वाव अहं अज्ज सम्मासम्बुद्धं पस्सिस्सामी" ति । अथस्स "किं हि मे करिस्सन्ति निगण्ठा"ति वितक्को उदपादि । तत्थ **किं हि मे करिस्सन्ती**ति किं नाम मय्हं निगण्ठा करिस्सन्ति । **अपलोकिता वा अनपलोकिता वा** ति आपुच्छिता वा अनापुच्छिता वा । न हि मे ते आपुच्छिता यानवाहनसम्पत्तिइस्सरिययसविसेसं दस्सन्ति, नापि अनापुच्छिता मारेस्सन्ति[2], अफलं एतेसं आपुच्छनं ति अधिप्पायो ।

दिवा दिवस्सा ति दिवस्स दिवा मज्झन्हिके अतिक्कन्तमत्ते । **वेसालिया निय्यासी**ति यथा हि गिम्हकाले देवे वुट्ठे उदकं सन्दमानं नदिं ओतरित्वा थोकमेव गन्त्वा तिट्ठति नप्पवत्तति, एवं सीहस्स पठमदिवसे "दसबलं पस्सिस्सामी"ति उप्पन्नाय पीतिया निगण्ठेन पटिबाहितकालो, यथा दुतियदिवसे देवे वुट्ठे उदकं सन्दमानं नदिं

1. गमियाभिसङ्खारोति (स्या) ।
2. करिस्सन्ति (स्या), हरिस्सन्ति (अं-ट्ठ-३-२११-पिट्ठे) ।

ओतरित्वा थोकं गन्त्वा वालिकापुञ्जं पहरित्वा अप्पवत्तं होति, एवं सीहस्स दुतियदिवसे "दसबलं पस्सिस्सामी"ति उप्पन्नाय पीतिया निगण्ठेन पटिबाहितकालो, यथा ततियदिवसे देवे वुट्ठे उदकं सन्दमानं नदिं ओतरित्वा पुराणपण्णसुक्ख-
B. 326 दण्डकनळकचवरादीनि परिकड्ढन्तं वालिकापुञ्जं भिन्दित्वा समुद्दनिन्नमेव होति, एवं सीहो ततियदिवसे तिण्णं वत्थूनं गुणकथं सुत्वा उप्पन्ने पीतिपामोज्जे "अफला निगण्ठा, निप्फला निगण्ठा, किं मे इमे करिस्सन्ति, गमिस्सामहं सत्थु सन्तिकं "ति गमनं अभिनीहरित्वा वेसालिया निय्यासि। निय्यन्तो च "चिरस्साहं दसबलस्स सन्तिकं गन्तुकामो जातो, न खो पन मे युत्तं अञ्ञातकवेसेन गन्तुं "ति "ये केचि दसबलस्स सन्तिकं गन्तुकामा, सब्बे निक्खमन्तू" ति घोसनं कारेत्वा पञ्च रथसतानि योजापेत्वा उत्तमरथे ठितो तेहि चेव पञ्चहि रथसतेहि महतिया च परिसाय परिवुतो गन्धपुप्फचुण्णवासादीनि गाहापेत्वा निय्यासि।

येन भगवा तेनुपसङ्कमीति आरामं पविसन्तो दूरतोव असीतिअनुब्यञ्जनब्यामप्प-भाद्वत्तिंसमहापुरिसलक्खणानि छब्बण्णा घनबुद्धरस्मियो दिस्वा "एवरूपं नाम पुरिसं एवं आसन्ने वसन्तं एत्तकं कालं नाद्दसं, वञ्चितो वतम्हि, अलाभा वत्त मे" ति चिन्तेत्वा महानिधिं दिस्वा दलिद्दपुरिसो विय सञ्जातपीतिपामोज्जो येन भगवा तेनुपसङ्कमि। **धम्मस्स चानुधम्मं ब्याकरोन्ती**ति भोता गोतमेन वुत्तकारणस्स अनुकारणं कथेन्ति। कारणवचनो हेत्थ धम्म-सद्दो "हेतुम्हि ञाणं धम्मपटिसम्भिदा"ति आदीसु[1] विय। **कारणं** ति चेत्थ तथापवत्तस्स सद्दस्स अत्थो अधिप्पेतो तस्स पवत्तिहेतु-भावतो। अत्थप्पयुत्तो हि सद्दप्पयोगो। अनुकारणं ति च सो[2] एवं परेहि तथा वुच्चमानो। **सहधम्मिको वादानुवादो** ति परेहि वुत्तकारणेन सकारणो हुत्वा तुम्हाकं वादो वा ततो परं तस्स अनुवादो वा कोचि अप्पमत्तकोपि विञ्ञूहि गरहितब्बं ठानं कारणं न आगच्छति। इदं वुत्तं होति–किं सब्बाकारेनपि तव वादे गारय्हकारणं नत्थीति। **अनब्भक्खातुकामा** ति न अभूतेन वत्तुकामा।

२९१-२९२॥ **अत्थि सीह परियायो** ति आदीनं अत्थो वेरञ्जकण्डे[3] आगतनयेनेव वेदितब्बो। **परमेन अस्सासेना** ति चतुमग्गचतुफलसङ्खातेन उत्तमअस्सासेन। **अस्सासाय धम्मं देसेती** ति अस्सासनत्थाय सन्थम्भनत्थाय धम्मं देसेति। इति भगवा अट्ठहङ्गेहि सीहसेनापतिस्स धम्मं देसेति।

B. 327 २९३॥ **अनुविच्चकारं** ति अनुविदित्वा चिन्तेत्वा तुलयित्वा कातब्बं करोहीति वुत्तं होति। **साधु होती**ति सुन्दरो होति। तुम्हादिसस्मिञ्हि मं दिस्वा मं सरणं

1. अभि-२-३०७-पिट्ठे।
2. यो-(क)।
3. वि-ट्ठ-१-१०३-पिट्ठे।

गच्छन्ते निगण्ठं दिस्वा निगण्ठं सरणं गच्छन्ते "किं अयं सीहो दिट्ठदिट्ठमेव सरणं गच्छती"ति गरहा उप्पज्जति, तस्मा अनुविच्चकारो तुम्हादिसानं साधूति दस्सेति। **पटाकं परिहरेय्युं** ति ते किर एवरूपं सावकं लभित्वा "असुको नाम राजा वा राजमहामत्तो वा सेट्ठि वा अम्हाकं सरणं गतो सावको जातो"ति पटाकं उक्खिपित्वा नगरे घोसेन्ता आहिण्डन्ति। कस्मा ? "एवं नो महन्तभावो आवि भविस्सती"ति च, सचे पनस्स "किमहं एते सरणं गतो" ति विप्पटिसारो उप्पज्जेय्य, तम्पि सो "एतेसं मे सरणगतभावं बहू जानन्ति, दुक्करं दानि पटिनिवत्तितुं" ति विनोदेत्वा न पटिक्कमिस्सतीति च। तेनाह "पटाकं परेहरेय्युं" ति। **ओपानभूतं** ति पटियत्तउदपानो विय ठितं। कुलं ति तव निवेसनं। **दातब्बं मञ्ञेय्यासी**ति पुब्बेपि दसपि वीसतिपि सट्ठिपि जने आगते दिस्वा नत्थीति अवत्वा देसि, इदानि मं सरणं गतकारणमत्तेनेव मा इमेसं देय्यधम्मं उपच्छिन्दित्थ, सम्पत्तानञ्हि दातब्बमेवाति ओवदति। **सुतं मे तं भन्ते** ति कुतो सुतं? निगण्ठानं सन्तिका। ते किर कुलघरेसु एवं पकासेन्ति "मयं यस्स कस्सचि सम्पत्तस्स दातब्बं ति वदाम, समणो पन गोतमो 'मय्हमेव दानं दातब्बं......पे॰.....न अञ्ञेसं सावकानं दिन्नं महप्फलं" ति एवं वदती"ति। तं सन्धाय अयं "सुतं मे तं" ति आदिमाह।

२९४॥ **पवत्तमंसं** ति पकतिया पवत्तं कप्पियमंसं, मूलं गहेत्वा अन्तरापणे परियेसाहीति अधिप्पायो। **सम्बहुला निगण्ठा** ति पञ्चसत्तमत्ता निगण्ठा। **थूलं पसुं** ति थूलं महासरीरं गोकण्णमहिंससूकरसङ्खातं पसुं। **उद्दिस्सकतं** ति अत्तानं उद्दिसित्वा कतं, मारितं ति अत्थो। **पटिच्चकम्मं** ति एत्थ **कम्म**-सद्दो कम्मसाधनो अतीतकालिकोति आह **"अत्तानं पटिच्च कतं"** ति। निमित्तकम्मस्सेतं अधिवचनं "पटिच्च कम्मं फुसती" ति आदीसु[1] विय। **निमित्तकम्मस्सा** ति निमित्त भावेन लद्धब्बकम्मस्स, न करणकारापनवसेन। **पटिच्चकम्मं एत्थ अत्थी**ति मंसं पटिच्चकम्मं यथा "बुद्धं एतस्स अत्थीति बुद्धो" ति। अथ वा पटिच्च कम्मं फुसतीति पाठसेसो दट्ठब्बो, सायं एतं मंसं पटिच्च तं पाणवधककम्मं फुसतीति अत्थो। तञ्हि अकुसलं उपड्ढं दायकस्स, उपड्ढं पटिग्गाहकस्स होतीति नेसं लद्धि। **उपकण्णके**ति कण्णमूले। **अलं** ति पटिक्खेपवचनं, होतु किं इमिनाति अत्थो। न च पन ते ति एते आयस्मन्ता दीघरत्तं अवण्णकामा हुत्वा अवण्णं भासन्तापि अब्भाचिक्खन्ता न जिरिदन्ति,[2] अब्भक्खानस्स अन्तं न गच्छन्तीति अत्थो। अथ वा लज्जनत्थे इदं **जिरिदन्ती**ति पदं दट्ठब्बं, न लज्जन्तीति अत्थो।

B. 328

सीहसेनापतिवत्थुकथावण्णना निट्ठिता।

---

1. खु-५-१०२-पिट्ठे जातके।
2. न जीरन्ति (स्या)।

कप्पियभूमिअनुजाननकथावण्णना

२९५॥ **अभिलापमत्तं** ति देसनामत्तं। **आमिसखादनत्थाया** ति तत्थ तत्थ छड्डितस्स आमिसस्स खादनत्थाय। **अनुप्पगेयेवा** ति पातोयेव। **ओरवसद्दं** ति महासद्दं। **तं पन अवत्वापीति** अन्धकट्ठकथायं वुत्तनयेन अवत्वापि। **पि**–सद्देन तथा वचनम्पि अनुजानाति। **अट्ठकथासु वुत्तनयेना** ति सेसअट्ठकथासु वुत्तनयेन। "कप्पिय कुटिं करोमा' ति वा, 'कप्पियकुटी'ति वा वुत्ते साधारणलक्खणं" ति सब्बअट्ठकथासु वुत्तउस्सावनं ति काकुटिकरणलक्खणं। **चयं** ति अधिट्ठानं। **यतो पट्ठाया** ति यतो इट्ठकतो सिलतो मत्तिकापिण्डतो वा पट्ठाय। **पठमिट्ठकादीनं हेट्ठा न वट्टन्ती**ति भित्तिया पठमिट्ठकादीनं हेट्ठा भूमियं पतिट्ठापियमाना इट्ठकादयो भूमिगतिकत्ता "कप्पियकुटिं करोमा' ति वत्वा पतिट्ठापेतुं न वट्टन्ति। यदि एवं भूमियं निखणित्वा पतिट्ठापियमाना थम्भा कस्मा तथा वत्वा पतिट्ठापेतुं वट्टन्तीति आह "थम्भा पन......पे॰.....**वट्टन्ती**" ति। **संघसन्तकमेवा**ति वासत्थाय कतं संघिकसेनासनं सन्धाय वदति। **भिक्खुसन्तकं** ति वासत्थाय एव कतं भिक्खुस्स पुग्गलिकसेनासनं। **मुखसन्निधी**ति इमिना अन्तोवुत्थदुक्कटमेव दीपितं।

कप्पियभूमिअनुजाननकथावण्णना निट्ठिता।

B.329

केणियजटिलवत्थुकथावण्णना

३००॥ **येन आपणं तदवसरी**ति आदीसु **आपणं** ति एकस्स निगमस्सेतं अधिवचनं। तस्मिं किर निगमे वीसति आपणमुखसहस्सानि विभत्तानि अहेसुं। इति सो आपणानं उस्सन्नत्ता "आपणं"'त्वेव सङ्खं गतो। तस्स पन निगमस्स अविदूरे नदीतीरे घनच्छायो रमणीयभूमिभागो महावनसण्डो, तस्मिं भगवा विहरति। **केणियो** ति तस्स नामं। **जटिलो** ति आहरिमजटाधरो तापसो। सो किर ब्राह्मणमहासालो, धनरक्खणत्थाय पन तापसपब्बज्जं समादाय रञ्ञो पण्णाकारं दत्वा भूमिभागं गहेत्वा तत्थ अस्समं कारेत्वा पञ्चहि सकटसतेहि वणिज्जं पयोजेत्वा कुलसहस्सस्स निस्सयो हुत्वा वसति। अस्समेपि चस्स एको तालरुक्खो दिवसे दिवसे एकं सोवण्णमयं फलं मुञ्चतीति वदन्ति। सो दिवा कासावानि धारेति, जटा च बन्धति, रत्तिं कामसम्पत्ति अनुभवति।

पवत्तारो ति[1] पवत्तयितारो, पावचनवसेन वत्तारो ति अत्थो। **येसं** ति येसं सन्तकं। **मन्तपदं** ति मन्तसद्दे[2] बहिकत्वा रहो भासितब्बट्ठेन मन्ता एव तं-तंअत्थपटिपत्तिहेतुताय पदं ति मन्तपदं, वेवचनं[3]। **गीतं** ति अट्ठकादीहि दसहि पोराणब्राह्मणेहि उदात्तानुदात्तादिसरसम्पत्तिवसेन सज्झायितं। **पवुत्तं** ति पावचनवसेन अञ्ञेसं वुत्तं, वाचितं ति अत्थो। समिहितं ति समुपब्यूळ्हं[4] रासिकतं, इरुवेद-यजुवेदसामवेदादिवसेन तत्थापि पच्चेकं मन्तब्राह्मणादिवसेन सज्झायनवाचकादि-वसेन[5] च पिण्डं कत्वा ठपितं ति अत्थो। **तदनुगायन्ती**ति एतरहि ब्राह्मणा तं तेहि पुब्बे गीतं अनुगायन्ति अनुसज्झायन्ति। **तदनुभासन्ती**ति तं अनुभासन्ति, इदं पुरिमस्सेव वेवचनं। **भासितमनुभासन्तीति** तेहि भासितं सज्झायितं अनुसज्झायन्ति। वाचिकमनुवाचेन्तीति तेहि अञ्ञेसं वाचितं अनुवाचेन्ति। **सेय्यथिदं** ति ते कतमेति अत्थो। **अट्ठको**ति आदीनि तेसं नामानि। ते किर दिब्बचक्खुपरिभण्डेन यथा-कम्मूपगञाणेन सत्तानं कम्मस्सकतादिं पुब्बेनिवासञाणेन अतीतकप्पे ब्राह्मणानं मन्तज्झेनविधिञ्च ओलोकेत्वा परूपघातं अकत्वा कस्सपसम्मासम्बुद्धस्स भगवतो वट्टसन्निस्सितेन वचनेन सह संसन्दित्वा मन्ते गन्थेसुं। अपरापरे पन ओक्काक-राजकालादीसु उप्पन्नब्राह्मणा पाणातिपातादीनि पक्खिपित्वा तयो वेदे भिन्दित्वा बुद्धवचनेन सद्धिं विरुद्धे अकंसु। रत्तिभोजनं रत्ति, ततो उपरताति **रत्तूपरता**। अतिक्कन्ते मज्झन्हिके याव सूरियत्थङ्गमना भोजनं विकालभोजनं नाम, ततो विरतत्ता **विरता विकालभोजना**। **पटियादापेत्वा** ति सप्पिमधुसक्करादीहि चेव मरिचेहि च सुसङ्खतं पानं पटियादापेत्वा।

B. 330

"महा खो केणिय भिक्खुसंघो" ति कस्मा भगवा पुनप्पुनं पटिक्खिपि ? तित्थियानं पटिक्खेपपसन्नताय। तित्थिया हि "अहो वतायं अप्पिच्छो, यो निमन्तियमानोपि न सादियती"ति उपनिमन्तियमानस्स पटिक्खेपे पसीदन्तीति केचि, अकारणञ्चेतं। नत्थि बुद्धानं पच्चयहेतु एवरूपं कोहञ्ञं, अयं पन अड्ढतेलसानि भिक्खुसतानि दिस्वा एत्तकानंयेव भिक्खं पटियादेस्सति, स्वेव सेलो ब्राह्मणो तीहि पुरिससतेहि सद्धिं पब्बजिस्सति, अयुत्तं खो पन नवके अञ्ञतो पेसेत्वा इमेहेव सद्धिं गन्तुं, इमे वा अञ्ञतो पेसेत्वा नवकेहि सद्धिं गन्तुं। अथापि सब्बेव गहेत्वा गमिस्सामि, भिक्खाहारो नप्पहोस्सति। ततो भिक्खूसु पिण्डाय चरन्तेसु मनुस्सा उज्झायिस्सन्ति "चिरस्सम्पि केणियो समणं गोतमं निमन्तेत्वा यापनमत्तं दातुं नासक्खी" ति, सयञ्च

---

1. दी-ट्ठ-१-२४४, म-ट्ठ-३-२९०, अं-ट्ठ-३-६५, पिट्ठादीसुपि तट्टीकासु च पस्सितब्बं।
2. सुद्धे (स्या), सुद्धे (मज्झिमपण्णासके चङ्कीसुत्तटीकायं)।
3. वेदवेवचनं (स्या)।
4. समुपब्बुळ्हं (स्या)।
5. अज्झायानुवाचिकादिवसेन (स्या)।

विप्पटिसारी भविस्सति । पटिक्खेपे पन कते "समणो गोतमो पुनप्पुनं 'त्वञ्च ब्राह्मणेसु अतिप्पसन्नो' ति ब्राह्मणानं नामं गण्हाती" ति चिन्तेत्वा ब्राह्मणेपि निमन्तेतुकामो भविस्सति, ततो ब्राह्मणे पाटियेक्कं निमन्तेस्सति, ते तेन निमन्तिता भिक्खू हुत्वा भुञ्जिस्सन्ति, एवमस्स सद्धा अनुरक्खिता भविस्सतीति पुनप्पुनं पटिक्खिपि । **किञ्चापि खो भो गोतमा** ति इमिना इदं दीपेति "भो गोतम किं जातं, यदि अहं ब्राह्मणेसु अभिप्पसन्नो, अधिवासेतु भवं गोतमो, अहं ब्राह्मणानम्पि दातुं सक्कोमि तुम्हाकम्पी" ति । **ठपेत्वा धञ्ञफलरसं** ति एत्थ तण्डुलधोवनोदकम्पि धञ्ञरसोयेवाति वदन्ति । **अनुजानामि भिक्खवे उच्छुरसं** ति एत्थ निक्कसटो उच्छुरसो सत्ताहकालिकोति वेदितब्बं ।

B. 331 **इमाहि गाथाही**ति[1] इमाहि केणियस्स चित्तानुकूलाहि गाथाहि । तत्थ अग्गिपरिचरियं विना ब्राह्मणानं यञ्ञाभावतो **"अग्गिहुत्तमुखा यञ्ञा"** ति वुत्तं, अग्गिहुत्तसेट्ठा अग्गिजुहनप्पधानाति अत्थो । ब्राह्मणा हि "अग्गिमुखा देवा" ति अग्गिजुहनपुब्बकं यञ्ञं विदहन्ति । वेदे सज्झायन्तेहि पठमं सज्झायितब्बतो सावित्ती "छन्दसो मुखं" ति वुत्ता, सावित्ती वेदस्स पुब्बङ्गमाति अत्थो तंपुब्बकत्ता वेदसवनस्स[2] । मनुस्सानं सेट्ठभावतो राजा "मुखं" ति वुत्तो । ओगाहन्तीनं नदीनं आधारभावतो गन्तब्बट्ठानभावेन पटिसरणतो च सागरो "मुखं" ति वुत्तो । चन्दसमायोगेन" अज्ज कत्तिका, अज्ज रोहिणी" ति सञ्ञायनतो नक्खत्तानि अभिभवित्वा आलोककरणतो नक्खत्तेहि अतिविसेससोम्मभावतो[3] च "नक्खत्तानं मुखं चन्दो" ति वुत्तं । "दीपसिखा अग्गिजाला असनिविचक्कं" ति एवमादीनं तपन्तानं विज्जुलतानं अग्गत्ता आदिच्चो "तपतं मुखं" ति वुत्तो । दक्खिणेय्यानं पन अग्गत्ता विसेसेन तस्मिं समये बुद्धप्पमुखं संघं सन्धाय "पुञ्ञं आकङ्खमानानं, संघो एव यजतं मुखं" ति वुत्तं । तेन संघो पुञ्ञस्स आयमुखं अग्गदक्खिणेय्यभावेनाति दस्सेति ।

केणियजटिलवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

रोजमल्लवत्थुकथावण्णना

३०१॥ रोजवत्थुम्हि **विहारो** ति गन्धकुटिं सन्धाय आहंसु । **अतरमानो** ति अतुरन्तो, सणिकं पदप्पमाणट्ठाने पदं निक्खिपन्तो वत्तं कत्वा सुसम्मट्ठं मुत्तादलसिन्दुवारसन्थरसदिसं वालिकं अविनासेन्तोति अत्थो । **आळिन्दं** ति पमुखं ।

---

1. म-ट्ठ-३-२७८, सुत्तनिपात-ट्ठ-२-१७७-पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं ।
2. वेदठपनस्स (स्या) ।
3. सविसेसचारुतरभावतो (स्या) ।

उक्कासित्वा ति उक्कासितसद्दं कत्वा । **अग्गळं** ति कवाटं । **आकोटेही**ति अग्गनखेन ईसकं कुञ्चिकछिद्दसमीपे कोटेहीति वुत्तं होति । द्वारं किर अतिउपरि अमनुस्सा, अतिहेट्ठा तिरच्छानजातिका कोटेन्ति, तथा अकोटेत्वा मज्झे छिद्दसमीपे मनुस्सा कोटेन्ति, इदं द्वारकोटकवत्तं ति दीपेन्ता वदन्ति । **विवरि भगवा द्वारं** ति न भगवा B. 332 उट्ठाय द्वारं विवरि, विवरतूति[1] पन हत्थं पसारेसि । ततो "भगवा तुम्हेहि अनेकासु कप्पकोटीसु दानं ददमानेहि न सहत्था द्वारविवरणकम्मं कतं" ति सयमेव द्वारं विवटं । तं पन यस्मा भगवतो मनेन विवटं, तस्मा "विवरि भगवा द्वारं" ति वुत्तं ।

रोजमल्लवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

वुड्ढपब्बजितवत्थुकथावण्णना

३०३॥ आतुमावत्थुम्हि **अञ्ञतरो वुड्ढपब्बजितो** ति सुभद्दो नाम अञ्ञतरो भिक्खु वुड्ढकाले पब्बजितत्ता "वुड्ढपब्बजितो" ति वुत्तो । **द्वे दारका** ति सामणेरभूमियं ठिता द्वे पुत्ता । **नाळियावापकेना** ति नाळियो चेव थविकाय च । **संहरिंसू** ति यस्मा मनुस्सा ते दारके मञ्जुभाणिने पटिभानवन्ते दिस्वा कारेतुकामापि अकारेतुकामापि कारेन्तियेव, कतकाले च" किं गण्हिस्सथ ताता" ति पुच्छन्ति । ते वदन्ति "न अम्हाकं अञ्ञेन केनचि अत्थो, पिता पन नो भगवतो आगतकाले यागुदानं कातुकामो" ति । तं सुत्वा मनुस्सा अपरिगणेत्वाव यं ते सक्कोन्ति हरितुं, सब्बं देन्ति । यम्पि न सक्कोन्ति, मनुस्सेहि पेसेन्ति । तस्मा ते दारका बहुं लोणम्पि तेलम्पि सप्पिम्पि तण्डुलम्पि खादनीयम्पि संहरिंसु ।

आतुमायं विहरतीति आतुमं निस्साय विहरति । **भुसागारे** ति भुसमये अगारके । तत्थ किर महन्तं पलालपुञ्जं अब्भन्तरतो पलालं निक्कड्ढित्वा सालासदिसं पब्बजितानं वसनयोग्गट्ठानसदिसं कतं, तदा भगवा तत्थ वसि । अथ भगवति आतुमं आगन्त्वा भुसागारकं पविट्ठे सुभद्दो सायन्हसमयं गामद्वारं गन्त्वा मनुस्से आमन्तेसि "उपासका नाहं तुम्हाकं सन्तिका अञ्ञं किञ्चि पच्चासीसामि, मय्हं दारकेहि आनीततेलादीनियेव संघस्स पहोन्ति, हत्थकम्ममत्तं मे देथा" ति । किं भन्ते करोमाति । "इदञ्चिदञ्च गण्हथा" ति सब्बूपकरणानि गाहेत्वा विहारे उद्धनानि कारेत्वा एकं काळकं कासावं निवासेत्वा तादिसमेव पारुपित्वा "इदं करोथ, इदं करोथा" ति सब्बरत्तिं विचारेन्तो सतसहस्सं विस्सज्जेत्वा भोज्जयागुञ्च मधुगोळकञ्च B. 333 पटियादापेसि । **भोज्जयागु** नाम पठमं भुञ्जित्वा पातब्बयागु, तत्थ सप्पिमधुफाणित-

---

1. विवरियतूति (स्या, क) अं-ट्ठ-३-३०७-पिट्ठे पन पस्सितब्बं ।

मच्छमंसपुप्फफलरसादि यंकिञ्चि खादनीयं नाम, सब्बं पविसति, कीळितुकामानं सीसमक्खनयोग्गा होति सुगन्धगन्धा।

अथ भगवा कालस्सेव सरीरपटिजग्गनं कत्वा भिक्खुसंघपरिवुतो पिण्डाय चरितुं आतुमगामनगराभिमुखो पायासि। मनुस्सा तस्स आरोचेसुं "भगवा पिण्डाय गामं पविसति, तया कस्स यागु पटियादिता" ति। सो यथानिवत्थपारुतेहेव तेहि काळककासावेहि एकेन हत्थेन दब्बिञ्च कटच्छुञ्च गहेत्वा ब्रह्मा विय दक्खिण-जाणुमण्डलं भूमियं पतिट्ठापेत्वा वन्दित्वा "पटिग्गण्हातु मे भन्ते भगवा यागुं"ति आह। तेन वुत्तं **"अथ खो सो वुड्ढपब्बजितो तस्सा रत्तिया अच्चयेन बहुतरं यागुं पटियादापेत्वा भगवतो उपनामेसी"ति। जानन्तापि तथागता पुच्छन्तीति** आदि वुत्तनयमेव। **कुतायं** ति कुतो अयं। सेसमेत्थ उत्तानमेव।

३०४॥ **दसभागं दत्वा** ति दसमभागं दत्वा। तेनेवाह **"दस कोट्ठासे कत्वा एको कोट्ठासो भूमिसामिकानं दातब्बो"** ति।

वुड्ढपब्बजितवत्थुकथावण्णना निट्ठिता।

चतुमहापदेसकथावण्णना

३०५॥ **परिमद्दन्ता** ति उपपरिक्खन्ता। पत्तुण्णदेसे सञ्जातवत्थं **पत्तुण्णं**। कोसेय्यविसेसोति हि अभिधानकोसे वुत्तं। चीनदेसे सोमारदेसे च सञ्जातवत्थानि **चीनसोमारपटानि**। पत्तुण्णादीनि तीणि कोसेय्यस्स अनुलोमानि पाणकेहि कतसुत्त-मयत्ता। **इद्धिमयिकं** एहिभिक्खूनं पुञ्ञिद्धिया निब्बत्तचीवरं। तं खोमादीनं अञ्ञतरं होतीति तेसंयेव अनुलोमं। देवताहि दिन्नचीवरं **देवदत्तियं**। तं कप्परुक्खे निब्बत्तं जालिनीदेवकञ्ञाय अनुरुद्धत्थेरस्स दिन्नवत्थसदिसं। तम्पि खोमादीनञ्ञेव अनुलोमं होति तेसु अञ्ञतरभावतो। **द्वे पटा देसनामेनेव वुत्ता** ति तेसं सरूपदस्सनपरमेतं, B. 334 नाञ्ञं निवत्तनपरं पत्तुण्णपटस्सपि देसनामेनेव वुत्तत्ता। **तुम्बा** ति भाजनानि। **फलतुम्बो** ति लाबुआदि। **उदकतुम्बो** ति उदकुक्खिपनककुटको॥ **किलञ्जच्छत्तं** ति वेळुविलीवेहि वायित्वा कतछत्तं। **सम्भिन्नरसं** ति सम्मिस्सितरसं। **पानकं पटिग्गहितं होती**ति अम्बपानादिपानकं पटिग्गहितं होति, तं विकालेपि कप्पति असम्भिन्नरसत्ता। तेन **तदहुपटिग्गहितेन सद्धिं** ति तेन सत्ताहकालिकेन तदहुपटिग्गहितेन सद्धिं। सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेव।

चतुमहापदेसकथावण्णना निट्ठिता।

भेसज्जक्खन्धकवण्णना निट्ठिता।

---

७. कथिनक्खन्धक

कथिनानुजाननकथावण्णना

३०६॥ कथिनक्खन्धके **सीसवसेना** ति पधानङ्गवसेन। "कथिनं ति[1] पञ्चानिसंसे अन्तोकरणसमत्थताय थिरन्ति अत्थो" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। **"सो नेसं भविस्सती" ति युज्जती** ति "सो तुम्हाकं" ति अवत्वा "नेसं" ति वचनं युज्जति। ये अत्थतकथिना ति न केवलं तुम्हकमेव, ये अञ्ञेपि अत्थतकथिना, तेसम्पि भविस्सतीति अत्थो। **अनामन्तेत्वा चरणं** ति चारित्तसिक्खापदे वुत्तनयेन अनापुच्छित्वा कुलेसु चरणं। **मतकचीवरं** ति मतस्स सन्तकं चीवरं। **तत्रुप्पादेन आभतं** ति विहारसन्तकेन खेत्तवत्थुआदिना आनीतं।

पठमपवारणाय पवारिता ति इदं वस्सच्छेदं अकत्वा वस्संवुत्थभावसन्दस्सनत्थं वुत्तं अन्तरायेन अप्पवारितानम्पि वुत्थवस्सानं कथिनत्थारसम्भवतो। तेनेव "अप्पवारिता वा" ति अवत्वा "छिन्नवस्सा वा पच्छिमिकाय उपगता वा न लभन्ती"ति एत्तकमेव वुत्तं। **अञ्ञस्मिं विहारे वुत्थवस्सापि न लभन्ती**ति नानासीमाय अञ्ञस्मिं विहारे वुत्थवस्सा इमस्मिं विहारे कथिनत्थारं न लभन्तीति अत्थो। **खलिमक्खितसाटको** ति अहतवत्थं सन्धाय वुत्तं। **दानकम्मवाचा**ति कथिनदुस्सदानकम्मवाचा। **अकातुं न लभती**ति इमिना अनादरियेन अकरोन्तस्स दुक्कटं ति दीपेति। **कम्मवाचा पन एकायेव वट्टती**ति कथिनत्थारसाटकस्स दानकाले वुत्ता एकायेव कम्मवाचा वट्टति। पुन तस्स अञ्ञस्मिं वत्थे दिय्यमाने कम्मवाचाय दातब्बकिच्चं नत्थि, अपलोकनमेव अलं ति अधिप्पायो।

३०८॥ **महाभूमिकं** ति महाविसयं, चतुवीसतिआकारवन्तताय महावित्थारिकं ति वुत्तं होति। **पञ्चकं** ति पञ्चखण्डं। एस नयो सेसेसुपि। **पठमचिमिलिका** ति कथिनवत्थतो अञ्ञा अत्तनो पकतिचिमिलिका। "कुच्छिचिमिलिकं कत्वा सिब्बितमत्तेना ति थिरजिण्णानं चिमिलिकानं एकतो कत्वा सिब्बनस्सेतं अधिवचनं" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। महापच्चरियं कुरुन्दियञ्च "वुत्तवचननिदस्सनं ब्यञ्जने एव भेदो, अत्थे नत्थीति दस्सनत्थं कतं" ति वदन्ति। **पिट्ठिअनुवातारोपनमत्तेना** ति दीघतो अनुवातस्स आरोपनमत्तेन। **कुच्छिअनुवातारोपनमत्तेना** ति पुथुलतो अनुवातस्स आरोपनमत्तेन। **सारुप्पं होती**ति समणसारुप्पं होति। **रत्तिनिस्सग्गियेना** ति रत्तिअतिक्कन्तेन।

कथिनानुजाननकथावण्णना निट्ठिता

---

1. कठिनं ति (स्या)।

आदायसत्तकादिकथावण्णना

३११॥ **अयं** ति आसावच्छेदिको कथिनुद्धारो । **इध न वुत्तो** ति पाळियं मातिकापदभाजने सवनन्तिकानन्तरं न वुत्तो । तत्था ति तस्मिं सीमातिक्कन्तिके कथिनुद्धारे । "सीमातिक्कन्तिको नाम चीवरकालसीमातिक्कन्तिको" ति **केनचि** वुत्तं । बहिसीमायं चीवरकालसमयस्स अतिक्कन्तत्ता सीमातिक्कन्तिको" ति अयं अम्हाकं खन्ति । सहुब्भारे "सो कतचीवरो" ति पाठो दिस्सति, एवञ्च सति चीवरपलिबोधो पठमं छिज्जतीति विञ्ञायति, इध पन परिवारपाळियञ्च "द्वे पलिबोधो अपुब्बं अचरिमं छिज्जन्ती" ति[1] वचनतो तं न समेति, तस्मा वीमंसितब्बमेत्थ कारणं ।

३१२॥ "समादायवारो आदायवारसदिसो, उपसग्गमत्तमेत्थ विसेसो" ति **गण्ठि-पदेसु** वुत्तं । केचि पन "सब्बं अत्तनो परिक्खारं अनवसेसेत्वा पक्कमन्तो "समादाय पक्कमती"ति वुच्चंती"ति वदन्ति । पुन समादायवारेपि तेयेव दस्सिताति सम्बन्धो । विप्पकतचीवरे पक्कमनन्तिकस्स कथिनुद्धारस्स असम्भवतो **"यथासम्भवं"** ति वुत्तं । पक्कमनन्तिको हि कथिनुद्धारो निट्ठितचीवरस्सेव वसेन वुत्तो "भिक्खु अत्थतकथिनो कतचीवरं आदाय पक्कमती" ति वुत्तत्ता, तस्मा सो विप्पकतचीवरो न सम्भवतीति छळेव उब्भारो तत्थ दस्सिता ।

तत्रायं आदितो पट्ठाय वारविभावना–आदायवारा सत्त, तथा समादायवाराति द्वे सत्तकवारा, ततो पक्कमनन्तिकं वज्जेत्वा, विप्पकतचीवरस्स आदायसमादायवार-वसेन द्वे छक्कवारा, ततो परं निट्ठानसन्निट्ठाननासनन्तिकानं वसेन तीणि तिकानि दस्सितानि । तत्थ पठमत्तिकं अन्तोसीमायं "पच्चेस्सं न पच्चेस्सं" ति इमं विधिं अनामसित्वा बहिसीमायमेव "न पच्चेस्सं" ति पवत्तं, तस्मा पक्कमनन्तिक-सीमातिक्कन्तिकसउब्भारा तत्थ न युज्जन्ति । दुतियत्तिकं अन्तोसीमायं "न पच्चेस्सं" ति पवत्तं । ततियत्तिकं **अनधिट्ठित**–पदेन विसेसेत्वा पवत्तं, अत्थतो पठमत्तिकेन समेति । अनधिट्ठितेना ति च "पच्चेस्सं न पच्चेस्सं" ति एवं अनधिट्ठितेन, अनियमितेनाति अत्थो । ततियत्तिकानन्तरं चतुत्थत्तिकं सम्भवन्तं अन्तोसीमायं "पच्चेस्सं" ति वचनविसेसेन सम्भवति । तथा च योजियमानं इतरेहि सवनन्तिकादीहि अविरुद्धं होतीति चतुत्थत्तिकं अहुत्वा छक्कं जातं ति वेदितब्बं । एवं तीणि तिकानि एकं छक्कञ्चाति पठमं पन्नरसकं वेदितब्बं ।

३१६-३२०॥ ततो इदमेव पन्नरसकं उपसग्गविसेसेन दुतियं समादायपन्नरसकं नाम कतं । पुन "विप्पकतचीवरं आदाया" ति ततियं पन्नरसकं "समादाया" ति चतुत्थं पन्नरसकं दस्सितं ति एवं चत्तारि पन्नरसकानि वेदितब्बानि । तत्थ पठमदुतियेसु पन्नरसकेसु सब्बेन सब्बं अकतचीवरं अधिप्पेतं, इतरेसु द्वीसु विप्पकतं ति वेदितब्बं ।

---

1. वि. ५-२१० पिट्ठे ।

ततो परं "चीवरासाय पक्कमती"ति आदिना नयेन निट्ठानसन्निट्ठाननासन-आसावच्छेदिकवसेन एको वारो ति इदमेकं चतुक्कं जातं, तस्मा पुब्बे वुत्तानि तिकानि आसावच्छेदिकानि तीणि च तिकानीति एतं अनासायद्वादसकं ति[1] वेदितब्बं । तदनन्तरे आसायद्वादसके किञ्चापि पठमं द्वादसकं लब्भति, तथापि तं निब्बिसेसंति तमेकं द्वादसकं अवुत्तसिद्धं[2] कत्वा विसेसतो दस्सेतुं आदितो पट्ठाय "अन्तोसीमायं पच्चेस्सं" ति वुत्तं । तं दुतियचतुक्के "सो बहिसीमगतो सुणाती"ति आदिवचनस्स ततियचतुक्के सवनन्तिकादीनञ्च ओकासकरणत्थं ति वेदितब्बं । इदं पन द्वादसकं अनासायवसेनपि लब्भमानं इमिना अवुत्तसिद्धं[3] कत्वा न दस्सितं ति वेदितब्बं । एवमेत्थ द्वे द्वादसकानि उद्धरितब्बानि । करणीयद्वादसकेपि यथादस्सितं अनासायद्वादसकं अवुत्तसिद्धं आसायद्वादसकञ्चाति द्वे द्वादसकानि उद्धरितब्बानि ।

३२१-३२२॥ यस्मा दिसंगमिकनवके "दिसंगमिको पक्कमती" ति वचनेनेव "न पच्चेस्सं" ति इदं अवुत्तसिद्धमेव, तस्मा तं न वुत्तं । एत्तावता च आवासपलि- B. 338 बोधाभावो दस्सितो । **चीवरपटिवीसं अपविलायमानो** ति इमिना चीवरपलिबोध-समङ्गितमस्स दस्सेति । तत्थ **चीवरपटिवीसं** ति अत्तनो पत्तब्बचीवरभागं **अपविलाय-मानो** ति आकङ्खमानो । तस्स चीवरलाभे सति वस्संवुत्थावासे निट्ठानसन्निट्ठान-नासनन्तिकानं वसेन एकं तिकं, तेसंयेव वसेन अन्तरामग्गे एकं, गतट्ठाने एकंति तिण्णं तिकानं वसेन एकं नवकं वेदितब्बं ।

३२४॥ ततो परं निट्ठानसन्निट्ठाननासन्तिकसीमातिक्कन्तिकसउभारानं वसेन फासुविहारपञ्चकं वुत्तं । सेसमेत्थ पाळितो अट्ठकथातो च सुविञ्ञेय्यमेव ।

आदायसत्तकादिकथावण्णना निट्ठिता ।

कथिनक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

---

1. आसायद्वादसकं–(स्या) ।
2. वुत्तसिद्धं (क) ।
3. वुत्तसिद्धं (स्या, क) ।

B. 339

८. चीवरक्खन्धक

जीवकवत्थुकथावण्णना

३२९-३३०॥ चीवरक्खन्धके **कम्मविपाकं** ति कम्मजरोगं । **संयमस्सा** ति आनिसंसस्स, उपयोगत्थे चेतं सामिवचनं ।

पज्जोतराजवत्थुकथादिवण्णना

३३४-३३६॥ **विच्छिकस्स जातो** ति तस्स किर मातुया उतुसमये सयनगताय विच्छिको नाभिप्पदेसं आरुळ्हो, सा तस्स सम्फस्सेन गब्भं गण्हि । तं सन्धाय वुत्तं "विच्छिकस्स जातो" ति । **उस्सन्नदोसो**[1] ति सञ्चितपित्तादिदोसो[2] ।

वरयाचनकथावण्णना

३३७॥ **इतरीतरेना** ति इतरेन इतरेन । इतर–सद्दो पन अनियमवचनो[3] द्विक्खत्तुं वुच्चमानो यंकिञ्चि–सद्देहि समानत्थो होतीति वुत्तं **"अप्पग्घेनपि महग्घेनपि येन केनची"**ति । **महापिट्ठियकोजवं** ति हत्थिपिट्ठीसु अत्थरितब्बताय महापिट्ठियं ति लद्धसमञ्ञं चतुरङ्गुलपुप्फं कोजवं ।

कम्बलानुजाननादिकथावण्णना

३४०॥ **उपचारे** ति सुसानस्स आसन्ने पदेसे । **छड्डेत्वा गता** ति किञ्चि अवत्वायेव छड्डेत्वा गता । **सो एव सामी**ति अकताय कतिकाय येन गहितं, सोव सामी ।

चीवरपटिग्गाहकसम्मुतिआदिकथावण्णना

३४२-३४३॥ **धुरविहारट्ठाने** ति विहारद्वारस्स सम्मुखट्ठाने । **विहारमज्झेयेव सम्मन्नितब्बं** ति सब्बेसं जाननत्थाय विहारमज्झेयेव निसिन्नेहि सम्मन्नितब्बं । **तुलाभूतो**ति तुलासदिसो । **वण्णावण्णं कत्वा** ति सब्बकोट्ठासे अग्घतो समके कत्वा । तेनेवाह **"समेपटिवीसे ठपेत्वा"** ति । इदं ति सामणेरानं उपड्ढपटिवीसस्स दानं । B. 340 **फातिकम्मं** ति सम्मुञ्जनीबन्धनादिहत्थकम्मं । उक्कुट्ठिं करोन्तीति महासद्दं करोन्ति । **समपटिवीसो दातब्बो** ति करिस्सामाति याचन्तानं पटिञ्ञामत्तेनपि समकोट्ठासो दातब्बो ।

---

1. दोसाभिसन्नोति (पाळियं) ।
2. सञ्जातपित्तादिदोसो (क) ।
3. यमनियमवचनो (स्या) ।

चीवररजनकथावण्णना

३४४॥ **रजनकुम्भिया मज्झे ठपेत्वा** ति अन्तोरजनकुम्भिया मज्झे ठपेत्वा एवं वट्टाधारके अन्तोरजनकुम्भिया पक्खित्ते मज्झे उदकं तिट्ठति, वट्टाधारतो बहि समन्ता अन्तोकुम्भियं रजनच्छल्लि । **रजनं पक्खिपितुं** रजनच्छल्लिं पक्खिपितुं ।

तिचीवरानुजाननकथावण्णना

३४६॥ उद्धस्ते अरुणे ति उग्गते अरुणसीसे । **नन्दिमुखिया** ति तुट्ठमुखिया ।

अतिरेकचीवरादिकथावण्णना

३४८॥ **अच्छुपेय्यं** ति पतिट्ठपेय्यं । **हतवत्थकानं** ति कालातीतवत्थानं । उद्धरित्वा **अल्लीयापनखण्डं** ति दुब्बलट्ठानं अपनेत्वा अल्लीयापनवत्थखण्डं ।

विसाखावत्थुकथावण्णना

३४९-३५१॥ विसाखावत्थुम्हि **कल्लकाया** ति अकिलन्तकाया पीतिसोमनस्सेहि फुटसरीरा । **गती**ति ञाणगति ञाणाधिगमो । **अभिसम्परायो** ति ञाणाभिसम्परायो ञाणसहितो पेच्चभावो ।

तं भगवा ब्याकरिस्सतीति "सो भिक्खु सोतापन्नो सकदागामी"ति आदिना तस्स तं ञाणगतिं, ततो परं "नियतो सम्बोधिपरायणो सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करिस्सती"ति आदिना[1] ञाणाभिसम्परायञ्च आवि करिस्सति । सोवग्गिकं ति सग्गसंवत्तनिकं । सोकं नुदति विनोदेतीति सोकनुदं ।

निसीदनादिअनुजाननकथावण्णना

B. 341

३५३॥ **दुक्खं सुपती**ति नानाविधसुपिनं पस्सन्तो दुक्खं सुपति । **दुक्खं पटिबुज्झती** ति पटिबुज्झन्तोपि उत्तसित्वा सलोमहंसो दुक्खं पटिबुज्झति ।

पच्छिमविकप्पनुपगचीवरादिकथावण्णना

३५९-३६२॥ अट्ठपदकच्छन्नेन पत्तमुखं सिब्बितुं ति अट्ठपदफलकाकारेन पत्तमुखे तत्थ तत्थ गब्भं दस्सेत्वा सिब्बितुं । **अग्गळगुत्तियेव पमाणं** ति इमेहि चतूहि निक्खेपकारणेहि ठपेन्तेनपि अग्गळगुत्तिविहारेयेव ठपेतुं वट्टतीति अधिप्पायो ।

संघिकचीवरुप्पादकथावण्णना

३६३॥ **पञ्च मासे** ति अच्चन्तसंयोगे उपयोवचनं । **वड्ढिं पयोजेत्वा ठपित-उपनिक्खेपतो** ति वस्सावासिकत्थाय वेय्यावच्चकरेहि वड्ढिं पयोजेत्वा ठपित-

---

1. सं-३-३११-पिट्ठे ।

उपनिक्खेपतो । **तत्रुप्पादतो** ति नाळिकेरआरामादितत्रुप्पादतो । "वस्सावासिकलाभ-वसेन वा मतकचीवरवसेन वा तत्रुप्पादवसेन वा अञ्ञेन वा केनचि आकारेन संघं उद्दिस उप्पन्नचीवरं, सब्बं तस्सेव अत्थतकथिनस्स पञ्च मासे, अनत्थतकथिनस्स एकं चीवरमासं पापुणाती" ति अविसेसतो वत्वापि पुन वस्सावासिकलाभवसेन उप्पन्ने लब्भमानविसेसं दस्सेतुं **"यं पन इदं"** ति आदि आरद्धं, तत्थ इधा ति अभिलापमत्तमेतं । "वस्संवुत्थसंघस्स देमा" ति वुत्तेपि सोयेव नयो । **अनत्थत-कथिनस्सपि पञ्च मासे पापुणातीति** वस्सावासिकलाभवसेन उप्पन्नत्ता अनत्थत-कथिनस्सपि वुत्थवस्सस्स पञ्च मासे पापुणाति । केनचि पन "इध-सद्देन नियमितत्ता" ति कारणं वुत्तं, तं अकारणं । तथा हि इध-सद्देन अनियमेत्वापि "वस्संवुत्थसंघस्स देमा" ति वा "वस्सावासिकं देमा" ति वा अन्तोहेमन्ते वस्सावासिकलाभवसेन दिन्नं चीवरं अनत्थतकथिनस्सपि वुत्थवस्सस्स पञ्च मासे पापुणाति, तेनेव परतो अट्ठसु मातिकासु "वस्संवुत्थसंघस्स देती" ति इमस्स मातिकापदस्स विनिच्छये[1] चीवर-B. 342 मासतो पट्ठाय याव हेमन्तस्स पच्छिमो दिवसो, ताव वस्सावासिकं देमाति वुत्ते कथिनं अत्थतं वा होतु अनत्थतं वा, अतीतवस्संवुत्थानमेव पापुणाती" ति वुत्तं । **ततो परं** ति पञ्च मासतो परं, गिम्हानस्स पठमदिवसतो पट्ठायाति अत्थो ।

"कस्मा? पिट्ठिसमये उप्पन्नत्ता" ति इदं "उदाहु अनागतवस्से" ति इमस्सानन्तरं दट्ठब्बं । गिम्हानस्स पठमदिवसतो पट्ठाय उप्पन्नमेव हि पिट्ठिसमये उप्पन्नत्ता "किं अतीतवस्से इदं वस्सावासिकं" ति आदिना पुच्छितब्बं, तेनेव परतो वक्खति "गिम्हानं पठमदिवसतो पट्ठाय वुत्ते पन मातिका आरोपेतब्बा "अतीतवस्सावासस्स पञ्च मासाअतिक्कन्ता, अनागतो चातुमासच्चयेन भविस्सति, कतरवस्सावासस्स देसी" ति । सचे "अतीतवस्संवुत्थानं दम्मी" ति वदति, तं अन्तोवस्संवुत्थानमेव पापुणाती"ति[2] । पोत्थकेसु पन "अनत्थतकथिनस्सपि पञ्च मासे पापुणाती"ति इमस्सान्तरं" कस्मा ? पिट्ठिसमये उप्पन्नत्ता" ति इदं लिखन्ति, तं न युज्जति । न हि पिट्ठिसमये उप्पन्नं सन्धाय "अनत्थतकथिनस्सपि पञ्च मासे पापुणाती" ति वुत्तं, न च पिट्ठिसमये उप्पन्नं वुत्थवस्सस्सेव पापुणाति, सम्मुखीभूतानं सब्बेसं पापुणाति, तेनेव परतो वक्खति "असुकविहारे वस्संवुत्थसंघस्साति वदति, तत्र वस्संवुत्थानमेव याव कथिनस्सुब्भारा पापुणाति । सचे पन गिम्हानं पठमदिवसतो पट्ठाय एवं वदति, तत्र सम्मुखीभूतानं सब्बेसं पापुणाति । कस्मा ? पिट्ठिसमये उप्पन्नत्ता" ति[3] ।

1. वि-ट्ठ-३-४२५-पिट्ठे ।
2. वि-ट्ठ-३-४२५-पिट्ठे ।
3. वि-ट्ठ-३-४२४-पिट्ठे ।

ठितिका पन न तिट्ठतीति एत्थ अट्ठिताय ठितिकाय पुन अञ्ञस्मिं चीवरे उप्पन्ने सचे एको भिक्खु आगच्छति, मज्झे छिन्दित्वा द्वीहिपि गहेतब्बं। ठिताय पन ठितिकाय पुन अञ्ञस्मिं चीवरे उप्पन्ने सचे नवकतरो आगच्छति, ठितिका हेट्ठा गच्छति। सचे वुड्ढतरो आगच्छति, ठितिका उद्धमारोहति। अथ अञ्ञो नत्थि, पुन अत्तनो पापेत्वा गहेतब्बं। **दुग्गहितानि होन्तीति** एत्थ संघिकानेव होन्तीति अधिप्पायो। **गहितमेव नामा** ति "इमस्स इदं पत्तं" ति किञ्चापि न विदितं, ते पन भागा अत्थतो तेसं पत्तायेवाति अधिप्पायो। **इतो वा** ति थेरानं दातब्बतोयेव।

संघिकचीवरुप्पादकथावण्णना निट्ठिता।

उपनन्दसक्यपुत्तवत्थुकथावण्णना

B. 343

३६४॥ **सत्ताहवारेन अरुणमेव उट्ठापेतीति** एतं वचनमत्तमेव एकस्मिं विहारे सत्ताहकिच्चाभावतो। **इदं** तिं एकाधिप्पायदानं। **नानालाभेहीति** आदीसु नाना विसुं विसुं लाभो एतेसूति नानालाभा, द्वे विहारा, तेहि **नानालभेहि**। नाना विसुं विसुं पाकारादीहि परिच्छिन्नो उपचारो एतेसं ति नानूपचारा, **तेहि नानूपचारेहि**। **एकसीमविहारेहीति** एकूपचारसीमायं द्वीहि विहारेहि।

गिलानवत्थुकथावण्णना

३६५॥ **पलिपन्नो** ति निमुग्गो, पक्खितो ति अत्थो। **उच्चारेत्वा** ति उक्खिपित्वा। **समानाचरियको** तिं एत्थ सचेपि एकस्स आचरियस्स एको अन्तेवासिको होति, एको सद्धिविहारिको, एतेपि अञ्ञमञ्ञं समानाचरियका एवाति वदन्ति।

३६६॥ **भेसज्जं योजेतुं असमत्थो होतीति** वेज्जेन "इदञ्चिदञ्च भेसज्जं गहेत्वा इमिना योजेत्वा दातब्बं" ति वुत्ते तथा कातुं असमत्थोति अत्थो। **नीहातुं** ति नीहरितुं छड्डेतुं ति अत्थो।

मतसन्तकथाववण्णना

३६७-३६९॥ **भिक्खुस्स कालकते** ति एत्थ **कालकत**-सद्दो भावसाधनो ति आह **"कालकिरियाया" ति**। **तत्थ तत्थ संघस्सा** ति तस्मिं तस्मिं विहारे संघस्स।

संघे भिन्ने चीवरुप्पादकथावण्णना

३७६॥ **यत्थ पन दक्खिणोदकं पमाणं** ति भिक्खू यस्मिं रट्ठे दक्खिणोदक-पटिग्गहणमत्तेनपि देय्यधम्मस्स सामिनो होन्तीति अधिप्पायो। **परसमुद्दे** ति जम्बुदीपे।

३७८॥ **मतकचीवरं अधिट्ठातीति** एत्थ मग्गं गच्छन्तो तस्स कालकिरियं सुत्वा अविहारट्ठाने चे द्वादसरतनब्भन्तरे अञ्ञेसं भिक्खूनं अभावं ञत्वा "इदं चीवरं मय्हं पापुणाती" ति अधिट्ठाति, स्वाधिट्ठितं ।

B. 344

अट्ठचीवरमातिकाकथावण्णना

३७९॥ **पुग्गलाधिट्ठाननयेन वुत्तं** ति "सीमाय दानं" ति आदिना वत्तब्बे "सीमाय देती"ति आदि पुग्गलाधिट्ठाननयेन वुत्तं । **परिक्खेपारहट्ठानेन परिच्छिन्ना** ति इमिना अपरिक्खित्तस्स विहारस्स धुवसन्निपातट्ठानादितो पठमलेड्डुपातस्स अन्तो उपचार-सीमाति दस्सेति । इदानि दुतियलेड्डुपातस्स अन्तोपि उपचारसीमायेवाति दस्सेतुं **"अपिचा"** ति आदि आरद्धं । धुवसन्निपातट्ठानम्पि परियन्तगतमेव गहेतब्बं । भिक्खुनीनं आरामप्पवेसनसेनासनापुच्छनादि परिवासमानत्तारोचनवस्सच्छेदनिस्सय-सेनासनग्गाहादि विधानं ति इदं सब्बं इमिस्सायेव उपचारसीमायवसेन वेदितब्बं । लाभत्थाय ठपितसीमा **लाभसीमा** । समानसंवासअविप्पवाससीमासु दिन्नस्स इदं नानत्तं–"अविप्पवाससीमाय दम्मी"ति दिन्नं गामट्ठानं न पापुणाति । कस्मा ? "ठपेत्वा गामञ्च गामूपचारञ्चा" ति वुत्तत्ता । "समानसंवासकसीमाय दम्मी" ति दिन्नं पन गामे ठितानम्पि पापुणातीति ।

बुद्धाधिवुत्थो ति बुद्धेन भगवता अधिवुत्थो । एकस्मिं ति एकस्मिं विहारे । **पाकवट्टं** ति दानवट्टं[1] । वत्ततीति पवत्तति । **पंसुकूलिकानम्पि वट्टतीति** "तुय्हं देमा" ति अवत्वा "भिक्खूनं देम, थेरानं देमा" ति वुत्तत्ता पंसुकूलिकानं वट्टति । **विचारित-मेवाति** उपाहनत्थविकादीनमत्थाय विचारितमेव ।

उपड्ढं दातब्बं ति उभतोसंघस्स दिन्नं, ततो उपड्ढं भिक्खूनं, उपड्ढं भिक्खुनीनं दातब्बं । सचेपि एको भिक्खु होति एका वा भिक्खुनी, अन्तमसो अनुपसम्पन्नस्सपि उपड्ढमेव दातब्बं । **"भिक्खुसंघस्स च भिक्खुनीनञ्च तुय्हञ्चा" ति वुत्ते पन पुग्गलो विसुं न लभतीति** इदं अट्ठकथापमाणेनेव गहेतब्बं । न हेत्थ विसेसकारणं उपलब्भति । तथा हि "उभतोसंघस्स च तुय्हञ्च दम्मी" ति वुत्ते सामञ्ञविसेसवचनेहि सङ्गहितत्ता यथा पुग्गलो विसुं लभति, एवमिधापि "भिक्खुसंघस्स च तुय्हञ्चा" ति सामाञ्ञ-विसेसवचनसब्भावतो भवितब्बमेव विसुं पुग्गलपटिवीसेनाति विञ्ञायति, तस्मा अट्ठकथावचनमेवेत्थ पमाणं । **पापणनट्ठानतो एकमेव लभतीति** । अत्तनो वस्सग्गेन

B. 345 पत्तट्ठानतो एकमेव कोट्ठासं लभति । तत्थ कारणमाह **"कस्मा ? भिक्खुसंघग्गहणेन**

---

1. पाकवत्तं ति दानवत्तं (स्या) ।

गहितत्ता" ति, भिक्खुसंघग्गहणेनेव पुग्गलस्सपि गहितत्ताति अधिप्पायो। **भिक्खु-संघस्स**[1] **हराति वुत्तेपि हरितब्बं** ति ईदिसं गिहिवेय्यावच्चं न होतीति कत्वा वुत्तं ।

लक्खणञ्ञू वदन्तीति इदं सन्निट्ठानवचनं, अट्ठकथासु अनागतत्ता पन एवं वुत्तं । **बहिउपचारसीमायं**.....पे०.....सब्बेसं पापुणातीति यत्थ कत्थचि वुत्थवस्सानं सब्बेसं पापुणातीति अधिप्पायो । तेनेव **मातिकाट्ठकथायम्पि**[2] "सचे पन बहिउपचारसीमायं ठितो" वस्संवुत्थसंघस्सा" ति वदति, यत्थ कत्थचि वुत्थवस्सानं सब्बेसं सम्पत्तानं पापुणाती" ति वुत्तं । **गण्ठिपदेसु** पन "वस्सावासस्स अननुरूपे पदेसे ठत्वा वुत्तत्ता वस्संवुत्थानं अवुत्थानञ्च सब्बेसं पापुणाती"ति वुत्तं, तं न गहेतब्बं । न हि "वस्संवुत्थसंघस्स दम्मी"ति वुत्ते अवुत्थवस्सानं पापुणाति । **एवं वदतीति** "वस्संवुत्थसंघस्स दम्मी"ति वदति । **उद्देसं गहेतुं आगतो** ति तस्स सन्तिके उद्देसं अगहितपुब्बस्सपि उद्देसं गण्हिस्सामीति आगतकालतो पट्ठाय अन्तेवासिकभावूपगमनतो वुत्तं । सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेव ।

अट्ठचीवरमातिकाकथावण्णना निट्ठिता ।

चीवरक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

---

1. भिक्खुं संघस्स (अट्ठकथायं) ।
2. कङ्खा-ट्ठ-१६२-पिट्ठे ।

B. 346

९. चम्पेय्यक्खन्धक

कस्सपगोत्तभिक्खुवत्थुकथावण्णना

३८०॥ चम्पेय्यक्खन्धके **चम्पायं** ति एवंनामके नगरे । तस्स हि नगरस्स आरामपोक्खरणीआदीसु तेसु तेसु ठानेसु चम्पकरुक्खाव उस्सन्ना अहेसुं, तस्मा "चम्पा" ति सङ्खं अगमासि । **गग्गराय पोक्खरणिया तीरे** ति तस्स चम्पानगरस्स अविदूरे गग्गराय नाम राजमहेसिया खणितत्ता "गग्गरा" ति लद्धवोहारा पोक्खरणी अत्थि, तस्सा तीरे समन्ततो नीलादिपञ्चवण्णकुसुमपटिमण्डितं महन्तं चम्पकवनं, तस्मिं भगवा कुसुमगन्धसुगन्धे चम्पकवने विहरति । तं सन्धाय "गग्गराय पोक्खरणिया तीरे" ति वुत्तं । **तन्तिबद्धो** ति **तन्ति** वुच्चति ब्यापारो, तत्थ बद्धो पसुतो उस्सुक्कं आपन्नो ति अत्थो, तस्मिं आवासे अकतं सेनासनं करोति, जिण्णं पटिसङ्खरोति, कते इस्सरो होतीति अधिप्पायो । तेनाह "**तस्मिं आवासे कत्तब्बत्ता तन्तिपटिबद्धो**" ति, कत्तब्बकम्मे उस्साहमापन्नो ति अत्थो ।

ञत्तिविपन्नकम्मादिकथावण्णना

३८५-३८७॥ पटिक्कोसन्तेसूति निवारेन्तेसु । **हापनं वा अञ्ञथा करणं वा नत्थी**ति ञत्तिकम्मस्स एकाय एव ञत्तिया कत्तब्बत्ता ततो हापनं न सम्भवति, अनुस्सावनाय अभावतो पच्छा ञत्तिठपनवसेन द्वीहि ञत्तीहि करणवसेन च अञ्ञथा करणं नत्थि ।

चतुवग्गकरणादिकथावण्णना

३८९॥ उक्खेपनीयकम्मकतो **कम्मनानासंवासको**, उक्खित्तानुवत्तको **लद्धिनाना-संवासको** ।

द्वेनिस्सारणादिकथावण्णना

३९५॥ **अप्पत्तो निस्सारणं** ति एत्थ **निस्सारणकम्मं** नाम कुलदूसकानञ्ञेव अनुञ्ञातं, अयञ्च "बालो होति अब्यत्तो" ति आदिना निद्दिट्ठो कुलदूसको न होति, तस्मा "अप्पत्तो" ति वुत्तो । यदि एवं कथं सुनिस्सारितो होतीति ? बालअब्यत्ततादि-युत्तस्सपि कम्मक्खन्धके "आकङ्खमानो संघो पब्बाजनीयकम्मं करेय्या" ति[1] वुत्तत्ता । तेनेवाह "**तञ्चेस....पे०....तस्मा सुनिस्सारितो होती**"ति । तत्थ तं ति पब्बाजनीयकम्मं । **एसो** ति "बालो" ति आदिना निद्दिट्ठो । **आवेणिकेन लक्खणेना** ति पब्बाजनीयकम्मस्स आवेणिकभूतेन कुलदूसकभावलक्खणेन ।

B. 347

---

1. वि-४-३१-पिट्ठे ।

तञ्चे संघो निस्सारेति, सुनिस्सारितो ति एत्थ अधिप्पेतस्स पब्बाजनीयकम्मस्स वसेन अत्थं दस्सेत्वा इदानि यदि "तञ्चे संघो निस्सारेती" ति तज्जनीयादिकम्मवसेन निस्सारणा अधिप्पेता, तदा निस्सारणं सम्पत्तोयेव तज्जनीयादिवसेन सुनिस्सारितोति ब्यतिरेकमुखेन अत्थं दस्सेतुं पुन **"तञ्चे संघो निस्सारेती"** ति उल्लिङ्गेत्वा अत्थो कथितो । नत्थि एतस्स अपदानं अवखण्डनं आपत्ति परियन्तोति **अनपदानो** । **एकेकेनपि अङ्गेन निस्सारणा अनुञ्ञाता** ति कम्मक्खन्धके अनुञ्ञाता । सेसमेत्थ पाळितो अट्ठकथातो च सुविञ्ञेय्यमेव ।

द्वेनिस्सारणादिकथावण्णना निट्ठिता

चम्पेय्यक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

B. 348

१०. कोसम्बकक्खन्धक

कोसम्बकविवादकथावण्णना

४५१॥ कोसम्बकक्खन्धके **सचे होति, देसेस्सामी**ति सुब्बचताय सिक्खाकामताय च आपत्तिं पस्सि। **नत्थि आपत्ती**ति अनापत्तिपक्खोपि एत्थ सम्भवतीति अधिप्पायेनाह। सा पनापत्ति एव। तेनाह **"सो तस्सा आपत्तिया अनापत्ति दिट्ठि अहोसी"** ति।

४५३-४५४॥ सम्भवअत्थवसेना ति तुरितत्थवसेन। **"अकारणे तुम्हेहि सो भिक्खु उक्खित्तो"** ति वदेय्या ति यस्मा पुब्बे विनयधरस्स वचनेन "सचे आपत्ति होति, देसेस्सामी" ति अनेन पटिञ्ञातं, इदानिपि तस्सेव वचनेन "असञ्चिच्च अस्सतिया कतत्ता नत्थेत्थ आपत्ती"ति अनापत्तिसञ्ञी, तस्मा **"अकारणे तुम्हेहि सो भिक्खु उक्खित्तो"** ति उक्खेपके भिक्खू यदि वदेय्याति अधिप्पायो। "उक्खित्तानुवत्तके" वा "तुम्हे आपत्तिं आपन्ना" ति वदेय्या ति यस्मा वत्थुजाननचित्तेनायं सचित्तका आपत्ति, अयञ्च उदकावसेसे उदकावसेससञ्ञी, तस्मा सापत्तिकस्सेव "तुम्हे छन्दागतिं गच्छथा" ति अधिप्पायेन "तुम्हे आपत्तिं आपन्ना" ति उक्खित्तानुवत्तके वदेय्य।

४५५-४५६॥ **कम्मं कोपेतीति** "नानासंवासकचतुत्थो चे भिक्खवे कम्मं करेय्य, अकम्मं न च करणीयं" ति आदिवचनतो[1] सचे संघो तं गणपूरकं कत्वा कम्मं करेय्य, अयं तत्थ निसिन्नोपि तं कम्मं कोपेतीति अधिप्पायो। **उपचारं मुञ्चित्वा** ति एत्थ **उपचारो** नाम अञ्ञमञ्ञं हत्थेन पापुणनट्ठानं।

४५७॥ भण्डनजाता ति आदीसु कलहस्स पुब्बभागो भण्डनं नाम, तं जातं एतेसं ति **भण्डनजाता**, हत्थपरामासादिवसेन मत्थकं पत्तो कलहो जातो एतेसं ति **कलहजाता**, विरुद्धवादभूतं वादं आपन्नाति **विवादापन्ना**। **मुखसत्तीही**ति वाचासत्थीहि।

B. 349 **वितुदन्ता** ति विज्झन्ता। **भगवन्तं एतदवोचा** ति "इध भन्ते कोसम्बियं भिक्खू भण्डनजाता" ति आदिवचनं अवोच, तञ्च खो नेव पियकम्यताय, न भेदाधिप्पायेन, अथ खो अत्थकामताय हितकामताय। सामग्गीकारको किरेस भिक्खु, तस्मास्स एतदहोसि" यथा इमे भिक्खू विवादं आरद्धा, न सक्का मया, नापि अञ्ञेन भिक्खुना समग्गे कातुं, अप्पेव नाम सदेवके लोके अग्गपुग्गलो भगवा सयं वा गन्त्वा अत्तनो वा सन्तिकं पक्कोसापेत्वा एतेसं भिक्खूनं खन्तिमेत्तापटिसंयुत्तं सारणीयधम्मदेसनं कथेत्वा सामग्गिं करेय्या" ति अत्थकामताय हितकामताय गन्त्वा अवोच। **तस्मा एवमाहा ति** अत्थकामत्ता एवमाह, न भगवतो वचनं अनादियन्तो। ये पन तदा

1. वि-३-४४०-पिट्ठे।

सत्थु वचनं न गण्हिंसु, ते किञ्चि अवत्वा तुण्हीभूता मङ्कुभूता अट्ठंसु, तस्मा उभयेसम्पि सत्थरि अगारवपटिपत्ति नाहोसि ।

कोसम्बकविवादकथावण्णना निट्ठिता ।

दीघावुवत्थुकथावण्णना

४५८॥ **अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसी**ति आदीसु भूतपुब्बं ति इदं भगवा पथवीगतं निधिं उद्धरित्वा पुरतो रासिं करोन्तो विय भवपटिच्छन्नं पुरावुत्थं दस्सेन्तो आह । **अड्ढो**ति इस्सरो । यो कोचि अत्तनो सन्तकेन विभवेन अड्ढो होति, अयं पन न केवलं अड्ढोयेव, महद्धनो महता अपरिमाणसङ्खेन धनेन समन्नागतोति आह "**महद्धनो**" ति । भुञ्जितब्बतो परिभुञ्जितब्बतो विसेसतो कामा भोगा नाम, तस्मा पञ्चकामगुणवसेन महन्ता उळारा भोगा अस्साति **महाभोगो** । महन्तं सेनाबलञ्चेव थामबलञ्च एतस्साति **महब्बलो** । महन्तो हत्थिअस्सादिवाहनो एतस्साति **महावाहनो** । महन्तं विजितं रट्ठं एतस्साति **महाविजितो** । **परिपुण्णकोसकोट्ठागारो** ति कोसो वुच्चति भण्डागारसारगब्भो, कोट्ठं वुच्चति धञ्ञस्स आठपनट्ठानं, कोट्ठभूतं अगारं **कोट्ठागारं**, निदहित्वा ठपितेन धनेन परिपुण्णकोसोधञ्ञानञ्च परिपुण्णकोट्ठागारोति अत्थो ।

अथ वा चतुब्बिधो कोसो हत्थी अस्सा रथा पत्तीति[1] । यथा हि असिनो तिक्खभावपरिपालको परिच्छदो "कोसो" ति वुच्चति, एवं रञ्ञो तिक्खभाव-परिपालकत्ता चतुरङ्गिनी सेना "कोसो" ति वुच्चति । तिविधं कोट्ठागारं धनकोट्ठागारं धञ्ञकोट्ठागारं वत्थकोट्ठागारं ति । तं सब्बम्पि परिपुण्णमस्साति **परिपुण्णकोस-कोट्ठागारो** । **चतुरङ्गिनिं सेनं** ति हत्थिअस्सरथपत्तिसङ्खातेहि चतूहि अङ्गेहि समन्नागतं सेनं । **सन्नय्हित्वा** ति चम्मपटिमुञ्चनादीहि सन्नाहं कारेत्वा । **अब्भुय्यासी**ति अभिउय्यासि, अभिमुखो हुत्वा निक्खमीति अत्थो । **एकसंघातम्पी**ति एकप्पहारम्पि । **धोवनं** ति धोवनुदकं । **परिनेत्वा** ति नीहरित्वा । "अनत्थदो" ति वत्तब्बे द-कारस्स त-कारं कत्वा "अनत्थतो" ति वुत्तं ति आह "**अथ वा**" ति आदि । B. 350

४६४॥ वग्गभावेन वा पुथु नाना सद्दो अस्साति **पुथुसद्दो** । **समजनो** ति भण्डने समज्झासयो जनो । **तत्था** ति तस्मिं जनकाये । **अहं बालोति न मञ्ञित्था** ति बाललक्खणे ठितोपि "अहं बालो" ति न मञ्ञि । **भिय्यो चा** ति अत्तनो बालभावस्स अजाननतो भिय्यो च भण्डनस्स उपरिफोटो विय संघभेदस्स अत्तनो कारणभावम्पि उप्पज्जमानं न मञ्ञित्थ नाञ्ञासि ।

---

1. रट्ठं ति ।

कलहवसेन पवत्तवाचायेव गोचरा एतेसं ति **वाचागोचरा** । **मुखायामं** ति विवदनवसेन मुखं आयामेत्वा भाणिनो । **न तं जानन्तीति** तं कलहं न जानन्ति । कलहं करोन्तो च तं न जानन्तो नाम नत्थि, यथा पन न जानन्ति, तं दस्सेतुं आह **"एवं सादीनवो अयं"** ति" अयं कलहो नाम अत्तनो परेसञ्च अत्थहापनतो अनत्थुप्पादनतो दिट्ठेव धम्मे सम्पराये च सादीनवो सदोसो ति अत्थो । (तं **न जानन्तीति** तं कलहं न जानन्ति । कथं न जानन्तीति आह "एवं **सादीनवो अयं**" ति, "एवं सादीनवो अयं कलहो" ति एवं तं कलहं न जानन्तीति अत्थो ।[1])

अक्कोच्छि मं तिआदीसु **अक्कोच्छी**ति अक्कोसि । अवधी ति पहरि । **अजिनी**ति कूटसक्खिओतारणेन वा वादपटिवादेन वा करणुत्तरियकरणेन वा अजेसि । **अहासी**-

B. 351 ति मम सन्तकं पत्तादीसु किञ्चिदेव अवहरि । ये च तं ति ये केचि देवो वा मनुस्सा वा गहट्ठा वा पब्बजिता वा तं "अक्कोच्छि मं" तिआदिवत्थुकं कोधं सकटधुरं विय नद्धिना पूतिमच्छादीनि विय च कुसादीहि पुनप्पुनं वेठेन्ता **उपनय्हन्ति** उपनाहवसेन अनुबन्धन्ति, तेसं सकिं उप्पन्नं वेरं न सम्मतीति अत्थो ।

ये च तं नुपनय्हन्तीति अस्सतिया अमनसिकारवसेन वा कम्मपच्चवेक्खणादिवसेन वा ये तं अक्कोसादिवत्थुकं कोधं "तयापि कोचि निद्दोसो पुरिमभवे अक्कुट्ठो भविस्सति, पहटो भविस्सति, कूटसक्खिं ओतारेत्वा जितो भविस्सति, कस्सचि ते पसय्ह किञ्चि अच्छिन्नं भविस्सति, तस्मा निद्दोसो हुत्वापि अक्कोसादीनि पापुणासी"-ति एवं न उपनय्हन्ति, तेसु पमादेन उप्पन्नम्पि वेरं इमिना अनुपनय्हनेन निरिन्धनो विय जातवेदो उपसम्मति ।

न हि वेरेन वेरानीति यथा हि खेळसिङ्घाणिकादिअसुचिमक्खितं ठानं तेहेव असुचीहि धोवन्तो सुद्धं निग्गन्धं कातुं न सक्कोति, अथ खो तं ठानं भिय्योसो मत्ताय असुद्धतरञ्च दुग्गन्धतरञ्च होति, एवमेव अक्कोसन्तं पच्चक्कोसन्तो पहरन्तं पटिपहरन्तो वेरेन वेरं वूपसमेतुं न सक्कोति, अथ खो भिय्यो वेरमेव करोति । इति वेरानि नाम वेरेन किस्मिञ्चिपि काले न सम्मन्ति, अथ खो वड्ढन्तियेव । **अवेरेन च सम्मन्ती**ति यथा पन तानि खेळादीनि असुचीनि विप्पसन्नेन उदकेन धोवियमानानि नस्सन्ति, तं ठानं सुद्धं होति निग्गन्धं, एवमेव अवेरेन खन्तिमेत्तोदकेन योनिसोमनसिकारेन पटिसङ्खानेन पच्चवेक्खणेन वेरानि वूपसम्मन्ति पटिप्पस्सम्भन्ति अभावं गच्छन्ति । **एस धम्मो सनन्तनो** ति एस अवेरेन वेरूपसमनसङ्खातो पोराणको धम्मो सब्बेसं बुद्धपच्चेकबुद्धखीणासवानं गतमग्गो ।

न जानन्तीति अनिच्चसञ्ञं न पच्चुपट्ठापेन्तीति अधिप्पायो । **ततो सम्मन्ति मेधगा**ति ततो तस्मा कारणा मेधगा कलहा सम्मन्ति वूपसमं गच्छन्ति । कथं ते

---

1. –( ) एत्थन्तरे पाठो उपरिपण्णासके उपक्किलेससुत्तटीकायं नत्थि ।

सम्मन्तीति आह "**एवञ्ही**"ति आदि । तत्थ **एवञ्हि ते जानन्ता** ति ते पण्डिता "मयं मच्चुसमीपं गच्छामा"ति एवं जानन्ता योनिसोमनसिकारं उप्पादेत्वा मेधगानं कलहानं वूपसमाय पटिपज्जन्ति, अथ नेसं ताय पटिपत्तिया ते मेधगा सम्मन्तीति B. 352 अधिप्पायो ।

तेसम्पि होति सङ्गतीति ये मातापितूनं अट्ठीनि छिन्दन्ति, पाणे हरन्ति,[1] गवादीनि च पसय्ह गण्हन्ति, एवं रट्ठं विलुम्पमानानं तेसम्पि सङ्गति होति, किमङ्गं पन तुम्हाकं न सिया ति अधिप्पायो ।

वण्णावण्णदीपनत्थं वुत्ताति "बालसहायताय इमे भिक्खू कलहपसुता, पण्डित-सहायानं पन इदं न ा सिया" ति पण्डितसहायस्स बालसहायस्स च वण्णावण्णदीपनत्थं वुत्ता । **निपकं** ति नेपक्कपञ्ञाय समन्नागतं । **साधुविहारि धीरं** ति भद्दकविहारिं पण्डितं । **पाकटपरिस्सये च पटिच्छन्नपरिस्सये च अभिभवित्वा** ति सीहब्यग्घादयो पाकट-परिस्सये च रागभयदोसभयादयो पटिच्छन्नपरिस्सये चाति सब्बेव परिस्सये अभिभवित्वा ।

एकका चरिंसू ति "इदं रज्जं नाम महन्तं पमादट्ठानं, किं अम्हाकं रज्जेन कारितेना" ति रट्ठं पहाय ततो महाअरञ्ञं पविसित्वा तापसपब्बज्जं पब्बजित्वा चतूसु इरियापथेसु एकका चरिंसू ति अत्थो ।

एकस्स चरितं सेय्यो ति पब्बजितस्स पब्बजितकालतो पट्ठाय एकीभावाभिरतस्स एककस्सेव चरितं सय्यो ति अत्थो । **नत्थि बाले सहायता** ति चूळसीलं मज्झिमसीलं महासीलं दस कथावत्थूनि तेरस धुतगुणा विपस्सनाञाणं चत्तारो मग्गा चत्तारि फलानि तिस्सो विज्जा छ अभिञ्ञा अमतमहानिब्बानं ति अयं सहायता नाम, सा बालं निस्साय अधिगन्तुं न सक्का ति नत्थि बाले सहायता । मातङ्गो अरञ्ञे **मातङ्गरञ्ञे** ति सरलोपेन सन्धि । "मातङ्गरञ्ञो" तिपि पाठो, अरञ्ञको मातङ्गो वियाति अत्थो । **मातङ्ग** सद्देनेव हत्थिभावस्स वुत्तत्ता नागवचनं तस्स महत्तविभा–वनत्थंति आह "**नागो ति महन्ताधिवचनमेतं**" ति । महन्तपरियायो हि नाग-सद्दो होति "एतं नागस्स नागेन, ईसादन्तस्स हत्थिनो"तिआदीसु[2] ।

दीघावुवत्थुकथावण्णना निट्ठिता

----

1. हनन्ति (क) ।
2. खु-१-१२७-पिट्ठे ।

बालकलोणकगमनकथावण्णना

B. 353

४६५॥ **बालकलोणकारगामो** ति[1] उपालिगहपतिस्स एवं नामको भोगगामो । **तेनुपसङ्कमी**ति धम्मसेनापतिमहामोग्गलानत्थेरेसु वा असीतिमहासावकेसु वा अन्तमसो धम्मभण्डागारिकं आनन्दत्थेरम्पि कञ्चि अनामन्तेत्वा सयमेव पत्तचीवर-मादाय अनीकनिस्सटो हत्थी विय यूथनिस्सटो काळसीहो विय वातच्छिन्नो वलाहको विय च एककोव उपसङ्कमि । कस्मा उपसङ्कमि ? गणे किरस्स आदीनवं दिस्वा एकविहारिं भिक्खुं पस्सितुकामता उदपादि, तस्मा सीतदिपीळितो उण्हादिं पत्थयमानो विय उपसङ्कमि । अथ वा भगवता सो आदीनवो पगेव परिञ्ञातो[2], न तेन सत्था निब्बिन्नो, तस्मिं पन अन्तोवस्से केचि बुद्धवेनेय्या नाहेसुं, तेन अञ्ञत्थ गमनं तेसं भिक्खूनं दमनुपायोति पालिलेय्यकं[3] उद्दिस्स गच्छन्तो एकविहारिं आयस्मन्तं भगुं सम्पहंसेतुं तत्थ गतो । एवं गते च सत्थरि पञ्चसता भिक्खू आयस्मन्तं आनन्दं आहंसु "आवुसो आनन्द सत्था एककोव गतो, मयं अनुबन्धि-स्सामा" ति । "आवुसो यदा भगवा सामं सेनासनं संसामेत्वा पत्तचीवरमादाय अनामन्तेत्वा उपट्ठाके अनपलोकेत्वा भिक्खुसंघं अदुतियो गच्छति, तदा एकचारिकं चरितुं भगवतो अज्झासयो, सावकेन नाम सत्थु अज्झासयानुरूपं पटिपज्जितब्बं, तस्मा न इमेसु दिवसेसु भगवा अनुगन्तब्बो" ति निवारेसि, सयम्पि नानुगञ्छि । **धम्मिया कथाया** ति एकीभावे आनिसंसपटिसंयुत्ताय धम्मकथाय ।

बालकलोणकगमनकथावण्णना निट्ठिता ।

पाचीनवंसदायगमनकथावण्णना

४६६॥ येन **पाचीनवंसदायो** ति तत्थ कस्मा उपसङ्कमि ? यथा नाम जिघच्छि-तस्स भोजने, पिपासितस्स पानीये, सीतेन फुट्ठस्स उण्हे, उण्हेन फुट्ठस्स सीते, दुक्खितस्स सुखे अभिरुचि उप्पज्जति, एवमेव भगवतो कोसम्बके भिक्खू अञ्ञमञ्ञं B. 354 विवादापन्ने असमग्गवासं वसन्ते, समग्गवासं वसन्ते आवज्जेन्तस्स इमे तयो कुलपुत्ता आपाथमागमिंसु, अथ नेसं[4] पग्गण्हितुकामो उपसङ्कमि "एवायं पटिपत्ति-अनुक्कमेन कोसम्बकानं भिक्खूनं विनयनूपायो होती"ति । विहरन्तीति सामग्गिरसं अनुभवमाना विहरन्ति ।

---

1. बालकलोणकारामगामोति (स्या) म-३-१९३-पिट्ठे पस्सितब्बं ।
2. अपरिञ्ञातो–(क) ।
3. पारिलेय्यकं (स्या) ।
4. ने-(स्या) ।

दायपालोति[1] अरञ्ञपालो । सो अरञ्ञं यथा इच्छितिच्छितप्पदेसेन मनुस्सा पविसित्वा तत्थ पुप्फं वा फलं वा निय्यासं वा दब्बसम्भारं वा न हरन्ति, एवं वतिया परिक्खित्तस्स अरञ्ञस्स योजिते द्वारे निसीदित्वा अरञ्ञं रक्खति, तस्मा "दायपालो" ति वुत्तो । अत्थकामरूपा **विहरन्ती**ति अत्तनो हितं कामयमानसभावा हुत्वा विहरन्ति । यो हि इमस्मिं सासने पब्बजित्वापि वेज्जकम्मदूतकम्मपहिण-गमनादीनं वसेन एकवीसतिअनेसनाहि जीविकं कप्पेति, अयं न अत्तकामरूपो नाम । यो पन इमस्मिं सासने पब्बजित्वा एकवीसतिअनेसनं पहाय चतुपारि-सुद्धिसीले पतिट्ठाय बुद्धवचनं उग्गण्हित्वा सप्पायधुतङ्गं अधिट्ठाय अट्ठतिंसाय आरम्मणेसु चित्तरुचियं कम्मट्ठानं गहेत्वा गामन्तं पहाय अरञ्ञं पविसित्वा समापत्तियो निब्बत्तेत्वा विपस्सनाय कम्मं कुरुमानो विचरति, अयं अत्तकामो नाम । तेपि तयो कुलपुत्ता एवरूपा अहेसुं । तेन वुत्तं "अत्तकामरूपा विहरन्ती" ति ।

मा तेसं अफासुमकासीति तेसं अफासुकं मा अकासीति भगवन्तं वारेसि । एवं किरस्स अहोसि "इमे कुलपुत्ता समग्गा विहरन्ति, एकच्चस्स च गतट्ठाने भण्डन-कलहविवादा वत्तन्ति, तिखिणसिङ्गो चण्डगोणो विय ओविज्झन्तो विचरति, अथेकमग्गेन द्विन्नं गमनं न होति, कदाचि अयम्पि एवं करोन्तो इमेसं कुलपुत्तानं समग्गवासं भिन्देय्य, पासादिको च पनेस सुवण्णवण्णो रसगिद्धो मञ्ञे, गतकालतो पट्ठाय पणीतदायकानं अत्तनो उपट्ठाकानं वण्णकथनादीहि इमेसं कुलपुत्तानं अप्प-मादविहारं भिन्देय्य, वसनट्ठानानि चापि एतेसं कुलपुत्तानं निबद्धानि परिच्छिन्नानि तिस्सोव पण्णसाला तयो चङ्कमा तीणि दिवाट्ठानानि तीणि मञ्चपीठानि, अयं पन समणो महाकायो वुड्ढतरो मञ्ञे भविस्सति, सो अकाले इमे कुलपुत्ते सेनासना वुट्ठपेस्सति, एवं सब्बथापि एतेसं अफासु भविस्सती"ति । तं अनिच्छन्तो "मा तेसं अफासुमकासी" ति भगवन्तं वारेति ।

किं पनेस जानन्तो वारेसि अजानन्तो ति ? अजानन्तो । सम्मासम्बुद्धो हि नाम यदा अनेकभिक्खुसहस्सपरिवारो ब्यामप्पभाय असीतिअनुब्यञ्जनेहि द्वत्तिंसमहापुरि-सलक्खणसिरिया च बुद्धानुभावं दस्सेन्तो विचरति, तदा "को एसो" ति अपुच्छित्वाव जानितब्बो होति । तदा पन भगवा "मास्सु कोचि मम बुद्धानुभावं अञ्ञासी" ति तथारूपेन इद्धाभिसङ्खारेन सब्बम्पि तं बुद्धानुभावं चीवरगब्भेन विय पटिच्छादेत्वा वलाहकगब्भेन पटिच्छन्नो पुण्णचन्दो विय सयमेव पत्तचीवरमादाय अञ्ञातकवेसेन अगमासि । इति तं अजानन्तोव दायपालो वारेसि ।

B. 355.

एतदवोचा ति थेरो किर "मा समणा" ति दायपालस्स कथं सुत्वा चिन्तेसि "मयं तयो जना इध विहराम, अञ्ञो पब्बजितो नाम नत्थि, अयञ्च दायपालो पब्बजितेन

---

1. म-ट्ठ-२-१३९ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

विय सद्धिं कथेति, को नु खो भविस्सती" ति दिवाट्ठानतो उट्ठाय द्वारे ठत्वा मग्गं ओलोकेन्तो भगवन्तं अद्दस । भगवापि थेरस्स सह दस्सनेनेव सरीरोभासं मुञ्चि, असीतिअनुब्यञ्जनविराजिता ब्यामप्पभा पसारितसुवण्णपटो विय विरोचित्थ । थेरो "अयं दायपालो फणकतआसीविसं गीवाय गहेतुं हत्थं पसारेन्तो विय लोके अग्गपुग्गलेन सद्धिं कथेन्तोव न जानाति, अञ्ञतरभिक्खुना विय सद्धिं कथेती "ति निवारेन्तो एतं" मावुसो दायपाला" ति आदिवचनं अवोच ।

तेनुपसङ्कमीति कस्मा भगवतो पच्चुग्गमनं अकत्वाव उपसङ्कमि ? एवं किरस्स अहोसि "मयं तयो जना समग्गवासं वसाम, सचाहं एककोव पच्चुग्गमनं करिस्सामि, समग्गवासो नाम न भविस्सति, पियमित्ते गहेत्वाव पच्चुग्गमनं करिस्सामि । यथा च भगवा मय्हं पियो, एवं सहायानम्पि मे पियो" ति तेहि सद्धिं पच्चुग्गमनं कातुकामो सयं अकत्वा उपसङ्कमि । केचि पन "तेसं थेरानं पण्णसालद्वारे चङ्कमनकोटिया भगवतो आगमनमग्गो होति, तस्मा थेरो तेसं सञ्ञं ददमानोव गतो" ति वदन्ति । **अभिक्कमथा**ति इतो आगच्छथ । **पादे पक्खालेसी**ति विकसितपदुमसन्निभेहि जाल-हत्थेहि मणिवण्णं उदकं गहेत्वा सुवण्णवण्णेसु पिट्ठिपादेसु उदकं आसिञ्चित्वा पादेन B. 356 पादं घंसेन्तो पक्खालेसि । बुद्धानं काये रजोजल्लं नाम न उपलिम्पति, कस्मा पक्खालेसीति ? सरीरस्स उतुग्गहणत्थं तेसञ्च चित्तसम्पहंसनत्थं । अम्हेहि अभिहटेन उदकेन भगवा पादे पक्खालेसि, परिभोगं अकासीति तेसं भिक्खूनं बलव-सोमनस्सवसेन चित्तं पीणितं[1] होति, तस्मा पक्खालेसि ।

आयस्मन्तं अनुरुद्धं भगवा एतदवोचाति सो किर तेसं वुड्ढतरो, तस्स सङ्गहे कते सेसानं कतोव होती ति थेरञ्ञेव एतं "कच्चि वो अनुरुद्धा" ति आदिवचनं अवोच । **अनुरुद्धा**ति वा एकसेसनयेन वुत्तं विरूपेकसेसस्सपि इच्छितब्बत्ता, एवञ्च कत्वा बहुवचननिद्देसो च समत्थितो होति । कच्चीति पुच्छनत्थे निपातो । **वो**ति सामिवचनं । इदं वुत्तं होति–कच्चि अनुरुद्धा तुम्हाकं खमनीयं, इरियापथो वो खमति, कच्चि यापनीयं, कच्चि वो जीविकं यापेति घटियति, कच्चि पिण्डकेन न किलमथ, कच्चि तुम्हाकं सुलभपिण्डं, सम्पत्ते वो दिस्वा मनुस्सा उळुङ्कयागुं वा कटच्छुभिक्खं वा दातब्बं मञ्ञतीति भिक्खाचारवत्तं पुच्छति । कस्मा ? यस्मा पच्चयेन अकिलमन्तेन सक्का समणधम्मो कातुं, वत्तमेव वा एतं पब्बजितानं ।

अथ तेन पटिवचने दिन्ने "अनुरुद्धा तुम्हे राजपब्बजिता महापुञ्ञा, मनुस्सा तुम्हाकं अरञ्ञे वसन्तानं अदत्वा कस्स अञ्ञस्स दातब्बं मञ्ञिस्सन्ति, तुम्हे पन एतं भुञ्जित्वा किं नु खो मिगपोतका विय अञ्ञमञ्ञं घट्टेन्ता विहरथ, उदाहु सामग्गिभावो वो अत्थी" ति सामग्गिरसं पुच्छन्तो" **कच्चि पन वो अनुरुद्धा समग्गा**" ति आदिमाह ।

---

1. पणीतं–(स्या) ।

तत्थ **खीरोदकीभूता**ति यथा खीरञ्च उदकञ्च अञ्ञमञ्ञं संसन्दति, विसुं न होति, एकत्तं विय उपेति, कच्चि एवं सामग्गिवसेन एकत्तुपगतचित्तुप्पादा विहरथाति पुच्छति। **पियचक्खूहीति** मेत्तचित्तं पच्चुपट्ठापेत्वा ओलोकनतो पियभावदीपकानि चक्खूनि पियचक्खूनि नाम, "कच्चि तथारूपेहि चक्खूहि अञ्ञमञ्ञं पस्सन्ता विहरथा" ति पुच्छति। तग्घाति एकंसत्थे निपातो, एकंसेन मयं भन्तेति वुत्तं होति। **यथा कथं पना** ति एत्थ **यथा**ति निपातमत्तं, **कथं** ति कारणपुच्छा, कथं पन तुम्हे एवं विहरथ, केन कारणेन विहरथ, तं मे कारणं ब्रूहीति वुत्तं होति।

मेत्तं कायकम्मं ति मेत्तचित्तवसेन पवत्तं कायकम्मं। **आवि चेव रहो चा**ति सम्मुखा B. 357 चेव परम्मुखा च। इतरेसुपि एसेव नयो। तत्थ सम्मुखा कायवचीकम्मानि सहवासे लब्भन्ति, इतरानि विप्पवासे, मनोकम्मं सब्बत्थ लब्भति। यञ्हि सहेव वसन्तेसु एकेन मञ्चपीठं वा दारुभण्डं वा मत्तिकाभण्डं वा बहि दुन्निक्खित्तं होति, तं दिस्वा "केनिदं वळञ्जितं" ति अवञ्ञं अकत्वा अत्तना दुन्निक्खित्तं विय गहेत्वा पटिसामेन्तस्स पटिजग्गितब्बयुत्तं वा पन ठानं पटिजग्गन्तस्स सम्मुखा मेत्तं कायकम्मं नाम होति। एकस्मिं पक्कन्ते तेन दुन्निक्खित्तं सेनासनपरिक्खारं तथेव निक्खिपन्तस्स पटिजग्गितब्बयुत्तं वा पन ठानं पटिजग्गन्तस्स परम्मुखा मेत्तं कायकम्मं नाम होति। सहवसन्तस्स पन थेरेहि सद्धिं मधुरं सम्मोदनीयकथं पटिसन्थारकथं सारणीयकथं "धम्मकथं सरभञ्ञं साकच्छं पञ्हपुच्छनं पञ्हविस्सज्जनं ति एवमादि-करणे सम्मुखा मेत्तं वचीकम्मं नाम होति। थेरेसु पन पक्कन्तेसु "मय्हं पियसहायो नन्दियत्थेरो किमिलत्थेरो एवं सीलसम्पन्नो एवं आचारसम्पन्नो" ति आदिगुणकथने परम्मुखा मेत्तं वचीकम्मं नाम होति। "मय्हं पियमित्तो नन्दियत्थेरो किमिलत्थेरो अवेरो होतु अब्यापज्जो सुखी"ति एवं समन्नाहरतो पन सम्मुखापि परम्मुखापि मेत्तं मनोकम्मं होतियेव।

नाना हि खो नो भन्ते काया ति अयञ्हि कायो पिट्ठं विय मत्तिका विय च ओमद्दित्वा एकतो कातुं न सक्का। **एकञ्च पन मञ्ञे चित्तं** ति चित्तं पन नो अत्तनो विय अञ्ञमञ्ञस्स हितभावेन अविरोधभावेन भेदाभावेन समग्गभावेन एकमेवाति दस्सेति। कथं पनेते सकं चित्तं निक्खिपित्वा इतरेसं चित्तवसेन वत्तिंसूति ? एकस्स पत्ते मलं उट्ठहति, एकस्स चीवरं किलिट्ठं होति, एकस्स परिभण्डकम्मं होति। तत्थ यस्स पत्ते मलं उट्ठितं, तेन "ममावुसो पत्ते मलं उट्ठितं, पचितुं वट्टती" ति वुत्ते इतरे "मय्हं चीवरं किलिट्ठं धोवितब्बं, मय्हं परिभण्डं कातब्बं" ति अवत्वा अरञ्ञं पविसित्वा दारूनि आहरित्वा भिन्दित्वा पत्तकटाहे बहलतनुमत्तिकाहि लेपं कत्वा पत्तं पचित्वा ततो परं चीवरं वा धोवन्ति, परिभण्डं वा करोन्ति। "ममावुसो चीवरं

किलिट्ठं, धोवितुं वट्टती" ति "मम पण्णसाला उक्लापा, परिभण्डं कातुं वट्टती"ति पठमतरं आरोचितेपि एसेव नयो।

B. 358 इदानि तेसं अप्पमादलक्खणं पुच्छन्तो **"कच्चि पन वो अनुरुद्धा"** ति आदिमाह। तत्थ वो ति निपातमत्तं, पच्चत्तवचनं वा, कच्चि तुम्हेति अत्थो। **अम्हाकं** ति अम्हेसु तीसु जनेसु। **पिण्डाय पटिक्कमती**ति गामे पिण्डाय चरित्वा पच्चागच्छति। **अवक्कारपातिं** ति अतिरेकपिण्डपातं अपनेत्वा ठपनत्थाय एकं समुग्गपातिं धोवित्वा ठपेति। **यो पच्छा** ति ते किर थेरा न एकतोव भिक्खाचारं पविसन्ति। फलसमापत्तिरता हेते पातोव सरीरपटिजग्गनं कत्वा वत्तपटिपत्तिं पूरेत्वा सेनासनं पविसित्वा कालपरिच्छेदं कत्वा फलसमापत्तिं अप्पेत्वा निसीदन्ति। तेसु यो पठमतरं निसिन्नो अत्तनो कालपरिच्छेदवसेन पठमतरं उट्ठाति, सो पिण्डाय चरित्वा पटिनिवत्तो भत्तकिच्चट्ठानं आगन्त्वा जानाति "द्वे भिक्खू पच्छतो, अहं पठमतरं आगतो ति। अथ पत्तं पिदहित्वा आसनपञ्ञापनादीनि कत्वा यदि पत्ते पटिवीसपत्तमेव होति, निसीदित्वा भुञ्जति, यदि अतिरेकं होति, अवक्कारपातियं पक्खिपित्वा पातिं पिधाय भुञ्जति, कतभत्तकिच्चो पत्तं धोवित्वा वोदकं कत्वा थविकाय ओसापेत्वा पत्तचीवरं गहेत्वा अत्तनो वसनट्ठानं पविसति।

दूतियो पि आगन्त्वाव जानाति "एको पठमं आगतो, एको पच्छतो" ति। सो सचे पत्ते भत्तं पमाणमेव होति, भुञ्जति। सचे मन्दं, अवक्कारपातितो गहेत्वा भुञ्जति। सचे अतिरेकं होति, अवक्कारपातियं पक्खिपित्वा पमाणमेव भुञ्जित्वा पुरिमत्थेरो विय वसनट्ठानं पविसति। ततियो पि आगन्त्वाव जानाति "द्वे पठमं आगता, अहं पच्छिमो" ति। सोपि दुतियत्थेरो विय भुञ्जित्वा कतभत्तकिच्चो पत्तं धोवित्वा वोदकं कत्वा थविकाय ओसापेत्वा आसनानि उक्खिपित्वा पटिसामेति, पानीयघटे वा परिभोजनीयघटे वा अवसेसउदकं छड्डेत्वा घटे निकुज्जित्वा अवक्कारपातियं सचे अवसेसभत्तं होति, तं वुत्तनयेन जहित्वा[1] पातिं धोवित्वा पटिसामेति, भत्तग्गं सम्मज्जति, सो कचवरं छड्डेत्वा सम्मज्जनिं उक्खिपित्वा उपचिकाहि मुत्तट्ठाने ठपेत्वा पत्तचीवरमादाय वसनट्ठानं पविसति। इदं थेरानं बहिविहारे अरञ्ञे भत्तकिच्चकरणट्ठाने भोजनसालाय वत्तं। इदं सन्धाय "यो पच्छा" ति आदि वुत्तं।

B. 359 **यो पस्सती**ति आदि पन नेसं अन्तोविहारे वत्तन्ति वेतिदब्बं। तत्थ **वच्चघटं** ति आचमनकुम्भिं। **रित्तं** ति रित्तकं। **तुच्छं** ति तस्सेव वेवचनं। **अविसय्हं** ति उक्खिपितुं असक्कुणेय्यं अतिभारियं। **हत्थविकारेना** ति हत्थसञ्ञाय। ते किर पानीयघटादीसु यं किञ्चि तुच्छकं गहेत्वा पोक्खरणिं गन्त्वा अन्तो च बहि च धोवित्वा उदकं

---

1. हरित्वा (स्या)

परिस्सावेत्वा तीरे ठपेत्वा अञ्ञं भिक्खुं हत्थविकारेन आमन्तेन्ति, ओदिस्स वा अनोदिस्स वा सद्दं न करोन्ति । कस्मा ओदिस्स न करोन्ति ? तञ्हि भिक्खुं सद्दो बाधेय्या ति । कस्मा अनोदिस्स न करोन्ति ? अनोदिस्स सद्दे दिन्ने "अहं पुरे, अहं पुरे" ति द्वेपि निक्खमेय्युं । ततो द्वीहि कत्तब्बकम्मे ततियस्स कम्मच्छेदो भवेय्य । संयतपदसद्दो पन हुत्वा अपरस्स भिक्खुनो दिवाट्ठानसन्तिकं गन्त्वा तेन दिट्ठभावं ञत्वा हत्थसञ्ञं करोति, ताय सञ्ञाय इतरो आगच्छति, ततो द्वे जना हत्थेन हत्थं संसिब्बन्ता द्वीसु हत्थेसु ठपेत्वा उट्ठापेन्ति । तं सन्धायाह **"हत्थविकारेन दुतियं आमन्तेत्वा हत्थविलङ्घकेन उपट्ठापेमा"** ति ।

पञ्चाहितं खो पनाति चातुद्दसे पन्नरसे अट्ठमियं ति इदं ताव पकतिधम्मस्सवनमेव, तं अखण्डं कत्वा पञ्चमे दिवसे द्वे थेरा नातिविकाले नहायित्वा अनुरुद्धत्थेरस्स वसनट्ठानं गच्छन्ति । तत्थ तयोपि निसीदित्वा तिण्णं पिटकानं अञ्ञतरस्मिं अञ्ञमञ्ञं पञ्हं पुच्छन्ति, अञ्ञमञ्ञं विस्सज्जेन्ति । तेसं एवं करोन्तानंयेव अरुणं उग्गच्छति । तं सन्धायेतं वुत्तं । एत्तावता थेरेन भगवता अप्पमादलक्खणं पुच्छितेन पमादट्ठानेसुयेव अप्पमादलक्खणं विस्सज्जितं होति । अञ्ञेसञ्हि भिक्खूनं भिक्खाचारपविसनकालो निक्खमनकालो निवासनपरिवत्तनं चीवरपारुपनं अन्तोगामे पिण्डाय चरणं धम्मकथनं अनुमोदनं अन्तोगामतो निक्खमित्वा भत्तकिच्चकरणं पत्तधोवनं पत्तओसापनं पत्तचीवरपटिसामनं ति पपञ्चकरणट्ठानानि एतानि । तस्मा थेरो "अम्हाकं एत्तकं ठानं मुञ्चित्वा विस्सट्ठकथापवत्तनेन कम्मट्ठाने पमज्जनट्ठानानि, तत्थापि मयं भन्ते कम्मट्ठानविरुद्धं न पटिपज्जामा" ति अञ्ञेसं पमादट्ठानेसुयेव सिखाप्पत्तं अत्तनो अप्पमादलक्खणं विस्सज्जेसि । इमिनाव एतानि ठानानि मुञ्चित्वा अञ्ञत्थ विहारसमापत्तीनं अवळञ्जनवसेन पमादकालो नाम अम्हाकं नत्थीति दीपेति ।

पाचीनवंसदायगमनकथावण्णना निट्ठिता ।

पालिलेय्यकगमनकथावण्णना

B. 360

४६७॥ **धम्मियाकथाया**ति समग्गवासे आनिसंसपटिसंयुत्ताय धम्मकथाय । **अनुपुब्बेन**[1] **चारिकं चरमानो** ति अनुक्कमेन गामनिगमपटिपाटिया चारिकं चरमानो । **येन पालिलेय्यकं तदवसरी**ति एककोव येन पालिलेय्यकगामो, तं अवसरि । पालिलेय्यकगामवासिनो पि पच्चुग्गन्त्वा भगवतो दानं दत्वा पालिलेय्यकगामस्स अविदूरे

1. उदान-ट्ठ-२२६-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

रक्खितवनसण्डो नाम अत्थि, तत्थ भगवतो पण्णसालं कत्वा "एत्थ भगवा वसतू"-ति याचित्वा वासयिंसू। **भद्दसालो**ति पन तत्थेको मनापो लट्ठिको सालरुक्खो। भगवा तं गामं उपनिस्साय वनसण्डे पण्णसालाय समीपे तस्मिं रुक्खमूले विहासि। तेन वुत्तं **"पालिलेय्यके विहरति रक्खितवनसण्डे भद्दसालमूले"** ति।

अथ खो भगवतो रहोगतस्साति आदि भगवतो विवेकसुखपच्चवेक्खणदस्सनं। **आकिण्णो न फासू विहासिं** ति सम्बाधप्पत्तो आकिण्णो विहासिं। किं पन भगवतो सम्बाधो अत्थि संसग्गो वाति ? नत्थि। न हि कोचि भगवन्तं अनिच्छाय उपसङ्कमितुं सक्कोति। दुरासदा हि बुद्धा भगवन्तो सब्बत्थ च अनुपलित्ता, हितेसिताय पन सत्तेसु अनुकम्पं उपादाय "मुत्तो मोचेस्सामी" ति पटिञ्ञानुरूपं चतुरोघनित्थरणत्थं अट्ठन्नं परिसानं अत्तनो सन्तिकं कालेन कालं उपसङ्कमनं अधिवासेति, सयञ्च महाकरुणासमुस्साहितो कालञ्ञू हुत्वा तत्थ उपसङ्कमीति इदं सब्बबुद्धानं आचिण्णं। नायमिध आकिण्णविहारो अधिप्पेतो, इध पन तेहि कलहकारकेहि कोसम्बक भिक्खूहि सद्धिं एकविहारे वासं विहासि, तदा विनेतब्बाभावतो आकिण्णविहारं कत्वा वुत्तं "अहं खो पुब्बे आकिण्णो न फासु विहासिं" ति। तेनेवाह **"तेहि कोसम्बकेहि भिक्खूहि भण्डनकारकेही"**ति आदि।

दहरपोतकेहीति दहरेहि हत्थिपोतकेहि, ये भिङ्कातिपि वुच्चन्ति। **तेही**ति हत्थिआदीहि। **कद्दमोदकानी**ति **कद्दममिस्सानि** उदकानि। **ओगाहा**ति एत्थ "ओगाहं" तिपि पाळि। **अस्सा** ति हत्थिनागस्स। **उपनिघंसन्तियो** ति घट्टेन्तियो। उपनिघंसियमानोपि अत्तनो उळारभावेन न कुज्झति, तेन ता घंसन्तियेव। **वूपकट्ठोति** विपकट्ठो[1] दूरीभूतो।

B. 361

यूथा ति हत्थिघटाय। **येन भगवा तेनुपसङ्कमी**ति सो किर हत्थिनागो यूथवासे उक्कण्ठितो तं वनसण्डं पविट्ठो। तत्थ भगवन्तं दिस्वा घटसहस्सेन निब्बापितसन्तापो विय निब्बुतो हुत्वा पसन्नचित्तो भगवतो सन्तिके अट्ठासि, ततो पट्ठाय वत्तसीसे ठत्वा भद्दसालस्स पण्णसालाय च समन्ततो अप्पहरितं कत्वा साखाभङ्गेन सम्मज्जति, भगवतो मुखधोवनं देति, नहानोदकं आहरति, दन्तकट्ठं देति, अरञ्ञतो मधुरानि फलाफलानि आहरित्वा सत्थु उपनेति। सत्था तानि परिभुञ्जति। तेन वुत्तं **"सोण्डाय भगवतो पानीयं परिभोजनीयं उपट्ठापेती"**ति आदि। सो किर सोण्डाय दारूनि आहरित्वा अञ्ञमञ्ञं घंसित्वा अग्गिं उट्ठापेत्वा दारूनि जालापेत्वा तत्थ पासाणखण्डानि तापेत्वा तानि दण्डकेहि वट्टेत्वा सोण्डियं खिपित्वा उदकस्स तत्थभावं ञत्वा भगवतो सन्तिकं उपगन्त्वा तिट्ठति। भगवा "हत्थिनागो मम नहानं इच्छती" ति तत्थ गन्त्वा नहानकिच्चं करोति। पानीयेपि एसेव नयो। तस्मिं पन

---

1. पविवेकट्ठो (उदान-ट्ठ-२२५-पिट्ठे)

सीतले जाते उपसङ्कमति । तं सन्धाय वुत्तं **"सोण्डाय भगवतो पानीयं परिभोजनीयं उपट्ठापेती"** ति ।

अत्तनो च पविवेकं विदित्वाति केहिचि अनाकिण्णभावलद्धं कायविवेकं जानित्वा। इतरे पन विवेका भगवतो सब्बकालं विज्जन्तियेव । **इमं उदानं उदानेसी**ति इमं अत्तनो हत्थिनागस्स च विवेकाभिरतिय समानज्झासयभावदीपनं उदानं उदानेसि ।

गाथाय पन एवमत्थयोजना वेदितब्बा[1]-**एतं ईसादन्तस्स** रथईसासदिसदन्तस्स हत्थिनागस्स **चित्तं नागेन** बुद्धनागस्स **चित्तेन** समेति संसन्दति । कथं समेति चे ? **यदेको रमती वने,** यस्मा बुद्धनागो "अहं खो पुब्बे आकिण्णो विहासिं" ति पुरिमं आकिण्ण विहारं जिगुच्छित्वा विवेकं उपब्रूहयमानो इदानि यथा **एको** अदुतियो **वने** अरञ्ञे **रमति** अभिरमति, एवं अयम्पि हत्थिनगो पुब्बे अत्तनो हत्थिआदीहि आकिण्णविहारं जिगुच्छित्वा इदानि **एको** असहायो वने एकविहारं रमति अभिनन्दति, तस्मास्स **चित्तं रागेन समेति,** तस्स चित्तेन समेतीति कत्वा एकीभावरतिया एकसदिसं होतीति अत्थो । B. 362

पालिलेय्यकगमनकथावण्णना निट्ठिता ।

अट्ठारसवत्थुकथावण्णना

४७३॥ **यो पटिबाहेय्य, आपत्ति दुक्कटस्सा ति** एत्थ यो सेनासनारहस्स सेनासनं पटिबाहति, तस्सेव आपत्ति । कलहकारकादीनं पनेत्थ "ओकासो नत्थी" ति आदिकं संघस्स कतिकं आरोचेत्वा न[2] पञ्ञपेन्तस्स "अहं वुड्ढो" ति पसय्ह अत्तनाव अत्तनो पञ्ञपेत्वा गण्हन्तं "युत्तिया गण्हथा" ति वत्वा वारेन्तस्स च नत्थि आपत्ति । "भण्डनकारकं निक्कड्ढतीति वचनतो कुलदूसकस्स पब्बाजनीयकम्मानुञ्ञाय च इध कलहवूपसमनत्थं आगतानं कोसम्बकानम्पि" यथावुड्ढं" ति अवत्वा 'विवित्ते असति विवित्तं कत्वापि दातब्बं' ति वुत्तत्ता विवित्तं कत्वा देन्तं पटिबाहन्तस्सेव आपत्ती" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्ता ।

उपालिसंघसामग्गीपुच्छावण्णना ।

४७६॥ **न मूला मूलं गन्त्वा** ति मूलतो मूलं अगन्त्वा । **अत्थतो अपगता**ति सामग्गिसङ्खातअत्थतो अपगता ।

---

1. उदान-ट्ठ-२२८-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।
2. आरोपेत्वान–(स्या.)

४७७॥ येन नं पच्चत्थिका वदेय्युं, तं न हि होतीति सम्बन्धो । **अनपगतं** ति कारणतो अनपेतं, सकारणं ति वुत्तं होति ।

उसूयायाति इमिना दोसागतिगमनस्स सङ्गहितत्ता "**आगतिगमनेना**"ति अवसेस-अगतिगमनं दस्सितं ति वेदितब्बं । अट्ठहि **दूतङ्गेही**ति "सोता च होति सावेता च B. 363 उग्गहेता च धारेता च विञ्ञापेता च कुसलो च सहितासहितदस्सनो च अकलहकारतो चा" ति एवं वुत्तेहि अट्ठहि दूतङ्गेहि । सेसमेत्थ पाळितो अट्ठकथातो च सुविञ्ञेय्यमेव ।

कोसम्बकक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

इति समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय सारत्थदीपनियं

महावग्गवण्णना निट्ठिता ।

चूळवग्ग

चूळवग्ग

B. 365

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

१. कम्मक्खन्धक

तज्जनीयकम्मकथावण्णना

१॥ चूळवग्गस्स पठमे कम्मक्खन्धके ताव "यट्ठिं पवेसय, कुन्ते पेवसया"ति आदीसु विय सहचरणञायेन "मञ्चा उक्कुट्ठिं करोन्ती"ति आदीसु विय निस्सितेसु निस्सयवोहारवसेन वा पण्डुकलोहितकनिस्सिता पण्डुकलोहितकसद्देन वुत्ताति आह **"तेसं निस्सितकापि पण्डुकलोहितकात्वेव पञ्ञायन्ती"** ति । **पटिवदथा ति** पटिवचनं देथ ।

अधम्मकम्मद्वादसककथावण्णना

४॥ **तीहि अङ्गेहि समन्नागतं** ति पच्चेकं समुदितेहि वा तीहि अङ्गेहि समन्नागतं । न हि तिण्णं एव अङ्गानं समोधानेन अधम्मकम्मं होति, एकेनपि होतियेव । "अप्पटिञ्ञाय कतं होतीति लज्जिं सन्धाय वुत्तं" ति गण्ठिपदेसु कथितं ।

ननु च "अदेसनागामिनिया आपत्तिया कतं होती"ति इदं परतो "तीहि भिक्खवे अङ्गेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो आकङ्खमानो संघो तज्जनीयकम्मं करेय्य, अधिसीले सीलविपन्नो होती" ति इमिना विरुज्झति । अदेसनागामिनिं आपन्नो हि "अधिसीले सीलविपन्नो" ति वुच्चतीति ? तत्थ केचि वदन्ति "तज्जनीयकम्मस्स हि विसेसेन भण्डनकारकत्तं अङ्गं ति अट्ठकथायं वुत्तं, तं पाळिया आगतनिदानेन समेति, तस्मा सब्बतिकेसुपि भण्डनं आरोपेत्वा भण्डनपच्चया आपन्नापत्तिवसेन इदं कम्मं कातब्बं । तस्मा 'अधिसीले सीलविपन्नो' ति एत्थापि पुब्बमागे वा परभागे वा चोदना- B. 366 सारणादिकाले भण्डनपच्चया अपन्नापत्तिवसेनेव कातब्बं, न केवलं संघादि-सेसपच्चया कातब्बं" ति । अपरे पन वदन्ति "अदेसनागामिनियाति इदं पाराजिका-पत्तिंयेव सन्धाय वुत्तं, न संघादिसेसं । अट्ठकथायं पन 'अदेसनागामिनिया ति पाराजिकापत्तिया वा संघादिसेसापत्तिया वा' ति वुत्तं । तत्थ संघादिसेसापत्तिया वा ति अत्थुद्धारवसेन वुत्तं, 'अधिसीले सीलविपन्नो' ति च इदं संघादिसेसंयेव सन्धाय वुत्तं, न पाराजिकं । तस्मा पाराजिकापत्तिपच्चया न तज्जनीयकम्मं कातब्बं पयोजनाभावा, संघदिसेसपच्चया कातब्बं ति अयमत्थो सिद्धो होति । सुक्कपक्खे 'देसनागामिनिया आपत्तिया कतं होती'ति इमिना विरुज्झतीति चे ? न एकेन परियायेन संघादिसेसस्सपि देसनागामिनीवोहारसम्भवतो" ति, तं युत्तं विय दिस्सति ।

नप्पटिप्पस्सम्भेतब्बअट्ठारसककथावण्णना

८॥ **लोभं पातेन्ती**ति आदि सम्मावत्तनाय परियायवचनं ।

नियस्सकम्मकथावण्णना

११॥ नियस्सकम्मे "**निस्साय ते वत्थब्बं** ति गरुनिस्सयं सन्धाय वुत्तं, न इतरं" ति **केनचि** लिखितं । **गण्ठिपदे** पन "नियस्सकम्मं यस्मा बालवसेन करीयति, तस्मा निस्साय वत्थब्बं ति निस्सयं गाहापेतब्बो" ति वुत्तं, वीमंसित्वा युत्ततरं गहेतब्बं । **अपिस्सूति** एत्थ सु इति निपातमत्तं, भिक्खू अपि निच्चब्यावटा होन्तीति वुत्तं होति ।

पब्बाजनीयकम्मकथावण्णना

२९॥ पब्बाजनीयकम्मे **तेन हि भिक्खवे संघो पब्बाजनीयकम्मं पटिप्पस्सम्भेतू** ति इदं तेसु विब्भमन्तेसुपि पक्कमन्तेसुपि सम्मावत्तन्तेयेव सन्धाय वुत्तं ।

पटिसारणीयकम्मकथावण्णना

३३॥ सुधम्मवत्थुस्मिं **मच्छिकासण्डे** ति एवंनामके नगरे । तत्थ किर[1] चित्तो B. 367 गहपति पञ्चवग्गियानं अब्भन्तरं महानामत्थेरं पिण्डाय चारमानं दिस्वा तस्स इरियापथे पसीदित्वा पत्तं आदाय गेहं पवेसेत्वा भोजेत्वा भत्तकिच्चावसाने धम्मकथं सुणन्तो सोतापत्तिफलं पत्वा अचलसद्धो हुत्वा अम्बाटकवनं नाम अत्तनो उय्यानं संघारामं कातुकामो थेरस्स हत्थे उदकं पातेत्वा निय्यातेसि । तस्मिं खणे "पतिट्ठितं बुद्धसासनं" ति उदकपरियन्तं कत्वा महापथवी कम्पि, महासेट्ठि उय्याने महाविहारं कारेसि । तत्थायं सुधम्मो भिक्खु आवासिको अहोसि । तं सन्धाय वुत्तं "**आयस्मा सुधम्मो मच्छिकासण्डे चित्तस्स गहपतिनो आवासिको होती**" ति आदि । तत्थ धुवभत्तिको ति निच्चभत्तिको ।

अपरेन समयेन चित्तस्स गुणकथं सुत्वा भिक्खुसहस्सेन सद्धिं द्वे अग्गसावका तस्स सङ्गहं कत्तुकामा मच्छिकासण्डं अगमंसु । तं सन्धाय वुत्तं "**तेन खो पन समयेन सम्बहुला थेरा**" ति आदि । चित्तो गहपति तेसं आगमनं सुत्वा अड्ढयोजनमत्तं पच्चुग्गन्त्वा ते आदाय अत्तनो विहारं पवेसेत्वा आगन्तुकवत्तं कत्वा "भन्ते थोकं धम्मकथं सोतुकामोम्ही"ति धम्मसेनापतिं याचि । अथ नं थेरो "उपासक अद्धानेनाम्हा किलन्तरूपा, अपि च थोकं सुणाही" ति तस्स धम्मकथं कथेसि । तेन वुत्तं "**एकमन्तं निसिन्नं खो चित्तं गहपतिं आयस्मा सारिपुत्तो धम्मिया कथाय सन्दस्सेसी**"-ति आदि । सो थेरस्स धम्मकथं सुणन्तोव अनागामिफलं पापुणि ।

---

1. धम्मपद-ट्ठ-१-३२७-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

४१॥ **नासक्खि चित्तं गहपतिं खमापेतुं** ति सो तत्थ गन्त्वा "गहपति मय्हमेव सो दोसो, खमाहि मे" ति वत्वापि "नाहं खमामी" ति तेन पटिक्खित्तो मङ्कुभूतो तं खमापेतुं नासक्खि। पुनदेव सत्थु सन्तिकं पच्चागमासि। सत्था "नास्स उपासको खमिस्सती"ति जानन्तो पि "मानथद्धो एस तिंसयोजनं गन्त्वाव पच्चागच्छतू" ति खमनुपायं अनाचिक्खित्वाव उय्योजेसि। अथस्स पुन आगतकाले निहतमानस्स अनुदूतं दत्वा "गच्छ, इमिना सद्धिं गन्त्वा उपासकं खमापेही" ति वत्वा "समणेन नाम 'मय्हं विहारो, मय्हं निवासट्ठानं, मय्हं उपासको, मय्हं उपासिका" ति मानं वा इस्सं वा कातुं न वट्टति। एवं करोन्तस्स हि इच्छामानादयो किलेसा वड्ढन्ती" ति ओवदन्तो–

"असन्तं भावनमिच्छेय्य, पुरेक्खारञ्च भिक्खुसु। B. 368
आवासेसु च इस्सरियं, पूजा परकुलेसु च।
ममेव कत मञ्ञन्तु, गिही पब्बजिता उभो।
ममेवातिवसा अस्सु, किच्चाकिच्चेसु किस्मिचि।
इति बालस्स सङ्कप्पो, इच्छा मानो च वड्ढती" ति–

धम्मपदे[1] इमा गाथा अभासि।

सुधम्मत्थेरोपि इमं ओवादं सुत्वा सत्थारं वन्दित्वा उट्ठायासना पदक्खिणं कत्वा तेन अनुदूतेन भिक्खुना सद्धिं गन्त्वा उपासकस्स चक्खुपथे आपत्तिं पटिकरित्वा उपासकं खमापेसि। सो उपासकेन "खमामहं भन्ते, सचे मय्हं दोसो अत्थि, खमथ मे" ति पटिखमापितो सत्थारा दिन्नओवादे ठत्वा कतिपाहेनेव सह पटिसम्भिदाहि अरहत्तं पापुणि।

आपत्तिया अदस्सने उक्खेपनीयकम्मकथा वण्णना

५०॥ **तस्सा अदस्सनेयेव कम्मं कातब्बं** ति तस्सा अदस्सनेयेव उक्खेपनीयकम्मं कातब्बं। तज्जनीयादिकम्मं पन आपत्तिं आरोपेत्वा तस्सा अदस्सने अप्पटिकम्मे वा भण्डनकारकादिअङ्गेहि कातब्बं। सेसमेत्थ उत्तानमेव।

कम्मक्खन्धकवण्णना निट्ठिता।

----

1. खु-१-२३-पिट्ठे।

B. 369

२. पारिवासिकक्खन्धक

पारिवासिकवत्तकथा वण्णना

७५॥ पारिवासिकक्खन्धके **नवकतरं पारिवासिकं** ति अत्तनो नवकतरं पारिवासिकं। पारिवासिकस्स हि अत्तनो नवकतरं पारिवासिकं ठपेत्वा अञ्ञे मूलायपटिकस्सनारहमानत्तारहमानत्तचारिकअब्भानारहापि पकतत्तट्ठानेयेव तिट्ठन्ति। तेनाह **"अन्तमसो मूलाय पटिकस्सनारहादीनम्पी"** ति। पादे घंसेन्ति एतेनाति पादघंसनं, सक्खरकथलादि। "अनुजानामि भिक्खवे तिस्सो पादघंसनियो सक्खरं कथलं समुद्दफेणकं" ति[1] वुत्तं। **सद्धिविहारिकादीनम्पि सादियन्तस्सा** ति सद्धिविहारिकानम्पि अभिवादनादिं सादियन्तस्स। "मा मं गामप्पवेसनं आपुच्छथा" ति वुत्ते अनापुच्छापि गामं पविसितुं वट्टति। **यो यो वुड्ढो** ति पारिवासिकेसु भिक्खूसु **यो यो वुड्ढो**। **नवकतरस्स सादितुं** ति पारिवासिकनवकतरस्स अभिवादनादिं सादितुं।

तत्थेवा ति संघनवकट्ठानेयेव। **अत्तनो पाळिया पवारेतब्बं** ति अत्तनो वस्सग्गेन पत्तपाळिया पवारेतब्बं, न पन सब्बेसु पवारितेसूति अत्थो। **यदि पन न गण्हाति न विस्सज्जेती**ति यदि पुरिमदिवसे अत्तनो न गण्हाति गहेत्वा च न विस्सज्जेति। **चतुस्सालभत्तं** ति भोजनसालायं पटिपाटिया दिय्यमानभत्तं। **हत्थपासे ठितेना**ति दायकस्स हत्थपासे ठितेन।

७६॥ **अञ्ञो सामणेरो न गहेतब्बो** ति उपज्झायेन हुत्वा अञ्ञो सामणेरो न गहेतब्बो। **उपज्झं दत्वा गहितसामणेरापी**ति पकतत्तकाले उपज्झं दत्वा गहितसामणेरापि। लद्धसम्मुतिकेन आणत्तोपि गरुधम्मेहि अञ्ञेहि वा ओवदितुं लभतीति आह **"पटिबलस्स वा भिक्खुस्स भारो कातब्बो"** ति। आगता भिक्खुनियो वत्तब्बाति सम्बन्धो। **सवचनीयं** ति सदोसं। **जेट्ठकट्ठानं न कातब्बं** ति पधानट्ठानं न कातब्बं। किं तं ति आह **"पातिमोक्खुद्देसकेन वा" ति आदि**।

B. 370

रजेहि हता उपहता भूमि एतिस्साति रजोहतभूमि, रजोकिण्णभूमीति अत्थो। **पच्चयं** ति वस्सावासिकलाभं सन्धाय वुत्तं। **एकपस्से ठत्वा** ति पाळिं विहाय भिक्खूनं पच्छतो ठत्वा। **सेनासनं न लभती**ति सेय्यापरियन्तभागिताय वस्सग्गेन गण्हितुं न लभति। अस्सा ति भवेय्य, "आगन्तुकेन आरोचेतब्बं, आगन्तुकस्स आरोचेतब्बं" ति अविसेसेन वुत्तत्ता सचे द्वे परिवासिका गतट्ठाने अञ्ञमञ्ञं पस्सन्ति, उभोहिपि

---

1. वि. ४-२६० पिट्ठे।

अञ्ञमञ्ञस्स आरोचेतब्बं। यथा बहि दिस्वा आरोचितस्स भिक्खुनो विहारं आगते पुन आरोचनकिच्चं नत्थि, एवं अञ्ञं विहारं गतेनपि तत्थ पुब्बे आरोचितस्स पुन आरोचनकिच्चं नत्थीति वदन्ति।

८१॥ **अविसेसेना** ति पारिवासिकस्स उक्खित्तकस्स च अविसेसेन। ओबद्धं ति पलिबुद्धं।

८३॥ **सहवासो** ति वुत्तप्पकारे छन्ने पकतत्तेन भिक्खुना सद्धिं सयनमेव अधिप्पेतं, न सेसइरियापथकप्पनं। सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेव।

पारिवासिकक्खन्धकवण्णना निट्ठिता।

B. 371

३. समुच्चयक्खन्धक

सुक्कविसट्ठिकथावण्णना

९७॥ समुच्चयक्खन्धके **वुत्तनयेन वत्तं समादातब्बं** ति पारिवासिकक्खन्धक-वण्णनायं वुत्तनयेन द्वीहि पदेहि एकेन वा समादातब्बं । **वेदियामी**ति चित्तेन सम्पटिच्छित्वा सुखं अनुभवामि, न तप्पच्चया अहं दुक्खितो ति अधिप्पायो । **वुत्तनयेनेव संघमज्झे निक्खिपितब्बं** ति परिवासिकक्खन्धके वुत्तनयेन "मानत्तं निक्खिपामि, वत्तं निक्खिपामी"ति इमेहि द्वीहि एकेन वा निक्खिपितब्बं । **तस्स आरोचेत्वा निक्खिपितब्बं** ति अनारोचनेन वत्तभेददुक्कटपरिमोचनत्थं वुत्तं ।**द्वे लेड्डुपाते अतिक्कमित्वा** ति भिक्खूनं सज्झायनसद्दसवनूपचारविजहनत्थं वुत्तं, **महामग्गतो ओक्कमा** ति मग्गप्पटिपन्नभिक्खूनं उपचारविजहनत्थं, **गुम्बेन वा वतिया वा पटिच्छन्नट्ठाने** ति दस्सनूपचारविजहनत्थं । अनिक्खित्तवत्तेन अन्तोउपचारगतानं सब्बेसम्पि आरोचेतब्बत्ता **"अयं निक्खित्तवत्तस्स परिहारो"** ति वुत्तं । तत्थ **निक्खित्त-वस्सा** ति वत्तं निक्खिपित्वा परिवसन्तस्साति अत्थो। अयं पनेत्थ थेरस्स अधिप्पायो– वत्तं निक्खपित्वा परिवसन्तस्स उपचारगतानं सब्बेसं आरोचनकिच्चं नत्थि, दिट्ठरूपानं सुतसद्दानं आरोचेतब्बं, अदिट्ठअसुतानम्पि अन्तोद्वादसहत्थगतानं आरोचे-तब्बं। इदं वत्तं निक्खिपित्वा परिवसन्तस्स लक्खणं ति ।

परिवासकथावण्णना

१०२॥ "सतियेव अन्तराये अन्तरायिकसञ्ञी छादेति, अच्छन्ना होति । अन्तरायिकस्स पन अनन्तरायिकसञ्ञाय छादयतो अच्छन्नावा"ति पि पाठो । **अवेरी**-ति हितकामो । **उद्धस्ते अरुणे** ति उट्ठिते अरुणे । **सुद्धस्स सन्तिके** ति सभागसंघादिसेसं अनापन्नस्स सन्तिके । **वत्थुं** ति असुचिमोचनादिवीतिक्कमं ।

सुक्कविस्सट्ठीति वत्थु चेव गोत्तञ्चाति सुक्कविस्सट्ठीति इदं असुचिमोचनलक्खणस्स वीतिक्कमस्स पकासनतो वत्थु चेव होति, सजातियसाधारणविजातियविनिवत्त-सभावाय सुक्कविस्सट्ठिया एव पकासनतो गोत्तञ्च होतीति अत्थो । गं तायतीति हि B. 372 गोत्तं । **संघादिसेसोति नामञ्चेव आपत्ति चा** ति **संघादिसेस**ो ति तेन तेन वीतिक्कमेन आपन्नस्स आपत्तिनिकायस्स नामप्पकासनतो नामञ्चेव होति आपत्तिसभागत्ता आपत्ति च ।

तदनुरूपं कम्मवाचं कत्वा मानत्तं दातब्बं ति–"सुणातु मे भन्ते संघो, अयं इत्थन्नामो भिक्खु एकं आपत्तिं आपज्जि सञ्चेतनिकं सुक्कविस्सट्ठिं एकाहपटिच्छन्नं, सो संघं

एकिस्सा आपत्तिया सञ्चेतनिकाय सुक्कविस्सट्ठिया एकाहपटिच्छन्नाय एकाहपरिवासं याचि । संघो इत्थन्नामस्स भिक्खुनो एकिस्स आपत्तिया सञ्चेतनिकाय सुक्कविस्सट्ठिया एकाहपटिच्छन्नाय एकाहपरिवासं अदासि । सो परिवुत्थपरिवासो । अयं इत्थन्नामो भिक्खु एकं आपत्तिं आपज्जि सञ्चेतनिकं सुक्कविस्सट्ठिं अप्पटिच्छन्नं, सो संघं तासं आपत्तीनं सञ्चेतनिकानं सुक्कविस्सट्ठीनं पटिच्छन्नाय च अप्पटिच्छन्नाय च छारत्तं मानत्तं याचति । यदि संघस्स पत्तकल्लं, संघो इत्थन्नामस्स भिक्खुनो द्विन्नं आपत्तीनं सञ्चेतनिकानं सुक्कविस्सट्ठीनं पटिच्छन्नाय च अप्पटिच्छन्नाय च छरत्तं मानत्तं ददेय्य, एसा ञत्ति ।

सुणातु मे भन्ते......पे॰.....सो परिवुत्थपरिवासो । अयं इत्थन्नामो भिक्खु एकं आपत्तिं आपज्जि सञ्चेतनिकं सुक्कविस्सट्ठिं अप्पटिच्छन्नं, सो संघं तासं.....पे॰.... याचति । संघो इत्थन्नामस्स भिक्खुनो द्विन्नं आपत्तीनं सञ्चेतनिकानं सुक्कविस्सट्ठीनं पटिच्छन्नाय च अप्पटिच्छन्नाय च छारत्तं मानत्तं देति । यस्सायस्मतो खमति इत्थन्नामस्स भिक्खुनो द्विन्नं आपत्तीनं सञ्चेतनिकानं सुकविस्सट्ठीनं पटिच्छन्नाय च अप्पटिच्छन्नाय च छारत्तं मानत्तस्स दानं, सो तुण्हस्स । यस्स नक्खमति, सो भासेय्य ।

दुतियम्पि एतमत्थं वदामि.....पे॰.....ततियम्पि एतमत्थं वदामि.....पे॰......द्विन्नं संघेन इत्थन्नामस्स भिक्खुनो द्विन्नं आपत्तीनं सञ्चेतनिकानं सुक्कविस्सट्ठीनं पटिच्छन्नाय च अप्पटिच्छन्नाय च छारत्तं मानत्तं, खमति संघस्स, तस्मा तुण्ही । एवमेतं धारयामीति–एवं कम्मवाचं कत्वा मानत्तं दातब्बं । चिण्णमानत्तस्स च इमिनाव B. 373 नयेन कम्मवाचं योजेत्वा अब्भानं कातब्बं ।

अञ्ञस्मिं ति सुद्धन्तपरिवासवसेन आपत्तिवुट्ठानतो अञ्ञस्मिं । दससतं आपत्तियो रत्तिसतं छादयित्वाति योजेतब्बं ।

परिवासकथावण्णना निट्ठिता ।

अत्तनो सीमं सोधेत्वा विहारसीमायाति विहारे बद्धसीममेव सन्धाय वुत्तं । **विहारूपचारतोपि द्वे लेड्डुपाता अतिक्कमितब्बा**ति भिक्खुविहारं सन्धाय वदति गामूपचारातिक्कमेनेव भिक्खुनीविहारूपचारातिक्कमस्स सिद्धत्ता । **विहारस्स चा**ति भिक्खुविहारस्स । **गामस्साति न वुत्तं** ति गामस्स उपचारं मुञ्चितुं वट्टतीति न वुत्तं, तस्मा गामूपचारेपि वट्टतीति अधिप्पायो ।

तत्थेव ठानं पच्चासीसन्तीति भिक्खूनं ठानं पच्चासीसन्ति । **परिवासवत्तादीनं** ति परिवासनिस्सयपटिप्पस्सद्धिआदीनं । **युत्ततरं दिस्सती**ति इमिना अनिक्खित्तवत्त-

भिक्खुना विय भिक्खुनियापि अन्तोउपचारसीमगतानंयेव आरोचेतब्बं, न गामे ठितानम्पि गन्त्वा आरोचेतब्बं ति दीपेति। **तस्मिं गामे** ति यस्मिं गामे भिक्खुनुपस्सयो होति, तस्मिं गामे। **बहि उपचारसीमाय ठत्वा** ति उपचारसीमतो बहि ठत्वा। **सम्मन्नित्वा दातब्बा**ति एत्थ सम्मन्नित्वा दिन्नाय सहवासेपि रत्तिच्छेदो न होति।

पटिच्छन्नपरिवासकथावण्णना

१०८॥ विसुं मानत्तं चरितब्बं ति मूलायपटिकस्सनं अकत्वा विसुं कम्मवाचाय मानत्तं गहेत्वा चरितब्बं।

सुक्कविस्सट्ठिकथावण्णना निट्ठिता

B. 374

अग्घसमोधानपरिवासकथावण्णना

१३४॥ **एकापत्तिमूलकं** ति "एका आपत्ति एकाहप्पटिच्छन्ना, एका आपत्ति द्वीहप्पटिच्छन्ना" ति आदिना वुत्तनयं सन्धाय वदति। **आपत्तिवड्ढनकं** ति "एका आपत्ति एकाहप्पटिच्छन्ना, द्वे आपत्तियो द्वीहप्पटिच्छन्ना" ति आदिना वुत्तं आपत्तिवड्ढनकनयं सन्धाय।

द्वेभिक्खुवारएकादसकादिकथावण्णना

१८१॥ **थुल्लच्चयादीहि मिस्सकं** ति एकवत्थुम्हि पुब्बभागे आपन्नथुल्लच्चयदुक्कटेहि मिस्सकं। **मक्खधम्मो** नाम छादेतुकामता।

१८२॥ **सम्बहुला संघादिसेसा आपत्तियो आपज्जति परिमाणम्पी**ति आदि जातिवसेनेकवचनं, भावनपुंसकनिद्देसो वा। सेसमेत्थ पाळितो अट्ठकथातो च सुविञ्ञेय्यमेव।

समुच्चयक्खन्धकवण्णना निट्ठिता।

---

४. समथक्खन्धक

B. 375

सम्मुखाविनयकथावण्णना

१८७॥ समथक्खन्धके **सञ्ञापेतीति** एत्थ सं-सद्दूपपदो ञा-सद्दो तोसनविसिट्ठे अवबोधने वत्ततीति आह **"परितोसेत्वा जानापेती"** ति।

सतिविनयादिकथावण्णना

१९५-२००॥ **देसनामत्तमेवेतं** ति "पञ्चिमानी" ति एतं देसनामत्तं। सति-वेपुल्लप्पत्तस्स खीणासवस्स दातब्बो विनयो **सतिविनयो**। अमूळ्हस्स दातब्बो विनयो **अमूळ्हविनयो**। पटिञ्ञातेन करणं **पटिञ्ञातकरणं**।

२१२॥ **तिणवत्थारकसदिसत्ता** ति तंसदिसताय तब्बोहारो ति दस्सेति यथा "एस ब्रह्मदत्तो" ति।

अधिकरणकथावण्णना

२१६॥ **विवादाधिकरणस्स किं मूलं** ति आदीसु **विवादमूलानीति** विवादस्स मूलानि। कोधनो ति कुज्झनलक्खणेन **कोधेन** समन्नागतो। **उपनाहीति** वेरअप्पटि-निस्सग्गलक्खणेन उपनाहेन समन्नागतो। **अगारवो** ति[1] गारवविरहितो। **अप्पतिस्सो** ति अप्पतिस्सयो अनीचवुत्ति। एत्थ पन यो भिक्खु सत्थरि धरमाने तीसु कालेसु उपट्ठानं न याति, सत्थरि अनुपाहने चङ्कमन्ते सउपाहनो चङ्कमति, नीचे चङ्कमे चङ्कमन्ते उच्चे चङ्कमति, हेट्ठा वसन्ते उपरि वसति, सत्थु दस्सनट्ठाने उभो अंसे पारुपति, छत्तं धारेति, उपाहनं धारेति, नहायति, उच्चारं वा पस्सावं वा करोति, परिनिब्बुते वा पन चेतियं वन्दितुं न गच्छति, चेतियस्स पञ्ञायनट्ठाने सत्थु-दस्सनट्ठाने वुत्तं सब्बं करोति, अञ्ञेहि च भिक्खूहि "कस्मा एवं करोसि, न इदं वट्टति, सम्मासम्बुद्धस्स नाम लज्जितुं वट्टती" ति वुत्ते "तुण्ही होति, बुद्धो बुद्धोति वदसि, किं बुद्धो नामा" ति भणति, अयं **सत्थरि अगारवो** नाम।

यो पन धम्मसवने संघुट्ठे सक्कच्चं न गच्छति, सक्कच्चं धम्मं न सुणाति, निद्दायति वा सल्लपन्तो वा निसीदति, सक्कच्चं न गण्हाति न वाचेति, "किं धम्मे अगारवं करोसी" ति वुत्ते "तुण्ही होति, धम्मो धम्मोति वदसि, किं धम्मो नामा" ति वदति, अयं **धम्मे अगारवो** नाम। यो पन थेरेन भिक्खुना अनज्झिट्ठो धम्मं

B. 376

---

1. दी-ट्ठ-३-२१७, म. ट्ठ. ४-२७ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

देसेति उद्दिसति पञ्हं कथेति, वुड्ढे भिक्खू घट्टेन्तो गच्छति तिट्ठति निसीदति, दुस्सपल्लत्थिकं वा हत्थपल्लत्थिकं वा करोति, संघमज्झे उभो अंसे पारुपति, छत्तुपाहनं धारेति, "भिक्खुसंघस्स लज्जितुं वट्टती" ति वुत्तेपि "तुण्ही होति, संघो संघोति वदसि, किं संघो, मिगसंघो अजसंघो" ति आदीनि वदति, अयं **संघे अगारवो** नाम । एकभिक्खुस्मिम्पि हि अगारवे कते संघे कतोयेव होति । तिस्सो सिक्खा पन अपूरयमानो **सिक्खाय न परिपूरकारी** नाम ।

अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानं ति[1] एकस्मिं विहारे द्विन्नं भिक्खूनं उप्पन्नविवादो कथं देवमनुस्सानं अहिताय दुक्खाय संवत्तति ? कोसम्बक्खन्धके विय हि द्वीसु भिक्खूसु विवादं आपन्नेसु तस्मिं विहारे तेसं अन्तेवासिका विवदन्ति, तेसं ओवादं गण्हन्तो भिक्खुनिसंघो विवदति, ततो तेसं उपट्ठाका विवदन्ति, अथ मनुस्सानं आरक्खदेवता द्वे कोट्ठासा होन्ति । तत्थ धम्मवादीनं आरक्खदेवता धम्मवादिनियो होन्ति, अधम्मवादीनं अधम्मवादिनियो । ततो आरक्खदेवतानं मित्ता भुम्मदेवता भिज्जन्ति । एवं परम्पराय याव ब्रह्मलोका ठपेत्वा अरियसावके सब्बे देवमनुस्सा द्वे कोट्ठासा होन्ति । धम्मवादीहि पन अधम्मवादिनोव बहुतरा होन्ति । ततो "यं बहुकेहि गहितं, तं तच्छं"ति[2] धम्मं विस्सज्जेत्वा बहुतरा अधम्मं गण्हन्ति, ते अधम्मं पुरक्खत्वा विहरन्ता अपायेसु निब्बत्तन्ति । एवं एकस्मिं विहारे द्विन्नं भिक्खूनं उप्पन्नो विवादो बहूनं अहिताय दुक्खाय होति । **अज्झत्तं वा** ति अत्तनि वा अत्तनो परिसाय वा । **बहिद्धा वा** ति परस्मिं वा परस्स परिसाय वा । **आयतिं अनवस्सवाया** ति आयतिं अनुप्पादाय ।

मक्खीति परेसं गुणमक्खनलक्खणेन मक्खेन समन्नागतो । **पळासी** ति युगग्गा- B. 377 हलक्खणेन पळासेन समन्नागतो । **इस्सुकी** ति परसक्कारादीनं इस्सायनलक्खणाय इस्साय समन्नागतो । **मच्छरी**ति आवासमच्छरियादीहि समन्नागतो । **सठो** ति केराटिको । **मायावी**ति कतपापपटिच्छादको । **पापिच्छो** ति असन्तसम्भावनिच्छको दुस्सीलो । **मिच्छादिट्ठी**ति नत्थिकवादी अहेतुकवादी अकिरियवादी । **सन्दिट्ठि-परामासी**ति सयं दिट्ठमेव परामसति गण्हाति । **आधानग्गाहीति**[3] दळ्हग्गाही । **दुप्पटिनिस्सग्गी**ति न सक्का होति गहितं निस्सज्जापेतुं । एत्थ च **कोधनो होति** उपनाही-ति आदिना पुग्गलाधिट्ठाननयेन कोधूपनाहादयो अकुसलधम्मा विवादमूलानीति दस्सितानि, तथा **दुट्ठचित्ता विवदन्ती**तिआदिना लोभदोसमोहा । अदुट्ठचित्ता विवदन्तीति आदिना च अलोभादयो विवादमूलानीति दस्सितानि ।

---

1. दी-ट्ठ-३-२१७, म-ट्ठ-४-२४, अं-ट्ठ-३-१०७-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. गण्हाति (स्या, क) दी-ट्ठ-३-२१८-पिट्ठे पन पस्सितब्बं ।
3. आदानग्गाहीति (स्या)

२१७॥ **दुब्बण्णो** ति पंसुपिसाचको विय झामखाणुवण्णो । दुद्दस्सिको ति विजातमातुयापि अमनापदस्सनो । **ओकोटिमको**ति लकुण्डको । **काणो** ति एकक्खि-काणो वा उभयक्खिकाणो वा । **कुणी**ति एकहत्थकुणी वा उभयहत्थकुणी वा । **खञ्जो**-ति एकपादखञ्जो वा उभयपादखञ्जो वा । **पक्खहतो** ति हतपक्खो पीठसप्पी ।

२२०॥ **विवादाधिकरणं कुसलं अकुसलं अब्याकतं** ति विवादाधिकरणं किं कुसलं अकुसलं उदाहु अब्याकतं ति पुच्छति । **विवादाधिकरणं सिया कुसलं** ति आदि विस्सज्जनं । एस नयो सेसेसुपि । विवदन्ति एतेनाति **विवादो** ति आह **"येन विवदन्ति, सो चित्तुप्पादो विवादो"** ति । कथं पन सो चित्तुप्पादो अधिकरणं नामाति आह **"समथेहि च अधिकरणीयताय अधिकरणं** ति, समथेहि समेतब्बताय अधिकरणं ति अत्थो । विवादहेतुभूतस्स हि चित्तुप्पादस्स वूपसमेन तप्पभावस्स सद्दस्सपि वूपसमो होतीति चित्तुप्पादस्स समथेहि अधिकरणीयता[1] परियायो सम्भवति ।

२२२॥ **आपत्ताधिकरणं सिया अकुसलं सिया अब्याकतं** ति अयं विकप्पो पञ्ञत्तिवज्जंयेव सन्धाय वुत्तो, न लोकवज्जं ति दस्सेतुं **सन्धायभासितवसेना"** ति आदिमाह । कस्मा पनेत्थ सन्धाय भासितवसेन अत्थो वेदितब्बो ति आह **"यस्मिं ही"**ति आदि । **पथवीखणनादिके** ति एत्थ **आदि**-सद्देन भूतगामपातब्यतादिपञ्ञत्तिवज्जं सिक्खापदं सङ्गण्हाति । यो विनये अपकतञ्ञुताय वत्तसीसेन सम्मुञ्जनि आदिना B. 378 पथवीखणनादीनि करोति, तदा तस्सुप्पन्नचित्त सन्धाय वुत्तं **"कुसलचित्तं अङ्गं होती"** ति । **अङ्गं होती** ति च वत्तसीसेन करोन्तस्सपि "इमं पथवीं खणामी" ति आदिना वीतिक्कम-जाननवसेन पवत्तत्ता तं कुसलचित्तं आपत्ताधिकरणं, कुसलचित्तं आपत्तिया कारणं होतीति अत्थो। न हि वीतिक्कमं अजानन्तस्स पथवीखणनादीसु आपत्ति सम्भवति । **तस्मिं सती** ति तस्मिं कुसलचित्ते आपत्तिभावेन गहिते सतीति अधिप्पायो । **तस्मा** ति यस्मा कुसलचित्ते आपत्तिभावेन गहिते सति "नत्थि आपत्ताधिकरणं कुसलं" ति न सक्का वत्तुं, तस्मा । **नयिदं अङ्गप्पहोनकचित्तं सन्धाय वुत्तं** ति "आपत्ताधिकरणं सिया अकुसलं सिया अब्याकतं, नत्थि आपत्ताधिकरणं कुसलं" ति इदं आपत्ति-समुट्ठापकभावेन अङ्गप्पहोनकं आपत्तिया कारणभूतं चित्तं सन्धाय न वुत्तं । किं पन सन्धाय वुत्तं ति आह **"इदं पना"** ति आदि । भिक्खुम्हि कम्मट्ठानगतचित्तेन निपन्ने निद्दायन्ते वा मातुगामो चे सेय्यं कप्पेति, तस्मिं खणे सेय्याकारेन वत्तमानरूपमेव आपत्ति, न कुसलादिवसप्पवत्तं चित्तं ति आह **"असञ्चिच्च.....पे०.....सहसेय्यादिवसेन आपज्जतो[2] अब्याकतं होती"** ति । तस्मिञ्हि खणे उट्ठातब्बे जाते अनुट्ठानतो तदाकारपवत्तो रूपक्खन्धोव आपत्ति ।

1. अधिकरणीयताय (स्या)
2. आपज्जनतो (स्या.) ।

"आपत्तिं आपज्जन्तो कुसलचित्तो वा आपज्जति अकुसलाब्याकतचित्तो वा" ति[1] वचनतो कुसलम्पि आपत्ताधिकरणं सियाति चे ? न । यो हि आपत्तिं आपज्जतीति वुच्चति, सो तीसु चित्तेसु अञ्ञतरचित्तसमङ्गी हुत्वा आपज्जति, न अञ्ञथाति दस्सनत्थं **"कुसल चित्तो वा"** ति आदि वुत्तं । अयञ्हेत्थ अत्थो–पथवीखणनादीसु कुसलचित्तक्खणे वीतिक्कमादिवसेन पवत्तरूपसम्भवतो कुसलचित्तो वा तथा-पवत्तरूपसङ्खातं अब्याकतापत्तिं आपज्जति, तथा अब्याकतचित्तो वा अब्याकत-रूपसङ्खातं अब्याकतापत्तिं आपज्जति । पाणातिपातादिं अकुसलचित्तो वा अकुसला-पत्तिं आपज्जति, रूपं पनेत्थ अब्बोहारिकं । सुपिनन्ते च पाणातिपातादिं करोन्तो सहसेय्यादिवसेन आपज्जितब्बापत्तिं आपज्जन्तो अकुसलचित्तो अब्याकतापत्तिं आपज्जती ति ।

B. 379 **कुसलचित्तं आपज्जेय्या** ति एळकलोमं गहेत्वा कम्मट्ठानमनसिकारेन तियोजनं अतिक्कमन्तस्स पञ्ञत्तिं अजानित्वा पदसो धम्मं वाचेन्तस्स च आपज्जितब्बापत्तिया कुसलचित्तं आपज्जेय्य । **न च तत्थ विज्जमानम्पि कुसलचित्तं आपत्तिया अङ्गं** ति तस्मिं विज्जमानम्पि कुसलचित्त आपत्तिया अङ्गं न होति, सयं आपत्ति न होतीति अत्थो । **चलितप्पवत्तानं** ति चलितानं पवत्तानञ्च । चलितो कायो, पवत्ता वाचा । अञ्ञतरमेव अङ्गं ति कायवाचानं अञ्ञतरमेव आपत्तीति अत्थो । तञ्च रूपक्खन्धपरियापन्नत्ता अब्याकतं ति इमिना अब्याकतमापत्ताधिकरणं, नाञ्ञं ति दस्सेति ।

यदि एवं "सापत्तिकस्स भिक्खवे निरयं वा वदामि तिरच्छानयोनिं वा" ति वचनतो अब्याकतस्सपि विपाकधम्मता आपज्जेय्या ति ? नापज्जेय्य । असञ्चिच्च आपन्ना हि आपत्तियो याव सो न जानाति, ताव अनन्तरायकरा, जानित्वा छादेन्तो पन छादनप्पच्चया अञ्ञं दुक्कटसङ्खातं अकुसलमापत्ताधिकरणमापज्जति, तञ्च अकुसलभावत्ता सग्गमोक्खानं अन्तरायकरणं ति सापत्तिकस्स अपायगामिता वुत्ता । अब्याकतं पन आपत्ताधिकरणं अविपाकधम्ममेवा ति निट्ठमेतं गन्तब्बं । तेनेव पोराणगण्ठिपदेसुपि "पुथुज्जनो कल्याणपुथुज्जनो सेक्खो अरहा ति चत्तारो पुग्गले दस्सेत्वा तेसु अरहतो आपत्ताधिकरणं अब्याकतमेव, तथा सेक्खानं, तथा कल्याणपुथुज्जनस्स असञ्चिच्च वीतिक्कमकाले अब्याकतमेव । इतरस्स अकुसलम्पि होति अव्याकतम्पि। यस्मा चस्स सञ्चिच्च वीतिक्कमकाले अकुसलमेव होति, तस्मा वुत्तं 'नत्थि आपत्ताधिकरणं कुसलं' ति । सब्बत्थ एवं अब्याकतं ति विपाकाभाव-मत्तं[2] सन्धाय वुत्तं" ति लिखितं । यञ्च आपत्ताधिकरणं अकुसलं, तम्पि देसितं वुट्ठितं वा अनन्तरायकरं । यथा हि अरियूपवादकम्मं अकुसलम्पि समानं अच्चयं

1. वि. ५-२१७ पिट्ठे अत्थतो समानं ।
2. कुसलं ति एवं सब्बत्थ । एवं अब्याकतं ति विपाकभावप्पत्तं (क०)

देसेत्वा खमापनेन पयोगसम्पत्तिपटिबाहितत्ता अविपाकधम्मतं आपन्नं अहोसिकम्मं होति, एवमिदम्पि देसितं वुट्ठितं वा पयोगसम्पत्तिपटिबाहितत्ता अविपाकधम्मताय अहोसिकम्मभावेन अनन्तरायकरं जातं । तेनेव "सापत्तिकस्स भिक्खवे निरयं वा वदामि तिरच्छानयोनिं वा" ति सापत्तिकस्सेव अपायगामिता वुत्ता ।

अधिकरणवूपसमनसमथकथा वण्णना

B. 380

२२८॥ विवादसङ्खाते अत्थे पच्चत्थिका **अत्थपच्चत्थिका** ।

२२९॥ **सम्मुखाविनयस्मिं** ति सम्मुखाविनयभावे ।

२३०॥ **अन्तरेना** ति कारणेन ।

२३१॥ उब्बाहिकाय खीयनके पाचित्ति न वुत्ता तत्थ छन्ददानस्स नत्थिताय ।

२३६॥ **तस्स खो तं** ति एत्थ **खो तं** ति निपातमत्तं ।

२३८॥ "का च तत्थ तस्सपापियसिकाया" ति पोत्थकेसु लिखन्ति । "का च तस्सपापियसिका" ति एवं पनेत्थ पाठो वेदितब्बो ।

२४२॥ **किच्चाधिकरणं एकेन समथेन सम्मती**ति एत्थ "किच्चमेव किच्चाधिकरणं ति[1] वचनतो अपलोकनकम्मादीनमेतं अधिवचनं । तं विवादाधिकरणादीनि विय समथेहि समेतब्बं न होति, किन्तु सम्मुखाविनयेन सम्पज्जति, तस्मा **सम्मती**ति एत्थ सम्पज्जती ति अत्थो गहेतब्बो । सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेव ।

समथक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

---

1. वि-द्व-२-१७९-पिट्ठे ।

B. 381

५. खुद्दकवत्थुक्खन्धक

खुद्दकवत्थुकथावण्णना

२४३॥ खुद्दकवत्थुक्खन्धके **अट्ठपदाकारेना** ति अट्ठपदफलकाकारेन, जूतफलकसदिसं ति वुत्तं होति। **मल्लकमूलसण्ठानेना** ति खेळमल्लकमूलसण्ठानेन।

२४५॥ **मुत्तोलम्बकादीनं** ति **आदि**-सद्देन कुण्डलादिं सङ्गण्हाति। **पलम्बकसुत्तं** ति यञ्ञोपचिताकारेन ओलम्बकसुत्तं।

२४६॥ **चिक्कलेना** ति सिलेसेन।

२४८॥ साधुगीतं ति अनिच्चतादिपटिसंयुत्तगीतं।

२४९॥ **चतुरस्सेन वत्तेना**ति परिपुण्णेन उच्चारणवत्तेन। तरङ्गवत्तादीनं उच्चारणविधानानि नट्ठप्पयोगानि[1]। **बाहिरलोमिं** ति भावनपुंसकनिद्देसो, यथा तस्स उण्णपावारस्स बहिद्धा लोमानि दिस्सन्ति, तथा धारेन्तस्स दुक्कटं ति वुत्तं होति।

२५१॥ **इमानि चत्तारि अहिराजकुलानी**ति[2] इदं दट्ठविसे सन्धाय वुत्तं। ये हि केचि दट्ठविसा, सब्बे ते इमेसं चतुन्नं अहिराजकुलानं अब्भन्तरगताव होन्ति। **अत्तगुत्तिया**ति अत्तनो गुत्तत्थाय। **अत्तरक्खाया**ति अत्तनो रक्खणत्थाय। **अत्तपरित्तं कातुं** ति अत्तनो परित्ताणत्थाय अत्तपरित्तं नाम कातुं अनुजानामीति अत्थो।

इदानि यथा तं परित्तं कातब्बं, तं दस्सेतुं **"एवञ्च पन भिक्खवे"** ति आदिमाह। तत्थ[3] **विरूपक्खेही**ति विरूपक्खनागकुलेहि। सेसेसुपि एसेव नयो। सहयोगे चेतं करणवचनं, एतेहि सह मय्हं मित्तभावो ति वुत्तं होति **अपादकेही**ति अपादकसत्तेहि। B. 382 सेसेसुपि एसेव नयो। **सब्बे सत्ता** ति इतो पुब्बे एत्तकेन ठानेन ओदिस्सकमेत्तं कथेत्वा इदानि अनोदिस्सकमेत्तं कथेतुं इदमारद्धं। तत्थ सत्ता पाणा भूता ति सब्बानेतानि पुग्गलवेवचनानेव। **भद्रानि पस्सन्तू** ति भद्रानि आरम्मणानि पस्सन्तु। **मा कञ्चि पापमागमा** ति कञ्चि सत्तं पापकं लामकं मा आगच्छतु।

अप्पमाणो बुद्धो ति एत्थ बुद्धो ति बुद्धगुणा वेदितब्बा, ते हि अप्पमाणा नाम। सेसद्वयेसुपि एसेव नयो, **पमाणवन्तानीति** गुणप्पमाणेन युत्तानि। **उण्णनाभी**ति लोमसनाभिको मक्कटको। **सरबू** ति घरगोळिका। **कता मे रक्खा कतं मे परित्तं** ति मया एतकस्स जनस्स रक्खा च परित्ताणञ्च कतं। **पटिक्कमन्तु भूतानी**ति सब्बेपि मे कतपरित्ताणा सत्ता अपगच्छन्तु, मा मं विहेठयिंसूति अत्थो। **सोहं** ति यस्स मम

---

1. दिट्ठपदयोगानि (स्या)
2. अं-ट्ठ-२-३१६-पिट्ठेपिपस्सितब्बं।
3. जातक-ट्ठ-२-१३३-पिट्ठेपि पस्सितब्बं।

एतेहि सब्बेहिपि मेत्तं, सो अहं भगवतो नमो करोमि, विपस्सीआदीनञ्च सत्तन्नं सम्मासम्बुद्धानं नमो करोमीति सम्बन्धो ।

अञ्ञम्हि छेतब्बम्हीति रागानुसयं सन्धाय वदति । तादिसं वा दुक्खं ति मुट्ठिआदीहि दुक्खं उप्पादेन्तस्स ।

२५२॥ **जालानि परिक्खिपापेत्वा** ति परिस्सयमोचनत्थञ्चेव पमादेन गळितानं आभरणादीनं रक्खणत्थञ्च जालानि करण्डकाकारेन परिक्खिपापेत्वा । **चन्दनगण्ठि आगन्त्वा जाले लग्गा** ति एको किर रत्तचन्दनरुक्खो गङ्गाय उपरितीरे जातो गङ्गोदकेन धोतमूलो पतित्वा तत्थ तत्थ पासाणेसु सम्भिज्जमानो विप्पकिरि । ततो एका घटप्पमाणा घटिका पासाणेसु घंसियमाना उदकऊमीहि पोथियमाना मट्ठा हुत्वा अनुपुब्बेन वुय्हमाना सेवालपरियोनद्धा आगन्त्वा तस्मिं जाले लग्गि । तं सन्धायेतं वुत्तं । **लेखं** ति लिखितगहितं चुण्णं । उड्डित्वा ति[1] वेळुपरम्पराय उद्धं पापेत्वा, उड्डापेत्वा ति वुत्तं होति । **ओहरतू** ति इद्धिया ओतारेत्वा गण्हतु ।

पूरणकस्सपादयो **छ सत्थारो** । तत्थ[2] **पूरणो** ति तस्स सत्थुपटिञ्ञस्स नामं । **कस्सपो** ति गोत्तं । सो किर अञ्ञतरस्स कुलस्स एकूनदाससतं पूरयमानो जातो । तेनस्स "पूरणो" ति नामं अकंसु । मङ्गलदासत्ता चस्स कतं "दुक्कटं ति वत्ता नत्थि, अकतं वा "न कतं" ति । सो "किमहं एत्थ वसामी"ति पलायि । अथस्स चोरा वत्थानि अच्छिन्दिंसु । सो पण्णेन वा तिणेन वा पटिच्छादेतुम्पि अजानन्तो जातरूपेनेव एकं गामं पाविसि । मनुस्सा तं दिस्वा "अयं समणो अरहा अप्पिच्छो, नत्थि इमिना सदिसो" ति पूवभत्तादीनि गहेत्वा उपसङ्कमन्ति । सो "मय्हं साटकं अनिवत्थभावेन इदं उप्पन्नं" ति ततो पट्ठाय साटकं लभित्वा पि न निवासेसि, तदेव पब्बज्जं अग्गहेसि । तस्स सन्तिके अञ्ञेपि अञ्ञेपीति पञ्चसता मनुस्सा पब्बजिंसु । एवमयं गणाचरियो हुत्वा "सत्था" ति लोके पाकटो अहोसि ।

B. 383

मक्खलीति तस्स नामं । गोसालाय जातत्ता **गोसालो** ति दुतियनामं । तं किर सकद्दमाय भूमिया तेलघटं गहेत्वा गच्छन्तं "तात मा खली" ति सामिको आह । सो पमादेन खलित्वा पतित्वा सामिकस्स भयेन पलायितुं आरद्धो । सामिको उपधावित्वा साटककण्णे अग्गहेसि, सो साटकं छड्डेत्वा अचेलको हुत्वा पलायि । सेसं पूरणसदिसमेव ।

अजितोति तस्स नामं । केसकम्बलं धारेतीति **केसकम्बलो** । इति नामद्वयं संसन्दित्वा "अजितो केसकम्बलो" ति वुच्चति । तत्थ **केसकम्बलो** नाम मनुस्सानं केसेहि कतकम्बलो । ततो पटिकिट्ठतरं वत्थं नाम नत्थि । यथाह "सेय्यथापि भिक्खवे

---

1. वाहित्वाति (स्या)
2. दी-ट्ठ-१-१३०, म-ट्ठ-२-१३६ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

यानि कानिचि तन्तावुतानं वत्थानं, केसकम्बलो तेसं पटिकिट्ठो अक्खायति । केसकम्बलो भिक्खवे सीते सीतो उण्हे उण्हो दुब्बण्णो दुग्गन्धो दुक्खसम्फस्सो" ति[1] ।

पकुधो ति तस्स नामं । **कच्चायनो** ति गोत्तं । इति नामगोत्तं संसन्दित्वा "पकुधो कच्चायनो" ति वुच्चति । सीतूदकपटिक्खित्तको एस, वच्चं कत्वापि उदककिच्चं न करोति, उण्होदकं वा कञ्जियं वा लभित्वा करोति, नदिं वा मग्गोदकं वा अतिक्कम्म "सील मे भिन्नं" ति वालिकथूपं कत्वा सीलं अधिट्ठाय गच्छति । एवरूप-निस्सिरिकलद्धिको एस ।

सञ्जयो ति तस्स नामं । बेलट्ठस्स पुत्तो **बेलट्ठपुत्तो** । "अम्हाकं गण्ठनकिलेसो B. 384 पलिबुन्धनकिलेसो नत्थि, किलेसगण्ठिरहिता मयं" ति एवंवादिताय लद्धनामवसेन **निगण्ठो** । नाटस्स पुत्तोति नाटपुत्तो ।

पिण्डोलभारद्वाजो ति[2] पिण्डं उलमानो परियेसमानो पब्बजितो ति **पिण्डोलो** । सो किर परिजिण्णभोगो ब्राह्मणो हुत्वा महन्तं भिक्खुसंघस्स लाभसक्कारं दिस्वा पिण्डत्थाय निक्खमित्वा पब्बजितो । सो महन्तं कपल्लपत्तं "पत्तं" ति गहेत्वा चरति, कपल्लपूरं यागुं पिवति, भत्तं भुञ्जति, पूवखज्जकञ्च खादति । अथस्स महग्घसभावं सत्थु आरोचयिंसु । सत्था तस्स पत्तत्थविकं नानुजानि । थेरो हेट्ठामञ्चे पत्तं निकुज्जित्वा ठपेति । सो ठपेन्तोपि घंसेन्तोव पणामेत्वा ठपेति, गण्हन्तोपि घंसेन्तोव आकड्ढित्वा गण्हाति । तं गच्छन्ते गच्छन्ते काले घंसनेन परिक्खीणं नाळिकोदन-मत्तस्सेव गण्हनकं जातं । ततो सत्थु आरोचेसुं । अथस्स सत्था पत्तत्थविकं अनुजानि । थेरो अपरेन समयेन इन्द्रियभावनं भावेन्तो अग्गफले अरहत्ते पतिट्ठासि । इति सो पुब्बे सविसेसं पिण्डत्थाय उलतीति **पिण्डोलो** । गोत्तेन पन **भारद्वाजो** ति उभयं एकतो कत्वा "पिण्डोलभारद्वजो" ति वुच्चति ।

"अथ खो आयस्मा पिण्डोलभारद्वाजो.....पे०.....एतदवोचा" ति कस्मा एवमाहंसु ? सो किर[3] सेट्ठि नेव सम्मादिट्ठि, न मिच्छादिट्ठि, मज्झत्तधातुको । सो चिन्तेसि "मय्हं गेहे चन्दनं बहु, किं नु खो इमिना करिस्सामी" ति । अथस्स एतदहोसि "इमस्मिं लोके' मयं अरहन्तो, मयं अरहन्तो' ति वत्तारो बहू, अहं एकं अरहन्तम्पि न जानामि, गेहे भमं योजेत्वा पत्तं लिखापेत्वा सिक्काय ठपेत्वा वेळुपरम्पराय सट्ठिहत्थमत्ते आकासे ओलम्बापेत्वा 'सचे अरहा अत्थि, आकासेनागन्त्वा । गण्हातू' ति वक्खामि । यो तं गहेस्सति, तस्स सपुत्तदारो सरणं गमिस्सामी"ति । सो चिन्तितनियामेनेव पत्तं लिखापेत्वा वेळुपरम्पराय उस्सापेत्वा "यो इमस्मिं लोके अरहा, सो आकासेन आगन्त्वा इमं पत्तं गण्हातू" ति आह ।

---

1. अं-१-२९०-पिट्ठे ।
2. उदान-ट्ठ-२२८-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।
3. आरोपेत्वान-(स्या)

तदा छ सत्थारो "अम्हाकं एस अनुच्छविको, अम्हाकमेव नं देही" ति वदिंसु । B. 385. सो "आकासेनागन्त्वा गण्हथा" ति आह । छट्ठे दिवसे निगण्ठो नाटपुत्तो अन्तेवासिके पेसेसि "गच्छथ सेट्ठिं एवं वदेथ" अम्हाकं आचरियस्सेव अनुच्छविको, मा अप्पमत्तकस्स कारणा आकासेन आगमनं करि, देहि किर ते पत्तं" ति । ते गन्त्वा सेट्ठिं तथा वदिंसु । सेट्ठि आकासेनागन्त्वा गण्हितुं समत्थोव गण्हातू" ति आह । नाटपुत्तो सयं गन्तुकामो हुत्वा अन्तेवासिकानं सञ्ञं अदासि "अहं एकं हत्थञ्च पादञ्च उक्खिपित्वा उप्पतितुकामो विय भविस्सामि, तुम्हे मं 'आचरिय किं करोथ, दारुमयपत्तस्स कारणा पटिच्छन्नं अरहत्तगुणं महाजनस्स मा दस्सयित्था' ति वत्वा मं हत्थेसु च पादेसु च गहेत्वा आकड्ढन्ता भूमियं पातेय्याथा" ति । सो तत्थ गन्त्वा सेट्ठिं आह "महासेट्ठि अयं पत्तो अञ्ञेसं नानुच्छविको, मा ते अप्पमत्तकस्स कारणा मम आकासे उप्पतनं रुच्चि, देहि मे पत्तं" ति । भन्ते आकासेन उप्पतित्वाव गण्हथाति । ततो नाटपुत्तो "तेन हि अपेथ अपेथा" ति अन्तेवासिके अपनेत्वा "आकासे उप्पतिस्सामी" ति एकं हत्थञ्च पादञ्च उक्खिपि । अथ नं अन्तेवासिका "आचरिय किं नामेतं करोथ, छवस्स दारुमयपत्तस्स कारणा पटिच्छन्नगुणेन तुम्हेहि महाजनस्स दस्सितेन को अत्थो" ति तं हत्थपादेसु गहेत्वा आकड्ढित्वा भूमियं पातेसुं । सो सेट्ठिं आह "महासेट्ठि इमे मे उप्पतितुं न देन्ति, देहि मे पत्तं ति । उप्पतित्वाव गण्हथ भन्ते ति । एवं तित्थिया छ दिवसानि वायमित्वापि पत्तं न लभिंसुयेव ।

अथ सत्तमे दिवसे आयस्मतो च मोग्गल्लानस्स आयस्मतो च पिण्डोल-भारद्वाजस्स "राजगहे पिण्डाय चरिस्सामा" ति गन्त्वा एकस्मिं पिट्ठिपासाणे ठत्वा चीवरं पारुपनकाले धुत्तका कथं समुट्ठापेसुं "हम्भो पुब्बे छ सत्थारो 'मयं अरहन्ताम्हा' ति विचरिंसु, राजगहसेट्ठिनो पन अज्ज सत्तमो दिवसो पत्तं उस्सापेत्वा ठपयतो' सचे अरहा अत्थि, आकासेनागन्त्वा गण्हातू' ति वदन्तस्स, एकोपि 'अहं अरहा' ति आकासे उप्पतन्तो नत्थि, अज्ज नो लोके अरहन्तानं नत्थिभावो ञातो'-ति । तं कथं सुत्वा आयस्मा महामोग्गल्लानो आयस्मन्तं पिण्डोलभारद्वाजं आह B. 386 "सुतं ते आवुसो भारद्वाज इमेसं वचनं, इमे बुद्धसासनं परिगण्हन्ता विय वदन्ति, त्वञ्च महिद्धिको महानुभावो, गच्छेतं पत्तं आकासेन गन्त्वा गण्हाही" ति । "आवुसो मोग्गल्लान त्वं इद्धिमन्तानं अग्गो' ति पाकटो, त्वं एतं गण्ह, तयि पन अगण्हन्ते अहं गण्हिस्सामी" ति आह । अथ आयस्मा महामोग्गल्लानो "गण्हावुसो" ति आह । इति ते लोकस्स अरहन्तेहि असुञ्ञभावदस्सनत्थं एवमाहंसु ।

तिक्खत्तुं राजगहं अनुपरियायीति तिक्खत्तुं राजगहं अनुगन्त्वा परिब्भमि । "सत्तक्खत्तुं" तिपि वदन्ति । थेरो किर अभिञ्ञापादकं झानं समापज्जित्वा उट्ठाय

तिगावुतं पिट्ठिपासाणं अन्तन्तेन परिच्छिन्दन्तो तूलपिचु विय आकासे उट्ठापेत्वा राजगहनगरस्स उपरि सत्तक्खत्तुं अनुपरियायि । सो तिगावुतप्पमाणस्स नगरस्स अपिधानं विय पञ्ञायि । नगरवासिनो "पासाणो नो अवत्थरित्वा गण्हाती" ति भीता सुप्पादीनि मत्थके कत्वा तत्थ तत्थ निलीयिंसु । सत्तमे वारे थेरो पिट्ठिपासाणं भिन्दित्वा अत्तानं दस्सेति । महाजनो थेरं दिस्वा "भन्ते पिण्डोलभारद्वाज तव पासाणं गाळ्हं कत्वा गण्ह, मा नो सब्बे नासयी" ति आह[1] । थेरो पासाणं पादन्तेन खिपित्वा विस्सज्जेसि । सो गन्त्वा यथाठानेयेव पतिट्ठासि । थेरो सेट्ठिस्स गेहमत्थके अट्ठासि । तं दिस्वा सेट्ठि उरेन निपज्जित्वा "ओतर सामी" ति वत्वा आकासतो ओतिण्णं थेरं निसीदापेत्वा पत्तं गहेत्वा चतुमधुरपुण्णं कत्वा थेरस्स अदासि । थेरो पत्तं गहेत्वा विहाराभिमुखो पायासि । अथस्स ये अरञ्ञगता पाटिहारियं नाद्दसंसु, ते सन्निपतित्वा "भन्ते अम्हाकम्पि पाटिहारियं दस्सेही" ति थेरं अनुबन्धिंसु । सो तेसं तेसं पाटिहारियं दस्सेन्तो विहारं अगमासि । सत्था तं अनुबन्धित्वा उन्नादेन्तस्स महाजनस्स सद्दं सुत्वा "आनन्द कस्सेसो सद्दो" ति पुच्छि । तेन वुत्तं **"अस्सोसि"** खो भगवा......पे०.....किं नु खो सो आनन्द उच्चासद्दो महासद्दो" ति ।

विकुब्बनिद्धिया पाटिहारियं पटिक्खित्तं ति एत्थ **विकुब्बनिद्धि** नाम "सो पकतिवण्णं विजहित्वा कुमारकवण्णं वा दस्सेति नागवण्णं वा, विविधम्पि सेनाब्यूहं दस्सेती"- B. 387 ति[2] एवमागता पकतिवण्णविजहनविकारवसेन पवत्ता इद्धि । **अधिट्ठानिद्धि** पन "पकतिया एको बहुकं आवज्जति सतं वा सहस्सं वा सतसहस्सं वा, आवज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाति 'बहुको होमी' "ति[3]" एवं विभजित्वा दस्सिता अधिट्ठानवसेन निप्फन्ना इद्धि ।

२५३-२५४॥ न **अच्छुपियन्ती**ति न सुफस्सितानि[4] होन्ति । **रूपकाकिण्णानी**ति इत्थिरूपादीहि आकिण्णानि । **भूमिआधारके** ति वलयाधारके । **दारुआधारक-दण्डाधारकेसू**ति एकदारुना कतआधारके बहूहि दण्डकेहि कतआधारके वाति अत्थो, तीहि दण्डेहि कतो पन न वट्टति । **भूमियं पन निक्कुज्जित्वा एकमेव ठपेतब्बं** ति एत्थ द्वे ठपेन्तेन उपरि ठपितपत्तं एकेन पस्सेन भूमियं फुसापेत्वा ठपेतुं वट्टतीति वदन्ति । **आलिन्दकमिड्ढिकादीनं** ति पमुखमिड्ढिकानं । **परिवत्तित्वा तत्थेव पतिट्ठाती**ति एत्थ "परिवत्तित्वा ततियवारे तत्थेव मिड्ढिया पतिट्ठाती" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । परिभण्डं नाम गेहस्स बहि कुट्टपादस्स थिरभावत्थं कता तनुकमिड्ढिका वुच्चति । **तनुकमिड्ढिकाया** ति खुद्दकमिड्ढिकाय । मिड्ढन्तेपि आधारके ठपेतुं वट्टति ।

1. गण्हमानो सब्बे मा नासयीति (स्या) ।
2. खु-९-३८८-पिट्ठे ।
3. खु-९-३८५-पिट्ठे ।
4. न फुसितानि (स्या) ।

"अनुजानामि भिक्खवे आधारकं" ति हि वचनतो मिड्ढादीसु यत्थ कत्थचि आधारकं ठपेत्वा तत्थ पत्तं ठपेतुं वट्टति आधारके ठपनोकासस्स अनियमितत्ता ति वदन्ति। "पत्तमाळो नाम वट्टेत्वा पत्तानं अगमनत्थं वट्टं वा चतुरस्सं वा इट्ठकादीहि परिक्खिपित्वा कतो" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं।

२५५॥ घटिकं ति उपरि योजितं अग्गळं। **तावकालिकं परिभुञ्जितुं वट्टतीति** सकिदेव गहेत्वा तेन आमिसं परिभुञ्जित्वा छड्डेतुं वट्टतीति अधिप्पायो। **घटिकटाहे**-ति भाजनकपाले। **अभुं** मे ति एत्थ भवतिति भू, वड्ढि। **न** भूति **अभू**, अवड्ढि। भयवसेन पन सा इत्थी "अभूं" ति आह, विनासो मय्हं ति अत्थो। **छवसीसस्स पत्तं** ति छवसीसमयं पत्तं। पकतिविकारसम्बन्धे चेतं सामिवचनं, अभेदेपि वा भेदूपचारेनायं वोहारो "सिलापुत्तकस्स सरीरं" ति आदीसु विय।

चब्बेत्वा ति[1] खादित्वा। एकं **उदकगण्डुसं गहेत्वा** ति वामहत्थेनेव पत्तं उक्खिपित्वा मुखेन गण्डुसं गहेत्वा। **उच्छिट्ठहत्थेना** ति सामिसेन हत्थेन। **एत्तावत्ता** ति एकगण्डुसगहणमत्तेन। **लुञ्चित्वा** ति ततो मंसं उद्धरित्वा। एतेसु सब्बेसु पण्णत्तिं B. 388 जानेसु वा मा वा, आपत्तियेव।

२५६॥ **किण्णचुण्णेना**ति सुराकिण्णचुण्णेन। "**अनुवातं परिभण्डं** ति किलञ्जादीसु करोन्ती" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। **विदलकं** ति दुगुणकरणसङ्खातस्स किरियाविसेसस्स अधिवचनं। कस्स दुगुणकरणं ? येन किलञ्जादिना महन्तं कथिनं अत्थतं, तस्स। तञ्हि दण्डकथिनप्पमाणेन परियन्ते संहरित्वा दुगुणं कातब्बं। **पटिग्गहं** ति अङ्गुलिकञ्चुकं।

२५७-२५९॥ **पाति** नाम पटिग्गहणसण्ठानेन कतो भाजनविसेसो। न **सम्मतीति** नप्पहोति।

२६०-२६२ **नीचवत्थुकं चिनितुं** ति बहिकुट्टस्स समन्ततो नीचवत्थुकं कत्वा चिनितुं। **अरहटघटियन्तं** नाम सकटचक्कसण्ठानं अरे अरे घटिकानि बन्धित्वा एकेन द्वीहि वा परिब्भमियमानं यन्तं।

२६३॥ **आविद्धपक्खपासकं** ति कण्णिकमण्डलस्स समन्ता ठपितपक्खपासकं। **मण्डले** ति कण्णिकमण्डले। **पक्खपासके ठपेत्वा** ति समन्ता पक्खपासकफलकानि ठपेत्वा।

२६४॥ "नमतकं सन्थतसदिसं' ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। **चम्मखण्डपरिहारेन परिभुञ्जितब्बं** ति अनधिट्ठहित्वा परिभुञ्जितब्बं। **एत्थेव पविट्ठानीति** मळोरिकाय एव अन्तोगधानि। पुब्बे पत्तसङ्गोपनत्थं आधारको अनुञ्ञातो, इदानि भुञ्जनत्थं।

---

1. वम्मेत्वा ति (स्या)।

२६५॥ **निक्कुज्जितब्बो** ति तेन दिन्नस्स देय्यधम्मस्स अप्पटिग्गहणत्थं पत्त-निक्कुज्जनकम्मवाचाय निक्कुज्जितब्बो, न अधोमुखठपनेन । तेनेवाह **"एवञ्च पन भिक्खवे निक्कुज्जितब्बो"** ति आदि । **अलाभाया** ति चतुन्नं पच्चयानं अलाभत्थाय । **अनत्थाया**ति उपद्दवाय अवड्ढिया ।

२६६॥ **पसादेस्सामा** ति आयाचिस्साम । **एतदवोचा** ति "अप्पतिरूपं मया कतं, भगवा पन महन्तेपि अगुणे अचिन्तेत्वा मय्हं अच्चयं पटिग्गण्हिस्सती" ति मञ्ञमानो B. 389 एतं "अच्चयो मं भन्ते" ति आदिवचनं अवोच । तत्थ ञायपटिपत्तिं अतिच्च एति पवत्ततीति **अच्चयो,** अपराधो । **मं अच्चगमा**ति मं अतिक्कम्म अभिभवित्वा पवत्तो । पुरिसेन मद्दित्वा अभिभवित्वा पवत्तितोपि हि अपराधो अत्थतो पुरिसं अतिच्च अभिभवित्वा पवत्तो नाम होति । **पटिग्गण्हातू** ति खमतु । **आयतिं संवराया**ति अनागते संवरणत्थाय पुन एवरूपस्स अपराधस्स दोसस्स खलितस्स अकरणत्थाय । **तग्घा** ति एकंसेन । **यथाधम्मं पटिकरोसी**ति यथा धम्मो ठितो, तथेव करोसि, खमापेसीति वुत्तं होति । **तं ते मयं पटिग्गण्हामा**ति तं तव अपराधं मयं खमाम । **बुड्ढि हेसा आवुसो वड्ढ अरियस्स विनये** ति एसा आवुसो वड्ढ अरियस्स विनये बुद्धस्स भगवतो सासने वड्ढि नाम । कतमा ? अच्चयं अच्चयतो दिस्वा यथाधम्मं पटिकरित्वा आयतिं संवरापज्जना । देसनं पन पुग्गलाधिट्ठानं करोन्तो **"यो अच्चयं अच्चयतो दिस्वा यथाधम्मं पटिकरोति, आयतिं संवरं आपज्जती"** ति आह ।

२६८॥ बोधिराजकुमारवत्थुम्हि[1] **कोकनदो** ति **केकनदं** वुच्चति पदुमं, सो च मङ्गलपासादो ओलोकनपदुमं दस्सेत्वा कतो, तस्मा "कोकनदो" ति सङ्खं लभि । **याव पच्छिमसोपानकळेवरा** ति एत्थ **पच्छिमसोपानकळेवरं** ति पठमसोपानफलकं वुत्तं तस्स सब्बपच्छा दुस्सेन सन्थतत्ता । उपरिमसोपानफलकतो पट्ठाय हि सोपानं **सन्थतं** ॥ **अद्दसा खो** ति ओलोकनत्थंयेव द्वारकोट्ठके ठितो अद्दस ।

भगवा तुण्ही अहोसीति "किस्स नु खो अत्थाय राजकुमारेन अयं महासक्कारो कतो" ति आवज्जन्तो पुत्तपत्थनाय कतभावं अञ्ञासि । सो हि राजपुत्तो अपुत्तको । सुतञ्चानेन अहोसि "बुद्धानं किर अधिकारं कत्वा मनसा इच्छितं लभन्ती" ति । सो "सचाहं पुत्तं लभिस्सामि, सम्मासम्बुद्धो इमं चेलपटिकं अक्कमिस्सति । नो चे लभिस्सामि, न अक्कमिस्सती" ति पत्थनं कत्वा सन्थरापेसि । अथ भगवा "निब्बत्तिस्सति नु खो एतस्स पुत्तो" ति आवज्जेत्वा "न निब्बत्तिस्सती" ति अद्दस । B. 390 पुब्बे किर सो एकस्मिं दीपे वसमानो समानच्छन्देन सुकुणपोतके खादि । सचस्स मातुगामो पुञ्ञवा भवेय्य, पुत्तं लभेय्य । उभोहि पन समानच्छन्देहि हुत्वा पापकम्मं कतं, तेनस्स पुत्तो न निब्बत्तिस्सतीति अञ्ञासि । दुस्से पन अक्कन्ते "बुद्धानं

---

1. म-ट्ठ-३-२२२-पिट्ठदीसुपि पस्सितब्बं ।

अधिकारं कत्वा पत्थितं लभन्तीति लोके अनुस्सवो, मया च महाअधिकारो कतो, न च पुत्तं लभामि, तुच्छं इदं वचनं" ति मिच्छागहणं गण्हेय्य । तित्थियापि "नत्थि समणानं अकतब्बं नाम, चेलपटिकं मद्दन्ता आहिण्डन्ती"ति उज्झायेय्युं । एतरहि च अक्कमन्तेसु बहू भिक्खू परचित्तविदुनो, ते भब्बतं जानित्वा अक्कमिस्सन्ति, अभब्बतं जानित्वा न अक्कमिस्सन्ति । अनागते पन उपनिस्सयो मन्दो भविस्सति, अनागतं न जानिस्सन्ति, तेसु अक्कमन्तेसु सचे पत्थितं इज्झिस्सति, इच्चेतं कुसलं । नो चे इज्झिस्सति, "पब्बे भिक्खुसंघस्स अधिकारं कत्वा इच्छितिच्छतं लभन्ति, इदानि न लभन्ति, तेयेव मञ्ञे भिक्खू पटिपत्तिपूरका अहेसुं, इमे पन पटिपत्तिं पूरेतुं न सक्कोन्ती"ति मनुस्सा विप्पटिसारिनो भविस्सन्तीति इमेहि तीहि कारणेहि भगवा अक्कमितुं अनिच्छन्तो तुण्ही अहोसि । **पच्छिमं जनतं तथागतो अनुकम्पतीति** इदं पन थेरो वुत्तेसु कारणेसु ततियं कारणं सन्धायाह । मङ्गलं इच्छन्तीति **मङ्गलिका** ।

२६९॥ **बीजनिं** ति चतुरस्सबीजनिं । **तालवण्टं** ति तालपत्तादीहि कतं मण्डलिकबीजनिं ।

२७०-२७५॥ "**एकपण्णच्छत्तं** नाम तालपत्तं" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **कम्मसतेना** ति एत्थ **सत**-सद्दो अनेकपरियायो, अनेकेन कम्मेनाति अत्थो, महता उस्साहेनाति वुत्तं होति । **रुधीति** खुद्दकवणं ।

२७८॥ "अकायबन्धनेन सञ्चिच्च असञ्चिच्च वा गामप्पवेसने आपत्ति । सरितट्ठानतो बन्धित्वा पविसितब्बं निवत्तितब्बं वा" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **मुरजवट्टिसण्ठानं वेठेत्वा कतं** ति बहू रज्जुके एकतो कत्वा नानावण्णेहि सुत्तेहि वेठेत्वा मुरजवट्टिसदिसं कतं । तेनेव **दुतियपाराजिकवण्णनायं**[1] वुत्तं "बहू रज्जुके एकतो कत्वा एकेन निरन्तरं वेठेत्वा कतं बहुरज्जुकं ति न वत्तब्बं, तं वट्टती" ति तत्थ यं वत्तब्बं, तं हेट्ठा वुत्तमेव । **मुद्दिककायबन्धनं** नाम चतुरस्सं अकत्वा सज्जितं । **पामङ्गदसा** चतुरस्सा । **मुदिङ्गसण्ठानेना** ति[2] वरकसीसाकारेन । **पासन्तो** ति दसामूलं । B. 391

२८०-२८२॥ मुण्डवट्टीति मल्लकम्मकरादयो । **पमाणङ्गुलेना** ति वड्ढकीअङ्गुलं सन्धाय वुत्तं । सेसमेत्थ पाळितो अट्ठकथातो च सुविञ्ञेय्यमेव ।

खुद्दकवत्थुक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

---

1. वि-ट्ठ-१-२५३-पिट्ठे ।
2. मुद्दिकसण्ठानेना ति (स्या)

B. 392

६. सेनासनक्खन्धक

विहारानुजाननकथावण्णना

२९४॥ सेनासनक्खन्धके **सेनासनं अपञ्ञत्तं होती**ति विहारसेनासनं सन्धाय वुत्तं। चतुब्बिधञ्हि[1] "सेनासनं विहारसेनासनं मञ्चपीठसेनासनं सन्थतसेनासनं ओकास-सेनासनं ति। तत्थ "मञ्चोपि सेनासनं, पीठम्पि भिसिपि बिम्बोहनम्पि विहारोपि अड्ढयोगोपि पासादोपि हम्मियम्पि गुहापि अट्टोपि माळोपि लेणम्पि वेळुगुम्बोपि रुक्खमूलम्पि मण्डपोपि सेनासनं। यत्थ वा पन भिक्खू पटिक्कमन्ति, सब्बमेतं सेनासनं"ति[2] वचनतो विहारो अड्ढयोगो पासादो हम्मियं गुहा ति इदं **विहारसेनासनं** नाम। मञ्चो पीठं भिसि बिम्बोहनं ति इदं **मञ्चपीठसेनासनं** नाम। चिमिलिका चम्मखण्डो तिणसन्थारो पण्णसन्थारो ति इदं **सन्थतसेनासनं** नाम। यत्थ वा पन भिक्खू पटिक्कमन्ति इदं **ओकाससेनासनं** नाम।

रुक्खमूले ति आदीसु **रुक्खमूलसेनासनं** नाम यंकिञ्चि सन्दच्छायं विवित्तं रुक्खमूलं। **पब्बतो** नाम सेलो। तत्थ हि उदकसोण्डीसु उदककिच्चं कत्वा सीताय रुक्खच्छायाय निसिन्ना नानादिसासु खायमानासु सीतेन वातेन बीजियमाना समणधम्मं करोन्ति। **कन्दरे** ति कं वुच्चति उदकं, तेन दरितो उदकेन भिन्नो पब्बतप्पदेसो कन्दरं। यं "नितम्बं" तिपि[3] "नदीकुञ्जं" तिपि वदन्ति। तत्थ हि रजतपट्टसदिसा वालिका होति, मत्थके मणिवितानं विय वनगहनं, मणिक्खन्धसदिसं उदकं सन्दति, एवरूपं कन्दरं ओरुय्ह पानीयं पिवित्वा गत्तानि सीतं कत्वा वालिकं उस्सापेत्वा पंसुकूलचीवरं पञ्ञपेत्वा तत्थ निसिन्ना ते भिक्खू समणधम्मं करोन्ति। **गिरिगुहा** नाम द्विन्नं पब्बतानं अन्तरा, एकस्मिंयेव वा उमङ्गसदिसं महाविवरं।

"वनपत्थं ति दूरानमेतं सेनासनानं अधिवचनं" ति आदिवचनतो[4] यत्थ न कसन्ति न वपन्ति, तादिसं मनुस्सानं उपचारट्ठानं अतिक्कमित्वा ठितं अरञ्ञक-सेनासनं "वनपत्थं" ति वुच्चति। **अज्झोकासो** नाम केनचि अच्छन्नो पदेसो। B. 393 आकङ्खमाना पनेत्थ चीवरकुटिं कत्वा वसन्ति। **पलालपुञ्जे**ति पलालरासिम्हि। महापलालपुञ्जतो हि पलालं निक्कड्ढित्वा पब्भारलेणसदिसे आलये करोन्ति, गच्छगुम्बादीनम्पि उपरि पलालं परिक्खिपित्वा[5] हेट्ठा निसिन्ना समणधम्मं करोन्ति, तं

---

1. म-ट्ठ-२-११८ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
2. अभि-२-२६० पिट्ठे।
3. नदीतुम्बन्तिपि (क, दी ट्ठ-१-१८८, म-ट्ठ-२-११९-पिट्ठेसु च) सं-ट्ठं २-५१-अं-ट्ठ-२-२२३। अभि. ट्ठ-२-२५०-पिट्ठेसु पन पस्सितब्बं।
4. अब्भोकासो (स्या)।
5. उक्खिपित्वा (स्या)।

सन्धायेतं वुत्तं । **पञ्च लेणानी**ति पञ्च लीयनट्ठानानि । निलीयन्ति एत्थ भिक्खूति लेणानि, विहारादीनमेतं अधिवचनं । **सुपण्णवङ्कगेहं** ति गरुळपक्खसण्ठानेन कतगेहं ।

२९५॥ अनुमोदनगथासु **सीतं** ति अज्झत्तधातुक्खोभवसेन वा बहिद्धउतु-विपरिणामवसेन वा उप्पज्जनकसीतं । **उण्हं** ति अग्गिसन्तापं, तस्स वनदाहादीसु वा सम्भवो दट्ठब्बो । **पटिहन्ती**ति वाधति । यथा तदुभयवसेन कायचित्तानं बाधनं न होति, एवं करोति । सीतुण्हब्भाहते हि सरीरे विक्खित्तचित्तो भिक्खु योनिसो पदहितुं न सक्कोति । **वाळमिगानी**ति सीहब्यग्घादिवाळमिगे । गुत्तसेनासनञ्हि पविसित्वा द्वारं पिधाय निसिन्नस्स ते परिस्सया न होन्ति । **सरीसपे** ति ये केचि सरन्ते गच्छन्ते दीघजातिके । मकसे ति निदस्सनमत्तमेतं, डंसादीनम्पि एतेनेव सङ्गहो दट्ठब्बो । **सिसिरे**ति सिसिरकालवसेन सत्ताहवद्दलिकादिवसेन चं उप्पन्ने सिसिरसम्फस्से । **वुट्ठियो** ति यदा तदा उप्पन्ना वस्सवुट्ठियो ।

वातातपो घोरो ति रुक्खगच्छादीनं उम्मूलभञ्जनादिवसेन पवत्तिया घोरो सरजअरजादिभेदो वातो चेव गिम्हपरिळाहसमयेसु उप्पत्तिया घोरो सूरियातपो च पटिहञ्ञति पटिबाहीयति । **लेणत्थं** ति नानारम्मणतो चित्तं निवत्तेत्वा पटिसल्ला-नारामत्थं । **सुखत्थं** ति वुत्तपरिस्सयाभावेसन फासुविहारत्थं । **झायितुं** ति अट्ठतिंसार-म्मणेसु यत्थ कत्थचि चित्तं उपनिज्झायितुं । **विपस्सितुं** ति अनिच्चादितो सङ्खारे सम्मसितुं ।

विहारे ति पतिस्सये । कारये ति कारापेय्य । **रम्मे** ति मनोरमे निवाससुखे । **वासयेत्थ बहुस्सुते** ति कारेत्वा पन एत्थ विहारेसु बहुस्सुते सीलवन्ते कल्याणधम्मे निवासेय्य । ते निवासेन्तो पन तेसं बहुस्सुतानं यथा पच्चयेहि किलमथो न होति, एवं अन्नञ्च पानञ्च वत्थसेनासनानि च ददेय्य उजुभूतेसु अज्झासयसम्पन्नेसु कम्मफलानं रतनत्तयगुणानञ्च सद्दहनेन विप्पसन्नेन चेतसा । B. 394

इदानि गहट्ठपब्बजितानं अञ्ञमञ्ञुपकारितं दस्सेतुं **"ते तस्सा"** ति गाथमाह । तत्थ **ते** ति ते बहुस्सुता । **तस्सा** ति उपासकस्स । **धम्म देसेन्ती**ति सकल-वट्टदुक्खापनूदनं सद्धम्मं देसेन्ति । **यं सो धम्मं इधञ्ञाया**ति सो पुग्गलो यं सद्धम्मं इमस्मिं सासने सम्मा पटिपज्जनेन जानित्वा अग्गमग्गाधिगमेन अनासवो हुत्वा परिनिब्बायति ।

सो च सब्बददो होतीति आवासदानस्मिं दिन्ने सब्बदानं दिन्नमेव **होतीति** कत्वा वुत्तं । तथा हि[1] द्वे तयो गामे पिण्डाय चरित्वा किञ्चि अलद्धा आगतस्सपि छायूदकसम्पन्नं आरामं पविसित्वा नहायित्वा पतिस्सये महुत्तं निपज्जित्वा उट्ठाय निसिन्नस्स काये बलं आहरित्वा पक्खित्तं विय होति, बहि विचरन्तस्स च काये

---

1. सं-ट्ठ-१-७८-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

वण्णधातु वातातपेहि किलमति, पतिस्सयं पविसित्वा द्वारं पिधाय मुहुत्तं निपन्नस्स विसभागसन्तति वूपसम्मति, सभागसन्तति पतिट्ठाति, वण्णधातु आहरित्वा पक्खित्ता विय होति, बहि विचरन्तस्स च पादे कण्टको विज्झति, खाणु पहरति, सरीसपादिपरिस्सया चेव चोरभयञ्च उप्पज्जति, पतिस्सयं पविसित्वा द्वारं पिधाय निपन्नस्स सब्बे परिस्सया न होन्ति, सज्झायन्तस्स धम्मपीतिसुखं, कम्मट्ठानं मनसिकरोन्तस्स उपसमसुखञ्च उप्पज्जति बहिद्धाविक्खेपाभावतो, बहि विचरन्तस्स च सेदा मुच्चन्ति, अक्खीनि फन्दन्ति, सेनासनं पविसनक्खणे मञ्चपीठानि न पञ्ञायन्ति, मुहुत्तं निसिन्नस्स[1] पन अक्खिपसादो आहरित्वा पक्खित्तो विय होति, द्वारवातपानमञ्चपीठादीनि पञ्ञायन्ति, एतस्मिञ्च आवासे वसन्तं दिस्वा मनुस्सा चतूहि पच्चयेहि सक्कच्चं उपट्ठहन्ति । तेन वुत्तं "सो च सब्बददो होति, यो ददाति उपस्सयं" ति ।

२९६॥ **आविञ्छनच्छिद्दं** ति यत्थ अङ्गुलिं पवेसेत्वा द्वारं आकड्ढन्ता द्वारबाहं फुसापेन्ति, तस्सेतं अधिवचनं । **आविञ्छनरज्जुं** ति कवाटेयेव छिद्दं कत्वा तत्थ पवेसेत्वा येन रज्जुकेन कड्ढन्ता द्वारं फुसापेन्ति, तं आविञ्छनरज्जुकं । सेनासनपरिभोगे अकप्पियचम्मं नाम नत्थीति दस्सनत्थं **"सचेपि दीपिनङ्गुट्ठेन कता होति, वट्टतियेवा"** ति वुत्तं । **चेतिये वेदिकासदिसं** ति वातपानबाहासु चेतिये वेदिकाय विय वट्टिकादीहि दस्सेत्वा कतं । **थम्भकवातपानं** नाम तिरियं दारूनि अदत्वा उजुकं ठितेहि एव वेणुसलाकादीहि कतं ।

B. 395

विहारानुजाननकथावण्णना निट्ठिता ।

मञ्चपीठादिअनुजाननकथावण्णना

२९७॥ **पोटकितूलं** ति एरकतिणतूलं । पोटकिगहणञ्चेत्थ तिणजातीनं निदस्सनमत्तं ति आह **"येसं केसञ्चि तिणजातिकानं"** ति । पञ्चविधं **उण्णादितूलम्पि वट्टतीति** एत्थापि "बिम्बोहने" ति आनेत्वा सम्बन्धितब्बं । "तूलपूरितं भिसिं अपस्सयितुं न वट्टती" ति केचि वदन्ति, वट्टतीति अपरे । **उपदहन्तीति** ठपेन्ति । **सीसप्पमाणं** ति यत्थ गलवाटकतो पट्ठाय सब्बसीसं उपदहन्ति, तं सीसप्पमाणं । तञ्च उक्कट्ठपरिच्छेदतो तिरियं मुट्ठिरतनं होतीति दस्सेतुं **"यस्स वित्थारतो तीसु कण्णेसू"** ति[2]

---
1. निपन्नस्स (क)
2. कोणेसूति (स्या) ।

आदिमाह । **मज्झट्ठानं मुट्ठिरतनं होतीति** बिम्बोहनस्स मज्झट्ठानं तिरियतो मुट्ठिरतनप्पमाणं होति । **मसूरके** ति चम्ममयभिसियं । **फुसितानि** दातुं ति सञ्ञाकरणत्थं बिन्दूनि दातुं ।

२९८॥ न निबन्धतीति **अनिबन्धनीयो,** न अल्लीयतीति अत्थो । **पटिबाहेत्वा** ति मद्दं[1] कत्वा ।

इट्ठकाचयादिअनुजाननकथावण्णना

३००॥ **रुक्खं विज्झित्वा** ति रुक्खदारुं विज्झित्वा । **खाणुके आकोटेत्वा** ति द्वे द्वे खाणुके आकोटेत्वा । तं आहरिमं[2] भित्तिपादं ति वुत्तनयेन खाणुके आकोटेत्वा कतंयेव सन्धाय वुत्तं । **भूमियं पतिट्ठापेतुं** ति मूलेन भूमियं पतिट्ठापेत्वा भित्तिपादस्स उपत्थम्भनवसेन उस्सापेत्वा खाणुकेहि भित्तिपादं उस्सापेत्वा[3] ठपेतुं ति अधिप्पायो । **उभतो कुट्टं नीहरित्वा कतपदेसस्सा** ति यथा अन्तोद्वारसमीपे निसिन्नेहि उजुकं बहि B. 396 ओलोकेतुं न सक्का होति, एवं उभोहि पस्सेहि कुट्टं नीहरित्वा अभिमुखे भित्तिं उपट्ठपेत्वा कतपदेसस्स । **समन्ता परियागारो** ति समन्ततो अविद्धपमुखं । **उग्घाटनकिटिकं** ति दण्डेहि उक्खिपित्वा ठपनकपदरकिटिकं ।

अनाथपिण्डिकवत्थुकथावण्णना

३०४॥ अनाथपिण्डिकसेट्ठिवत्थुम्हि[4] **केनचिदेव करणीयेना** ति वाणिज्जकम्मं अधिप्पेतं । अनाथपिण्डिको किर राजगहसेट्ठि च अञ्ञमञ्ञं भगिनिपतिका होन्ति । यदा राजगहे उट्ठानकभण्डं समग्घं होति, तदा राजगहसेट्ठि तं गहेत्वा सकटसतेहि सावत्थिं गन्त्वा योजनमत्ते ठितो अत्तनो आगतभावं जानापेति । अनाथपिण्डिको पच्चुग्गन्त्वा तस्स महासक्कारं कत्वा एकं यानं ओरोपेत्वा सावत्थिं पविसति । सो सचे भण्डं लहुकं विक्कीयति, विक्किणाति । नो चे, भगिनिघरे ठपेत्वा पक्कमति । अनाथपिण्डिकोपि तथेव करोति । स्वायं तदापि तेनेव करणीयेन अगमासि । तं सन्धायेतं वुत्तं ।

तं दिवसं पन राजगहसेट्ठि योजनमत्ते ठितेन अनाथपिण्डिकेन आगतभावजाननत्थं पेसितं पण्णं न सुणि, धम्मस्सवनत्थाय विहारं अगमासि । सो धम्मकथं सुत्वा स्वातनाय बुद्धप्पमुखं भिक्खुसंघं निमन्तेत्वा अत्तनो घरे उद्धनखणापनदारुफालनादीनि कारेसि । अनाथपिण्डिकोपि "इदानि मय्हं पच्चुग्गमनं करिस्सति,

---

1. अड्डं (क) ।
2. कतं असंहारिमं (स्या) ।
3. डंसापेत्वा (स्या) ।
4. सं-ट्ठ-१-२८५-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

इदानि करिस्सती"ति घरद्वारेपि पच्चुग्गमनं अलभित्वा अन्तोघरं पविट्ठो पटि-
सन्थारम्पि न बहुं अलत्थ । "कि महासेट्ठि कुसलं दारकरूपानं, नसि मग्गे किलन्तो"
ति एत्तकोव पटिसन्थारो अहोसि। तेन वुत्तं "**अथ खो अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स
एतदहोसी**"ति आदि ।

बुद्धो ति त्वं गहपति वदेसीति तस्स किर मुखतो बुद्धसद्दं सुत्वा अनाथपिण्डिको
पञ्चवण्णं पीतिं पटिलभति, सा तस्स सीसे उट्ठहित्वा याव पादपिट्ठिया, पादपिट्ठिया
उट्ठाय याव सीसा गच्छति, उभतो उट्ठाय मज्झे ओसरति, मज्झे उट्ठाय उभतो
गच्छति । सो पीतिया निरन्तरं फुटो "बुद्धो तिं त्वं गहपति वेदसी"ति एवं तिक्खत्तुं
B. 397 पुच्छि । **अकालो खो गहपति इमं कालं तं** भगवन्तं दस्सनाय उपसङ्कमितुं ति "बुद्धा
नाम दुरासदा आसीविससदिसा होन्ति, सत्था च सीवथिकाय समीपे वसति, न सक्का
तत्थ इमाय वेलाय इमिना गन्तुं" ति मञ्ञमानो एवमाह । **बुद्धगताय सतिया
निपज्जी**ति अञ्ञं किञ्चि अचिन्तेत्वा बुद्धगताय एव सतिया निपज्जि । तं दिवसं
किरस्स भण्डसकटेसु वा उपट्ठाकेसु वा चित्तम्पि नुप्पज्जि, सायमासम्पि न अकासि ।
सत्तभूमिकं पन पासादं आरुय्ह सुपञ्ञत्तालङ्कतवरसयने "बुद्धो बुद्धो" ति सज्झायं
करन्तोव निपज्जित्वा निद्दं ओक्कमि । **तिक्खत्तुं वुट्ठासि पभातं मञ्ञमानो** ति पठमयामे
ताव वीतिवत्ते उट्ठाय बुद्धं अनुस्सरि, अथस्स बलवप्पसादो उदपादि, पीतिआलोको
अहोसि, सब्बतमं विगच्छि, दीपसहस्सुज्जलनं विय चन्दुट्ठानसूरियुट्टानं विय च
जातं । सो "पमादं आपन्नोम्हि, वञ्चितोम्हि, सुरियो उग्गतो" ति उट्ठाय आकासतले
ठत्वा चन्दं ओलोकेत्वा "एकोव यामो गतो, अञ्ञे द्वे अत्थी" ति पुन पविसित्वा
निपज्जि, एतेनुपायेन मज्झिमयामावसानेपि पच्छिमयामावसानेपि तिक्खत्तुं उट्ठासि ।
पच्छिमयामावसाने पन बलवपच्चूसेयेव उट्ठाय आकासतलं आगन्त्वा महाद्वाराभि-
मुखो अहोसि, सत्तभूमिकद्वारं सयमेव विवटं अहोसि, पासादो ओरुय्ह अन्तरवीथिं
पटिपज्जि ।

३०५॥ अमनुस्साति अधिगतविसेसा देवता । तथा हि ता सेट्ठिस्स भाविनि-
सम्पत्तिं पच्चक्खतो सम्पस्समाना "अयं महासेट्ठि 'बुद्धुपट्ठानं गमिस्सामी' ति
निक्खन्तो पठमदस्सनेनेव सोतपत्तिफले पतिट्ठाय तिण्णं रतनानं अग्गुपट्ठाको हुत्वा
असदिसं संघारामं कत्वा चातुद्दिसस्स अरियसंघस्स[1] अनावटद्वारो भविस्सति, न
युत्तमस्स द्वारं पिदहितुं" ति चिन्तेत्वा द्वारं विवरिंसु । **अन्तरधायी**ति राजगहं किर
आकिण्णमनुस्सं, अन्तोनगरे नव कोटियो बहिनगरे नवाति तं उपनिस्साय अट्ठारस
मनुस्सकोटियो वसन्ति । अवेलाय मतमनुस्से बहि नीहरितुं असक्कोन्ता अट्टालके
ठत्वा बहिद्धारे खिपन्ति । महासेट्ठि नगरतो बहि निक्खन्तमत्तोव अल्लसरीरं पादेन

1. अरियगणस्स (स्या) ।

अक्कमि, अपरम्पि पिट्ठिपादेन पहरि, मक्खिका उप्पतित्वा पकिरिंसु, दुग्गन्धो नासा-पुटं अभिहनि, बुद्धप्पसादो तनुत्तं गतो। तेनस्स आलोको अन्तरधायि अन्धकारो पातुरहोसि पीतिवेगस्स तनुभावे तंसमुट्ठितरूपानं परिदुब्बलभावतो। **सद्दमनुस्सावेसी**ति B. 398 "सेट्ठिस्स उस्साहं जनेस्सामी" ति सुवण्णकिङ्किणिकं घट्टेन्तो विय मधुरस्सरेन सद्दं अनुस्सावेसि।

सतं कञ्ञासहस्सानीति पुरिमपदानिपि इमिनाव सहस्सपदेन सद्धिं सम्बन्धितब्बानि। यथेव हि सतं कञ्ञासहस्सानि, एवं सतं सहस्सानि हत्थी, सतं सहस्सानि अस्सा, सतं सहस्सानि रथा ति अयमेत्थ अत्थो, इति एकेकं सतसहस्सं दीपितं होति। **पदवीतिहारस्सा** ति पदं वीतिहरति एत्थाति **पदवीतिहारो**। सो दुतविलम्बितं अकत्वा समगमने द्विन्नं पदानं अन्तरे मुट्ठिरतनमत्तं। **कलं नाग्घन्ति सोळसिं** ति तं एकं पदवीतिहारं सोळस भागे कत्वा ततो एको कोट्ठासो पुन सोळसधा, ततो एको सोळसधाति एवं सोळस वारे सोळसधा भिन्नस्स एको कोट्ठासो सोळसी कला नाम, तं सोळसिं कलं एतानि चत्तारि सतसहस्सानि न अग्घन्ति। इद वुत्तं होति–सतं हत्थिसहस्सानि सतं अस्ससहस्सानि सतं रथसहस्सानि सतं कञ्ञासहस्सानि, ता च खो आमुक्कमणिकुण्डला सकलजम्बुदीपराजधीतरो वा ति इमस्मा एत्तका लाभा विहारं गच्छन्तस्स तस्मिं सोळसिकलासङ्खाते पदेसे लङ्घनसाधनवसेन पवत्तचेतनाव उत्तरितरा ति। पदं वा वीतिहरति एतेनाति **पदवीतिहारो,** तथापवत्ता कुसलचेतना, तस्सा फलं सोळसधा कत्वा ति च वदन्ति। इदं पन विहारगमनं कस्स वसेन गहितं ति? विहारं गन्त्वा अनन्तरायेन सोतापत्तिफले पतिट्ठहन्तस्स वसेन गहितं। "गन्धमालादीहि पूजं करिस्सामि, चेतियं वन्दिस्सामि, धम्मं सोस्सामि, दीपपूजं करिस्सामि, संघं निमन्तेत्वा दानं दस्सामि, सिक्खापदेसु वा सरणेसु वा पतिट्ठहिस्सामी" ति गच्छतोपि वसेन वट्टतियेव।

अन्धकारो अन्तरधायीति सो किर चिन्तेसि "अहं एककोति सञ्ञं करोमि, अमनुस्सा च मे अनुगामिनो सहाया अत्थि, कस्मा भायामी" ति सूरो अहोसि। अथस्स बलवा बुद्धप्पसादो उदपादि, तस्मा अन्धकारो अन्तरधायि। सेसवारेसुपि एसेव नयो। **आलोको पातुरहोसी**ति पुरिमबुद्धेसु चिरकालपरिचयसम्भूतस्स बलवतो पसादस्स वसेन उप्पन्नाय उळाराय बुद्धारम्मणाय पीतिया समुट्ठापितो विपस्सनो- B. 399 भाससदिसो सातिसयो चित्तपच्चयउतुसमुट्ठानो आलोको पातुरहोसि। देवताहि कतोतिपि वदन्ति, पुरिमोयेवेत्थ युत्ततरो। **एहि सुदत्ता** ति सो किर सेट्ठि गच्छमानोव चिन्तेसि "इमस्मिं लोके बहू पूरणकस्सपादयो तित्थिया "मयं बुद्धा, मयं बुद्धा" ति वदन्ति, कथं नु खो अहं सत्थु बुद्धभावं जानेय्यं" ति। अथस्स एतदहोसि "मय्हं गुणवसेन उप्पन्नं नामं महाजनो जानाति, कुलदत्तियं पन मे नामं अञ्ञत्र मया न

कोचि जानाति, सचे बुद्धो भविस्सति, कुलदत्तिकनामेन मं आलपिस्सती" ति । सत्था तस्स चित्तं ञत्वा एवमाह ।

परिनिब्बुतो ति किलेसपरिनिब्बानेन परिनिब्बुत्तो । **आसत्तियो** ति रूपादीसु आसञ्जनट्ठेन आसत्तियो, तण्हायो । **सन्तिं** ति किलेसवूपसमं । **पप्पुय्या** ति अग्गमग्गेन पत्वा । सेसमेत्थ पालिअनुसारेनेव वेदितब्बं । यञ्चेत्थ अनुत्तानमत्थं, तं अट्ठकथायं वुत्तमेव ।

३०६॥ वयमेव वेय्यायिकं ति आह "वेय्यायिकं ति वयकरणं वुच्चती" ति ।

अनाथपिण्डिकवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

अग्गासनादिअनुजाननकथावण्णना

३१०-३११॥ **दक्खिणोदकं** ति अग्गतो उपनीयमानं दक्खिणोदकं । **अथ खो भगवा भिक्खू आतिमन्तेसी**[1]ति तेहि भिक्खूहि अत्तनो अत्तनो रुचिवसेन अग्गासनादिरहानं कथितकाले "न भिक्खवे मय्हं सासने अग्गासनादीनि पत्वा खत्तियकुला पब्बजितो पमाणं, न ब्राह्मणकुला, न गहपतिकुला पब्बजितो, न विनयधरो, न सुत्तन्तिको, न आभिधम्मिको, न पठमज्झानादिलाभिनो, न सोतापन्नादयो पमाणं, अथ खो भिक्खवे इमस्मिं सासने यथावुड्ढं अभिवादनं पच्चुट्ठानं अञ्जलिकम्मं सामीचिकम्मं कत्तब्बं, अग्गासनं अग्गोदकं अग्गपिण्डो लद्धब्बो, इदमेत्थ पमाणं, तस्मा वुड्ढतरो भिक्खु एतेसं अनुच्छविको । इदानि खो पन भिक्खवे सारिपुत्तो B. 400 मय्हं अग्गसावको अनुधम्मचक्कप्पवत्तको पमानन्तरसेनासनं लद्धुं अरहति । सो इमं रत्तिं सेनासनं अलभन्तो रुक्खमूले वीतिनामेसि । तुम्हे इदानेव एवं अगारवा अप्पतिस्सा, गच्छन्ते गच्छन्ते काले किं ति कत्वा विहरिस्सथा" ति वत्वा अथ नेसं ओवाददानत्थाय "पुब्बे भिक्खवे तिरच्छानगतापि "न खो पनेतं अम्हाकं पतिरूपं, यं मयं अञ्ञमञ्ञं अगारवा अप्पतिस्सा असभागवुत्तिनो विहरेय्याम, अम्हेसु महल्लकतरं जानित्वा तस्स अभिवादनादीनि करिस्सामा" ति साधुकं वीमंसित्वा "अयं महल्लको" ति ञत्वा तस्स अभिवादनादीनि कत्वा देवपथं पूरयमाना गता" ति वत्वा अतीतं आहरित्वा दस्सेतुं भिक्खू आमन्तेसि ।

ये वुड्ढमपचायन्तीति जातिवुड्ढो वयोवुड्ढो गुणवुड्ढो ति तयो वुड्ढा । तेसु जातिसम्पन्नो **जातिवुड्ढो** नाम । वये ठितो **वयोवुड्ढो** नाम, गुणसम्पन्नो **गुणवुड्ढो**

1. जातक-ट्ठ-१-२३४-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।

नाम । तेसु गुणसम्पन्नो वयोवुड्ढो इमस्मिं ठाने वुड्ढो ति अधिप्पेतो । **अपचायन्तीति** जेट्ठापचायिककम्मेन पूजेन्ति । **धम्मस्स कोविदा** ति जेट्ठापचायनधम्मस्स कोविदा कुसला । **दिट्ठेव धम्मे** ति इमस्मिंयेव अत्तभावे । **पासंसा** ति पसंसारहा । **सम्पराये**[1] **च सुग्गतीति** सम्परेतब्बे[2] इमं लोकं हित्वा गन्तब्बे परलोकेपि[3] तेसं सुगतियेव होतीति अत्थो । अयं पनेत्थ पिण्डत्थो–भिक्खवे खत्तिया वा होन्तु ब्राह्मणा वा वेस्सा वा सुद्दा वा गहट्ठा वा पब्बजिता वा तिरच्छानगता वा, ये केचि सत्ता जेट्ठापचितिकम्मे छेका कुसला गुणसम्पन्नानं वयोवुड्ढानं अपचितिं करोन्ति, ते इमस्मिञ्च अत्तभावे जेट्ठापचितिकारका ति पसंसं वण्णनं थोमनं लभन्ति, कायस्स च भेदा सग्गे निब्बत्तन्तीति ।

अग्गासनादिअनुजाननकथावण्णना निट्ठिता

आसनप्पटिबाहनादिकथावण्णना

३१३-४-६॥ **उद्दिस्सकतं** ति गिहीहि संघं उद्दिस्स कतं । **गिहिविकतं ति** गिहीहि कतं पञ्ञत्तं, गिहिसन्तकं ति वुत्तं होति । **अतिसमीपं आगन्त्वा** ति भिक्खूनं आसन्नतरं ठानं अगन्त्वा ।

सेनासनग्गाहापकसम्मुतिकथावण्णना

B. 401

३१८॥ **पच्चयेनेव हि तं पटिजग्गनं लभिस्सतीति** तस्मिं सेनासने महाथेरा तस्स पच्चयस्स कारणा अञ्ञत्थ अगन्त्वा वसन्तायेव नं पटिजग्गिस्सन्तीति अत्थो । **उब्भण्डिका भविस्सन्तीति** उक्खित्तभण्डा भविस्सन्ति, अत्तनो अत्तनो परिक्खारे गहेत्वा तत्थ तत्थ विचरिस्सन्तीति अत्थो । **दीघसाला** ति चङ्कमनसाला । मण्डलमाळो उपट्ठानसाला । **अनुदहतीति** पीळेति । **जम्बुदीपे पना** ति अरियदेसे भिक्खू सन्धाय वुत्तं । ते किर तथा पञ्ञापेन्ति । **न गोचरगामो घट्टेतब्बो** ति वुत्तमेवत्थं विभावेति **"न तत्थ मनुस्सा वत्तब्बा"** ति आदिना । **वितक्कं छिन्दित्वा** ति "इमिना नीहारेन गच्छन्तं दिस्वा निवारेत्वा पच्चये दस्सन्ती" ति एवरूपं वितक्कं अनुप्पादेत्वा । **तेसु चे एको** ति तेसु मनुस्सेसु एको पण्डितपुरिसो । **भण्डपटिच्छादनं** ति पटिच्छादनकभण्डं, सरीर-पटिच्छादनं चीवरं ति अत्थो ।

पटिजग्गितब्बानीति सम्मज्जनादीहि पटिजग्गितब्बानि । **मुण्डवेदिकाया** ति चेतियस्स हम्मियवेदिकाय । हम्मियवेदिका ति च चेतियस्स उपरि चतुरस्सवेदियो[4] वुच्चति ।

---

1. सम्परायो (स्या.) ।
2. सम्परेतब्बो (स्या.) ।
3. गन्तब्बो परलोकोपि (स्या.) जातक-ट्ठ-१-२३६-पिट्ठे पन पस्सितब्बं ।
4. चतुरस्सचयो (स्या.), चतुरस्सवेदिका (?)

पटिक्कम्माति विहारतो अपसक्कित्वा । **उपनिक्खेपं** ति खेत्तं वा नाळिकेरादिआरामं वा कहापणादीनि वा आरामिकादीनं निय्यातेत्वा "इतो उप्पन्ना वड्ढि वस्सावासिकत्थाय होतू"ति दिन्नं। **वत्तं कत्वा** ति तस्मिं सेनासने कत्तब्बवत्तं कत्वा ।

पुग्गलवसेनेव कातब्बं ति परतो वक्खमाननयेन "भिक्खू चीवरेन किलमन्ति, एत्तकं नाम तण्डुलभागं भिक्खूनं चीवरं कातुं रुच्चती"ति आदिना पुग्गल-परामासवसेनेव कातब्बं, "संघो चीवरेन किलमती" ति आदिना पन संघपरामासवसेन न कातब्बं । **चीवरपच्चयं** ति चीवरसङ्खातं पच्चयं । **वुत्तं** ति महाअट्ठकथायं वुत्तं । कस्मा एवं वुत्तं ति आह "**एवं हि नवको वुड्ढतरस्स, वुड्ढो च नवकस्स गाहेस्सती**"ति, यस्मा अत्तनाव अत्तनो पापेतुं न सक्का, तस्मा द्वीसु सम्मतेसु नवको वुड्ढतरस्स, वुड्ढो च नवकस्साति उभो अञ्ञमञ्ञं गाहेस्सन्तीति अधिप्पायो । सम्मत-सेनासनग्गाहापकस्स आणत्तिया अञ्ञेन गाहितेपि गाहो रुहतियेवाति वेदितब्बं ।

B. 402 **अट्ठपि सोळसपि जने सम्मन्नितुं वट्टती**ति किं विसुं विसुं सम्मन्नितुं वट्टति, उदाहु एकतोति ? एकतोपि वट्टति । निग्गहकम्ममेव हि संघो संघस्स न करोति, सम्मुति-दानं पन बहूनम्पि एकतो कातुं वट्टति, तेनेव सत्तसतिकक्खन्धके उब्बाहिकसम्मुतियं अट्ठपि जना एकतो सम्मता ति

मग्गो ति मग्गे कतदीघसाला । **पोक्खरणी**ति नहायन्तानं पोक्खरणियं कतसाला । **रुक्खमूलादयो** छन्ना कवाटबद्धाव सेनासनं । **विजटेत्वा** ति वियोजेत्वा, विसुं विसुं कत्वा ति अत्थो । **आवासेसू**ति सेनासनेसु । **पक्खिपित्वा** ति एत्थ **पक्खिप**नं नाम तेसु वसन्तानं इतो उप्पन्नवस्सावासिकदानं । **पविसितब्बं** ति अञ्ञेहि भिक्खूहि तस्मिं महालाभे परिवेणे वसित्वा चेतिये वत्तं कत्वाव लाभो गहेतब्बो ति अधिप्पायो ।

पच्चयं विस्सज्जेतीति चीवरपच्चयं नाधिवासेति । **अयम्पी**ति तेन विस्सट्ठ-पच्चयोपि । **उपनिबन्धित्वा** गहेतब्बं ति "इमस्मिं रुक्खे वा **मण्डपे** वा वसित्वा चेतिये वत्तं कत्वा गण्हथा" ति एवं उपनिबन्धित्वा गाहेतब्बं । "**कत्थ** नु खो वसिस्सामि, **कत्थ** वसन्तस्स फासु भविस्सति, कत्थ वा पच्चयो भविस्सती"ति एवं उप्पन्नेन वितक्केन चरतीति **वितक्कचारिको** । अरञ्ञविहारेसु परिस्सयविजाननत्थं इच्छितब्बत्ता "**पञ्च पञ्च उक्का कोट्टेतब्बा**" ति वुत्तं ।

वत्तं ति कतिकवत्तं । **तिविधम्पी**ति परियत्तिपटिपत्तिपटिवेधवसेन तिविधम्पि । **सोधेत्वा पब्बाजेथा** ति भब्बे आचारकुलपुत्ते उपपरिक्खित्वा पब्बाजेथ । **दसवत्थुककथा** नाम अप्पिच्छकथा सन्तुट्ठिकथा पविवेककथा असंसग्गकथा वीरियारम्भकथा सीलकथा समाधिकथा पञ्ञाकथा विमुत्तिकथा विमुत्तिञाणदस्सनकथा ।

विग्गहसंवत्तनिकवचनं **विग्गाहिकं** । **चतुरारक्खं अहापेन्ता** ति बुद्धानुस्सति मेत्ता असुभं मरणस्सतीति इमं चतुरारक्खं अपरिहापेन्ता । **दन्तकट्ठखादनवत्तं आचिक्खितब्बं** ति एत्थ **दन्तकट्ठखादनवत्तं** यो देवसिकं संघमज्झे ओसरति, तेन सामणेरादीहि आहरित्वा भिक्खूनं यथासुखं परिभुञ्जनत्थाय दन्तकट्ठमाळके निक्खित्तेसु दन्तकट्ठेसु दिवसे दिवसे एकमेव दन्तकट्ठं गहेतब्बं । यो पन देवसिकं न ओसरति,. पधानघरे B. 403. वसित्वा धम्मस्सवने वा[1] उपोसथग्गे वा दिस्सति, तेन पमाणं सल्लक्खेत्वा चत्तारि पञ्च दन्तकट्ठानि अत्तनो वसनट्ठाने ठपेत्वा खादितब्बानि । तेसु खीणेसु सचे पुनपि दन्तकट्ठमाळके बहूनि होन्तियेव, पुनपि आहरित्वा खादितब्बानि । यदि पन पमाणं असल्लक्खेत्वा आहरति, तेसु अखीणेसुयेव माळके खीयति, ततो केचि थेरा "येहि गहितानि, ते पटिहरन्तू" ति वदेय्युं, केचि खादन्तु, पुन सामणेरा आहरिस्सन्ती" ति । तस्मा विवादपरिहारत्थं पमाणं सल्लक्खेतब्बं । गहणे पन दोसो नत्थि, मग्गं गच्छन्तेनपि एकं वा द्वे वा थविकाय पक्खिपित्वा गन्तब्बं ति । **भिक्खाचारवत्तं** वत्तक्खन्धके पिण्डचारिकवत्ते आवि भविस्सति ।

पत्तट्ठाने ति वस्सग्गेन आगन्तुकभिक्खुनो पत्तट्ठाने । तेसं छिन्नवस्सत्ता "सादियन्तापि हि ते नेव वस्सावासिकस्स समिनो" ति वुत्तं, पठमंयेव कतिकाय कतत्ता खीयन्तापि च आवासिका नेव अदातुं लभन्तीति वुत्तं । **भतिनिविट्ठं** ति भतिं कत्वा विय निविट्ठं परियिट्ठं । **संधिक पन अपलोकनकम्मं कत्वा गाहितं** ति तत्रुप्पादं सन्धाय वुत्तं । **पच्चयवसेन गाहितं** ति दायकानं वस्सावासिकपच्चयवसेन गाहितं सन्धाय वुत्तं । "इध भिक्खवे वस्संवुत्थो भिक्खु विब्भमति, संघस्सेवेतं" ति[2] वचनतो "**गतट्ठाने**......पे०....**संधिकं होती**"ति वुत्तं । **मनुस्से** ति दायकमनुस्से । **वरभागं सामणेरस्सा** ति पठमभागस्स गाहितत्ता वुत्तं ।

सेनासनग्गाहापकसम्मुतिकथावण्णना निट्ठिता ।

उपनन्दवत्थुकथावण्णना

३१९॥ **यं तया तत्थ सेनासनं गहितं....पे०....इध मुत्तं[3] होती**ति यं तया तत्थ गामकावासे पच्छा सेनासनं गहितं, तं ते गण्हन्तेनेव इध सावत्थियं पठमगहित-सेनासनं मुत्तं होति । **इध दानाहं....पे०....तत्रापि मुत्तं** ति "इदानाहं आवुसो B. 404

---

1. धम्मासने वा (क)
2. वि-३-४२४-पिट्ठे ।
3. मुत्तं-(स्या.) ।

इमस्मिं गामकावासे गहितसेनासनं मुञ्चामी" ति वदन्तेन तत्रापि गामकावासे गहित-सेनासनं मुत्तं।

३२०॥ **दीघासनं** नाम मञ्चपीठविनिमुत्तं यं किञ्चि एकतो सुखं निसीदितुं पहोति। हत्थिम्हि नखो अस्साति हत्थिनखो। "पासादस्स नखो नाम हेट्ठिमपरिच्छेदो, सो च हत्थिकुम्भे पतिट्ठितो" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। **गिहिविकतनीहारेन लब्भन्तीति** गिहिविकतनीहारेन परिभुञ्जितुं लब्भन्ति, तेहि अत्थरित्वा दिन्नानेव निसीदितुं लब्भन्नि, न सयं अत्थतानि अत्थरापितानि वा।

अविस्सज्जियवत्थुकथावण्णना

३२१॥ **अरञ्जरो** ति बहुउदकगण्हनका महाचाटि। जलं गण्हितुं अलं ति **अरञ्जरो**। "वट्टचाटि विय हुत्वा थोकं दीघमुखो मज्झे परिच्छेदं दस्सेत्वा कतो" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। **पञ्चनिम्मललोचनो** ति मंसदिब्बधम्मबुद्धसमन्तचक्खुवसेन पञ्च-लोचनो।

थावरेन च थावरं गरुभण्डेन च गरुभण्डं ति एत्थ पञ्चसु कोट्ठासेसु पुरिमद्वयं थावरं, पच्छिमत्तयं गरुभण्डं ति वेदितब्बं। **जानापेत्वा** ति भिक्खुसंघं जानापेत्वा। **कप्पियमञ्चा सम्पटिच्छितब्बा** ति "संघस्स देमा" ति दिन्नं सन्धाय वुत्तं। सचे पन "विहारस्स देमा" ति वदन्ति, सुवण्णरजतमयादिअकप्पियमञ्चेपि सम्पटिच्छितुं वट्टति। **न केवलं....पे०....परिवत्तेतुं वट्टन्ती** ति[1] इमिना अथावरेन थावरम्पि अथाव-रम्पि परिवत्तेतुं वट्टतीति दस्सेति। थावरेन अथावरमेव हि परिवत्तेतुं न वट्टति। **अकप्पियं वा महग्घं कप्पियं वा** ति एत्थ **अकप्पियं** नामं सुवण्णमयमञ्चादि अकप्पियभिसिविम्बोहनानि च। **महग्घं कप्पियं** नाम दन्तमयमञ्चादि पावारादि-कप्पियअत्थरणादीनि च।

पारिहारियं न वट्टतीति अत्तनो सन्तकं विय गहेत्वा परिहरितुं न वट्टति। "गिहिविकतनीहारेनेव परिभुञ्जितब्बं" ति इमिना सचे आरामिकादयो पटिसामेत्वा पटिदेन्ति, परिभुञ्जितुं वट्टतीति दस्सेति। "पण्णसूचि नाम लेखनी" ति **महागण्ठिपदे** वुत्तं।

B. 405 **अड्ढबाहू** ति कप्परतो पट्ठाय याव अंसकूटं "ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। **अड्ढबाहु** नाम विदत्थिचतुरङ्गुलं तिपि वदन्ति। **तत्थजातका**ति संघिकभूमियं जाता। **अट्ठङ्गुलसूचिदण्डमत्तो** ति दीघतो अट्ठङ्गुलमत्तो परिणाहतो पण्णसूचिदण्डमत्तो। मुञ्जपब्बजानंयेव पाळियं विसुं आगतत्ता **"मुञ्जं पब्बजञ्च ठपेत्वा"** ति वुत्तं। **अट्ठङ्गुलप्पमाणो**ति दीघतो अट्ठङ्गुलप्पमाणो। **घट्टनफलकं** नाम यत्थ ठपेत्वा रजित-

1. वट्टतीति (स्या)।

चीवरं हत्थेन घट्टेन्ति । **घट्टनमुग्गरो** नाम अनुवातादिघट्टनत्थं कतोति वदन्ति । **अम्बणं** ति फलकेहि पोक्खरणीसदिसं कतपानीयभाजनं । **रजनदोणी**ति यत्थ पक्करजनं आकिरित्वा ठपेन्ति । **भूमत्थरणं कातुं वट्टती**ति अकप्पियधम्मं सन्धाय वुत्तं । **पच्चत्थरणगतिकं** ति इमिना मञ्चपीठेपि अत्थरितुं वट्टतीति दीपेति । पावारादि-पच्चत्थरणम्पि गरुभण्डं ति एके, नोति अपरे, वीमंसित्वा गहेतब्बं । **मुट्ठिपण्णं** ति तालपण्णं सन्धाय वुत्तं ।

नवकम्मदानकथावण्णना

३२३॥ **कञ्चिदेव समादपेत्वा कारेस्सती**ति सामिकोयेव कञ्चि भिक्खुं समादपेत्वा कारेस्सति । **उतुकाले पटिबाहितुं** न लभतीति हेमन्तगिम्हेसु अञ्ञे सम्पत्तभिक्खू पटिबाहितुं न लभति । **तिभागं** ति ततियभागं । **सचे सद्धिविहारिकानं दातुकामो** होती-ति सचे सो संघस्स भण्डकठपनट्ठानं वा नवकानं वा वसट्ठानं दातुं न इच्छति, अत्तनो सद्धिविहारिकानञ्ञेव दातुकामो होतीति अत्थो । **एतञ्हि सद्धिविहरिकानं दातुं लभती**ति एतं ततियभागं उपड्ढभागं वा दातुं लभति । **अकतट्ठाने** ति सेनासनतो बहि चयादीनं अकतट्ठाने । **बहिकुट्टे** ति कुट्टतो बहि ।

अञ्ञत्रपरिभोगपटिक्खेपादिकथावण्णना

३२४॥ **चक्कलिकं** ति कम्बलादीहि वेठेत्वा चक्कसण्ठानेन पादपुञ्छनयोग्गं कतं । **परिभण्डकता भूमि** नाम सण्हमत्तिकाहि कता काळवण्णादिभूमि । **सेनासनं** मञ्च-पीठादि । **तथेव वळञ्जेतुं वट्टती**ति अञ्ञेहि आवासिकभिक्खूहि परिभुत्तनीहारेन परिभुञ्जितुं वट्टति । "नेवासिका पकतिया अनत्थताय भूमिया ठपेन्ति चे, तेसम्पि अनापत्तियेवा" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **द्वारम्पी**ति आदिना वुत्तद्वारवातपानादयो अपरिकम्मकतापि न अपस्सयितब्बा । **लोमेसू** ति लोमेसु फुसन्तेसु ।

संघभत्तादिअनुजाननकथावण्णना

B. 406

३२५॥ **उद्देसभत्तं निमन्तनं ति इमं वोहारं पत्तानी**ति एत्थ इति-सद्दो आदि अत्थो, "उद्देसभत्तं निमन्तनं" ति आदिवोहारं पत्तानीति अयमेत्थ अत्थो । **तम्पि अन्तो कत्वा** ति आयतिं भिक्खूनं कुक्कुच्चविनोदनत्थाय तम्पि संघभत्तं अन्तो कत्वा ।

उद्देसभत्तकथावण्णना

अत्तनो विहारद्वारे ति विहारस्स द्वारकोट्ठकसमीपं सन्धाय वुत्तं । **भोजनसालाया** ति भत्तुद्देसट्ठानभूताय भोजनसालाय । **"दिन्नं पना"** ति वत्वा यथा सो दायको देति, तं विधिं दस्सेतुं **"संघतो भन्ते"** ति आदिमाह । **अन्तरघरे** ति अन्तोगेहे । **अन्तोउपचार-गतानं** ति एत्थ गामद्वारवीथिचतुक्केसु द्वादसहत्थब्भन्तरं अन्तोउपचारो नाम ।

अन्तरघरस्स उपचारे पन लब्भमानविसेसं दस्सेतुं **"घरूपचारो चेत्था"** ति आदिमाह। **एकवळञ्जं** ति एकेन द्वारेन वळञ्जितब्बं। **नानानिवेसनेसू**ति नानाकुलस्स निवेसनेसु। लज्जी पेसलो अगतिगमनं वज्जेत्वा मेधावी च उपपरिक्खित्वा उद्दिसिस्सतीति आह **"पेसलो लज्जी मेधावी इच्छितब्बो"** ति। **निसिन्नस्सपि निद्दायन्तस्सपी**ति अनादरे सामिवचनं। **तिचीवरपरिवारं** ति एत्थ "उदकपत्तलाभी[1] विय अञ्ञोपि उद्देसभत्तं अलभित्वा वत्थादिमनेकप्पकारकं लभति चे, तस्सेव तं" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। अत्तनो रुचिवसेन यं किञ्चि वत्वा आहरितुं विस्सज्जितत्ता **विस्सट्ठदूतो** नाम। **यं इच्छती**ति "उद्देसपत्तं देथा" ति आदीनि वदन्तो यं इच्छति। **पुच्छासभागेना** ति पुच्छासदिसेन।

"एका कूटट्ठितिका नाम होती" ति वत्वा तमेव ठितिकं विभावेन्तो **"रञ्ञो वा ही"** ति आदिमाह। अञ्ञेहि उद्देसभत्तेहि अमिस्सेत्वा विसुंयेव ठितिकाय गहेतब्बत्ता **"एकचारिकभत्तानी"** ति वुत्तं। **थेय्याय हरन्ती**ति पत्तहारका हरन्ति। **गीवा होती**ति आणापकस्स गीवा होति। **"मनुस्सानं वचनं कातुं वट्टती"ति गच्छन्ती**ति "मनुस्सानं वचनं कातुं वट्टती" ति तेन भिक्खुना वुत्ता गच्छन्ति। **अकतभागो नामा** ति आगन्तुकभागो B. 407 नाम। **"सब्बो संघो परिभुञ्जतू"ति वुत्ते** ति एत्थ "पठममेव 'सब्बं संघिकं पत्तं देथा' ति वत्वा पच्छा 'सब्बो संघो परिभुञ्जतू' ति अवुत्तेपि भाजेत्वाव परिभुञ्जितब्बं' ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं।

निमन्तनभत्तकथावण्णना

"एत्तके भिक्खू संघतो उद्दिसित्वा देथा" ति आदीनि अवत्वा एत्तकानं भिक्खूनं भत्तं गण्हथा" ति वत्वा दिन्नं **संघिकं निमन्तनं** नाम। **पिण्डपातिकानम्पि वट्टती**ति भिक्खापरियायेन वुत्तत्ता वट्टति। **पटिपाटिया** ति लद्धपटिपाटिया। **विच्छिन्दित्वा**ति "भत्तं गण्हथा" ति पदं अवत्वा। तेनेवाह **"भत्तं ति अवदन्तेना"** ति। **आलोपसङ्खेपेना**ति एकेकपिण्डवसेन। अयञ्च नयो निमन्तनेयेव, न उद्देसभत्ते। तत्थ हि एकस्स पहोनकप्पमाणंयेव भाजेतब्बं, तस्मा उद्देसभत्ते आलोपट्ठितिका नाम नत्थि। **अच्छती**-ति तिट्ठति। **"एकवारं** ति याव तस्मिं आवासे वसन्ति भिक्खू, सब्बे लभन्ती"ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं। अयं पनेत्थ अधिप्पायो–एकवारं ति एकदिवसं[2] सन्धाय वुत्तं, यत्तका पन भिक्खू तस्मिं आवासे वसन्ति, ते सब्बे। एकस्मिं दिवसे गहितभिक्खू अञ्ञदा अग्गहेत्वा याव एकवारं सब्बे भिक्खू भोजिता होन्ति, ताव ये जानन्ति, ते गहेत्वा गन्तब्बं ति।

सलाकभत्तकथावण्णना

1. उदकमत्तलाभी (स्या)।
2. एकवारं ति एकदिवसं (क)

उपनिबन्धित्वाति लिखित्वा । **निग्गहेन दत्वा** ति अनिच्छन्तम्पि निग्गहेन सप्पटिच्छापेत्वा । **एकगेहवसेनाति** एकाय घरपाळिया वसेन । **उद्दिसित्वाति** "तुय्हञ्च तुय्हञ्च पापुणाती"ति वत्वा । दूरत्ता निग्गहेत्वापि वारेन गाहेतब्बगामो **वारगामो**। बिहारवारे नियुत्ता **विहारवारिका,** वारेनविहाररक्खणत्ता। **अञ्ञत्थत्तं** ति पसादञ्ञथत्तं । **फातिकम्ममेव भवन्तीति** विहाररक्खणत्थाय संघेन दातब्बअतिरेकलाभा होन्ति । **संघनवकेन लद्धकाले** ति दिवसे दिवसे एकेकस्स पापितानि द्वे तीणि एकचारिकभत्तानि तेनेव नियामेन अत्तनो पापुणनट्ठाने संघनवकेन लद्धकाले । **यस्स कस्सचि सम्मुखी-भूतस्स पापेत्वा** ति एत्थ 'येभुय्येन चे भिक्खू बहिसीमगता होन्ति, सम्मुखीभूतस्स B. 408 यस्स कस्सचि पापेतब्बं सभागत्ता[1] एकेन लद्धं सब्बेसं होति, तस्मिम्पि असति अत्तनो पापेत्वा दातब्बं" ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **रससलाकं** ति उच्छुरससलाकं ।

"संघतो निरामिससलाकापि विहारे पक्कभत्तम्पि वट्टतियेवा" ति साधारणं कत्वा विसुद्धिमग्गे[2] वुत्तत्ता" एवं गाहिते सादितब्बं, एवं न सादितब्बं" ति विसेसेत्वा अवुत्तत्ता च भेसज्जादिसलाकायो चेत्थ किञ्चापि पिण्डपातिकानम्पि वट्टन्ति, सलाकवसेन गाहितत्ता पन न सादितब्बा ति एत्थ अधिप्पायो वीमंसितब्बो । यदि हि भेसज्जादिसलाका सलाकवसेन गाहिता न सादितब्बा सिया, संघतो निरामिससलाका वट्टतियेवाति न वदेय्य, "अतिरेकलाभो संघभत्तं उद्देसभत्तं" ति आदिवचनतो[3] "अतिरेकलाभं पटिक्खिपामी"ति सलाकवसेन गाहेतब्बं भत्तमेव पटिक्खित्तं, न भेसज्जं । संघभत्तादीनि हि चुद्दस भत्तानियेव तेन न सादितब्बानीति वुत्तानि, खन्धकभाणकानं वा मतेन इध एवं वुत्तं ति गहेतब्बं । अग्गतो दातब्बभिक्खा **अग्गभिक्खा । लद्धा वा अलद्धा वा** ति लभित्वा वा अलभित्वा वा । निबद्धाय[4] अग्गभिक्खाय अप्पमत्तिकाय एव सम्भवतो लभित्वा पुनदिवसे गण्हितुं वुत्तं । **अग्गभिक्खामत्तं** ति हि एत्थ मत्त–सद्दो बहुभावं निवत्तेति ।

सलाकभत्तं नाम विहारेयेव उद्दिसीयति विहारमेव सन्धाय दिय्यमानत्ताति आह **"बिहारे अपापितं पना"** ति आदि । **तत्र आसनसालायाति** तस्मिं गामे आसनसालाय । **विहारं आनेत्वा गाहेतब्बं** ति तथा वत्वा तस्मिं दिवसे दिन्नभत्तं विहारमेव आनेत्वा ठितिकाय गाहेतब्बं । **तत्था** ति तस्मिं दिसाभागे । **तं गहेत्वाति** तं वारगामसलाकं अत्तना गहेत्वा । **तेना** ति यो अत्तनो पत्तं वारगामसलाकं दिसंगमिकस्स अदासि, तेन । **अनतिक्कन्तेयेव तस्मिं तस्स सलाका गाहेतब्बा** ति यस्मा उपचारसीमट्ठस्सेव सलाका

---

1. पापेतब्बसभावत्ता (क)
2. विसुद्धि-१-६३-पिट्ठे ।
3. वि-३-१३३-पिट्ठे ।
4. अनिबद्धाय (क)

पापुणाति, तस्मा तस्मिं दिसंगमिके उपचारसीमं अनतिक्कन्तेयेव तस्स दिसंगमिकस्स पत्तसलाका अत्तनो पापेत्वा गहेतब्बा ।

B. 409 **अनागतदिवसे** ति एत्थ कथं तेसं भिक्खूनं आगतानागतभावो विञ्ञायतीति चे ? यस्मा ततो ततो आगता भिक्खू तस्मिं गामे आसनसालाय सन्निपतन्ति, तस्मा तेसं आगतानागतभावो सक्का विञ्ञातुं । **अम्हाकं गोचरगामे** ति सलाकभत्तदायकानं गामे । **भुञ्जितुं आगच्छन्तीति** "महाथेरो एककोव विहारे ओहीनो अवस्सं सब्बसलाका अत्तनो पापेत्वा ठितो" ति मञ्ञमाना आगच्छन्ति ।

पक्खिकभत्तादिकथावण्णना

अभिलक्खितेसु चतूसु पक्खदिवसेसु दातब्बभत्तं **पक्खिकं** । **अभिलक्खितेसूति** एत्थ अभीति उपसग्गमत्तं, लक्खणीयेसु इच्चेव अत्थो, उपोसथसमादान-धम्मस्सवनपूजासक्कारादिकरणत्थं लक्खितब्बेसु सल्लक्खेतब्बेसु उपलक्खेतब्बेसूति वुत्तं होति । **स्वे पक्खो** ति "अज्ज पक्खिकं न गाहेतब्बं" ति पक्खिकस्स अनियमत्ता वुत्तं । 'स्वे अम्हाकं घरे लूखभत्तं भविस्सती' ति पोत्थकेसु लिखन्ति, "पक्खभत्तं भविस्सती" ति पाठेन भवितब्बं । उपोसथे दातब्बं भत्तं **उपोसथिकं** । **निबन्धापितं**[1] ति "असुकविहारस्सा" ति नियमितं । **गाहेत्वा भुञ्जितब्बं** ति तस्मिं सेनासने वसन्तेहि ठितिकाय गाहेत्वा भुञ्जितब्बं । **तण्डुलादीनि पेसेन्ति**.....पे०..... **वट्टतीति** अभिहटभिक्खत्ता वट्टति । **तथा पटिग्गहितत्ता** ति भिक्खानामेन पटिग्गहितत्ता । **पत्तं पूरेत्वा थकेत्वा दिन्नं** ति "गुळकभत्तं देमा" ति दिन्नं । **गुळपिण्डेपि**.....पे०....**दातब्बो** ति एत्थ **गुळपिण्डं** तालपक्कप्पमाणं ति वेदितब्बं । सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेवाति ।

सेनासनक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

---

1. निबद्धापितं ति (स्या)

७. संघभेदकक्खन्धक

B. 410

छसक्यपब्बज्जाकथावण्णना

३३०॥ संघभेदकक्खन्धके **अनुपियायं** ति आदीसु "अनुपिया नामा" ति वत्तब्बे आकारस्स रस्सत्तं अनुनासिकस्स च आगमं कत्वा "अनुपियं नामा" ति वुत्तं। **मल्लानं** ति मल्लराजूनं। **न हेट्ठा पासादो ओरोहतीति** उपरिपासादतो हेट्ठिमतलं न ओरोहति, "हेट्ठापासादं" तिपि पठन्ति। अनुरुद्धो वा पब्बाजेय्याति योजेतब्बं। **घरावासत्थं** ति घरावासस्स अनुच्छविकं कम्मं। **उदकं अभिनेतब्बं** ति उदकं आहरितब्बं। **निन्नेतब्बं** ति आभतमुदकं पुन नीहरितब्बं। **निद्धापेतब्बं** ति अन्तरन्तरा उट्ठिततिणानि उद्धरित्वा अपनेतब्बं। **लवापेतब्बं** ति परिपक्ककाले लवापेतब्बं। **उब्बाहापेतब्बं** ति खलमण्डलं हरापेतब्बं। उजुं[1] **कारापेतब्बं** ति पुञ्जं कारापेतब्बं। पलालानि उद्धरापेतब्बानीति पलालानि अपनेतब्बानि। **भुसिका उद्धरापेतब्बा** ति गुन्नं खुरग्गेहि सञ्छिन्ना भुससङ्खाता नाळदण्डा अपनेतब्बा। **ओपुनापेतब्बं** ति[2] वातमुखे ओपुनापेत्वा[3] पलालं अपनेतब्बं। **अतिहरापेतब्बं** ति अन्तोकोट्ठागारं उपनेतब्बं। **न कम्मा** ति न कम्मानि। **घरावासत्थेना** ति उपयोगत्थे करणवचनं। उपजानाहीति च उपसग्गमत्तो उप-सद्दो। तेनाह **"घरावासत्थं जानाही"**ति। **जानाहीति** चेत्थ पटिपज्जाति अत्थो वेदितब्बो। अकामका ति अनिच्छमाना।

३३१-३३२॥ यं न निवत्तो ति यस्मा न निवत्तो। **सुञ्ञागारगतो** ति[4] "ठपेत्वा गामञ्च गामूपचारञ्च अवसेसं अरञ्ञं" ति[5] वुत्तं अरञ्ञं रुक्खमूलञ्च ठपेत्वा अञ्ञं पब्बतकन्दरादि पब्बजितसारुप्पं निवासट्ठानं जनसम्बाधाभावतो इध "सुञ्ञागारं" ति अधिप्पेतं। अथ वा झानकण्टकानं सद्दानं अभावतो विवित्तं यं किञ्चि अगारम्पि "सुञ्ञागारं" ति वेदितब्बं। तं सुञ्ञागारं उपगतो। **अभिक्खणं** ति बहुलं। **उदानं उदानेसीति** सो हि आयस्मा अरञ्ञे दिवाविहारं उपगतोपि रत्तिवासूपगतोपि येभुय्येन फलसमापत्तिसुखेन निरोधसमापत्तिसुखेन च वीतिनामेसि, तस्मा तं सुखं सन्धाय B. 411 पुब्बे अत्तना अनुभूतं सभयं सपरिळाहं रज्जसुखं जिगुच्छित्वा "अहो सुखं" अहो सुखं" ति सोमनस्ससहितञाणसमुट्ठानं पीतिसमुग्गारं समुग्गिरति। **ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं** ति ते सम्बहुला भिक्खू उल्लुम्पनसभावसण्ठिता तस्स अनुग्गण्हनाधिप्पायेन

---

1. पुञ्जं (पाळियं)।
2. ओफुनापेतब्बंतिं (स्या)।
3. ओफुनापेत्वा (स्या)।
4. उदान-ट्ठ-१४३-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
5. वि-१-५७-पिट्ठे।

भगवन्तं एतदवोचुं, न उज्झानवसेन । **निस्संसयं** ति असन्देहेन, एकन्तेनाति अत्थो । ते किर भिक्खू पुथुज्जना तस्स आयस्मतो विवेकसुखं सन्धाय उदानं अजानन्ता एवमाहंसु । **समनुस्सरन्तो** ति उक्कण्ठनवसेन अनुस्सरन्तो ।

अञ्ञतरं ति नामगोत्तेन अपाकटं एकं भिक्खुं । **आमन्तेसी**ति आणापेसि ते भिक्खू सञ्ञापेतुकामो । **एवं** ति वचनसम्पटिग्गहे, सधूति अत्थो । एवं भन्ते ति एत्थ पन एवं-सद्दो पटिञ्ञायं । "अभिक्खणं 'अहो सुखं अहो सुखं' ति इमं उदानं उदानेसी"- ति यथा ते भिक्खू वदन्ति, तं एवं तथेवाति अत्तनो उदानं पटिजानाति । **"किं पन त्वं भद्दिया"** ति कस्मा भगवा पुच्छति, किं तस्स चित्तं न जनाती ति ? नो न जानाति, तेनेव पन तमत्थं वदापेत्वा ते भिक्खू सञ्ञापेतुं पुच्छति । वुत्तञ्हेतं "जानन्तापि तथागता पुच्छन्ति, जानन्तापि न पुच्छन्ती"तिआदि[1] । **अत्थवसं** ति कारणं ।

अन्तो पि अन्तेपुरे ति[2] इत्थागारस्स सञ्चरणट्ठानभूते राजगेहस्स अब्भन्तरे, यत्थ राजा नहानभोजनसयनादिं कप्पेति । **रक्खा सुसंविहिता**ति आरक्खादिकतपुरिसेहि गुत्ति सुट्ठु समन्ततो विहिता । **बहिपि अन्तेपुरे** ति[3] अट्टकरणट्ठानादिके अन्तेपुरतो बहिभूते राजगेहे । **एवं रक्खितो गोपितो सन्तो** ति एवं राजगेहराजधानीरज्जदेसेसु, अन्तो बहि च अनेकेसु ठानेसु अनेकसतेहि सुसंविहितरक्खावरणगुत्तिया ममेव निब्भयत्थं फासुविहारत्थं रक्खितो गोपितो समानो । **भीतो** ति आदीनि पदानि अञ्ञमञ्ञवेवचनानि । अथ वा **भीतो** ति परराजूहि भायमानो । **उब्बिग्गो**ति सकरज्जेपि पकतिक्खोभतो उप्पज्जनकभयुब्बेगेन उब्बिग्गो चलितो । **उस्सङ्की**ति "रञ्ञा नाम सब्बकालं अविस्सत्थेन भवितब्बं" ति वचनतो सब्बत्थ अविस्सासनवसेन तेसं तेसं किच्चकरणीयानं अच्चयतो उप्पज्जनकपरिसङ्काय च उद्धमुद्धं सङ्कमानो । B. 412 **उत्रासी**ति "सन्तिकावचरेहिपि अजानन्तस्सेव मे कदाचि अनत्थो भवेय्या"ति उप्पन्नेन सरीरकम्पम्पि उप्पादनसमत्थेनं तासेन उत्रासि । "उत्रस्तो" तिपि पठन्ति । **विहरामी**ति एवंभूतो हुत्वा विहरामि ।

एतरहीति इदानि पब्बजितकालतो पट्ठाय । एको ति असहायो । तेन विवेकट्ठकायतं दस्सेति । **अभीतो**तिआदीनं पदानं वुत्तविपरियायेन अत्थो वेदितब्बो । भयादिनिमित्तस्स परिग्गहस्स तंनिमित्तस्स च किलेसगहनस्स अभावेनेवस्स अभीता-दितादि एतेन चित्तविवेकं दस्सेति । **अप्पोस्सुक्को**ति सरीरगुत्तियं निरुस्सुक्को । **पन्नलोमो-**ति लोमहंसुप्पादकस्स छम्भितत्तस्स अभावेन अनुग्गतलोमो । पदद्वयेनपि सेरिविहारं

1. वि-१-७-११४ पिट्ठादीसु ।
2. अन्तो अन्तेपुरेति (स्या) ।
3. बहिअन्तेपुरेति-(स्या) ।

दस्सेति । **परदत्तवुत्तो**ति[1] परेहि दिन्नेन चीवरादिना वत्तमानो । एतेन सब्बसो सञ्ञाभावदीपनमुखेन[2] अनवसेसभयहेतुविरहं दस्सेति । **मिगभूतेन चेतसा**ति विस्सत्थविहारिताय मिगस्स विय जातेन चित्तेन । मिगो हि अमनुस्सपथे अरञ्ञे वसमानो विस्सत्थो तिट्ठति निसीदति निपज्जति येनकामञ्च पक्कमति अप्पटिहतचारो, एवं अहम्पि विहरामीति दस्सेति । वुत्तञ्हेतं पच्चेकसम्बुद्धेन–

"मिगो अरञ्ञम्हि यथा अबद्धो,
येनिच्छकं गच्छति गोचराय ।
विञ्ञू नरो सेरित पेक्खमानो,
एको चरे खग्गविसाणकप्पो" ति[3] ।

इमं खो अहं भन्ते अत्थवसं ति भगवा यदिदं मम एतरहि परमं विवेकसुखं फलसमापत्तिसुखं, इदमेव कारणं सम्पस्समानो "अहो सुखं, अहो सुखं" ति उदानेमि । **एतमत्थं** ति एतं भद्दियत्थेरस्स पुथुज्जनविसयातीतं विवेकसुखसञ्ञातं अत्थं सब्बाकारतो विदित्वा । **इमं उदानं** ति इमं सहेतुकभयसोकविगमानुभावदीपकं उदानं उदानेसि ।

यस्सन्तरतो न सन्ति कोपा ति यस्स अरियपुग्गलस्स अन्तरतो अब्भन्तरे अत्तनो चित्ते चित्तकालुस्सियकरणतो चित्तप्पकोपा रागादयो आघातवत्थु आदिकारणभेदतो B. 413 अनेकभेदा दोसकोपा एव वा न सन्ति, मग्गेन पहीनत्ता न विज्जन्ति । अयञ्हि **अन्तर**-सद्दो किञ्चापि "मञ्च त्वञ्च किमन्तरं" तिआदीसु[4] कारणे दिस्सति, "अन्तरट्ठके हिमपातसमये" तिआदीसु[5] वेमज्झे, "अन्तरा च जेतवनं अन्तरा च सावत्थिं" ति आदीसु[6] विवरे, "भयमन्तरतो जातं" तिआदीसु[7] चित्ते इधापि चित्ते एव दट्ठब्बो । तेनेवाह **"यस्स चित्ते कोपा न सन्ती"** ति ।

अभव-सद्दस्स **विभव**-सद्देन अत्थुद्धारे कारणमाह **"विभवो ति च अभवो ति च अत्थतो एकं"** ति । इति-सद्दो पकारवचनो ति आह **"इति अनेकप्पकारा भवाभवता"** ति । **वीतिवत्तो** ति अतिक्कन्तो । एत्थ च "यस्सा" ति इदं यो **वीतिवत्तो** ति विभत्तिविपरिणामवसेन योजेतब्बं । **तं विगतभयं** ति तं एवरूपं यथावुत्तगुणसमन्नागतं खीणासवं चित्तकोपाभावतो इतिभवाभवसमतिक्कमनतो च भयहेतुविगमेन विगतभयं । विवेकसुखेन अग्गफलसुखेन च सुखिं, विगतभयत्ता एव **असोकं** । **देवा**

---

1. परदवुत्तोति (स्या) ।
2. सञ्ञाभावदीपनमुखेन (स्या) उदान-ट्ठ-१४५-पिट्ठे पन पस्सितब्बं ।
3. खु-१-२८५, खु-३-९-पिट्ठेसु ।
4. सं-१-२०३-पिट्ठे ।
5. वि-३-४०१-पिट्ठे ।
6. खु-१-८९-१३७-पिट्ठेसु ।
7. खु-१-२५२, खु-७-१२-पिट्ठेसु ।

नानुभवन्ति दस्सनाया ति अधिगतमग्गे ठपेत्वा सब्बेपि उपपत्तिदेवा वायमन्तापि चित्तचारदस्सनवसेन[1] दस्सनाय दट्ठुं नानुभवन्ति न अभिसम्भुणन्ति न सक्कोन्ति, पगेव मनुस्सा। सेक्खापि हि पुथुज्जना विय अरहतो चित्तप्पवत्तिं न जानन्ति। **तस्स दस्सनं देवानम्पि दुल्लभं** ति एत्थापि चित्तचारदस्सनवसेन तस्स दस्सनं देवानम्पि दुल्लभं अलब्भनीयं, देवेहिपि तं दस्सनं न सक्का पापुणितुं ति एवमत्थो गहेतब्बो। अभावत्थो हेत्थ दु-सद्दो "दुप्पञ्ञो" ति आदीसु विय।

३३३॥ **भत्ताभिहारो** ति अभिहरितब्बभत्तं। तस्स पन पमाणं दस्सेतुं "पञ्च च थालिपाकसतानी"ति वुत्तं। तत्थ एको थालिपाको दसन्नं पुरिसानं भत्तं गण्हाति। **लाभसक्कारसिलोकेना** ति एत्थ **लाभो** नाम चतुपच्चयलाभो। **सक्कारो** ति तेसंयेव सुकतानं सुसङ्खतानं लाभो। **सिलोको** ति वण्णघोसो। मनोमयं कायं ति झानमनेन निब्बत्तं, ब्रह्मकायं। **उपपन्नो** ति उपगतो **अत्तभावप्पटिलाभो** ति सरीरपटिलाभो। **द्वे वा** B. 414 **तीणि वा मागधकानि**[2] **गामखेत्तानी**ति एत्थ मागधकं गामखेत्तं अत्थि खुद्दकं, अत्थि मज्झिमं, अत्थि महन्तं। **खुद्दकं गामखेत्तं** इतो चत्तालीस उसभानि, एत्तो चत्तालीस उसभानीति गावुतं होति। **मज्झिमं** इतो गावुतं, एत्तो गावुतं ति अड्ढयोजनं होति। महन्तं इतो दियड्ढगावुतं, एत्तो दियड्ढगावुतं ति तिगावुतं होति। तेसु[3] खुद्दकेन गामखेत्तेन तीणि, खुद्दकेन च मज्झिमेन च द्वे गामखेत्तानि तस्स अत्तभावो। तिगावुतञ्हिस्स सरीरं। **परिहरिस्सामी**ति पटिजग्गिस्सामि गोपयिस्सामि। **रक्खस्सेतं** ति रक्खस्सु एतं।

पञ्चसत्थुकथावण्णना

३३४॥ **सत्थारो** ति गणसत्थारो। **नास्सस्सा** ति न एतस्स भवेय्य। **तं** ति[4] तं सत्थारं। **तेना** ति अमनापेन। **समुदाचरेय्यामा** ति कथेय्याम। **सम्मन्नती**ति अम्हाकं सम्मानं करोति। तेनाह **"सम्मानेती"** ति, सम्मन्नतीति वा परेहि सम्मानीयतीति अत्थो।

३३५॥ **नासाय पित्तं भिन्देय्युं** ति अच्छपित्तं वा मच्छपित्तं वा नासापुटे पक्खिपेय्युं। **पराभवाया**ति अवड्ढिया विनासाय। **अस्सतरी**ति वळवाय कुच्छिस्मिं गद्रभस्सजाता, तं अस्सेन सद्धिं सम्पयोजेन्ति, सा गब्भं गण्हित्वा काले सम्पत्ते विजायितुं न सक्कोति, पादेहि भूमिं पहरन्ती तिट्ठति, अथस्सा चत्तारो पादे चतूसु

1. चित्तवारदस्सनवसेन (स्या.), चित्ताचारदस्सनवसेन (क)।
2. मागधिकानि (स्या.)।
3. तं (स्या, क) अं-ट्ठ-३-४१-पिट्ठे विमतिविनोदनीटीकायं च पस्सितब्बं।
4. नन्ति (पालियं)।

खाणुकेसु **बन्धित्वा** कुच्छिं फालेत्वा पोतकं नीहरन्ति, सा तत्थेव मरति । तेन वुत्तं **"अत्तवधाय गब्भं गण्हाती"** ति ।

३३९॥ पोत्थनिकं ति छुरिकं, यं खरं ति पि वुच्चति ।

नाळागिरिपेसनकथावण्णना

३४२॥ **मा कुञ्जर नागमासदोति** भो कुञ्जर बुद्धनागं वधकचित्तेन मा उपगच्छ । **दुक्खं** ति दुक्खकारणत्ता दुक्खं । कथं तं दुक्खं ति आह **"न हि नागहतस्सा"** ति आदि । नागहतस्स सुगतिपटिक्खेपेन बुद्धनागस्स घातो दुग्गतिदुक्खकारणं ति दस्सेति । **इतो** ति इतो जातितो । यतो ति यस्मा । इतो परं यतो ति इतो परं गच्छन्तस्साति वा अत्थो । मदो ति मानमदो । पमादो ति पमत्तभावो । पटिकुटितो ति सङ्कुटितो । **अलक्खिकोति** अहिरिको[1] । **तत्र हि नामा** ति यो नाम । B. 415

पञ्चवत्थुयाचनकथावण्णना

३४३॥ **तिकभोजनं** ति तीहि भुञ्जितब्बभोजनं, तिण्णं एकतो पटिग्गहेत्वा भुञ्जितुं पञ्ञपेस्सामीति अत्थो । **कोकालिको** ति आदीनि चतुन्नं देवदत्तपक्खियानं गणपामोक्खानं नामानि । **आयुकप्पं** ति एकं महाकप्पं असीतिभागं कत्वा ततो एकभागमत्तं कालं अन्तरकप्पसञ्ञितं कालं ।

आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोचा ति[2] देवदत्तो सब्बं संघभेदस्स पुब्बभागं निप्फादेत्वा "एकंसेनेव अज्ज आवेणिकं उपोसथं संघकम्मञ्च करिस्सामी" ति चिन्तेत्वा एतं **"अज्जतग्गे"** ति आदिवचनं अवोच । तत्थ अञ्ञत्रेव भगवता ति विना एव भगवन्तं, तं सत्थारं अकत्वाति अत्थो । **अञ्ञत्र भिक्खुसंघा उपोसथं करिस्सामि संघकम्मानि चा**-ति भगवतो ओवादकारकं भिक्खुसंघं विना मं अनुवत्तन्तेहि भिक्खूहि सद्धिं आवेणिकं उपोसथं संघकम्मानि च करिस्सामि । **अज्जतग्गे भन्ते देवदत्तो संघं भिन्दिस्सती**ति भेदकारकानं सब्बेसं देवदत्तेन सञ्जितत्ता "एकंसेनेव देवदत्तो अज्ज संघं भिन्दिस्सती"ति मञ्ञमानो एवमाह । **भिन्दिस्सती**ति द्विधा करिस्सति ।

एतमत्थं विदित्वा ति एतं अवीचिमहानिरयुप्पत्तिसंवत्तनियं कप्पट्ठियं अतेकिच्छं देवदत्तेन निब्बत्तियमानं संघभेदकम्मं सब्बाकारतो विदित्वा । **इमं उदानं** ति कुसलाकुसलेसु यथाक्कमं सप्पुरिसासप्पुरिसानं सुकरा पटिपत्ति, न पन नेसं अकुसलकुसलेसूति इदमत्थविभावनं उदानं उदानेसि ।

तत्थ **सुकरं साधुना साधूति** अत्तनो परेसञ्च हितं साधेतीति साधु, सम्मापटिपन्नो । तेन साधुना सारिपुत्तादिना सावकेन पच्चेकसम्बुद्धेन सम्मासम्बुद्धेन अञ्ञेन वा

1. निस्सिरितो (स्या) ।
2. उदान-ट्ठ-२८७-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

लोकियसाधुना साधु सुन्दरं भद्दकं अत्तनो परेसञ्च हितसुखावहं सुकरं सुखेन कातुं B.-416 सक्का । **साधु पापेन दुक्करं** ति तदेव पन वुत्तलक्खणं साधु पापेन देवदत्तादिना पापपुग्गलेन दुक्करं कातुं न सक्का, न सो तं कातुं सक्कोतीति अत्थो । **पापं पापेन सुकरं** ति पापं असुन्दरं अत्तनो परेसञ्च अनत्थावहं पापेन यथावुत्तपापपुग्गलेन सुकरं सुखेन कातुं सक्कुणेय्यं । पापमरियेहि दुक्करं ति अरियेहि पन बुद्धादीहि तं पापं दुक्करं दुरभिसम्भवं । सेतुघातोयेव हि तेसं तत्थाति दीपेति ।

संघभेदकथावण्णना

३४५॥ **अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो अदेसनापाटिहारियानुसासनिया** तिआदीसु परस्स चित्तं ञत्वा कथनं **आदेसनापाटिहारियं,** सावकानञ्च बुद्धानञ्च सततं धम्मदेसनं **अनुसासनीपाटिहारियं,** इद्धिविधं **इद्धिपाटिहारियं** । तत्थ इद्धिपाटिहारियेन सद्धिं अनुसासनीपाटिहारियं महामोग्गल्लानत्थेरस्स आचिण्णं, आदेसनापाटिहारियेन सद्धिं अनुसासनीपाटिहारियं धम्मसेनापतिस्स । तेन वुत्तं "आयस्मा सारिपुत्तो आदेसनापाटिहारियानुसासनिया भिक्खू धम्मिया कथाय ओवदी"तिआदि । तदा हि द्वीसु अग्गसावकेसु धम्मसेनापति तेसं भिक्खूनं चित्तचारं ञत्वा धम्मं देसेसि, महामोग्गल्लानत्थेरो विकुब्बनं दस्सेत्वा धम्मं देसेसि, पाळियञ्चेत्थ द्विन्नम्पि थेरानं देसनाय धम्मचक्खुपटिलाभोव दस्सितो । दीघभाणका पन एवं वदन्ति "भगवता पेसितेसु द्वीसु अग्गसावकेसु धम्मसेनापति तेसं चित्तचारं ञत्वा धम्मं देसेसि, थेरस्स धम्मदेसनं सुत्वा पञ्चसतापि भिक्खू सोतापत्तिफले पतिट्ठहिंसु । अथ नेसं महामोग्गल्लानत्थेरो विकुब्बनं दस्सेत्वा धम्मं देसेसि, तं सुत्वा सब्बे अरहत्तफले पतिट्ठहिंसू" ति । **देवदत्तं उट्ठापेसी**ति जण्णुकेन हदयमज्झे पहरित्वा उट्ठापेसि ।

३४६॥ **सरसी**ति सरो । **सुविक्खालितं** ति सुट्ठु विक्खालितं सुविसोधितं कत्वा ति अत्थो । **संखादित्वा** ति सुट्ठु खादित्वा । **महिं विकुब्बतो** ति महिं दन्तेहि विलिखन्तस्स । नदीसु भिसं घसानस्साति योजेतब्बं । नदीति चेत्थ महासरो अधिप्पेतो । जग्गतो ति हत्थियूथं पालेन्तस्स । **भिङ्कोवा** ति हत्थिपोतको विय । **ममानुकुब्बं** ति मं अनुकरोन्तो ।

B. 417 ३४७॥ **दूतेय्यं** ति[1] दूतकम्मं । **गन्तुमरहती**ति दूतेय्यसङ्खातं सासनं हरितुं धारेत्वा हरितुं अरहति । **सोता** ति यं अस्स[2] सासनं देन्ति, तस्स सोता । **सावेता**ति तं उग्गण्हित्वा "इदं नाम तुम्हेहि वुत्तं" ति पटिसावेता । **उग्गहेता** ति सुउग्गहितं कत्वा उग्गहेता । **धारेता** ति सुधारितं कत्वा धारेता । **विञ्ञाता** ति अत्तना तस्स अत्थं

1. अं-ट्ठ-३-२१६-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. अपरस्स (क) ।

जानिता। विञ्ञापेता ति परं विजानापेता। **सहितासहितस्सा** ति "इदं सहितं, इदं असहितं" ति एवं सहितासहितस्स **कुसलो** उपगतानुपगतेसु छेको सासनं आरोचेन्तो सहितासहितं सल्लक्खेत्वा आरोचेति। न **व्यथती**ति[1] न वेधति न छम्भति। **उग्गवादीनिं** ति फरुसवचनेन समन्नागतं। **पुच्छितो**ति पटिञ्ञत्थाय पुच्छितो।

३४८॥ **अट्ठहि भिक्खवे असद्धम्मेही**ति आदीसु असद्धम्मेहीति[2] असतं धम्मेहि, असन्तेहि वा असोभनेहि वा धम्मेहि। **अभिभूतो**ति अज्झोत्थटो। **परियादिन्नचित्तो** ति खेपितचित्तो लाभादिहेतुकेन इच्छाचारेन मानमदादिना च खयं पापितकुसलचित्तो। अथ वा **परियादिन्नचित्तो** ति परितो आदिन्नचित्तो, वुत्तप्पकारेन अकुसलकोट्ठासेन यथा कुसलचित्तस्स उप्पत्तिवारो न होति, एवं समन्ततो गहितचित्तसन्तानोति अत्थो। अपाये निब्बत्तनारहताय **आपायिको**। तत्थपि अवीचिसङ्खाते महानिरये उप्पज्जतीति **नेरयिको**। एकं अन्तरकप्पं परिपुण्णमेव कत्वा तत्थ तिट्ठतीति **कप्पट्ठो**। **अतेकिच्छो** ति बुद्धेहिपि अनिवत्तनीयत्ता अवीचिनिब्बत्तिया तिकिच्छाभावतो अतेकिच्छो, अतिकिच्छनीयो ति अत्थो। **लाभेना** ति लाभेन हेतुभूतेन। अथ वा लाभहेतुकेन मानादिना। लाभञ्हि निस्साय इधेकच्चे पुग्गला पापिच्छा इच्छापकता इच्छाचारे ठत्वा "लाभं निब्बत्तेस्सामा" ति अनेकविहितं अनेसनं अप्पतिरूपं आपज्जित्वा इतो चुता अपायेसु निब्बत्तन्ति। अपरे यथालाभं लभित्वा तंनिमित्तं मानातिमान-मदमच्छरियादिवसेन पमादं आपज्जित्वा इतो चुता अपायेसु निब्बत्तन्ति, अयञ्च तादिसो। तेन वुत्तं "लाभेन भिक्खवे अभिभूतो परियादिन्नचित्तो देवदत्तो आपायिको" तिआदि। **असक्कारेना** ति हीळेत्वा परिभवित्वा परेहि अत्तनि पवत्तितेन असक्कारेन, B. 418 असक्कारहेतुकेन वा मानादिना। असन्तगुणसम्भावनाधिप्पायेन पवत्ता पापा इच्छा एतस्साति पापिच्छो, तस्स भावो **पापिच्छता**, ताय। "अहं बुद्धो भविस्सामि, भिक्खु-संघं परिहरिस्सामी"ति हि तस्स इच्छा उप्पन्ना। कोकालिकादयो पापा लामका मित्ता एतस्साति पापमित्तो, तस्स भावो **पापमित्तता**, ताय।

३४९॥ **अभिभुय्या** ति अभिभवित्वा मद्दित्वा।

३५०॥ **तीहि भिक्खवे असद्धम्मे**हीति आदि वुत्तनयमेव। **ओरमत्तकेन विसेसाधि-गमेन अन्तरा वोसानं आपादी**ति एत्थ पन अयमत्थो। **ओरमत्तकेनाति** अप्पमत्तकेन झानाभिञ्ञामत्तेन। **विसेसाधिगमेना**ति उत्तरिमनुस्सधम्माधिगमेन। **अन्तराति** वेमज्झे। **वोसानं आपादी**ति अकतकिच्चोव समानो "कतकिच्चोम्ही" ति मञ्ञमानो समणधम्मतो विगमं[3] आपज्जि। इदं वुत्तं होति–झानाभिञ्ञाहि उत्तरिकरणीये अधिगन्तब्बे मग्गफले अनधिगते सतियेव तं अनधिगन्त्वा **समणधम्मतो** विगमं

1. न ब्याधतीति (स्या)।
2. इतिवुत्तक-ट्ठ-२६५-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
3. विरामं (स्या)।

आपज्जीति । इति भगवा इमिना सुत्तेन विसेसतो पुथुज्जनभावे आदीनवं पकासेति "भारियो पुथुज्जनभावो, यत्र हि नाम झानाभिञ्ञापरियोसाना सम्पत्तियो निब्बत्तेत्वापि अनेकानत्थावहं नानाविधदुक्खहेतुअसन्तगुणसम्भावनं असप्पुरिससंसग्गं आलसियानुयोगञ्च अविजहन्तो अवीचिसंवत्तनिकं कप्पट्ठियं अतेकिच्छं किब्बिसं पसवती"ति ।

गाथासु **मा** ति पटिसेधे निपातो । **जातू** ति एकंसेन । कोचीति सब्बसङ्गाहकवचनं । **लोकस्मिं** ति सत्तलोके । इदं वुत्तं होति–इमस्मिं सत्तलोके कोचि पुग्गलो एकंसेन पापिच्छो मा होतूति । **तदमिनापि जानाथ, पापिच्छानं यथा गती**ति पापिच्छानं पुग्गलानं यथागति यादिसी निब्बत्ति यादिसो अभिसम्परायोति इमिनापि कारणेन जानाथा ति देवदत्तं निदस्सेन्तो एवमाह ।

पण्डितोति समञ्ञातो ति परियत्तिबाहुसच्चेन पण्डितोति ञातो । **भावितत्तो ति सम्मतो** ति झानाभिञ्ञाहि भावितचित्तो ति सम्भावितो । तथा हि सो "महिद्धिको B. 419 गोधिपुत्तो, महानुभावो गोधिपुत्तो" ति धम्मसेनापतिनापि पसंसितो अहोसि । **जलं व यससा अट्ठा, देवदत्तो ति विस्सुतो** ति अत्तनो कित्तिया परिवारेन च जलन्तो विय ओभासन्तो विय ठितो देवदत्तोति एवं विस्सुतो पाकटो अहोसि । "मे सुत्तं" तिपि पाठो, मया सुतं सुतमत्तं, कतिपाहेनेव अतथाभूतत्ता तस्स तं पण्डिच्चादिसवनमत्तमेवा ति अत्थो ।

सो पमादं अनुचिण्णो, आसज्ज नं तथागतं ति सो एवं भूतो देवदत्तो "बुद्धोपि साकियपुत्तो, अहम्पि साकियपुत्तो, बुद्धोपि समणो, अहम्पि समणो, बुद्धोपि इद्धिमा, अहम्पि इद्धिमा, बुद्धोपि दिब्बचक्खुको, दिब्बसोतचेतोपरियञाणलाभी, बुद्धोपि अतीतानागतपच्चुप्पन्ने धम्मे जानाति, अहम्पि ते जानामी"ति अत्तनो पमाणं अजानित्वा सम्मासम्बुद्धं अत्तना समसमट्ठपनेन पमादं आपज्जन्तो "इदानाहं बुद्धो भविस्सामि, भिक्खुसंघं परिहरिस्सामी" ति अभिमारपयोजनादिना तथागतं आसज्ज आसादेत्वा विहेठेत्वा । "पमादमनुजिण्णो" ति पि पठन्ति । तस्सत्थो–पमादं वुत्तनयेन पमज्जन्तो पमादं निस्साय भगवता सद्धिं युगग्गाहचित्तुप्पादेन सहेव झानाभिञ्ञाहि अनुजिण्णो परिहीनो ति । **अवीचिनिरयं पत्तो, चतुद्वारं भयानकं** ति जालानं तत्थ उप्पन्नसत्तानं वा निरन्तरताय "अवीची" ति लद्धनामं चतूसु पस्सेसु चतुमहाद्वारयोगेन चतुद्वारं अतिभायानकं महानिरयं पटिसन्धिग्गहणवसेन पत्तो । तथा हि वुत्तं–

"चतुक्कण्णो चतुद्वारो, विभत्तो भागसो मितो ।
अयोपाकारपरियन्तो, अयसापटिकुज्जितो ।
तस्स अयोमया भूमि, जलिता तेजसा युता ।
समन्ता योजनसतं, फरित्वा तिट्ठति सब्बदा" ति[1] ।

---

1. म-३-२०५-२२२, अं-१-१४० पिट्ठेसु ।

अदुट्ठस्सा ति अदुट्ठचित्तस्स । **दुब्भे** ति दुस्सेय्य । **तमेव पापं फुसतीति** तमेव अदुट्ठदुब्भिं पापपुग्गलं पापं निहीनं पापफलं फुसति पापुणाति अभिभवति । **भेस्मा** ति विपुलभावेन गम्भीरभावेन च भिंसापनो, भिंसापेन्तो विय विपुलगम्भीरो ति अत्थो । **वादेना** ति दोसेन । **उपहिंसतीति** बाधति आसादेति । वादो तम्हि न रूहतीति तस्मिं तथागते परेन आरोपियमानो दोसो न रुहति न तिट्ठति, विसकुम्भो विय समुद्दस्स न B. 420 तस्स विकारं जेनेतीति अत्थो ।

एवं छहि गाथाहि पापिच्छतादिसमन्नागतस्स निरयूपगभावदस्सनेन दुक्खतो अपरिमुत्तिं दस्सेत्वा इदानि तप्पटिपक्खधम्मसमन्नागतस्स दुक्खक्खयं दस्सेन्तो **"तादिसंमित्तं"** ति ओसानगाथमाह । तस्सत्थो—**यस्स** सम्मा पटिपन्नस्स **मग्गानुगो** पटिपत्तिमग्गं अनुगतो सम्मा पटिपन्नो अप्पिच्छतादिगुणसमन्नागमेन सकलस्स वट्टदुक्खस्स खयं परियोसानं पापुणेय्य, तादिसं बुद्धं बुद्धसावकं वा **पण्डितो** सप्पञ्ञो अत्तनो **मित्तं कुब्बेथ** तेन मेत्तिं करेय्य, **तञ्च सेवेथ** तमेव पयिरुपासेय्याति ।

किं पनेतं सुत्तं देवदत्तस्स निरयूपपत्तितो पुब्बे भासितं, उदाहु पच्छाति ? **इतिवुत्तकट्ठकथायं**[1] ताव—

"देवदत्ते हि अवीचिमहानिरयं पविट्ठे देवदत्तपक्खिका अञ्ञतित्थिया 'समणेन गोत्तमेन अभिसपितो देवदत्तो पथविं पविट्ठो' ति अब्भाचिक्खिंसु । तं सुत्वा सासने अनभिप्पसन्ना मनुस्सा' सिया नु खो एतदेवं, यथा इमे भणन्ती" ति आसङ्कं उप्पादेसुं । तं पवत्तिं भिक्खू भगवतो आरोचेसुं । अथ खो भगवा 'न भिक्खवे तथागता कस्सचि अभिसपं देन्ति, तस्मा न देवदत्तो मया अभिसपितो, अत्तनो कम्मेनेव निरयं पविट्ठो' ति वत्वा तेसं मिच्छागाहं पटिसेधेन्तो इमाय अट्ठुप्पत्तिया इदं सुत्तं अभासी" ति—वुत्तं, तस्मा तेसं मतेन तस्स निरयूपपत्तितो पच्छापि भगवा इदं सुत्तमभासीति वेदितब्बं, इध पन तस्स निरयूपपत्तितो पठममेव उप्पन्ने वत्थुम्हि भासितं पाळिआरुळ्हं ति दट्ठब्बं । तेनेव "अवीचि-निरयं पत्तो "ति इदं पन आसंसायं अतीतवचनं ति वुत्तं, **आसंसा** ति चेत्थ अवस्सम्भाविनी अत्थसिद्धि अधिप्पेता । अवस्सम्भाविनिञ्हि अत्थसिद्धिम-पेक्खित्वा अनागतम्पि भूतं विय वोहरन्ति, तञ्च सद्दलक्खणानुसारेन वेदितब्बं ।

संघभेदकथावण्णना निट्ठिता ।

----

1. इतिवुत्तक-ट्ठ-२६५-पिट्ठे ।

उपालिपञ्हकथावण्णना

B. 421

३५१॥ उपालिपञ्हे यं वत्तब्बं, तं अट्ठकथायं दस्सितमेव । तत्थ **अनुनयन्तो** ति अनुजानापेन्तो, भेदस्स अनुरूपं वा बोधेन्तो, यथा भेदो होति, एवं भिन्दितब्बे भिक्खू विञ्ञापेन्तो ति अत्थो । तेनाह "न तुम्हाकं" ति आदि ।

३५२॥ अट्ठारसभेदकरवत्थुम्हि दस अकुसलकम्मपथा संकिलिट्ठधम्मताय वोदानधम्मपटिपक्खत्ता "अधम्मो" ति दस्सिता, तथा उपादानादयो, बोधिपक्खिय-धम्मानं एकन्तानवज्जभावतो नत्थि अधम्मभावो, भगवता पन देसिताकारेन हापेत्वा वड्ढेत्वा वा कथनं यथाधम्मं अकथनं ति कत्वा अधम्मभावो ति दस्सेन्तो आह **"तयो सतिपट्ठाना"** ति आदि । **निय्यानिकं** ति सपाटिहीरं अप्पटिहतं हुत्वा पवत्ततीति अत्थो । **तथेवा** ति इमिना "एवं अम्हाकं" ति आदिना वुत्तमत्थं आकड्ढति । **कातब्बं कम्मं धम्मो नामा** ति यथाधम्मं करणतो **धम्मो** नाम, इतरं वुत्तविपरियायतो **अधम्मो** नाम ।

रागविनयो...पे०....अयं विनयो नामा ति रागादीनं विनयनतो संवरणतो पजहनतो पटिसङ्खानतो च **विनयो** नाम, वुत्तविपरियायेन इतरो **अविनयो** । वत्थुसम्पत्ति-आदिवसेन सब्बेसं विनयकम्मानं अकुप्पता ति आह **"वत्थुसम्पत्ति.....पे०.....अयं विनयो नामा"** ति । तप्पटिपक्खतो **अविनयो** वेदितब्बो । तेनाह **"वत्थुविपत्ती"**ति आदि । यासं आपन्नस्स पब्बज्जा सावसेसा, ता आपत्तियो **सावसेसा** ।

३५४॥ **आपायिको** ति आदिगाथासु[1] संघस्स भेदसङ्खाते वग्गे रतो ति **वग्गरतो** । अधम्मिकताय अधम्मे भेदकरवत्थुम्हि संघभेदसङ्खाते एव च अधम्मे ठितोति **अधम्मट्ठो** । **योगक्खेमा पधंसती**ति हिततो[2] परिहायति, चतूहिपि योगेहि अनुपद्दुतत्ता **योगक्खेमं** नाम अरहत्तं निब्बानञ्च, ततो पनस्स धंसने वत्तब्बमेव नत्थि । B. 422 दिट्ठिसीलसामञ्ञतो संघतट्ठेन **संघं**, ततो एव एककम्मादिविधानयोगेन **समग्गं** सहितं भिन्दित्वा[3] पुब्बे वुत्तलक्खणेन संघभेदेन भिन्दित्वा । **कप्पं** ति अन्तरकप्पसङ्खातं आयुकप्पं । **निरयम्ही**ति अवीचिमहानिरयम्हि ।

सुखा संघस्स सामग्गीति[4] सुखस्स पच्चयभावतो सामग्गी "सुखा" ति वुत्ता यथा "सुखो बुद्धानमुप्पादो" ति[5] । **समग्गानञ्चनुग्गहो** ति समग्गानं सामग्गिअनुमोदनेन अनुग्गण्हनं सामग्गिअनुरूपं वा, यथा ते सामग्गिं न विजहन्ति, तथा गहणं ठपनं अनुबलप्पदानं ति अत्थो । **समग्गं कत्वाना** ति भिन्नं संघं संघराजिप्पत्तं वा समग्गं

1. इतिवुत्तक-ट्ठ-६६-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।
2. हि ततो (स्या. क.) ।
3. भेत्वान (स्या) खु-१-२०३-पिट्ठेपि ।
4. इतिवुत्तक-ट्ठ-६७-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।
5. खु-१-४२-पिट्ठे ।

सहितं कत्वा । कप्पं ति आयुकप्पमेव । **सग्गम्हि मोदती**ति कामावचरदेवलोके अञ्ञे देवे दसहि ठानेहि अभिभवित्वा दिब्बसुखं अनुभवन्तो । इच्छितनिब्बत्तिया च मोदति पमोदति लळति कीळति ।

३५५॥ **सिया नु खो भन्ते संघभेदको** ति आदि पाळिअनुसारेनेव वेदितब्बं । "पञ्चहि उपालि आकारेहि संघो भिज्जति कम्मेन उद्देसेन वोहरन्तो अनुस्सावनेन सलकग्गाहेना" ति एवं **परिवारे**[1] आगतम्पि संघभेदलक्खणं इध वुत्तेन किं नानाकरणं ति दस्सेतुं **"परिवारे पना"** ति आदिमाह । एत्थ च सीमट्ठकसंघे असन्निपतिते विसुं परिसं गहेत्वा कतवोहारानुस्सावनसलाकग्गाहस्स कम्मं वा करोन्तस्स उद्देसं वा उद्दिसन्तस्स भेदो च होति आनन्तरियकम्मञ्च । समग्गसञ्ञाय पन "वट्टती" ति सञ्ञाय वा करोन्तस्स भेदोव होति, न आनन्तरियकम्मं । ततो ऊनपरिसाय करोन्तस्स नेव संघभेदो न आनन्तरियं । सब्बन्तिमेन हि परिच्छेदेन नवन्नं जनानं यो सघं भिन्दति, तस्स आनन्तरियकम्मं होति, अनुवत्तकानं अधम्मवादीनं महासावज्जं कम्मं, धम्मवादिनो अनवज्जा । सेसमेत्थ उत्तानमेवाति ।

उपालिपञ्हकथावण्णना निट्ठिता ।

संघभेदकक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

----

1. वि-५-३४९-पिट्ठे ।

B. 423

८. वत्तक्खन्धक

आगन्तुकवत्तकथावण्णना

३५६-३५७॥ वत्तक्खन्धके **उपरिपिट्ठितो** ति पिट्ठिसङ्घाटस्स[1] उपरिभागतो, द्वारबाहस्स उपरिपदेसतो ति अत्थो। **विस्सज्जेतब्बं** ति सुक्खापनत्थं आतपे विस्सज्जितब्बं। **अभिवादापेतब्बो** ति[2] तस्स वस्से पुच्छिते यदि दहरो होति, सयमेव वन्दिस्सति, तदा इमिनाव वन्दापितो नाम होति। **निल्लोकेतब्बो** ति ओलोकेतब्बो। **यथाभागं** ति पुब्बे पञ्ञत्तं पदेसभागं अनतिक्कमित्वा। **सन्तानकं** ति उण्णनाभिसुत्तं। **उल्लोका ति** गेहस्स उपरिभागतो पट्ठाय, पठमं उपरिभागो सम्मज्जितब्बो ति वुत्तं होति।

आवासिकवत्तकथावण्णना

३५९॥ **महाआवासे** ति महाविहारसदिसे महाआवासे।

अनुमोदनवत्तकथावण्णना

३६२॥ **पञ्चमे निसिन्ने** ति अनुमोदनत्थाय निसिन्ने। **उपनिसिन्नकथा** नाम बहूसु सन्निपतितेसु परिकथाकथनं।

भत्तग्गवत्तकथावण्णना

३६४॥ **मनुस्सानं परिविसनट्ठानं** ति यत्थ मनुस्सा सपुत्तदारा आवसित्वा देन्ति। **हत्थधोवनउदकं सन्धाया** ति भुत्ताविस्स भोजनावसाने हत्थधोवनउदकं सन्धाय। तेनेवाह "**अन्तरा पिपासितेन** पन.....पे०.....**हत्था न धोवितब्बा**" ति। पोत्थकेसु पन "पानीयं पिवित्वा हत्था न धोवितब्बा"ति लिखन्ति, "हत्था धोवितब्बा" ति पाठेन भवितब्बं ति अम्हाकं खन्ति। अञ्ञथा "न ताव उदकं ति इदं हत्थधोवनउदकं सन्धाय वुत्तं" ति वत्वा "अन्तरा पिपासितेन पना" ति आदिना वुत्तविसेसो न उपलब्भति। अथ मतं "**न ताव थेरेन उदकं पटिग्गहेतब्बं** ति इदं किं पानीयपटिग्गहणं सन्धाय वुत्तं, उदाहु हत्थधोवनउदकग्गहणं सन्धाया ति आसङ्कानिवत्तनत्थं 'इदं हत्थधोवनउदकं सन्धाय वुत्तं ति आदि कथिकं" ति, तञ्च न, तत्थ आसङ्काय एव असम्भवतो। न हि भगवा "याव अञ्ञे न भुत्ताविनो होन्ति, ताव पानीयं न पातब्बं" ति वक्खतीति। सक्का विञ्ञातुं। यदि चेतं पानीयपटिग्गहणं सन्धाय वुत्तं, "न ताव

B. 424

---

1. उपरिपिट्ठतोपि पिट्ठसङ्घाटस्स (?)।
2. अभिवादापेतब्बं ति (स्या.)।

थेरेन उदकं पटिग्गहेतब्बं" ति उदकसद्दप्पयोगो च न कत्तब्बो सिया, अट्ठकथायञ्च "इदं हत्थधोवनउदकं सन्धाय वुत्तं" ति वत्वा तेन निवत्तितब्बमत्तं दस्सेन्तेन "अन्तरा पिपासितेन पन गले विलग्गामिसेन वा पानीयं पिवितब्बं" ति एत्तकमेव वत्तब्बं, "पानीयं पिवित्वा हत्था न धोवितब्बा" ति एवं पन न वत्तब्बं ति। **धुरे**[1] **निसिन्ना होन्ती**ति द्वारसमीपे निसिन्ना होन्ति।

पिण्डचारिकवत्तकथावण्णना

३६६॥ **परामसती**ति गण्हाति। **ठपेति वा** ति "तिट्ठथ भन्ते" ति देन्ती ठपेति नाम।

आरञ्ञिकवत्तकथावण्णना

३६७॥ **केनज्ज भन्ते युत्तं** ति केन नक्खत्तेन अज्ज चन्दो युत्तोति एवं वदन्तेन नक्खत्तं पुच्छितं होति।

सेनासनवत्तकथावण्णना

३६९-३७०॥ **अङ्गणे** ति[2] अब्भोकासे। **न वुड्ढं अनापुच्छा** ति एत्थ तस्स" ओवरके तदुपचारे च आपुच्छितब्बं ति वदन्ति। **भोजनसालादीसुपि एवमेव पटिपज्जितब्बं** ति भोजनसालादीसुपि उद्देसदानादि आपुच्छित्वाव कातब्बं ति अत्थो।

वच्चकुटिवत्तकथावण्णना

३७३-३७४॥ **इदं अतिविवटं** ति इदं ठानं गुम्बादीहि अप्पटिच्छन्नत्ता अतिविय पकासनं। **निबद्धगमनत्थाया** ति अत्तनो निबद्धगमनत्थाय। **पुग्गलिकट्ठानं** वा ति अत्तनो विहारं सन्धाय वुत्तं। सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेव।

इमस्मिं वत्तक्खन्धके आगतानि आगन्तुकावासिकगमियानुमोदनभत्तग्ग पिण्ड- B.425 चारिकारञ्ञिक सेनासन जन्ताघर वच्चकुटि उपज्झाचरिय सद्धिविहारिक अन्तेवासिकवत्तानि **चुद्दसमहावत्तानि** नाम, इतो अञ्ञानि पन कदाचि तज्जनीयकम्मकतादिकालेयेव चरितब्बानि **असीति खन्धकवत्तानी**ति वेदितब्बानि। **गण्ठिपदेसु** पन "इमानियेव चुद्दस महावत्तानि अग्गहितग्गहणेन गहियमानानि असीति खन्धकवत्तानी" ति वुत्तं, तं न गहेतब्बं।

वत्तक्खन्धकवण्णना निट्ठिता।

---

1. दूरे-(स्या.)।
2. पङ्गणेति (स्या.)।

B. 426

९. पातिमोक्खट्ठपनक्खन्धक

पातिमोक्खुद्देसयाचनकथावण्णना

३८३॥ पातिमोक्खट्ठपनक्खन्धके **तदहू**ति[1] तस्मिं अहनि तस्मिं दिवसे। **उपोसथे**ति एत्थ उपवसन्ति एत्था ति **उपोसथो, उपवसन्ती**ति सीलेन वा अनसनेन वा उपेता हुत्वा वसन्तीति अत्थो। अयञ्हि उपोसथ-सद्दो "अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसामी"ति आदीसु[2] सीले आगतो। "उपोसथो वा पवारणा वा"ति ·आदीसु[3] पातिमोक्खुद्देसादिविनयकम्मे। "गोपालकूपोसथो निगण्ठूपोसथो"ति आदीसु[4] उपवासे। "उपोसथो नाम नागराजा"ति आदीसु[5] पञ्ञत्तियं। अज्जुपोसथो पन्नरसो' ति आदीसु[6] दिवसे। इधापि दिवसेयेव दट्ठब्बो। तस्मा **तदहुपोसथे** ति तस्मिं उपोसथ-दिवसभूते अहनीति अत्थो। **निसिन्नो** होतीति महाभिक्खुसंघपरिवुत्तो ओवाद-पातिमोक्खं उद्दिसितुं उपासिकाय रतनपासादे निसिन्नो होति। निसज्ज पन भिक्खूनं चित्तानि ओलोकेन्तो एकं दुस्सीलपुग्गलं दिस्वा "सचाहं इमस्मिं पुग्गले इध निसिन्नेयेव पातिमोक्खं उद्दिसिस्सामि, सत्तधावस्स मुद्धा फलिस्सती"ति तस्मिं अनुकम्पाय तुण्हीयेव अहोसि।

अभिक्कन्ता ति अतिक्कन्ता परिक्खीणा। **उद्धस्ते अरुणे** ति उग्गते अरुणसीसे। **नन्दिमुखिया** ति तुट्ठिमुखिया। उद्धस्तं अरुणं ति अरुणुग्गमनं पत्वापि "उद्दिसतु भन्ते भगवा भिक्खूनं पातिमोक्खं" ति थेरो भगवन्तं पातिमोक्खुद्देसं याचि तस्मिं काले "न भिक्खवे अनुपोसथे उपोसथो कातब्बो" ति[7] सिक्खापदस्स अपञ्ञत्तत्ता। **अपरिसुद्धा आनन्द परिसा** ति तिक्खत्तुं थेरेन पातिमोक्खुद्देसस्स याचितत्ता अनुद्देसस्स कारणं कथेन्तो "असुकपुग्गलो अपरिसुद्धो" ति अवत्वा "अपरिसुद्धा आनन्द परिसा"ति आह। कस्मा पन भगवा तियामरत्तिं तथा वीतिनामेसि ? ततो पट्ठाय ओवाद-पातिमोक्खं अनुद्दिसितुकामो तस्स वत्थुं पाकटं कातुं।

B. 427

अद्दसा ति कथं अद्दस। अत्तनो चेतोपरियञाणेन तस्सं परिसति भिक्खूनं चित्तानि परिजानन्तो तस्स पुरिसस्स दुस्सील्यचित्तं पस्सि। यस्मा पन चित्ते दिट्ठे तं-

---

1. उदान-ट्ठ २६८ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
2. अं-१-२१३, अं-३-३२१-पिट्ठेसु।
3. वि-३-१५६-पिट्ठे (अत्थतो समानं)।
4. अं-१-२०६-पिट्ठे।
5. दी-२-१४२, म-३-२१२-पिट्ठेसु।
6. वि-३-१६७-पिट्ठे।
7. वि-३-१९०-पिट्ठे।

समङ्गीपुग्गलो दिट्ठो नाम होति, तस्मा **"अद्दसा खो आयस्मा महामोग्गल्लानो तं पुग्गलं दुस्सीलं"** ति वुत्तं । यथेव हि अनागते सत्तसु दिवसेसु पवत्तं परेसं चित्तं चेतोपरियञाणलाभी पजानाति, एवं अतीतेपीति । **दुस्सीलं** ति निस्सीलं, सीलविरहितं ति अत्थो । **पापधम्मं** ति दुस्सीलत्ता एव हीनज्झासयताय लामकसभावं । **असुचिं** ति अपरिसुद्धेहि कायकम्मादीहि समन्नागतत्ता न सुचिं । **सङ्कस्सरसमाचारं** ति किञ्चिदेव असारुप्पं दिस्वा "इदं इमिना कतं भविस्सती" ति एवं परेसं आसङ्कनीयताय सङ्काय सरितब्बसमाचारं । अथ वा केनचिदेव करणीयेन मन्तयन्ते भिक्खू दिस्वा "कच्चि नु खो इमे मया कतकम्मं जानित्वा मन्तेन्ती"ति अत्तनोयेव सङ्काय सरितब्बसमाचारं । लज्जितब्बताय पटिच्छादेतब्बस्स करणतो पटिच्छन्नं कम्मन्तं एतस्साति **पटिच्छन्नकम्मन्तं** । कुच्छितसमणवेसधारिताय न समणं ति **अस्समणं** । सलाकग्गहणादीसु "कित्तका समणा" ति गणनाय "अहम्पि समणोम्ही" ति मिच्छापटिञ्ञाय **समणपटिञ्ञं** । असेट्ठचारिताय **अब्रह्मचारिं** । अञ्ञे ब्रह्मचारिनो सुनिवत्थे सुपारुते **कुसुम्भकपटधरे** गामनिगमादीसु पिण्डाय चरित्वा जीविकं कप्पेन्ते दिस्वा अब्रह्मचारी समानो सयम्पि तादिसेन आकारेन पटिपज्जन्तो उपोसथादीसु च सन्दिस्सन्तो" अहम्पि ब्रह्मचारी" ति पटिञ्ञं देन्तो विय होतीति **ब्रह्मचारिपटिञ्ञं** । पूतिना कम्मेन सीलविपत्तिया अन्तो अनुपविट्ठत्ता **अन्तोपूतिं** । छहि द्वारेहि रागादिकिलेसावस्सवेन तिन्तत्ता **अवस्सुतं** । सञ्जातरागादिकचवरत्ता सीलवन्तेहि छड्डेतब्बत्ता च **कसम्बुजातं** । **मज्झे भिक्खुसंघस्स निसिन्नं** ति संघपरियापन्नो विय भिक्खुसंघस्स अन्तो निसिन्नं ।

दिट्ठोसी ति "अयं न पकतत्तो" ति भगवता दिट्ठो असि । यस्मा च एवं दिट्ठो, तस्मा नत्थि ते तव भिक्खूहि सद्धिं एककम्मादिसंवासो । यस्मा पन सो संवासो तव नत्थि, तस्मा उट्ठेहि आवुसो ति एवमेत्थ पदयोजना वेदितब्बा । **ततियम्पि खो सो पुग्गलो तुण्ही अहोसी**ति अनेकवारं वत्वापि "थेरो सयमेव निब्बिन्नो ओरमिस्सति, इदानि इमेसं पटिपत्तिं जानिस्सामी"ति वा अधिप्पायेन तुण्ही अहोसि । **बाहायं** B. 428 **गहेत्वा**ति "भगवता मया च याथावतो दिट्ठो, यावततियं "उट्ठेही" ति च वुत्तो न उट्ठाति, इदानिस्स निक्कड्ढनकालो, मा संघस्स उपोसथन्तरायो अहोसी"ति बाहायं अग्गहेसि । **बहि द्वारकोट्ठका निक्खामेत्वा** ति द्वारकोट्ठका द्वारसालतो निक्खामेत्वा, **बही**ति पन निक्खामितट्ठानदस्सनं । अथ वा **बहिद्वारकोट्ठका** ति बहिद्वारकोट्ठकतोपि निक्खामेत्वा, न अन्तोद्वारकोट्ठकतो एव । उभयथापि विहारतो बहिकत्वा ति अत्थो । **सूचिघटिकं दत्वा** ति अग्गळसूचिञ्च उपरिघटिकञ्च आदहित्वा, सुट्ठु कवाटं थकेत्वा ति अत्थो । **याव बाहागहणापि नामा** ति "अपरिसुद्धा आनन्द परिसा" ति वचनं सुत्वा एव हि तेन पक्कमितब्बं सिया, एवं अपक्कमित्वा याव बाहागहणापि

नाम सो मोघपुरिसो आगमिस्सति, अच्छरियमिदं ति दस्सेति । इदञ्च गरह-णच्छरियमेवाति वेदितब्बं ।

महासमुद्दे अट्ठच्छरियकथावण्णना

३८४॥ **अट्ठिमे भिक्खवे महासमुद्दे** ति[1] को अनुसन्धि ? य्वायं अपरिसुद्धाय परिसाय पातिमोक्खस्स अनुद्देसो, सो इमस्मिं धम्मविनये अच्छरियो अब्भुतो धम्मो ति तं अपरेहि सत्तहि अच्छरियअब्भुतधम्मेहि सद्धिं विभजित्वा दस्सेतुकामो पठमं ताव तेसं उपमाभावेन महासमुद्दे अच्छरियअब्भुतधम्मे दस्सेन्तो सत्था "**अट्ठिमे भिक्खवे महासमुद्दे**" ति आदिमाह । असुरा ति देवो विय न सुरन्ति न ईसन्ति न विरोचन्तीति असुरा । सुरा नाम देवा, तेसं पटिपक्खाति वा. असुरा, वेपचित्तिप-हारादादयो । तेसं भवनं सिनेरुस्स हेट्ठाभागे, ते तत्थ पविसन्ता निक्खमन्ता सिनेरुपादे मण्डपादीनि निम्मिनित्वा कीळन्ताव अभिरमन्ति । सा तत्थ तेसं अभिरति इमे गुणे दिस्वाति आह "ये दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिर-मन्ती"ति । तत्थ[2] अभिरमन्तीति रतिं विन्दन्ति, अनुक्कण्ठमाना वसन्तीति अत्थो ।

अनुपुब्बनिन्नो ति आदीनि सब्बानि अनुपटिपाटिया निन्नभावस्सेव वेवचनानि । B. 429 **न आयतकेनेव पपातो** ति नच्छिन्नतटमहासोब्भो विय आदितो एव पपातो । सो हि तीरदेसतो पट्ठाय एकङ्गुलद्वङ्गुलविदत्थिरतनयट्ठिउसभअड्ढगावुतगावुतअड्ढयोजन-योजनादिवसेन गम्भीरो हुत्वा गच्छन्तो गच्छन्तो सिनेरुपादमूले चतुरासीतियोजन-सहस्सगम्भीरो हुत्वा ठितोति दस्सेति ।

ठितधम्मो ति ठितसभावो अवट्ठितसभावो । **कुणपेना** ति येन केनचि हत्थि-अस्सादिकळेवरेन । **वाहेती**ति हत्थेन गहेत्वा विय वीचिप्पहारेनेव थले खिपति । **गङ्गा यमुना** ति अनोतत्तदहस्स दक्खिणमुखतो निक्खन्तनदी पञ्चधारा हुत्वा पवत्तट्ठाने गङ्गातिआदिना पञ्चधा सङ्खं गता । तत्थ **नदी** निन्नगा ति आदिकं गोत्तं, **गङ्गा यमुना** तिआदिकं नामं । **सवन्तियो** ति या काचि सवमाना सन्दमाना गच्छन्तियो महानदियो वा कुन्नदियो वा । **अप्पेन्ती**ति अल्लीयन्ति ओसरन्ति । **धारा** ति वुट्ठिधारा । पूरत्तं ति पुण्णभावो । महासमुद्दस्स हि अयं धम्मता–"इमस्मिं काले देवो मन्दो जातो, जालक्खिपादीनि आदाय मच्छकच्छपे गण्हिस्सामी" ति वा "इमस्मिं काले अतिमहन्ता वुट्ठि, लभिस्साम नु खो पिट्ठिपसारणट्ठानं" ति[3] वा न सक्का वत्तुं । पठमकप्पिक-कालतो पट्ठाय हि तीरं भस्सित्वा सिनेरुमेखलं आहच्च उदकं ठितं, ततो एकङ्गुलमत्तम्पि उदकं नेव हेट्ठा ओतरति, न उद्धं उत्तरति । **एकरसो** ति असम्भिन्नरसो ।

---

1. उदान-ट्ठ-२७१-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. अं.-ट्ठ ३-२१८ पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
3. पिट्ठिपहरणंति (स्या.)

मुत्ता ति खुद्दकमहन्तवट्टदीघादिभेदा अनेकविधमुत्ता । **मणी**ति रत्तनीलादिभेदो अनेकविधो मणि । **वेळुरियो** ति वंसवण्णसिरीसपुप्फवण्णादिसण्ठानतो अनेकविधो । **सङ्खो** ति दक्खिणावट्टकतुम्बकुच्छिधमनसङ्खादिभेदो अनेकविधो । **सिला** ति सेतकाळमुग्गवण्णादिभेदा अनेकविधा । पवाळम्पि खुद्दकमहन्तरत्तघनरत्तादिभेदं अनेकविधं । लोहितको पदुमरागादिभेदो अनेकविधो । **मसारगल्लं** कबरमणि । चित्तफलिकं ति पि वदन्ति । **महतं भूतानं** ति महन्तानं सत्तानं । **तिमि तिमिङ्गलो तिमितिमिङ्गलो** ति तिस्सो पच्छजातियो । तिमिं गिलनसमत्थो **तिमिङ्गलो,** तिमिञ्च तिमिङ्गलञ्च गिलनसमत्थो तिमितिमिङ्गलोति वदन्ति । **नागा** ति ऊमिपिट्ठिवासिनोपि विमानट्ठकनागापि ।

इमस्मिं धम्मविनये अट्ठच्छरियकथा वण्णना

B. 430

३८५॥ **एवमेव खो** ति किञ्चापि सत्था इमस्मिं धम्मविनये सोळसपि वात्तिंसपि ततो भिय्योपि अच्छरियब्भुतधम्मे विभजित्वा दस्सेतुं सक्कोति, उपमाभावेन पन गहितानं अट्ठन्नं अनुरूपवसेन अट्ठेव ते उपमेतब्बधम्मे विभजित्वा दस्सन्तो **"एवमेव खो भिक्खवे इमस्मिं धम्मविनये अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा"** ति आह । तत्थ अनुपुब्बसिक्खाय तिस्सो सिक्खा गहिता, **अनुपुब्बकिरियाय** तेरस धुतधम्मा, अनुपुब्बपटिपदाय सत्त अनुपस्सना अट्ठारस महाविपस्सना अट्ठतिंस आरम्मणविभत्तियो सत्ततिंस बोधिपक्खियधम्मा च गहिता । **न आयतकेनेव अञ्ञापटिवेधो** ति मण्डूकस्स उप्पतित्वा गमनं विय आदितोव सीलपूरणादीनि अकत्वा अरहत्तपटिवेधो नाम नत्थि, पटिपाटिया पन सीलसमाधिपञ्ञायो पूरेत्वाव अरहत्तप्पत्तीति अत्थो ।

मम सावका ति सोतापन्नादिके अरियपुग्गले सन्धाय वदति । **न संवसती**ति उपोसथकम्मादिवसेन संवासं न करोति । **उक्खिपती**ति अपनेति । **आरकावा** ति दूरे एव । तथागतप्पवेदितेति तथागतेन भगवता सावकेसु देसिते अक्खाते पकासिते । **न तेन निब्बानधातुया ऊनत्तं वा पूरत्तं** वा ति असङ्खेय्येपि महाकप्पे बुद्धेसु अनुप्पज्जन्तेसु एकसत्तोपि परिनिब्बातुं न सक्कोति, तदापि "तुच्छा निब्बानधातू" ति न सक्का वत्तुं, बुद्धकाले पन एकेकस्मिं समागमे असङ्खेय्यापि सत्ता अमतं आराधेन्ति, तदापि न सक्का वत्तुं "पूरा निब्बानधातू" ति । [1]**विमुत्तिरसो** ति किलेसेहि विमुच्चनरसो । सब्बा हि सासनसम्पत्ति यावदेव अनुपादाय आसवेहि चित्तस्स विमुत्तीति अत्थो ।

रतनानीति रतिजननट्ठेन रतनानि । सतिपट्ठानादयो हि भावियमाना पुब्बभागेपि अनेकविधं पीतिपामोज्जं निब्बत्तेन्ति, पगेव अपरभागे । वुत्तञ्हेतं–

"यतो यतो सम्मसति, खन्धानं उदयब्बयं ।
लभती पीतिपामोज्जं, अमतं तं विजानतं" ति[1] ।

---

1. खु १-६७-पिट्ठे ।

B. 431 लोकियरतननिमित्तं पन पीतिपामोज्जं न तस्स कलभागम्पि अग्घति ।

अपि च–

चित्तीकतं महग्घञ्च, अतुलं दुल्लभदस्सनं ।
अनोमसत्तपरिभोगं, रतनं ति पवुच्चति[1] ।

यदि च चित्तीकतादिभावेन रतनं नाम होति, सतिपट्ठानादीनञ्ञेव भूतो रतनभावो । बोधिपक्खियधम्मानञ्हि सो आनुभावो, यं सावका सावकपारमीञाणं, पच्चेकसम्बुद्धा पच्चेकबोधिञाणं, सम्मासम्बुद्धा सम्मासम्बोधिं अधिगच्छन्ति आसन्न-कारणत्ता । परम्परकारणञ्हि दानादिउपनिस्सयोति एवं रतिजननट्ठेन चित्तीकतादि-अत्थेन च रतनभावो बोधिपक्खियधम्मानं सातिसयो । तेन वुत्तं **"तत्रिमानि रतनानि, सेय्यथिदं चत्तारो सतिपट्ठाना"** ति आदि ।

आरम्मणे ओक्कन्दित्वा उपट्ठानट्ठेन पट्ठानं, सतियेव पट्ठानं **सतिपट्ठानं** । आरम्मणस्स पन कायादिवसेन चतुब्बिधत्ता वुत्तं **"चत्तारो सतिपट्ठाना"** ति । तथा हि कायवेदनाचित्तधम्मेसु सुभसुखनिच्चअत्तसञ्ञानं पहानतो असुभदुक्खानिच्चानत्त-भावग्गहणतो च नेसं कायानुपस्सनादिभावो विभत्तो ।

सम्मा पदहन्ति एतेन, सयं वा सम्मा पदहति, पसत्थं सुन्दरं वा पदहनं ति **सम्मप्पधानं**, पुग्गलस्स वा सम्मदेव पधानभावकरणतो **सम्मप्पधानं**, वीरियस्सेतं अधिवचनं । तम्पि अनुप्पन्नुप्पन्नानं अकुसलानं अनुप्पादनपहानवसेन अनुप्पन्नुप्पन्नानं कुसलानं उप्पादनठापनवसेन च चतुकिच्चसाधकत्ता वुत्तं **"चत्तारो सम्मप्पधाना"** ति ।

इज्झतीति **इद्धि**, समिज्झति निप्फज्जतीति अत्थो । इज्झन्ति ताय वा सत्ता इद्धा वुद्धा उक्कंसगता होन्तीति इद्धि । पठमेन अत्थेन इद्धि एव पादो **इद्धिपादो**, इद्धिकोट्ठासोति अत्थो । दुतियेन अत्थेन इद्धिया पादो पतिट्ठा अधिगमुपायोति इद्धिपादो । तेन हि उपरूपरिविसेससङ्खातं इद्धिं पज्जन्ति पापुणन्ति । स्वायं इद्धिपादो यस्मा छन्दादिके चत्तारो अधिपतिधम्मे धुरे जेट्ठके कत्वा निब्बत्तीयति, तस्मा वुत्तं "चत्तारो इद्धिपादा" ति ।

B. 432 पञ्चिन्द्रियानीति सद्धादीनि पञ्च इन्द्रियानि । तत्थ अस्सद्धियं अभिभवित्वा अधिमोक्खलक्खणे इन्दट्ठं कारेतीति सद्धा इन्द्रियं । कोसज्जं अभिभवित्वा पग्गहलक्खणे, पमादं अभिभवित्वा उपट्ठानलक्खणे, विक्खेपं अभिभवित्वा अविक्खे-पलक्खणे, अञ्ञाणं अभिभवित्वा दस्सनलक्खणे इन्दट्ठं कारेतीति **पञ्ञा इन्द्रियं** ।

तानियेव अस्सद्धियादीहि अनभिभवनीयतो अकम्पियट्ठेन सम्पयुत्तधम्मेसु थिरभावेन च **बलानि** वेदितब्बानि ।

---

1. दी-ट्ठ-२-३५-पिट्ठेपि ।

सत्त बोज्झङ्गा ति बोधिया, बोधिस्स वा अङ्गाति बोज्झङ्गा । या हि एसा धम्मसामग्गी, याय लोकुत्तरमग्गक्खणे उप्पज्जमानाय लीनुद्धच्चपतिट्ठानायूहन-कामसुखत्तकिलमथानुयोग उच्छेद सस्सताभिनिवेसादीनं अनेकेसं उपद्दवानं पटिपक्खभूताय सतिधम्मविचयवीरियपीतिपस्सद्धिसमाधिउपेक्खासङ्खाताय धम्म-सामग्गिया अरियसावको वुज्झति किलेसनिद्दाय उट्ठहति, चत्तारि वा अरियसच्चानि पटिविज्झति, निब्बानमेव वा सच्छिकरोतीति **"बोधी"** ति वुच्चति, तस्सा धम्म-सामग्गिसङ्खाताय बोधिया अङ्गाति **बोज्झङ्गा** झानङ्गमग्गङ्गादयो विय । योपेस्स वुत्तप्पकाराय धम्मसामग्गिया बुज्झतीति कत्वा अरियसावको **"बोधी"** ति वुच्चति, तस्स बोधिस्स वा अङ्गा ति पि **बोज्झङ्गा** सेनङ्गरथङ्गादयो विय । तेनाहु पोराणा "बुज्झनकस्स पुग्गलस्स अङ्गाति बोज्झङ्गा "ति[1], "बोधाय संवत्तन्तीति बोज्झङ्गा" ति आदिना[2] नयेनपि बोज्झङ्गट्ठो वेदितब्बो ।

अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो ति तंतंमग्गवज्झेहि किलेसेहि आरकत्ता अरिय-भावकरत्ता अरियफलपटिलाभकरत्ता च अरियो । सम्मादिट्ठिआदीनि अट्ठङ्गानि अस्स अत्थि, अट्ठङ्गानियेव वा **अट्ठङ्गिको** । मारेन्तो किलेसे गच्छति, निब्बानत्थिकेहि वा मग्गीयति, सयं वा निब्बानं मग्गतीति **मग्गो** ति एवमेतेसं सतिपट्ठानादीनं अत्थविभागो वेदितब्बो ।

सोतापन्नो ति मग्गसङ्खातं सोतं आपज्जित्वा पापुणित्वा ठितो, सोतापत्तिफलट्ठोति अत्थो । **सोतपत्तिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो** ति सोतापत्तिफलस्स अत्तपच्चक्ख-करणत्थाय पटिपज्जमानो पठममग्गट्ठो, यो अट्ठमकोतिपि वुच्चति । **सकदागामी**ति B. 433 सकिदेव इमं लोकं पटिसन्धिग्गहणवसेन आगमनसीलो दुतियफलट्ठो । **अनागामी**ति पटिसन्धिग्गहणवसेन कामलोकं अनागमनसीलो ततियफलट्ठो । यो पन सद्धानुसारी धम्मानुसारी एकबीजीति एवमादिको अरियपुग्गलविभागो, सो तेसंयेव भेदो ति । सेसं वुत्तनयमेव ।

एतमत्थं विदित्वा ति एतं अत्तनो धम्मविनये मतकुणपसदिसेन दुस्सीलपुग्गलेन सद्धिं संवासाभावसङ्खातं अत्थं विदित्वा । **इमं उदानं** ति इमं असंवासारह-संवासारहभावानं कारणपरिदीपनं उदानं उदानेसि ।

तत्थ **छन्नमतिवस्सती**ति आपत्तिं आपज्जित्वा पटिच्छादेन्तो अञ्ञं नवं आपत्तिं आपज्जति, ततो अपरं ति एवं आपत्तिवस्सं किलेसवस्सं अतिविय वस्सति । **विवटं नातिवस्सती**ति आपत्तिं आपन्नो तं अप्पटिच्छादेत्वा विवरन्तो सब्रह्मचारीनं पकासेन्तो यथाधम्मं यथाविनयं पटिकरोन्तो देसेन्तो वुट्ठहन्तो अञ्ञं नवं आपत्तिं नापज्जति,

---

1. सं-ट्ठ-३-१७६, अभि-ट्ठ-२-२९६, पटिसं-ट्ठ-१-११८ पिट्ठेसु ।
2. 'खु-९-३०२-पिट्ठे ।

तेनस्स तं विवटं पुन आपत्तिवस्सं किलेसवस्सं न वस्सति । यस्मा च एतदेव, तस्मा छन्नं छादितं आपत्तिं विवरेथ । **एवं तं नातिवस्सती**ति एवं सन्ते तं आपत्तिं आपज्जनपुग्गलानं अत्तभावं अतिविज्झित्वा किलेसवस्सनेन न वस्सति न तेमेति, एवं सो किलेसेहि अनवस्सुतो परिसुद्धसीलो समाहितो हुत्वा विपस्सनं पट्ठपेत्वा सम्मसन्तो अनुक्कमेन निब्बानं पापुणातीति अधिप्पायो ।

इमस्मिं धम्मविनये अट्ठच्छरियकथावण्णना निट्ठिता ।

पातिमोक्खसवनारहकथावण्णना

३८६॥ अथ भगवा चिन्तेसि "इदानि भिक्खुसंघे अब्बुदो जातो, अपरिसुद्धा पुग्गला उपोसथं आगच्छन्ति, न च तथागतो अपरिसुद्धाय परिसाय उपोसथं उद्दिसति, अनुद्दिसन्ते च भिक्खुसंघस्स उपोसथो पच्छिज्जति, यन्नूनाहं इतो पट्ठाय भिक्खूनञ्ञेव पातिमोक्खुद्देसं अनुजानेय्यं" ति, एवं पन चिन्तेत्वा भिक्खूनञ्ञेव B. 434 पातिमोक्खुद्देसं अनुजानि । तेन वुत्तं "**अथ खो भगवा....पे०....पातिमोक्खं उद्दिसेय्याथा**" ति । तत्थ **नदानाहं** ति न इदानि अहं । उपोसथं न करिस्सामि, पातिमोक्खं न उद्दिसिस्सामीति पच्चेकं न-कारेन सम्बन्धो । दुविधं पातिमोक्खं आणापातिमोक्खं ओवादपातिमोक्खं ति । तेसु "सुणातु मे भन्ते" ति आदिकं **आणापातिमोक्खं**, तं सावकाव उद्दिसन्ति, न बुद्धा, यं अन्वद्धमासं उद्दिसीयति । "खन्ती परमं......पे०...... सब्बपापस्स अकरणं.....पे०......अनुपवादो अनुपघातो.....पे०.....एतं बुद्धान सासनं" ति इमा पन तिस्सो गाथा ओवादपातिमोक्खं नाम, तं बुद्धाव उद्दिसन्ति, न सावका । छन्नम्पि वस्सानं अच्चयेन उद्दिसन्ति । दीघायुकबुद्धानञ्हि धरमानकाले अयमेव पातिमोक्खुद्देसो, अप्पायुकबुद्धानं पन पठमबोधियंयेव, ततो परं इतरो, तञ्च खो भिक्खू एव उद्दिसन्ति, न बुद्धा । तस्मा अम्हाकम्पि भगवा वीसतिवस्समत्तं इमं ओवादपातिमोक्खं उद्दिसित्वा इमं अन्तरायं दिस्वा ततो परं न उद्दिसि ।

अट्ठानं ति अकारणं । **अनवकासो** ति तस्सेव वेवचनं । कारणञ्हि तिट्ठति एत्थ फलं तदायत्तवुत्तितायाति "ठानं" ति वुच्चति, एवं "अवकासो" तिपि वुच्चति । यं ति किरियापरामसनं । **न च भिक्खवे सापत्तिकेन पातिमोक्खं सोतब्बं** ति आदि पदत्थतो सुविञ्ञेय्यं । विनिच्छयतो पनेत्थ यं वत्तब्बं, तं अट्ठकथाय वुत्तमेव । तत्थ **पुरे वा पच्छा वा** ति अत्तितो पुब्बे वा पच्छा वा ।

धम्मिकाधम्मिकपातिमोक्खट्ठपनकथावण्णना

३८७॥ **कतञ्च अकतञ्च उभयं गहेत्वा** ति यस्स एकन्तेन कतापि अत्थि, अकतापि अत्थि, तस्स तदुभयं गहेत्वा ।

धम्मिकपातिमोक्खट्ठपनकथावण्णना

३८९॥ **परिसा वुट्ठातीति** यस्मिं वत्थुस्मिं पातिमोक्खं ठपितं, तं वत्थुं अविनिच्छित्वा केनचि अन्तरायेन वुट्ठाति ।

३९३॥ **पच्चादियतीति** पति आदियति, "अकतं कम्मं" ति आदिना पुन आरभतीति अत्थो ।

अत्तादानअङ्गकथावण्णना

B. 435

३९८॥ परं चोदेतुं अत्तना आदातब्बं गहेतब्बं अधिकरणं **अत्तादानं** । तेनाह **"सासनं सोधेतुकामो"** ति आदि । **वस्सारत्तो** ति वस्सकालो ।

चोदकेन पच्चवेक्खितब्बधम्मकथावण्णना

३९९॥ पटिमासितुं ति परामसितुं । **पलिबोधे छिन्दित्वा.....पे०.....अधिगतं मेत्तचित्तं** ति इमिना अप्पनापत्तं मेत्ताभावनं दस्सेति । तेनेवाह **"विक्खम्भनवसेन विहताघातं"** ति ।

चोदकेन उपट्ठापेतब्बधम्मकथावण्णना

४००॥ **नो दोसन्तरो** ति एत्थ चित्तपरियायो **अन्तर**-सद्दो ति आह "न दुट्ठचित्तो हुत्वा" ति ।

चोदकचुदितकपटिसंयुत्तकथावण्णना

४०१॥ **करुणं** ति अप्पनाप्पत्तं करुणज्झानं । **करुणापुब्बभागं** ति परिकम्मुपचारवसप्पवत्तं करुणं । **मेत्तञ्च मेत्तापुब्बभागञ्चा** ति एत्थापि एसेव नयो । सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेवाति ।

पातिमोक्खट्ठपनक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

B. 436

१०. भिक्खुनिक्खन्धक

महापजापतिगोतमीवत्थुकथावण्णना

४०२॥ भिक्खुनिक्खन्धके **सक्केसु विहरतीति**[1] पठमगमनेन गन्त्वा विहरति । **महापजापति गोतमीति** एत्थ **गोतमीति** गोत्तं । नामकरणदिवसे पनस्सा लद्धसक्कारा ब्राह्मणा लक्खणसम्पत्तिं दिस्वा "सचे अयं धीतरं लभिस्सति, चक्कवत्तिरञ्ञो महेसी भविस्सति । सचे पुत्तं लभिस्सति, चक्कवत्तिराजा भविस्सतीति उभयथापि महतीयेवस्सा पजा भविस्सती"ति ब्याकरिंसु, तस्मा पुत्तपजाय चेव धीतुपजाय च महन्तताय "महापजापती"ति नामं अकंसु, इध पन गोत्तेन सद्धिं संसन्दित्वा "महापजापति गोत्तमी" ति वुत्तं । **येन भगवा तेनुपसङ्कमीति** भगवा कपिलपुरं गन्त्वा पठममेव नन्दं पब्बाजेसि, सत्तमे दिवसे राहुलकुमारं । **चुम्बटककलहे**[2] पन उभयनगरवासिकेसु युद्धत्थाय निक्खन्तेसु सत्था गन्त्वा ते राजानो सञ्ञापेत्वा **अत्तदण्डसुत्तं**[3] कथेसि । राजानो पसीदित्वा अड्ढतेय्यसते अड्ढतेय्यसते दारके अदंसु । तानि पञ्च कुमारसतानि सत्थु सन्तिके पब्बजिंसु । अथ नेसं पजापतियो सासनं पेसेत्वा अनभिरतिं उप्पादयिंसु । सत्था तेसं अनभिरतिया उप्पन्नभावं ञत्वा ते पञ्चसते दहरभिक्खू कुणालदहं नेत्वा अत्तनो कुणालकाले निसिन्नपुब्बे पासाणतले निसीदित्वा **कुणालजातक** कथाय[4] तेसं अनभिरतिं विनोदेत्वा सब्बेपि ते सोतापत्तिफले पतिट्ठापेसि, पुन महावनं आनेत्वा अरहत्तफले । तेसं चित्तजाननत्थं पुनपि पजापतियो सासनं पहिणिंसु । ते "अभब्बा मयं घरवासस्सा" ति पटिसासनं पहिणिंसु । ता "न दानि अम्हाकं परघरं गन्तुं युत्तं, महापजापतिया सन्तिकं गन्त्वा पब्बज्जं अनुजानापेत्वा पब्बजिस्सामा" ति पञ्चसतापि महापजापतिं उपसङ्कमित्वा "अय्ये अम्हाकं पब्बज्जं अनुजानापेथा" ति आहंसु । महापजापति च ता इत्थियो गहेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि, सेतच्छत्तस्स हेट्ठा रञ्ञो परिनिब्बुतकाले उपसङ्कमीतिपि वदन्तियेव । **पक्कामीति** पुन कपिलपुरमेव पाविसि ।

B. 437 **यथाभिरन्तं विहरित्वाति** बोधनेय्यसत्तानं उपनिस्सयं ओलोकेन्तो यथाज्झासयेन विहरित्वा । **चारिकं पक्कामीति** महाजनसङ्गहं करोन्तो उत्तमाय बुद्धसिरिया अनोपमेन बुद्धविलासेन अतुरितचारिकं पक्कामि । **सम्बहुलाहि साकियानीहि सद्धिं** ति

1. अं-ट्ठ-३-२३५-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. चुम्बतकलहे (स्या, क) ।
3. खु-१-४२४-पिट्ठे ।
4. खु-६-११३-पिट्ठे ।

अन्तोनिवेसनस्मिंयेव दसबलं उद्दिस्स पब्बज्जाव गहेत्वा तापि पञ्चसता साकियानियो पब्बज्जावेसंयेव गाहापेत्वा सब्बाहिपि ताहि सम्बहुलाहि साकियानीहि सद्धिं । **पक्कामी**ति गमनं अभिनीहरि । गमनाभिनीहरणकाले पनस्सा "सुकुमारा राजित्थियो पदसा गन्तुं न सक्खिस्सन्ती"ति साकियकोलियराजानो सुवण्ण-सिविकायो उपट्ठापयिंसु, ता पन "याने आरुय्ह गच्छन्तीति सत्थरि अगारवो कतो होती"ति एकपण्णासयोजनिकं मग्गं पदसाव पटिपज्जिंसु । राजानोपि पुरतो च पच्छतो च आरक्खं संविदहापेत्वा तण्डुलसप्पितेलादीनं सकटानि पूरेत्वा "गतगतट्ठाने आहारं पटियादेथा" ति पुरिसे पेसयिंसु । **सूनेहि पादेही**ति तासं हि सुखमालत्ता पादेसु एको फोटो उट्ठेति, एको भिज्जति, उभो पादा कटकट्ठिसम्परिकिण्णा विय हुत्वा उद्धुमाता । तेन वुत्तं "सूनेहि पादेही" ति । **बहिद्वारकोट्ठके** ति द्वारकोट्ठकस्स बहि । कस्मा पनेवं ठिताति ? एवं किरस्सा अहोसि "अहं तथागतेन अनुञ्ञाता सयमेव पब्बज्जावेसं अग्गहेसिं, एवं गहितभावो च पन मे सकलजम्बुदीपे पाकटो जातो, सचे सत्था पब्बज्जं अनुजानिस्सति, इच्चेतं कुसलं । सचे नानुजानिस्सति, महती गरहा भविस्सती" ति विहारं पविसितुं असक्कोन्ती रोदमाना अट्ठासि । **किं नु**[1] **त्वं गोतमी** ति किं नु राजकुलानं विपत्ति उप्पन्ना, केन नु त्वं कारणेन एवं विवण्णभावं पत्ता सूनेहि पादेहि.....पे०.....ठिता ति ।

अञ्ञेनपि परियायेना ति अञ्ञेनपि कारणेन । **आपादिका** ति संवड्ढिका, तुम्हाकं हत्थपादेसु हत्थपादकिच्चं असाधेन्तेसु हत्थे च पादे च वड्ढेत्वा पटिजग्गिकाति अत्थो । **पोसिका** ति दिवसस्स द्वे तयो वारे नहापेत्वा भोजेत्वा पायेत्वा तुम्हे पोसेसि । **थञ्ञं पायेसी**ति नन्दकुमारो किर बोधिसत्ततो कतिपाहेनेव दहरतरो । तस्मिं जाते महापजापति अत्तनो पुत्तं धातीनं दत्वा सयं बोधिसत्तस्स धातिकिच्चं B.438 साधयमाना अत्तनो थञ्ञं पायेसि । तं सन्धाय थेरो एवमाह । साधु भन्ते ति "बहुकारा" ति आदीहि तस्सा गुणं कथेत्वा पुन पब्बज्जं याचन्तो एवमाह ।

महापजापतिगोतमीवत्थुकथावण्णना निट्ठिता ।

अट्ठगरुधम्मकथावण्णना

४०३॥ सत्थापि "इत्थियो नाम परित्तसद्धा[2], एकायाचितमत्तेयेव पब्बज्जाय अनुञ्ञाताय न मम सासनं गरुं कत्वा गण्हिस्सन्ती" ति तिक्खत्तुं पटिक्खिपित्वा

---

1. किस्स (पालियं) अं-३-१०२-पिट्ठे पस्सितब्बं ।
2. परित्तसत्ता (स्या) परित्तपञ्ञा (अं-ट्ठ-३-२३६-पिट्ठे ।) ।

इदानि गरुं कत्वा गाहापेतुकामताय **"सचे आनन्द महापजापति गोतमी अट्ठ गरुधम्मे पटिग्गण्हाति, सावस्सा होतु उपसम्पदा"** ति आदिमाह। तत्थ **सावस्सा** ति सा एव अस्सा पब्बज्जापि उपसम्पदापि होतु।

तदहुपसम्पन्नस्साति तं दिवसम्पि उपसम्पन्नस्स। अभिवादनं पच्चुट्ठानं अञ्जलिकम्मं समीचिकम्मं कातब्बं ति मानातिमानं अकत्वा पञ्चपतिट्ठितेन अभिवादनं, आसना उट्ठाय पच्चुग्गमनवसेन पच्चुट्ठानं, दसनखे समोधानेत्वा अञ्जलिकम्मं, आसनपञ्ञापनबीजनादिकं अनुच्छविककम्मसङ्खातं सामीचिकम्मञ्च कत्तब्बं। **अभिक्खुके आवासे** ति यत्थ वसन्तिया अनन्तरायेन ओवादत्थाय उपसङ्कमनारहे ठाने ओवाददायको आचरियो नत्थि, अयं अभिक्खुको आवासो नाम, एवरूपे आवासे वस्सं न उपगन्तब्बं। अन्वद्धमासं ति अनुपोसथिकं। **ओवादूपसङ्कमनं** ति ओवादत्थाय उपसङ्कमनं। **दिट्ठेना** ति चक्खुना दिट्ठेन। **सुतेनाति** सोतेन सुतेन। **परिसङ्काया** ति दिट्ठसुतवसेन परिसङ्कितेन। **गरुधम्मं** ति गरुकं संघादिसेसापत्तिं। **पक्खमानत्तं** ति अनूनानि पन्नरस दिवसानि मानत्तं। **छसु धम्मेसू** ति विकालभोजनच्छट्ठेसु सिक्खापदेसु। **सिक्खितसिक्खाया** ति एकसिक्खम्पि अखण्डं कत्वा पूरितसिक्खाय।

न अक्कोसितब्बो न परिभासितब्बो ति दसन्नं अक्कोसवत्थूनं अञ्ञतरेन अक्कोस-
B. 439 वत्थुना न अक्कोसितब्बो, भयुपदंसनाय[1] कायचि परिभासाय न परिभासितब्बो। **ओवटो भिक्खुनीनं भिक्खूसु वचनपथो** ति ओवादानुसासनिधम्मकथासङ्खातो वचनपथो भिक्खुनीनं भिक्खूसु ओवटो पिहितो, न भिक्खुनिया कोचि भिक्खु ओवदितब्बो वा अनुसासितब्बो वा, "भन्ते पोराणकत्थेरा इदञ्चिदञ्च वत्तं **पूरियिंसू**" ति एवं पन पवेणिवसेन कथेतुं वट्टति। **अनोवटो भिक्खूनं भिक्खुनीसू** ति भिक्खूनं पन भिक्खुनीसु वचनपथो अनिवारितो, यथारुचिया ओवदन्तु अनुसासन्तु धम्मकथं कथेन्तूति अयमेत्थ सङ्खेपो, वित्थारतो पनेसा गरुधम्मकथा महाविभङ्गे[2] वुत्तनयेनेव वेदितब्बा।

इमे पन अट्ठ गरुधम्मे सत्थु सन्तिके उग्गहेत्वा थेरेन अत्तनो आरोचियमाने सुत्वा महापजापतिया तावमहन्तं दोमनस्सं खणेन पटिप्पस्सम्भि। अनोतत्तदहतो आहटेन सीतुदकस्स घटसतेन मत्थके परिसित्ता विय विगतपरिळाहा अत्तमना हुत्वा गरुधम्मपटिग्गहणेन उप्पन्नपीतिपामोज्जं आवि करोन्ती **"सेय्यथापि भन्ते"** तिआदिकं उदानं उदानेसि। तत्थ दहरो ति तरुणो। **युथा** ति योब्बञ्ञभावे ठितो। मण्डनकजातिको ति अलङ्कारसभावो। तत्थ कोचि तरुणोपि युवा न होति यथा अतितरुणो।

---

1. भस्सपरम्पराय (क)।
2. वि-ट्ठ-३-५८-पिट्ठादीसु।

कोचि युवापि मण्डनकजातिको न होति यथा उपसन्तसभावो आलसियब्यसनादीहि वा अभिभूतो, इध पन दहरो चेव युवा च मण्डनकजातिको च अधिप्पेतो, तस्मा एवमाह । उप्पलादीनि लोकसम्मतत्ता वुत्तानि । इतो परं यं यं वत्तब्बं, तं तं अट्ठकथायं दस्सितमेव ।

तत्थ **मातुगामस्स पब्बजितत्ता** ति इदं पञ्चवस्ससततो उद्धं अट्ठत्वा पञ्चसुयेव वस्ससतेसु सद्धम्मट्ठितिया कारणनिदस्सनं । **पटिसम्भिदापभेदप्पत्तखीणासववसेनेव वुत्तं** ति एत्थ "पटिसम्भिदापत्तखीणासवग्गहणेन झानानिपि गहितानेव होन्ति । न हि निज्झानकानं सब्बप्पकारसम्पत्ति इज्झती"ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **सुक्खविपस्सक-खीणासववसेन वस्ससहस्सं** तिआदिना च यं वुत्तं । तं खन्धकभाणकानं मतेन वुत्तं ति वेदितब्बं । **दीघनिकायट्ठकथायं**[1] पन एवं वुत्तं–

"पटिसम्भिदापत्तेहि वस्ससहस्सं अट्ठासि, छळभिञ्ञेहि वस्ससहस्सं, तेविज्जेहि वस्ससहस्सं, सुक्खविपस्सकेहि वस्ससहस्सं, पातिमोक्खेन वस्ससहस्सं अट्ठासी" ति । B.440

अङ्गुत्तरनिकायट्ठकथायम्पि [2]

"बुद्धानं हि परिनिब्बानतो वस्ससहस्समेव पटिसम्भिदा निब्बत्तेतुं सक्कोन्ति, ततो परं छ अभिञ्ञा, ततो तापि निब्बत्तेतुं असक्कोन्ता तिस्सो विज्जा निब्बत्तेन्ति, गच्छन्ते गच्छन्ते काले तापि निब्बत्तेतुं असक्कोन्ता सुक्खविपस्सका होन्ति । एतेनेव उपायेन अनागमिनो सकदागामिनो सोतपन्ना" ति–

वुत्तं ।

संयुत्तनिकायट्ठकथायं [3] पन–

"पठमबोधियं हि भिक्खू पटिसम्भिदापत्ता अहेसुं । अथ काले गच्छन्ते पटिसम्भिदा पापुणितुं न सक्खिंसु, छळभिञ्ञा अहेसुं, ततो छ अभिञ्ञा पत्तुं असक्कोन्ता तिस्सो विज्जा पापुणिंसु । इदानि काले गच्छन्ते तिस्सो विज्जा पापुणितुं असक्कोन्ता आसवक्खयमत्तं पापुणिस्सन्ति, तम्पि असक्कोन्ता अनागामिफलं, तम्पि असक्कोन्ता सकदागामिफलं, तम्पि असक्कोन्ता सोतपत्तिफलं, गच्छन्ते काले सोतापत्तिफलम्पि पत्तुं न सक्खिस्सन्ती" ति–

वुत्तं ।

---

1. दी-ट्ठ-३-८३-पिट्ठे ।
2. अं-ट्ठ-१-६७-पिट्ठे ।
3. सं-ट्ठ-२-१८७-पिट्ठे ।

यस्मा चेतं सब्बं अञ्ञमञ्ञपटिविरुद्धं, तस्मा तेसं तेसं भाणकानं मतमेव आचरियेन तत्थ तत्थ दस्सितं ति गहेतब्बं । अञ्ञथा हि आचरियस्सेव पुब्बापरविरोधप्पसङ्गो सिया ति ।

तानियेवा ति तानियेव पञ्च वस्ससहस्सानि । परियत्तिमूलकं सासनं ति आह **"न हि परियत्तिया असति पटिवेधो अत्थी"** ति आदि । परियत्तिया हि अन्तरहिताय पटिपत्ति अन्तरधायति, पटिपत्तिया अन्तरहिताय अधिगमो अन्तरधायति । किं B. 441 कारणा ? अयञ्हि परियत्ति पटिपत्तिया पच्चयो होति, पटिपत्ति अधिगमस्स, इति पटिपत्तितोपि परियत्तियेव पमाणं । तत्थ पटिवेधो च पटिपत्ति च होतिपि न होतिपि । एकस्मिञ्हि काले पटिवेधकरा भिक्खू बहू होन्ति, "एस[1] भिक्खु पुथुज्जनो" ति अङ्गुलिं पसारेत्वा दस्सेतब्बो होति, इमस्मिंयेव दीपे एकबारं पुथुज्जनभिक्खु नाम नाहोसि । पटिपत्तिपूरकापि कदाचि बहू होन्ति, कदाचि अप्पा, इति पटिवेधो च पटिपत्ति च होतिपि न होतिपि । सासनट्ठितिया पन परियत्तियेव पमाणं । पण्डितो हि तेपिटकं सुत्वा द्वेपि पूरेति । यथा अम्हाकं बोधिसत्तो आळारस्स सन्तिके पञ्चाभिञ्ञा सत्त च समापत्तियो निब्बत्तेत्वा नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्तिया परिकम्मं पुच्छि, सो "न जानामी"ति आह, ततो उदकस्स सन्तिकं गन्त्वा अधिगतविसेसं संसन्दित्वा नेवसञ्ञानासञ्ञायतनस्स परिकम्मं पुच्छि, सो आचिक्खि, तस्स वचनसमनन्तरमेव महासत्तो तं सम्पादेसि, एवमेव पञ्ञवा भिक्खु परियत्तिं सुत्वा द्वेपि पूरेति, तस्मा परियत्तिया ठिताय सासनं ठितं होति । यथापि महतो तळाकस्स पाळिया थिराय उदकं न ठस्सतीति न वत्तब्बं, उदके सति पदुमादीनि पुप्फानि न पुप्फिस्सन्तीति न वत्तब्बं, एवमेव महातळाकस्स थिरपाळिसदिसे तेपिटके बुद्धवचने सति महातळाके उदकसदिसा पटिपत्तिपूरका कुलपुत्ता नत्थीति न वत्तब्बं, तेसु सति महातळाके पदुमादीनि पुप्फानि विय सोतापन्नादयो अरियपुग्गला नत्थीति न वत्तब्बं । एवं एकन्ततो परियत्तियेव पमाणं ।

परियत्तिया अन्तरहिताया ति एत्थ **परियत्ती**ति[2] तेपिटकं बुद्धवचनं साट्ठकथा पाळि । याव सा तिट्ठति, ताव परियत्ति परिपुण्णा नाम होति । गच्छन्ते गच्छन्ते काले कलियुगराजानो अधम्मिका होन्ति, तेसु अधम्मिकेसु तेसम्पि अमच्चादयो अधम्मिका होन्ति, ततो रट्ठजनपदवासिनोति तेसं अधम्मिकताय न देवो सम्मा वस्सति, ततो सस्सानि न सम्पज्जन्ति, तेसु असम्पज्जन्तेसु पच्चयदायका भिक्खुसंघस्स पच्चये दातुं न सक्कोन्ति, भिक्खू पच्चयेहि किलमन्ता अन्तेवासिके सङ्गहेतुं

---

1. न एस (स्या) ।
2. अं-ट्ठ-१-६८-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

न सक्कोन्ति । गच्छन्ते गच्छन्ते काले परियत्ति परिहायति, अत्थवसेन धारेतुं न सक्कोन्ति, पाळिवसेनेव धारेन्ति । ततो काले गच्छन्ते पाळिम्पि सकलं धारेतुं न सक्कोन्ति, पठमं अभिधम्मपिटकं परिहायति, परिहायमानं मत्थकतो पट्ठाय परिहायति । पठममेव हि महापकरणं परिहायति, तस्मिं परिहीने यमकं, कथावत्थु, पुग्गलपञ्ञत्ति, धातुकथा, विभङ्गो, धम्मसङ्गहो ति । B. 442

एवं अभिधम्मपिटके परिहीने मत्थकतो पट्ठाय सुत्तन्तपिटकं परिहायति । पठमञ्हि अङ्गुत्तरनिकायो परिहायति, तस्मिम्पि पठमं एकादसकनिपातो.....पे०.....ततो एककनिपातो ति । एवं अङ्गुत्तरनिकाये परिहीने मत्थकतो पट्ठाय संयुत्तनिकायो परिहायति । पठमञ्हि महावग्गो परिहायति, ततो सळायतनवग्गो, खन्धकवग्गो, निदानवग्गो, सगाथावग्गो ति । एवं संयुत्तनिकाये परिहीने मत्थकतो पट्ठाय मज्झिमनिकायो परिहायति । पठमञ्हि उपरिपण्णासको परिहायति, ततो मज्झिमपण्णासको, ततो मूलपण्णासको ति । एवं मज्झिमनिकाये परिहीने मत्थकतो पट्ठाय दीघनिकायो परिहायति । पठमञ्हि पाथिकवग्गो परिहायति, ततो महावग्गो, ततो सीलक्खन्धवग्गो ति । एवं दीघनिकाये परिहीने सुत्तन्तपिटकं परिहीनं नाम होति । विनयपिटकेन सद्धिं जातकमेव धारेन्ति । विनयपिटकं हि लज्जिनो धारेन्ति, लाभकामा पन "सुत्तन्ते कथितेपि सल्लक्खेन्ता नत्थी"ति जातकमेव धारेन्ति । गच्छन्ते काले जातकम्पि धारेतुं न सक्कोन्ति । अथ नेसं पठमं वेस्सन्तरजातकं परिहायति, ततो पटिलोमक्कमेन पुण्णकजातकं, महानारदजातकं ति परियोसाने अपण्णकजातकं परिहायति, विनयपिटकमेव धारेन्ति ।

गच्छन्ते काले तम्पि मत्थकतो पट्ठाय परिहायति । पठमञ्हि परिवारो परिहायति, ततो खन्धको, भिक्खुनीविभङ्गो, महाविभङ्गोति अनुक्कमेन उपोसथक्खन्धकमत्तमेव धारेन्ति । तदापि परियत्ति अनन्तरहिताव होति । याव पन मनुस्सेसु चतुप्पदिकगाथापि पवत्तति, ताव परियत्ति अनन्तरहिताव होति । यदा सद्धो पसन्नो राजा हत्थिक्खन्धे सुवण्णचङ्कोटकम्हि सहस्सत्थविकं ठपापेत्वा "बुद्धेहि कथितं चतुप्पदिकं गाथं जानन्तो इमं सहस्सं गण्हतू" ति नगरे भेरिं चरापेत्वा गण्हनकं अलभित्वा "एकवारं चरापिते नामं सुणन्तापि होन्ति असुणन्तापी"ति यावततियं चरापेत्वा गण्हनकं अलभित्वा राजपुरिसा सहस्सत्थविकं पुन राजकुलं पवेसेन्ति, तदा परियत्ति अन्तरहिता नाम होति । B. 443

चिरं पवत्तिस्सतीति परियत्तिया अन्तरहितायपि लिङ्गमत्तं अद्धानं पवत्तिस्सति । कथं ? गच्छन्ते गच्छन्ते हि काले चीवरग्गहणं पत्तग्गहणं समिञ्जनपसारणं आलोकितविलोकितं न पासादिकं होति, निगण्ठसमणा विय अलावुपत्तं भिक्खू पत्तं अग्गबाहाय परिक्खिपित्वा आदाय विचरन्ति, एत्तावतापि लिङ्गं अनन्तरहितमेव

होति । गच्छन्ते पन काले अग्गवाहतो ओतारेत्वा हत्थेन वा सिक्काय वा ओलम्बेत्वा[1] विचरन्ति, चीवरम्पि रजनसारुप्पं अकत्वा ओट्ठट्ठिवण्णं कत्वा रजन्ति । गच्छन्ते काले रजनम्पि न होति, दसच्छिन्दनं ओवट्टिकाविज्झनं कप्पमत्थञ्च कत्वा वळञ्जन्ति, पुन ओवट्टिकं विज्झित्वा कप्पं न करोन्ति । ततो उभयम्पि अकत्वा दसा छेत्वा परिब्बाजका विय चरन्ति । गच्छन्ते काले "को इमिना अम्हाकं अत्थो" ति खुद्दकं कासावखण्डं हत्थे वा गीवायं वा बन्धन्ति, केसेसु वा अल्लीयापेन्ति, दारभरणं करोन्ता कसित्वा वपित्वा जीविकं कप्पेत्वा विचरन्ति, तदा दक्खिणं देन्तो जनो संघं उद्दिस्स एतेसम्पि देति । इदं सन्धाय भगवता वुत्तं "भविस्सन्ति खो पनानन्द अनागतमद्धानं गोत्रभुनो कासावकण्ठा दुस्सीला पापधम्मा, तेसु दुस्सीलेसु संघं उद्दिस्स दानं दस्सन्ति, तदापाहं आनन्द संघगतं दक्खिणं असङ्ख्येय्यं अप्पमेय्यं वदामी"ति[2] । ततो गच्छन्ते काले नानाविधानि कम्मानि करोन्ता "पपञ्चो एस, किं इमिना अम्हाकं" ति कासावखण्डं छिन्दित्वा अरञ्ञे खिपन्ति, तस्मिं काले लिङ्गं अन्तरहितं नाम होति । कस्सपदसबलस्स किर कालतो पट्ठाय योनकानं सेतवत्थानि पारुपित्वा चरणचारित्तं जातं । एवं परियत्तिया अन्तरहितायपि लिङ्गमत्तं चिरं पवत्तिस्सतीति वेदितब्बं ।

अट्ठगरुधम्मकथावण्णना निट्ठिता ।

B. 444

भिक्खुनीउपसम्पन्नानुजाननकथावण्णना

४०४-४०५॥ **यदग्गेना** ति यं दिवसं आदिं कत्वा । **तदेवा** ति[3] तस्मिञ्ञेव दिवसे । अनुञ्ञत्तियां ति[4] अनुञ्ञाय । **एकाहं भन्ते आनन्द भगवन्तं वरं याचामी**ति "एवमेव खो अहं भन्ते आनन्द इमे अट्ठ गरुधम्मे पटिग्गण्हामि यावजीवं अनतिक्कमनीये" ति पटिजानित्वा इदानि कस्मा वरं याचतीति चे ? परूपवाद-विवज्जनत्थं । एवञ्हि केचि वदेय्युं "महापजापतिया पठमं सम्पटिच्छितत्ता भिक्खूनं भिक्खुनीनञ्च यथावुड्ढं अभिवादनं नाहोसि, सा चे वरं याचेय्य, भगवा अनुजानेय्या" ति ।

---

1. ओलम्बित्वा–(स्या) ।
2. म-३-२९९-पिट्ठे ।
3. तदावाति-(स्या) ।
4. अनुपञ्ञत्तियाति (अट्ठकथायं) ।

४०६॥ **सरागाया** ति सरागभावाय कामरागभवरागपरिब्रूहनाय । **सञ्ञोगाया** ति वट्टे संयोजनत्थाय। **आचयाया**ति वट्टस्स वड्ढनत्थाय। **महिच्छताया** ति **महिच्छभावाय** । **असन्तुट्ठिया** ति असन्तुट्ठिभावाय । सङ्गणिकाया ति किलेससङ्गणगणसङ्गणविहाराय । **कोसज्जाया** ति कुसीतभावाय । **दुब्भरतायाति** दुप्पोसताय । **विरागायाति** सकलवट्टतो विरज्जनत्थाय । विसञ्ञोगायाति कमरागादीहि विसंयुज्जनत्थाय । **अपचयाया** ति सब्बस्सपि वट्टस्स अपचयत्थाय, निब्बानायाति अत्थो । **अप्पिच्छताया** ति पच्चय-प्पिच्छतादिवसेन सब्बसो इच्छापगमाय । **सन्तुट्ठिया** ति द्वादसविधसन्तुट्ठिभावाय । **पविवेकाया** ति पविवित्तभावाय कायविवेकादितदङ्गविवेकादिविवेकसिद्धिया । **वीरि-यारम्भाया** ति कायिकस्स चेव चेतसिकस्स च वीरियस्स पग्गण्हनत्थाय । **सुभरताया** ति सुखपोसनत्थाय[1] । एवं यो परियत्तिधम्मो उग्गहणधारणपरिपुच्छामनसिकारवसेन योनिसो पटिपज्जन्तस्स सरागादिभावपरिवज्जनस्स कारणं हुत्वा विरागादिभावाय संवत्तति, एकंसतो **एसो धम्मो, एसो विनयो** सम्मदेव अपायादीसु अपतनवसेन धारणतो किलेसानं विनयनतो, सत्थु सम्मासम्बुद्धस्स ओवादानुसिट्ठिभावतो **एतं सत्थुसासनं** ति **धारेय्यासि** जानेय्यासि, अवबुज्झेय्यासीति अत्थो । इमस्मिं सुत्ते पठमवारेन वट्टं, दुतियवारेन विवट्टं कथितं ।

४०९-४१०॥ **विमानेत्वा** ति अपरज्झित्वा । **कम्मप्पत्तायोपी**ति कम्मारहापि । B. 445 **आपत्तिगामिनियोपी**ति **आपत्तिआपन्नायोपि** । **वुत्तनयेनेव कारेतब्बतं आपज्जन्ती**ति कथाकरणस्स पटिक्खित्तत्ता दुक्कटेन कारेतब्बतं आपज्जन्ति ।

४१३-५-७॥ **द्वे तिस्सो भिक्खुनियो** ति द्वीहि तीहि भिक्खुनीहि । **न आरोचेन्ती**ति पातिमोक्खुद्देसकस्स न आरोचेन्ति । **न पच्चाहरन्ती**ति भिक्खुनीनं न पच्चाहरन्ति । **विसेसकं** ति वत्तभङ्गं[2] ।

४२०॥ **तेन च भिक्खु निमन्तेतब्बो** ति सामीचिदस्सनमेतं, न पन अनिमन्तिया आपत्ति ।

४२५॥ **तयो निस्सये** ति[3] सेनासननिस्सयं अपनेत्वा अपरे तयो निस्सये[4] । रुक्खमूलसेनासनञ्हि सा न लभति ।

४२८॥ **अनुवादं पट्ठपेन्ती**ति इस्सरियं पवत्तेन्ति ।

४३०॥ **भिक्खुदूतेन उपसम्पादेन्ती**ति भिक्खुयेव दूतो भिक्खुदूतो, तेन भिक्खुदूतेन, भिक्खुदूतं कत्वा उपसम्पादेन्तीति अत्थो ।

---

1. सुट्ठुपोसनत्थाय (क) ।
2. पत्तभङ्गं (स्या) ।
3. निस्सयाति (स्या) ।
4. निस्सया (स्या) ।

४३१॥ **न सम्मतीति** नप्पहोति । **नवकम्मं** ति नवकम्मं कत्वा "एत्तकानि वस्सानि वसतू" ति अपलोकेत्वा संघिकभूमिदानं ।

४३२॥ **सन्निसिन्नगब्भा** ति पतिट्ठितगब्भा ।

४३४॥ **पब्बज्जम्पि न लभतीति** तित्थायतनसङ्कन्ताय अभब्बभावूपगमनतो न लभति । **इदं ओदिस्स अनुञ्ञातं वट्टतीति** एकतो वा उभतो वा अवस्सवे सतिपि ओदिस्स अनुञ्ञातत्ता वट्टति । सेसमेत्थ पाळितो अट्ठकथातो च सुविञ्ञेय्यमेवाति ।

भिक्खुनीउपसम्पन्नानुजाननकथावण्णना निट्ठिता ।

भिक्खुनिक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

---

११. पञ्चसतिकक्खन्धक

B. 446

सङ्गीतिनिदानकथावण्णना

४३७॥ पञ्चसतिकक्खन्धके **पावाय कुसिनारं** ति[1] पावानगरे पिण्डाय चरित्वा कुसिनारं गमिस्सामीति अद्धानमग्गप्पटिपन्नो । **मन्दारवपुप्फं गहेत्वा** ति महा-चाटिप्पमाणं पुप्फं आगन्तुकदण्डके ठपेत्वा छत्तं विय गहेत्वा । **अद्दसं खो** ति आगच्छन्तं दूरतोव अद्दसं । दिस्वा च पन "पुच्छिस्सामि नं भगवतो पवत्तिं" ति चित्तं उप्पादेत्वा "सचे खो पन निसिन्नकोव पुच्छिस्सामि, सत्थरि अगारवो कतो भविस्सती"ति उट्ठहित्वा ठितट्ठानतो अपक्कम्म छद्दन्तो नगाराजा मणिचम्मं विय दसबलदत्तियं मेघवण्णपंसुकूलचीवरं पारुपित्वा दसनखसमोधानसमुज्जलं अञ्जलिं सिरस्मिं पतिट्ठापेत्वा सत्थरि कतेन गारवेन आजीवकस्स अभिमुखो हुत्वा "अपावुसो अम्हाकं सत्थारं जानासी"ति आह । किं पन सत्थु परिनिब्बानं जानन्तो पुच्छि अजानन्तो ति ? आवज्जनप्पटिबद्धं खीणासवानं जाननं । अनावज्जिकत्ता पनेस अजानन्तो पुच्छीति एके । थेरो समापत्तिबहुलो रत्तिट्ठानदिवाट्ठानलेणमण्डपादीसु निच्चं समापत्तिफलेनेव यापेति । कुलसन्तकम्पि[2] गामं पविसित्वा द्वारे समा-पज्जित्वा समापत्तितो वुट्ठितोव भिक्खं गण्हाति । थेरो किर "इमिना मे पच्छिमेन अत्तभावेन महाजनानुग्गहं करिस्सामि, ये मय्हं भिक्खं वा देन्ति, गन्धमालादीहि वा सक्कारं करोन्ति, तेसं तं महप्फलं होतू "ति एवं करोति । तस्मा समापत्तिबहुलताय न जानि । इति अजानन्तोव पुच्छीति वदन्ति, तं न गहेतब्बं । न हेत्थ अजाननकारणं अत्थि । अभिलक्खितं सत्थु परिनिब्बानं अहोसि दससहस्सिलोक-धातुकम्पनादीहि निमित्तेहि । थेरस्स पन परिसाय केहिचि भिक्खूहि भगवा दिट्ठपुब्बो, केहिचि न दिट्ठपुब्बो । तत्थ येहि दिट्ठपुब्बो, तेपि पस्सितुकामाव । येहिपि अदिट्ठपुब्बो, तेपि पस्सितुकामाव । तत्थ येहि न दिट्ठपुब्बो, ते अभिदस्सनकामताय गन्त्वा "कुहिं भगवा" ति पुच्छन्ता "परिनिब्बुतो" ति सुत्वा सन्धारेतुं न सक्खिस्सन्ति । चीवरं छड्डेत्वा एकवत्था वा दुन्निवत्था वा उरानि पटिपिसन्ता परोदिस्सन्ति । तत्थ मनुस्सा "महाकस्सपेन सद्धिं आगतपंसुकूलिका सयम्पि इत्थियो विय परोदन्ति, ते किं अम्हे समस्सासेन्ती"ति मय्हं दोसं दस्सन्ति । इदं पन सुञ्ञं महारञ्ञं, इध यथा

B. 447

1. दी-ट्ठ-२-१८९-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
2. कुलसतिकम्पि (स्या) ।

तथा रोदन्तेसु दोसो नत्थि । पुरिमतरं सुत्वा नाम सोकोपि तनुको होतीति भिक्खूनं सतुप्पादलाभत्थं जानन्तोव पुच्छि ।

अज्ज सत्ताहपरिनिब्बुतो ति अज्ज दिवसतो पटिलोमतो सत्तमे अहनि परिनिब्बुतो । **ततो मे इदं** ति ततो समणस्स गोतमस्स परिनिब्बुतट्ठानतो । **अवीतरागा**ति पुथुज्जना चेव सोतापन्नसकदागामिनो च । तेसञ्हि दोमनस्सं अप्पहीनं, तस्मा तेपि बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति, उभो हत्थे सीसे ठपेत्वा रोदन्ति । **छिन्नपातं पपतन्ती**ति छिन्नानं पातो विय छिन्नपातो, तं छिन्नपातं, भावनपुंसकनिद्देसोयं, मज्झे छिन्ना विय हुत्वा यतो वा ततो वा पतन्तीति अत्थो । **आवट्टन्ती**ति अभिमुखभावेन· वट्टन्ति । यत्थ पतिता, ततो कतिपयरतनट्ठानं वट्टनवसेनेव गन्त्वा पुन यथापतितमेव ठानं वट्टनवसेन आगच्छन्ति । **विवट्टन्ती**ति यत्थ पतिता, ततो निवट्टन्ति, पतितट्ठानतो परभागं वट्टमाना गच्छन्तीति अत्थो । अपि च पुरतो वट्टनं **आवट्टनं** । पस्सतो पच्छतो च वट्टनं **विवट्टनं** । तस्मा द्वे पादे पसारेत्वा सकिं पुरतो सकिं पच्छतो सकिं वामतो सकिं दक्खिणतो सम्परिवट्टमानापि अवट्टन्ति विवट्टन्तीति वुच्चन्ति । वीतरागा ति पहीनदोमनस्सा इट्ठानिट्ठेसु निब्बिकारताय सिलाथम्भसदिसा अनागमि-खीणासवा । कामञ्हि दोमनस्से असतिपि एकच्चो रागो होतियेव, रागे पन असति दोमनस्सस्स असम्भवोयेव । तदेकट्ठभावतो हि रागप्पहानेन पहीनदोमनस्सा वुत्ता, न खीणासवा एव ।

सब्बेहेव पियेहीति आदीसु पियायितब्बतो पियेहि मनवड्ढनतो मनापेहि मातापिताभाताभगिनीआदिकेहि । **नानाभावो**ति जातिया नानाभावो, जातिअनु-रूपगमनेन[1] विसुं भावो, असम्बद्धभावोति अत्थो । **विनाभावो** ति मरणेन विनाभावो, चुतिया तेनत्तभावेन अपुनपवत्तनतो विप्पयोगो ति अत्थो । **अञ्ञथाभावो**-ति भवेन अञ्ञथाभावो, भवन्तरग्गहणेन "कामावचरसत्तो रूपावचरो होती"ति आदिना तत्थापि "मनुस्सो देवो होती"ति आदिना च पुरिमाकारतो अञ्ञाकारता ति अत्थो । तं ति तस्मा । **कुतेत्थ लब्भा** ति कुतो कुहिं कस्मिं नाम ठाने एत्थ एकस्मिं खन्धप्पवत्ते यं तं जातं.....पे०.....मा पलुज्जीति लद्धुं सक्का, न सक्का एव तादिसस्स कारणस्स अभावतो । इदं वुत्तं होति–यस्मा सब्बेहेव पियेहि मनापेहि नानाभावो, तस्मा दस पारमियो पूरेत्वापि सम्बोधिं पत्वापि धम्मचक्कं पवत्तेत्वापि यमकपाटिहारियं दस्सेत्वापि देवोरोहणं कत्वापि यं तं जातं भूतं सङ्खतं पलोकधम्मं, तञ्च तथागतस्सपि सरीरं मा पलुज्जीति नेतं ठानं विज्जति, रोदन्तेनपि कन्दन्तेनपि न सक्का तं कारणं लद्धुं ति ।

1. जातिअन्तरूपगमनेन (क) ।

तेन खो पनावुसो समयेन सुभद्दो नाम वुड्ढपब्बजितो तिआदीसु यं वत्तब्बं, तं **निदानवण्णनायं**[1] वुत्तनयमेव ।

सङ्गीतिनिदानकथावण्णना निट्ठिता ।

खुद्दानुखुद्दकसिक्खापदकथावण्णना

४४१॥ **समूहनेय्या** ति आकङ्खमानो समूहनतु, यदि इच्छति, समूहनेय्याति अत्थो । कस्मा पन "समूहनथा" ति एकंसेनेव अवत्वा "आकङ्खमानो समूहनेय्या" ति विकप्पवचनेनेव भगवा ठपेसीति ? महाकस्सपस्स ञाणबलस्स दिट्ठत्ता । पस्सति हि भगवा "समूहनथाति वुत्तेपि सङ्गीतिकाले कस्सपो न समूहनिस्सती"ति, तस्मा विकप्पेनेव ठपेसि । यदि असमूहननं दिट्ठं, तदेव च इच्छितं, अथ कस्मा भगवा "आकङ्खमानो समूहनतू"ति अवोचाति ? तथारूपपुग्गलज्झासयवसेन । सन्ति हि केचि खुद्दानुखुद्दकानि सिक्खापदानि समादाय वत्तितुं अनिच्छन्ता, तेसं तथा अवुच्चमाने भगवति विघातो उप्पज्जेय्य, तं तेसं भविस्सति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय । तथा पन वुत्ते तेसं विघातो न उप्पज्जेय्य, अम्हाकमेवायं दोसो, यतो अम्हेसुयेव केचि समूहननं न इच्छन्ती ति । केचि "सकलस्स पन सासनस्स संघायत्तभावकरणत्थं तथा वुत्तं" ति वदन्ति । यं किञ्चि सत्थारा सिक्खापदं पञ्ञत्तं, तं समणा सक्यपुत्तिया सिरसा सम्पटिच्छित्वा जीविकं विय रक्खन्ति । तथा हि ते "खुद्दानुखुद्दकानि सिक्खापदानि आकङ्खमानो संघो समूहनतू"ति वुत्तेपि न समूहनिंसु । अञ्ञदत्थु पुरतो विय तस्स अच्चयेपि रक्खिंसुयेवाति सत्थु सासनस्स संघस्स च महन्तभावदस्सनत्थम्पि तथा वुत्तं ति दट्ठब्बं । तथा हि आयस्मा आनन्दो अञ्ञेपि वा भिक्खू "कतमं पन भन्ते खुद्दकं, कतमं अनुखुद्दकं" ति न पुच्छिंसु समूहनज्झासयस्सेव अभावतो, तेनेव एकसिक्खापदम्पि अपरिच्चजित्वा सब्बेसं अनुग्गहेतब्बभावदस्सनत्थं "चत्तारि पाराजिकानि ठपेत्वा अवसेसानि खुद्दानुखुद्दकानी"ति आदिमाहंसु । एवञ्हि वदन्तेहि "खुद्दानुखुद्दका इमे नामा" ति अविनिच्छितत्ता सब्बेसं अनुग्गहेतब्बभावो दस्सितो होति । B. 449

४४२॥ **अथ खो आयस्मा महाकस्सपो संघं ञापेसी**ति एत्थ पन केचि वदन्ति "भन्ते नागसेन कतमं खुद्दकं, कतमं अनुखुद्दकं ति मिलिन्दरञ्ञा पुच्छिते "दुक्कटं महाराज

---

1. सारत्थ-टी. १-२९ पिट्ठादीसु ।

खुद्दकं, दुब्भासितं अनुखुद्दकं" ति[1] वुत्तत्ता नगासेनत्थेरो खुद्दानुखद्दकं जानि, महाकस्सपत्थेरो पन तं अजानन्तो "सुणातु मे आवुसो" ति आदिना कम्मवाचं सावेसी"ति, न तं एवं गहेतब्बं। नागसेनत्थेरो हि परेसं वादपथोपच्छेदनत्थं सङ्गीतिकाले धम्मसङ्गाहकमहाथेरेहि गहितकोट्ठासेसु अन्तिमकोट्ठासमेव गहेत्वा मिलिन्दराजानं सञ्ञापेसि, महाकस्सपत्थेरो पन एकसिक्खापदम्पि असमूहनितुकामताय तथा कम्मवाचं सावेसि।

तत्थ **गिहिगतानी**ति गिहिपटिसंयुत्तानीति वदन्ति। गिहीसु गतानि, तेहि ञातानि गिहिगतानीति एवं पनेत्थ अत्थो दट्ठब्बो। धूमकालो एतस्साति **धूमकालिकं** चितकधूमवूपसमतो परं अप्पवत्तनतो। **अप्पञ्ञत्तं** तिआदीसु[2] नवं अधम्मिकं कतिकवत्तं वा सिक्खापदं वा बन्धन्ता **अप्पञ्ञत्तं पञ्ञपेन्ति** नाम पुराणसन्थतवत्थुस्मिं सावत्थियं भिक्खू विय। उद्धम्मं उब्बिनयं सासनं दीपेन्ता **पञ्ञत्तं समुच्छिन्दन्ति** नाम B. 450 वस्ससतपरिनिब्बुते भगवति वेसालिका वज्जिपुत्तका विय। खुद्दानुखुद्दका पन आपत्तियो सञ्चिच्च वीतिक्कमन्ता **यथापञ्ञत्तेसु सिक्खापदेसु समादाय न वत्तन्ति** नाम अस्सजिपुनब्बसुका विय। नवं पन कतिकवत्तं वा सिक्खापदं वा अबन्धन्ता, धम्मतो विनयतो सासनं दीपेन्ता, खुद्दानुखुद्दकम्पि च सिक्खापदं असमूहनन्ता **अप्पञ्ञत्तं न पञ्ञपेन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दन्ति, यथापञ्ञत्तेसु सिखापदेसु समादाय वत्तन्ति** नाम आयस्मा उपसेनो विय आयस्मा यसो काकण्डकपुत्तो विय च।

४४३॥ **भगवता ओळारिके निमित्ते कयिरमाने** ति वेसालिं निस्साय चापाले[3] चेतिये विहरन्तेन भगवता–

"रमणीया आनन्द वेसाली, रमणीयं उदेनचेतियं, रमणीयं गोतमकचेतियं, रमणीयं सत्तम्बचेतियं, रमणीयं बहुपुत्तचेतियं, रमणीयं सारन्ददचेतियं, रमणीयं चापालचेतियं। यस्स कस्सचि आनन्द चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा, सो आकङ्खमानो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा। तथागतस्स खो पन आनन्द चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा, सो आकङ्खमानो आनन्द तथागतो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा" ति[4]-

एवं ओलारिके निमित्ते कयिरमाने।

मारेन परियुट्ठितचित्तो ति मारेन अज्झोत्थटचित्तो। मारो हि यस्स सब्बेन सब्बं द्वादस विपल्लासा अप्पहीना, तस्स चित्तं परियुट्ठाति। थेरस्स च चत्तारो विपल्लसा

---

1. खु. ११-१४६-पिट्ठे।
2. दी-ट्ठ-२-११५, अं-ट्ठ-३-१५८-पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं।
3. पावाले (स्या.)।
4. दी-२-८६-पिट्ठे।

अप्पहीना, तेनस्स मारो चितं परियुट्ठासि । सो पन चित्तपरियुट्ठानं करोन्तो किं करोतीति ? भेरवं रूपारम्मणं वा दस्सेति, सद्दारम्मणं वा सावेति, ततो सत्ता तं दिस्वा वा सुत्वा वा सतिं विस्सज्जेत्वा विवटमुखा होन्ति, तेसं मुखेन हत्थं पवेसेत्वा हदयं मद्दति, ततो विसञ्ञाव हुत्वा तिट्ठन्ति । थेरस्स पनेस मुखेन हत्थं पवेसेतुं किं सक्खिस्सति, भेरवारम्मणं पन दस्सेति । तं दिस्वा थेरो निमित्तोभासं न पटिविज्झि । B. 451

खुद्दानुखुद्दकसिक्खापदकथावण्णना निट्ठिता ।

ब्रह्मदण्डकथावण्णना

४४५॥ **उज्जवनिकाया** ति पटिसोतगामिनिया । **रजोहरणं** ति रजोपुञ्छनी । **न कुलवं गमेन्ती**ति निरत्थकविनासनं न गमेन्ति । कुच्छितो लवो **कुलवो,** अनयविनासोति वुत्तं होति । "धम्मविनयसङ्गीतिया" ति वत्तब्बे सङ्गीतिया विनयप्पधानत्ता "**विनयसङ्गीतिया**" ति वुत्तं । विनयप्पधाना सङ्गीति **विनयसङ्गीति** । सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेवा ति ।

पञ्चसतिकक्खन्धकवण्णना निट्ठिता ।

B. 452

१२. सत्तसतिकक्खन्धक

दसवत्थुकथावण्णना

४४६॥ सत्तसतिकक्खन्धके **निक्खित्तमणिसुवण्णा** ति रूपियसिक्खापदेनेव पटिक्खित्तमणिसुवण्णा। तत्थ मणिग्गहणेन सब्बं दुक्कटवत्थु, सुवण्णग्गहणेन सब्बं पाचित्तियवत्थु गहितं होति। **भिक्खग्गेना** ति भिक्खुगणनाय।

४४७॥ **उपक्किलेसा** ति विरोचितुं अदत्वा उपक्किलिट्ठभावकरणेन उपक्किलेसा। **महिका**ति हिमं। धूमो च रजो च **धूमरजो**। एत्थ पुरिमा तयो असम्पत्तउपक्किलेसा, राहु पन सम्पत्तउपक्किलेसवसेन कथितो ति वेदितब्बो। **समणब्राह्मणा न तपन्ति न भासान्ति न विरोचन्ती**ति गुणपतापेन[1] न तपन्ति गुणोभासेन न भासन्ति गुणविरोचनेन न विरोचन्ति। **सुरामेरयपाना अप्पटिविरता**ति पञ्चविधाय सुराय चतुब्बिधस्स च मेरयस्स पानतो अविरता।

अविज्जानिवुटा ति अविज्जाय निवारिता पिहिता। **पियरूपाभिनन्दिनो** ति पियरूपं सातरूपं अभिनन्दमाना तुस्समाना। **सादियन्ती**ति गण्हन्ति। **अविद्दसू**ति अन्धबाला। **सरजा** ति सकिलेसरजा। **मगा** ति मिगसदिसा। तस्मिं तस्मिं विसये **भवे** वा नेतीति नेत्ति, तण्हायेतं अधिवचनं। ताय सह वत्तन्तीति **सनेत्तिका**।

४४८॥ **तं परिसं एतदवोचा** ति[2] तस्स किर एवं अहोसि "कुलपुत्ता पब्बजन्ता पुत्तदारञ्चेव जातरूपरजतञ्च पहायेव पब्बजन्ति, न च सक्का यं पहाय पब्बजिता[3] तं एतेहि गाहेतुं" ति नयग्गाहे ठत्वा एतं "**मा अय्या**" ति आदिवचनं अवोच। **एकंसेनेतं** ति एतं पञ्चकामगुणकप्पनं "अस्समणधम्मो असक्यपुत्तियधम्मो" ति एकंसेन धारेय्यासि।

तिणं ति सेनासनच्छदनतिणं। परियेसितब्बं ति तिणच्छदने वा इट्ठकच्छदने वा

B. 453 गेहे पलुज्जन्ते येहि तं कारितं, तेसं सन्तिकं गन्त्वा "तुम्हेहि कारितं सेनासनं ओवस्सति, न सक्का तत्थ वसितुं" ति आचिक्खितब्बं। मनुस्सा सक्कोन्ता करिस्सन्ति, असक्कोन्ता "तुम्हे वड्ढकी गहेत्वा कारापेथ, मयं ते सञ्ञापेस्सामा" ति वक्खन्ति। एवं वुत्ते कारेत्वा तेसं आचिक्खितब्बं, मनुस्सा वड्ढकीनं दातब्बं दस्सन्ति। सचे आवाससामिका नत्थि, अञ्ञेसम्पि भिक्खाचारवत्तेन आरोचेत्वा कारेतुं वट्टति। इमं सन्धाय "परियेसितब्बं" ति वुत्तं।

---

1. गुणपकासेन (क)
2. सं-ट्ठ-३-१४४-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।
3. अप्पहाय पब्बजितुं (क)

दारूति सेनासने गोपानसिआदीसु पलुज्जमानेसु तदत्थाय दारु परियेसितब्बं। **सकटं** ति गिहिविकटं वा तावकालिकं वा कत्वा सकटं परियेसितब्बं। न केवलञ्च सकटमेव, अञ्ञम्पि वासिफरसुकुदालादि उपकरणं एवं परियेसितुं वट्टति। **पुरिसो** ति हत्थकम्मवसेन पुरिसो परियेसितब्बो। यं कञ्चि हि पुरिसं "हत्थकम्मं आवुसो दस्ससी"ति वत्वा "दस्सामि भन्ते" ति वुत्ते "इमस्मिं इदञ्चिदञ्च करोही" ति यं इच्छति, तं कारेतुं वट्टति। **न त्वेवाहं गामणि केनचि परियायेना** ति जातरूपरजतं पनाहं केनचिपि कारणेन परियेसितब्बं ति न वदामि।

४४९॥ पापकं कतं ति असुन्दरं कतं।

४५०॥ अहोगङ्गो ति तस्स पब्बतस्स नामं।

४५१॥ **पटिकच्चेव गच्छेय्यं** ति यत्थ तं अधिकरणं वूपसमेतुं भिक्खू सन्निपतन्ति, तत्थ पठममेव गच्छेय्यं। **सम्भावेसुं** ति पापुणिंसु।

४५२॥ **अलोणकं भविस्सतीति** अलोणकं भत्तं वा ब्यञ्जनं वा भविस्सति। आसुताति सब्बसम्भारसज्जिता। "असुत्ता" ति वा पाठो।

४५३॥ **उज्जविंसू**ति नावं आरुय्ह पटिसोतेन गच्छिंसु। **पाचीनकाति** पाचीनदेसवासिनो।

४५४॥ **ननु त्वं आवुसो वुड्ढो वीसतिवस्सोसीति** ननु त्वं आवुसो वीसतिवस्सो, न निस्सयपटिबद्धो, कस्मा तं थेरो पणामेतीति दीपेन्ति। **गरुनिस्सयं गण्हामाति** किञ्चापि मयं महल्लका, एतं पन थेरं गरुं कत्वा वसिस्सामाति अधिप्पायो।

४५५॥ मेत्ताय रूपावचरसमाधिमत्तभावतो "**कुल्लकविहारेना**" ति वुत्तं, खुद्दकेन विहारेनाति अत्थो, खुद्दकता चस्स अगम्भीरभावतो ति आह "**उत्तानविहारेना**" ति। **सुञ्ञताविहारेना** ति सुञ्ञतामुखेन अधिगतफलसमापत्तिं सन्धाय वुत्तं। B. 454

४५७॥ **सुत्तविभङ्गे** ति पदभाजनीये। **तेन सद्धिं ति पुरेपटिग्गहितलोणेन सद्धिं। न हि एत्थ यावजीविकं तदहुपटिग्गहितं** ति "कप्पति सिङ्गिलोणकप्पो" ति एत्थ वुत्तसिङ्गिलोणं सन्धाय वुत्तं। तञ्हि पुरे पटिग्गहेत्वा सिङ्गेन परिहटं न तदहु-पटिग्गहितं। **यावकालिकमेव तदहुपटिग्गहितं** ति सिङ्गिलोणेन मिस्सेत्वा भुञ्जितब्बं अलोणामिसं सन्धाय वुत्तं। **उपोसथसंयुत्ते** ति उपोसथपटिसंयुत्ते, उपोसथक्खन्धकेति वुत्तं होति। अतिसरणं अतिसारो, अतिक्कमो। विनयस्स अतिसारो **विनयातिसारो**। **तं पमाणं करोन्तस्साति** दसाय सद्धिं निसीदने यं पमाणं वुत्तं, दसाय विना तं पमाणं करोन्तस्स। सेसेमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेव।

सत्तसतिकक्खन्धकवण्णना निट्ठिता।

द्विवग्गसङ्गहाति चूळवग्गमहावग्गसङ्खातेहि द्वीहि वग्गेहि सङ्गहिता। द्वावीसतिप-भेदनाति महावग्गे दस, चूळवग्गे द्वादसाति एवं द्वावीसतिप्पभेदा। **सासने** ति सत्थुसासने। ये खन्धका वुत्ताति योजेतब्बं।

इति समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय सारत्थदीपनियं

चूळवग्गवण्णना निट्ठिता।

परिवार

परिवार

B. 455

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

सोळसमहावार

पञ्ञत्तिवारवण्णना

विसुद्धपरिवारस्साति सब्बसो परिसुद्धखीणासवपरिवारस्स । **धम्मक्खन्धसरीरस्सा**ति सीलसमाधिपञ्ञाविमुत्तिविमुत्तिञाणदस्सनसङ्खातधम्मक्खन्धसरीरस्स सासने ति सम्बन्धो । तस्सा ति "परिवारो" ति यो सङ्गहं आरुळ्हो, तस्स । **पुब्बागतं नयं** ति पुब्बे आगतं विनिच्छयं ।

१॥ पकतत्थपटिनिद्देसो त-सद्दो ति तस्स "भगवता" ति आदीहि पदेहि समानाधिकरणभावेन वुत्तत्थस्स याय विनयपञ्ञत्तिया भगवा पकतो अधिकतो सुपाकटो च, तं विनयपञ्ञत्तिं सद्धिं याचनाय अत्थभावेन दस्सेन्तो "यो सो......पे॰...... **विनयपञ्ञत्तिं पञ्ञपेसी**"ति आह । तत्थ विनयपञ्ञत्तिं ति विनयभूतं पञ्ञत्तिं ।

"जानता पस्सता"ति इमेसं पदानं विनयस्स अधिकतत्ता तत्थ वुत्तनयेन ताव अत्थं योजेत्वा इदानि सुतन्तनयेन दस्सेन्तो सतिपि ञाणदस्सन-सद्दानं पञ्ञा-वेवचनभावे तेन तेन विसेसेन तेसं विसयविसेसपवत्तिदस्सनत्थं विज्जत्तयवसेन अभिञ्ञानावरणञाणवसेन सब्बञ्ञुतञ्ञाणमंसचक्खुवसेन पटिवेधदेसनाञाणवसेन च अत्थं योजेत्वा दस्सेन्तो "अपिचा" ति आदिमाह । तत्थ **पुब्बेनिवासादीही**ति पुब्बेनिवासासवक्खयञाणेहि । **पटिवेधपञ्ञाया**ति अरियमग्गपञ्ञाय । **देसनापञ्ञाय पस्सता** ति देसेतब्बधम्मानं देसेतब्बप्पकारं बोधनेय्यपुग्गलानञ्च आसयानुसय-चरिताधिमुत्तिआदिभेदं धम्मं देसनापञ्ञाय याथावतो पस्सता । **अरहता** ति अरीनं, अरानञ्च हतत्ता, पच्चयादीनञ्च अरहत्ता अरहता । **सम्मासम्बुद्धेना** ति सम्मा सामञ्च सच्चानं बुद्धत्ता सम्मासम्बुद्धेन । अथ वा अन्तरायिकधम्मे **जानता**, B. 456 निय्यानिकधम्मे पस्सता, किलेसारीनं हतत्ता **अरहता**, सम्मा सामं सब्बधम्मानं बुद्धत्ता **सम्मासम्बुद्धेना** ति एवं चतुवेसारज्जवसेनपेत्थ योजना वेदितब्बा ।

अपि च ठानाट्ठानादिविभागं **जानता**, यथाकम्मूपगे सत्ते **पस्सता**, सवासन-आसवानं छिन्नत्ता **अरहता**, अभिञ्ञेय्यादिभेदे धम्मे अभिञ्ञेय्यादितो अविपरीता-वबोधतो **सम्मासम्बुद्धेन** । अथ वा तीसु कालेसु अप्पटिहतञाणताय **जानता**, कायकम्मादिवसेन तिण्णम्पि कम्मानं ञाणानुपरिवत्तितो सम्मा कारिताय **पस्सता**,

दवादीनं अभावसाधिकाय पहानसम्पदाय **अरहता,** छन्दादीनं अहानिहेतुभूताय[1] अक्खयपटिभानसाधिकाय सब्बञ्ञुताय **सम्मासम्बुद्धेना** ति एवं दसबलअट्ठारसावेणिक-बुद्धधम्मवसेनपि योजना कातब्बा ।

२॥ **पुच्छाविस्सज्जने** ति पुच्छाय विस्सज्जने । **एत्था** ति एतस्मिं पुच्छाविस्सज्जने । **मज्झिमदेसेयेव पञ्ञत्ती**ति तस्मिंयेव देसे यथावुत्तवत्थुवीतिक्कमे आपत्तिसम्भवतो । **विनीतकथा**ति विनीतवत्थुकथा, अयमेव वा पाठो ।

कायेन पन आपत्तिं आपज्जतीति पुब्बभागे सेवनचित्तं अङ्गं कत्वा कायद्वार-सङ्खातविञ्ञत्तिं जनयित्वा पवत्तचित्तुप्पादसङ्खातं आपत्तिं आपज्जति । किञ्चापि हि चित्तेन समुट्ठापिता विञ्ञत्ति, तथापि चित्तेन अधिप्पेतस्स अत्थस्स कायविञ्ञत्तिया साधितत्ता "कायद्वारेन आपत्तिं आपज्जती"ति वुच्चति । **इममत्थं सन्धाया** ति आपन्नाय आपत्तिया अनापत्तिभावापादनस्स असक्कुणेय्यतासङ्खातमत्थं सन्धाय, न भण्डनादि-वूपसमं ।

३॥ **पोराणकेहि महाथेरेही**ति सीहळदीपवासीहि महाथेरेहि । ठपिता ति पोत्थक-सङ्गहारोहनकाले ठपिता । चतुत्थसङ्गीतिसदिसा हि पोत्थकारोहसङ्गीति । उभतो-विभङ्गे द्वत्तिंस वारा सुविञ्ञेय्याव ।

B. 457

समुट्ठानसीसवण्णना

२५७॥ समुट्ठानकथाय पन करुणासीतलभावेन चन्दसदिसत्ता "बुद्धचन्दे" ति वुत्तं, किलेसतिमिरपहानतो **"बुद्धादिच्चे"** ति वुत्तं । **पिटके तीणि देसयी**ति यस्मा ते देसयन्ति, तस्मा अङ्गिरसोपि पिटकानि तीणि देसयि । तानि कतमानीति आह **"सुत्तन्तं"** तिआदि । **महागुणं** ति महानिसंसं । **एवं नीयति सद्धम्मो, विनयो यदि** तिट्ठतीति यदि विनयपरियत्ति अनन्तरहिता तिट्ठति पवत्तति, एवं सति पटिपत्तिपटिवेधसद्धम्मो नीयति पवत्तति । विनयपरियत्ति पन कथं तिट्ठतीति आह "उभतो चा" ति आदि । परिवारेन गन्थिता तिट्ठन्तीति योजेतब्बं । **तस्सेव परिवारस्साति** तस्मिं येव परिवारे ।

नियतकतं ति कतनियतं, नियमितं ति अत्थो । **अञ्ञेहि सद्धिं ति** सेससिक्खापदेहि सद्धिं । **असम्भिन्नसमुट्ठानानी**ति असङ्करसमुट्ठानानि ।

तस्मा सिक्खेति यस्मा विनये सति सद्धम्मो तिट्ठति, विनयो च परिवारेन गन्थितो तिट्ठति, परिवारे च समुट्ठानादीनि दिस्सन्ति, तस्मा सिक्खेय्य परिवारं, उग्गण्हेय्याति अत्थो ।

---

1. पहानहेतुभूताय (क)

आदिम्हि ताव पुरिमनये ति "छन्नं आपत्तिसमुट्ठानानं कतिहि समुट्ठानेहि समुट्ठाती-ति एकेन समुट्ठानेन समुट्ठाति, कायतो च चित्ततो च समुट्ठाती"ति आदिना पञ्ञत्तिवारे[1] सकिं आगतनयं सन्धायेतं वुत्तं ।

२५८॥ **नानुबन्धे पवत्तिनिं** ति "या पन भिक्खुनी वुट्ठापितं पवत्तिनिं द्वे वस्सानि नानुबन्धेय्या" ति[2] वुत्तसिक्खापदं ।

२७०॥ **अकतं** ति अञ्ञेहि अमिस्सीकतं, नियतसमुट्ठानं ति वुत्तं होति ।

----

1. वि-५-८३-पिट्ठे ।
2. वि-२-४३१-पिट्ठे ।

B. 458

अन्तरपेय्याल

कतिपुच्छावारवण्णना

२७१॥ **वेरं मणतीति** रागादिवेरं मणति विनासेति। **एताया** ति विरतिया। **निय्यानं** ति मग्गं। **कायपागब्भियं** ति कायपागब्भियवसेन पवत्तं कायदुच्चरितं।

२७४॥ **सारणीया** ति सरितब्बयुत्ता अनुस्सरणारहा[1] अद्धाने अतिक्कन्तेपि न सम्मुस्सितब्बा। मिज्जति सिनिय्हति एतायाति मेत्ता, मित्तभावो। **मेत्ता** एतस्स अत्थीति मेत्तं कायकम्मं, तं पन यस्मा मेत्तासहगतचित्तसमुट्ठानं, तस्मा वुत्तं **"मेत्तचित्तेन कतं कायकम्मं"** ति। **आवी**ति पकासं। पकासभावो चेत्थ यं उद्दिस तं कायकम्मं करीयति, तस्स सम्मुखभावतो ति आह **"सम्मुखा"** ति। **रहो** ति अपकासं। अपकासता च यं उद्दिस तं कम्मं करीयति, तस्स अपच्चक्खभावतो ति आह **"परम्मुखा"** ति। **उभयेहीति** नवकेहि थेरेहि च। पियं पियायितब्बं करोतीति **पियकरणो**। गरुं गरुट्ठानियं करोतीति **गरुकरणो**। **सङ्गहाया**ति सङ्गहवत्थुविसेसभावतो सब्रह्मचारीनं सङ्गहणत्थाय। **अविवादाया**ति सङ्गहवत्थुभावतो एव न विवादाय। सति च अविवादहेतुभूतसङ्गहकत्ते तेसं वसेन सब्रह्मचारीनं समग्गभावो भेदाभावो सिद्धोयेवाति आह **"समग्गभावाया"** ति आदि।

पग्गय्ह वचनं ति केवलं "देवो" ति अवत्वा "देवत्थेरो" ति गुणेहि थिरभावजोतनं पग्गण्हित्वा उच्चं कत्वा वचनं। ममत्तबोधनवचनं **ममायनवचनं**। एकन्ततिरोक्खस्स मनोकम्मस्स सम्मुखता नाम विञ्ञत्तिसमुट्ठापनवसेनेव होति, तञ्च खो लोके कायकम्मं ति पाकटं पञ्ञातं हत्थविकारादिं अनामसित्वायेव दस्सेन्तो **"नयनानि उम्मीलेत्वा"** ति आदिमाह। कामञ्चेत्थ मेत्तासिनेहसिनिद्धानं नयनानं उम्मीलना पसन्नेन मुखेन ओलोकनञ्च मेत्तं कायकम्ममेव, यस्स पन चित्तस्स वसेन नयनानं मेत्तासिनेहसिनिद्धता मुखस्स च पसन्नता, तं सन्धाय वुत्तं **"मेत्तं मनोकम्मं नामा"** ति।

B. 459 इमानि[2] च मेत्तकायकम्मादीनि पाळियं भिक्खूनं वसेन आगतानि गिहीसुपि लब्भन्तियेव। भिक्खूनञ्हि मेत्तचित्तेन आचरियुपज्झायवत्तादिआभिसमाचारिकधम्मपूरणं मेत्तं कायकम्मं नाम। सब्बञ्च अनवज्जकायकम्मं आभिसमाचारिककम्मन्तोगधमेवाति वेदितब्बं। गिहीनं चेतियवन्दनत्थाय बोधिवन्दनत्थाय संघनिमन्तनत्थाय गमनं, गामं वा पिण्डाय पविट्ठे भिक्खू दिस्वा पच्चुग्गमनं, पत्तपटिग्गहणं, आसनपञ्ञापनं, अनुगमनं ति एवमादिकं मेत्तं कायकम्मं नाम।

---

1. अनुस्सवारहा (स्या)
2. दी-ट्ठ-२-१२१, म-ट्ठ-२-२९२, अं-ट्ठ-३-८९-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं।

भिक्खूनं मेत्तचित्तेन आचारपञ्ञत्तिसिक्खापन कम्मट्ठानकथन धम्मदेसना परिपुच्छन अट्ठकथाकथनवसेन पवत्तियमानं तेपिटकम्पि बुद्धवचनं मेत्तं वचीकम्मं नाम। गिहीनं "चेतियवन्दनत्थाय गच्छाम, बोधिवन्दनत्थाय गच्छाम, धम्मस्सवनं करिस्साम, दीपमालापुप्फपूजं करिस्साम, तीणि सुचरितानि समादाय वत्तिस्साम, सलाकभत्तादीनि दस्साम, वस्सावासिकं दस्साम, अज्ज संघस्स चत्तारो पच्चये दस्साम, संघं निमन्तेत्वा खादनीयादीनि संविदहथ, आसनानि पञ्ञपेथ, पानीयं उपट्ठापेथ, संघं पच्चुग्गन्त्वा आनेथ, पञ्ञत्तासने निसीदापेथ, छन्दजाता उस्साहजाता वेय्यावच्चं करोथा" ति आदिकथनकाले मेत्तं वचीकम्मं नाम। भिक्खूनं पातोव उट्ठाय सरीरपटिजग्गनं चेतियङ्गणवत्तादीनि च कत्वा विवित्तासने निसीदित्वा "इमस्मिं विहारे भिक्खू सुखी होन्तु अवेरा अब्यापज्जा" ति चिन्तनं मेत्तं मनोकम्मं नाम। गिहीनं "अय्या सुखी होन्तु अवेरा अब्यापज्जा" ति चिन्तनं मेत्तं मनोकम्मं नाम।

लाभा ति चीवरादयो लद्धपच्चया। **धम्मिका** ति कुहनादिभेदं मिच्छाजीवं वज्जेत्वा धम्मेन समेन भिक्खाचरियवत्तेन उप्पन्ना। **अन्तमसो पत्तपरियापन्नमत्तम्पीति** पच्छिमकोटिया पत्ते परियापन्नं पत्तस्स अन्तोगतं द्वत्तिकटच्छुभिक्खामत्तम्पि। देय्यं दक्खिणेय्यञ्च अप्पटिविभत्तं कत्वा भुञ्जतीति **अप्पटिविभत्तभोगी**। एत्थ हि द्वे पटिविभत्तानि नाम आमिसपटिविभत्तं पुग्गलपटिविभतञ्च। तत्थ "एत्तकं दस्सामि, एत्तकं न दस्सामी" ति एवं चित्तेन विभजनं आमिसपटिविभत्तं नाम। "असुकस्स दस्सामि, असुकस्स न दस्सामी" ति एवं चित्तेन विभजनं पन **पुग्गलपटिविभत्तं** नाम। तदुभयम्पि अकत्वा यो अप्पटिविभत्तं भुञ्जति, अयं **अप्पटिविभत्तभोगी नाम**। तेनाह **"नेव आमिसं पटिविभजित्वा भुञ्जती"** ति आदि। **आदातुम्पीति** पि-सद्देन दातुम्पि वट्टती- B. 460 ति दस्सेति। दानञ्हि नाम न कस्सचि निवारितं, तेन दुस्सीलस्सपि अत्थिकस्स सति सम्भवे दातब्बं, तञ्च खो करुणायनवसेन, न वत्तपूरणवसेन। सारणीयधम्मपूरकस्स अप्पटिविभत्तभोगिताय **"सब्बेसं दातब्बमेवा"** ति वुत्तं। गिलानादीनं पन ओदिस्सकं कत्वा दानं अप्पटिविभागपक्खिकं "असुकस्स न दस्सामी" ति पटिक्खेपस्स अभावतो। ब्यतिरेकप्पधानो हि पटिविभागो। तेनाह "गिलानगिलानुपट्ठाक......पे०..... **विचेय्य दातुम्पि वट्टती**" ति।

साधारणभोगीति एत्थ साधारणभोगिनो इदं लक्खणं-यं यं पणीतं लभति, तं तं नेव लाभेन लाभं निजिगीसनमुखेन गिहीनं देति अत्तनो आजीवसुद्धिं रक्खमानो, न अत्तनाव परिभुञ्जति "मय्हं असाधारणभोगिता मा होतू" ति। तं पटिग्गण्हन्तो च "संघेन साधारणं होतू" ति गहेत्वा घण्टिं पहरित्वा परिभुञ्जितब्बं संघसन्तकं विय पस्सति। इमिना च तस्स लाभस्स तीसुपि कालेसु साधारणतो ठपनं दस्सितं। "तं पटिग्गण्हन्तो च संघेन साधारणं होतू" ति इमिना पटिग्गहणकालो दस्सितो,

"गहेत्वा.....पे०....पस्सती" ति इमिना पटिग्गहितकालो । तदुभयं पन तादिसेन पुब्बभागेन विना न होतीति अत्थसिद्धो पुरिमकालो । तयिदम्पि पटिग्गहणतो पुब्बेवस्स होति "संघेन साधारणं होतूति पटिग्गहेस्सामी"ति, पटिग्गण्हन्तस्स होति "संघेन साधारणं होतू ति पटिग्गण्हामी" ति, पटिग्गहेत्वा होति "संघेन साधारणं होतू-ति पटिग्गहितं मया" ति एवं तिलक्खणसम्पन्नं कत्वा लद्धलाभं ओसानलक्खणं अविकोपेत्वा परिभुञ्जन्तो साधारणभोगी अप्पटिविभत्तभोगी च होति ।

इमं[1] पन सारणीयधम्मं को पूरेति, को न पूरेति ? दुस्सीलो ताव न पूरेति । न हि तस्स सन्तकं सीलवन्तो गण्हन्ति । परिसुद्धसीलो पन वत्तं अखण्डेन्तो पूरेति । तत्रिदं वत्तं–यो ओदिस्सकं कत्वा मातु वा पितु वा आचरियुपज्झायादीनं वा देति, सो दातब्बं देतु, सारणीयधम्मो पनस्स न होति, पलिबोधजग्गनं नाम B. 461 होति । सारणीयधम्मो हि मुत्तपलिबोधस्सेव वट्टति । तेन पन ओदिस्सकं देन्तेन गिलानगिलानुपट्ठाकआगन्तुकगमिकानञ्चेव नवपब्बजितस्स च सङ्घाटिपत्तग्गहणं अजानन्तस्स दातब्बं । एतेसं दत्वा अवसेसं थेरासनतो पट्ठाय थोकं थोकं अदत्वा यो यत्तकं गण्हाति, तस्स तत्तकं दातब्बं । अवसिट्ठे असति पुन पिण्डाय चरित्वा थेरासनतो पट्ठाय यं यं पणीतं, तं तं दत्वा सेसं भुञ्जितब्बं ।

अयं पन सारणीयधम्मो सारणीयधम्मपूरणविधिम्हि सुसिक्खिताय परिसाय सुपूरो होति । सुसिक्खिताय हि परिसाय यो अञ्ञतो लभति,सो न गण्हाति । अञ्ञतो अलभन्तोपि पमाणयुत्तमेव गण्हाति, न अतिरेकं । अयञ्च पन सारणीय-धम्मो एवं पुनप्पुनं पिण्डाय चरित्वा लद्धं लद्धं देन्तस्सपि द्वादसहि वस्सेहि पूरति, न ततो ओरं । सचे हि द्वादसमेपि वस्से सारणीयधम्मपूरको पिण्डपातपूरं पत्तं आसनसालायं ठपेत्वा नहायितुं गच्छति, संघत्थेरो च "कस्सेसो पत्तो" ति वत्वा "सारणीयधम्मपूरकस्सा" ति वुत्ते "आहरथ नं" ति सब्बं पिण्डपातं विचारेत्वा भुञ्जित्वाव रित्तपत्तं ठपेति । अथ सो भिक्खु रित्तपत्तं दिस्वा "मय्हं अनवसेसेत्वाव परिभुञ्जिंसू" ति दोमनस्सं उप्पादेति, सारणीयधम्मो भिज्जति, पुन द्वादस वस्सानि पूरेतब्बो होति । तित्थियपरिवाससदिसो हेस, सकिं खण्डे जाते पुन पूरेतब्बोव । यो पन "लाभा वत मे, सुलद्धं वत मे, यस्स मे पत्तगतं अनापुच्छाव सब्रह्मचारिनो परिभुञ्जन्ती" ति सोमनस्सं जनेति, तस्स पुण्णो नाम होति ।

एवं पूरितसारणीयधम्मस्स पन नेव इस्सा, न मच्छरियं होति, मनुस्सानं पियो होति सुलभपच्चयो, मत्तगतमस्स दिय्यमानम्पि न खीयति, भाजनीयभण्डट्ठाने अग्गभण्डं लभति, भये वा छातके वा सम्पत्ते देवता उस्सुक्कं आपज्जन्ति ।

---

1. दी-ट्ठ-२-१२३, म-ट्ठ-२-२९४, अं-ट्ठ-३-९० पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

तत्रिमानि वत्थूनि–लेणगिरिवासी तिस्सत्थेरो किर महाखीरगामं उपनिस्साय वसति। पञ्ञासमत्ता थेरा नागदीपं चेतियवन्दनत्थाय गच्छन्ता खीरगामे पिण्डाय चरित्वा किञ्चि अलद्धा निक्खमिंसु। थेरो पविसन्तो ते दिस्वा पुच्छि "लद्धं भन्ते"-ति। विचरिम्ह आवुसोति। सो अलद्धभावं ञत्वा आह "भन्ते यावाहं आगच्छामि, ताव इधेव होथा" ति। मयं आवुसो पञ्ञास जना पत्ततेमनमत्तम्पि न लभिम्हाति। B. 462 भन्ते नेवासिका नाम पटिबला होन्ति, अलभन्तापि भिक्खाचारमग्गसभागं जानन्तीति। थेरा आगमिंसु। थेरो गामं पाविसि। धुरगेहेयेव महाउपासिका खीरभत्तं सज्जेत्वा थेरं ओलोकयमाना ठिता थेरस्स द्वारं सम्पत्तस्सेव पत्तं पूरेत्वा अदासि। सो तं आदाय थेरानं सन्तिकं गन्त्वा "गण्हथ भन्ते ति संघत्थेरं आह। थेरो "अम्हेहि एत्तकेहि किञ्चि न लद्धं, अयं संघमेव गहेत्वा आगतो, किं नु खो" ति सेसानं मुखं ओलोकेसि। थेरो ओलोकनाकारेनेव ञत्वा "भन्ते धम्मेन समेन लद्धो पिण्डपातो, निक्कुक्कुच्चा गण्हथा" ति आदितो पट्ठाय सब्बेसं यावदत्थं दत्वा अत्तनापि यावदत्थं भुञ्जि। अथ नं भत्तकिच्चावसाने थेरा पुच्छिंसु "कदा आवुसो लोकुत्तर-धम्मं पटिविज्झी"ति। नत्थि मे भन्ते लोकुत्तरधम्मो ति। झानलाभीसि आवुसो ति। एतम्पि मे भन्ते नत्थीति। ननु आवुसो पाटिहारियं ति। सारणीयधम्मो मे भन्ते पूरितो, तस्स मे पूरितकालतो पट्ठाय सचेपि भिक्खुसतसहस्सं होति, पत्तगतं न खीयतीति। साधु साधु सप्पुरिस अनुच्छविकमिदं तुय्हं ति। इदं ताव **पत्तगतं न खीयतीति** एत्थ वत्थु।

अयमेव पन थेरो चेतियपब्बते गिरिभण्डमहापूजाय दानट्ठानं गन्त्वा "इमस्मिं दाने किं वरभण्डं" ति पुच्छि। द्वे साटका भन्ते ति। एते मय्हं पापुणिस्सन्तीति। तं सुत्वा अमच्चो रञ्ञो आरोचेसि "एको दहरो एवं वदती" ति। "दहरस्स एवं चित्तं, महाथेरानं पन सुखुमा साटका वट्टन्ती" ति वत्वा "महाथेरानं दस्सामी" ति ठपेसि। तस्स भिक्खुसंघे पटिपाटिया ठिते देन्तस्स मत्थके ठपितापि ते साटका हत्थं नारोहन्ति, अञ्ञेव आरोहन्ति। दहरस्स दानकाले पन हत्थं आरुळ्हा। सो तस्स हत्थे ठपेत्वा अमच्चस्स मुखं ओलोकेत्वा दहरं निसीदापेत्वा दानं दत्वा संघं विस्सज्जेत्वा दहरस्स सन्तिके निसीदित्वा "भन्ते इमं धम्मं कदा पटिविज्झित्था" ति आह। सो परियायेनपि असन्तं अवदन्तो "नत्थि मय्हं महाराज लोकुत्तरधम्मो" ति आह। ननु भन्ते पुब्बेव अवचुत्थाति। आम महाराज, सारणीयधम्मपूरको अहं, तस्स मे धम्मस्स पूरितकालतो पट्ठाय भाजनीयट्ठाने अग्गभण्डं पापुणातीति। "साधु-साधु भन्ते, अनुच्छविकमिदं तुम्हाकं" ति वन्दित्वा पक्कामि। **इदं भाजनीयट्ठाने** B. 463 **अग्गभण्डं पापुणातीति** एत्थ वत्थु।

चण्डालतिस्सभयेन पन भातरगामवासिनो नागत्थेरिया अनारोचेत्वाव पलायिंसु। थेरी पच्चूससमये "अति विय अप्पनिग्घोसो गामो, उपधारेथ तावा" ति दहर-भिक्खुनियो आह। ता गन्त्वा सब्बेसं गतभावं ञत्वा आगम्म थेरिया आरोचेसुं। सा सुत्वा "मा तुम्हे तेसं गतभावं चिन्तयित्थ, अत्तनो उद्देसपरिपुच्छायोनिसोमन-सिकारेसुयेव योगं करोथा" ति वत्वा भिक्खाचारवेलायं पारुपित्वा अत्तद्वादसमा गामद्वारे निग्रोधमूले अट्ठासि। रुक्खे अधिवत्था देवता द्वादसन्नम्पि भिक्खुनीनं पिण्डपातं दत्वा "अय्ये अञ्ञत्थ मा गच्छथ, निच्चं इधेव एथा" ति आह। थेरिया पन कनिट्ठभाता नागत्थेरो नाम अत्थि, सो "महन्तं भयं, न सक्का यापेतुं, परतीरं गमिस्सामी" ति अत्तद्वादसमो अत्तनो वसनट्ठाना निक्खन्तो "थेरिं दिस्वा गमिस्सामी"-ति भातरगामं आगतो। थेरी "थेरा आगता" ति सुत्वा तेसं सन्तिकं गन्त्वा "किं अय्या" ति पुच्छि। सो तं पवत्तिं आचिक्खि। सा "अज्ज एकदिवसं विहारे वसित्वा स्वेव गमिस्सथा" ति आह। थेरा विहारं आगमंसु।

थेरी पुनदिवसे रुक्खमूले पिण्डाय चरित्वा थेरं उपसङ्कमित्वा "इमं पिण्डपातं परिभुञ्जथा" ति आह। थेरो "वट्टिस्सति थेरी" ति वत्वा तुण्ही अट्ठासि। धम्मिको तात पिण्डपातो, कुक्कुच्चं अकत्वा परिभुञ्जथाति। वट्टिस्सति थेरीति। सा पत्तं गहेत्वा आकासे खिपि। पत्तो आकासे अट्ठासि। थेरो "सत्ततालमत्ते ठितम्पि भिक्खुनीभत्तमेव थेरी" ति वत्वा "भयं नाम सब्बकालं न होति, भये वूपसन्ते अरियवंसं कथयमानो 'भो पिण्डपातिक भिक्खुनीभत्तं भुञ्जित्वा वीतिनामयित्था' ति चित्तेन अनुवदियमानो सन्थम्भितुं न सक्खिस्सामि, अप्पमत्ता होथ थेरियो' ति मग्गं आरुहि। रुक्खदेवतापि "सचे थेरो थेरिया हत्थतो पिण्डपातं परिभुञ्जिस्सति, न नं निवत्तेस्सामि, सचे न परिभुञ्जिस्सति, निवत्तेस्सामी' ति चिन्तयमाना ठत्वा थेरस्स गमनं दिस्वा रुक्खा ओरुय्ह" पत्तं भन्ते देथा" ति पत्तं गहेत्वा थेरं रुक्खमूलंयेव आनेत्वा आसनं पञ्ञपेत्वा पिण्डपातं दत्वा कतभत्तकिच्चं पटिञ्ञं कारेत्वा द्वादस B. 464 भिक्खुनियो द्वादस च भिक्खू सत्त वस्सानि उपट्ठहि। इदं **देवता उस्सुक्कं आपज्जन्ती**ति एत्थ वत्थु। तत्र हि थेरी सारणीयधम्मपूरिका अहोसि।

नत्थि एतेसं खण्डं ति **अखण्डानि**, तं पन नेसं खण्डं दस्सेतुं "**यस्सा**" ति आदि वुत्तं। तत्थ उपसम्पन्नसीलानं उद्देसक्कमेन आदिअन्ता वेदितब्बा। तेनाह "**सत्तसू**"-तिआदि। अनुपसम्पन्नसीलानं पन समादानक्कमेनपि आदिअन्ता लब्भन्ति। परियन्ते **छिन्नसाटको विया** ति वत्थन्ते[1] दसन्ते वा छिन्नवत्थं विय। विसदिसुदाहरणञ्चेतं "अखण्डानी"ति इमस्स अधिकतत्ता। एवं सेसानिपि उदाहरणानि। **खण्डं** ति खण्डवन्तं, खण्डितं वा। **छिद्दं** ति आदीसुपि एसेव नयो। विसभागवण्णेन गावी

1. तत्रन्ते-(स्या)

वियाति सम्बन्धो। विसभागवण्णेन उपड्ढं ततियभागं वा सम्भिन्नवण्णं **सबलं**, विसभागवण्णेहेव पन बिन्दूहि अन्तरन्तरा विमिस्सं **कम्मासं**। अयं इमेसं विसेसो।

भुजिस्सभावकरणतोति तण्हादासब्यतो मोचेत्वा भुजिस्सभावकरणतो। सीलस्स च तण्हादासब्यतो मोचनं विवट्टूपनिस्सयभावापादनं, तेनस्स विवट्टूपनिस्सयता दस्सिता। "भुजिस्सभावकरणतो" ति च इमिना भुजिस्सकरानि **भुजिस्सानी**ति उत्तरपद-लोपेनायं निद्देसो ति दस्सेति। यस्मा च तंसमङ्गीपुग्गलो सेरी सयंवसी भुजिस्सो नाम होति, तस्मापि भुजिस्सानि। सुपरिसुद्धभावेन पासंसत्ता **विञ्ञुपसत्थानि**। अविञ्ञूनं पसंसाय अप्पमाणभावतो विञ्ञूगहणं कतं। **तण्हादिट्ठीहि अपरामट्ठत्ता** ति "इमिनाहं सीलेन देवो वा भविस्सामि देवञ्ञतरो वा" ति तण्हापरामासेन "इमिनाहं सीलेन देवो हुत्वा तत्थ निच्चो धुवो सस्सतो भविस्सामी"ति दिट्ठिपरामासेन च अपरामट्ठत्ता। अथ वा "अयं ते सीलेसु दोसो" ति चतूसु विपत्तीसु यं वा तं वा विपत्तिं दस्सेत्वा "इमं नाम त्वं आपन्नपुब्बो" ति केनचि परामट्ठुं अनुद्धंसेतुं असक्कुणेय्यत्ता **अपरामट्ठानी**ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो। सीलं नाम अविप्पटि-सारादिपारम्परियेन[1] यावदेव समाधिसम्पादनत्थं ति आह "**समाधिसंवत्तनिकानी**"ति। समाधिसंवत्तनप्पयोजनानि **समाधिसंवत्तनिकानि**।

समानभावो सामञ्ञं, परिपुण्णचतुपारिसुद्धिभावेन मज्झे भिन्नसुवण्णस्स विय भेदाभावतो सीलेन सामञ्ञं सीलसामञ्ञं, तं गतो उपगतो ति "**सीलसामञ्ञगतो**"। तेनाह "**समानभावूपगतसीलो**" ति, सीलसम्पत्तिया समानभावं उपगतसीलो सभाग-वुत्तिकोति अत्थो। सोतापन्नादीनञ्हि सीलं समुद्दन्तरेपि देवलोकेपि वसन्तानं अञ्ञेसं सोतापन्नादीनं सीलेन समानमेव होति, नत्थि मग्गसीले नानत्तं। कामञ्हि पुथुज्जनानम्पि चतुपारिसुद्धिसीले नानत्तं न सिया, तं पन न एकन्तिकं ति इध नाधिप्पेतं, मग्गसीलं पन एकन्तिकं नियतभावतोति तमेव सन्धाय "**यानि तानि सीलानी**" ति आदि वुत्तं। B. 465

यायं ति या अयं मय्हञ्चेव तुम्हाकञ्च पच्चक्खभूता। दिट्ठीति मग्गसम्मादिट्ठि। **निद्दोसा** ति निद्धुतदोसा, समुच्छिन्नरागादिपापधम्मा ति अत्थो। **निय्याती**ति वट्टदुक्खतो निस्सरति निगच्छति। सयं नियन्तीयेव हि तंमग्गसमङ्गीपुग्गलं वट्टदुक्खतो निय्यापेतीति वुच्चति। या सत्थु अनुसिट्ठि, तं करोतीति **तक्करो**, तस्स, यथानुसिट्ठं पटिपज्जनकस्साति अत्थो। **दिट्ठिसामञ्ञगतो** ति सच्चसम्पटिवेधेन समान-दिट्ठिभावं उपगतो।

कतिपुच्छावारवण्णना निट्ठिता।

छआपत्तिसमुट्ठानवारकथावण्णना

२७६॥ **पठमेन आपत्तिसमुट्ठानेना**ति आदि सब्बं उद्देसनिद्देसादिवसेन पवत्तपाळिं अनुसारेनेव सक्का विञ्ञातुं।

---

1. अविप्पटिसारादिपारपरिचयेन (स्या)

B. 466

समथभेद

अधिकरणपरियायवारकथावण्णना

२९३॥ लोभो पुब्बङ्गमो ति आदीसु पन लोभहेतु विवदनतो "लोभो पुब्बङ्गमो" ति वुत्तं । एवं सेसेसुपि । **ठानानी**ति कारणानि । तिट्ठन्ति एत्थाति ठानं । के तिट्ठन्ति ? विवादाधिकरणादयो । वसन्ति एत्थाति वत्थु । भवन्ति एत्थाति भूमि । कुसलाकुसलाब्याकतचित्तसमङ्गिनो विवदनतो **"नव हेतु" ति** वुत्तं । **द्वादस मूलानी**ति "कोधनो होति उपनाही" ति आदीनि द्वादस मूलानि ।

२९४-२९५॥ इमानेव द्वादस कायवाचाहि सद्धिं **"चुद्दस मूलानी"** ति वुत्तानि । **सत्त आपत्तिक्खन्धा ठानानी**ति एत्थ आपत्तिं आपज्जित्वा पटिच्छादेन्तस्स या आपत्ति, तस्सा पुब्बे आपन्ना आपत्तियो ठानानीति वेदितब्बं । "नत्थि आपत्ताधिकरणं कुसलं" ति वचनतो आपत्ताधिकरणे अकुसलाब्याकतवसेन छ हेतू वुत्ता । कुसलचित्तं पन अङ्गं होति, न हेतु ।

२९६॥ **चत्तारि कम्मानि ठानानी**ति एत्थ "एवं कत्तब्बं" ति इतिकत्तब्बता-दस्सनवसेन पवत्तपाळि **कम्मं** नाम, यथाठितपाळिवसेन करोन्तानं किरिया **किच्चाधि-करणं** नाम । ञत्तिञत्तिदुतियञत्तिचतुत्थकम्मानि ञत्तितो जायन्ति, अपलोकनकम्मं अपलोकनतोवाति आह "ञत्तितो **वा अपलोकनतो वा**" ति । किच्चाधिकरणं एकेन समथेन **सम्मति**, सम्पज्जतीति अत्थो । तेहि समेतब्बत्ता "विवादाधिकरणस्स साधारणा" ति वुत्तं ।

तब्भागियवारकथावण्णना

२९८॥ **विवादाधिकरणस्स तब्भागिया** ति विवादाधिकरणस्स वूपसमतो तप्पक्खिका ।

समथा समथस्स साधारणवारकथावण्णना

२९९॥ एकं अधिकरणं सब्बे समथा एकतो हुत्वा समेतुं सक्कोन्ति न सक्कोन्तीति B. 467 पुच्छन्तो **"समथा समथस्स साधारणा, समथा समथस्स असाधारणा"** ति आह । येभुय्यसिकाय समनं सम्मुखाविनयं विना न होतीति आह "येभुय्यसिका सम्मुखा विनयस्स साधारणा" ति । सतिविनयादीहि समनस्स येभुय्यसिकाय किच्चं नत्थीति आह **"सतिविनयस्स......पे०.....असाधारणा"** ति । एवं सेसेसुपि । तब्भागियवारेपि एसेव नयो ।

विनयवारकथावण्णना

३०२॥ सब्बेसम्पि समथानं विनयपरियायो लब्भतीति "विनयो **सम्मुखाविनयो**" ति आदिना विनयवारो उद्धटो। **सिया न सम्मुखा विनयो** ति एत्थ सम्मुखाविनयं ठपेत्वा सतिविनयादयो सेससमथा अधिप्पेता। एस नयो सेसेसुपि।

कुसलवारकथावण्णना

३०३॥ संघस्स सम्मुखा पटिञ्ञाते तं[1] पटिजाननं संघसम्मुखता नाम। तस्स पटिजाननचित्तं सन्धाय "**सम्मुखाविनयो कुसलो** ति आदि वुत्तं ति वदन्ति। **नत्थि सम्मुखाविनयो अकुसलो** ति धम्मविनयपुग्गलसम्मुखताहि तिवङ्गिको सम्मुखाविनयो एतेहि विना नत्थि। तत्थ कुसलचित्तेहि करणकाले कुसलो, अरहन्तेहि करणकाले अब्याकतो। एतेसं संघसम्मुखतादीनं अकुसलपटिपक्खत्ता अकुसलस्स सम्भवो नत्थि, तस्मा "नत्थि सम्मुखाविनयो अकुसलो" ति वुत्तं। "येभुय्यसिका अधम्मवादीहि वूपसमनकाले[2], धम्मवादीनम्पि अधम्मवादिम्हि सलाकग्गाहापके जाते अकुसला। सतिविनयो अनरहतो सञ्चिच्च सतिविनयदाने अकुसलो। समूळ्हविनयो अनुम्मत्तकस्स दाने, पटिञ्ञातकरणं मूळ्हस्स अजानतो पटिञ्ञाय करणे, तस्सपापियसिका सुद्धस्स करणे, तिणवत्थारकं महाकलहे सञ्चिच्च करणे च अकुसलं। सब्बत्थ अरहतो वसेनेव अब्याकतं" ति सब्बमेतं **गण्ठिपदेसु** वुत्तं।

समथवार विस्सज्जनावारकथावण्णना

३०४-३०५॥ **यत्थ येभुय्यसिका लब्भति, तत्थ सम्मुखाविनयो लब्भती**तिआदि पुच्छा। **यस्मिं समये सम्मुखाविनयेन चा**ति आदि तस्सा विस्सज्जनं, यस्मिं समये सम्मुखाविनयेन च येभुय्यसिकाय च अधिकरणं वूपसम्मति, तस्मिं समये यत्थ येभुय्यसिका लब्भति, तत्थ सम्मुखाविनयो लब्भतीति एवं सब्बत्थ सम्बन्धो। **यत्थ पटिञ्ञातकरणं लब्भति, तत्थ सम्मुखाविनयो लब्भती**ति एत्थ एकं वा द्वे वा बहू वा भिक्खू "इमं नाम आपत्तिं आपन्नोसी" ति पुच्छिते सति "आमा" ति पटिजानने द्वेपि पटिञ्ञातकरणसम्मुखाविनया लब्भन्ति। तत्थ "संघसम्मुखता धम्मविनयपुग्गलसम्मुखता" ति एवं वुत्तसम्मुखाविनये संघस्स पुरतो पटिञ्ञातं चे, संघसम्मुखता। तत्थेव देसितं चे, धम्मविनयसम्मुखतायोपि लद्धा होन्ति। अथ विवदन्ता अञ्ञमञ्ञं पटिजानन्ति चे, पुग्गलसम्मुखता। तस्सेव सन्तिके देसितं चे, धम्मविनयसम्मुखतायोपि लद्धा होन्ति। एकस्सेव वा एकस्स सन्तिके आपत्तिदेसनकाले "पस्ससि, B. 468

1. पटिञ्ञा तेसं (क)।
2. अधम्मवादीहि, वूपसमनकाले, धम्मवादीहि वूपसमनकाले (स्या)।

पस्सामी"ति वुत्ते तत्थ धम्मविनयपुग्गलसम्मुखतासञ्ञितो सम्मुखाविनयो च पटिञ्ञातकरणञ्च लद्धं होति ।

संसट्ठवारकथावण्णना

३०६॥ अधिकरणानं वूपसमोव **समथो** नाम, तस्मा अधिकरणेन विना समथा नत्थीति आह **"मा हेवन्तिस्स वचनीयो....पे०....विनिब्भुजित्वा नानाकरणं पञ्ञापेतुं"** ति ।

समथाधिकरणवारकथावण्णना

३०९-३१०॥ **समथा समथेहि सम्मन्ती**ति आदि पुच्छा । सिया समथा समथेहि सम्मन्तीति आदि विस्सज्जनं । **तत्थ समथा समथेहि सम्मन्ती**ति एत्थ सम्मन्तीति सम्पज्जन्ति, अधिकरणा वा[1] पन सम्मन्ति वूपसमं गच्छन्ति, तस्मा **येभुय्यसिका सम्मुखाविनयेन सम्मती**ति एत्थ सम्मुखाविनयेन सद्धिं येभुय्यसिका सम्पज्जति, न सतिविनयादीहि सद्धिं तेसं तस्सा अनुपकारत्ता ति एवमत्थो दट्ठब्बो ।

३११॥ "सम्मुखाविनयो विवादाधिकरणेन सम्मती" ति पाठो । "सम्मुखाविनयो न B. 469 केनचि सम्मती" ति हि अवसाने वुत्तत्ता सम्मुखाविनयो सयं समथेन वा अधिकरणेन वा समेतब्बो न होति ।

३१३॥ **विवादाधिकरणं**.....पे०.....**किच्चाधिकरणेन सम्मती**ति एत्थ "सुणातु मे भन्ते....पे०....पठमं सलाकं निक्खिपामी"ति एवं विवादाधिकरणं किच्चाधिकरणेन सम्मतीति दट्ठब्बं ।

समुट्ठापनवारकथावण्णना

३१४॥ **विवादाधिकरणं न कतमं अधिकरणं समुट्ठापेती** ति "नायं धम्मो" ति वुत्तमत्तेनेव किञ्चि अधिकरणं न समुट्ठापेतीति अत्थो ।

भजतिवारकथावण्णना

३१८-९॥ **कतमं अधिकरणं परियापन्नं** ति कतमाधिकरणपरियापन्नं, अयमेव वा पाठो । **विवादाधिकरणं विवादाधिकरणं भजती**ति पठमुप्पन्नविवादं पच्छा उप्पन्नो भजति । **विवादाधिकरणं द्वे समथे भजती**ति "मं वूपसमेतुं समत्था तुम्हे" ति वदन्तं विय भजति । **द्वीहि समथेहि सङ्गहितं** ति "मयं तं वूपसमेस्सामा" ति वदन्तेहि विय द्वीहि समथेहि सङ्गहितं ।

---

1. अधिकरणेन (क) ।

खन्धकपुच्छावार

पुच्छाविस्सज्जनावण्णना

B. 70

३२०॥ **निदानेन च निद्देसेन च सद्धिं** ति एत्थ **निदानेना** ति सिक्खापद-पञ्ञत्तिदेससङ्खातेन निदानेन। **निद्देसेना** ति पुग्गलादिनिद्देसेन। उभयेनपि तस्स तस्स सिक्खापदस्स वत्थु दस्सितं, तस्मा वत्थुना सद्धिं खन्धकं पुच्छिस्समीति अयमेत्थ अत्थो। **तत्था** ति तस्मिं उपसम्पदक्खन्धके। **उत्तमानि पदानि वुत्तानीति** न भिक्खवे ऊनवीसतिवस्सो पुग्गलो उपसम्पादेतब्बो" ति आदिना[1] नयेन उत्तमपदानि वुत्तानि। **चम्मसंयुत्ते** ति चम्मक्खन्धके।

---

1. वि-३-१०९-१२९-पिट्ठेसु।

B. 471

एकुत्तरिकनय

एककवारवण्णना

३२१॥ **मूलविसुद्धिया अन्तरापत्ती**ति अन्तरापत्तिं आपज्जित्वा मूलायपटिकस्सनं कत्वा ठितेन आपन्ना । "**अग्घविसुद्धिया अन्तरापत्ती**ति सम्बहुला आपत्तियो आपज्जित्वा तासु सब्बचिरपटिच्छन्नवसेन अग्घसमोधानं गहेत्वा वसन्तेन आपन्नापत्ती" ति गण्ठिपदेसु वुत्तं । **सउस्साहेनेव चित्तेना**ति पुनपि आपज्जिस्सामी" ति सउस्साहेनेव चित्तेन । भिक्खुनीनं अट्ठवत्थुकाय वसेन चेतं वुत्तं । तेनेवाह "**अट्ठमे वत्थुस्मिं भिक्खुनिया पाराजिकमेव होती**"ति । "**धम्मिकस्स पटिस्सवस्स असच्चापने**"ति वुत्तत्ता अधम्मिकपटिस्सवस्स विसंवादे दुक्कटं न होति । "तुम्हे विब्भमथा" ति हि वुत्ते सुद्धचित्तो "साधू" ति पटिस्सुणित्वा सचे न विब्भमति, अनापत्ति । एवं सब्बत्थ । **पञ्चदससु धम्मेसू**ति "कालेन वक्खामि, नो अकालेना" ति आदिना वुत्तपञ्चदसधम्मेसु । आपत्तिं आपज्जितुं भब्बताय **भब्बापत्तिका** ।

एककवारवण्णना निट्ठिता ।

दुकवारवण्णना

३२२॥ दुकेसु **निदहने** ति आतपे अतिचिरं ठपेत्वा निदहने । वत्थुसभागं देसेन्तो **देसेन्तो आपज्जति,** आपन्नं आपत्तिं न देसेस्सामीति धुरं निक्खिपन्तो **न देसेन्तो आपज्जति** । रोमजनपदे जातं **रोमकं** । **पक्कालकं**[1] ति यवक्खारं । अनुञ्ञातलोणत्ता लोणानिपि दुकेसु वुत्तानि ।

दुकवारवण्णना निट्ठिता ।

B. 472

तिकवारवण्णना

३२३॥ तिकेसु **वचीसम्पयुत्तं कायकिरियं कत्वा** ति कायेन निपच्चकारं कत्वा । मुखालम्बनकरणादिभेदो ति **मुखभेरिवादनादिप्पभेदो** । यस्स सिक्खापदस्स वीतिक्कमे- कायसमुट्ठाना आपत्तियो, तं कायद्वारे पञ्ञत्तसिक्खापदं । **उपघातेती**ति विनासेति ।

---

1. पक्खल्लकं ति-(स्या.) ।
2. निसज्जाकारं (क.) ।

न आदातब्बं ति "इमस्मा विहारा परम्पि मा निक्खम, विनयधरानं वा सन्तिकं आगच्छ विनिच्छयं दातुं" ति वुत्ते तस्स वचनं न गहेतब्बं ति अत्थो ।

अकुसलानि चेव मूलानि चा ति अकोसल्लसम्भूतट्ठेन एकन्ता कुसलभावतो अकुसलानि, अत्तना सम्पयुत्तधम्मानं सुप्पतिट्ठितभावसाधनतो मूलानि, न अकुसल-भावसाधनतो । न हि मूलतो अकुसलानं अकुसलभावो, कुसलादीनं वा कुसलादि-भावो । तथा च सति मोमूहचित्तद्वयमोहस्स अकुसलभावो न सिया ।

दुट्ठु चरितानीति पच्चयतो सम्पयुत्तधम्मतो पवत्तिआकारतो च न सुट्ठु असम्मापवत्तितानि । **विरूपानी**ति बीभच्छानि सम्पति आयतिञ्च अनिट्ठरूपत्ता । **सुट्ठु चरितानी**तिआदीसु वुत्तविपरियायेन अत्थो वेदितब्बो । द्वेपि चेते तिका पण्णत्तिया वा कम्मपथेहि वा कथेतब्बा । पण्णत्तिया ताव कायद्वारे पञ्ञत्त-सिक्खापदस्स वीतिक्कमो कायदुच्चरितं, अवीतिक्कमो कायसुचरितं । वचीद्वारे पञ्ञत्तसिक्खापदस्स वीतिक्कमो वचीदुच्चरितं, अवीतिक्कमो वीचसुचरितं । उभयत्थ पञ्ञत्तसिक्खापदस्स वीतिक्कमो मनोदुच्चरितं मनोद्वारे पञ्ञत्तसिक्खापदस्स अभावतो । तयिदं द्वारद्वये अकिरियसमुट्ठानाय[1] आपत्तिया वसेन वेदितब्बं । यथावुत्ताय आपत्तिया अवीतिक्कमोव मनोसुचरितं । अयं पण्णत्तिकथा ।

पाणातिपातादयो पन तिस्सो चेतना कायद्वारे वचीद्वारेपि उपन्ना कायदुच्चरितं द्वारन्तरे उप्पन्नस्सपि कम्मस्स सनामापरिच्चागतो येभुय्यवुत्तिया तब्बहुलवुत्तिया च । तेनाहु अट्ठकथाचरिया–

"द्वारे चरन्ति कम्मानि, न द्वारा द्वारचारिनो ।
तस्मा द्वारेहि कम्मानि, अञ्ञमञ्ञं ववत्थिता"ति[2] ।

तथा चतस्सो मुसावादादिचेतना कायद्वारेपि वचीद्वारेपि उप्पन्ना वचीदुच्चरितं, B. 473 अभिज्झा ब्यापादो मिच्छादिट्ठीति तयो मनोकम्मभूताय चेतनाय सम्पयुत्तधम्मा मनोदुच्चरितं, कायवचीकम्मभूताय पन चेतनाय सम्पयुत्ता अभिज्झादयो तं तं पक्खिका वा होन्ति अब्बोहारिका वा । पाणातिपातादीहि विरमन्तस्स उप्पन्ना तिस्सो चेतनापि विरतियोपि कायसुचरितं कायिकस्स वीतिक्कमस्स अकरणवसेन पवत्त-नतो । कायेन पन सिक्खापदानं समादियमाने सीलस्स कायसुचरितभावे वत्तब्बमेव नत्थि । मुसावादादीहि विरमन्तस्स चतस्सो चेतनापि विरतियोपि वचीसुचरितं

1. किरियसमुट्ठानाय (स्या) ।
2. अभि-ट्ठ-१-१२६-पिट्ठे ।

वाचसिकस्स वीतिक्कमस्स अकरणवसेन पवत्तनतो । अनभिज्झा अब्यापादो सम्मादिट्ठीति तयो चेतनासम्पयुत्तधम्मा मनोसुचरितं ति अयं कम्मपथकथा ।

तिकवारवण्णना निट्ठिता ।

चतुक्कवारवण्णना

३२४॥ चतुक्केसु **अनरियवोहारा** ति अनरियानं लामकानं वोहारा संवोहारा अभिलापवाचा । **अरियवोहारा** ति अरियानं सप्पुरिसानं वोहारा । **दिट्ठवादिता** ति "दिट्ठं मया" ति एवंवादिता । एत्थ च तं तं समुट्ठापकचेतनावसेन अत्थो वेदितब्बो ।

पठमकप्पिकेसु पठमं पुरिसलिङ्गमेव उप्पज्जतीति आह, "**पठमं उप्पन्नवसेना**"ति । **पुरिमं पुरिसलिङ्गं पजहती**ति यथावुत्तेनत्थेन पुब्बङ्गमभावतो पुरिमसङ्खातं पुरिसलिङ्गं जहति । **सतं तिंसञ्च सिक्खापदानीति** तिंसाधिकानि सतं सिक्खापदानि ।

भिक्खुस्स च भिक्खुनिया च चतूसु पाराजिकेसूति साधारणेसुयेव चतूसु पाराजिकेसु । **पठमो पञ्हो** ति "अत्थि वत्थुनानत्तता, नो आपत्तिनानत्तता" ति अयं पञ्हो । "अत्थि आपत्तिसभागता, नो वत्थुसभागता" ति अयं इध दुतियो नाम ।

अनापत्तिवस्सच्छेदस्सा ति नत्थि एतस्मिं वस्सच्छेदे आपत्तीति अनापत्ति-
B. 474 वस्सच्छेदो, तस्स, अनापत्तिकस्स वस्सच्छेदस्साति अत्थो । **मन्ताभासा** ति मतिया उपपरिक्खित्वा भासनतो असम्फप्पलापवाचा इध "मन्ताभासा" ति वुत्ता ।

नवमभिक्खुनितो पट्ठाय उपज्झायापि अभिवादनारहा नो पच्चुट्ठानारहाति यस्मा "अनुजानामि भिक्खवे भत्तग्गे अट्ठन्नं भिक्खुनीनं यथावुड्ढं अवसेसानं यथागतिकं" ति वदन्तेन भगवता भत्तग्गे आदितो पट्ठाय अट्ठन्नंयेव भिक्खुनीनं यथावुड्ढं अनुञ्ञातं, अवसेसानं आगतपटिपाटिया[1], तस्मा नवमभिक्खुनितो पट्ठाय सचे उपज्झायापि भिक्खुनी पच्छा आगच्छति, न पच्चुट्ठानारहा, यथानिसिन्नाहियेव सीसं उक्खिपित्वा अभिवादेतब्बत्ता अभिवादनारहा । आदितो निसिन्नासु पन अट्ठसु या अब्भन्तरिमा अञ्ञा वुड्ढतरा आगच्छति, सा अत्तनो नवकतरं वुट्ठापेत्वा निसीदितुं लभति । तस्मा सा ताहि अट्ठहि भिक्खुनीहि पच्चुट्ठानारहा । या पन अट्ठहिपि नवकतरा, सा सचेपि सट्ठिवस्सा होति, आगतपटिपाटियाव निसीदितुं लभति ।

इध न कप्पन्तीति वदन्तोति पच्चन्तिमजनपदेसु ठत्वा "इध न कप्पन्ती" ति वदन्तो विनयातिसारदुक्कटं आपज्जति । कप्पियञ्हि "न कप्पती"ति वदन्तो पञ्ञत्तं समुच्छिन्दति नाम । **इध कप्पन्ती**ति आदीसु पि एसेव नयो ।

चतुक्कवारवण्णना निट्ठिता ।

---

1. आगतपटिपाटि (स्या) ।

पञ्चकवारवण्णना

३२५॥ पञ्चकेसु "निमन्तितो सभत्तो समानो सन्तं भिक्खुं अनापुच्छा" ति[1] वचनतो अकप्पियनिमन्तनं सादियन्तस्सेव अनामन्तचारो न वट्टतीति **"पिण्डपातिकस्स कप्पन्ती"**ति वुत्तं । गणभोजनादीसुपि एसेव नयो । **अधिट्ठहित्वा भोजनं** ति गिलानसमयो" ति आदिना आभोगं कत्वा भोजनं । **अविकप्पना** ति "मय्हं भत्तपच्चासं इत्थन्नामस्स दम्मी" ति एवं अविकप्पना ।

अयसतो वा गरहतो वा ति एत्थ परम्मुखा अगुणवचनं **अयसो** । सम्मुखा गरहा । वियसतीति ब्यसनं । हितसुखं खिपति विद्धंसेतीति अत्थो । ञातीनं ब्यसनं B. 475 **ञातिब्यसनं**, चोररोगभयादीहि ञातिविनासोति अत्थो । भोगानं ब्यसनं **भोगब्यसनं, राजचोरादिवसेन भोगविनासोति अत्थो । रोगो एव ब्यसनं रोगब्यसनं**। रोगो हि आरोग्यं ब्यसति विनासेतीति ब्यसनं । **सीलस्स ब्यसनं** सीलब्यसनं, दुस्सीळ्यस्सेतं नामं । सम्मादिट्ठिं विनासयमाना उप्पन्ना दिट्ठियेव ब्यसनं दिट्ठिब्यसनं । ञाति**सम्पदा**ति ञातीनं सम्पदा पारिपूरि बहुभावो । **भोगसम्पदाय**पि एसेव नयो । आरोग्यस्स सम्पदा आरोग्यसम्पदा । पारिपूरि दीघरत्तं अरोगता । **सीलदिट्ठिसम्पदा**सुपि एसेव नयो ।

वत्तं परिच्छिन्दीति तस्मिं दिवसे कातब्बवत्तं निट्ठापेसि । **अट्ठ कप्पे अनुस्सरी**तिआदिना तस्मिं खणे झानं निब्बत्तेत्वा पुब्बेनिवासञाणं निब्बत्तेसीति दीपेति । **ञत्तिया कम्मप्पत्तो हुत्वा** ति ञत्तिया ठपिताय अनुस्सावनकम्मप्पत्तो हुत्वा ति अत्थो ।

मन्दत्ता मोमूहत्ता ति नेव समादानं जानाति, न आनिसंसं, अत्तनो पन मन्दत्ता मोमूहत्ता अञ्ञाणेनेव आरञ्ञिको होति । पापिच्छो इच्छापकतो ति "अरञ्ञे मे विहरन्तस्स "अयं आरञ्ञिको ति चतुपच्चयसक्कारं करिस्सन्ति, अयं भिक्खु लज्जी पविवित्तो'ति आदीहि च गुणेहि सम्भावेस्सन्ती" ति एवं पापिकाय इच्छाय ठत्वा ताय एव इच्छाय अभिभूतो हुत्वा आरञ्ञिको होतीति अत्थो । तेनाह **"अरञ्ञवासेन पच्चयलाभं पत्थयमानो"** ति । उम्मादवसेन अरञ्ञं पविसित्वा विहरन्तो **उम्मादा चित्तक्खेपा आरञ्ञिको** नाम होति । वण्णितं ति इदं आरञ्ञिकङ्गं नाम बुद्धेहि बुद्धसावकेहि च वण्णितं पसत्थं ति आरञ्ञिको होति ।

पञ्चकवारवण्णना निट्ठिता ।

----

1. वि-२-१३२, १३३-पिट्ठेसु ।

छक्कवारवण्णना

३२६॥ छक्केसु **छब्बस्सपरमता धारेतब्बं** ति पदभाजनं दस्सितं । सेसं उत्तानमेव ।

छक्कवारवण्णना निट्ठिता ।

B. 476

सत्तकवारवण्णना

३२७॥ सत्तकेसु **छक्के वुत्तानियेव सत्तकवसेन योजेतब्बानी**ति छक्के वुत्तचुद्दस-परमानि द्विधा कत्वा द्विन्नं सत्तकानं वसेन योजेतब्बानि ।

आपत्तिं जानातीति आपत्तिंयेव "आपत्ती" ति जानाति । सेसपदेसुपि एसेव नयो । **आभिचेतसिकानं** ति एत्थ[1] **अभिचेतो**ति । पाकतिककामावचरचित्तेहि सुन्दरताय पटिपक्खतो विसुद्धत्ता च अभिक्कन्तं विसुद्धचित्तं वुच्चति, उपचारज्झानचित्तस्सेतं अधिवचनं । अभिचेतसि जातानि **आभिचेतसिकानि,** अभिचेतोसन्निस्सितानीति वा **आभिचेतसिकानि । दिट्ठधम्मसुखविहारानं** ति दिट्ठधम्मे सुखविहारानं । **दिट्ठधम्मो** ति पच्चक्खो अत्तभावो वुच्चति, तत्थ सुखविहारभूतानं ति अत्थो । रूपावचरज्झा–नानमेतं अधिवचनं । तानि हि अप्पेत्वा निसिन्ना झायिनो इमस्मिञ्ञेव अत्तभावे असंकिलिट्ठं नेक्खम्मसुखं विन्दन्ति, तस्मा "दिट्ठधम्मसुखविहारानी"ति वुच्चन्ति । **निकामलाभी**ति निकामेन लाभी, अत्तनो इच्छावसेन लाभी, इच्छितिच्छितक्खणे समापज्जितुं समत्थोति वुत्तं होति । अकिच्छलाभीति सुखेनेव पच्चनीकधम्मे विक्खम्भेत्वा समापज्जितुं समत्थोति वुत्तं होति । **अकसिरलाभी**ति अकसिरानं लाभी विपुलानं, यथापरिच्छेदेनेव वुट्ठातुं समत्थोति वुत्तं होति । एकच्चो हि लाभीयेव होति, न पन सक्कोति इच्छितिच्छितक्खणे समापज्जितुं । एकच्चो सक्कोति तथा समापज्जितुं, पारिपन्थिके पन किच्छेन विक्खम्भेति । एकच्चो तथा च समापज्जति, पारिपन्थिके च अकिच्छेनेव विक्खम्भेति, न सक्कोति कालमाननाळिकयन्तं विय यथापरिच्छेदेयेव वुट्ठातुं ।

आसवानं खया ति अरहत्तमग्गेन सब्बकिलेसानं खया । अनासवं ति आसव-विरहितं । **चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं** ति एत्थ चेतो–वचनेन अरहत्तफलसम्पयुत्तो समाधि, पञ्ञा–वचनेन तंसम्पयुत्ता च पञ्ञा वुत्ता । तत्थ च समाधि रागतो विमुत्तत्ता चेतोविमुत्ति, पञ्ञा अविज्जाय विमुत्तत्ता पञ्ञाविमुत्तीति वेदितब्बा ।

---

1. अं-ट्ठ-३-२६७, म-ट्ठ-१-१६५-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

वुत्तञ्हेतं भगवता "यो हिस्स भिक्खवे समाधि, तदस्स समाधिन्द्रियं[1]। या हिस्स भिक्खवे पञ्ञा, तदस्स पञ्ञिन्द्रियं[2]। इति खो भिक्खवे रागविरागा चेतोविमुत्ति B. 477 अविज्जाविरागा पञ्ञाविमुत्ती"ति[3]। अपिचेत्थ समथफलं चेतोविमुत्ति, विपस्सनाफलं पञ्ञाविमुत्तीति वेदितब्बोति। **दिट्ठेव धम्मे** ति इमस्मिंयेव अत्तभावे। सयं **अभिञ्ञा सच्छिकत्वा** ति अत्तनायेव[4] पञ्ञाय पच्चक्खं कत्वा, अपरप्पच्चयेन ञत्वा ति अत्थो। सुतमयञाणादिना विय परप्पच्चयतं नयग्गाहञ्च मुञ्चित्वा परतोघोसानुगत-भावनाधिगमभूताय अत्तनोयेव पञ्ञाय पच्चक्खं कत्वा, न सयम्भूञाणभूतायाति अधिप्पायो। **उपसम्पज्ज विहरतीति** पापुणित्वा सम्पादेत्वा विहरति।

सत्तकवारवण्णना निट्ठिता।

अट्ठकवारवण्णना

३२८॥ अट्ठकेसु अट्ठानिसंसं सम्पस्समानेना ति–

"इध[5] पन भिक्खवे भिक्खु आपत्तिं आपन्नो होति, सो तस्सा आपत्तिया अनापत्तिदिट्ठि होति, अञ्ञे भिक्खू तस्सा आपत्तिया आपत्तिदिट्ठिनो होन्ति, ते चे भिक्खवे भिक्खू तं भिक्खुं एवं जानन्ति 'अयं खो आयस्मा बहुस्सुतो आगतागमो धम्मधरो विनयधरो मातिकाधरो पण्डितो ब्यत्तो मेधावी लज्जी कुक्कुच्चको सिक्खाकामो, सचे मयं इमं भिक्खुं आपत्तिया अदस्सने उक्खिपिस्साम, न मयं इमिना भिक्खुना सद्धिं उपोसथं करिस्साम, विना इमिना भिक्खुना उपोसथं करिस्साम, भविस्सति संघस्स ततो निदानं भण्डनं कलहो विग्गहो विवादो संघभेदो संघराजि संघववत्थानं संघनानाकरणं' ति, भेदगरुकेहि भिक्खवे भिक्खूहि न सो भिक्खु आपत्तिया अदस्सने उक्खिपितब्बो" ति–

आदिना वुत्त अट्ठानिसंसे सम्पस्समानेन। तेन हि सद्धिं उपोसथादिअकरणं आदीनवो भेदाय संवत्तनतो, करणं आनिसंसो सामग्गिया संवत्तनतो। तस्मा एते B. 478 अट्ठानिसंसे सम्पस्समानेन न सो भिक्खु उक्खिपितब्बोति अत्थो।

---

1. सं-३-१९८-पिट्ठे।
2. सं-३-१९५-पिट्ठे।
3. अं-१-६२-पिट्ठे।
4. अत्तनोयेव (स्या)।
5. वि-३-४८२-पिट्ठे।

दुतिय अट्ठकेपि **अट्ठानिसंसे सम्पस्समानेना** ति–

"इध[1] पन भिक्खवे भिक्खु आपत्तिं आपन्नो होति, सो तस्सा आपत्तिया अनापत्तिदिट्ठि होति, अञ्ञे भिक्खू तस्सा आपत्तिया अपत्तिदिट्ठिनो होन्ति, सो चे भिक्खवे भिक्खु ते भिक्खू एवं जानाति 'इमे खो आयस्मन्तो बहुस्सुता आगतागमा धम्मधरा विनयधरा मातिकाधरा पण्डिता ब्यत्ता मेधाविनो लज्जिनो कुक्कुच्चका सिक्खाकामा, नालं ममं वा कारणा अञ्ञेसं वा कारणा छन्दा दोसा मोहा भया अगतिं गन्तुं, सचे मं इमे भिक्खू आपत्तिया अदस्सने उक्खिपिस्सन्ति, न मया सद्धिं उपोसथं करिस्सन्ति, विना मया उपोसथं करिस्सन्ति, भविस्सति संघस्स ततोनिदानं भण्डनं कलहो विग्गहो विवादो संघभेदो संघराजि संघववत्थानं संघनानाकरणं' ति, भेदगरुकेन भिक्खवे भिक्खुना परेसम्पि सद्धाय सा आपत्ति देसेतब्बा" ति–

आदिना वुत्तअट्ठानिसंसे सम्पस्समानेना ति अत्थो

पाळियं आगतेहि सत्तहीति "पुब्बेवस्स होति" मुसा भणिस्सं" ति, भणन्तस्स होति "मुसा भणामी" ति, भणितस्स होति "मुसा मया भणितं" ति विनिधाय दिट्ठिं, विनिधाय खन्तिं, विनिधाय रुचिं, विनिधाय भावं" ति[2] एवमागतेहि सत्तहि ।

अब्रह्मचरियाति[3] असेट्ठचरियतो । **रत्तिं न भुञ्जेय्य विकालभोजनं** ति उपोसथं उपवुत्थो रत्तिभोजनञ्च दिवाविकालभोजनञ्च न भुञ्जेय्य । **मञ्चे छमायं व सयेथ सन्थकेति** कप्पियमञ्चे वा सुधादिपरिकम्मकताय भूमियं वा तिणपण्णपलालादीनि सन्थरित्वा कते सन्थके वा सयेथा ति अत्थो । **एतञ्हि अट्ठङ्गिकमाहुपोसथं** ति एतं पाणातिपातादीनि असमाचरन्तेन उपवुत्थउपोसथं अट्ठहि अङ्गेहि समन्नागतत्ता "अट्ठङ्गिकं" ति वदन्ति ।

B. 479 "अकप्पियकतं होति अप्पटिग्गहितकं" ति आदयो **अट्ठ अनतिरित्ता** नाम । **सप्पि-**आदि अट्ठमे अरुणुग्गमने निस्सग्गियं होति । **अट्ठकवसेन योजेत्वा वेदितब्बानी**ति पुरिमानि अट्ठ एकं अट्ठकं, ततो एकं अपनेत्वा सेसेसुपि एकेकं पक्खिपित्वा ति एवमादिना नयेन अञ्ञानिपि अट्ठकानि कातब्बानीति अत्थो ।

अट्ठकवारवण्णना निट्ठिता ।

---

1. वि-३-४८३-पिट्ठे ।
2. वि-१-१३७-पिट्ठे ।
3. अं-ट्ठ-३-१९९-पिट्ठेपि पस्सितब्बं ।

नवकवारवण्णना

३२९॥ नवकेसु **आघातवत्थूनी**ति[1] आघातकारणानि । **आघातपटिविनयानी**ति आघातस्स पटिविनयकारणानि । **तं कुतेत्थ लब्भा** ति "तं अनत्थचरणं मा अहोसी"ति एतस्मिं पुग्गले कुतो लब्भा केन कारणेन सक्का लद्धुं । "परो नाम परस्स अत्तनो चित्तरुचिया अनत्थं करोती" ति एवं चिन्तेत्वा आघातं पटिविनोदेति । अथ वा सचाहं पटिक्कोपं करेय्यं, तं कोपकरणं एत्थ पुग्गले कुतो लब्भा, केन कारणेन लद्धब्बं निरत्थकभावतो ति अत्थो । कम्मस्सका हि सत्ता, ते कस्स रुचिया दुक्खिता सुखिता वा भवन्ति, तस्मा केवलं तस्मिं मय्हं कुज्झनमत्तमेवाति अधिप्पायो । अथ वा तं कोपकरणं एत्थ पुग्गले कुतो लब्भा परमत्थतो कुज्झितब्बस्स कुज्झनकस्स च अभावतो । सङ्खारमत्तञ्हेतं यदिदं खन्धपञ्चकं यं "सत्तो" ति वुच्चति, ते च सङ्खारा इत्तरकाला खणिका, कस्स को कुज्झती ति अत्थो । "कुतो लाभा" तिपि पाठो, सचाहं एत्थ कोपं करेय्यं, तस्मिं मे कोपकरणे कुतो लाभा, लाभा नाम के सियुं अञ्ञत्र अनत्थुप्पत्तितोति अत्थो । इमस्मिञ्च अत्थे तं ति निपातमत्तमेव होति ।

तण्हं पटिच्चा ति[2] द्वे तण्हा एसनतण्हा एसिततण्हा चा । याय तण्हाय अजपथसङ्कुपथादीनि पटिपज्जित्वा भोगे एसति गवेसति, अयं **एसनतण्हा** नाम । या तेसु एसितेसु गवेसितेसु पटिलद्धेसु तण्हा, अयं **एसिततण्हा** नाम । इध एसिततण्हा दट्ठब्बा । **परियेसना**ति रूपादिआरम्मणपरियेसना । सा हि एसनतण्हाय सति होति । लाभो ति रूपादिआरम्मणप्पटिलाभो । सो हि परियेसनाय सति होति, । विनिच्छयो पन ञाणतण्हादिट्ठिवितक्कवसेन चतुब्बिधो । तत्थ "सुखविनिच्छयं जञ्ञा, सुखविनिच्छयं ञत्वा अज्झत्तं सुखमनुयुञ्जेय्या" ति[3] अयं **ञाणविनिच्छयो** । "विनिच्छयो ति द्वे विनिच्छया तण्हाविनिच्छयो च दिट्ठिविनिच्छयो चा" ति[4] एवं आगतानि अट्ठसत तण्हाविचरितानि **तण्हाविनिच्छयो** । द्वासट्ठि दिट्ठियो दिट्ठि-विनिच्छयो । "छन्दो खो देवानमिन्द वितक्कनिदानो" ति[5] इमस्मिं पन सुत्ते इध **विनिच्छयो** ति वुत्तो **वितक्को**येव आगतो । लाभं लभित्वा हि इट्ठानिट्ठं सुन्दरा-सुन्दरञ्च वितक्केन विनिच्छिनाति "एत्तकं मे रूपारम्मणत्थाय भविस्सति, एत्तकं सद्दारम्मणत्थाय, एत्तकं मय्हं भविस्सति, एत्तकं परस्स, एत्तकं परिभुञ्जिस्सामि, एत्तकं निदहिस्सामी"ति । तेन वुत्तं "**लाभं पटिच्च विनिच्छयो**" ति ।

B. 480

---

1. दी-ट्ठ-३-२२८, अं-ट्ठ-३-२७६-पिट्ठेसुपि पस्सितब्बं ।
2. दी-ट्ठ-२-८९, अं-ट्ठ-३-२७३-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।
3. म-३-२७३-पिट्ठे ।
4. खु-७-२०५-पिट्ठे ।
5. दी-२-२२१-पिट्ठे ।

छन्दरागो ति एवं अकुसलवितक्केन वितक्किते वत्थुस्मिं दुब्बलरागो च बलवरागो च उप्पज्जति । **अज्झोसानं ति** "अहं, ममं" ति बलवसन्निट्ठानं । **परिग्गहो** ति तण्हादिट्ठिवसेन परिग्गहकरणं । मच्छरियं ति परेहि साधारणभावस्स असहनता । तेनेवस्स पोराणा एवं वचनत्थं वदन्ति "इदं अच्छरियं मय्हेव होतु, मा अञ्ञस्स अच्छरियं होतूति पवत्तत्ता मच्छरियं ति वुच्चती"ति । **आरक्खो** ति द्वारपिदहन-मञ्जूसागोपनादिवसेन सुट्ठु रक्खणं । अधि करोतीति **अधिकरणं**, कारणस्सेतं नामं । **आरक्खाधिकरणं** ति भावनपुंसकं, आरक्खहेतूति अत्थो । दण्डादानादीसु परनि-सेधनत्थं दण्डस्स आदानं **दण्डादानं** । एकतोधारादिनो सत्थस्स आदानं **सत्थादानं** । **कलहोति** कायकलहोपि वाचाकलहोपि । पुरिमो पुरिमो विरोधो **विग्गहो**, पच्छिमो पच्छिमो **विवादो** । तुवं तुवं ति अगारववसेन **"तुवं तुवं"** ति वचनं ।

अधिट्ठितकालतो पट्ठाय न विकप्पेतब्बानीति विकप्पेन्तेन अधिट्ठानतो पुब्बे वा B. 481 विकप्पेतब्बं, विजहिताधिट्ठानं वा पच्छा विकप्पेतब्बं । अविजहिताधिट्ठानं पन न विकप्पेतब्बं ति अधिप्पायो । **दुक्कटवसेन वुत्तानी**ति "वग्गं भिक्खुनिसंघं वग्गसञ्ञी ओवदती"ति आदिना[1] नयेन अधम्मकम्मे द्वे नवकानि दुक्कटवसेन वुत्तानि ।

नवकवारवण्णना निट्ठिता

दसकवारवण्णना

३३०॥ दसकेसु नत्थि दिन्नं ति आदिवसेन वेदितब्बा ति "नत्थि दिन्नं, नत्थि यिट्ठं, नत्थि हुतं, नत्थि सुकतदुक्कटानं कम्मानं फलं विपाको, नत्थि अयं लोको, नत्थि परो लोको, नत्थि माता, नत्थि पिता, नत्थि सत्ता ओपपातिका, नत्थि लोके समणब्राह्मणा सम्मग्गता सम्मापटिपन्ना, ये इमञ्च लोकं परञ्च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती"ति[2] एवमागतं सन्धाय वुत्तं । **सस्सतो लोको ति आदिवसेना** ति "सस्सतो लोकोति वा, असस्सतो लोकोति वा, अन्तवा लोकोति वा, अनन्तवा लोकोति वा, तं जीवं तं सरीरं ति वा, अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं ति वा, होति तथागतो परं मरणाति वा, न होति तथागतो परं मरणाति वा, होति च न च होति तथागतो परं मरणा ति वा, नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा ति वा" ति[3] एवमागतं सङ्गण्हाति ।

---

1. वि-२-७५-पिट्ठे ।
2. मं-२-६३-१८२, म-३-७२-९९, सं.२-१६९-पिट्ठेसु ।
3. म-१-२१२-पिट्ठे ।

मिच्छादिट्ठिआदयो मिच्छाविमुत्ति परियोसानाति "मिच्छादिट्ठि मिच्छासङ्कप्पो मिच्छावाचा मिच्छाकम्मन्तो मिच्छाआजीवो मिच्छावायामो मिच्छासति मिच्छासमाधि मिच्छाञाणं मिच्छाविमुत्ती" ति[1] एवमागतं सन्धाय वदति । तत्थ **मिच्छाञाणं** ति पापकिरियासु उपायचिन्तावसेन पापकं कत्वा "सुकतं मया" ति पच्चवेक्खणाकारेन च उप्पन्नो मोहो । **मिच्छाविमुत्ती**ति अविमुत्तस्सेव सतो विमुत्तिसञ्ञिता । **समथक्खन्धके निद्दिट्ठा** ति "ओरमत्तकं अधिकरणं होति, न च गतिगतं, न च सरितसारितं" ति आदिना[2] निद्दिट्ठा । समथक्खन्धके वुत्तेहि समन्नागतो होतीति सम्बन्धो । B. 482 मातुरक्खितादयो दस इत्थियो । धनक्कीतादयो **दस भरियायो** ।

दसकवारवण्णना निट्ठिता ।

एकादसकवारवण्णना

३३१॥ एकादसकेसु न **वोदायन्तीति** न पकासन्ति । **सुयुत्तयानसदिसाय कताया** ति इच्छितिच्छितकाले सुखेन पवत्तेतब्बत्ता युत्तयानं विय कताय । **यथा पतिट्ठा होती**ति सम्पत्तीनं यथा पतिट्ठा होति । **अनु अनु पवत्तितायाति** भावनाबहुलीकारेहि अनु अनु पवत्तिताय ।

सुखं सुपतीति आदीसु[3] यथा सेसजना सम्परिवत्तमाना काकच्छमाना दुक्खं सुपन्ति, एवं असुपित्वा सुखं सुपति, निद्दं ओक्कन्तो पि समापत्तिं समापन्नो विय होति । **सुखं पटिबुज्झती**ति यथा अञ्ञे नित्थुनन्ता विजम्भन्ता सम्परिवत्तन्ता दुक्खं पटिबुज्झन्ति, एवं अप्पटिबुज्झित्वा विकसमानमिव पदुमं सुखं निब्बिकारं पटिबुज्झति । अनुभूतपुब्बवसेन देवतूपसंहारवसेन चस्स भद्दकमेव सुपिनं होति, न पापकं ति आह **"पापकमेव न पस्सती"**ति आदि । धातुक्खोभहेतुकम्पि चस्स बहुलं भद्दकमेव सिया येभुय्येन चित्तजरूपानुगुणताय उतुआहारजरूपानं । तत्थ **पापकमेव न पस्सती**ति यथा अञ्ञे अत्तानं चोरेहि सम्परिवारितं विय, वाळेहि उपद्दुतं विय, पपाते पतन्तं विय च पस्सन्ति, एवं पापकमेव सुपिनं न पस्सति । **भद्रकं पन वुड्ढिकारणभूतं पस्सती**ति चेतियं वन्दन्तो विय, पूजं करोन्तो विय, धम्मं सुणन्तो विय च होति ।

---

1. अभि-२-४०५-पिट्ठे ।
2. वि-४-२०५-पिट्ठे ।
3. अ-ट्ठ-३-३४५, विसुद्धि-३०५-पिट्ठादीसुपि पस्सितब्बं ।

मनुस्सानं पियो होतीति उरे आमुक्कमुत्ताहारो विय, सीसे पिळन्धमाला विय च मनुस्सानं पियो होति मनापो । **अमनुस्सानं पियो होती**ति यथेव च मनुस्सानं पियो, एवं अमनुसानम्पि पियो होति विसाखत्थेरो विय । **नास्स अग्गि वा विसं वा सत्थं वा**
B. 483 **कमती**ति मेत्ताविहारिस्स काये उत्तराय उपासिकाय विय अग्गि वा, संयुत्तभाणकचूळसीवत्थेरस्सेव विसं वा, संकिच्चसामणेरस्सेव सत्थं वा न कमति न पविसति, नास्स कायं विकोपेतीति वुत्तं होति । धेनुवत्थुम्पि चेत्थ कथयन्ति, एका किर धेनु वच्छकस्स खीरधारं मुञ्चमाना अट्ठासि । एको लुद्दको "तं विज्झिस्सामी" ति हत्थेन सम्परिवत्तेत्वा दीघदण्डकं सत्तिं मुञ्चि । सा तस्सा सरीरं आहच्च तालपण्णं विय विवट्टमाना गता, नेव उपचारबलेन न अप्पनाबलेन, केवलं पन वच्छके बलवहितचित्तताय । एवं महानुभावो मेत्ता । **खिप्पं समाधियती**ति केनचि परिपन्थेन परिहीनज्झानस्स ब्यापादस्स दूरसमनुस्सरितभावतो खिप्पमेव समाधियति । **मुखवण्णो विप्पसीदती**ति बन्धना पमुत्ततालपक्कं विय चस्स विप्पसन्नवण्णं मुखं होति । असम्मूळ्हो कालं करोतीति मेत्ताविहारिनो सम्मोहमरणं नाम नत्थि, असम्मूळ्होव निद्दं ओक्कमन्तो विय कालं करोति ।

एकादसकवारवण्णना निट्ठिता ।

एकुत्तरिकनयवण्णना निट्ठिता ।

उपोसथादिपुच्छाविस्सज्जनावण्णना

३३२॥ "संघं भन्ते पवारेमीति आदि पवारणाकथा नामा" ति गण्ठिपदेसु वुत्तं ।

अत्थवसपकरणवण्णना

३३४॥ **पठमपाराजिकवण्णनायमेव वुत्तं** ति "संघसुट्ठुताया" ति आदीनं अत्थवण्णनं सन्धाय वुत्तं । **दसक्खत्तुं योजनाय पदसतं वुत्तं**" ति एकमूलकनये दसक्खत्तुं योजनाय कताय सङ्खलिकनये वुत्तपदेहि सद्धिं पदसतं वुत्तं ति एवमत्थो गहेतब्बो । अञ्ञथा एकमूलके एव नये न सक्का पदसतं लद्धुं । एकमूलकनयेहि पुरिमपच्छिमपदानि एकतो कत्वा एकेकस्मिं वारे नव नव पदानि वुत्तानीति दसक्खत्तुं योजनाय नवुति पदानियेव लब्भन्ति । तस्मा तानि नवुति पदानि सङ्खलिकनये बद्धचक्कवसेन योजिते दस पदानि लब्भन्तीति तेहि सद्धिं पदसतं ति सक्का वत्तुं । इतो अञ्ञथा पन उभोसुपि नयेसु विसुं विसुं अत्थसतं धम्मसतञ्च यथा लब्भति, तथा B. 484 पठमपाराजिकसंवण्णनायमेव[1] अम्हेहि दस्सितं, तं तत्थ वुत्तनयेनेव गहेतब्बं । पुरिमपच्छिमपदानि एकत्थेन गहेत्वा "पदसतं" ति वुत्तत्ता "**तत्थ पच्छिमस्स पच्छिमस्स पदस्स वसेन अत्थसतं, पुरिमस्स पुरिमस्स वसेन धम्मसतं**" ति वुत्तं । तस्मिं पदसते "संघसुट्ठु" ति आदिना वुत्तपुरिमपदानं वसेन धम्मसतं, "संघफासू"ति आदिना वुत्तपच्छिमपदानं वसेन अत्थसतं ति अधिप्पायो ।

महावग्गवण्णना निट्ठिता ।

---

1. सारत्थ-टी-२-३८-पिट्ठे ।

पठमगाथासङ्गणिक

सत्तनगरेसु पञ्ञत्तसिक्खापदवण्णना

३३५॥ **अड्ढुड्ढसतानी** ति तीणि सतानि पञ्ञासञ्चं सिक्खापदानि । **विग्गहं** ति मनुस्सविग्गहं । **अतिरेकं** ति दसाहपरमं अतिरेकचीवरं । **काळकं** ति "सुद्धकाळकानं"ति वुत्तकाळकं । भूतं ति भूतारोचनं । **परम्परभत्तं** ति परम्परभोजनं । **भिक्खुनीसु च अक्कोसो** ति "या पन भिक्खुनी भिक्खुं अक्कोसेय्य वा परिभासेय्य वा" ति[1] वुत्तसिक्खापदं । **अन्तरवासकं** ति अञ्ञातिकाय भिक्खुनिया चीवरपटिग्गण्हनं । **रूपियं** ति रूपियसंवोहारं । सुत्तं ति "सामं सुत्तं विञ्ञापेत्वा तन्तवायेही"ति वुत्तसिक्खापदं[2] । **उज्झापनके** ति उज्झापनके खिय्यनके पाचित्तियं । पाचितपिण्डं ति भिक्खुनी-परिपाचितं । चीवरं दत्वा ति "समग्गेन संघेन चीवरं दत्वा" ति वुत्तसिक्खापदं[3] । **वोसासन्ती**ति "भिक्खू पनेव कुलेसु निमन्तिता भुञ्जन्ति, तत्र चेसा भिक्खुनी"ति वुत्तपाटिदेसनीयं[4] । **गिरग्गं** ति "या पन भिक्खुनी नच्चं वा गीतं वा" ति वुत्त-सिक्खापदं[5] । **चरिया** ति "अन्तोवस्सं चारिकं चरेय्या" ति[6] च, "वस्संवुत्था चारिकं न पक्कमेय्या" ति[7] च वुत्तसिक्खापदद्वयं । **छन्दादानेना**ति पारिवासिकेन छन्ददानेन ।

पाराजिकानि चत्तारीति भिक्खुनीनं चत्तारि पाराजिकानि । **कुटी**ति कुटिकार-सिक्खापदं । **कोसियं** ति कोसियमिस्सकसिक्खापदं । सेय्या ति अनुपसम्पन्नेन सहसेय्यसिक्खापदं । खणने ति पथवीखणनं । **गच्छदेवते**ति भूतगामसिक्खापदं । सिञ्चन्ति सप्पाणकउदकसिञ्चनं । **महाविहारो**ति महल्लकविहारो । **अञ्ञं** ति अञ्ञवादकं । **द्वारं** ति याव द्वारकोसा । **सहधम्मोति** सहधम्मिकं वुच्चमानो । **पयोपानं** ति सुरुसुरुकारकं । **एळकलोमानी**ति एळकलोमधोवापनं । पत्तो ति ऊनपञ्चबन्धन-पत्तो । **ओवादो** ति भिक्खुनुपस्सयं उपसङ्कमित्वा ओवादो । भेसज्जं ति तदुत्तरि-भेसज्जविञ्ञापनं । **सूची**ति अट्ठिमयादिसूचिघरं । आरञ्ञिको ति "यानि खो पन

---

1. वि-२-४०६ पिट्ठे ।
2. वि-१-३६९-पिट्ठे ।
3. वि-२-२०२-पिट्ठे ।
4. वि-२-२३०-पिट्ठे ।
5. वि-२-३५०-पिट्ठे ।
6. वि-२-३९०-पिट्ठे ।
7. वि-२-३९१-पिट्ठे ।

तानि आरञ्ञकानि सेनासनानी" ति आदिना[1] वुत्तपाटिदेसनीयं। **ओवादो** ति "या पन B. 486 भिक्खुनी ओवादाय वा संवासाय वा न गच्छेय्या" ति[2] वुत्तसिक्खापदं।

पाराजिकानि चत्तारीति आदिना छसु नगरेसु पञ्ञत्तं एकतो सम्पिण्डित्वा सावत्थिया पञ्ञत्तं विसुं गणेत्वा सब्बानेव सिक्खापदानि द्वीहि रासीहि सङ्गण्हाति।

सत्तनगरेसु पञ्ञत्तसिक्खापदवण्णना निट्ठिता।

चतुविपत्तिवण्णना

३३६॥ ए**कतिंस गरुका** नाम उभतो अट्ठ पाराजिका, भिक्खूनं तरेस, भिक्खुनीनं दस संघादिसेसा। **अट्ठेत्थ अनवसेसा** ति एतेसु यथावुत्तगरुकेसु साधारणा-साधारणवसेन अट्ठ पाराजिका अनवसेसा नाम।

असाधारणादिवण्णना

३३८॥ "धोवनञ्च पटिग्गहो" ति गाथा अट्ठकथाचरियानं। तत्थ धोवनञ्च पटिग्गहो ति अञ्ञातिकाय भिक्खुनिया चीवरधोवापनं चीवरपटिग्गहणञ्च। **कोसेय्य** ...पे०....**द्वे लोमा** ति एळकलोमवग्गे आदितो सत्त सिक्खापदानि वुत्तानि। **वस्सिका** ति वस्सिकसाटिकसिक्खापदं। आरञ्ञकेन चाति सासङ्कसिक्खापदं वुत्तं। **पणीतं** ति पणीतभोजनविञ्ञत्ति। **ऊनं** ति ऊनवीसतिवस्ससिक्खापदं। निसीदने च या **सिक्खा, वस्सिका या च साटिका** ति निसीदनवस्सिकसाटिकानं पमाणातिक्कमो।

आपत्तिक्खन्धा चेव उपोसथादीनि च "पाराजिकसंघादिसेसा "ति आदिना विभत्तत्ता "**विभत्तियो**" ति वुत्तानि। तेवीसति संघादिसेसा ति भिक्खुनीनं आगतानि दस, भिक्खूनं तेरसाति तेवीसति। **द्वेचत्तालीस निस्सग्गिया**ति आदीसुपि एसेव नयो। **द्वीहि....पे०....किच्चं एकेन सम्मती**ति द्वीहि विवादाधिकरणं, चतूहि अनुवादाधिकरणं, तीहि आपत्ताधिकरणं, एकेन किच्चाधिकरणं सम्मतीति अत्थो।

३३९॥ निरङ्कतो ति संघम्हा अपसारितो।

अधिकरणभेदवण्णना

B. 487

३४०॥ यस्मा अधिकरणं उक्कोटेन्तो समथप्पत्तमेव उक्कोटेति, तस्मा "**विवादाधिकरणं उक्कोटेन्तो कति समथे उक्कोटेती**" ति आदि वुत्तं।

---

1. वि-२-२३५-पिट्ठे।
2. वि-२-४१४-पिट्ठे।

३४१॥ **पाळिमुत्तकविनिच्छयेनेवा** ति विनयलक्खणं विना केवलं धम्मदेसना-मत्तवसेनेवा ति अत्थो । **येना पि विनिच्छयेना**ति पाळिमुत्तकविनिच्छयमेव सन्धाय वुत्तं । **खन्धकतो च परिवारतो च सुत्तेना** ति खन्धकपरिवारतो आनीतसुत्तेन । **निज्झापेन्ती**ति पञ्ञापेन्ति ।

३४२॥ **किच्चं निस्साय उप्पज्जनककिच्चानं** ति पुब्बे कतउक्खेपनीयादिकिच्चं निस्साय उप्पज्जनककिच्चानं । कीदिसानं ? यावततियसमनुभासनादीनं ।

३४३॥ तं ही ति तं विवादाधिकरणं ।

३४४॥ **अधिकरणेसु येन अधिकरणेन सम्मन्ति, तं दस्सेतुं वुत्तं** ति यदा अधिकरणेहि सम्मन्ति, तदा किच्चाधिकरणेनेव सम्मन्ति, न अञ्ञेहि अधिकरणेहीति दस्सनत्थं वुत्तं ति अधिप्पायो ।

३५३॥ "सत्तन्नं समथानं कतमे छत्तिंस समुट्ठाना" ति पुच्छित्वापि "कम्मस्स किरिया करणं" तिआदिना सम्मुखाविनयस्स समुट्ठानानि अविभजित्वाव सतिविनया-दीनं छन्नञ्ञेव छ समुट्ठानानि विभत्तानि, तं कस्मा ति आह **"किञ्चापि सत्तन्नं समथानं"**ति आदि । सतिविनयादीनं विय संघसम्मुखतादीनं किच्चयता नाम नत्थीति आह **"कम्मसङ्गहाभावेना"** ति ।

दुतियगाथासङ्गणिकवण्णना

३५९॥ **मन्तग्गहणं** ति अञ्ञमञ्ञं संसन्दनं । अनु अनु सन्धानं **अनुसन्धितं** ति भावसाधनो **अनुसन्धित** सद्दो ति आह **"अनुसन्धितं ति कथानुसन्धी"** ति ।

B. 488

सङ्गामद्वयवण्णना

३६५॥ **ठाननिसज्जवत्तादिनिस्सिता** ति "एवं ठातब्बं, "एवं निसीदितब्बं" ति एवमादिका । **सञ्ञाजननत्थं** ति चुदितकचोदकानं सञ्ञुप्पादनत्थं । **अनुयोगवत्तं कथापेत्वा** ति "किं अनुयोगवत्तं जानासी" ति पुच्छित्वा तेनेव कथापेत्वा ।

३७५॥ **नीलादिवण्णावण्णवसेना** ति नीलादिवण्णवसेन आरोग्यत्थादिअवण्ण-वसेन च ।

कथिनभेदवण्णना

४०४॥ **पुरेजातपच्चये पनेस उद्दिट्ठधम्मेसु एकधम्मम्पि न लभतीति** एस उदकाहरणादिपयोगो अत्तनो पुरेजातपच्चयभावे पुब्बकरणवसेन उद्दिट्ठेसु धोवनादि-धम्मेसु एकधम्मम्पि न लभति अत्तनो पुरेजातस्स पुब्बकरणसङ्गहितस्स धम्मस्स नत्थिताय ।

४१२॥ **रूपादीसु धम्मेसू**ति वण्णगन्धादीसु सुद्धट्ठकधम्मेसु ।

४१६॥ पुरिमा द्वेति इमस्मिं अधिकारे पठमं वुत्ता अन्तरुब्भारसहुब्भारा, न पक्कमनन्तिकादयो द्वे उब्भारा।

उपालिपञ्चकवण्णना

४२०-४२१॥ **ओमद्दकारको** ति ओमद्दित्वा अभिभवित्वा कारको। **उपत्थम्भो न दातब्बो** ति सामग्गिविनासाय अनुबलं न दातब्बं। **दिट्ठाविकम्मम्पि कत्वा** ति "न मेतं खमती" ति दिट्ठिं आवि कत्वापि।

वोहारवग्गवण्णना

४२४॥ कायप्पयोगेन आपज्जितब्बा कायप्पयोगा। वचीपयोगेन आपज्जितब्बा **वचीपयोगा। नवसु ठानेसू** ति ओसरणादीसु नवसु ठानेसु। **द्वीसु ठानेसू**ति ञत्तिदुतिय-ञत्तिचतुत्थकम्मेसु। **तस्मा** ति यस्मा महाअट्ठकथायं वुत्तनयेन उभतोविभङ्गा असङ्गहिता, तस्मा। यं कुरुन्दियं वुत्तं, तं गहेतब्बं ति सम्बन्धो।

दिट्ठाविकम्मवग्गवण्णना

B. 489

४२५॥ "चतूहि पञ्चही"ति वचनतो द्वीहि वा तीहि वा एकतो देसेतुं वट्टति, ततो परं न वट्टति। माळकसीमाया ति खण्डसीमाय। **अविप्पवाससीमाया** ति महासीमाय।

मुसावादवग्गवण्णना

४४४॥ **परियायेन जानन्तस्स वुत्तमुसावादो** ति यस्स कस्सचि जानन्तस्स परियायेन वुत्तमुसावादो ति अत्थो।

४४६॥ **अनुयोगो न दातब्बो** ति तेन वुत्तं अनादियित्वा तुण्ही भवितब्बं ति अत्थो।

भिक्खुनोवादवग्गवण्णना

४५४॥ **एकूनवीसतिभेदाया** ति मग्गपच्चवेक्खणादिवसेन एकूनवीसति भेदाय।

अधिकरणवूपसमवग्गवण्णना

४५८॥ **पञ्चहि कारणेही**ति इदं अत्थनिप्फादनकानि तेसं पुब्बभागानि च कारणभावसामञ्ञेन एकज्झं गहेत्वा वुत्तं, न पन सब्बेसं पञ्चन्नं समानयोगक्खेमत्ता। **अनुस्सावनेना**ति भेदस्स अनुरूपसावनेन। यथा भेदो होति, एवं भिन्दितब्बानं भिक्खूनं अत्तनो वचनस्स सावनेन विञ्ञापनेना ति अत्थो। तेनाह **"ननु तुम्हे" ति आदि। कण्णमूले वचीभेदं कत्वा** ति एतेन पाकटं कत्वा भेदकरवत्थुदीपनं वोहरणं। तत्थ अत्तना विनिच्छितमत्तं रहस्सवसेन विञ्ञापनं अनुस्सावनं दस्सेति। **कम्ममेव**

उद्देसो वा पमाणं ति तेहि संघभेदसिद्धितो पमाणं, इतरे पन तेसं सम्भारभूता । तेनाह **"वोहारा"** ति आदि । **तत्था** ति वोहरणे ।

कथिनत्थारवग्गवण्णना

४६७॥ **अन्तरा वुत्तकारणेना** ति "तं हि वन्दन्तस्स मञ्चपादादीसुपि **नलाटं** पटिहञ्ञेय्या" ति आदिना वुत्तकारणेन ।

B. 490

समुट्ठानवण्णना

४७०॥ **पुब्बे वुत्तमेवा** ति सहसेय्यादिपण्णत्तिवज्जं । **इतरं** ति सचित्तकं । **भिंसापनादीनि** कत्वा ति भिंसापनादिना आपत्तिं आपज्जित्वा ति अधिप्पायो ।

अपरदुतियगाथासङ्गणिक

कायिकादिआपत्तिवण्णना

४७४॥ विनये गरुका **विनयगरुका** । किञ्चापि इदं द्वीसु गाथासु आगतं, अञ्ञेहि पन मिस्सेत्वा वुत्तभावतो नानाकरणं पच्चेतब्बं ।

देसनागामिनियादिवण्णना

४७५॥ **द्वे संवासकभूमियोति** एत्थ भूमीति अवत्था । अङ्गहीनता कारण-वेकल्लवसेनपि वेदितब्बाति आह **"अपिचेत्था"** ति आदि । **एस नयो** ति "अपिचेत्था" ति आदिना वुत्तनयो । **वनप्पत्तिं छिन्दन्तस्स पाराजिकं** ति अदिन्नादाने वनप्पतिकथाय आगतं परसन्तकं सन्धाय वुत्तं । **विस्सट्ठि छड्डनेति** सुक्कविस्सट्ठिया मोचने । **दुक्कटा कता** ति दुक्कटं वुत्तं । **पठमसिक्खापदम्हियेवा** ति भिक्खुनोवादकवग्गस्स पठम-सिक्खापदेयेव । आमकधञ्ञं विञ्ञापेत्वा भुञ्जन्तिया पुब्बपयोगे दुक्कटं, अज्झोहारे पाचित्तियं ।

पाचित्तियवण्णना

४७६॥ अब्भुण्हसीलो ति अभिनवसीलो ।

४७८॥ असुत्तकं ति सुत्तविरहितं, सुत्ततो अपनीतं नत्थीति अत्थो ।

B. 491

सेदमोचनगाथा

अविप्पवासादिपञ्हवण्णना

४७९॥ सेदमोचनगाथासु **तहिं** ति तस्मिं पुग्गले । "अकप्पियसम्भोगो नाम मेथुनधम्मादी"ति **गण्ठिपदेसु** वुत्तं । **एसा पञ्हा कुसलेहि चिन्तिता** ति लिङ्गविपल्ला-सवसेनेतं वुत्तं, एसो पञ्हो कुसलेहि चिन्तितो ति अत्थो ।

दसा ति अवन्दिये दस । **एकादसा** ति पण्डकादयो एकादस । **उब्भक्खके न वदामीति** इमिना मुखे मेथुनधम्माभावं दीपेति । **अधोनाभिं विवज्जिया** ति इमिना वच्चमग्गपस्सावमग्गेसु ।

गामन्तरपरियापन्नं नदीपारं ओक्कन्त भिक्खुनिं सन्धाया ति एत्थ नदी भिक्खुनिया गामपरियापन्ना, परतीरं गामन्तरपरियापन्नं । तत्थ परतीरे पठमलेड्डुपातप्पमाणो गामूपचारो नदीपरियन्तेन परिच्छिन्नो, तस्मा परतीरे रतनमत्तम्पि अरञ्ञं नत्थि, परतीरञ्च तिणादीहि पटिच्छन्नत्ता दस्सनूपचारविरहितं करोति । तत्थ अत्तनो गामे आपत्ति नत्थि, परतीरे पन पठमलेड्डुपातसङ्खाते गामूपचारेयेव पादं ठपेति । अन्तरे अभिधम्मे[1] वुत्तनयेन अरञ्ञभूतं सकगामं अतिक्कमति नाम, तस्मा गणम्हा ओहीयना नाम होतीति वेदितब्बं ।

भिक्खूनं सन्तिके एकतो उपसम्पन्ना नाम महापजापतिपमुखा पञ्चसतसाकिनियो भिक्खुनियो । महापजापतिपि हि आनन्दत्थेरेन दिन्नओवादस्स पटिग्गहितत्ता भिक्खूनं सन्तिके उपसम्पन्ना नाम ।

पाराजिकादिपञ्हवण्णना

४८०॥ सह दुस्सेन मेथुनवीतिक्कमस्स सक्कुणेय्यताय **"दुस्सकुटिआदीनि सन्धाया"** ति वुत्तं । **लिङ्गपरिवत्तं सन्धाय वुत्ता** ति "लिङ्गपरिवत्ते सति पटिग्गहणस्स विजहनतो सामं गहेत्वा भुञ्जितुं न वट्टती" ति लिङ्गपरिवत्तनं सन्धाय वुत्ता ।

४८१॥ **सुप्पतिट्ठितनिग्रोधसदिसं** ति योजनद्वियोजनादिपरमं महानिग्रोधं सन्धाय वुत्तं ।

सेदमोचनगाथावण्णना निट्ठिता ।

---

1. अभि. २-२६०-पिट्ठे ।

B. 492

पञ्चवग्ग

कम्मवग्गवण्णना

४८३॥ कम्मवग्गे उम्मत्तकस्स भिक्खुनो उम्मत्तकसम्मुति उम्मत्तके याचित्वा गते[1] असम्मुखापि दातुं वट्टति, तत्थ निसिन्नेपि न कुप्पति नियमाभावतो । असम्मुखा कते पन दोसाभावं दस्सेतुं **"असम्मुखाकतं सुकतं होती"** ति वुत्तं । दूतेन उपसम्पदा पन सम्मुखा कातुं न सक्का कम्मवाचानानत्तसम्भवतो । पत्तनिक्कुज्जनादयो हत्थपासतो अपनीतमत्तेपि कातुं वट्टन्ति । **संघसम्मुखता** ति आदीसु यावतिका भिक्खू कम्मप्पत्ता, ते आगता होन्ति, छन्दारहानं छन्दो आहटो होति, सम्मुखीभूता न पटिक्कोसन्ति, अयं **संघसम्मुखता** । येन धम्मेन येन विनयेन येन सत्थुसासनेन संघो कम्मं करोति, अयं **धम्मसम्मुखता** । तत्थ **धम्मो** ति भूतं वत्थु । **विनयो**ति चोदना चेव सारणा च । **सत्थुसासनं** नाम ञत्तिसम्पदा चेव अनुस्सावनसम्पदा च । यस्स संघो कम्मं करोति, तस्स सम्मुखभावो **पुग्गलसम्मुखता** । कत्तिकमासस्स पवारणमासत्ता **"ठपेत्वा कत्तिकमासं"** ति वुत्तं । **पच्चुक्कड्ढित्वा ठपितदिवसो चा** ति काळपक्खे चातुद्दसिं वा पन्नरसिं वा सन्धाय वुत्तं । **द्वे च पुण्णमासियो** ति पठमपच्छिमवस्सूपगतानं वसेन वुत्तं ।

४८५॥ ठानकरणानि सिथिलानि कत्वा उच्चारेतब्बं अक्खरं **सिथिलं**, तानियेव धनितानि असिथिलानि कत्वा उच्चारेतब्बं अक्खरं **धनितं** । द्विमत्तकालं **दीघं**, एकमत्तकालं **रस्सं** । **दसधा ब्यञ्जनबुद्धिया पभेदो** ति एवं सिथिलादिवसेन ब्यञ्जन-बुद्धिया अक्खरुप्पादकचित्तस्स दसप्पकारेन पभेदो । सब्बानि हि अक्खरानि चित्तसमुट्ठानानि यथाधिप्पेतत्थब्यञ्जनतो ब्यञ्जनानि च । संयोगो परो एतस्माति संयोगपरो, न संयोगपरो **असंयोगपरो** । **आयस्मतो बुद्धरक्खितथेरस्स यस्स न खमती** ति एत्थ त-कार न-कारसहिताकारो[2] असंयोगपरो । **करणानी**ति कण्ठादीनि ।

B. 493

४८८॥ अनुक्खित्ता पाराजिकं अनापन्ना च पकतत्ताति आह **"पकतत्ता अनुक्खित्ता"** ति आदि । तत्थ **अनिस्सारिता** ति पुरिमपदस्सेव वेवचनं । **परिसुद्ध-सीला**ति पाराजिकं अनापन्ना । **न तेसं छन्दो वा पारिसुद्धि वा एती**ति तीसु द्वीसु वा निसिन्नेसु एकस्स वा द्विन्नं वा छन्दपारिसुद्धि आहटापि अनाहटाव होतीति अधिप्पायो ।

---

1. उम्मत्तकेन याचित्वा कते (क) ।
2. तकारककारसहिताभावो (स्या) ।

अपलोकनकम्मकथावण्णना

४९५-४९६॥ **कायसम्भोगसामग्गी**ति सहसेय्यपटिग्गहणादि। **सोरतो** ति सुभे रतो। सुट्ठु ओरतोति वा **सोरतो**। **निवातवुत्ती**ति नीचवुत्ति। **पटिसङ्खा** ति पटिसङ्खाय ञाणेन उपपरिक्खित्वा। यं तं अवन्दियकम्मं अनुञ्ञातं ति सम्बन्धो। **इमस्स अपलोकनकम्मस्स ठानं होती**ति एवम्पि अपलोकनकम्मं पवत्ततीति अत्थो। कम्ममेव लक्खणं ति **कम्मलक्खणं**। ओसारणनिस्सारणभण्डुकम्मादयो विय कम्मञ्च हुत्वा अञ्ञञ्च नामं न लभति, कम्ममेव हुत्वा उपलक्खीयतीति "कम्मलक्खणं" ति वुच्चति। एतम्पि **कम्मलक्खणमेवा** ति वुत्तकम्मलक्खणं दस्सेतुं **"अच्छिन्नचीवरजिण्ण-चीवरनट्ठचीवरानं"** ति आदि वुत्तं। **इणपलिबोधम्पी**ति इणमेव पलिबोधो इणपलिबोधो, तम्पि दातुं वट्टति। सचे तादिसं भिक्खुं इणायिका पलिबुन्धन्ति, तत्रुप्पादतोपि तस्स इणं सोधेतुं वट्टतीति अधिप्पायो।

छत्तं वा वेदिकं वा ति एत्थ **वेदिका** ति चेतियस्स उपरि चतुरस्सचयो वुच्चति। **छत्तं** ति ततो उद्धं वलयानि दस्सेत्वा कतो अग्गचयो वुच्चति। **चेतियस्स उपनिक्खेपतो** ति चेतिये नवकम्मत्ताय उपनिक्खित्ततो, चेतियसन्तकतो ति वुत्तं होति। **अञ्ञा कतिका कातब्बा** ति पुरिमकतिकाय असङ्गहितत्ता वुत्तं। **तेही**ति येसं पुग्गलिकट्ठाने तिट्ठन्ति, तेहि। **दसभागं** ति दसमभागं। **तत्था** ति तस्मिं विहारे। मूलेति पुब्बे। **"इतो पट्ठाय भाजेत्वा खादन्तू"** ति वचनेनेव यथासुखं परिभोगो पटिक्खित्तो होतीति आह **"पुरिमकतिका पटिप्पस्सम्भती"**ति।

अनुविचरित्वा ति पच्छतो पच्छतो गन्त्वा। **अपच्चासीसन्तेना** ति तेसं सन्तिका पच्चयं अपच्चासीसन्तेन। **मूलभागं** ति वुत्तमेवत्थं विभावेति **"दसभागमत्तं"** ति। **अकतावासं** वा कत्वा ति ततो उप्पन्नआयेन कत्वा। **जग्गितकाले च न वारेतब्बा**ति B. 494 जग्गितानं पुप्फफलभरितकाले न वारेतब्बा। **जग्गनकाले** ति जग्गितुं आरद्धकाले। **अत्तिकम्मट्ठानभेदे** ति अत्तिकम्मस्स ठानभेदे।

कम्मवग्गवण्णना निट्ठिता।

अपञ्ञत्ते पञ्ञत्तवग्गवण्णना

५००॥ सत्त आपत्तिक्खन्धा पञ्ञत्तं नामाति सम्बन्धो। ककुसन्धकोणा-गमनकस्सपा एव सत्त आपत्तिक्खन्धे पञ्ञपेसुं, विपस्सीआदयो पन ओवादपाति-मोक्खं उद्दिसिंसु, न सिक्खापदं पञ्ञपेसुं ति आह **"ककुसन्धञ्च....पे०....अन्तरा केनचि अपञ्ञत्ते सिक्खापदे"** ति। सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेव।

इति समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथाय सारत्थदीपनियं परिवारट्ठकथावण्णना समत्ता।

B. 495

निगमनकथावण्णना

अवसानगाथासु पन अयमत्थो । **विभत्तदेसनं** ति उभतोविभङ्गखन्धकपरिवारेहि विभत्तदेसनं विनयपिटकं ति योजेतब्बं । तस्सा ति तस्स विनयस्स ।

तन्निदं ति आदि पठमपाराजिकवण्णनायं वुत्तनयमेव ।

सत्थुमहाबोधिविभूसितो ति सत्थुना परिभुत्तमहाबोधिविभूसितो मण्डितो, तस्स महाविहारस्स दक्खिणभागे उत्तमं यं पधानघरं ति सम्बन्धो । तत्थ **पधानघरं** ति तंनामकं परिवेणं । **सुविचारित्तसीलेन, भिक्खुसंघेन सेवितं** ति इदम्पि पधानघर-विसेसनं ।

तत्था ति तस्मिं पधानघरे । **चारुपाकारसञ्चितं** ति मनापेन पाकारेन परिक्खित्तं । **सीतच्छायतरूपेतं** ति घननिचितपत्तसञ्छन्नसाखापसाखताय सीतच्छायेहि रुक्खेहि उपेतं । विकसितकमलकुवलयपुण्डरीकसोगन्धिकादिपुप्फसञ्छन्नमधुरसीतलुदकपुण्ण-ताय सम्पन्ना सलिलासया अस्साति **सम्पन्नसलिलासयो** । **उद्दिसित्वा** ति बुद्धसिरिं नाम थेरं निस्साय, तस्स अज्झेसनं निस्सायाति वुत्तं होति । इद्धा ति अत्थविनिच्छयादीहि इद्धा फीता परिपुण्णा ।

सिरिनिवासस्साति सिरिया निवासट्ठानभूतस्स । **जयसंवच्छरे** ति जयप्पत्तसंवच्छरे । अयं ति थेरं बुद्धसिरिं उद्दिस्स या विनयवण्णना आरद्धा, अयं । **धम्मूपसंहिता** ति कुसलसन्निस्सिता । इदानि सदेवकस्स लोकस्स अच्चन्तसुखाधिगमाय अत्तनो पुञ्ञं परिणामेन्तो "**चिरट्ठितत्थं धम्मस्सा**" ति आदिमाह । तत्थ **समाचितं** ति उपचितं । सब्बस्स आनुभावेना ति सब्बस्स तस्स पुञ्ञस्स तेजेन । **सब्बेपि पाणिनो** ति कामावचरादिभेदा सब्बे सत्ता । **सद्धम्मरससेविनो** ति यथारहं बोधित्तयाधिगमवसेन सद्धम्मरससेविनो भवन्तु । सेसमेत्थ सुविञ्ञेय्यमेव ।

निगमनकथावण्णना निट्ठिता ।

B. 496

निगमनकथा

एत्तावता च–

विनये पाटवत्थाय, सासनस्स च वुड्ढिया ।
वण्णना या समारद्धा, विनयट्ठकथाय सा ॥
सारत्थदीपनी नाम, सब्बसो परिनिट्ठिता ।
तिंससहस्समत्तेहि, गन्थेहि परिमाणतो ॥
अज्झेसितो नरिन्देन, सोहं परक्कमबाहुना ।
सद्धम्मट्ठितिकामेन, सासनुज्जोतकारिना ॥

तेनव कारिते रम्मे, पासादसतमण्डिते ।
नानादुमगणाकिण्णे, भावनाभिरतालये ॥
सीतलूदकसम्पन्ने, वसं जेतवने इमं ।
अत्थब्यञ्जनसम्पन्नं, अकासिं सुविनिच्छयं ॥
यं सिद्धं इमिना पुञ्ञं, यं चञ्ञं पसुतं मया ।
एतेन पुञ्ञकम्मेन, दुतिये अत्तसम्भवे ॥
तावतिंसे पमोदेन्तो, सीलाचारगुणे रतो[1] ।
अलग्गो पञ्चकामेसु, पत्वान पठमं फलं ॥
अन्तिमे अत्तभावम्हि, मेत्तेय्यं मुनिपुङ्गवं ।
लोकग्गपुग्गलं नाथं, सब्बसत्तहिते रतं ॥
दिस्वान तस्स धीरस्स, सुत्वा सद्धम्मदेसनं ।
अधिगन्त्वा फलं अग्गं, सोभेय्यं जिनसासनं ॥
सदा रक्खन्तु राजानो, धम्मेनेव इमं पजं ।
निरता पुञ्ञकम्मेसु, जोतेन्तु जिनसासनं ॥
इमे च पाणिनो सब्बे, सब्बदा निरुपद्दवा ।
निच्चं कल्याणसङ्कप्पा, पप्पोन्तु अमतं पदं ति ॥

सारत्थदीपनी नाम विनयटीका निट्ठिता ।

---

1. सीलाचारसमाहितो (स्या) ।



सारत्थदीपनीटीकाय ततियभागे

संवण्णितपदानं अनुक्कमणिका

पदानुक्कमो	पिट्ठङ्को

●

पालि-ग्रन्थमाला
[८]

[illegible]
[illegible]सारिपुत्तत्थेरेन कता

सारत्थदीपनी-टीका

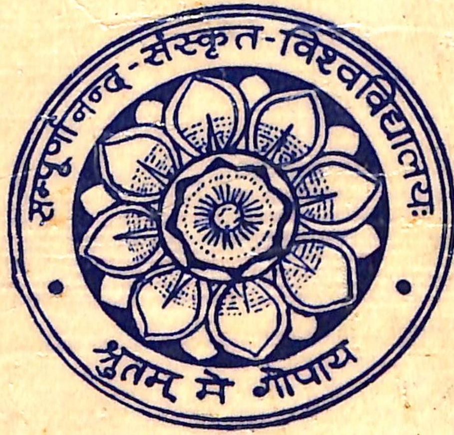
[ततियो भागो]

कुलपतेः [illegible]
पुरस्कृता

सम्पादको
डॉ. ब्रह्मदेवनारायणशर्मा



वाराणस्याम्


सम्पूर्णानन्द-संस्कृत-विश्वविद्यालयः
श्रुतम् मे गोपाय